

श्रीमान् सेठ राजमलजी ललवाणी, जामनेर.
(ओसवाल-इतिहास के प्रधान आधारस्तम्भ)

वैदिक-यन्त्रालय, अजमेर

समर्पण

श्रीमान् सेठ राजमलजी ललवानी, जामनेर.

आप ही के उत्साह प्रदान से इस महान् ग्रन्थ की कल्पना को प्रबल उत्तेजना
मिली, आप ही की सहायता—सहयोग से इस ग्रन्थ का कार्य्य विद्युत्
वेग से विकसित हुआ, और आप ही की मङ्गल कामना से
यह ग्रन्थ आज अत्यन्त सफलता के साथ सानन्द
सम्पूर्ण हो रहा है, अतएव यह महान् ग्रन्थ
अत्यन्त धन्यवाद पूर्वक आप ही की
सेवा में समर्पित किया
जा रहा है।

निवेदक

लेखक-समुदाय

सेठ राजमलजी ललवानी का संक्षिप्त

जीवन-परिचय

संसार के अंतर्गत कई व्यक्तियों का जीवन चरित्र इस प्रकार का होता है कि उसका विकास विपत्ति और सम्पत्ति के घात प्रतिघातों के अंतर्गत ही होता है। कई महापुरुषों की जीवनियों को देखने से इस बात का पता लगता है कि उनका जीवन चक्र अनेक टेढ़े मेढ़े रास्तों से होता हुआ परिवर्तन के प्रबल भंवरों में मँडराता हुआ उन्नति की ओर अग्रसर होता है। फिर भी यह एक अनूठा सत्य है कि इन सभी अनुकूल और विपरीत परिस्थितियों में भी उनके अंतर्गत जो प्राकृतिक विशेषताएं हैं, वे प्रकाश की तरह चमकती रहती हैं।

सेठ राजमलजी ललवाणी की जीवनी का जब हम बारीकी के साथ अध्ययन करते हैं, तो उसमें भी कई तत्व हमें इसी प्रकार के दृष्टिगोचर होते हैं। इनका जीवन भी कई प्रकार के घात प्रति घात और विपत्ति सम्पत्ति के दुर्धर्श चक्रों में घूमता हुआ आज की स्थिति में पहुँचा है। फिर भी हम देखते हैं कि जो प्राकृतिक विशेषताएं शुरू से इनके अन्दर थीं, वे आज भी उसी प्रकार बनी हुई हैं।

आपका जन्म संवत् १९५१ की वैसाख सुदी ३ को आऊ (फलोदी) नामक ग्राम में हुआ। जिस घर में आप पैदा हुए, वह बहुत साधारण स्थिति का घर था। खेती बाड़ी का काम होने की वजह से बाल्यकाल में आपको खेती और ऊँट की सवारी का बहुत काम पड़ता था। मगर उस कठिन परिस्थिति में भी आपका उत्साह बड़ा प्रबल था। जब आप ८ वर्ष के हुए, जब अपने पिता के साथ खानदेश के मुड़ी नामक गाँव में आये तब वहाँ मराठी की २ क्लास तक आपका शिक्षण हुआ। मगर इसी बीच आपके स्कूल जीवन में एक ऐसी विचित्र घटना घटी, जिससे आपके जीवन में एक बड़ा ही महत्व का परिवर्त्तन हुआ। आपका एक सहपाठी लड़कों से पैसे ठगने के लिये देवता को शरीर में लाने का ढोंग किया करता था। आप भी इस लड़के के चक्कर में आगये, और घर से पैसे ला ला कर उसे देने लगे। यह बात दैवयोग से आपके भाई को मालूम पड़ गई और एक दिन उन्होंने आपको जा पकड़ा, तथा खूब मारा। यह वहाँ से भागे, और घर न जाकर दूसरे गांव का रास्ता पकड़ लिया, उस समय केवल ११ वर्ष की अवस्था में किसमत पर भरोसा करके १५ कोस तक बराबर पैदल चले गये, और "वरुल भटाना" नामक गाँव में पहुँचे। उस गांव के नीमाजी नामक पटेल ने इनको आश्रय दिया, और वहीं पर दुकान कायम करने के लिये ५) कर्ज दिये। इन पाँच रुपयों से इन्होंने दूसरे बाजारों से सौदा लाकर इस बाजार में बेचना शुरू किया। इससे गाँव वालों को

बाल्यजीवन

भी कुछ सुभीता हो गया, तथा इनको भी कुछ कुछ आमदनी होने लगी। एक महीने में इन्होंने पटेल का कर्जा चुका दिया, तथा ५) निज की पूंजी के कर लिये। इसी समय वहाँ पर एक ओर कपास का तथा दूसरी ओर खजूर का मौसिम चला। इस मौसम से भी आपने खूब लाभ उठाया, तथा ४ महीने में ८०) जोड़ लिये। जब इनके पिताजी को यह बात मालूम हुई, तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई, तथा वे भी यहीं आकर अपना धंधा करने लगे।

इसी बीच जामनेर के प्रसिद्ध सेठ लक्खीचन्दजी ललवाणी को एक पुत्र दत्तक लेने की आवश्यकता हुई। उनके पास इसके लिये करीब १२ लड़के उम्मीदवार होकर आये। मगर उनमें से उन्हें एक भी पसन्द न आया। जब उन्हें श्री राजमलजी की खबर लगी तो उनके पिता रामलालजी ललवांणी के पास उन्होंने खबर भेजी। कुछ समय पश्चात् स्वयं सेठ लक्खीचन्दजी, राजमलजी को देखने के लिये "मुड़ी" गये। यद्यपि इनकी शिक्षा बहुत कम हुई थी, फिर भी अपनी प्रतिभा के बल से इन्होंने सेठ लक्खीचन्दजी को आकर्पित कर लिया और उन्होंने बड़ी प्रसन्नता के साथ संवत् १९६३ में इन्हें दत्तक ले लिया। इसके साथ ही साथ आपके भाग्य ने एक जबर्दस्त पलटा खाया।

सेठ राजमलजी के बाल्य जीवन पर गंभीरता पूर्वक विचार करने से पता चलता है कि यद्यपि इनका घर गरीब था, यद्यपि इनकी सब परिस्थितियाँ इनके प्रतिकूल थीं, और यद्यपि इनकी शिक्षा संतोषजनक रूप में नहीं हुई थी, फिर भी इनके अन्दर कुछ ऐसी विशेषताएं विद्यमान थीं, जिन्होंने उन संकट की घड़ियों में जिनमें—कि माता पिता भाई वगैरा सबने इनका साथ छोड़ दिया था—इनके उत्साह धैर्य्य व सत्साहस को कायम रक्खा और ये एक बांके कर्मवीर की तरह मैदान में डटे रहे। आगे जाकर इन्हीं विशेषताओं का प्रताप था, कि इतने महान घर में जाने पर भी इन्हें अहंकार ने स्पर्श तक नहीं किया। प्रत्यक्ष जीवन में हम स्पष्ट देखते हैं कि लोगों को थोड़ी सी सम्पत्ति और सौभाग्य के मिलते ही उनकी आंखों में अहंकार और मादकता का नशा छा जाता है, तथा शीघ्र ही वे अपने कर्त्तव्य और चरित्र से भ्रष्ट हो जाते हैं। मगर यह आपकी बड़ी विशेषता थी कि सौभाग्य के इस प्रलोभन में भी आप वैसे ही सादे और कर्मशील बने रहे जैसे पहले थे। बल्कि आपकी विनयशीलता दिन दिन और जागृति होती गई। इस नवीन घर में आने के बाद आपने अपने पिता सेठ लक्खीचंदजी की तन मन से सेवा करना प्रारम्भ किया। इसका प्रभाव यह हुआ कि जब तक सेठ लक्खीचंदजी जीवित रहे, तब तक कभी उन्होंने इनको बिना साथ बैठाये भोजन नहीं किया।

संवत् १९६४ में सेठ लक्खीचन्दजी का स्वर्गवास हुआ। मृत्यु के समय करीब ४ लाख रुपया वे अपने कुटुम्बियों तथा रिश्तेदारों को दे गये। तथा २ लाख रुपया उनकी मृत्यु के पश्चात् खर्च किये गये। सेठ लक्खीचन्दजी के पश्चात् सारे कार्य्य का बोझा आप पर आकर पड़ गया। केवल १३ वर्ष की उम्र में इतने बड़े काम और जमीदारी को संभालना आसान बात नहीं थी। मगर इन्होंने अत्यन्त दूरदर्शिता और बुद्धिमानी से इस काम को संचालित किया। संवत् १९७१ में आपका विवाह हैदराबाद (दक्षिण) के मशहूर सेठ दीवानबहादुर थानमलजी लूणिया के यहाँ हुआ। आपके हाथों में सब प्रकार की जिम्मेदारी आते ही राजनैतिक, सामाजिक, और धार्मिक सभी क्षेत्रों में आपकी प्रतिभा चमक उठी।

आपका राजनैतिक जीवन समय २ पर अत्यन्त महत्व पूर्ण भागों में काम करता रहा। सबसे पहिले उस जमाने में जब कि भारत की राजनीत गवर्नमेंट की सेवा और राज्य भक्ति में ही सफल समझी जाती थी, और महात्मा गांधी के समान महापुरुषों तक ने गवर्नमेंट को युद्ध में मदद पहुँचाने की अपील की थी। उस समय आपने गवर्नमेंट को ५० हजार रुपया वार-लोन में प्रदान किया था। और कुछ रंगरूट भी युद्ध में भेजे थे। इससे गवर्नमेंट बड़ी प्रसन्न हुई। और उसने आपका स्टेच्यू जलगाँव में स्थापित किया, तथा आपको सब प्रकार के हथियारों का फ्री लायसेंस प्रदान किया। इसके पश्चात् जब भारतीय राजनीति का धोरण बदला, तब आपने इस ओर सेवा करना प्रारम्भ किया। जब लोकमान्य तिलक काले पानी से लौट कर मलकापुर पधारे,, तब आप वहाँ की स्वागत समिति के अध्यक्ष थे।

राजनैतिक जीवन

सन् १९२१ में जब महात्मा गान्धी का असहयोग आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तब आपने उसमें भी बड़े उत्साह के साथ भाग लिया, जिसके फलस्वरूप आपको गवर्नमेंट का कोप भाजन बनना पड़ा और आपके लाइसेंस व हथियार जप्त कर लिये गये। सन् १९२० में जलगांव के अन्दर बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का जो अधिवेशन हुआ था, उसके अध्यक्ष आप ही थे। दो वर्ष पूर्व वहाँ जो "स्वदेशी प्रदर्शनी" हुई थी, उसके स्वागताध्यक्ष भी आप ही थे। इसी वर्ष करीब १५ हजार वोटों से बम्बई प्रान्त की तरफ से आप बम्बई की लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य चुने गये थे। इसी से आपकी लोक-प्रियता का पता चलता है। इसी समय आपको हथियारों का लायसेंस पुनः वापिस मिल गया। आप शुद्ध खद्दर धारण करते हैं। तथा हर एक राष्ट्रीय कार्य्य में बड़े ही उत्साह के साथ भाग लेते हैं।

आपका सामाजिक जीवन आपके राजनैतिक जीवन से भी बहुत उज्वल है। भारतवर्ष के ओसवालों में सुधार और उन्नति की जो लहर पैदा हुई है, उसमें आपका बहुत बड़ा हाथ रहा है। पहिले पहिल आपने खानदेशीय ओसवाल सभा की स्थापना की। उसके पश्चात् मुनी पद्मानन्दजी के सहयोग से आपने अखिल भारतीय मुनि-मण्डल की स्थापना की। और "मुनी" नामक एक मासिक पत्र का भी निकालना प्रारम्भ किया। इसी समय अखिल भारतीय ओसवाल महासभा की भी आपने स्थापना की, और प्रारम्भ में आप ही उसके अध्यक्ष रहे। मालेगाँव में जब इसकी कार्य्य कारिणी की मीटिंग हुई उसमें करीब १ हजार प्रतिनिधि आये थे। इसके पश्चात् आपने अपने ज्ञातीय युवकों को उच्च शिक्षा दिलाने के उद्देश्य से अपने पास से २० हजार रुपया देकर "खानदेश एज्यूकेशन सोसायटी" नामक शिक्षण संस्था की स्थापना की। इसके प्रेसीडेण्ट भी आप ही हैं। यह संस्था अभी तक करीब २० हजार रुपये ओसवाल विद्यार्थियों को वितरित चुकी है। और करीब ५२ हजार का फण्ड इसके पास मौजूद है। इसके अतिरिक्त जलगांव के अन्दर आपने ओसवाल जैन बोर्डिंग की स्थापना की, जिसके अध्यक्ष भी आप ही हैं। जामनेर में आपने अपनी माता श्रीमती भागीरथीबाई के नाम से एक लायब्रेरी की भी स्थापना की। इस लायब्रेरी के पास इस समय करीब २० हजार रुपयों की जायदाद है। अपनी मातृभूमि बड़ल के अंतर्गत भी आपने एक जैन गुरुकुल स्थापित किया है। इसके अध्यक्ष भी आप ही हैं। इसके अतिरिक्त आप चांदवड़ के "नेमिनाथ ब्रह्मचर्य्याश्रम" के अध्यक्ष तथा अमलनेर

सामाजिक जीवन

की "खानदेश एज्यूकेशन सोसायटी" के उपाध्यक्ष हैं। अजमेर में होने वाले "अखिल भारतीय ओसवाल सम्मेलन" के प्रथम अधिवेशन के आप स्वागताध्यक्ष रहे, और उसमें आपने काफी सहायता पहुँचाई।

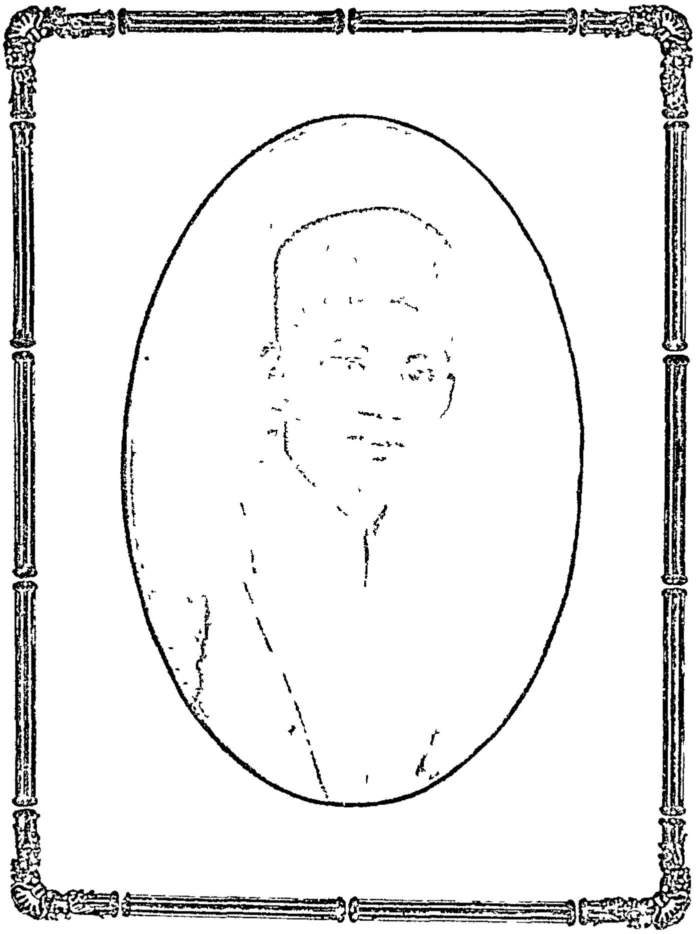
संवत् १९७२।७३ में जब अनाज का भाव एकदम मँहगा हो गया और जामनेर की गरीब प्रजा तबाही की स्थिति में आ गई, उस समय १२ महीने तक जनता को गेहूँ व ज्वार सस्ते भाव में सप्लाय करने की जवाबदारी आपने अपने ऊपर लेली। उस समय आपने बाजार भाव से दो तिहाई मूल्य पर १ साल तक अनाज सप्लाय कर गरीब जनता को सहायता पहुँचाई। इसी प्रकार प्लेग तथा एन्फ्लूएन्जा के समय में भी आपने पब्लिक की बहुत कीमती सेवाएँ कीं। न केवल इन संस्थाओं ही में रहकर आपने समाज सेवाएँ कीं। पर कई महत्वपूर्ण पंचायतों में भी आपने बहुत दिलचस्पी से भाग लिया। सिल्लौड़, लोण्ढरी, धूलिया, इगतपुरी में पेंचीदे सामाजिक विवाद खड़े होने पर आपके सभापतित्व एवं नेतृत्व में पंचायतें भरीं एवं उनमें आपने ऐसी बुद्धिमानी पूर्ण फैसले किये कि जिन्हें देखकर आपके सामाजिक उन्नत विचारों का सहज ही पता लगता है।

प्रारम्भ में आप कट्टर जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी थे। इसके बाद "पहाड़ी बाबा" नामक एक विख्यात साधु के सत्संग से आपको वेदान्त, पातंजलि दर्शन और योगाभ्यास का बहुत शौक लगा। इसी योगाभ्यास के निमित्त आपने अपने बगीचे में जमीन के भीतर एक बहुत शान्त और भव्य योगशाला का निर्माण कराया। इसके पश्चात् आपने मुस्लिम, ईसाई और आर्यसमाज आदि सब धर्मों का अध्ययन किया। इसके पश्चात् आपके जो विचार हुए, वे बहुत उच्च हैं। आपने अनुभव किया कि "इस जगत् में तीन प्रकार के धर्म प्रचलित हैं" पहला ईश्वरीय धर्म, दूसरा प्राकृतिक धर्म और तीसरा मनुष्यकृत धर्म। अहिंसा, सत्य, निर्वैर भावना और अखिल शान्तिमय विशुद्ध भावना ईश्वरीय धर्म है। तथा भूख पर भोजन करना, प्यास पर पानी पीना यह प्राकृतिक धर्म है। यह दोनों धर्म सत्य हैं और अमर हैं। तीसरा धर्म जो मनुष्यकृत है और मनुष्य की स्वार्थ प्रकृति की वजह से जिसका रूप बहुत विकृत हो गया है, वह भेदभाव का प्रवर्तक है, और उसीने मनुष्य जाति में इतने भेदभाव और उपद्रव पैदा किये हैं। इन्हीं सब अनुभवों से आपका विश्वास मनुष्य धर्म से उठकर प्राकृतिक और ईश्वरीय धर्मों पर जम गया है। कहना न होगा कि इस सम्बन्ध में आपके विचार कितने उन्नत हैं।

धार्मिक जीवन

उपरोक्त अवतरणों से स्पष्ट हो गया है कि क्या राजनैतिक, क्या धार्मिक और क्या सामाजिक सभी विषयों में आपका जीवन उत्तरोत्तर प्रगतिशील रहा है। आप खानदेश, बरार तथा महाराष्ट्र प्रान्त के ओसवाल समाज में नामांकित धनिक और उदार पुरुष हैं। इस समय आपके सौभाग्यवती माणिक बाई नामक एक पुत्री हैं, जिनका विवाह मांजरोद निवासी श्री दीपचन्दजी सबदरा के साथ हुआ है। आप अभी बी० ए० में पढ़ते हैं। सेठ राजमलजी का जामनेर में 'लक्खीचंद रामचंद" के नाम से बैंकिंग व कृषि का कार्य होता है। आपकी जलगाँव दुकान पर भी बैंकिंग व्यापार होता है।

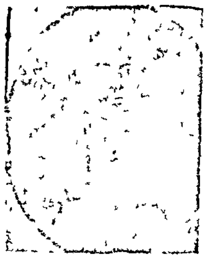
ग्रन्थ के द्वितीय आधार-स्तम्भ



श्रीयुत सुगन्धचन्द्रजी लूणावत, धामक (बरार)

परिचयः—

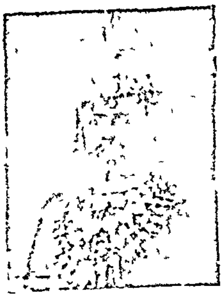
आप बरार प्रान्त की प्रसिद्ध फर्म मेसर्स बुधमल बिरदीचन्द लूणावत के मालिक हैं। आप बड़े शान्त, विशुद्धहृदय एवं उच्चप्रवृत्तियों वाले युवक हैं। इतनी अल्पवय होते हुए भी आप सभा, सोसायटियों तथा शिक्षा संस्थाओं में बहुत दिलचस्पी से भाग लेते रहते हैं, एवं उनमें उदारतापूर्वक सहायताएं देते हैं। ओसवाल समाज आप जैसे "अपने" सम्पत्तिशाली एवं होनहार युवकों से बहुत बड़ी आशा रखता है। इस ग्रन्थ के प्रणयन में आपकी सहायता एवं सहानुभूति ने प्रकाशकों के मार्ग को अत्यन्त सुगम किया है।



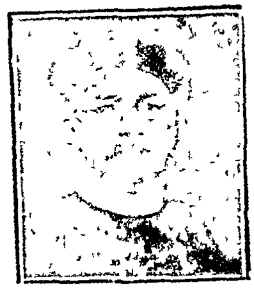
२



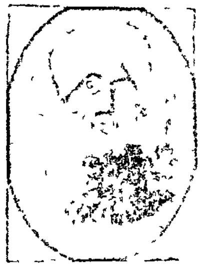
३



४



५



१



६



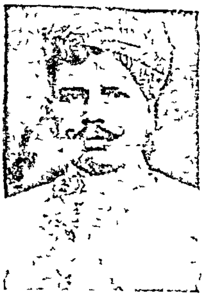
७



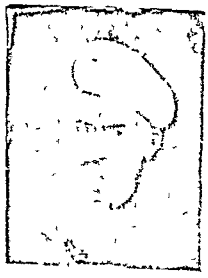
८



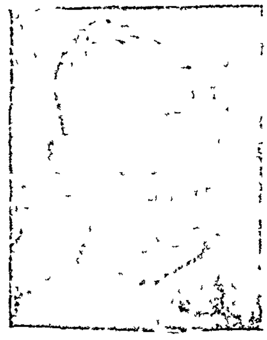
९



११



१०



१२

ग्रन्थ के माननीय संरक्षक

ग्रन्थ के माननीय संरक्षक

१—रायबहादुर सिरेमलजी बापना सी० आई० ई०, इन्दौर

भारतवर्ष के ओसवाल समाज में आप सर्व प्रथम व्यक्ति हैं, जो इस समय इन्दौर के समान बड़ी रियासत के प्रधान मंत्री (प्राइम मिनिस्टर) के उत्तरदायित्वपूर्ण पद को सफलता पूर्वक सञ्चालित कर रहे हैं। आप बड़े उदार, गम्भीर और महान हृदय के पुरुष हैं। इस ग्रन्थ के प्रणयन में आपकी प्रेरणा ने प्रकाशकों के मार्ग को बहुत प्रकाशित किया।

२—श्री० मेहता फतेलालजी, उदयपुर

आप सुप्रसिद्ध बच्छावत कर्मचन्दजी के वंशज और उदयपुर के भूतपूर्व दीवान मेहता पन्नालालजी सी० आई० ई० के सुपुत्र हैं। आप बड़े साहित्य प्रेमी और इतिहास रसिक व्यक्ति हैं। प्राचीन ग्रन्थों और चित्रों का आपके पास अच्छा संग्रह है। ओसवाल इतिहास के निर्माण में आपने अच्छा उत्साह प्रदान किया।

३—स्वर्गीय सेठ चांदमलजी डड्ढा सी० आई० ई०, बीकानेर

ओसवाल जाति के रईस पुरुषों में आपका स्थान सर्व प्रथम था। अपने समय में आप ओसवाल जाति के प्रधान पुरुष थे। आप बड़े उदार और महान हृदय के पुरुष थे। आपकी ओर से भी इस ग्रन्थ को अच्छा उत्साह प्राप्त हुआ। खेद है कि ग्रन्थ के छपते २ हाल ही में आपका स्वर्गवास हो गया।

४—बाबू बहादुरसिंहजी सिंघी, कलकत्ता

आप कलकत्ते की सुप्रसिद्ध "हरिसिंह निहालचन्द" फर्म के मालिक और बंगाल के एक बड़े जमींदार हैं। आप बड़े विद्यारसिक और साहित्य-प्रेमी पुरुष हैं। आपके पास भी प्राचीन वस्तुओं का दर्शनीय संग्रह है। इस ग्रन्थ के निर्माण में आपकी सहायता भी बहुमूल्य है।

५—बाबू पूरनचन्दजी नाहर एम० ए० बी० एल०, कलकत्ता।

आप समस्त ओसवाल समाज में सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ हैं। न-केवल ओसवाल समाज ही में प्रत्युत सारे भारत के इतिहासकारों में आप अपना एक खास स्थान रखते हैं। आप बड़े प्रसन्न चित्त और सरल हृदय के पुरुष हैं। प्राचीन वस्तुओं का संग्रह आपके पास बहुत गज़ब का है। आपने अनेकों ऐतिहासिक ग्रन्थों की रचना बहुत खोज के साथ की है। आपके द्वारा हमें इस ग्रन्थ की सामग्री संग्रह में बहुत सहायता प्राप्त हुई है।

६—दीवान वहादुर सेठ केशरीसिंहजी, कोटा

आप ओसवाल समाज के धन कुवेरों में से एक हैं। आपके द्वारा भी इस ग्रन्थ निर्माण में अच्छी सहायता प्राप्त हुई।

७—सिंघवी रघुनाथमलजी वैंकर, हैदरावाद (दक्षिण)

आप सारे ओसवाल समाज में ऐसे प्रथम व्यक्ति हैं जो व्यक्तिगत रूप से इंग्लिश स्टाइल पर वैङ्किंग, व्यापार सफलता पूर्वक कर रहे हैं। आपका हृदय वड़ा विशाल और सहानुभूतिपूर्ण है। जितनी प्रसन्नता हमको आपके सहयोग में रहने से हुई उतनी अन्यत्र कहीं न हुई। आपकी सहायताएं भी इस ग्रन्थ निर्माण में वहुमूल्य हैं।

८—श्री कन्हैयालालजी भण्डारी, इन्दौर

आप भारतवर्ष के मारवाड़ी ओसवालों में पहले या दूसरे नम्वर के इण्डस्ट्रियालिस्ट हैं। आप इन्दौर के "श्रीनन्दलाल भण्डारी मिल" के मैनेजिंग एजंट हैं। आपने भी इस ग्रंथ में अच्छी सहायता प्रदान की है।

९—श्री ईसरचन्दजी चोपड़ा, गंगा शहर

आप वड़े उदार और इतिहास प्रेमी व्यक्ति हैं। आप कलकत्ते के जूट के प्रसिद्ध व्यवसायी हैं। आपने भी इस ग्रन्थ में महत्वपूर्ण सहायता पहुँचाई है।

१०—श्री इन्द्रमलजी लूणिया, हैदरावाद (दक्षिण)

आप हैदरावाद के सुप्रसिद्ध सेठ दीवान वहादुर थानमलजी लूणिया के पौत्र हैं। आप वड़े सज्जन व्यक्ति हैं। आपने भी इस ग्रन्थ में अच्छी सहायता की है।

११—श्री शुभकरणजी सुराणा, चूरू

आप प्रसिद्ध व्यापारी और साहित्य प्रेमी व्यक्ति हैं। आपने भी इस ग्रन्थ में सहायता पहुँचाई है।

१२—श्री तिलोकचन्दजी सुराणा, चूरू

आप तेरा पन्थी समाज में गण्यमान्य व्यक्ति है। आप कलकत्ते के मारवाड़ी समाज में प्रतिष्ठित सार्वजनिक कार्य्यकर्त्ता हैं। इस ग्रन्थ में आपने भी सहायता पहुँचाई है।

ग्रन्थ के माननीय सहायक

श्रीयुत मेहता जगन्नाथसिंहजी, लक्ष्मणसिंहजी, उदयपुर.
,, लालचन्दजी ढढ्ढा, ढढ्ढा एण्ड कम्पनी, मद्रास.
बाबू लक्ष्मीचन्दजी छल्लानी, सिकंदराबाद. (दक्षिण)
बाबू सोहनलालजी दूगड़, कलकत्ता
सेठ कनकमलजी चौधरी, बड़नगर (गवालियर)
सेठ बख्तावरमल मोहनलाल सेठिया पट्टालमसुला, मद्रास.
राय साहिब सेठ मोतीलाल बालमुकुन्द मूथा, सतारा
श्रीयुत रोशनलालजी चतुर, उदयपुर.
सेठ अचलसिंहजी, आगरा.
सेठ हीरालालजी मुल्थान वाले, खाचरोद (गवालियर)
सेठ केशरीचन्द मंगलचन्द झाबक, मद्रास.
सेठ अगरचन्द मानमल चोरड़िया, मद्रास
सेठ खुशालचंद धर्मचंद गोलेछा, टिंडीवरम् (मद्रास).
सेठ हंसराज सागरमल खांटेड़, ट्रिवल्लूर (मद्रास)
सेठ पृथ्वीराजजी ललवानी, मांडल (खानदेश)
सेठ माणकचंद गेंदमल वेद, मद्रास.
सेठ रावतमल भेरोंदान कोठारी, बीकानेर.
श्री महासिंहराय मेघराज बहादुर मुर्शिदाबाद.
श्रीयुत पुखराजजी कोचर, हिंगनघाट.
,, सरदारनाथजी मोदी "वकील" जोधपुर.
सेठ बनेचंद जुहारमल दूगड़, तिरमलगिरी (हैदराबाद)
लाला रतनचंद हरजसराय बरड़, अमृतसर.
सेठ जेठमल श्रीचंद गधइया, सरदार शहर.
सेठ चैनरूप सम्पतराम दूगड़, सरदार शहर.
सेठ निहालचन्द पूनमचन्द गोलेछा, फलोदी.
लाला शादीराम गोकुलचन्द नाहर, देहली.
श्री जीवनमल चन्दनमल बैगानी, लाडनूँ.
श्री शिवजीराम खूबचंद चंडालिया, सरदारशहर.

भूमिका

आज हम बड़ी प्रसन्नता के साथ इस महान ग्रन्थ को लेकर पाठकों के सम्मुख उपस्थित होते हैं। जिस समय हमने इस विशाल कार्य्य का बीड़ा उठाया था, उस समय हमें यह आशा न थी, कि यह कार्य्य इतने सर्वाङ्ग रूप में हम लोगों के द्वारा प्रस्तुत हो सकेगा। फिर भी महत्वाकांक्षा और उत्साह की एक प्रबल चिनगारी हमारे हृदयों में प्रदीप्त हो रही थी, और वह हमारे मार्ग को प्रकाशित कर रही थी। उसी की प्रेरणा से ज्यों ज्यों हम इसके अंदर घुसते गये, त्यों त्यों सर्वतोमुखी सफलता के दर्शन हमें होते गये। काम बड़ा कठिन था, परिश्रम भी बहुत बड़ा था, मगर हमारा उत्साह भी अदम्य था। इसीका परिणाम है, कि हिन्दुस्तान के कोने २ में बड़े से बड़े शहर और छोटे से छोटे गाँव में घर २ जाकर हम लोगों ने इस महान ग्रन्थ की सामग्री एकत्रित की। हमारी चार पार्टियों ने रेलवे और मोटर को मिलाकर करीब १। लाख मील की मुसाफिरी की। जाड़े की कड़कड़ाती हुई रातों और गर्मियों की धधकती हुई दुपहरियों में हमारे कार्य्यकर्ता अविश्रांत भाव से इसकी सामग्री संग्रह में जुटे रहे। इस प्रकार करीब २० महीनों के अनवरत परिश्रम से यह ग्रन्थ इस रूप में तयार हुआ।

इस ग्रन्थ के अन्दर हमने ओसवाल जाति से सम्बन्ध रखने वाली प्रत्येक महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है। इस जाति का इतिहास कितना महत्वपूर्ण और गौरवमय रहा है, यह बात इस इतिहास से पाठकों को भली भाँति रोशन हो जायगी। ऐसे महत्वपूर्ण इतिहास के प्रकाशन से कितना लाभ हुआ है, इसका निर्णय करना, हमारा नहीं प्रत्युत पाठकों का काम है।

हमें सब से बड़ी प्रसन्नता इस बात की है, कि भारत भर के ओसवाल गृहस्थों ने हमारी इस योजना का हृदय से स्वागत किया। जहाँ २ हम गये, वहाँ २ के सद्गृहस्थों ने हमारा बड़े प्रेम से स्वागत किया, तथा हमें हर तरह से सहायता पहुँचाने की कोशिश की। कहना न होगा, कि यदि इतना प्रबल सहयोग ओसवाल गृहस्थों की तरफ से हमें प्राप्त न हुआ होता, तो आज यह ग्रन्थ कदापि इस रूप में पाठकों की सेवा में न पहुँच पाता।

यद्यपि ग्रन्थ के द्वारा जो सामग्री पाठकों के पास पहुँच रही है, वह बहुत पर्य्याप्त मात्रा में है, फिर भी इसके अंदर जो त्रुटियां शेष रह गई हैं, वे हमारी नजरों से छिपी हुई नहीं है। पहिली त्रुटि जो हमें खटक रही है, वह उन शिलालेखों का न दिया जाना है, जो ओसवाल जाति के सम्बन्ध में हमें प्राप्त हो सकते थे। यद्यपि इसके धार्मिक अध्याय में कई प्रधान २ शिला लेखों का वर्णन कर दिया गया है, फिर भी अनेकों ऐसे छोटे २ शिला लेख रह गये हैं जो अधिक महत्व पूर्ण न होने पर भी इस ग्रन्थ के लिए आवश्यक थे। दूसरी त्रुटि जिन प्रशस्तियों के फोटो हमने इस ग्रन्थ में दिये हैं, उनके अनुवाद यथास्थान हम नहीं सजा सके, इसका भी हमें अफसोस है। तीसरा यह विचार था कि भारतवर्ष के अंदर जितने ओसवाल ग्रेज्युएट्स और रिफार्मर्स हैं, उनका संक्षिप्त परिचय एक स्वतंत्र अध्याय में किया जाय। इसके लिए हमने बहुत पत्र व्यवहार भी किया, मगर खेद है कि उन लोगों के पूर्ण परिचय न आने की वजह से

हमें इस कार्य्य से वंचित रहना पड़ा। ओसवाल जाति के निर्माण करने वाले जैनाचार्य्यों के चित्र देने का भी हमारा विचार था, मगर असली चित्र प्राप्त न होने की वजह से वह विचार भी हमको स्थगित कर देना पड़ा। अगर यह सब त्रुटियाँ पूर्ण हो गई होतीं, तो यह ग्रन्थ बहुत ही अधिक सुन्दर होता। फिर भी जिस रूप में यह प्रकाशित हो रहा है, हमारा दावा है कि अभीतक कोई भी जातीय इतिहास, भारतवर्ष में इसकी जोड़ का नहीं है। और हमें आशा है कि भविष्य में सुंदर जातीय इतिहासों की रचना करने वाले व्यक्तियों के लिये यह ग्रन्थ मार्ग दर्शक होगा। प्रेस सम्बन्धी जो अशुद्धियाँ इस ग्रन्थ के अंदर रह गई हैं, उसके लिये भी हमें बहुत बड़ा दुःख है। पर इतने बड़े कार्य्य के अन्दर जहाँ पचीसों व्यक्ति प्रूफ पढ़ने वाले और मेटर तय्यार करने वाले हों, इस प्रकार की भूलों का होना स्वाभाविक है। दृष्टि दोष से या और किन्हीं अभावों से इस ग्रन्थ के अंदर जो भूलें, त्रुटियाँ और कमियाँ रह गई हों, पाठकों से हमारा निवेदन है कि उनके सम्बन्ध में वे हमें अवश्य सूचित करें, यथा साध्य अगले संस्करण में उनको सुधारने का प्रयत्न करेंगे। इस ग्रन्थ के "ओसवाल जाति की उत्पत्ति, अभ्युदय" इत्यादि एक दो अध्यायों को छोड़ कर, जितनी भी राजनैतिक, व्यापारिक और कोटुम्बिक इतिहास की सामग्री एकत्रित की गई है, वह सब ओसवाल गृहस्थों के द्वारा ही हमें प्राप्त हुई है, अतएव उसके सही या गलत होने की जबावदारी उन्हीं सज्जनों पर है।

इस ग्रंथ के प्रणयन में जिन सज्जनों ने महान सहायताएँ पहुँचाई हैं उनमें से श्रीयुत राजमल जी ललवानी, सुगन्धचन्द्रजी लूणावत, रायबहादुर सिरेमलजी बापना सी० आई० ई०, मेहता फतेलालजी, स्वर्गीय सेठ चांदमलजी ढड्ढा सी० आई० ई०, सेठ बहादुरसिंहजी सिंघी, बाबू पूरनचन्द्रजी नाहर एम० ए० बी० एल०, दीवान बहादुर सेठ केशरीसिंहजी, सिंघवी रघुनाथमलजी बैंकर्स, श्री कन्हैयालालजी भण्डारी, श्री ईसरचंदजी चौपड़ा, श्री इन्द्रमलजी लूणिया एवं श्री शुभकरणजी सुराणा का नामोल्लेख तो हम पहिले संरक्षकों के परिचय में कर ही चुके हैं। इनके अलावा मुनि ज्ञानसुन्दरजी, गणी रामलालजी तथा जैन साहित्य नो इतिहास के लेखक, फलौदी निवासी श्रीयुत फूलचंदजी और श्री युत नेमीचंदजी झावक, मद्रास के श्रीयुत मंगलचंदजी झावक, श्रीयुत जसवंतमलजी सेठिया, हैदराबाद के श्रीयुत किशनलालजी गोठी, देहली के श्रीयुत गोकुलचन्दजी नाहर, अमृतसर के लाला रतनचन्दजी बरड़, जोधपुर के मेहता जसवंतरायजी, भण्डारी जीवनमलजी, भण्डारी अखेराजजी, भण्डारी बिशनदासजी, मुहणोत वृद्धराजजी, मुहणोत सरदारमलजी तथा डड्ढा मनोहरमलजी, कलकत्ते के श्री सोहनलालजी दूगड़, उदयपुर निवासी लेफ्टिनेंट कुँवर दलपतसिंहजी इत्यादि महानुभावों ने इस ग्रंथ के प्रणयन में जो अमूल्य सहायताएँ पहुँचाई हैं, उनके प्रति धन्यवाद प्रदर्शित करना हम अपना परम कर्तव्य समझते हैं। अंत में आदर्श प्रिंटिंग प्रेस अजमेर के संचालक बाबू जीतमलजी लूणिया को भी धन्यवाद देना भूल नहीं सकते, जिनके सौजन्य पूर्ण व्यवहार ने इस ग्रन्थ की छपाई में हर तरह की सहूलियतें दीं।

एक बार फिर हम पाठकों को इस ग्रंथ की सफलता के लिए बधाई देते हैं और त्रुटियों के लिये क्षमा मांगते हैं।

शांति मन्दिर, मानपुरा (इन्दौर)
तारीख १—८—१९३४ ईस्वी

भवदीय—
"लेखकगण"

श्रीमती धनकुंवर बाई कोटा

विषय-सूची

नोट—कई खानदानों के परिचय भूल से यथास्थान छपना रह गये और कई परिवारों के परिचय ग्रन्थ छप चुकने के पश्चात् आये। अतएव ऐसे सब परिवारों के परिचय "परिशिष्ट" में दिये गए हैं।

सिंहावलोकन

ओसवाल जाति के इस विशाल इतिहास के द्वारा जो गहरी और गवेषणा पूर्ण सामग्री पाठकों के सामने पेश की जा रही है हमारे खयाल से वह इतनी पर्याप्त है कि प्रत्येक विचारक पाठक के सम्मुख वह ओसवाल जाति के उत्थान और पतन के मूल भूत तत्वों का चित्र सिनेमा फिल्म की तरह खींच देगी। प्रत्येक व्यक्ति, जाति और देश के इतिहास में कुछ ऐसे विरोधात्मक मूल भूत तत्व काम करते रहते हैं जो समय आने पर या तो उस जाति को उत्थान के शिखर पर ले जाते हैं या पतन के गर्भ में ढकेल देते हैं। कहना न होगा कि संसार के अन्तर्गत परिवर्त्तन का जो प्रबल चक्र चलता रहता है वह इन्हीं तत्वों से संचालित होता है। ओसवाल जाति के इतिहास पर भी यदि यही नियम चरितार्थ होता हो तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं।

इस जाति के इतिहास का मनोयोग पूर्वक अध्ययन करने से हमें इसमें कई सूक्ष्म तत्व काम करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। हम देखते हैं कि मध्ययुगीन जैना चार्यों के अन्तर्गत सारे विश्व को जैन धर्म के झण्डे के नीचे लाने की एक प्रबल महत्वाकाँक्षा का उदय होता है, और उसी महत्वाकाँक्षा की एक चिन गारी से ओसवाल जाति की स्थापना होती है। स्थापना होते ही यह जाति वायुवेग के साथ, उन्नति के मैदान में अपना घोड़ा फेंकती है और क्या राजनैतिक, क्या सैनिक और क्या व्यापारिक सभी क्षेत्रों में अपना प्रबल अस्तित्व स्थापित कर देती है। प्रति स्पर्द्धा के मैदान में वह अपने से प्राचीन कई जातियों को पीछे रख देती है। इसकी इस आकस्मिक उन्नति के कारणों पर जब हम विचार करते हैं तो हमें इसमें सबसे पहला तत्व जैनचार्य्यों की बुद्धिमत्ता और उनकी विवेकशीलता के सम्बन्ध में मिलता है। इस जाति की स्थापना के अन्तर्गत जैनाचार्य्यों ने जिन उदार भावनाओं और सिद्धान्तों को रक्खा, उसके उदाहरण इतिहास में बहुत कम देखने को मिलते हैं। इस जाति के संगठन में जातीय, धार्मिक और कौटुम्बिक आदि सभी प्रकार की उन स्वाधीनताओं का अस्तित्व रक्खा गया, जिसके वायुमण्डल में रहकर उसका प्रत्येक सदस्य अपना सांसारिक और नैतिक हर प्रकार का विकास कर सकता है।

सामाजिक दृष्टि बिन्दु से यदि देखा जाय तो इस इतिहास में हमें स्पष्ट दिखलाई देता है कि जैनाचार्य्यों ने जाति पांति के विचार को गौण रख कर प्रतिभा और शक्ति के मान से तेजस्वी पुरुषों को इस जाति में मिलाना प्रारम्भ किया। उन महात्माओं ने इस जाति में उन्हीं पुरुषों को ग्रहण करना प्रारम्भ किया जो या तो अपने मालिक के बल से राज शासन की धुरी को घुमा सकते थे, या जो अपनी भुजाओं के बल से रणक्षेत्र के धोरण को बदल देने में सफल हो सकते थे अथवा जो अपनी व्यापारिक चतुरता से आर्थिक जगत के अन्तर्गत अपना पैर रोक देने की ताकत रखते थे। फिर चाहे वे ब्राह्मण हों, चाहे क्षत्रिय, चाहे वैश्य। उन्होंने हर समय चुने हुए और प्रतिभाशील व्यक्तियों के संगठन का ध्यान रक्खा। इसका परिणाम यह हुआ कि इस जाति में जितने भी लोग सम्मिलित हुए वे सब शक्तिशाली और प्राकृतिक विशेषताओं से सम्पन्न थे। एक ओर जहाँ उन्होंने राजनैतिक वातावरण में अपने अद्भुत करिश्मे दिखलाये, दूसरी ओर उसी

जैनाचार्यों का सामाजिक दृष्टि बिन्दु

प्रकार सैनिक क्षेत्र में भी उन्होंने अपनी भुजाओं के बल से काया पलट कर दिया। वे स्वयं चाहे राजा न बने हों, मगर इसमें कोई सन्देह नहीं कि उन्होंने कई राजाओं को बना दिया। इसी प्रकार व्यापारिक लाइन में भी उन्होंने अपना अद्भुत पराक्रम प्रकट किया। सच बात तो यह है, कि वे जिधर झुक गये विजय भी उधर ही हो गई।

राजनैतिक प्रतिभा

जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर आदि रियासतों का इतिहास देखने से पता लगता है कि सोलहवीं शताब्दि से लेकर बीसवीं सदी के आरम्भ तक इन रियासतों के शासन संचालन में ओसवालों का प्रधान हाथ रहा है। जोधपुर स्टेट के अन्तर्गत साढ़े चारसो वर्षों में लगभग १०० दीवान ओसवाल हुए, इसी प्रकार वहाँ की मिलीटरी लाइन में भी उनका काफी प्रभुत्व था। इसी प्रकार मेवाड़ और बीकानेर में भी हमें पचीसों प्रधान, दीवान और फ़ौजबक्षी (कमाण्डर इन चीफ) ओसवाल दिखलाई देते हैं। इसके साथ ही यह बात भी खास तौर से ध्यान में रखने की है कि वह समय आज की तरह शान्ति और सुव्यवस्था का न था, उस समय भारत के राजनैतिक वातवरण में अशान्ति के भयङ्कर काले बादल मण्डरा रहे थे। मिनिट मिनिट में साम्राज्यनीति और राजनीति में परिवर्तन होते थे। जिसकी वजह से शासकों का आस्तित्व खतरे में था, दीवान और मुसाहबों की तो बात ही क्या, मगर कठिनता की उस काल रात्रि में भी ओसवाल राजनीतिज्ञों ने अपने अस्तित्व को नष्ट न होने दिया। यही नहीं कठिनाइयों की भयङ्कर कसौटी पर कस जाने की वजह से उनका अस्तित्व और भी अधिक प्रकाशित हो उठा, और उन्होंने अपने अस्तित्व के साथ २ अपने मालिकों के अस्तित्व की भी रक्षा की। मुहणोत नैणसी, भण्डारी खींवसी, भण्डारी रघुनाथ, भण्डारी गंगाराम, सिंघवी जेठमल, सिंघवी इन्द्रराज, सिंघवी धनराज, सिंघवी फतेराज, बच्छावत कर्मचंद, मेहता हिन्दूमल, मेहता जालसी, कावड़िया भामाशाह, सिंघवी दयालदास, मेहता अगरचंद, मेहता गोकुलचंद, मेहता शेरसिंह, जोरावरमल बापना इत्यादि अनेकों प्रतापी ओसवाल मुत्सुद्दियों की गौरव गाथाओं से आज राजस्थान का इतिहास प्रकाशित हो रहा है। रियासतों की ओर इन से लोगों को प्राप्त हुए रुक्कों, परवानों से पता लगता है कि उनकी सेवाओं का उस समय कितना बड़ा मूल्य रहा था।

धार्मिक जगत में

राजनैतिक क्षेत्र ही की तरह ये लोग धार्मिक क्षेत्र में भी कभी किसी से पीछे नहीं रहे। इस जाति के धार्मिक इतिहास में भी हमें समराशाह, करमाशाह, वर्द्धमानशाह, थीहरूशाह, भैंसाशाह, पेथड़शाह, कर्मचन्द बच्छावत, जगत सेठ, जेसलमेर के बापना (पटुवा) बंधु इत्यादि ऐसे २ महानपुरुषों के उल्लेखनीय नाम मिलते हैं जिन्होंने लाखों रुपये खर्च करके बड़े २ संघ निकलवाये, शत्रुंजय आदि बड़े २ तीर्थों का पुनर्निर्माण करवाया, प्रतिमाओं की प्रतिष्ठाएँ कीं, शास्त्र भंडार भरवाये, अकाल पीड़ितों के लिये अन्न के भंडार खोल दिये, इत्यादि जितने भी महान और उदारतापूर्ण बातें हो सकती हैं, वे सब हमें इस जाति के इतिहास में देखने को मिलती हैं।

धर्म में इतनी गहरी अनुभूति रखने पर हमें यह विशेषता इस जाति के लोगों में देखने को मिलती है कि किसी भी प्रकार की धार्मिक गुलामी और सङ्कीर्णता के चक्कर में ये लोग न फंसे और यही कारण है कि अहिंसा धर्म का पालन करनेवाली इस जाति ने युद्ध के मैदान में हजारों लोगों को तलवार के

घाट उतार दिया, मगर जैन धर्म की अहिंसा कहीं भी उनके मार्ग में बाधक न हुई। इसी प्रकार जब आवश्यकता महसूस हुई तो इस जाति के कई परिवारों ने वैष्णव धर्म को भी ग्रहण कर लिया। मगर उनका जातीय संगठन इतना मज़बूत था कि इस धर्म परिवर्तन से उस संगठन को बिलकुल धक्का न पहुँचा। आगे जाकर तो यह धार्मिक स्वाधीनता और भी व्यापक हो गई, और आज तो हम ओसवाल परिवारों में भिन्न २ धर्मों की एकता के अद्भुत दृश्य देखते हैं। एक ही घर में हम देखते हैं कि पिता जैन है, तो माता वैष्णव है, पुत्र आर्य्यसमाजी है तो पुत्रवधू स्थानकवासी है, मगर इस धार्मिक स्वाधीनता से उनके कौटुम्बिक प्रेम और जातीय संगठन में किसी भी प्रकार की बाधा नहीं आती। इसका परिणाम यह हुआ कि धार्मिक बंधनों की वजह से जातीय संगठन में अभीतक कोई शिथिलता न आने पाई।

इस इतिहास के अन्तर्गत हमें यह बात भी देखने को मिलती है कि इस जाति का मुत्सुद्दी वर्ग जिस समय अपनी राजनैतिक प्रतिभा से राजस्थान के इतिहास को दैदीप्यमान कर रहा था। उसी समय उसका व्यापारिक वर्ग हजारों माइल दूर देश विदेश में जाकर अपनी व्यापारिक प्रतिभा से कई अपरिचित देशों के अन्दर अपने मजबूत पैरों को रोकने में समर्थ हो रहा था।

व्यापारिक क्षेत्र में

कहना न होगा कि उस जमाने में रेल, तार, पोस्ट आदि यातायात के साधनों की बिलकुल सुविधा न थी, यात्राएँ या तो पैदल करनी पड़ती थीं या बैल गाड़ियों और ऊँटों पर। अन्धकार के उस घनघोर युग में ओसवाल व्यापारी घर से एक लोटा डोर लेकर निकलते थे और "घर कूँच घर मुकाम" की कहावत को चरितार्थ करते हुए, महीनों में बंगाल, आसाम, मद्रास इत्यादि अपरिचित देशों में पहुँचते थे। ये लोग वहाँ की भाषा और रीति रिवाजों को न जानते थे और न वहाँ वाले इनकी भाषा और सभ्यता से परिचित थे। मगर ऐसी भयंकर कठिनाई में भी ये लोग विचलित न हुए, और इन्होंने हिन्दुस्तान के एक छोर से दूसरे छोर तक छोटे २ व्यापारिक केन्द्रों में भी अपने पैर अत्यन्त मजबूती से से रोप दिये और लाखों रुपये की दौलत प्राप्त कर अपने और अपने देश के नाम को अमर कर दिया। कहाँ नागौर, कहाँ बङ्गाल, कहां उस समय की भयंकर परिस्थिति, और कहाँ लोटा डोर लेकर निकलने वाला सेठ हीरानन्द? क्या कोई कल्पना कर सकता था, कि इसी हीरानन्दके वंशज भारत के इतिहास में "जगत् सेठ" के नाम से प्रसिद्ध होंगे, और वहां के राजनैतिक, धार्मिक और सामाजिक वातावरण पर अपना एकाधिपत्य कायम कर लेंगे? सच बात तो यह है कि प्रतिभा के लगाम नहीं होती, जब इसका विकास होता है तब सर्वतोमुखी होता है। और यही कारण था उसी हीरानन्द के वंशजों के घर में एक समय ऐसा आया जब चालीस करोड़ का व्यापार होता था, और सारे भारत में वह घर प्रथम श्रेणी का धनिक था। लार्ड क्लाइव ने अपने पर लगाये गये इलजामों का प्रतिकार करते हुए लन्दन में कहा था कि—"मैं जब मुर्शिदाबाद गया और वहाँ सोना चांदी और जवाहरात के बड़े २ ढेर देखे, उस समय मैंने अपने मन को कैसे काबू में रक्खा, यह मेरी अन्तरात्मा ही जानती है।" इस प्रकार इस जाति के और भी हजारों लाखों परिवार अपनी व्यापारिक प्रतिभा के बल से भारत भर में फैल गये। और आज भी उनके वंशज अत्यन्त प्रतिष्ठा के साथ वहाँ पर अपना व्यापार कर रहे हैं।

ऊपर के अवतरणों से हमें यह बात स्पष्ट मालूम हो जाती है कि किसी जाति को उन्नति के

शिखर पर आरूढ़ करने के लिये जिन २ गुणों और प्रतिभाओं की आवश्यकता होती है वह ओसवाल जाति में थी। इतना होने पर भी इस जाति का अक्षय प्रताप इतिहास के पृष्ठों पर अधिक समय तक टिका न रह सका, और उन्हीं महान् पुरुषों के वंशज धीरे २ गिरते हुए आज ऐसी कमजोर स्थिति में पहुँच गये, इसका कारण क्या? क्या यह केवल भाग्य का फेर है? क्या यह केवल विधि की विडम्बना है? या इसके अन्तर्गत भी कोई रहस्य है? इतिहास स्पष्ट रूप से घोषित करता है कि संसार में बिना कारण के कोई कार्य्य नहीं होता, हर एक छोटी से छोटी घटना के अन्त काल में भी उसका मूल भूत कारण विद्यमान रहता है। अगर ओसवाल जाति उत्थान के ऊँचे शिखर पर पहुँची, तो उसकी जड़ में भी कई महत्वपूर्ण तत्व विद्यमान थे और अगर आज वह अपनी स्थिति से इतनी नीचे गिर गई, तो उसके अन्दर भी उतने ही मजबूत कारण हैं। नीचे हम उन्हीं में से कतिपय कारणों पर संक्षिप्त प्रकाश डालने का प्रयत्न करते हैं।

पतन का प्रारम्भ

इस जाति के पतन का पहला कारण जो हमें इतिहास के पृष्ठों पर दिखलाई देता है, वह मुत्सुद्दियों की पारस्परिक फूट है। राजस्थान के ओसवाल मुत्सुद्दी राजनीतिज्ञ थे, वीर थे, स्वामि भक्त थे, अपने स्वामी के लिए हंसते २ अपनी जान पर खेलजाना उनके लिए रोज की मामूली बात थी, इन सब गुणों के होते हुए भी उनमें बन्धु विद्रोह की अगन बहुत जोरों से प्रज्वलित थी, अपने भाइयों के उत्कर्ष को सहन करना उनके लिए बहुत कठिन था, और यही कारण था, कि इन लोगों के बीच में हमेशा भयङ्कर षड्यंत्र चला करते थे। जहाँ कोई एक दीवान हुआ, तो उसकी विरुद्ध पार्टी वाले, उसीके भाई, हर तरह से उसका नाश करने की कोशिश में लग जाते थे। ऐसी कई दुःखपूर्ण दुर्घटनाएँ हमें इतिहास में देखने को मिलती हैं, कि राजनैतिक षड्यंत्रों में पड़कर समय २ पर जिन बड़े २ मुत्सुद्दियों का चूक (कतल) हुआ उन षड्यंत्रों में उन्हीं के सजातीय सब से अधिक लीडिंग पार्ट ले रहे थे। इन्हीं घात प्रतिघातों से इस जाति की उन्नति में बहुत ठेस पहुँची। इसी प्रकार इस जाति के पतन का दूसरा कारण मुत्सुद्दी क्लॉस का नकली आडम्बर और झूठा अभिमान है। घर में बेशक चूहे दण्ड पेलते हों, खाने को फाकाकशी हो, मुत्सुद्दी क्लॉस का व्यक्ति इन सब कष्टों को सहन कर लेगा, मगर व्यापार के द्वारा अपनी आजीविका को उपार्जन करने में अपनी बहुत बड़ी बेइज्जती समझेगा वह दस रुपये की राज्य की नौकरी करना पसन्द करेगा, मगर स्वतंत्र व्यवसाय की कल्पना भी उसके मस्तिष्क को दुःखदायी होगी। इसका भयङ्कर परिणाम यह हो रहा है कि इन्ही रियासतों में जहाँ पर किसी समय इन लोगों के पूर्वजों ने राजाओं तक को अपने एहसानमन्द बनाए थे, वहीं इन लोगों की बहुत खराब स्थिति हो रही है, और धीरे २ इनकी प्रतिष्ठा और इज्जत भी कम होती जा रही है, और निर्माल्य पदार्थों की तरह ये अपने जीवन को बिता रहे हैं। फिर भी मूँछ पर चांवल ठहराने की इनकी नकली ऐंठ आज भी कायम है।

मुत्सुद्दियों की पारस्परिक फूट

इस जाति के पतन का दूसरा जबर्दस्त कारण इसके अन्दर पैदा हुई साम्पदायिकता और धार्मिक मतभेद हैं। सच पूछा जाय तो इसी जहरीले कारण ने आज इस जाति को रसातल में पहुँचा दिया है। हम तो स्पष्ट रूप से निःसंकोच और निर्भीक होकर यह घोषित कर देना चाहते हैं कि ओसवाल जाति उत्थान के इतने ऊँचे शिखर पर पहुँची उसका प्रधान कारण भी तत्कालीन जैनाचार्य्य थे और आज

जो वह पतन की इस चरम सीमा पर पहुँच रही है इसका सारा उत्तर दायित्व भी वर्तमान धर्माचार्यों पर ही है। धर्म संस्था मनुष्य की भावुकता का विकास करने वाली संस्था है। इस भावुकता को यदि उचित मार्ग से संचालित किया जाय तो इसीमे संसार के बड़े से बड़े उपकार सिद्ध हो सकते हैं और यदि इसी को गलत रास्ते पर लगा दी जाय तो संसार के बड़े से बड़े अनिष्ट भी इससे हो सकते हैं। प्राचीन जैनाचार्यों ने जहाँ इस भावुकता का उपयोग लोगों को मिलाने और संगठित करने में किया, वहाँ आगे के जैनाचार्यों ने, अपने २ व्यक्तित्व और अहंकार को चरितार्थ करने के लिए नवीन २ सम्प्रदायों और भेद भावों की गहराई करके उस सङ्गठन के टुकड़े करने में ही अपनी शक्तियों का उपयोग किया। इन्हीं लोगों की दया से समाज में कई सम्प्रदायों और मत मतान्तरों का उदय हुआ, और एकता के सूत्र पर स्थापित की हुई ओसवाल जाति फूट और वैमनस्य के चक्कर में जा पड़ी। और आज तो यह हालत है कि ये मतभेद हमारे जातीय संगठन की दीवार को भी कमजोर करने लगे हैं। हमारे पूज्य साधुओं की कृपा से उनके श्रावकों में अब यह भावना भी उदय होने लगी है कि स्थानकवासी, स्थानक वासियों में ही शादी सम्बन्ध करें और मन्दिर मार्गी मन्दिर मार्गियों में ही। ईश्वर न करे यदि यह नियम भी कहीं प्रचलित हो गया, तो फिर इस जाति का अन्त ही निकट समझना चाहिए।

धार्मिक मत-भेद

हमें यह मानने में तनिक भी संकोच नहीं हो सकता कि त्याग और तपस्या में आज भी हमारे जैन साधु भारत में सब से आगे बढ़े हुए हैं। लेकिन इसके साथ ही दुःख के साथ हमें यह भी स्वीकार करना पड़ता है कि अहंभाव और व्यक्तित्व के मोह की मात्रा उनमें क्रमशः अधिक बलवती होती जा रही है। जैन शास्त्रों में इस प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करना सब से कठिन बतलाया गया है, यह ऐसी प्रवृत्ति (उपशम मोहनीय) है कि ग्यारहवें गुण स्थान पर पहुँची हुई आत्मा को भी वापस पतित करके दूसरे गुण स्थान में लाकर पटक देती है। इसी प्रवृत्ति की वजह से संसार में समय २ पर अनेक मतमतान्तरों और सम्प्रदायों का उदय होता है और अशान्ति की मात्रा बढ़ती है। इसी प्रवृत्ति का प्रताप है कि जो व्यक्ति अपने घरबार, धन, दौलत और कुटुम्बी जनों के मोह को मुट्ठी भर धूल की तरह छोड़ कर संसार में विरक्त हो जाते हैं वे अत्यन्त साधारण "पूज्य" और "आचार्य" पदवी के लिए ऐसे लड़ते हुए दिखलाई देते हैं कि गृहस्थों तक को आश्चर्य होता है और उनकी लड़ाई को मिटाने के लिए श्रावकों को बीच में पड़ना पड़ता है। अगर ये अपने अहंभाव को नष्टकर अपनी महानता के प्रकाश में देखेंगे तो यही पदवियाँ उन्हें अत्यन्त क्षुद्र दिखलाई देंगी।

अगर आज हमारे ये जैनाचार्य्य इस प्रवृत्ति पर विजय प्राप्त करके, समानता के महान् सिद्धांतों का बीड़ा उठा कर तैय्यार हो जायं तो जाति की धार्मिक, सामाजिक और कौटुम्बिक सभी कमजोरियाँ क्षण भर में दूर हो सकती हैं। इन लोगों के हाथों में आज भी महान् शक्ति केन्द्रीभूत है। जनता आज भी इनके पीछे पागल है।

इधर गृहस्थों का कर्तव्य भी उनके पीछे इस बात का तकाज़ा कर रहा है कि हम लोगों का

अनुकरण करके अब तक वे धार्मिक और सामाजिक दृष्टि से अपनी काफ़ी बरबादी कर चुके हैं। यदि अब भी ये लोग अपने अहंभाव को तिलाञ्जलि देकर जनता को एकता के सूत्र में बांधे तो बहुत ही अच्छा है वरना इस प्रकार समाज में वैमनस्य का बीज बोने वाले साधुओं की अब समाज को जरूरत नहीं है।

सामाजिक कमजोरियाँ

धार्मिक मतमतान्तरों ही की तरह इस जाति के कलेवर में कई ऐसे सामाजिक दोष भी घुसे हुए हैं, जिनकी वजह से यह जाति दिन प्रति दिन क्षीण होती जा रही है। इन सामाजिक कमजोरियों में हमारा वैवाहिक जीवन, परदा और पोशाक, और सामाजिक फिजूल खर्चियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

किसी भी जाति की उन्नति का यदि अन्दाज करना हो तो वह उस जाति के वैवाहिक जीवन से भली प्रकार किया जा सकता है। जिस जाति का वैवाहिक जीवन सुन्दर और प्रेमपूर्ण होता है, जिसका नारी अङ्ग सभ्य और स्वस्थ होता है, उस जाति की सन्तानें भी हृष्ट-पुष्ट, बलवान्, मेधावी और सुंदर होती हैं। खेद है कि ओसवाल जाति का वैवाहिक जीवन अत्यन्त निराशापूर्ण और अन्धकारमय है। एक ओर तो घोर अशिक्षा और परदे की अमानुषिक प्रथा की वजह से हमारा नारी अङ्ग निर्माल्य और निर्जीव हो गया है, इसकी दूसरी ओर प्रति वर्ष हजारों छोटे २ बालकों का विवाह की वेदी पर बलिदान होता है, तीसरी ओर पचासों उतरी उम्र के बुड्ढे भी समाज के नवयुवकों का हक नष्ट कर समाज की बालिकाओं का जीवन नष्ट कर देते हैं। इन सब बातों से समाज का संयम और सदाचार खतरे में पड़ा हुआ है, नारी अंग के निर्माल्य होने से हमारे समाज की ठीक वही हालत हो रही है जो पक्षाघात से पीड़ित व्यक्ति की होती है। हमारा दाम्पत्य जीवन कलहमय हो रहा है, समाज का वायुमण्डल हजारों बाल-विधवाओं की आहों से धुंवाधार हो रहा है। इन सभी बातों से दिन २ समाज का भविष्य अन्धकार की ओर अग्रसर हो रहा है।

हमारा वैवाहिक जीवन

इन सब बातों को दूर कर समाज को स्वस्थ करने के लिए यह आवश्यक है कि समाज के वैवाहिक जीवन को सुंदर बनाया जाय। इसके लिए समाज के नारी अंग को शिक्षित और सुसंस्कृत किया जाय। हर्ष है कि समाज के अगुवाओं का ध्यान इस ओर धीरे २ आकृष्ट होने लगा है और अब स्थान २ पर बहुत सी कन्या पाठशालाएं खुल रही हैं। पर अभी यह प्रयत्न समुद्र में बून्द के तुल्य ही कहा जा सकता है। इस दिशा में बहुत बड़े स्केल पर काम होने की आवश्यकता है।

दूसरा महत्व का प्रश्न वैवाहिक स्वाधीनता का है। कोई भी तर्क और कोई भी दलील इस बात का समर्थन नहीं कर सकती कि पुरुषों को तो साठ २ वर्ष की उम्र तक पांच २ छः २ विवाह करने की समाज की ओर से खुली इजाज़त हो और स्त्रियाँ दस वर्ष की उम्र की आयु में विधवा होने पर भी पुनर्विवाह के अधिकार से वञ्चित रक्खी जाँय। इतिहास के न मालूम किस अन्धकार पूर्ण युग में इस कठोर और पक्षपात पूर्ण व्यवस्था का उदय हुआ जिसने भारत के सारे सामाजिक जीवन को नष्ट भ्रष्ट कर रक्खा है। जब स्त्री और पुरुष में समान मनोविकारों का उदय होता है, तब क्या कारण है कि पुरुषों के मनोविकारों की तो इतनी सावधानी से रक्षा की जाय और स्त्रियों के मनोविकारों की ओर बिलकुल ध्यान ही न दिया जाय। अनेकों वर्ष के वादविवाद और समय की जरूरतों से यह विषय अब इतना स्पष्ट और निर्विवाद हो

गया है कि अब इस विषय पर अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं। विधवा विवाह एक ऐसी औषधि है। जिसका प्रचार होते ही बालविवाह, वृद्धविवाह और वैवाहिक जीवन सम्बन्धी सभी समस्याएं अपने आप हल हो जायंगी।

दूसरी जो भयङ्कर कमजोरी हमारे समाज के अन्तर्गत है वह परदा और पोशाक की है। असभ्यता और जङ्गलीपन के किस युग में इस बर्बर प्रथा का जन्म हुआ, यह नहीं कहा जा सकता। मगर यह निश्चय है कि इस प्रथा ने हमारी स्त्रियों को संसार के सम्मुख अत्यन्त हास्यास्पद बना रक्खा है। वैसे तो इस जालिम पृथा का अस्तित्व किसी न किसी अंश में भारत की कई जातियों में है, मगर ओसवाल जाति में इसका रूप इतना भयङ्कर हो गया है कि उसकी नजीर कहीं भी ढूंढे न मिलेगी। हमारी ही जाति वह जाति है जहाँ स्त्रियाँ स्त्रियों से परदा करती हैं, बहू सास से परदा करती हैं, कई बहुएं तो जिन्दगी पर्यंत अपनी सास को मुँह नहीं बतलातीं और बिना बोले रह जाती हैं। हमारी जाति वह जाति है जहाँ सभ्यता का काम परदे से किया जाता है, अमुक के आठ × का परदा है अमुक के चार का परदा है और अमुक के दो का परदा है, जिसके जितना अधिक परदा होता है, वह खानदान उतना ही ऊंचा समझा जाता है। इस प्रकार इस भयंकर प्रथा ने हमारी स्त्रियों को जिन्दगी और प्रकाश की उन सब किरणों से वंचित कर रक्खा है जो उनकी जीवनी शक्ति की रक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। वे संसार की सारी गतिविधि से अपरिचित रहती हैं। अपनी आत्मरक्षा की भावनाओं से वे सर्वथा अपरिचित रहती हैं। आश्चर्य है कि बीसवीं सदी के इस प्रकाश मय युग में भी यह महान जाति अभी तक इस महान बर्बर प्रथा को अंगीकार किए हुए है। हमारे पास इतना स्थान नहीं कि इस प्रथा के सम्बन्ध में हम कुछ विशेष लिखें। लेकिन यह निश्चय है कि समाज में जब तक इस प्रथा का अस्तित्व है, तब तक जाति सुधार का नाम लेना ही व्यर्थ है।

परदा और पोशाक

परदे के साथ ही पोशाक का भी बहुत गहरा सम्बन्ध है इस समय जो पोशाक ओसवाल महिलाओं ने अङ्गीकार कर रक्खी है वह इतनी भद्दी और अवैज्ञानिक है कि उसको रखते हुए परदा प्रथा को तोड़ना बिलकुल व्यर्थ है। क्या स्वास्थ्य की दृष्टि से, क्या सौन्दर्य की दृष्टि से और क्या सभ्यता की दृष्टि से, सभी दृष्टियों से किसी भी दृष्टि में इस वेष भूषा का समर्थन नहीं किया जा सकता। इस पोशाक में मामूली परिवर्तन होने की आवश्यकता है।

इसके पश्चात् समाज के रीतिरिवाजों की वेदी पर होने वाली फिजूलखर्चियों का नम्बर आता है। अनेकों परिवारों के इतिहास में हमें कई घटनाएं ऐसी देखने को मिलीं जिनसे उन लोगों ने हजारों लाखों रुपया लगाकर शहरसारणी और ग्रामसारणियें की हैं। उस युग में चाहे ये बातें अच्छी मानी जाती हों, मगर अर्थ समस्या के इस कठिन युग में जब कि दिन २ अर्थ का महत्व बढ़ रहा हो ऐसी बातों का अनुमोदन नहीं किया जा सकता। खेद है कि अदूरदर्शी लोग इस कठिन समय में भी सामाजिक रीतिरिवाजों की वेदी पर अपने आपको बलिदान

फिजूलखर्ची

× जो स्त्रियाँ आठ स्त्रियों को साथ लेकर निकलती हैं उनके आठ का और जो चार को लेकर जाती हैं उनके चार का परदा कहलाता है।

कर देते हैं। मगर बुद्धिमानी का अब यह तकाजा है कि समाज के आर्थिक वैभव की रक्षा के लिए इस प्रकार की सभी सामाजिक—फिजूल खर्चियों का अन्त किया जाय।

सम्प्रदाय भेद ही की तरह इस जाति में समय २ पर कुछ ऐसे सामाजिक भेद भी उत्पन्न हो गये जिसकी वजह से यह जाति कई टुकड़ों में विभिन्न होगई। आज इस जाति में बीसा, दस्सा, पांचा, अढ़ैया आदि कई अनेकों भेद हो रहे हैं और कहीं बेटी व्यवहार बन्द है तो कहीं रोटी व्यवहार बन्द है. और इन सब भेदों का मनुष्यता के नाम पर समर्थन किया जाता है। इन भेदों के सम्बन्ध में जो किम्वदन्तियां हैं उनसे पता चलता है कि बहुत साधारण घटनाओं के द्वारा ये भेद प्रभेद अस्तित्व में आये हैं, मगर आज संसार के अन्दर ऐसे युग का प्रादुर्भाव हो रहा है कि जिसमें मनुष्य से मनुष्य को जुदा करने वाले ऐसे सभी भेदभाव नष्ट हो जाएंगे। हमें हर्ष है कि पंजाब के ओसवाल समाज ने इस लाइन में काफी पैर बढ़ाया है, और वहां दस्सों बीसों में शादी विवाह प्रचलित होगये हैं, हमें आशा है कि सारे भारत का ओसवाल समाज इस भेद भाव को नष्ट करने की ओर अग्रसर होगा।

दस्सा बीसा आदि भेद

ऊपर हम इस इतिहास की भली और बुरी दोनों बाजुओं पर काफी प्रकाश डाल चुके हैं। अब अन्त में हम इस जाति के प्रकाशमान युवकों से यह अपील करना चाहते हैं इस समय सारा संसार परिवर्तन के प्रबल चक्र में पड़ा हुआ है। राज्य, धर्म, समाज और पूंजी की सभी संस्थाओं में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। मनुष्य, स्वार्थ, जातीयता और राष्ट्रीयता से भी ऊंचा उठकर अखिल मानवीयता के समीप पहुँचने के लिए प्रयत्नशील हो रहा है ऐसी स्थिति में उनके ऊपर भी कार्य्यक्रम का बहुत बड़ा बोझा आता है। यदि वे ऐसी स्थिति में भी सावधानी के साथ अपने सामाजिक रोगों की चिकित्सा के लिए तय्यार न हुए, तो जाति का जो भयङ्कर नुकसान होगा उसका उत्तरदायित्व उन्हीं पर आवेगा। इस समय उनका पवित्र कर्त्तव्य उन्हें इस बात का तकाजा कर रहा है कि वे अखिल भारतवर्षीय ऐसे ओसवाल नवयुवकों का एक विशाल संगठन करें जो समानशील और समान विचार वाले हों। जब तक एक बलवान् संगठन की ताकत उनके पीछे नहीं होगी तब तक एक व्यक्तिगत उत्साह और जोश से किये हुये कार्य्यों का कोई भी महत्व और प्रभाव न होगा। सबसे बड़ी कठिनाई हमारे नवयुवकों के सामने यही आती है, कि जोश और उत्साह में आकर वे जो भी काम करते हैं कोई भी मजबूत संगठन उनका समर्थन नहीं करता और इसी कारण चारों ओर से हास्यास्पद बन कर वे निरुत्साही हो जाते हैं। अगर उनके पीछे कोई मजबूत संगठन उन्हें उत्साह प्रदान करने वाला हो तो वे बहुत कुछ कार्य्य कर सकते हैं। इस लिए एक ऐसे बड़े संगठन की बहुत बड़ी आवश्यकता है, और इस समय सारे भारत के ओसवाल नवयुवकों को ऐसे महान् संगठन को बनाने के लिये पूरी शक्ति से जुटजाना चाहिए।

नवयुवकों से अपील

ओसवाल जाति की उत्पत्ति

Origin of the Oswals.

भारतवर्ष के इतिहास की सामग्री इतने अन्धकार में है कि पुरातत्ववेत्ताओं की सैकड़ों वर्षों से लगातार खोज जारी रहने पर भी अभी तक उसका बहुत सा भाग तिमिराच्छन्न है और बहुत-सी महत्वपूर्ण बातों के अभाव से उसके कई अङ्ग अधूरे पड़े हुए हैं। इस देश में एक तो वैसे ही लोगों की रुचि अपने वैज्ञानिक इतिहास का निर्माण करने की ओर बहुत कम रही, दूसरे जिन लोगों ने इस विषय पर कुछ लिखा भी तो समय के भीषण प्रहारों से, बार-बार होने वाले राज्यपरिवर्तनों और राज्य-क्रान्तियों से वह सामग्री भी रक्षित न रह सकी। फिर भी आधुनिक अन्वेषणाओं से और पुरातत्ववेत्ताओं के सतत प्रयत्नों से जो कुछ भी टूटे फूटे शिलालेख, ताम्रपत्र, प्रशस्तियाँ वगैरह प्राप्त हुई हैं उनसे भारतवर्ष के राजनैतिक इतिहास और राजपरिवर्तनों पर काफ़ी प्रकाश पड़ने लगा है। मगर जातियों का अलग अलग इतिहास तो अभी भी वैसा ही अन्धकार के गर्क में लीन है।

ओसवाल जाति के इतिहास के सम्बन्ध में भी यही बात सोलह आना सच उतरती है। इस महान् जाति के द्वारा किये गये उज्ज्वल और महान् कार्यों से राजपूताने का मध्यकालीन इतिहास दैदीप्यमान हो रहा है और इसके अन्दर पैदा होने वाले महापुरुषों का नाम उस समय के इतिहास के अन्दर स्थान-स्थान पर दृष्टिगोचर होता है। इतने पर भी यदि आज पूछा जाय कि राजपूताने के रणांगण में भांति-भांति के खेल दिखानेवाली इस जाति की उत्पत्ति कब, कैसे और कहाँ से हुई तो इतिहासवेत्ता चुप हो जाते हैं। पुरातत्ववेत्ता आँखें बन्द कर लेते हैं और इतिहास अपनी असमर्थता को प्रकट कर देता है। कोई मज़बूत आधार नहीं, कोई सन्तोषजनक प्रमाण नहीं, कोई विश्वासनीय लेख नहीं जिसके बल पर इसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में कोई निर्विवाद बात बतलाई जासके।

प्राचीन यतियों के शास्त्र भण्डारों में, भाटों की वंशावलियों में, और जैनाचार्यों के जैन ग्रन्थों में ओसवाल जाति की उत्पत्ति के विषय में अनेक दंतकथाएँ, अनेक किम्वदंतियाँ और अनेक काव्य प्राप्त होते हैं। मगर उन सबके ऊपर विचार करने पर इस बात का पता चलता है कि कुछ लोगों ने तो इस जाति

को अधिक-से-अधिक प्राचीन सिद्ध करने के लोभ में, कुछ लोगों ने अपने-अपने गच्छों और अपने-अपने आचार्यों की प्रतिष्ठा को बढ़ाने के हेतु से, इन सब प्रमाणों के ऊपर पक्षपात का ऐसा गहरा रंग चढ़ा दिया है कि उसमें से आज असलियत को ढूँढ निकालना भी बहुत कठिन हो गया है और बहुत-से इतिहास रसिक और पुरातत्ववेत्ता तो इस प्रकार की अतिशयोक्ति पूर्ण बातों पर विचार तक करने में बुराई समझने लग गये हैं।

ऐसी स्थिति में ओसवाल जाति की उत्पत्ति का समय निर्णय करना किसी भी इतिहासवेत्ता के लिये कितना कठिन, और दुरूह है यह बतलाने की ज़रूरत नहीं।

फिर भी जो लेखक ओसवाल जाति का इतिहास लिखने के लिये बैठता है उसके लिये सबसे पहला और आवश्यक कर्त्तव्य यह हो जाता है कि इस जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जो अधिक-से-अधिक सामग्री उपलब्ध हो, वह पाठकों के सम्मुख उपस्थित करदे। ऐसा किये बिना उसका पवित्र कर्त्तव्य पूरा नहीं हो सकता। इन्हीं सब बातों को मद्दे नज़र रखकर इस जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जो महत्वपूर्ण तथ्य हमें प्राप्त हुए हैं वह हम नीचे प्रस्तुत करते हैं।

इस समय ओसवाल जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में तीन मत विशेषतया प्रचलित हैं। उन तीनों मतों पर हम यहाँ अलग-अलग रूप से विचार करते हैं।

१—पहला मत जैन ग्रंथों और जैनाचार्य्यों का है जिनके मतानुसार वीर निर्वाण संवत् ७० में अर्थात् वि० संवत् से क़रीब ४०० वर्ष पूर्व भीनमाल के राजा भीमसेन के पुत्र उपलदेव ने ओसियां नगरी (उपकेश नगरी) बसाई और भगवान् पार्श्वनाथ के ७ वें पाटधर उपकेश गच्छीय श्री आचार्य्य रत्नप्रभ सूरि ने उस राजा को प्रतिबोध देकर जैनधर्म की दीक्षा दी और उसी समय ओसवाल जाति की स्थापना की।

२—दूसरा मत भाटों, भोजकों और सेवकों का है, जिनकी वंशावलियों से पता लगता है कि सम्वत् २२२ विक्रमी में उपलदेव राजा के समय में ओसियाँ (उपकेश नगरी) में रत्नप्रभसूरि के उपदेश से ओसवाल जाति के १८ मूल गौत्रों की स्थापना हुई।

३—तीसरा मत आधुनिक इतिहासकारों का है जिन्होंने अपनी अश्लाघ्य खोजों और गम्भीर गवेषणाओं के पश्चात् यह सिद्ध किया है कि विक्रमी सं० ९०० के पहले ओसवाल जाति और ओसियाँ नगरी का अस्तित्व न था। इसके पश्चात् भीनमाल के राजपुत्र उपलदेव ने मंडोर के पड़िहार राजा के पास आकर आश्रय ग्रहण किया और उसी की सहायता से ओसियाँ नगरी को बसाया। तभी से सम्भव है ओसवाल जाति की उत्पत्ति हुई हो।

उपरोक्त तीनों मतों का विस्तृत विवेचन अब हम नीचे करते हैं:—

जैनाचार्यों के मत से ओसवालों की उत्पत्ति

विक्रम संवत् १३९३ का लिखा हुआ एक हस्तलिखित उपकेशगच्छ चरित्र नामक ग्रन्थ मिलता है। उसमें तथा और भी जैन ग्रंथों में ओसवाल जाति और ओसियाँ नगरी की उत्पत्ति के विषय में जो कथा लिखी हुई है वह इस प्रकार है:—

ओसियां नगरी की स्थापना

वि० सं० से करीव चार सौ वर्ष पूर्व भीनमाल नगरी में भीमसेन नामक राजा राज्य करता था, जिसके दो पुत्र * थे। जिनके नाम क्रमशः श्रीपुञ्ज और उपलदेव था। एक समय युवराज श्रीपुञ्ज और ऊपलदेव के वीच में किसी कारण वश कुछ कहा सुनी हो गई जिस पर श्रीपुंज ने ताना मारते हुए कहा कि इस प्रकार के हुकम तो वही चला सकता है जो अपनी भुजाओं के बल से राज्य की स्थापना करे। यह ताना ऊपलदेव को सहन न हुआ और वह उसी समय नवीन राज्य-स्थापन की प्रतिज्ञा करके अपने मंत्री उहड़ और उधरण को साथ ले वहाँ से चल पड़ा। उसने ढेलीपुरी (दिल्ली) के राजा साधु की आज्ञा लेकर मंडोवर के पास उपकेशपुर या ओसियां पट्टण नामक नगर बसा कर वहीं अपना राज्य-स्थापित किया उस समय ओसियाँ नगरी का क्षेत्रफल का वहुत लम्बा चौड़ा था। ऐसा कहते हैं कि वर्तमान ओसियाँ नगरी से १२ मील पर जो तिवरी गाँव है वह पहले ओसियाँ का तेलीवाड़ा था तथा जो इस समय खेतार नामक ग्राम है वह पहले यहां का क्षत्रीपुरा था। इसी प्रकार और मुहल्लों के निशानात भी पाये जाते हैं।

ओसवाल जाति की स्थापना

राजा उपलदेव वाममार्गी था और उसकी खास कुलदेवी चामुँडा माता थी। इसी समय में जैनाचार्यों में भगवान पार्श्वनाथ के ७ वें पाटश्वर आचार्य्य रत्नप्रभसूरिजी अपने उपदेशों के द्वारा जैनधर्म का प्रचार करते हुए आबू पहाड़ से होते हुए उपकेशपट्टण में पधारे और पास ही लूणाद्री नामक छोटी सी पहाड़ी पर एक २ मास के उपवास की तपश्चर्या कर ध्यानावस्थित हो गये। इस समय पाँच सौ मुनियों का संघ उनके साथ था। कई दिन होने पर भी जब उन मुनियों के लिये शुद्ध भिक्षा की व्यवस्थाउस नगरी

* इस विषय में दो मत और पाये जाते हैं पहला यह कि पट्टावली नं० ३ में भीमसेन के एक पुत्र श्रीपुँज था जिसके सुरसुन्दर एवं उपलदेव नामक दो पुत्र हुए। दूसरा यह कि भीमसेन के तीन पुत्र थे जिनके नाम क्रमशः उपलदेव, आसपाल और आसल थे। जिनमें से उपलदेव ने ओसियाँ तथा आसल ने भिनमाल वसाया।

में न हो सकी तब सब लोगों ने आचार्य्य श्री से प्रार्थना की कि "भगवान् यहाँ पर साधुओं के लिये पवित्र भिक्षा * की कोई समुचित व्यवस्था नहीं है ऐसी स्थिति में मुनियों का इस स्थान पर निर्वाह होना कठिन है। यह सुनकर आचार्य्य श्री ने कहा "यदि ऐसा है तो यहाँ से विहारकर देना चाहिये।" यह देखकर वहाँ की अधिष्टायिका चामुँडादेवी ने प्रगट होकर कहा कि महात्मन्, इस प्रकार से आपका यहाँ से चला जाना अच्छा न होगा, यदि आप यहाँ पर अपना चातुर्मास करेंगे तो संघ और शासन का बड़ा लाभ होगा। इस पर आचार्य्य ने मुनियों के संघ को कहा कि जो साधु विकट तपस्या करने वाले हों वे यहाँ रह जायँ शेष सब यहाँ से बिहार कर जायें। इस पर से ४६५ मुनितो आचार्य्य की आज्ञा से विहार कर गये। शेष ३५ मुनि तथा आचार्य्य चार २ मास की विकट तपस्या स्वीकार कर समाधि में लीन हो गये। इसी बीच दैवयोग से एक दिन राजा के जामात्र त्रिलोकसिंह † को रात्रि में सोते समय भयंकर सर्प ने डस लिया ‡। इस समाचार से सारे शहर में हाहाकार मच गया। बहुत से मंत्र, तंत्र शास्त्री इलाज करने के लिए आये मगर कुछ परिणाम न हुआ। अंत में जब उसे स्मशान यात्रा के लिए ले जाने लगे तब किसीने इन आचार्य्य श्री का इलाज करवाने की भी सलाह दी। जब राजकुमार की रथी आचार्य्य श्री के स्थान पर लाई गई तो आचार्य्य श्री के शिष्य वीर धवल ने गुरू महाराज के चरणों का प्रक्षालन कर राजकुमार पर छिड़क दिया। ऐसा करते ही वह जीवित हो उठा। इससे सब लोग बड़े प्रसन्न हुए और राजा ने आचार्य्य श्री से प्रसन्न होकर अनेकों थाल बहुमूल्य जवाहरातों के भर भर आचार्य्य श्री के चरणों में रख दिये। इस पर आचार्य्यश्री ने कहा कि राजन् हम त्यागियों को इस द्रव्य और वैभव से कोई प्रयोजन नहीं है। हमारी इच्छा तो यह है कि आप लोग मिथ्यात्व को छोड़कर परम पवित्र जैनधर्म को श्रद्धा सहित स्वीकार करे, जिससे आपका कल्याण हो। इस पर सब लोगों ने प्रसन्न होकर आचार्य्य श्री का उपदेश श्रवण किया और श्रावक के बारह व्रतों को श्रवण कर जैनधर्म को ग्रहण किया ×। तभी से ओसियाँ नगरी के नाम से इन लोगों की गणना ओसवाल वंश में की गई।

---

* कुछ लोगों का मत है कि उस समय आचार्य्य रत्नप्रभसूरि के साथ केवल एक ही शिष्य था और उसे भी जब भिक्षा न मिलने लगी तब उसने जंगल से लकड़ी काट कर लाना और पेट भरना शुरू किया।

† कुछ ग्रन्थों में राजा के जामात्र के स्थान पर राजा के पुत्र का उल्लेख है।

‡ कुछ स्थानों पर ऐसा उल्लेख है कि आचार्य्य रत्न प्रभ सुरि ने देवी के कहने से रुई की पूणी का सर्प बना कर भरी सभा में राजा के पुत्र को काटने के लिए भेजा था।

× ऐसी भी किम्वदन्ती है कि उस समय उस नगरी मे जितनी जातियाँ थीं। याने ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र सबने मिलकर जैनधर्म स्वीकार किया। इन्हीं की वजह से जैनधर्म में कई ऐसे भी गोत्र पाये जाते हैं जो उन जातियों के नाम के सूचक हैं।

इसके पूर्व चामुंडा माता के मन्दिर में आश्विन मास की नव रात्रि के अवसर पर भैंसों और बकरों का बलिदान हुआ करता था। आचार्य्यश्री ने उसको रोककर उसके स्थान पर लड्डू, चूरमा, लापसी, खाजा नारियल इत्यादि सुगंधित पदार्थों से देवी की पूजा करने का आदेश किया। इससे चामुडा देवी बड़ी नाराज हुई और उसने आचार्य्यश्री की आँख में बड़ी तकलीफ़ पैदा कर दी। आचार्य्यश्री ने बड़ी शांति से इस तकलीफ़ को सहन किया। चामुंडा ने जब आचार्य्यश्री को विचलित होते न देखा तब वह बड़ी लज्जित हुई और आचार्य्यश्री से क्षमा माँग कर सम्यक्त को ग्रहण किया उसी समय से उसने प्रतिज्ञा की कि आज से माँस और मदिरा तो क्या लालरंग का फूल भी मुझपर नहीं चढ़ेगा तथा मेरे भक्त जो ओसियाँ में स्वयंभू महावीर की पूजा करते रहेंगे उनके दुःख संकट को मैं दूर करूँगी। तभी से चामुंडा देवी का नाम सच्चिया देवी पड़ गया और आज भी यह मंदिर सच्चिया माता के मंदिर के नाम से मशहूर है। जहाँ पर अभी भी बहुत से ओसवालों के बालकों का मुण्डन संस्कार होता है।

ऐसा कहा जाता है कि उसी समय उहड़ मंत्री ने महावीर प्रभु का मंदिर तैयार करवाया और उसकी मूर्ति स्वयं चामुंडा देवी ने बालूरेत और गाय के दूध में तैयार की जिसकी प्रतिष्ठा स्वयं रत्नप्रभ सूरि ने मार्गशीर्ष शुक्ल पंचमी गुरुवार को अपने हाथों से की। ऐसा कहा जाता है कि ठीक इसी समय कोरंटपुर नामक स्थान में भी वहाँ के श्रावकों ने श्री वीरप्रभु के मन्दिर की स्थापना की जिसकी प्रतिष्ठा का मुहूर्त भी ठीक वही था जोकि उपकेश पट्टण के मंदिर की प्रतिष्ठा का था। दोनों स्थानों पर अपनी विद्या के प्रभाव से आचर्य्य श्री ने स्वयं उपस्थित होकर प्रतिष्ठा करवाई। इसके लिए उपकेश चरित्र में निम्न लिखित श्लोक लिखा है।

सप्तत्य (७०) वत्सराणां चरम जिनपतेर्मुक्तजातस्य वर्षे ।
पंचम्यां शुक्लपक्षे सुहगुरु दिवसे ब्रह्मणः सन्मुहूर्ते ॥
रत्नाचार्यैः सकलगुणयुक्तै, सर्व संघानुज्ञातैः ।
श्रीमद्वीरस्य बिम्बे भवशत मथने निर्मितेयं प्रतिष्ठाः ॥ १ ॥

× × × ×

उपकेशे च कोरंटे, तुल्यं श्री वीर बिम्बयो ।
प्रतिष्ठा निर्मिता शक्त्या, श्री रत्नप्रभसूरिभिः ॥ १ ॥

ऊपर हमने ओसवाल जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जैनाचार्य्यों तथा जैनग्रन्थों का जो मत है उसका विस्तृत रूप से उल्लेख कर दिया है। इस उल्लेख के अंतर्गत हम समझते हैं कि बहुत सी बातें

ऐसी हैं जो अत्यन्त अतिशयोक्ति और काव्यमय हैं और विचार स्वातंत्र्य के इस युग में बुद्धिमान लोगों के मस्तिष्क पर अनुकूल प्रभाव नहीं डाल सकती। फिर भी इसके अंदर जो मूल तत्व हैं उनपर विचार करना प्रत्येक बुद्धिमान और शोध करने वाले व्यक्ति का कर्तव्य हो जाता है। इसमें से नीचे लिखे हुए खास तत्व निकाले जा सकते हैं।

(१) ऊपलदेव के द्वारा ओसियां नगरी का बसाया जाना।
(२) रत्नप्रभसूरि के द्वारा ऊपलदेव का मय नगर के सारे क्षत्रियों के जैन-धर्म ग्रहण करना और ओसवाल जाति की स्थापना होना।
(३) मंत्री उहड़ के द्वारा महावीर मन्दिर का निर्माण किया जाना और स्वयं चामुंडा देवी के द्वारा बालू एवम् दूध से उस प्रतिमा का बनाया जाना।
(४) इन सब घटनाओं का विक्रम के चार सौ वर्ष पूर्व का होना।

उपरोक्त मत का समर्थन जैनमुनि ज्ञानसुन्दरजी ने कई दलीलों और प्रमाणों के साथ किया है। आपने जैन जातियों के इतिहास के सम्बन्ध में बहुत गहरा परिश्रम और खोज करके "जैन जाति महोदय" नामक एक ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ में आपने जहाँ पौराणिक चमत्कारपूर्ण दन्त कथाओं और किम्वदन्तियों को आश्रय दिया है वहाँ ऐतिहासिक खोज, अन्वेषण और तर्क-वितर्क के सम्बन्ध में बहुत मेहनत के साथ बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री भी संग्रहित की है आपका यह दृढ़ मत है कि ओसवाल जाति की उत्पत्ति वि० सं० से चार सौ वर्ष पूर्व हुई है। आपकी दी हुई दलीलों पर हम आगे चलकर विचार करेंगे।

भाटों, भोजकों और सेवकों का मत

दूसरा मत इस जाति के सम्बन्ध में भाटों, भोजकों और सेवकों की वंशावलियों में पाया जाता है। इन वंशावलियों में ओसवालों की उत्पत्ति संवत् २२२ (बीये बाईसा) में बतलाई गई है। समय के भेद के अलावा कथानक और किम्वदंतियाँ इनकी और जैन ग्रन्थों की प्रायः एक समान ही है। ये लोग भी राजा ऊपलदेव को ओसियाँ नगरी का बसाने वाला मानते हैं और रत्नप्रभ सूरि के द्वारा उसका जैन-धर्म में दीक्षित होना तथा ओसवाल जाति की स्थापना उसी प्रकार मानते हैं। इसी दलील की पुष्टि में हम को कई ओसवाल खानदानों के पास ऐसे वंश वृक्ष मिले जिनका सम्बन्ध संवत २२२ वि० से मिलाया हुआ था। मगर जब घटनाएं सब एक समान हैं और आचार्य तथा राजा और स्थान का नाम भी

एक ही समान मिलता है तब उत्पत्ति के सम्बन्ध में ६२२ वर्ष का अंतर किस प्रकार पड़ गया, यह समझ में नहीं आता।

आधुनिक इतिहास कारों का मत

ऊपर हम ओसवाल जाति के सम्बन्ध में जैन ग्रन्थों और भाटों की वंशावलियों के मत दे चुके हैं। अब नवीन इतिहास के प्रकाश में हम यह देखना चाहते हैं कि ओसवाल जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में उपरोक्त मतों का वैज्ञानिक और तार्किक आधार कितना मजबूत है और सत्य और वास्तविकता की कसौटी पर ये विचार पद्धतियां कहां तक खरी उतरती हैं। यह बात तो प्रायः निर्विवाद सिद्ध है कि ओसियां नगरी की स्थापना उपलदेव परमार ने की जो कि किसी कारण वश अपना देश छोड़ कर मंडोवर के पड़िहार राजा की शरण में आया था। यह उपलदेव कहां से आया था इसके विषय में कई मत हैं। ऊपर हमने जिन मतों का उल्लेख किया है उनमें इसका आना भीनमाल से सिद्ध होता है और कुछ लोगों के मत से इसका आना किराडू नामक स्थान से पाया जाता है। मगर ये दोनों ही बातें गलत मालूम होती हैं। क्योंकि भीनमाल के पुराने मन्दिरों में जो संस्कृत लेख पत्थरों पर खुदे हुए मिले हैं, उनमें से दो लेख कृष्णराज परमार के हैं। एक संवत् १११२ का और दूसरा संवत ११२३ का है। पिछले लेख में कृष्णराज के बाप का नाम धंधुक लिखा है। यह धंधुक आबू का राजा था। इसके दो पुत्र थे। एक पूर्णपाल और दूसरा कृष्णराज। पूर्णपाल के समय का एक लेख* संवत १०९८ का सिरोही जिले के एक वीरान गाँव बसंतगढ़ से मिला है और दूसरा संवत ११०२ का लिखा हुआ मारवाड़ के भढ़ूंद नामक एक गाँव में मिला है। इन दोनों लेखों से यह बात पायी जाती है कि धंधुक का बड़ा पुत्र पूर्णपाल अपने पिता की गद्दी पर बैठा और कृष्णराज को भीनमाल का राज मिला।

कृष्णराज के पीछे भीनमाल का राज्य १५० वर्ष तक उसके वंश में रहा जिसका उल्लेख संवत् १२३९ के लेख में पाया जाता है जिसमें "महाराजपुत्र जैत्तसिंह" का नाम आया है। नाम के साथ यद्यपि जाति नहीं लिखी हुई है पर ऐसा संभव है कि यह भीनमाल का अंतिम राजा या युवराज रहा होगा। क्योंकि इसके पीछे संवत १२६२ के लेख में चौहान राजा उदयसिंह का नाम आता है और उसके पश्चात् संवत १३६२ तक के लेखों में चौहान राजाओं के ही नाम आते हैं जिनका कि मूल पुरुष नाडोल

---

* यह लेख अजमेर में रा. ब. पं० गौरीशंकर जी ओझा के पास है।

† रोहड़े नामक स्थान से रा. ब. पं० गौरीशंकरजी को दानपत्र मिला है जिसमें उत्पल राज से वंशावली दी है और उक्त वंशावली में धंधुक के तीन पुत्र बतलाये हैं। ये तीनों ही अपने पिता के पीछे क्रमशः राजा हुए।

के राजा अल्हण देव का पुत्र कीतू था और जिसने पंवारों से जालोर लेकर अपना राज्य अलग जमाया था। इसका एक दानपत्र संवत १२१८ का लिखा हुआ इस समय नाडोल के महाजनों के पास है इस दानपत्र से पता चलता है कि उस समय यह अपने बड़े भाई कल्हणदेव के दिये हुए गांव 'नाडलाई' में रहता था। संवत् १२१८ के पश्चात् इसने जालोर को विजय किया होगा और संभव है जिन पंवारों से यह किला लिया गया वे या तो राजा कृष्णराज के खानदान के होंगे या उसकी आबूवाली बड़ी शाखा के। राजा कीतू के पश्चात उसका लड़का उदयसिंह हुआ। इसीने संभव है, कृष्णराज के पोतों से संवत १२३९ और संवत १२६२ के बीच किसी समय भीनमाल को फतह किया होगा।

उपरोक्त दलीलों से यह बात सहजही मालूम हो जाती है कि भीनमाल का पहला पंवार राजा कृष्णराज संवत ११०० के पश्चात हुआ। उससे पहले भीनमाल उसके पिता धुंधुक के खालसे में होगा। उपलदेव का इन लेखों में पता नहीं है।

दूसरा मत किराडू के सम्बंध में है। यहां पर भी एक लेख संवत १२१८ का मिला है जो पँवारों से सम्बंध रखता है। इस लेख से पता चलता है कि मारवाड़ का पहला पंवार राजा सिंधुराज था। उसका राज्य पहाड़ों में था। उसके वंश में क्रमशः सूरजराज, देवराज, सोमराज, और उदयराज हुए। उदयराज संवत १२१८ में मौजूद था। यहां भी उपलदेव का कुछ पता नहीं लगता।

जैन इतिहास के सुप्रसिद्ध विद्वान् बाबू पूरनचंदजी नाहर एम. ए. कलकत्ता निवासी से जब हमने इस विषय में पूछा तो उन्होंने आबू के लेखों की की हुई खोज को हमें बतलाया। उन्होंने कहा कि पंवारों का जन्म स्थान आबू है। वहां के एक लेख में धंधुक से पांच पुश्त ऊपर उत्पलराज का नाम मिलता है। इन लेखों * में यद्यपि पंवारों का मूल पुरुष धूमराज को माना है मगर वंशवृक्ष उत्पल राज से ही शुरु किया गया है। इससे पता चलता है कि संभव है धूमराज के पीछे और उत्पलराज के पहले बीच के समय में कुछ राजनैतिक गड़बड़ हुई हो और उत्पलराज से फिर राज्य कायम हुआ हो। क्या आश्चर्य है इसी कारण उत्पलराज को मंडोवर के पड़िहार राजा की शरण में आना पड़ा हो। इससे जहांतक हमारी समझ है ओसियां का बसाने वाला उपलदेव ही आबू का उत्पलराज हो। जैन प्रश्नोत्तर ग्रंथ में भी उपलदेव को उत्पल कंवार लिखा है। ज्यादा खोज करने पर यह भी पता चलता है कि विपत्ति के टल जाने पर उत्पलराज वापस आबू को लौट गया और वहां का राजा हुआ।

स्थान ही की तरह उत्पलराज के समय या जमाने में भी बड़ी गड़बड़ है। जैन ग्रन्थों में

---

* ये लेख आबू पर वसंतपाल और अचलेश्वर जी के मन्दिर में खुदे हुए हैं।

वि. सं. से ४०० वर्ष पहले वीर निर्वाण संवत ७० में उसका उपकेश नगरी बसाना लिखा है और दूसरी ख्यातों में इस समय से ६०० वर्ष पश्चात् याने संवत २२२ में ऊपलदेव के सम्मुख ही ओसियाँ के लोगों का जैनी होना वर्णन किया है। एक ख्यात में ऊपलदेव का होना संवत १०३५ के पीछे लिखा है जब कि पंवार राठोड़ों से आबू ले चुके थे। मुहता नेणसी ने अपनी ख्यात में उपलदेव का कोई साल संवत् तो नहीं बतलाया मगर उपलदेव को धारा नगरी के राजा भोज की ७ वीं पुश्त में माना है *। कहना न होगा कि राजा भोज सिंधुराज का बेटा और वाक्पति मुंजराज का भतीजा था। मगर यह दलील गलत मालूम होती है। और धूमरिख (धूमराज) के सिवाय सब नाम भी गलत हैं। क्योंकि राजा भोज के तथा उसके वंशजों के दानपत्रों में न तो ये पिढ़ियां हैं और न उपलदेव का उनसे कोई सम्बन्ध ही। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक खोजों से भी मारवाड़ में राजा भोज की संतानों का राज करना साबित नहीं होता।

हाँ, इतना अवश्य है कि मारवाड़ के पंवार राजा कृष्णराज तथा सिंधुराज मालवे के राजाभोज और उसके पुत्र उदयादित्य के समकालीन थे। पाठकों की जानकारी के लिये हम मालवा और आबू के पँवार राजाओं की वंशावली नीचे देते हैं।

मालवा	आबू
उपेन्द्र	उत्पलराज
वैरिसिंह	अरण्यराज
सीयक	कृष्णराज
वाक्पतिराज	अरण्यराज
वैरिसिंह	महीपाल
सीयक हर्ष	धन्धुक
वाक्पति मुँजराज सं १०३१	पूर्णपाल सं० १०९९–११०२
सिन्धुराज (नं० ६ का भाई) ३६—५०	ध्रुवभट्ट
भोजराज (राजा भोज)† १०७८	रामदेव

* राजा भोज (१), राजा विद (२), राजा उदयचंद (३), राजा जगदेव (४), राजा डाबरिख (५), राजा धूमरिख (६), राजा उपलदेव (७)

† राज मृगाँक से राजा भोज का राज सं० १०६९ में भी मालूम होता है।

उदयादित्य सं० ११३६
नरवर्मा सं० ११६१
यशोवर्मा सं० ११९२–९३
अजयवर्मा
विंध्यवर्मा सं० १२००
सुभटवर्मा सं० १२३५
अर्जुनवर्मा सं० १२५६

यशोधवल
धारावर्ष १२२६–१२५६
सोमसिंह १२८७
कृष्णराज
प्रतापसिंह
जैतकरण सं० १३४५

उपरोक्त वंशावलियों और उनके संवतों पर विचार करने से यह भी अनुमान किया जा सकता है कि उपेन्द्र और उत्पल दोनों नाम शायद एक ही राजा के हों और अरण्यराज और वैरिसिंह भाई २ हों। जिनमें पहले से आबू एवम दूसरे से मालवे की शाखा निकली हो। ऊपर लिखी हुई दोनों वंशावलियों में पूर्णपाल का समय करीब संवत् ११०० के निश्चित होता है और उत्पलराज इसके ७ पुश्त पूर्व हुआ है। हर पुश्त का समय यदि २५ वर्ष मान लिया जाय तो इस हिसाब से यह समय याने उत्पलराज का समय करीब वि० सं० ९५० वर्ष का ठहरता है। यही समय वाक्पतिराज और महाराज भोज के शिला लेखों से उपेन्द्र का आता है। यह वह समय है जब कि मंडोवर में पड़िहार राजा बाहुक राज्य करता था। इस समय का एक शिलालेख संवत् ९४० का जोधपुर के कोट में मिला है। यही समय ओसियाँ के वसने का मालूम होता है। इस कल्पना की पुष्टि ओसियाँ के जैन मन्दिर की प्रशस्ति की लिपि से भी होती है। जो संवत १०१३ की खुदी हुई है। पड़िहार राजा बाहुक और उसके भाई कक्कुक के शिलालेखों * (संवत ९१८ और संवत् ९४०) की लिपि से भी उक्त प्रशस्ति की लिपि मिलती हुई है। इससे पुरानी लिपि ओसियां में किसी और पुराने लेख की नहीं है। वहाँ एक भी लेख अभी तक ऐसा नहीं मिला है जिसकी लिपि संवत २०० और ३०० के बीच की लिपि से मिलती हो और जिससे यह बात मानी जा सके कि ओसियाँ नगरी संवत २२२ में या इसके पूर्व बसी थी।

एक और विचारणीय बात यह है कि ऊपलदेव ने मंडोवर के जिस राजा के यहाँ आश्रय लिया था उसको सब लोगों ने पड़िहार लिखा है लेकिन पड़िहारों की जाति विक्रम की सातवीं सदी में पैदा हुई ऐसा पाया जाता है। इसका प्रमाण बाहुक राजा के उस शिलालेख में मिलता है जिसमें लिखा है कि ब्राह्मण हरिश्चन्द्र की राजपूत पत्नी से पड़िहार उत्पन्न हुए। हरिश्चन्द्र के चार पुत्र रंजिल वगैरह थे जिन्होंने अपने बाहुबल से मंडोवर का राज लिया। मालूम होता है कि यह हरिश्चन्द्र मंडोवर के पूर्ववर्त्ती राजा का ड्योढ़ीदार

* यह शिलालेख जोधपुर परगने के घटियाले गाँव में है ?

रहा होगा। इसी प्रकार उसकी राजपूतनी स्त्री के पुत्र भी प्रतिहार या पड़िहार कहलाये। इस लेख से निम्नलिखित दो बातों का और भी पता लगता है।

पहला तो यह कि पंवारों ही की तरह पड़िहारों की उत्पत्ति भी आबू के अग्निकुंड से मानी जाती है लेकिन वह गलत है। अगर ऐसा होता तो राजा बाहुक अपने आपको हरिश्चन्द्र ब्राह्मण की संतानों में क्यों लिखता और अपने पुश्तैनी पेशे ड्योढ़ीदारी की महिमा सिद्ध करने के लिये लेख के आरंभ में श्री रामचन्द्रजी के भाई लक्ष्मणजी के प्रतिहार पने की नज़ीर क्यों लाता।

दूसरा यह कि पड़िहारों की उत्पत्ति का समय जो अब से हजारों वर्ष पहले माना जाता है। वह भी इस लेख से गलत साबित होता है। क्योंकि पड़िहार जाति की उत्पत्ति ही राजा बाहुक से १२ पुश्त पहले याने हरिश्चन्द्र ब्राह्मण से हुई है और बारह पुश्तों के लिये ज्यादा से ज्यादा समय ३०० वर्ष पूर्व का निश्चित किया जा सकता है। राजा बाहुक का समय संवत ८९४ का था। इस हिसाब से हरिश्चंद्र का पुत्र रंजिल जो मंडोवर के पड़िहार राजाओं का मूल पुरुष था, वह संवत ६०० के करीब हुआ होगा। फिर संवत २२२ में पड़िहारों का मंडोर में होना कैसे संभव हो सकता है। इस दलील से भी ओसियां नगरी की स्थापना संवत ६०० के पीछे राजा बाहुक या उसके भाई कक्कुक के समय में याने संवत ८०० या ८५० के करीब हुई होगी। इन सब दलीलों से अधिक मजबूत दलील यह है कि आचार्य्य रत्नप्रभ सूरि के उपदेश से जो अठारह राजपूत कौमें एक दिन में सम्यक्त्व ग्रहण करके ओसवाल जाति में प्रविष्ट हुई थीं उन सबके नाम करीब २ ऐसे हैं जो संवत २२२ में दुनियां के परदे पर ही मौजूद नहीं थी। उन अठारह जातियों के नाम और उनकी उत्पत्ति का समय नीचे देने की कोशिश करते हैं।

१	परमार	७	पड़िहार	१३	मकवाणा
२	सिसोदिया	८	बोड़ा	१४	कछवाहा
३	राठोड़	९	दहिया	१५	गौड़
४	सोलंकी	१०	भाटी	१६	खरवड़
५	चौहान	११	मोयल	१७	वेरद
६	सांखला	१२	गोयल	१८	सौंख

— परमार—यह जाति ऐतिहासिक दुनियां में वि० सं० ९०० के पश्चात् दृष्टिगोचर होती है। महाराज बिक्रमादित्य को कई लोग पंवार मानते हैं मगर इसकी ऐतिहासिक तसदीक अभी तक नहीं हो पाई है। इस समय जो संवत् विक्रम-संवत के नाम से प्रचलित है उसके पीछे विक्रम का नामांकित करना ही संवत्

एक हजार के करीब से अनुमान किया जाता है। क्योंकि इस संवत् के साथ पहले विक्रम का नाम नहीं लगाया जाता था, जैसा कि पड़िहारों के दोनों लेखों में नहीं है। आबू पर्वत पर जो लेख वस्तुपाल और अचलेश्वरजी के मन्दिरों में है उनमें धूमराज को पंवारों का मूल पुरुष लिखा है और उसकी उत्पत्ति वशिष्टजी के अग्निकुंड से बतलाई है। यह धूमराज उत्पलराज से पहले था। क्योंकि उत्पलराज को उसके खानदान में लिखा है। इससे स्पष्ट पता चलता है कि संवत २२२ में पंवारों का अस्तित्व न था।

सिसोदिया—यह गहलोतों की एक शाखा है जो रावल समरसिंहजी के पौत्र राणा राहप के गाँव सिसोद से मशहूर हुई है। रावल समरसिंहजी के समय का एक शिलालेख संवत १३४२ का खुदा हुआ आबू पहाड़ पर है। इससे पता चलता है कि सिसोदिया जाति की उत्पत्ति भी संवत १३४२ के पीछे हुई। संवत २२२ में यह लोग भी नहीं थे।

राठौड़—राठौड़ों के विषय में यह लिखा जा सकता है कि संवत १००० के करीब मारवाड़ के हथुण्डिया नामक ग्राम में ये लोग बसते थे उनको बीजापुर के संवत ९९६ और संवत १०५३ के लेख में राष्ट्रकूट और हस्तिकुंडी नगरी का मालिक लिखा है। ये राष्ट्रकूट शायद दक्षिण से आये थे। क्योंकि वहां इनके बहुत से लेख मिले हैं। मगर उनमें कोई भी लेख संवत् ९०० के पूर्व का नहीं है। इनके इधर आने का समय संवत् ७०० के पीछे मालूम होता है। यहाँ आकर पहले ये हथुंडी नामक नगरी में, जो कि इस समय अरवली पर्वत के नीचे वीरान पड़ी है, बसे थे।

सोलंकी—राष्ट्रकूटों के पश्चात् सोलंकियों का नम्बर आता है। ये लोग पहले दक्षिण में रहते थे और चालुक्यवंश के नाम से प्रसिद्ध थे। दक्षिण में इनके कई शिलालेख मिलते हैं, मगर उनमें से कोई भी शिलालेख संवत् ६८१ के पूर्व का नहीं है। इनकी विशेष प्रसिद्धि संवत् १००० के पश्चात्, जब कि मूल-राज सोलंकी गुजरात में राज्य करने लगा, हुई। इससे पता चलता है कि ये लोग भी राष्ट्रकूटों के ही सम-कालीन थे। अतएव संवत् २२२ में इनके अस्तित्व का होना भी निराधार है।

चौहान—सोलंकियों ही की तरह चौहानों के लेख भी संवत् १००० के पूर्व के नहीं मिले हैं, अतएव उस समय चौहानों का होना भी विश्वसनीय नहीं माना जा सकता।

सांखला – यह परमारों की एक पिछली शाखा है। मुहता नेणसी ने धरणीवराह के पुत्र बाघ की औलाद से इस शाखा की उत्पत्ति लिखी है। अगर यह धरणीवराह वही है जिसका कि नाम बीजापुर के लेख में पाया जाता है तो उसका समय संवत् १०५० के करीब और उसके पौत्र का संवत् ११०० के करीब होना चाहिये। सांखलों का राज्य संवत् १२०० के करीब किराडू में होना पाया जाता है। अतः संवत् २२२ में इस जाति का अस्तित्व भी सिद्ध नहीं होता।

पड़िहार—पड़िहारों के विषय में हम ऊपर काफ़ी प्रकाश डाल चुके हैं। उस समय में याने संवत् २२२ में यह जाति भी प्रकट नहीं हुई थी।

भाटी—इस जाति का प्रमाणिक इतिहास सम्वत् १२०० के करीब से प्रकाश में आता है। इसके पूर्व इसका अस्तित्व नहीं था हां, इतना अवश्य है कि जैसलमेर के दीवान मेहता अजितसिंहजी ने अपने भट्टीनामें में इनकी उत्पत्ति का समय संवत् ३३६ के पश्चात् लाहौर के राजा भट्टी की संतानों से होना लिखा है। मगर यह बात उस समय तक सच नहीं मानी जा सकती जब तक कि उस समय का कोई शिलालेख प्राप्त न हो जाय। खैर इस संवत् से भी भाटी जाति का उत्पन्न होना संवत २२२ के पश्चात् ही सिद्ध होता है।

मोयल—मोयल जाति कोई स्वतंत्र जाति नहीं है यह चौहानों की एक शाखा है। इसका संवत् १५०० तक लाडनू नामक स्थान पर राज्य करना पाया जाता है।

गोयल—गोयल जाति भी स्वतंत्र जाति न हो कर गहलोतों की एक शाखा है। इसकी उत्पत्ति बाप्पा रावल से हुई है। यह इतिहास प्रसिद्ध बात है कि बाप्पा रावल ने संवत् ७७० के पश्चात् मानराज मोरी से चित्तौड़ का राज्य लिया था। इन गोयलों का राज्य मारवाड़ के इलाके में था, जिसे कन्नौज से आकर राठौड़ों ने छीन लिया।

दहिया—इस जाति का राज्य चौहानों से पूर्व संवत् १२०० के करीब जालोर में था। ये परमारों के नौकर या आश्रित थे।

मकवाना—यह शाखा परमारों की कही जाती है। ये लोग कभी इतने मशहूर नहीं हुए, जितनी कि इनके पूर्व होने वाली इनकी छोटी शाखा "झाला" के लोग रहे।

कछवाहा—इस जाति का संवत् ११०० के पश्चात् गवालियर में राज करना पाया जाता है। इसका कारण यह है कि इनके समय का एक शिलालेख संवत् ११५० का खुदा हुआ गवालियर के क़िले में मौजूद है। इसमें राजा महिपाल के पूर्व आठ पुश्तें लिखी हुई हैं। प्रत्येक पुश्त यदि २५ वर्ष की मानली जाय तो करीब २०० वर्ष पूर्व अर्थात् संवत् ८५० तक उनका वहाँ रहना सम्भव हो सकता है। इसके पूर्व का कोई शिला लेख नहीं मिलता। अतएव इस जाति के विषय में भी मानना पड़ेगा कि यह भी संवत् २२२ में ओसियां में ओसवाल नहीं हुई।

गौड़—इस जाति का पता बंगाल में लगता है और वहीं से इसका राजपूताने में आना दिल्लीपति महाराज पृथ्वीराज के समय में माना जाता है। इसके पूर्व इस जाति के मारवाड़ में होने का कोई सबूत नहीं मिलता। अतएव यह जाति भी संवत् २२२ में ओसवाल कैसे हुई, समझ में नहीं आता।

ऊपर हमने ओसवाल जाति की उत्पत्ति के संबन्ध में उन सब मतों का संक्षिप्त में विवेचन कर दिया है जो इस समय विशेष रूप से सब स्थानों पर प्रचलित है। मगर ये सभी मत अभी तक इतने संशयात्मक हैं कि बिना अनुमान की अटकल लगाये केवल तर्क या प्रमाण के सहारे इस जाति की उत्पत्ति के संबन्ध में किसी निश्चित मत पर पहुँचना कठिन है। प्राचीन जैनाचार्य्यों के मत की पुष्टि में—जोकि ओसवाल जाति की उत्पत्ति को भगवान् महावीर से ७० वर्ष के पश्चात् से मानते हैं—अभी तक कोई ऐसा मजबूत और दृढ़ प्रमाण नहीं मिलता है जिसके बल पर निर्विवाद रूप से इस मतकी सत्यता को स्वीकार की जा सके।

दूसरा मत जो संवत् २२२ का है, उसके विषय में कई विद्वानों ने कुछ प्रमाण एकत्रित किए हैं जो हम नीचे देते हैं:—

(१) जैन साहित्य के अन्दर समराइच्च कथा नामक एक बहुत प्रसिद्ध और माननीय ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ की ऐतिहासिक महत्ता को जर्मनी के प्रसिद्ध जैन विद्वान् डा० हरमन जेकोबी ने इसके अनुवाद पर लिखी हुई अपनी भूमिका में मुक्त कंठ से स्वीकार की है। इस ग्रंथ के लेखक सुप्रसिद्ध विद्वान् आचार्य्य श्री हरिभद्र सूरि ने सातवीं सदी में पोरवाल जाति का संगठन किया। इसी कथा के सार में एक श्लोक आया है जिसमें लिखा हुआ है कि उएस नगर के लोग ब्राह्मणों के कर से मुक्त हैं। उपकेश जाति के गुरू ब्राह्मण नहीं हैं। श्लोक इस प्रकार है:—

> तस्मात् उकेशज्ञाति नाम गुरवो ब्राह्मणः नहीं।
> उएस नगरं सर्व कर ऋण समृद्धि मत् ॥
> सर्वथा सर्व निर्मुक्त मुएसा नगरं पारं :
> तत्प्रभृति सजातिविति लोके प्रसिद्धम् ॥

यहाँ यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि समराइच्च कथा के लेखक आचार्य्य हरिभद्रसूरि का समय पहले संवत् ५३० से संवत् ५८५ के बीच तक माना जाता था, मगर अब जैन साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान जिनविजयजी ने कई प्रमाणों से इस समय को संवत् ७५७ से लेकर संवत् ८५७ के बीच माना है। यदि इस मत को स्वीकार कर लिया जाय तो संवत् ७५७ के समय में उएश जाति और उएश नगर बहुत समृद्धि पर थे, यह बात मालूम होती है और यह मानना भी अनुचित न होगा कि इस समृद्धि को प्राप्त करने में कम से कम २०० वर्षों का समय अवश्य लगा होगा। इस हिसाब से इस जाति के इतिहास की दौड़ विक्रम की पाँचवी शताब्दी तक पहुँच जाती है।

(२) आचार्य्य बप्पभट्टसूरिजी जैन संसार में बहुत नामाङ्कित हुए हैं। आपने कन्नौज के राजा नागावलोक वा नागभट्ट पड़िहार (आम राजा) को प्रति बोध देकर जैनी बनाया था। उस राजा के एक रानी वणिकपुत्री भी थी। इससे होने वाली संतानों को इन आचार्य्य ने ओसवंश में मिला दिया। जिनका गौत्र राजकोष्टागर हुआ। इसी गौत्र में आगे चल कर विक्रम की सोलहवीं सदी में सुप्रसिद्ध करमाशाह हुए जिन्होंने सिद्धाचल तीर्थ का अन्तिम जीर्णोद्धार करवाया। इसका शिलालेख संवत् १५८७ का खुदा हुआ शत्रुंजय तीर्थ पर आदिश्वरजी के मन्दिर में है। इस लेख में दो श्लोक निम्न लिखित हैं:—

इतश्च गोपाद्ध गिरौ गरिष्टः श्रीबप्प भट्टी प्रतिबोधितश्च।
श्री आमराजो ऽजति तस्य पत्नि काचित्व भूव व्यवहारी पुत्री ॥
तत्कुक्षिजाताः किल राजकोष्टा शाराह्व गौत्रे सुकृतैक पात्रे।
श्री ओस वंस विशादे विशाले तस्यान्वयेऽश्रिपुरुषाः प्रसिद्धाः ॥

आचार्य्य बप्पभट्टसूरि का जन्म संवत् ८०० में हुआ। इस से पता चलता है कि उस समय ओसवाल जाति विशाल क्षेत्र में फैली हुई थी और इसका इतना प्रभाव था कि जिस को पैदा करने में कई शताब्दियों की आवश्यकता होती है।

(३) ओसियाँ के मन्दिर के प्रशस्ति शिलालेख में भी उपकेशपुर के पड़िहार राजाओं में वत्सराज की बहुत तारीफ लिखी है। इस वत्सराज का समय भी विक्रम की आठवीं सदी में सिद्ध होता है।

(४) सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ स्व० मुंशी देवीप्रसाद जी जोधपुर ने 'राजपूताने की शोध-खोज' नामक एक पुस्तक लिखी है। उसमें उन्होंने लिखा है कि कोटा राज्य के अटरू नामक ग्राम में जैन मन्दिर के एक खंडहर में एक मूर्ति के नीचे वि० सं० ५०८ का भैंसाशाह के नाम का एक शिलालेख मिला है। मुंशीजी ने लिखा है कि इन भैंसाशाह और रोड़ा बनजारा के परस्पर में इतना स्नेह था कि इन दोनों ने मिलकर अपने सम्मिलित नाम से "भैंसरोड़" नामक ग्राम बसाया। जो वर्तमान में उदयपुर रियासत में विद्यमान है। यदि यह भैंसाशाह और जैनधर्म के अन्दर प्रसिद्धि प्राप्त आदित्यनाग गोत्र का भैंसाशाह एक ही हो तो, इसका समय वि० स० ५०८ का निश्चित करने में कोई बाधा नहीं आती। जिससे ओसवाल जाति के समय की पहुँच और भी दूर चली जाती है।

(५) श्वेत हूण के विषय में इतिहासकारों का यह मत है कि श्वेत हूण तोरमाण विक्रम की छठी शताब्दि में मरुस्थल की तरफ़ आया। उसने भीनमाल को अपने हस्तगत कर अपनी राजधानी वहाँ स्थापित की। जैनाचार्य्य हरिगुप्तसूरि ने उस तोरमाण को धर्मोपदेश देकर जैनधर्म का अनुरागी बनाया। जिसके परिणाम स्वरूप तोरमाण ने भीनमाल में भगवान् ऋषभदेव का बड़ा विशाल मन्दिर बनवाया।

इस तोरमाण का पुत्र मिहिरगुल जैनधर्म का कट्टर विरोधी शैवधर्मो-पासक हुआ। उसके हाथ में राजतंत्र के आते ही जैनियों पर भयंकर अत्याचार होने लगे। जिसके परिणाम स्वरूप जैनी लोगों को देश छोड़कर लाट गुजरात की ओर भगना पड़ा, इन भगनेवालों में उपकेश जाति के व्यापारी भी थे। लाट गुजरात में जो आजकल उपकेश जाति निवास करती है; वह विक्रम की छठवीं शताब्दी में मारवाड़ से गई हुई है। अतएव इससे भी पता चलता है कि उस समय उपकेश जाति मौजूद थी।

उपरोक्त प्रमाणों से पता चलता है कि विक्रम की छठवीं शताब्दी तक तो इस जाति की उत्पत्ति की खोज में किसी प्रकार खींचातानी से पहुँचा भी जा सकता है मगर उसके पूर्व तो कोई भी प्रमाण हमें नहीं मिलता जिसमें ओसवाल जाति, उपकेश जाति, या उकेश जाति का नाम आता हो। उसके पहले का इस जाति का इतिहास ऐसा अंधकार में है कि उस पर कुछ भी छान बीन नहीं की जा सकती। दूसरे उस समय इस जाति के न होने का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि ओसवाल जाति के मूल १८ गौत्रों की उत्पत्ति क्षत्रियों की जिन अठारह शाखाओं से होना जैनाचार्य्यों ने लिखा है, उन शाखाओं का अस्तित्व भी उस समय में न था। जब उन शाखाओं का अस्तित्व ही न था तब कोई भी जिम्मेदार इतिहासकार उन शाखाओं से १८ गौत्रों की उत्पत्ति किस प्रकार मान सकता है। इसके अतिरिक्त मूल १८ गौत्रों के पश्चात् अन्य गौत्रों की उत्पत्ति के विषय में जो किम्वदंतियाँ और कथाएँ यतियों और जैनाचार्य्यों के दफ्तरों में मिलती हैं, उनमें भी संवत ७०० के पहले की कोई किम्वदंति हमें नहीं मिली। यदि विक्रम से ४०० वर्ष पूर्व इस जाति की स्थापना हो चुकी थी तो उसी समय के पश्चात् से समय २ पर आचार्य्यों के द्वारा नवीन गौत्रों की स्थापना का पता लगना चाहिये था। संवत् ९०० से संवत १४०० तक लगातार जैनाचार्य्यों के द्वारा ओसवाल गौत्रों की स्थापना का वर्णन हमें मिलता चला जाता है। ऐसी स्थिति में विक्रम के ४०० वर्ष पूर्व से लेकर विक्रम की सातवीं शताब्दी तक अर्थात् लगातार ११०० वर्षों में इस जाति के सम्बन्ध में किसी भी प्रमाणिक विवेचन का न मिलना इसके अस्तित्व के सम्बन्ध में शंका उत्पन्न कर सकता है।

इन सब कारणों की रूप रेखाओं को मिलाकर अगर हम किसी महत्वपूर्ण तथ्य पर पहुँचने की कोशिश करें तो हमें यही पता लगेगा कि विक्रम संवत् ५०० के पश्चात् और विक्रम संवत् ९०८ के पूर्व इस जाति की उत्पत्ति हुई होगी। बाबू पूरणचन्दजी नाहर लिखते हैं कि "जहाँ तक मैं समझता हूँ (मेरा विचार भ्रमपूर्ण होना भी असंभव नहीं) प्रथम राजपूतों से जैनी बनानेवाले श्री पार्श्वनाथ संतानीय श्री रत्नप्रभसूरि जैनाचार्य्य थे। उक्त घटना के प्रथम श्री पार्श्वनाथ स्वामी की इस परम्परा का नाम उपकेश गच्छ भी न था। क्योंकि श्री वीर निर्वाण के ९८० वर्ष के पश्चात् श्री देवर्द्धिगणि क्षमासमण ने जिस समय जैनागमों को पुस्तकारूढ़ किये थे उस समय के जैन सिद्धान्तों में और श्री कल्पसूत्र की स्थविरावलि आदि

प्राचीन ग्रन्थों में उपकेश गच्छ का उल्लेख नहीं है। उपरोक्त कारणों से संभव है कि संवत् ५०० के पश्चात् और संवत् १००० के पूर्व किसी समय उपकेश या ओसवाल जाति की उत्पत्ति हुई होगी और उसी समय से उपकेशगच्छ का नामकरण हुआ होगा।

हमारा खयाल है कि बाबू साहब का उपरोक्त मत तर्क, प्रमाण और युक्तियों से परिपूर्ण है। बाबू पूरणचन्दजी इतिहास के उन विद्वानों में से हैं जिन्होंने अपना सारा जीवन इन्हीं ऐतिहासिक खोजों के पीछे उत्सर्ग कर दिया है। ऐसी स्थिति में आपके निकाले हुए तथ्य को स्वीकार करने में किसी भी इतिहासकार को कोई आपत्ति नहीं हो सकती।

हम जानते हैं कि हमारे निकाले हुए इस निष्कर्ष से बहुत से ऐसे सज्जनों को जोकि प्राचीनता ही में सब कुछ गौरव का अनुभव करते हैं अवश्य कुछ न कुछ असंतोष होगा। क्योंकि भारतवर्ष के कई नवीन और प्राचीन लेखकों की प्रायः यह प्रवृत्ति रही है कि वे किसी भी तरह अपनी जाति अपने धर्म और अपने रीति रिवाजों को प्राचीन से प्राचीन सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं। साथ ही उसके गौरव को बतलाने के लिए उसकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की चमत्कार पूर्ण घटनाओं की सृष्टि करते हैं, पर हम लोगों का इस प्रकार के सज्जनों से बड़ा ही नम्र मतभेद है। हमारा अपना खयाल है कि शुद्ध इतिहासवेत्ता के सामने शुद्ध सत्य ही एक आदर्श रहता है। वह सब प्रकार के पक्षपातों और सब प्रकार के प्रभावों से मुक्त होकर एक निष्पक्ष जज की तरह अपनी स्वतंत्र खोजों और अन्वेषणाओं के द्वारा सत्य पर पहुँचने की चेष्टा करता है। हम यह मानते हैं कि मानवीय बुद्धि बहुत परिमित है और अत्यन्त चेष्टा करने पर भी सत्य के नजदीक पहुँचने में कभी २ वह असफल हो जाती है, मगर अंत में सत्य के खोज की पूर्ण लालसा उसे पूर्ण सत्य पर नहीं तो भी उसके निकटतम पहुँचा देने में बहुत सहायता करती है।

दूसरी बात यह है कि दूसरे लोगों की तरह हम लोग अपने सारे गौरव और सारे वैभव की झलक केवल प्राचीनता में देखने के ही पक्षपाती नहीं। हम स्पष्टरूप से देखते हैं कि संसार की रंग-स्थली में समय २ पर कई नवीन जातियाँ पैदा होती हैं और वे अपनी नवीन बुद्धि, नवीन पराक्रम, और नवीन प्रतिभा से संसार की सभ्यता और संस्कृति के ऊपर एक नवीन प्रकाश डालती है और अपने लिए एक बहुत ही गौरव पूर्ण नवीन इतिहास का निर्माण कर जाती है। हम अहलानिया इस बात को कह सकते हैं कि किसी भी जाति का गौरव इस बात में नहीं है कि वह कितनी प्राचीन है या कितनी नवीन, वरन उसका गौरव उसके द्वारा किये हुए उन कार्यों से है जो उसकी महानता के सूचक है और जो मनुष्य जाति को एक नये प्रकार का संदेश देते हैं।

ओसवाल जाति का गौरव इस बात से नहीं है कि वह विक्रम से ४०० वर्ष पूर्व पैदा हुई थी या

विक्रम के १००० वर्ष पश्चात्; बल्कि उसका गौरव उस महान् विश्वभाव के सिद्धान्त से है जिसके वश होकर आचार्य रत्नप्रभसूरि ने उसकी स्थापना की थी। उसके पश्चात् इस जाति का गौरव उन महान् पुरुषों से है जिन्होंने इस जाति में पैदा होकर क्या राजनीति, क्या धर्मनीति, क्या अर्थनीति इत्यादि संसार की प्रायः सभी नीतियों में अपने आश्चर्यजनक कारनामें दिखलाये और जिन्होंने अपनी प्रतिभा और अपने त्याग के बल से राजपूताने के मध्ययुगीन इतिहास को दैदीप्यमान कर रखा है।

ओसवाल जाति का अभ्युदय

Rise of the Oswals.

ओसवाल जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में हम प्रथम अध्याय में काफ़ी विवेचन कर चुके हैं। अब इस अध्याय के अन्दर हम यह देखना चाहते हैं कि इस जाति का क्रमागत् अभ्युदय किस प्रकार हुआ, किन २ महापुरुषों ने इस जाति की उन्नति के अन्दर महत्व पूर्ण भाग प्रदान किया। बाहर के कौन २ से प्रभावों ने इस जाति की उन्नति पर असर डाला और किस प्रकार अत्यन्त प्रतिष्ठा और सम्मान को साथ रखते हुए यह जाति भारत के विभिन्न प्रान्तों में फैली।

ओसवालों की उत्पत्ति का इतिहास चाहे विक्रम सम्वत् के पूर्व ४०० वर्षों से प्रारम्भ होता हो, चाहे वह संवत २२२ से चलता हो; चाहे और किसी समय से उसका प्रारम्भ होता हो, मगर यह तो निर्विवाद है कि ओसवाल जाति के विकास का प्रारम्भ संवत् १००० के पश्चात् ही से शुरू होता है, जब कि इस जाति के अन्दर बड़े २ प्रतिभाशाली आचार्य्य अस्तित्व में आते हैं। जिनकी विचार धारा अत्यन्त विशाल और प्रशस्त थी। इन आचार्य्यों ने मनुष्य मात्र को प्रतिबोध देकर अपने धर्म के अन्दर सम्मिलित किया और इस प्रकार जैन धर्म और ओसवाल जाति की वृद्धि की।

ओसवाल जाति की उत्पत्ति का सिद्धान्त

श्री रत्नप्रभसूरि ने जिस महान सिद्धान्त के ऊपर इस जाति की स्थापना की, वह सिद्धान्त हमारे ख़याल से विश्वबन्धुत्व का सिद्धान्त था। जैनधर्म वैसे ही विश्वबन्धुत्व की नींव पर खड़ा किया हुआ धर्म है, मगर आचार्य्य श्री के हृदय में ओसवाल जाति की स्थापना के समय यह सिद्धान्त बहुत ही ज़ोरों से लहरें ले रहा होगा। आजकल प्रायः यह मत अधिक प्रचलित है कि ओसवाल धर्म की दीक्षा केवल ओसियाँ के राजपूतों ने ही ग्रहण की थी। मगर एक उड़ती हुई किम्वदंती इस प्रकार की भी है कि राजा की आज्ञा से और ओसियाँ देवी की मदद से सारी ओसियां नगरी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सब यहाँ तक कि स्वयं ओसियाँ माता तक एक रात में जैनधर्म की दीक्षा ग्रहण कर ओसवाल नाम से मशहूर हुए। हम नहीं कह सकते कि इस किम्वदंती के अन्दर सत्य का कितना अंश है; क्योंकि हमारे पास इस बात का कोई भी पक्का प्रमाण नहीं। मगर इतना हम जरूर कह सकते हैं कि अगर यह किम्वदन्ती सत्य हो

सी इससे उन आचार्य श्री की सागरवत् गंभीरता और उनके हृदय की विशालता का असर मनुष्य के ऊपर बीस गुना ज्यादा पड़ता है। वे हमको उन दिव्य महात्माओं के अंदर दृष्टिगोचर होते हैं जो जाति, वर्ण, और प्रान्तीयता की भावनाओं से ऊंचे उठकर मनुष्य मात्र को एक समान और निस्पृह दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार यदि यह किम्वदन्ती सत्य हो तो ओसवाल जाति की उत्पत्ति का सिद्धान्त और भी अधिक ऊँचाई पर पहुँच जाता है।

श्री रत्नप्रभसूरि के पश्चात् और भी अनेक आचार्यों ने इस जाति की उन्नति के लिये बहुत ही प्रभाव शाली चेष्टायें कीं। उन्होंने स्थान २ पर मनुष्य जाति को प्रतिबोध दे दे कर नये-नये गौत्रों के नाम से इस जाति में मिलाना शुरू किया। ऐसा कहा जाता है कि इन आचार्यों के परिश्रम से ओसवाल जाति के अन्दर चौदह सौ से भी अधिक गौत्रों और उपगौत्रों की सृष्टि हुई। इन गौत्रों के नामकरण कहीं पर स्थान के नाम से, कहीं पर प्रभाव शाली पूर्वजों के नाम से, कहीं पर आदि वंश के नाम से, कहीं व्यापारिक कार्य्य की संज्ञा से और कहीं पर अपने प्रशंसनीय कार्य कुशलता के उपलक्ष्य में हुए पाये जाते हैं। इससे पता लगता है कि उन आचार्यों का हृदय अत्यन्त विशाल था, जाति और धर्म की वृद्धि ही उनका प्रधान लक्ष्य था। इसके सम्बन्ध में वे किसी भी प्रकार की रूढि या हठ पर अड़े हुए न थे। अस्तु।

जैनाचार्यों पर चमत्कारवाद का असर

इस सम्बन्ध में इस सारे इतिहास के वातावरण में हमें एक ऐसे भाव का असर भी दिखलाई देता है जो किसी भी निष्पक्ष व्यक्ति के हृदय में खटके बिना नहीं रह सकता। जो शायद जैनधर्म के मूल सिद्धान्त के भी खिलाफ़ है। इतिहासकार के कठोर कर्त्तव्य के नाते इस भाव पर प्रकाश डालने के लिए भी हमें मजबूर होना पड़ रहा है। ओसवाल जाति के गौत्रों की उत्पत्ति के इतिहास को जब इस बारीकी की निगाह से देखते हैं तो हमें मालूम होता है कि उन आचार्यों ने मनुष्यों को धार्मिक प्रभाव से प्रभावित करके नहीं, प्रत्युत अपने चमत्कारों के प्रभाव से अपने वश कर इस जाति में मिलाया था। कहीं पर किसी सांप के काटे को अच्छा कर; कहीं पर किसी को अनन्त द्रव्य की प्राप्ति करवाकर, कहीं किसी को पुत्ररत्न प्रदान कर, कहीं किसी को जलोदर, कुष्ठ आदि भयंकर रोग से मुक्त कर इत्यादि और भी कई प्रकार से उन्हें अपने वश में कर इस जाति के कलेवर को बढ़ाया था।

यह प्रवृत्ति जैनधर्म के समान उदार धर्म के साधुओं के लिए प्रशंसनीय नहीं कही जा सकती, मगर ऐसा मालूम होता है कि उस समय की जनता की मनोवृत्तियाँ चमत्कारों के पीछे पागल हो रही थी। वह युग शांति और सुव्यवस्था का युग नहीं था। कई प्रकार के प्रभाव उस समय की जनता की मनो-

वृत्तियों में काम कर रहे थे उनमें चमत्कारों का प्रभाव भी एक प्रधान था। जैनाचार्यों ने जब देखा होगा कि जनता साधारण उपदेश से प्रभावित नहीं हो सकती तब संभव है उन्होंने अपने आपको चमत्कारों में निपुण किया होगा और इस प्रकार जनता के हृदय पर विजय प्राप्त करने की कोशिश की होगी। बहुत से ऐसे समय आते हैं जिनमें युग प्रवर्त्तकों को प्रचलित सनातन धर्म के विरुद्ध युगधर्म के नाम से अस्थाई व्यवस्था करना पड़ती है, संभव है उस समय के आचार्यों ने यही सोचकर चमत्कारवाद का आश्रय ग्रहण किया होगा।

अब हम यह देखना चाहते हैं कि इस जाति की उन्नति और विकास के इतिहास में किन २ महान् आचार्यों ने महत्व पूर्ण योग प्रदान किया।

ऐसा कहा जाता है कि शुरू २ में ओसवाल जाति के अन्दर १८ गौत्रों की स्थापना हुई थी और उसके पश्चात् इनमें से अनेक गौत्रों की और २ शाखाएँ निकलती गई। मुनि ज्ञानसुन्दरजी ने अपने ग्रंथ 'जैन जाति महोदय' में इन अठारह गौत्रों की ४९८ शाखाएँ इस प्रकार लिखी हैं।

(१) मूलगौत्र तातेड़—तातेड़, तोडियाणि, चौमोला, कौसीया, धावडा, चैनावत, तलोवडा, नरवरा, संघवी, डुंगरिया, चोधरी, रावत, मालावत, सुरती, जोखेला, पाँचावत, बिनायका, साढेरावा, नागड़ा पाका, हरसोत, केलाणी, एवं २२ जातियों तातेड़ों से निकली यह सब भाई हैं।

(२) मूलगौत्र बाफणा—बाफणा, (बहुफणा) नाहटा, (नाहाटा नावटा) भोपाला, भूतिया, भाभू, नावसरा, मुंगडिया, डागरेचा, चमकीया, चोधरी जांवडा, कोटेचा, बाला, धातुरिया, तिहुयणा, कुरा, बेताला, सलगणा, बुचाणि, साबलिया, तोसटीया, गान्धी, कोठारी, खोखरा, पटवा, दफतरी, गोडावत, कूचेरिया, बालीया, संघवी, सोनावत, सेलोत, भावडा, लघुनाहटा, पंचवया, हुभिया, टाटीया, ठगा, लघुचमकीया, बोहरा, मीठडीया, मारू, रणधीरा, ब्रह्मेचा, पाटलीया वानुणा, ताकलीया, योद्धा, धारोला, दुद्धिया, बादोला, शुकनीया, इस प्रकार ५२ जातियां बाफना गोत्र से निकली हुई आपस में भाई हैं।

(३) मूलगौत्र करणावट—करणावट, वागडिया, संघवी, रणसोत, आच्छा, दादलिया, हुना, काकेचा, थंभोरा, गुदेचा, जीतोत, लाभांणी, संखला, भीनमाला, इस प्रकार करणावटों से १२ साखाएँ निकली यहसब आपस में भाई हैं।

(४) मूलगौत्र बलाहा—बलाहा, रांका, बांका, सेट, सेठिया, छावत, चौधरी, लाला, बोहरा, भूतैड़ा कोठारी रांका देपारा, नेरा, सुखिया, पाटोत, पेपसरा, धारिया, जडिया, सालीपुरा, चित्तोडा, हाका, संघवी, कागडा, कुशलोत, फलोदीया, इस प्रकार २६ साखाएँ बलाहा गोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(५) मूलगौत्र मोरख—मोरख, पोकरणा, संघवी, तेंजारा, लघुपोकरणा, बांदोलीया, चुंगा,

लघुचंगा, गजा, चौधरी, गोरीवाल, केदारा, वातोकडा, करचु, कोलोरा, शीगाला, कोठारी इस प्रकार १७ शाखाएँ मोरखगोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(६) मूलगौत्र कुलहट—कुलहट, सुरवा, सुसाणी, पुकारा, मसाणिया, खोटीया, संघवी, लघुसुखा, बोरड़, चोधरी, सुराणिया, साखेचा, कटारा, हाकडा, जालोरी, मन्नी, पालखिया, खूमाणा १८ शाखाएँ कुलहट गोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(७) मूलगौत्र विरहट—विरहट, भुरंट, तुहाणा, औसवाला, लघुभुरंट, गागा, नोपत्ता, संघवी, निबोलिया, हांसा, धारिया, राजसरा, मोतिया, चोधरी; पुनमिया सरा, उजोत, इस प्रकार १७ शाखाएँ विरहट गौत्र से निकली है वह सब भाई हैं।

(८) मूलगौत्र श्री श्रीमाल—श्री श्रीमाल; संघवी, लघुसंघवी, निलडिया, कोटडिया, झाबांणी, नाहरलांणि, केसरिया, सोनी, खोपर, खजानची, दानेसरा, उद्धावत, अटकलिया, धाकडिया भीन्नमाला, देवड़, मांडलिया, कोटीं, चंडालेचा, साचोरा, करवा इस प्रकार २२ शाखाएँ श्री श्रीमाल गौत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(९) मूलगौत्र श्रेष्ठि—श्रेष्ठि, सिंहावत, भाला, रावत, चैंदमुत्ता, पटवा, सेवड़िया, चोधरी, थानावट, चित्तोडा, जोधावत्, कोठारी, बोत्थाणी, संघवी, पोपावत, ठाकुरोत, बालेटा विजोत, देवराजोत, गुँदिया, बालोटा, नागोरी, सेखांणी, लाखांणी, भुरा, सिन्धी; मेडतिया, रणधीरा, पालावत्, शूरना इसी प्रकार ३० शाखाएँ श्रेष्ठि गोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(१०) मूलगौत्र संचेति—सुंचेति (सुचंति साचेती) ढेलडिया, धर्माणि, मोतिया, बिंबा, मालोत, लालोत, चोधरी, पालाणि लघुसंचेति, मंत्रि, हुकमिया, कजारा, हीपा, गान्धी बेगाणिया, कोठारी, मालखा, छाछा, चितोडिया, इसराणि, सोनी, मरुवा, घरंघटा, उदेचा, लघुचौधरी, चोसरीया, बापावत संघवी, मुरगीपाल, कीलोला, लालोत, खरभंडारी, भोजावत, काटी, जाटा, तेजाणी, सहजाणी, सेणा मन्दिरवाल, मालतीया, भोपावत, गुणिया, इस प्रकार ४४ साखाएँ संचेति गोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(११) मूल गौत्र आदित्यनाग—आदित्यनाग, चोरडिया, सोढाणि, संघवी, उडक मसाणिया, मिणियार, कोठारी, पारख, 'पारखों' से भावसरा, संघवी ढेलडिया, जसाणि, मोल्हाणि; झडक, तेजाणि, रूपावत, चोधरी, गुलेच्छा 'गुलेच्छाओं' से दोलताणी, सागाणि संघवी, नापडा, काजाणि, तुला, सेहजावत, नागडा, चित्तोडा, चोधरी, दातारा, मीनागरा, सावसुख 'सावसुखों' से मीनारा, लोला, बीजाणि, केसरिया, वला, कोठारी नांदेचा, भटनेराचोधरी 'भटनेराचौधरियों' से कुंपावत, भंडारी, जीमणिया, चंदावत सांभरिया, कानुंगा, गदइया 'गदईयों' से गेहलोत, लुगावत रणशोभा, बालोत, संघवी, नोपत्ता,

बुचा 'बुचाँ' से सोनारा, भंडलिया, दालीया; करमोत्, दालीया, रत्नपुरा, चोरड़िया चोरडियोंसे नाबरिया, सराफ, कामाणि, दुद्धोणि, सीपाणि, आसाणि, सहलोत्, लघु सोढाणी, देदाणि, रामपुरिया, लघुपारख, नागोरी, पाटणिया छाडोत्, ममइया, वोहरा, खजानची, सोनी, हाडेरा, दफतरी, चोधरी, तोलावत्. राव, जौहरी, गलाणि, इत्यादि इस प्रकार ८५ शाखाएँ आदित्यनाग गोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(१२) मूलगौत्र भूरि—भूरि, भटेवरा, उडक, सिंधि, चोधरी, हिरणा, मच्छा, बोकड़िया, बलोटा, बोसूदिया, पीतलिया, सिहावत्, जालोत, दोसाखा, लाडवा, हलदिया, नाचाणी, मुरदा, कोठारी, पाटोतिया इस प्रकार २० शाखाएँ भूरि गौत्रसे निकली वह सब भाई हैं।

(१३) मूलगौत्र भद्र—भद्र, समदडिया, हिंगड, जोगड, गिंगा, खपाटिया, चवहेरा, बालडा, नामाणि, भमराणि, देलडिया, संघी, सादावत्, भांडावत् चतुर, कोठारी, लघु समदड़िया लघु हिंगड, सांढा, चौधरी, भाटी, सुरपुरिया, पाटणिया, नांनेचा, गोगड, कुलधरा; रामाणि, नाथावत्, फूलगरा, इस प्रकार २९ शाखाएँ भद्र गौत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(१४) मूलगौत्र चिंचट—चिंचट, देसरडा, संघवी, ठाकुरा, गोसलांणि, खीमसरा, लघुचिंचट, पाचोरा, पुर्विया, नासाणिया, नौपोला, कोठारी, तारावाल, लाडलखा, शाहा, आकतरा, पोसालिया, पूजारा, वनावत्, इस प्रकार १९ शाखाएँ चिंचटगोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

(१५) मूलगौत्र कुमट—कुमट काजलिया, धनंतरी, सुघा, जगावत्, संघवी पुगलिया, कठोरिया कापुरीत, संभरिया, चोक्खा, सोनीगरा, लाहोरा, लाखाणी, मरवाणी, मोरचिया, छालिया, मालोत्, लघुकुंमट, नागोरी इस प्रकार १९ शाखाएँ कुंभटगोत्र से निकली यह सब भाई हैं।

(१६) मूलगौत्र डिंडू—डिंडू, राजोत्, सोसलाणि, धापा, धीरोत्, खंडिया, योद्धा, भाटिया, भंडारी, समदरिया, सिंधुडा, लालन, कोचर, दाखा, भीमावत्, पालणिया, सिखरिया, वांका, वडवडा, बादलिया, कानुंगा, एवं २१ शाखाएँ डिड्डू गौत्रसे निकली वह सब भाई हैं।

(१७) मूलगौत्र कन्नोजिया—कन्नोजिया, वडभटा, राकावाल, तोलिया, धाधलिया घेवरिया, गुंगलेचा, करवा, गढवाणि, करेलिया, राडा, मीठा भोपावत् जालोरी जमघोटा, पटवा, मुसलिया इस प्रकार १७ शाखाएँ कन्नोजिया गोत्रसे निकली यह सब भाई हैं।

(१८) मूलगोत्र लघुश्रेष्टि—लघुश्रेष्टि, वर्धमान, भोभलिया; लुणेचा, बोहरा, पटवा, सिंधी, चिंतोडा, खजानची, पुनोत्, गोधरा, हाडा, कुवडिया, लुणा, नालेरिया, गोरेचा, इस प्रकार १६ शाखाएँ लघुश्रेष्टि गोत्र से निकली वह सब भाई हैं।

ऊपर जिन शाखाओं का वर्णम किया गया है, उनमें कई ऐसी हैं जिनका नाम दो २ तीन ३

और चार २ बार आया है ऐसी स्थिति में इन शाखाओं के सम्बन्ध में शंका होना स्वाभाविक है सम्भव है दूसरे आचार्यों का भी इससे मतभेद हो। मगर यह निश्चित है कि संवत् १००० के पश्चात् जो आचार्य्य हुए उनमेंसे बहुतसों ने इन गौत्रों की शाखाओं तथा नवीन गौत्रों की स्थापना की। उनमें से कुछ प्रसिद्ध २ आचार्य्यों का परिचय हम नीचे देने की चेष्टा कर रहे हैं।

आचार्य्य वप्पभट्टसूरि

आचार्य्य वप्पभट्टसूरि का जन्म वि० सं० ८०० में हुआ। उस समय जावालिपुर में पड़िहार वंश का महाप्रतापी वत्सराज नाम का राजा राज्य करता था। इसने गौड़ प्रांत, बंगाल प्रांत, मालव प्रांत वग़ैरह दूर २ के प्रदेशों को विजय कर उत्तरापथ में एक महान साम्राज्य स्थापित करने की कोशिश की थी। इसी समय में अणहिलपुर नामक एक छोटा सा ग्राम बसाकर चावड़ा वंशीय राजा वनराज ने अपना राज्य विस्तार करना प्रारम्भ किया था। इसने सारस्वतमण्डल, आनर्त और वागड़ इत्यादि आसपास के प्रान्तों पर अधिकार करके पश्चिम भारत के अन्दर एक बड़ा साम्राज्य स्थापित करने की कोशिश की।

सम्राट् वत्सराज के नागभट्ट नामक एक पुत्र हुआ जो इतिहास में नागावलोक व आमराजा के नाम से मशहूर है। इसने अपनी राजधानी जावालिपुर से हटाकर हमेशा के लिए कन्नौज में स्थापित की। ग्वालियर की प्रशस्ति से पता चलता है कि इस राजा ने कई देशों को जीतकर अपने राज्य में मिलाया। इसी राजा को आचार्य्य वप्पभट्टसूरि ने जैनधर्म का प्रतिबोध देकर जैनी बनाया। इस राजा के एक रानी वणिक पुत्री थी उसकी संतान ओसवाल जाति में सम्मिलित की गई, जिनका गौत्र राज कोष्टागर या राज कोठारी के नाम से मशहूर हुआ। इसी आम राजा ने कन्नौज में एक सौ हाथ ऊँचा जिनालय बंधवाकर उसमें आचार्य्य वप्पभट्टसूरि के हाथ से महावीर स्वामी की एक सुवर्ण प्रतिमा प्रतिष्ठित करवाई। इसी प्रकार गोपगिरि (ग्वालियर) में भी इन्होंने २२ हाथ ऊँची महावीर स्वामी की प्रतिमा प्रतिष्ठित की। ये आचार्य्य गौड़ (बंगाल) देश की राजधानी लक्ष्मणावती में भी गये और वहाँ के तत्कालीन राजा धर्म को उपदेश देकर आम राजा तथा उसके बीच की विद्रोहाग्नि को शांत कर दिया। इन्हीं सूरिजी ने मथुरा में शैव वाक्पति नामक एक योगी को जैनी बनाया। इन्हीं के उपदेश से आम राजा ने संवत् ८२६ के करीब कन्नौज, मथुरा, अणहिलपुर पट्टण, सतारक नगर तथा मोढेरा आदि शहरों में जैन मन्दिर बनवाये। इसी राजा आम का पुत्र भोज राजा हुआ, जिसके दूसरे नाम मिहिर और आदिवराह भी थे। यह सम्वत् ९०० से ९५० तक गद्दी पर रहा। इसी परिवार में आगे चलकर सैकड़ों वर्षों पश्चात् सिद्धाचल का अन्तिम उद्धार कर्त्ता

करमाशाह हुआ, जिसका शिलालेख शत्रुंजय तीर्थ पर आदिनाथजी के मन्दिर में पाया जाता है। इसके अन्दर के दो श्लोक हम यहाँ उद्धृत करते हैं।

इतश्च गोपाह्व गिरौ गरिष्टः श्री बप्पभट्टी प्रतिबोधितश्च,
श्री आमराजोऽ जनि तस्य पत्नी काचित्व भूव व्यवहारी पुत्री ॥ ८ ॥
तत्कुक्षिजाताः किल राज कोष्टगाराह्व गोत्रे सुकृतैक पात्रें ।
श्री ओसवंशे विशदे विशाले तस्यान्वयेऽभि पुरुषाः प्रासिद्धः ॥ ६ ॥

इन आचार्य्य श्री का स्वर्गवास सम्वत् ८९५ में हुआ।

श्री नेमिचन्द्रसूरि

श्री नेमिचन्द्रसूरि का समय संवत् ९५० के आसपास होना पाया जाता है। महाजनवंश मुक्तावली में इनको उद्योतनसूरि के गुरू लिखा है। कहा जाता है कि इनके समय में मालव देश में तंवरों का राज्य था। ये आचार्य भी बड़े प्रतिभाशाली एवम् ओसवाल जाति को अभ्युदय प्रदान करनेवालों में से थे। इन्होंने संवत् ९५४ में बरड़िया गौत्र की स्थापना की।

श्री वर्द्धमानसूरि

श्री वर्द्धमानसूरि का समय संवत् १००० से लेकर संवत् १०८८ तक पाया जाता है। इनका एक प्रतिमा लेख कटिग्राम में संवत् १०४५ का लिखा हुआ मिला है। इन्होंने संवत् १०५५ में हरिश्चन्द्रसूरि कृत "उपदेश पद" नामक ग्रंथ की टीका रची। ऐसा मालूम होता है कि 'उपमिति भव प्रंपचा नाम समुच्चय" और "उपदेश माला वृहद्" नामक कृतियाँ भी इन्होंने रची थीं। ये चन्द्रगच्छ के थे। इन्होंने संवत् १०२६ में संचेती और संवत् १०७२ में लोढ़ा और पींपाड़ा गौत्र की स्थापना की।

श्री जिनेश्वरसूरि

श्री वर्द्धमानसूरि के शिष्य श्री जिनेश्वरसूरि भी बड़े प्रतिभाशाली प्रचारक थे। इनका समय संवत् १०६१ से लेकर संवत् ११११ तक का पाया जाता है। इनके समय में गुजरात के अन्तर्गत राजा दुर्लभराज राज्य करता था, उसका पुरोहित शिवशर्मा नामक एक ब्राह्मण था, जिसको आचार्यश्री ने शास्त्रार्थ में पराजित किया था। दुर्लभराज के समय में अणहिलपुर पट्टन में चैत्यवासियों का बड़ा ज़ोर था। श्री जिनेश्वरसूरिजी ने इन्हें भी शास्त्रार्थ में पराजित कर अपनी विजयपताका फह-

राई थी। संवत् १०८० में इन्हें 'खरतर' का विरुद प्राप्त हुआ, तभी से इनका गच्छ खरतरगच्छ के नाम से मशहूर हुआ। इन्होंने श्रीपत्ति डड्ढा, तिलौरा डड्ढा और भणसाली नामक गौत्रों की स्थापना की, ऐसा महाजन वंश मुक्तावली से पाया जाता है।

श्री अभयदेवसूरि

श्री अभयदेवसूरि श्री जिनेश्वरसूरिजी के शिष्य और श्री जिनचन्द्रसूरिजी के गुरु भाई थे। आपका जन्म संवत १०७२ में हुआ था। संवत् १०८८ में अर्थात् जब कि आप केवल १६ वर्ष के थे आपको आचार्य्य पद प्राप्त हुआ था। आपने जैनों के नव आगमों पर संस्कृत टीकाएँ रचीं इससे आप नवांग वृत्तिकार के नाम से प्रसिद्ध हुए। आप बड़े प्रतिभा शाली और विद्वान पुरुष थे। आपने कई उत्तमोत्तम ग्रन्थों की रचना की। आपका स्वर्गवास संवत ११३५ में कपड़वंज में हुआ। आपने खेतसी, पगारिया और मेड़तवाल नामक गौत्रों की स्थापना की।

श्री मलधारी हेमचन्द्रसूरि

श्री मलधारी हेमचन्द्रसूरि मलधारी श्री अभयदेवसूरि के शिष्य थे। इनके सम्बन्ध में इन्हीं की परम्परा के मलधारी राजशेखर संवत् १३८७ में लिखी हुई 'प्राकृत द्व्याश्रयवृति' में लिखते हैं कि इनका मूल नाम गृहस्थावस्था में प्रद्युम्न था। ये राजसचिव थे। श्री अभयदेवसूरि के उपदेश से इन्होंने अपनी चार स्त्रियों को छोड़कर दीक्षा ग्रहण करली। इनकी प्रतिभा के सम्बन्ध में इन्हीं के समकालीन शिष्य श्रीचन्द्रसूरि अपने मुनिसुव्रत चरित्र की प्रशस्ति में लिखते हैं कि इनके व्याख्यानकी मधुरता और उसके आकर्षण से गुणी जनों के हृदय में बड़ी श्रद्धा उत्पन्न होती थी। गुजरात का तत्कालीन राजा जयसिंहदेव या सिद्ध राज स्वयं अपने परिवार के साथ आपके दर्शन करने और आपका भाषण सुनने के लिये उपाश्रय में आता था। इन्हीं आचार्य्य श्री के कहने से उसने अनेकों जैन मंदिरों पर कलश चढ़वाये। धंधुका सांचोर वगैरह तीर्थस्थानों में अन्य धर्मियों के द्वारा जिन शासन पर पहुँचाई जाने वाली पीड़ा को उसने दूर किया। पाटन से गये हुए गिरनार के विशाल संघ के साथ आप भी थे। उस समय मार्ग में सोरठ के राजा राव खंगार ने संघ के ऊपर उपद्रव किया और उसको रोक दिया। तब श्री हेमचन्द्रसूरि ने जाकर उसको प्रतिबोध दिया और संघ पर आयी हुई विपत्ति को दूर किया। आपने सांकला, सुराणा, सियाल, सांड, सालेचा, पूनमियां वगैरह २ गौत्रों की स्थापना की। आप पण्डित श्वेताम्बराचार्य्य भट्टारक के नाम से प्रसिद्ध थे। अंत में ७ दिन का अनशन करके आप स्वर्गवासी हुए।

श्री जिनवल्लभसूरि

श्री जिनवल्लभ सूरि राजा कर्ण के समय में एक गणि की तरह और उस के पश्चात् सिद्धराज के समय में एक ग्रंथकार और आचार्य्य की तरह प्रसिद्ध हुए। आपका स्थान खरतरगच्छ के आचार्यों में बहुत ऊंचा है। शुरू २ में ये चैत्यवास के उपासक जिनेश्वर नाम के मठाधिपति के शिष्य थे। उन्होंने इन को पाटन में श्री अभयदेवसूरि के पास शास्त्राध्ययन करने के लिए भेजा। वहाँ पर इन्होंने चैत्य वास के मत को छोड़कर शास्त्र रीति के अनुसार आचार को ग्रहण किया। इनके उपदेश से जो चैत्य बने वे विधि चैत्य के नाम से मशहूर हुए। इन चैत्यों में कोई शास्त्रविरुद्ध कार्य न हो इस के लिए आपने कई श्लोकों की रचना कर के वहाँ लगाई। वहाँ से आपने मेवाड़ में विहार किया। उस समय मेवाड़ चैत्यवासी आचार्य्यों से भरा हुआ था। चित्तौड़ में आपने अपने उपदेश से कई लोगों को जैन धर्म में दीक्षित किया। यहाँ पर भी आपने दो विधिचैत्यों की प्रतिष्ठा की। इसके पश्चात् आप बागड़ में गये। वहाँ जाकर आपने वहाँ के लोगों को प्रतिबोध दिया। वहाँ से चलकर धारा नगरी के राजा नरवर्म्मा की सभा में आपने बहुत ख्याति प्राप्त की। नागौर में आपने नेमि जिनालय की प्रतिष्ठा की। संवत् ११५६ में आप ने चोपड़ा, गणधर चौपड़ा, कुकड़चौपड़ा, बड़ेर साँड वगैरह गौत्रों की तथा संवत् ११६७ में बाँठिया, ललवानी, बरमेचा, हरकावत, मल्लावत, साह सोलंकी इत्यादि कई गौत्रों की स्थापना की। इसके पूर्व संवत् ११४२ में आप कांकरिया गौत्र की स्थापना कर चुके थे। संवत् ११६४ में आपने सिंघी गौत्र की स्थापना की। आप का स्वर्गवास संवत् ११६७ में हुआ।

श्री जिनदत्तसूरि

श्री जिनदत्तसूरि खरतरगच्छ में सब से ज्यादा नाँमांकित और प्रतिभासम्पन्न आचार्य्य हुए। आप का जन्म संवत् ११३२ में हुआ। आपके पिता श्री का नाम वाछिगमन्त्री तथा माताजी का नाम वाहड़देवी था। आप का गौत्र हुंबड़ था और आप धन्धूक नगर के निवासी थे। आपका मुख्य नाम सोमचन्द्र था। संवत् ११४१ में आप ने जैन धर्म की दीक्षा ली। संवत् ११६९ में चित्तौड़ नगर में आप को श्री देवभद्र आचार्य्य द्वारा आचार्य्य पद प्राप्त हुआ। जिस समय आप आचार्य्य पद पर प्रतिष्ठित किये गये उस समय आज कल का सा जमाना नहीं था। वह चमत्कारवाद का युग था। चारों ओर चमत्कार की पूजा होती थी। आचार्य्य श्री भी इस विद्या में पारङ्गत थे। अतएव कहना न होगा कि आपने अपने अपूर्व चमत्कारों की वजह से तत्कालीन जनता के हृदय पर अपनी गहरी धाक जमाली थी। आपके चमत्कारों से प्रभावित होकर

कई व्यक्ति आप के द्वारा जैन धर्म में दीक्षित किये गये। उस समय आपका प्रताप चारों ओर चमक रहा था। आप उन महानुभावों में से थे जिन का नाम उस समय ही नहीं, आज भी प्रत्येक जैन समाज के व्यक्ति के मुँह पर हमेशा रहा करता है।

आप के द्वारा भिन्न २ समय में भिन्न २ रूप से कई गौत्रों की स्थापना हुई। जिन का थोड़ा सा विवरण महाजन वंशमुक्तावली के अधार से नीचे दिया जा रहा है—

संवत् ११६९ में धाड़ेवा, पटेवा, टांटियाँ और कोठारी
संवत् ११७५ में चोरड़, खीमसरा, और समदरिया
संवत् ११७६ में कठोतिया,
संवत् ११८१ में रतनपुरा, कटारिया, ललवाणी वगैरह ५२
संवत् ११८१ में डागा, माल्ह, भाभू
संवत् ११८५ में सेठि, सेठिया, रंक, वॉक, रांका, बाँका,
संवत् ११८७ में सखेचा, पूँगलिया,
संवत् ११९२ में चोरड़िया, साँवसुखा, गोलेछा, लूनियां वगैरह
संवत् ११९७ में सोनी, पीतलिया, वोहित्थरा, ७० गौत्र
संवत् ११९८ में आयरिया लूनावत्, वापना इत्यादि
संवत् ११९६ में भणसाली, चंडालिया
संवत् १२०१ में आवेड़ा, खटोल
संवत् १२०२ में गड़वाणी, भड़गतिया, पोकरण वगैरह

लिखने का मतलब यह है कि आप के द्वारा ओसवाल जाति एवम् जैनधर्म का बहुत उत्थान हुआ। यही कारण है कि समाज में आप दादाजी के नाम से पुकारे जाने लगे। वर्त्तमान में भारतवर्ष भर में जहाँ २ जैन वस्ती हैं वहाँ २ दादा बाड़ियाँ है जो प्रायः आप के ही स्मारक में बनी हुई है और वहाँ आप के चरण स्थापित हैं। आप का स्वर्गवास संवत् १२११ में हुआ।

श्री जिनचन्द्रसूरि

श्री जिनचंद्रसूरि भी जैनधर्म के अन्दर बड़े प्रभावशाली आचार्य्य हुए हैं। ओसवाल जाति का विस्तार करने में आपने बहुत बड़ा भाग लिया है। आप खरतरगच्छ के आचार्य्य थे। आपका जन्म संवत् ११९७ के भाद्रपद शुक्ला ८ को हुआ। आप के पिता का नाम साह रासलक और माता का नाम देल्हण-

देवी था। संवत् १२०३ की फाल्गुन वदी ९ को आपने दीक्षा ग्रहण की। आपके गुरु दादाजी श्रीजिनदत्त-सूरिजी थे। संवत् १२११ की बैशाख सुदी ६ को आप आचार्य्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। आपने संवत् १२१४ में अघारिया, १२१५ में छाजेड़, संवत् १२१६ में मिन्नी खजाँची, भूंगड़ी, श्रीश्रीमाल, १२१७ में सालेचा, दूगड़, सुघड़, शेखाणी, कोठारी, आलावत, पालावत इत्यादि कई गौत्रों की स्थापना की। आप का स्वर्गवास संवत् १२२३ की भादवा बदी १४ को हो गया।

श्री जिनकुशलसूरि

दादाजी जिनदत्तसूरिजी के पश्चात् श्री जिनकुशलसूरि जैन समाज के अन्दर बड़े प्रभाविक एवम् प्रतिभा सम्पन्न आचार्य्य हुए। आपका जन्म संवत् १३३० में हुआ। आप छाजेड़ गौत्रीय मंत्री जिल्हा-गर के पुत्र थे। आपकी माताका नाम जयन्तश्री था। संवत् १३४७ में आपने दीक्षा ग्रहण की। इनके पश्चात् संवत् १३७७ में आपको आचार्य्य पद प्राप्त हुआ। आपने बावेल, संघवी, जड़िया वगैरह २१ शाखाओं की तथा डागा गोत्र की स्थापना की। आपने पाटन में साह तेजपाल से नन्दिमहोत्सव करवाया, जिसमें २४०० साधु साध्वी आपके साथ थे। संवत् १३८० में साह तेजपाल ने शत्रुंजय तीर्थ का संघ निकाला उसमें भी आप सम्मिलित हुए। आपने भीमपल्ली नामक नगर में भुवआलकृत एक वीर चैत्य की, जेसलमेर नगर में धवलकृत चिन्तामणि पार्श्वनाथ की तथा जालोर नगर में श्री पार्श्वनाथ के मन्दिर की प्रतिष्ठा की। आपके संघ में १२०० साधु तथा १०५ साध्वियाँ थीं। आप भी अपने गुरु की तरह जैन समाज में दादाजी के नाम से प्रसिद्ध हैं। संवत् १३८९ को फाल्गुन वदी अमावस्या को देराउर नगर में आठ दिनके अनशन के साथ आप स्वर्गवासी हुए।

श्री जिनभद्रसूरि

श्री जिनभद्रसूरि खरतर गच्छ के अन्दर एक प्रभाविक, प्रतिष्ठावान, और प्रतिभाशाली आचार्य्य हुए। आपने जैन शासन को बहुत उत्तेजन प्रदान किया। आपके उपदेश से जैन श्रावकों ने गिर-नार, चित्रकूट (चित्तौड़) मंडोवर आदि अनेक स्थानों में बड़े २ जिन मन्दिर बनवाये। अणहिलपुर पट्टन आदि स्थानों में आपने विशाल पुस्तक भंडारों की स्थापना की। माँडवगढ़, पालनपुर, तलपाटक आदि नगरों में अनेक जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा की। जैसलमेर के तत्कालीन राजा रावत श्री बैरसिंह और त्र्यंबक-दास सरीखे प्रतिष्ठित व्यक्ति आपके चरणों में गिरते थे। आपके उपदेश से साह शिवा आदि चार भाइयों ने संवत् १४९४ में जैसलमेर में एक भव्य मन्दिर का निर्माण करवाया। संवत् १४९७ में आचार्य्य सूरिजी ने

इसमें करीब २०० जिन विम्बों की प्रतिष्ठा की। जिसकी प्रशस्ति आज भी उस मन्दिर में लगी हुई है। इन सूरिजी ने 'जिन सत्तरी प्रकरण; और अपवर्गनाममाला नामक ग्रन्थों की रचना की। इन ग्रन्थों में आपने अपने गुरु का नाम श्रीजिनवल्लभ, श्री जिनदत्त और श्रीजिनप्रिय वतलाया है।

श्री जिनचन्द्रसूरि

श्री जिनचन्द्रसूरि श्री जिनमाणिक्य सूरि के शिष्य थे। आपका जन्म संवत् १५९५ में हुआ। संवत् १६०४ में आपने दीक्षा ग्रहण की। संवत् १६१२ में आप सूरिपद पर प्रतिष्ठित हुए। आपको वादशाह अकवर ने युग प्रधान का पद प्रदान किया था।

अकवर का दरवार भिन्न २ प्रकार के दर्शन शास्त्रियों, विद्वानों और राजनीति-दक्ष पुरुषों से भरा रहता था। उसकी विद्या रसिकता और धार्मिक स्वाधीनता अतुलनीय थी। वीकानेर के सुप्रसिद्ध बच्छावत कर्मचन्द भी उसके दरवार में आया जाया करते थे। एक दिन अकवर वादशाह ने पूछा कि इस समय जैनियों में सब से प्रभावशाली आचार्य्य कौन है, उत्तर में किसी ने आचार्य्य जिनचन्द्रसूरि का नाम उसको वतलाया और यह भी वतलाया कि कर्मचन्द वच्छावत उनके शिष्य हैं, तब वादशाह ने कर्मचन्दजी को हुक्म दिया कि वे आचार्य्य श्री जिनचन्द्रसूरि को लाहौर में लावें। वादशाह की आज्ञा से कर्मचन्दजी आचार्य्य श्री को लाहौर में लाये। बादशाह अकवर ने आपका वहुत सम्मान एवम् स्वागत किया। वादशाह के आग्रह से आचार्य्य श्री ने लाहौर ही में चातुर्मास किया। आचार्य्य श्री के उपदेश का अकवर के ऊपर बहुत प्रभाव पड़ा और आचार्य्य श्री के कहने से उसने द्वारका और शत्रुञ्जय के सव जैन मन्दिरों की व्यवस्था कर्मचन्दजी वच्छावत् के सिपुर्द करदी और उसका लिखित फ़रमान अपनी मुद्रा से अङ्कित कर आजमखाँ को दिया और कहा कि सव जैन तीर्थ कर्मचन्द को वक्ष दिये हैं, उनकी रक्षा करो। जब अकवर काश्मीर जाने लगा तो उसने पहले मन्त्री के द्वारा श्री जिनचन्द्रसूरिजी को वुलाकर उनसे धर्म-लाभ लिया। इसके उपलक्ष्य में असाढ़ सुदी ९ से लेकर सात दिन पर्य्यंत सारे साम्राज्य में जीवहिंसा न की जाय इस आशय का फरमान निकाल कर अपने ग्यारह सूबों में भेज दिया। वादशाह के इस हुक्म को सुनकर उसको खुश करने के लिये उसके अधीनस्थ राजाओं ने भी अपने २ राज्य की सीमा में कहीं पंद्रह दिन, कहीं वीस दिन और कहीं एक मास तक जीव हिंसा न करने का फरमान निकाला। इसी सिलसिलेमें वादशाह अकवरने इन्हें युग प्रधान का पद प्रदान किया और उनके शिष्य मानसिंह को आचार्य्य पद प्रदान करके उनका नाम जिनसिंहसूरि रक्खा। अकवर के पश्चात् संवत् १६६९ में जहाँगीर वादशाह ने हुक्म निकाला कि सब दर्शनों के साधुओं को देश से वाहर निकाल दिया जाय। इससे जैन मुनि मण्डल में वहुत भय हो गया। तव श्री जिनचन्द्रसूरि ने पाटन

से आगरा आकर बादशाह को समझाया और उस हुक्म को रद्द करवाया। इन्हीं जिनचन्द्रसूरि ने पाँचा गौत्र तथा संवत् १६२७ में १८ और गौत्र स्थापित किये। इनका स्वर्गवास संवत् १६७० में हो गया।

श्री हीरविजयसूरि

श्री हीरविजयसूरि—अब हम एक ऐसे तेजस्वी और प्रभापूर्ण आचार्य्य का परिचय पाठकों के सम्मुख रखते हैं जिन्होंने अपनी दिव्य प्रतिभा से न केवल जैन समाज पर प्रत्युत अकबर के समान महान् सम्राट और प्रतापी राजवंशीय सभी पुरुषों पर अपना अखण्ड प्रभाव स्थापित किया था। इन आचार्य्य श्री की प्रतिभा सूर्य-किरणों की तरह तेजपूर्ण और चन्द्रकिरणों की तरह शीतल और जन-समाज को मुग्ध कर देने वाली थी। बादशाह अकबर के ऊपर इन आचार्य्य श्री का कितना प्रभाव था यह नीचे लिखी हुई प्रशस्ति, जो कि शत्रुञ्जय तीर्थ के आदिनाथ मन्दिर में संवत् १६५० की लगी हुई है, से मालूम हो जायगा। पाठकों की जानकारी के लिये हम उस प्रशस्ति को नीचे लिख रहे हैं।

दामेवाखिल भूपमूर्द्धसु निजमाज्ञां सदा धारयन्
श्रीमान् शाहि अकब्बरो नरवरो [देशेष्व] शेषेष्वपि ।
षण्मासाभयदानपुष्ट पटहोद्घोषा नघवंसितः
कामं कारयति स्म हृष्टहृदयो यद्वाक् कला रंजितः ॥ १७ ॥
यदुपदेशश्रवणेन मुदं दधन् निखिल मण्डलवासि जने निजे ।
मृतधनं च करं च सुजीजिया मिधमकब्बर भूपति रत्य जत् ॥ १८ ॥
यद् वाचा कतकामया विमालितस्वांतांवुपूरः कृपा—
पूर्णं शाहिर निन्ध नीतिवनिता क्रोड़ी कृतात्मात्यजत् ।
शुल्कं त्यक्तुमशक्यमन्यधरणीराजांजन प्रीतये
तद्वान् नाडिज पुंज पुरुष पशूंश्चामूमुचद् भूरिशः ॥ १६ ॥
यद् वाचां निचयैर्मुधाकृत सुधा स्वादैरमंदैः कृता—
ल्हादः श्रीमदकब्बरः क्षितिपतिः संतुष्टि पुष्टाशयः ।
त्यक्त्वा तत्करमर्थ सार्थमतुलं येषां मनः प्रीतये
जैनेभ्यः प्रददौ च तीर्थतिलकं शत्रुंजयोर्वीधरम् ॥ २० ॥
यद्वाग्भिर्मुदितश्च रार करुणा स्फूर्जन्मनाः पौस्तकं
माण्डागारमपारवाङ्मयमयं वेश्मेव वाग्दैवतम् ।

यत्संवेगमेरण भावितमतिः शाहिः पुनः प्रत्यहं
पूतात्मा बहु मन्यते भगवतां सद्दर्शनो दर्शनम् ॥ २१ ॥

इन आचार्य श्री का जन्म पालनपुर नगर में कुरां नामक एक ओसवाल सज्जन के यहाँ सं० १५८३ में हुआ था। इनकी माता का नाम श्री नाथीबाई था। संवत् १५९६ में तपेगच्छ के श्री विजयदानसूरिजी के उपदेश से आपने दीक्षा ग्रहण की। मुनि हीर हर्ष ने पहले अपने गुरु के पास तमाम साहित्य और शास्त्र का अध्ययन किया। फिर इनके गुरु ने धर्म सागर मुनि के साथ इन्हें दक्षिण के देवगिरी नामक स्थान पर अध्ययन करने के लिए नैयायिक ब्राह्मण के पास भेजा। यहाँ पर उन्होंने प्रमाणशास्त्र, तर्क परिभाषा, मित भाषिणि, शशधर, मणिकंठव, वरददाजि, प्रस्तपद भाष्य, वर्द्धमानेन्दु, किरणावली इत्यादि का अध्ययन करके वापस मरूदेश को अपने गुरुदेव के पास गये। वहाँ नडलाई (नारदपुर) में संवत् १६०७ में गुरुदेव ने इन्हें 'पण्डित' का और फिर संवत् १६०८ में 'वाचक उपाध्याय' का पद दिया। संवत् १६१० में इन्हें सिरोही में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया और हीरविजयसूरि नाम रखा। इनका उत्सव दूधा राजा के जैन मंत्री—धरणाक के वंशज रासतपुर के प्रसिद्ध प्रसाद का निर्माण करवानेवाले-चांगा नामक सिंघवी ने किया। इस उपलक्ष्य में वहाँ के राजा ने अपने राज्य में होनेवाली हिंसा को बंद करवाया। संवत् १६२१ में इनके गुरू विजयदानसूरि का स्वर्गवास हो गया। उसी समय से ये स्वयं तपेगच्छ के नायक हो गये। इसी समय बादशाह अकबर ने फतहपुर सीकरी में मोक्ष साधक धर्म का विशेष परिचय प्राप्त करने की इच्छा से राज-सभा में बड़े २ विद्वानों की एक शास्त्र गोष्ठी कायम की थी। इस गोष्ठी में उन्होंने आचार्य हीरविजयसूरि को भी आमंत्रित किया था।

उस समय हीरविजयसूरि का चातुर्मास गंधार बंदर में था। अकबर ने गुजरात के सूबे साहिबखाँ को फरमान के द्वारा सूचित किया कि हीरविजयसूरि को बहुत आदर और सम्मान के साथ यहाँ हमारे पास दरबार में भेजो! अतएव कहना न होगा कि हीर विजय सूरि बड़े सम्मान और आदर के साथ स्थान २ पर ठहरते हुए फतेपुर सीकरी पधारे। बादशाह के मंत्री अबुलफजल ने उनका सत्कार किया। बादशाह ने स्वयं वहाँ आकर हाथी घोड़े इत्यादि की भेंट आचार्य्यश्री की सेवा में रखी। मगर निस्पृह जैनाचार्य ने उसको स्वीकार करने से इनकार कर दिया। तब बादशाह ने कहा कि आपको कुछ न कुछ तो अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा। तब आचार्य ने कैदियों को कैद में से और पिंजर बन्द पक्षियों को पींजरे से छोड़ देने और उन्हें आजाद

* सम्राट ने विविध धर्मों का रहस्य समझ कर संवत् १६३५ में दीने इलाही नामक एक नवीन धर्म को प्रचलित किया था। यह धर्म सुधरे हुए हिन्दू धर्म का ही एक रूप था। सम्राट अकबर कहा करते थे कि जब तक भारतवर्ष में अनेक जातियाँ और अनेक धर्म रहेंगे तब तक मेरा मन शांत न होगा।

कर देने के लिए कहा । बादशाह ने फिर उन्हें अपने लिये कुछ मांगने को कहा । इस पर आचार्य ने कहा कि हमारे पर्युषण पर्व में आठ दिन तक जीव हिंसा न होने पावे । इस पर बादशाह ने अपनी तरफ से और चार दिन मिलाकर बारह दिन के लिये समस्त साम्राज्य में हिंसा बंद करवाई और अपनी सही और मोहर के ६ फरमान अपने साम्राज्य के सब स्थानों पर भेज दिये । उसके पश्चात् डामर तालाब नामक जलाशय जो उन्होंने स्वयं बड़े शौक से बनाया था आचार्य श्री के अर्पण कर दिया और वहाँ मछलियाँ मारने की मनाई कर दी । स्वयं सम्राट ने भी कभी शिकार न करने की प्रतिज्ञा ली ।*

संवत् १६४० नवरोज के अवसर पर सम्राट ने आचार्य्य श्री को जगद्गुरू का विरुद प्रदान किया । इस अवसर पर भी सम्राट ने सारे कैदियों को छुड़वा दिये । डामर तलाव पर जाकर वहाँ के पींजरे में बंद पशुपक्षियों को मुक्त किया ।

उसके पश्चात् बादशाह के मान्य जौहरी दुर्जनमल ने सूरिजी के पास से जिनबिम्बों की प्रतिष्ठा करवाई । इसी प्रकार और भी कई स्थानों पर आपने मन्दिरों और मुर्त्तियों की प्रतिष्ठा करवाई । कुछ समय पश्चात् वहाँ से बिहार कर आपने संवत् १६४५ में पाटन में चौमासा किया । इस समय इनके शिष्य शांतिचंद्र उपाध्याय ने, जो कि सूरिजी की आज्ञा से बादशाह के पास रह गये थे,सूरिजी के दर्शनार्थ जाने की इच्छा प्रकट की । तब बादशाह ने अपनी तरफ से सूरिजी को भेंट करने के लिए उनके पास निम्नलिखित फरमान भेजे ।

जज़िया नामक कर को गुजरात में दूर करने का फर्मान्, पर्युषण के बारह दिनों के अलावा सब रविवार सूफी लोगों के सब दिन,ईद,के दिन, संक्रान्ति की सब तिथियाँ, अपना जन्म जिस मास में हुआ था वह सारा मास, मिहिर के दिन, नवरोज के दिन ,अपने तीनों पुत्रों के जन्म दिन, मोहर्रम महिने का दिन, इस प्रकार सब वर्ष में कुछ ६ मास और ६ दिन सारे साम्राज्य में कोई भी किसी जीव की हिंसा न करें इस प्रकार का फरमान बादशाह ने निकाल कर भेजा !†

---

* आइने अकबरी पृष्ट ३३० और ४०० में अकबर बादशाह कहते हैं कि राज्य के नियम से यद्यपि शिकार खेलना बुरा नहीं है लेकिन जीव रचा का ख्याल रखना उससे भी ज्यादा आवश्यक है ।

† कट्टर मुसलमान लेखक बदाउनी लिखता है:—

" In these days (991—1583 A. D.) new orders were given. The killing of animals on cartain days was forbidden, as on sundays because this day is sacred to the Sun; during the first 18 days of the month forwarding the whole month of abein (the month in which His Majesty was born) and several other days so please the Hindoos. Thus order was extended over the whole realm and capital punishment was inflicted on every on who acted against the command." —Badaoni Page. 321,

संवत् १६४६ में खम्भात् में आकर सोनी तेजपाल के बनाए हुए भव्य मन्दिर की प्रतिष्ठा सूरिजी ने की। इसके बाद संवत् १६४८ में सम्राट अकबर ने शत्रुंजय पर लगे हुए कर को बंद करने का और उसके दान का फरमान् भेजा और आचार्य्य विजयसेन सूरि (हीर विजय सूरि के शिष्य) के दर्शनों की इच्छा प्रकट की तब श्री विजयसेन सूरि लाहौर की ओर गये और जेठ सुदी १२ को लाहौर शहर में प्रवेश किया। यहाँ पर बादशाह ने इन्हें खुशफहम (सुमति) का विरुद प्रदान किया। इसके पश्चात् सूरिजी के उपदेश से सम्राट ने गाय, बैल, भैंस, और पाड़े की हिंसा न करना, मृतक व्यक्ति (लावारिसी) के द्रव्य को सरकार में न लेना इत्यादि ६ फरमान और जारी किये। विजयसेनसूरि ने अकबर की राजसभा में ३६६ ब्राह्मणवादियों को शास्त्रार्थ में पराजित कियेजिससे खुश होकर सम्राट ने इन्हें 'सवाई' विजयसेन सूरि का विरुद दिया।

इस प्रकार राजा और प्रजा, हिन्दू और मुसलमान सबकोजैन शासन की पवित्र लाईन पर लगानेवाले और जैन शासन का विश्वव्यापी प्रचार करने वाले इन आचार्य्य श्री का स्वर्गवास संवत् १६५२ में हो गया। कहना न होगा कि सम्राट अकबर परजो जैनधर्म की छाप पड़ी थी, वह आचार्य्य श्री ही की कृपा का फल था।

अन्य आचार्य्य

इसी प्रकार संवत् १४३२ में श्रीजिनराजसूरि और संवत् १४७८ में श्रीभद्रसूरि हुए जिन्होंने भण्डारी गोत्र की स्थापना की। संवत् १५७५ में श्रीजिनभद्रसूरि ने श्रावक, श्रामंक और श्रंवद गौत्र की और संवत् १५५२ में श्री जिनहँससूरि ने गेहलड़ा गौत्र की स्थापना की। इसी प्रकार श्री (रविप्रभ-सूरि ने लोढा, मानदेवसूरि ने नाहर, और जयप्रभुसूरि ने छजलानी और घोड़ावत गौत्रों की स्थापना की।

उपरोक्त सारे कथन से इस बात का पता सहज ही लग जाता है कि संवत् १००० से लेकर संवत् १६०० के पहले तक ओसवाल जाति का सितारा बहुत तेजी पर था। इसके अन्दर जितने भी आचार्य्य हुए उन्हों ने इस बात की हरचंद कोशिश की कि अन्य धर्मियों को जैनधर्म की दीक्षा देकर ओसवाल जाति के कलेवर को स्दृढ़ किया जाय। कहना न होगा कि इन आचार्य्यों की दिव्य प्रतिभा और अलौकिक तेज के आगे बड़े २ राजा, महाराजा और सम्राट् तक नत-मस्तक हुए थे। इसका परिणाम यह हुआ कि ओसवाल जाति के अन्दर जो २ व्यक्ति सम्मिलित हुए वे प्रायः सभी उच्च घरानों के प्रतिभाशाली और हर तरह की जोखिम को उठाने वाले साहसी पुरुप थे। यही कारण है कि एक ओर तो आचार्य्य लोग इस जाति के कलेवर को पुष्ट कर ही रहे थे कि दूसरी ओर इसके अन्दर प्रविष्ट होने वाले महापुरषों ने अपनी प्रतिभा के बल से क्या राजनैतिक क्या धार्मिक क्या व्यापारिक और क्या साहित्यिक इत्यादि सभी प्रकार की लाईनों में घुसकर अपने तथा अपनी जाति के नाम को अमर कर दिया।

ओसवाल जाति का
राजनैतिक और सैनिक महत्व

Oswals in the Political and military field.

ओसवाल जाति की उत्पत्ति के विषय में हम गत पृष्ठों में काफी प्रकाश डाल चुके हैं। अब हम इस जाति के राजनैतिक और सैनिक महत्त्व पर कुछ ऐतिहासिक विवेचन करना चाहते हैं। आज कल कुछ लोगों की ओर से इस जाति की राजनैतिक और सैनिक योग्यता पर संदेह प्रकट किया जा रहा है। उन लोगों का यह कहना है कि ओसवाल एक वणिक जाति है; उसका राजनीति एवम् वीरता से कोई सम्बन्ध नहीं। पर वीर राजस्थान का इतिहास टंके की चोट उनके इस वक्तव्य को भ्रमात्मक सिद्ध कर रहा है।

प्रथम तो ओसवाल जाति की उत्पत्ति प्रायः क्षत्रिय जाति से ही हुई है। इससे उनके संस्कारों ही में वीरता के तत्त्व न्यूनाधिक रूप से भरे हुए हैं। दूसरी बात यह है कि ओसवालों ने राजस्थान के राज्यों में बड़े २ उत्तरदायित्व के पदों पर काम किया है, इससे राजनीतिज्ञों में जिन गुणों व विशेषताओं का होना आवश्यक होता है, वे भी इस जाति में पाये जाते हैं। हाँ, समय के प्रभाव से उनमें इन गुणों का जैसा विकास होना चाहिये वैसा वर्तमान में नहीं हो रहा है। ओसवाल ही क्यों, यही बात राजपूत और अन्य जातियों के लिए भी लागू हो सकती है। पर इससे यह मान लेना कि ओसवाल लोगों में राजनैतिक और सैनिक योग्यता का अभाव है, वास्तविकता पर असत्य का पड़दा डालना है। हमें दुःख है कि भारत सरकार ने इस जाति के लोगों के लिए सेना का द्वार बन्द कर रक्खा है। वह उनकी गिनती सैनिक जाति में नहीं करती। जिस जाति ने महान् से महान् वीर उत्पन्न किये; जिस जाति के सुयोग्य वीरों ने बड़े २ युद्धों में योग्यता पूर्वक सेना का संचालन किया; जिस जाति ने मध्ययुग की भयंकर अशांति और गड़बड़ी के नाजुक समय में राजस्थान के कई प्रसिद्ध राज्यों की स्थिति को कायम रक्खा; जिस जाति के मुत्सद्दियों एवम् वीरों की राजस्थान के बड़े २ ऐतिहासिक नरपतियों ने—राज्यों के अमर इतिहासकारों ने—मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है और जिन्हें राजा महाराजाओं के दिये हुए खास रुक्कों में तथा प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थों में राजस्थान के रक्षक कहा गया है, हम नहीं समझते कि उनके वंशजों को सैनिक लोगों की श्रेणी से क्यों बाहर निकाला गया। यह सरासर गलती है और हम भारत सरकार के अधिकारियों का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहते हैं। जब ब्राह्मणों तक को सेना में भरती किया जाता है तब ओसवाल जाति ही इससे क्यों वञ्चित रक्खी जाती है, इसका हमें बड़ा आश्चर्य्य है।

जिन सज्जनों ने इतिहास के मौलिक साधनों का अवलोकन किया है तथा राजस्थान के राज्यों के

पुराने ऐतिहासिक कागज पत्रों को देखा है, उनसे यह बात छिपी हुई नहीं है कि राजस्थान के कई राज्यों की स्थापना में ओसवाल जाति के वीरों एवं मुत्सद्दियों ने बहुत बड़ा हाथ बटाया है। इतना ही नहीं, जब-जब ये राज्य विपत्ति के घोर बादलों से तथा निराशा के विषाक्त वायुमण्डल से आवृत्त हुए हैं, उस समय ओसवाल जाति के वीरों एवम् मुत्सद्दियों ने अपने प्राणों की आहुतियाँ देकर इनकी रक्षा की है। मध्य युग के कई नरेशों ने अपने खास रुक्कों में उनकी अपूर्व सेवाओं को मुक्तकंठ से स्वीकार किया है, और उन्होंने इन्हें राज्य का रक्षक मानने में तनिक भी संकोच नहीं किया है। अब हम नीचे की पंक्तियों में आधुनिक ऐतिहासिक अन्वेषणाओं के प्रकाश में यह दिखलाना चाहते हैं कि ओसवाल जाति के मुत्सद्दियों एवं वीरों ने जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, इन्दौर, किशनगढ़ आदि राज्यों के राजनैतिक और सैनिक क्षेत्रों में कैसे २ कमाल कर दिखलाये हैं।

जोधपुर

ओसवाल जाति का सब से प्रधान केन्द्र जोधपुर रहा है। इस जाति के लोगों ने जोधपुर राज्य के लिये जो महान कार्य्य किये हैं वे इतिहासवेत्ताओं से छिपे हुए नहीं हैं। जोधपुर नगर के बसाने वाले राव जोधाजी से हमारे पाठक भली प्रकार परिचित हैं। ईसवी सन् की पन्द्रहवीं सदी में जब राव जोधाजी का उदय हो रहा था, उस समय राव समरोजी और उनके पुत्र राव नरोजी भण्डारी ने उनको बड़ा सहयोग दिया था। ये दोनों वीर बड़े बहादुर और रण कुशल थे। मूलतः ये महाप्रतापी चौहान वंश के थे। जैनाचार्य्य ने इनके पितामह या प्रपितामह को जैनधर्म में दीक्षित किया था। जैनधर्म में दीक्षित होने के कारण ये लोग ओसवाल भण्डारी के नाम से मशहूर हुए। इन प्रसिद्ध वीरों के पूर्वजों के हाथ में बहुत दिनों तक नाडोल नामक सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान का राज्य रहा। समरोजी भण्डारी नाडोल के चौहान-वंश के राजाओं के वंशज थे। जब राव जोधाजी के पिता राव रिणमलजी चित्तौड़ में मारे गये और राव जोधाजी अपने ७०० सिपाहियों को लेकर मेवाड़ से चल पड़े उस समय उदयपुर के महाराणाजी ने जोधाजी का पीछा करने के लिये एक बड़ी सेना के साथ चूण्डाजी नामक एक सिसोदिया सरदार को भेजा। रास्ते में जोधाजी की सेना पर कई आक्रमण किये गये, इससे उनके कई वीर सैनिक काम आये। मारवाड़ पहुँचते २ जोधाजी के पास केवल सात सिपाही शेष रह गये। वे केवल इन्हीं सात सवारों को लेकर जीलवाड़े नामक स्थान पर पहुँचे। उस वक्त राव समराजी भण्डारी उस स्थान पर थे। उन्हें जोधाजी का पक्ष न्याययुक्त जंचा। इसलिए उन्होंने राव जोधाजी का साथ देना अपना कर्त्तव्य समझा। उन्होंने राव जोधाजी से अरज की कि आप मारवाड़ की ओर पधारिये और मैं राणाजी की फौज को रोक रक्खूँगा। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने पुत्र नराजी भण्डारी को ५० सवार देकर राव जोधाजी के साथ रवाना कर दिया। कहने की आवश्यकता नहीं कि राव जोधाजी और

भण्डारी नरा तो मारवाड़ को रवाना हो गये और पीछे से जब महाराणाजी की फौज आई तब राव समरोजी भण्डारी ने अपने तीन सौ वीर सैनिकों के साथ उसका मुकाबला किया। ये लोग बड़ी बहादुरी के साथ लड़े, लेकिन महाराणाजी की फौज बहुत बड़ी थी। इसलिये विजय की माला इनके गले में न पड़ सकी। राव समरा भण्डारी बड़ी बहादुरी के साथ युद्ध करते हुए अपने तीन सौ सैनिकों के साथ वीर गति को प्राप्त हुए। इस सम्बन्ध में मारवाड़ में एक छप्पय प्रसिद्ध है जिसे हम यहाँ पर उद्धृत करते हैं।

राव जोधो मेवाड़ लूटं बलियो खागांबल।
चढ़े राणा दिवाण पीठ लागो कल हड़कल॥
बेलण रो तिणवार रोक उभो दल सारो।
मरण काज भुज लाल राज कुशले पधारो।
राव जोधारे कारणे समरे मांजी कीध चढ़।
चवाण वेट दिवाण सुं नाडले नाडूलगढ़॥

इस तरह राव समरा भण्डारी के मारे जाने के बाद महाराणाजी की फौजें आगे बढ़ीं। उधर राव जोधाजी ज्यों-त्यों कर मण्डोर पहुँचे और वहाँ रहने का विचार करने लगे। परन्तु मेवाड़ी सेना के पीछे लगे रहने के कारण उन्हें अपना यह विचार स्थगित कर देना पड़ा। राणाजी की फौजें पीछा करती हुई मण्डोर पहुँच गई और वहाँ उसने अपना कब्जा कर लिया। राव जोधाजी थली परगने के किसी एक गाँव में जाकर रहने लगे। इस समय उन्हें बड़ी विपत्ति में अपने दिन काटने पड़े। राव जोधाजी की इस महा-विपत्ति के समय राव नराजी भण्डारी बराबर उनके साथ रहे। सेना संगठन के कार्य में राव नराजी ने बड़े उत्साह से कार्य किया। राव जोधाजी ने नरा भण्डारी तथा अपने अन्य वीर साथियों की सहायता से सेना इकट्ठी कर तथा उसका संगठन कर मण्डौर पर ई० सन् १४५३ में आक्रमण कर दिया। महाराणाजी की सेना और राव जोधाजी की सेना में तुमूल युद्ध हुआ। इस युद्ध में विजय की माला राव जोधाजी और उनके वीर सैनिकों के गले में पड़ी। मण्डोर पर जोधाजी की विजय ध्वजा उड़ने लगी और महाराणाजी की फौजें वापस लौट गई। इस विजय में नराजी भण्डारी का बहुत बड़ा हाथ था। वे राव जोधाजी के खास सेनापतियों में थे। इसके बाद जब राव जोधाजी ने मेवाड़ पर चढ़ाई की, उस समय भी राव नराजी भण्डारी उनके साथ थे और वे बड़ी बहादुरी के साथ लड़े थे। मारवाड़ की ख्यातों में और भण्डारियों के इतिहास ग्रन्थों में नराजी भण्डारी की वीरता की प्रशंसा की गई है। राव जोधाजी ने भी इनकी सेवाओं की क़द्र की और इन्हें दीवानगी तथा प्रधानगी के उच्च पदों के साथ (६०००) की जागीर भी प्रदान की। *

*भण्डारियों की ख्यात में लिखा है कि रोहट, बीसलपुर, मजल, पलासणी, धूधाड़, जाजीवाला और बनाड़ ये सात गाँव जागीर में दिये गये थे।

उपरोक्त घटना ऐतिहासिक है और इससे यह पता लगता है कि आधुनिक जोधपुर के संस्थापक महावीर राव जोधाजी पर जब चारों ओर से विपत्ति के बादल मँडरा रहे थे और जब मारवाड़ राज्य का अस्तित्व खतरे में था उस वक्त जिन २ वीरों ने अपने प्राणों की परवाह न कर अत्यन्त प्रामाणिकता के साथ राव जोधाजी का साथ दिया था उनमें राव नराजी का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

इसके आगे चल कर भी भण्डारियों का सितारा खूब चमका। संवत् १५४४ में भण्डारी नाथाजी (नारमलोत) को प्रधानगी का प्रतिष्ठित पद प्राप्त हुआ। इसके कुछ ही समय बाद भण्डारी उदोजी (नाथावत) को प्रधानगी और दीवानगी प्राप्त हुई।

इनके अतिरिक्त भण्डारी पन्नोजी, भण्डारी रायचन्दजी, भण्डारी ईसरदासजी, भण्डारी भानाजी, सिंघवी शाहमलजी आदि सज्जनों ने भी जोधपुर राज्य के बड़े २ पदों पर काम किया और ये वहाँ के राजनैतिक गगन मण्डल में खूब चमके। हमारे कहने का अर्थ यह है कि राव जोधाजी को अपने राज्य-विस्तार के कार्य में ओसवाल वीरों एवं मुत्सुद्दियों से बड़ी सहायता मिली। इसके बाद राव गङ्गाजी तथा राव मालदेवजी के समय में भी ओसवालों एवं कुछ पंचोलियों ने दीवानगी और प्रधानगी के काम किये। महाराजा उदयसिंहजी एवं महाराजा सूरसिंहजी के राज्यकाल में भी ओसवाल मुत्सुद्दी बड़े २ जिम्मेदारी के पदों पर थे।

इसके आगे चलकर महाराजा गजसिंहजी के समय में ओसवाल जाति के मुत्सुद्दी बड़े २ पदों पर रहे। संवत् १६७७ में महाराजा गजसिंहजी को मुग़ल सम्राट् की ओर से जालौर का परगना मिला। उस समय उन्होंने सुप्रख्यात इतिहास लेखक मुणोत नेणसीजी के पिता मुणोत जयमलजी को वहाँ का शासक (Governor) बना कर भेजा। उस समय जालौर परगने की वार्षिक आय २८७७५८ थी। इन्होंने अपना कार्य बड़ी ही योग्यता के साथ किया। इस पर महाराजा ने प्रसन्न होकर इन्हें हवेली, बाग और बहुत सी ज़मीन पुरस्कार रूप में दी। संवत् १६७८ के भादवा मास में युवराज खुर्रम ने सांचौर का परगना महाराजा गजसिंहजी को दिया। वह भी जालौर में शामिल कर लिया गया और दोनों परगनों के शासक (Governor) जयमलजी नियुक्त हुए। उन्होंने वहाँ बड़ी कुशलता से शासन किया।

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं, कई ओसवाल मुत्सुद्दियों में शासन—कुशलता एवं वीरता का बड़ा ही मधुर सम्मेलन हुआ था। मुणोत जयमलजी भी इस श्रेणी के पुरुष थे। आप न केवल सफल शासक ही थे वरन् बड़े वीर तथा परोपकारी महानुभाव भी थे। इसके एक दो उदाहरण हम नीचे देते हैं।

जब महाराजा गजसिंहजी का सांचौर परगने पर अधिकार हुआ तब ५००० सिन्धियों ने सांचोर पर चढ़ाई कर दी। उस समय जयमलजी वहाँ के शासक थे। उन्होंने बड़ी बहादुरी से उनका

मुकाबला किया। बड़ी घमासान लड़ाई हुई। सिंधी हारकर भाग छूटे और विजय-श्री जयमलजी मुणोत के हाथ लगी। इस प्रकार उन्होंने और भी कुछ लड़ाइयाँ लड़ीं और उनमें उन्हें सफलता प्राप्त हुई। आपके इन्हीं वीरोचित कार्य्यों एवं राज्य-प्रबन्ध से खुश होकर तत्कालीन जोधपुर नरेश ने आपको एक खास रुक्का इनायत किया था जो अब भी आपके वंशज हमारे मित्र श्रीयुत वृद्धराजजी मुणोत के पास मौजूद है।

मुणोत जयमलजी न केवल राजनीतज्ञ और वीर ही थे, पर बड़े लोक सेवी भी थे। संवत् १६८७ में मारवाड़ में बड़ा भयंकर अकाल पड़ा था, उस समय आपने मारवाड़ के भूखे महाजन, सेवक और अन्य दुःखी लोगों को एक वर्ष तक मुफ्त अन्न दान देकर उच्च श्रेणी की सहृदयता और परोपकार वृत्ति का परिचय दिया था। अब हम ओसवाल जाति के महत्व को क्रियात्मक रूप से प्रदर्शित करने वाले एक दूसरे महानुभाव का परिचय देते हैं। यह महापुरुष मुणोत जयमलजी के सुपुत्र मुणोत नेणसीजी थे।

मुणोत नेणसीजी

एक सुप्रसिद्ध अंग्रेज इतिहास वेत्ता का कथन है कि महान् पुरुषों के कार्यों का वर्णन ही इतिहास का प्रधान हेतु है। महान् पुरुषों की कार्य्यावली ही ऐतिहासिक घटनाएँ होती हैं। मुणोत नेणसीजी ओसवाल जाति के एक ऐतिहासिक पुरुष थे। भारतीय इतिहास के गगन मण्डल में इनका नाम तेजी से चमक रहा है। शासन कुशलता, वीरता, साहित्य-प्रेम एवं विद्या-प्रेम के ये मूर्तिमंत अवतार थे। हम ओसवाल जाति के राजनैतिक और सैनिक महत्व दिखाने के उद्देश्य से इनके जीवन पर थोड़ा सा प्रकाश डालना आवश्यक समझते हैं।

मुणोत नेणसी का जन्म संवत् १६६७ की मार्गशीर्ष सुदी ४ को हुआ था। संवत् १७१४ में महाराजा जसवन्तसिंहजी ने इन्हें अपना दीवान बनाया। उस समय उनकी अवस्था ४७ वर्ष की थी। उन्होंने दीवानगी के काम को बड़ी उत्तमता के साथ संचालित किया।

जिस समय का यह जिक्र है उस समय भारतवर्ष में सम्राट् औरङ्गजेब के अत्याचारों से तंग आकर दक्षिण और पंजाब के हिन्दुओं में अद्भुत् जागृति की लहर उठ रही थी। राजस्थान में राजनैतिक षड्यंत्रों का जाल बिछाया जा रहा था, राजाओं का पारस्परिक वैमनस्य राजस्थान के भविष्य को अंधकाराच्छन्न कर रहा था। ऐसे कठिन समय में राज्य-शासन का सूत्र सञ्चालित करना कितना कठिन होता है, उसको यहाँ बतलाने की आवश्यकता नहीं। महाराजा जसवंतसिंहजी को अक्सर जोधपुर से बाहर रहना पड़ता था। वे औरंगजेब के द्वारा कभी किसी प्रान्त के और कभी किसी प्रांत के शासक (Governor) बनाये जाते थे। कई वक्त औरंगजेब की ओर से उन्हें युद्धों पर भी जाना पड़ता था। इस-

लिये जोधपुर का शासन भार वे अपने परम विश्वसनीय प्रधान मुणोत नेणसी के सुपुर्द कर निश्चिंत रहते थे। महाराजा ने मुणोत नैणसी के राज्य को प्रायः सब अधिकार दे रक्खे थे। यहाँ तक कि उन्हें जागीर तक देने का अधिकार दे रक्खा था। हाँ, समय २ पर महाराजा साहब इनके नाम पर सूचनाएँ अवश्य भेज दिया करते थे जैसा कि महाराजा जसवंतसिंहजी के निम्नलिखित पत्र से प्रकट होता है।

"सिध श्री महाराजधिराज महाराजाजी श्री जसवंतसिंहजी वचनातु मु० नेनसी दिये सुप्रसाद वाँचिजो। अठारा समाचार भला छे। थांहरो देजो। लोक, महाजन, रेत (प्रजा) री दिलासा किजो। कोई किण ही सो जोर ज्यादती करण न पावे। कांठेकोरारो जापतो कीजो। कँवर रे डीलरा पान पाणीरा जतन करावजो"।

"अरज दास थांहरी जोधपुर फिर आई। हकीकत मालूम हुई। थे रुगनाथ लखमी दासोत नुं पटो दिये गाँव ३ सु भलो कीनो"।

उक्त पत्र मारवाड़ी भाषा में है। इसमें महाराजा जसवंतसिंहजी ने अपने दीवान मुणोत नेणसी को लिखा है:—

"लोक, व्यापारी और प्रजा को तसल्ली देते रहना। कोई किसी से जोर ज्यादती न करने पावे। सरहद का प्रबन्ध रखना। राजकुमार के खाने पीने की ठीक व्यवस्था रखना। तुमने राठौड़ रुगनाथ लक्ष्मी-दासोत को जो पटा दिया सो ठीक किया"

उल्लेखनीय कार्य्य

मुणोत नेणसीजी ने दीवान पद पर अधिकारारूढ़ होते ही मारवाड़ में शान्ति-स्थापन कार्य आरंभ किया। बहुत सी बगावतों को दबाकर उन्हों ने प्रजा में अमन और चैन पैदा किया। प्रजा के सुख दुःख की बातें वे बड़े गौर से सुनने लगे। उन्होंने महाराजा जसवंतसिंहजी से निवेदन कर प्रजा पर लगी हुई कई लागें को माफ करवाया। संवत् १७१८ के पौष मास में मेड़ता परगने के कोई दस गाँवों के जाट लोग लागें और बेगार का विरोध करने को आपकी सेवा में उपस्थित हुए। उन्होंने इन्हें आँसू भरी आँखों से अपने दुखों की कहानी कही। सहृदय दीवान मुणोत नेणसी ने उनकी लागें माफ कर दी और तत्काल ही मेड़ते के हाकिम भण्डारी राजसी को इस संबन्ध का हुक्म भेज दिया। इस प्रकार के उनकी प्रजा प्रियता के इतिहास में और भी उदाहरण मिलते हैं। उन्होंने अपनी ख्यात में इन बातों का विस्तृत विवरण लिखा है।

मुणोत नेणसी और मर्दुमशुमारी

कुछ लोगों का कथन है कि मर्दुमशुमारी की पद्धति आधुनिक युग का आविष्कार है। पर दर असल यह बात नहीं है। मौर्य्य साम्राज्य में मर्दुमशुमारी की प्रथा मौजूद थी और इसका जिक्र कौटिल्य ने अपने सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्र में किया है। पर जान पड़ता है कि इसके बाद बीच में यह प्रथा विलुप्त हो गई थी। क्योंकि बीच में कहीं भी इस प्रथा का उल्लेख नहीं मिलता है।

मध्ययुग में मुणोत नेणसी के द्वारा इस प्रथा का आविष्कार देखकार बड़ा आश्चर्य होता है। आपने एक पंच वर्षीय रिपोर्ट लिखी थी। हमने इसकी हस्तलिपि आप के वंशज जोधपुर निवासी श्रीवृद्धराजजी मुणोत के पास देखी थी। इसमें उन्हों ने मारवाड़ के परगने, ग्राम, ग्रामों की आमदनी, भूमि की किस्म साखों का हाल, तालाब, कुए विभिन्न जातियों के वृत्तान्त आदि अनेक विषयों का बड़ा ही सुन्दर विवेचन किया है। हम अपने पाठकों की जानकारी के लिए मुथा नेनसी द्वारा कराई गई मर्दुमशुमारी की कुछ तफसील देते हैं।

संवत् १७२० के कार्त्तिक बदी १० को मेड़ता नगर की मर्दुमशुमारी की गई जिसका परिणाम इस प्रकार है।

२१५८ महाजन—ओसवाल, महेश्वरी, अग्रवाल, खण्डेलवाल
१३७१ ५५१ १६१ ७५

३५४ भोजग, खत्री, भाट, निरतकाली
२८२ ४० २८ ४

६६९ ब्राह्मण
पोहकर्ण, राजगुरु, गुर्जरगौड़, पारीख, दाहिमा, सारस्वत
८२ १३ ४२ १४० ५४ ४४
खण्डेलवाल, शिखवाल उपाध्याय, श्रीमाली, गुजराती, गौड़, सनाढ्य
७ १११ १०५ १४ ५० ७

५३ कायस्थ—बीसा, दसामाथुर और भटनागर
४२ ७ ४

१९१ खत्री राजपूत
१ १९०

२०० मुसलमान—पठान, तरकसबन्ध तोपची, देशवाली, नवीब

३१ १२४ १२६ ८

२१२५ पवनजात

माली, दर्जी, सुनार, नाई हिन्दू, तुर्क, गिरधरे, तेली, नीलगर, छींपे, कलाल

१८२ ११४ ९१ ५६ ३४ ६ ६२ १० ५१ ३१

सिकलीगर, ओडबेलदार, कहार, कसारे ठठेरे, लोहार, ग्वार्ता, गमोली हिन्दू, तुर्क, मोची हिंदू,

१२ १० ८ २७ ११ ५२ ११ १२ ८४

तुर्क, साबुगर, कुम्हार, जटिया, घोसी, गांछे, तीरगर, बाजदार, लखारे, मरावे, पिंजारे,

५३ २० ३४ ३० ३३ १८ ६ ३२ ११ ११ ५७

सिलावट हिन्दू, तुर्क, धोबी हिन्दू, तुर्क, सौदागर, नालबंध, जुलाहे, मुल्तानी, कस्साब,

४ ३४ ४२ ६९ २१ २ २९३ १०५ ४४

खेरादी, तबाब, कुञ्जड़े, डाकोत, चितेरे, खटीक सालरंगी, बलाई, जटिया अघोर्या रंगे,

६ २ १७ ५० २ ४५ ४५ २६

नगर नायिका, आचार्य्य सरगरा

२१ १

११ फ़क़ीर घरबारी

५८६०

संवत् १७१९ में जेतारण की मर्दुमशुमारी की गई जिसकी तफ़सील निम्नलिखित है।

महाजन, ब्राह्मण, फुटगर जाति के कुल घर आबाद थे।

७२० २६८ ८५० १८३८

संवत् १७१६ में सोजत की मर्दुमशुमारी की गई थी जिसकी तफ़सील इस प्रकार है।

महाजन, कायस्थ, कादतकार, राजपूत, मुसलमान, ब्राह्मण, पवन मुतफर्रिक जाति,

७३८ ८ ३०५ १४२ ७२ ३६४ ६२५

कुल २२५४ घर आबाद थे।

संवत् १७२१ में सीवाणा की मर्दुमशुमारी हुई जिसकी तफ़सील इस प्रकार है।

महाजन,	ब्राह्मण,	सुनार,	कुम्हार,	भोजग,	सुतार,	तुर्क,	पिंजारा	छीपे,	नाई,
८१	२५	१०	२	४	४	४०	१	२	१

ढेढ,	थोरी,	जागरी,	राजपूत,	कुल २८३ घर आबाद थे।
१६	२	१	९५	

संवत् १७२१ में जोधपुर के हाट में दुकानों की गिनती लगाई तो उस समय कुल ८१५ दुकानें लगी थीं फलौधी की मर्दुमशुमारी की तफ़सील इस प्रकार है।

महाजन ओसवाल,	माहेश्वरी,	ब्राह्मण (पुष्कर्णा),	फुटकर जाति
१२१	१२१	२११	२०४

कुल ६५७ घर आबाद थे।

संवत् १७२१ की आश्विन कृष्णपक्ष दशमी को जोधपुर राज्य के परगनों की कुल मर्दुमशुमारी की गई जिसमें प्रत्येक परगने में कुल कितने गाँव हैं उनमें से कितने आबाद हैं; कितने वीरान हैं और कितने चारण भाट आदि लोगों को दान में दे दिये गये हैं। इन सब की तफसील नीचे दी जाती है।

नाम परगना	कुल ग्राम	आबाद	वीरान	सांसण *
१ जोधपुर परगना	११६७	८०२।	२२०॥।	१४४
२ सोजत "	२४४	१७९	३२	३३
३ जैतारण "	१५२	१०५	२९	१८
४ फलौदी "	६८	४९	१०	९
५ मेड़ता "	३८४	२९८॥	४०	४५॥
६ सिवाणा "	१४४	९४	२०	३०
७ पोकरण "	८५	४१	२८	१६
	२२४४	१५६८॥।	३७९॥।	२९५॥

* वे गाँव जो चारण भाटों को दान में दिये गये थे।

उपरोक्त मर्दुमशुमारी के उक्त अंकों से पाठकों को यह ज्ञात हुआ होगा कि मध्य युग के अशान्ति-मय जमाने में भी मुणोत नैनसी ने मर्दुमशुमारी करने की आवश्यकता को महसूस किया था। आपकी हस्तलिखित पंचवर्षीय रिपोर्ट से यह भी प्रतीत होता है कि उन्होंने मारवाड़ से सम्बंध रखने वाली सूक्ष्म से सूक्ष्म बातों का भी विवेचन किया है। वह रिपोर्ट क्या है; तत्कालीन मारवाड़ का जीता जागता चित्र है। जिस प्रकार आधुनिक सरकारें अपने २ राज्यों की छोटी से छोटी बातों का रिकॉर्ड रखती हैं, उसी प्रकार मुणोत नैनसीजी ने उस जमाने में भी रक्खा था। यह एक ऐसी बात है जो तत्कालीन एक ओसवाल राजनीतिज्ञ की उच्च श्रेणी की शासन-योग्यता पर अच्छा प्रकाश डालती है। इस प्रकार और भी कई प्रकार के कार्य्य मुणोत नैनसीजी ने किये थे जिनका वर्णन आगे चल कर मुणोतों के इतिहास में किया जायगा।

दीवान मुणोत कर्मसीजी

मुणोत नैनसीजी के बाद उनके पुत्र करमसीजी भी बड़े प्रतापी और वीर हुए। जब संवत् १७१४ में महाराजा जसवंतसिंहजी सम्राट् शाहजहाँ की ओर से शाहजादा औरंगजेब के खिलाफ सेना लेकर उज्जैन गये थे उस समय मुणोत करमसीजी उनके साथ थे। आप फतियाबाद के युद्ध में बड़ी बहादुरी के साथ लड़े और घायल हुए। संवत् १७१८ में आप महाराजा जसवंतसिंहजी के साथ गुजरात की चढ़ाई पर भी गये थे। जब महाराजा को बादशाह की ओर से हाँसी और हिसार के परगने मिले तब अहमदाबाद मुकाम से महाराजा ने आपको वहाँ का शासक (Governor) नियुक्त कर भेजा। इन परगनों की वार्षिक आय करीब १२००००० की थी, और ये गुजरात के सूबे के बदले में मिले थे। मुणोत करमसीजी संवत् १७३२ तक वहाँ के शासक रहे। इसके बाद नागोर के तत्कालीन नरेश रायसिंहजी ने इन्हें अपना दीवान बनाया और सारा राज्य कारोबार इनके सिपुर्द कर दिया।

मुणोत करमसीजी के बाद मुणोत चन्द्रसेनजी भी अच्छे नामांकित हुए। ये किसी तरह दक्षिण में पहुँच गये और पेशवा के पास नौकर हो गये। यहाँ उसके ताबे में ११०० घुड़सवार थे। नाना फड़नवीस इनसे बहुत खुश थे। उन्होंने इन्हें दिल्ली का वकील बनाकर भेजा था। धार और झांसी की किलेदारी पर भी आप मुकर्रर किये गये थे।

इनके अतिरिक्त मेहता कृष्णदास, मेहता नरहरीदास, भण्डारी ताराचन्द, भण्डारी अभयराज, (रायमलोत) सुराणा ताराचन्द्र आदि ओसवाल सज्जनों ने भी महाराजा यशवंतसिंहजी के जमाने में राज्य की बड़ी २ सेवाएँ की थीं। इतना ही नहीं, फतेहाबाद के युद्ध में ये सब लोग बड़ी बहादुरी से युद्ध करते हुए मारे गये थे।

महाराजा अजितसिंह और ओसवाल मुत्सद्दी

महाराजा जसवंतसिंहजी के बाद महाराजा अजितसिंहजी जोधपुर के राज्य सिंहासन पर बिराजे। कहने की आवश्यकता नहीं कि जिस समय महाराजा अजितसिंहजी का उदय हो रहा था, उस समय भारत के राजनैतिक गगन मण्डल में विविध प्रकार के षड्यंत्रों की सृष्टि हो रही थी। बादशाह औरंगजेब की अत्याचार पूर्ण नीति ने मुगल साम्राज्य की नींव खोखली कर दी थी। जब तक औरंगजेब जीवित रहा तब तक मुगल सम्राज्य ज्यों त्यों कर कायम रहा, पर ज्योंहीं उसने इस संसार से कूँच किया त्योंही उसकी नींव हिलने लगी। सम्राट् औरंगजेब के बाद जितने मुगल सम्राट् हुए वे सब कमजोर और राजनीति से शून्य थे। वजीर और शक्तिशाली राजाओं ने उन लोगों को अपने हाथ की कठपुतलियाँ बना रखा था। महाराजा अजितसिंहजी ने भी मुगाल सम्राटों की इस कमजोरी से खूब फायदा उठाया और वे बड़े शक्तिशाली बन गये। अगर हम यह कहें तो अत्युक्ति न होगी कि भारत की तत्कालीन राजनीति के मैदान में उन्होंने बड़े २ खेल खेले। उस समय उनके पास बड़े २ राजनीति धुरंधर मुत्सद्दी थे जिनमें भण्डारी खींवसी और भण्डारी रघुनाथसिंह का नाम विशेष उल्लेखनीय है। इन दोनों महानुभावों ने न केवल जोधपुर राज्य की राजनीति ही में महत्वपूर्ण भाग लिया वरन् अखिल भारतवर्षीय राजनीति के क्षेत्र में भी बहुत बड़े मार्के के काम किये। फारसी और अंग्रेजी के इतिहास ग्रन्थों में इनके कार्य्यों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया गया है।

भण्डारी खींवसी

भण्डारी खींवसीजी बड़े सफल राजनीतिज्ञ थे। तत्कालीन मुगल- सम्राट् पर उनका बड़ा प्रभाव था। मुगल-साम्राज्य की सरकार के पास जब जब जोधपुर राज्य की हित रक्षा का प्रश्न उपस्थित होता था तब तब आप बादशाह की सेवा में हाजिर होकर बड़ी चतुराई के साथ जोधपुर राज्य सम्बन्धी प्रश्नों का फैसला करवा लेते थे। आपको महीनों नहीं वर्षों तक मुगल सम्राट् के दरबार में रहना पड़ता था।

इतना ही नहीं उस वक्त के कमजोर मुगल सम्राटों को बनाने और बिगाड़ने का काम तक आपको करना पड़ता था। जब संवत् १७७६ में बादशाह फर्रुखशियर को उसके वजीर सैयद बन्धुओं ने मरवा डाला, उस वक्त महाराजा अजितसिंहजी ने राजा रत्नसिंहजी एवं भण्डारी खींवसीजी को दिल्ली के लिये रवाना किया। इन्होंने दिल्ली पहुँचकर नवाब अब्दुल्लाखाँ की सम्मति से शाहजादा मुहम्मदशाह को तख्त पर बिठा दिया। फारसी तवारिखें भी भण्डारी खींवसीजी की तत्कालीन राजनैतिक गतिविधियों का सुन्दर विवेचन करती हैं।

भण्डारी खींवसीजी धार्मिक वृत्ति के महापुरुष थे और इससे आपने अपने बढ़े हुए प्रभाव का उपयोग प्रायः प्रजाहित के कार्य्यों में किया। उन्होंने मुगल सम्राट् के द्वारा हिन्दुओं पर लगाये जानेवाले जजिया करको माफ करवाया। यह एक ऐसा कार्य्य था कि जिसके कारण चारों ओर उनकी बड़ी प्रशंसा हुई।

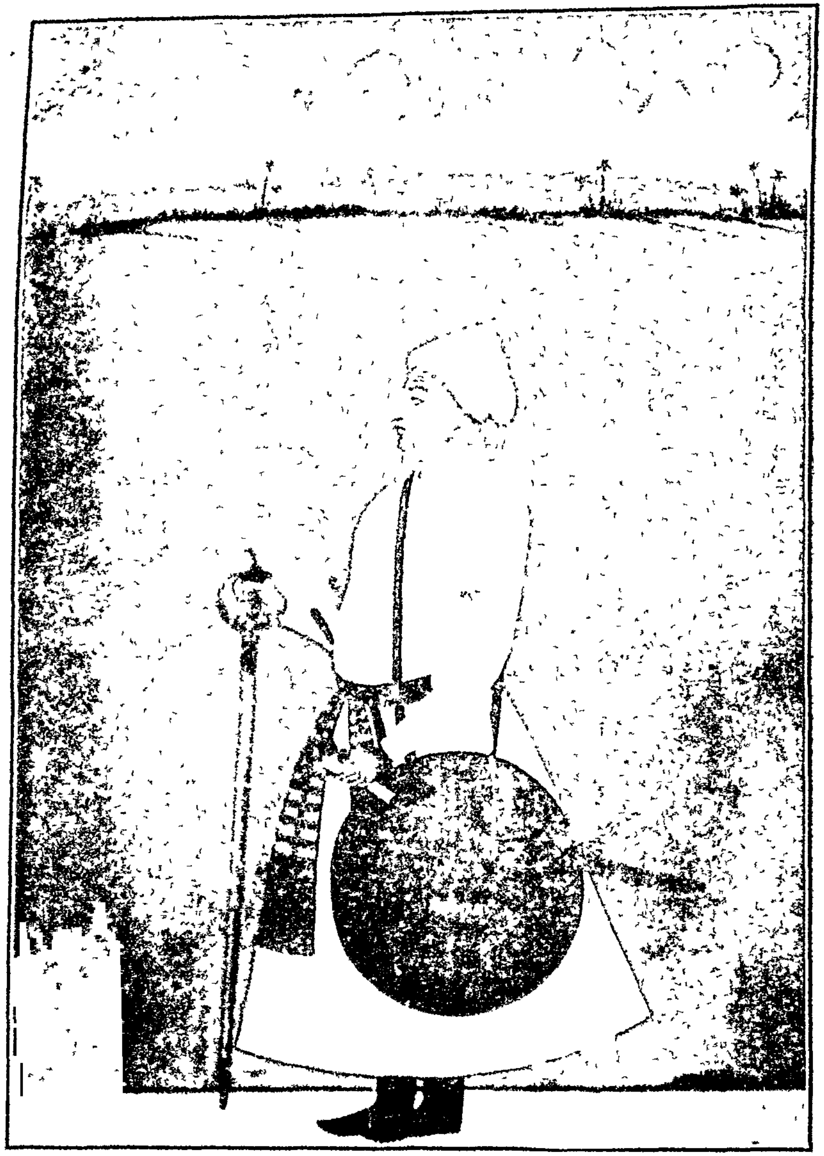
भण्डारी खींवसीजी जोधपुर के सर्वोच्च प्रधान के पद पर अधिष्ठित थे। ये बड़े सत्यप्रिय, निर्भीक और अपने स्वामी को सच्ची सलाह देनेवाले थे। महाराजा अजितसिंहजी के साथ एक समय मतभेद होने पर इन्होने अपना पद त्याग दिया। पीछे संवत १७८१ में महाराजा अजितसिंहजी के पुत्र महाराजा अभयसिंहजी के गद्दी नशीन होने पर इन्हें फिर प्रधानगी का उच्च पद प्राप्त हुआ। संवत १७८२ में फिर किसी कारण वश आप प्रधान पद से जुदा हो गये, पर महाराजा अभयसिंहजी आपका इतना सम्मान करते थे कि आपने आपका प्रधानगी का तमाम लवाजमा ज्यों का त्यों कायम रखा। जब इसी साल जेठ वदी ६ को खींवसीजी का देहान्त हुआ तब महाराजा अभयसिंहजी दिल्ली में थे। कहने की आवश्यकता नहीं कि खींवसी की मृत्यु का संवाद सुनकर वे बड़े दुःखित हुए। उनके शोक में महाराज साहब ने एक वक्त अपनी नौबत बंद रक्खी तथा आप स्वतः भण्डारी खींवसीजी के पुत्र अमरसिंहजी के डेरे पर मातम पुरसी के लिए पधारे। उन्होंने अमरसिंहजी को बड़ी सांत्वना दी और उन्हें अपने पिता खींवसीजी की जगह अधिष्ठित कर सिरोपाव, पालकी और हाथी पर बैठने का कुरब प्रदान किया।

खींवसीजी ओसवाल जाति के महापुरुष थे। जोधपुर राज्य से उन्हें ऊँचे से ऊँचा सन्मान प्राप्त था। तत्कालीन मुगल सम्राट् भी उनका बड़ा आदर करते थे। उनका इतिहास बहुत विस्तृत है, इसे हम आगे चलकर भण्डारियों के इतिहास में देंगे। इस वक्त सिर्फ ओसवाल जाति के राजनैतिक महत्व को दिखलाने के लिये हमने उनके एक दो महान् कार्य्यों का उल्लेख मात्र किया है।

राय भण्डारी रघुनाथसिंह

महाराजा अजितसिंहजी के राज्य-काल में भण्डारी खींवसीजी की तरह ये भी एक महा शक्तिशाली पुरुष हो गये। ये दीवानगी के उच्चपद पर प्रतिष्ठित थे। इनमें शासन-कुशलता और रण-चातुर्य्य का अद्भुत सम्मेलन हुआ था। इन्होंने गुजरात में महाराजा की ओर से कई युद्धों में बड़ी कुशलता से सेना का संचालन किया था। महाराजा अजीतसिंहजी ने गुजरात में की गई इनकी बड़ी २ करतवगारियों से प्रसन्न होकर, इन्हें कई खास रुक्के (Certificates) प्रदान किये थे। इन रुक्कों में उनके कार्य्यों की बड़ी प्रशंसा की गई है और गुजरात विजय का बहुत कुछ श्रेय उन्हें दिया गया है।

इसके अतिरिक्त जिस प्रकार खींवसीजी ने शाही दरबार में महाराज की ओर से बड़े २



श्री भण्डारी खींवसीजी, जोधपुर.



रायरायन भण्डारी रघुनाथसिंहजी, जोधपुर.

कार्य किये , उसी प्रकार भण्डारी रघुनाथसिंहजी ने भी किये। उन्हें कई वक्त जोधपुर राज्य की हित-रक्षा के लिये मुगल सम्राट् की कोर्ट में हाजिर होना पड़ता था और वे अपने काम को बड़ी कुशलता से बना लाते थे।

महाराजा अजितसिंहजी का इनकी योग्यता पर बड़ा विश्वास था। कर्नल वाल्टर साहब का कथन है कि जब महाराजा अजितसिंहजी देहली में विराजमान थे तब भण्डारी रघुनाथसिंह ने अपने स्वामी के नाम से कुछ समय तक मारवाड़ का शासन किया था। यह बात नीचे लिखे हुए दोहे से भी प्रकट होती है ।

"करोड़ां द्रव्य लुटायो, हौदा ऊपर हाथ ।
अजे दिल्ली रो पातशा राजा तूं रघुनाथ ॥"

अर्थात् जिस समय महाराजा अजितसिंहजी दिल्ली पर शासन कर रहे थे उस समय मारवाड़ के भण्डारी रघुनाथसिंह राज्य के सब कार्य्यों को करते थे।

उपरोक्त बात से राय भण्डारी रघुनाथसिंहजी का राजनैतिक महत्व स्पष्टतया प्रकट होता है। महाराजा अजितसिंहजी ने आपको बड़े २ सम्मानों से विभूषित किया था। आपको भी महाराजा साहब ने पालकी, * हाथी आदि पर बैठने का सम्मान प्रदान कर आपकी सेवाओं की कद्र की थी। इसके अतिरिक्त आपको "राय" की सर्वोच्च उपाधि भी प्राप्त थी। राज्य के ऊँचे से ऊँचे सरदारों की तरह महाराजा साहब आपको ताजीम देते थे। एक समय महाराजा अजितसिंहजी ने अपने हाथी पर पीछे की बैठक देकर आपका बहुत सम्मान किया था।

कहने का आशय यह है कि राय भण्डारी रघुनाथसिंहजी अपने समय में जोधपुर राज्य के राजनैतिक गगन मण्डल में बहुत ही तेजस्विता के साथ चमके थे। इनकी कर्तव्यगारियों का उल्लेख फ़ारसी इतिहास लेखकों ने तथा तत्कालीन मारवाड़ी ख्यातों के लेखकों ने बहुत ही उत्तमता के साथ किया है। सरकारी काग़ज़-पत्रों में भी इनके कामों के जगह २ उल्लेख मिलते हैं।

भण्डारी अनोपसिंहजी

भण्डारी अनोपसिंहजी राय भण्डारी रघुनाथसिंह के पुत्र थे। आप बड़े बहादुर तथा रणकुशल थे। आप संवत् १७६७ में महाराजा अजितसिंहजी द्वारा जोधपुर के हाकिम नियुक्त किये गये। कहने की आवश्यकता नहीं कि उस समय की हुकूमत आजकल की सी शांतिमय नहीं थी। आंतरिक इन्तजामी

* उस जमाने में राजपूताने में हाथी तथा पालकी का सम्मान सबसे ऊँचा सम्मान माना जाता था।

मामलों के साथ २ हाकिम को आक्राक्रमणों से भी अपने नगर की रक्षा के साधन जुटाने पड़ते थे। दूसरे शब्दों में यों कहिये कि उस समय हाकिम पर सिविल और मिलिटरी (Civil and military) दोनों कामों का उत्तरदायित्व रहता था, भण्डारी अनोपसिंहजी ने अपने इस उत्तरदायत्व का बहुत ही उत्तमता से पालन किया।

भण्डारी अनोपसिंहजी बड़े वीर और अच्छे सिपहसालार थे। जब संवत् १७७२ में मुग़ल सम्राट् की ओर से भण्डारी अनोपसिंहजी को नागौर का मनसब मिला तब महाराजा ने आपको व मेड़ते हाकिम भण्डारी पोमसिंहजी को नागौर पर अमल करने के लिये भेजा। उस समय नागौर पर राठौड़ इन्द्रसिंहजी का शासन था। आप भी सजधजकर इन दोनों हाकिमों का मुक़ाविला करने के लिये आगे बढ़े। घमासान युद्ध हुआ जिसके फल स्वरूप इन्द्रसिंहजी की फ़ौज भाग गई और भण्डारी अनोपसिंहजी की विजय हुई। इन्द्रसिंहजी को तब नागौर खाली कर बादशाह के पास देहली जाना पड़ा। नागौर पर संवत् १७७२ के श्रावण कृष्ण सप्तमी को जोधपुर की विजय ध्वजा उड़ाई गई।

संवत् १७७६ में जब बादशाह फर्रुखशियर मारा गया तब महाराजा अजितसिंहजी ने इन्हें फौज देकर अहमदावाद भेजा था। वहाँ पर भी आपने बड़ी बहादुरी दिखलाई थी। इस प्रकार भण्डारी अनोपसिंहजी ने छोटी-मोटी कई लड़ाइयों में भाग लिया। उन सब के उल्लेख करने की यहाँ पर आवश्यकता नहीं।

भण्डारी रत्नसिंह

राजनैतिक और सैनिक दृष्टि से ओसवाल समाज में रत्नसिंह भण्डारी की गणना प्रथम श्रेणी के मुत्सद्दियों में की जा सकती है। आप बड़े वीर, राजनीतिज्ञ, व्यवहार-कुशल और कर्तव्यपरायण सेनापति थे। मारवाड़ राज्य के लिये इन्होंने बड़े २ कार्य किये। मुग़ल सम्राट् की ओर से संवत् १७९० में मारवाड़ के महाराजा अभयसिंहजी अजमेर और गुजरात के शासक (Governor) नियुक्त हुये थे। तीन वर्ष पश्चात् महाराजा अभयसिंहजी रत्नसिंहजी भण्डारी को अजमेर और गुजरात की गवर्नरीका कार्य सौंप कर देहली चले आये। तब संवत् १७९३ से लगाकर सं० १७९७ तक रतनसिंह भण्डारी ने अजमेर और गुजरात की गवर्नरी का संचालन किया, गवर्नर का कार्य करते हुए इन चार वर्षों में उन्हें अनेक युद्ध करने पड़े। कहने की आवश्यकता नहीं कि उस समय देश में चारों ओर अशांति छाई हुई थी। घरेलू झगड़ों ने मुगल साम्राज्य को पतन के अभिमुख कर रक्खा था। मरहठों का जोर दिन पर दिन बढ़ता जा रहा था। ऐसी विकट परिस्थिति में अजमेर और गुजरात का गवर्नर बना रहना रतनसिंह जैसे चतुर और वीर योद्धा ही का काम था।

भण्डारी पौमसिंह भी अच्छे नामांकित पुरुष हुए। सं० १७७० में जब नवाब सैयद हसनअली मारवाड़ पर चढ़ आया तब आपने जोधपुर के किले की बहुत ही अच्छी तरह किले बन्दी की थी। संवत् १७७६ में भण्डारी अनोपसिंहजी के साथ भण्डारी पौमसिंहजी भी अहमदाबाद गये थे और वहाँ पर आपने अपने रण-चातुर्य्य का अच्छा परिचय दिया।

भण्डारी सूरतरामजी भी महाराजा अभयसिंहजीके समय में बड़े नामांकित पुरुष हो गये हैं। सं० १८०० में जयपुर नरेश जयसिंहजी की मृत्यु के बाद जोधपुर के महाराजा अभयसिंहजी ने भण्डारी सूरतरामजी आलनियावास के ठाकुर सूरजमलजी और रूपनगर के शिवसिंहजी को अजमेर पर अधिकार करने के लिए भेजा। इन्होंने युद्ध कर अजमेर पर मारवाड़ का झण्डा फहरा दिया।

इसी प्रकार महाराजा अजितसिंहजी और महाराजा अभयसिंहजी के राज्य-काल में और भी कई ओसवाल महानुभाव बड़े २ जिम्मेदारी के पदों पर अधिष्ठित हुए और उन्होंने राज्य की बड़ी २ सेवाएँ की।

महाराजा अजितसिंहजी और महाराजा अभयसिंहजी के राज्य काल में होने वाले बड़े २ ओसवाल मुत्सुद्दियों का वर्णन हम गत पृष्ठों में कर चुके हैं। महाराजा अभयसिंहजी के बाद महाराजा रामसिंहजी एवं महाराजा बखतसिंहजी जोधपुर के तख्त पर विराजे। इनके समय में भी ओसवाल मुत्सुद्दियों ने बड़े २ पदों पर काम किया पर इस लेख में हम केवल उन्हीं थोड़े से महानुभावों का परिचय दे रहे हैं जो राजस्थान के इतिहास के पृष्ठों में अपना नाम चिरस्मरणीय कर गये हैं। इस दृष्टि से उन दोनों नरपतियों के राज्यकाल के ओसवाल मुत्सद्दियों के कार्य्य काल पर प्रकाश न डाल कर हम महाराजा विजयसिंह जी के राज्य-काल में कदम रखते हैं।

महाराजा विजयसिंहजी और ओसवाल मुत्सद्दी

शमशेर बहादुर शाहमलजी—महाराजा विजयसिंहजी के समय में कई बड़े-बड़े ओसवाल मुत्सुद्दी हुए। उनमें सब से पहले हम रावराजा शमशेर बहादुर शाहमलजी लोढ़ा का उल्लेख करते हैं। सम्वत् १८४० में आप जोधपुर पधारे। यहाँ आपको फौज की मुसाहिबी (Commander-in-Chief) का प्रतिष्ठित पद मिला। आपने कई युद्धों में सम्मिलित होकर बड़े-बड़े बहादुरी के काम किये। सम्वत् १८४९ में आप गोड़वाड़ प्रांत में होने वाले एक युद्ध में सम्मिलित हुए। इसी साल जेठ सुदी १२ के दिन महाराजा विजयसिंहजी ने आपके कार्यों से प्रसन्न होकर आपको "रावराजा, शमशेर बहादुर" की

पुश्तैनी पदवी प्रदान की। आपके छोटे भ्राता को भी वंशपरम्परा के लिए राव की पदवी प्रदान की गई। इतना ही नहीं, आपको महाराजा विजयसिंहजी ने २९०००) प्रतिवर्ष के आय की जागीरी और पैरों में सोना पहनने का अधिकार प्रदान किया। आपको हाथी और सिरोपाव का उच्च सम्मान भी प्राप्त हुआ था।

सिंघी जेठमलजी

महाराजा विजयसिंहजी के समय में सिंघी जेठमलजी (जोरावर मलोत) भी नामांकित पुरुष हुए। सम्वत् १८११ में मेड़ते में मरहठों के साथ महाराजा जोधपुर का जो भीषण युद्ध हुआ था उसमें ये भी बड़ी बहादुरी के साथ लड़े थे। महाराजा विजयसिंहजी ने भी आपकी बहादुरी की बड़ी तारीफ की है। उक्त महाराजा सम्वत् १८११ के चैत्र बुदी ७ के रुक्के में सिंघी जेठमलजी को नीचे लिखे समाचार लिख कर उन पर अगाध विश्वास प्रकट करते हैं।

"गढ़ ऊपर तुरकियो मिल गयो सूँ चैत्र बुदी १ ने वारला हाको कियो सूँ निपट मज़बूती राखने मार हटाय दिया सूँ चाकरी कठा तक फरमावां"

इसी प्रकार आपने और भी कुछ छोटी-मोटी कई लड़ाइयाँ लड़ीं। सम्वत् १८१७ में चांपावत सबलसिंहजी ने २७ सरदारों और ४०० घुड़सवारों सहित जोधपुर राज्य के बिलाड़ा नामक ग्राम पर आक्रमण किया। उस समय सिंघी जेठमलजी बिलाड़े के हाकिम थे। वे सिर्फ ४० घुड़सवारों को लेकर दुश्मन पर टूट पड़े। बड़ा भीषण युद्ध हुआ। बाग़ी सबलसिंह और उसके साथ वाले २२ सरदार मारे गये। जेठमलजी बहुत ही वीरता के साथ युद्ध करते हुए काम आये। आपके लिए यह लोकोक्ति मशहूर है कि 'सिरकट जाने पर भी आप लड़ते रहे।' इसलिए आप जुझार कहलाये। बिलाड़े के तालाब पर आपकी छत्री बनी हुई है जहाँ पर लोग आपकी मूर्ति को जुझारजी के नाम से सम्बोधित कर पूजते हैं। प्रत्येक श्रावण सुदी ५ को उस छतरी पर बड़ा उत्सव होता है।

सिंघी भींवराजजी

महाराजा विजयसिंहजी के शासनकाल में सिंघी भींवराजजी का नाम भी विशेष उल्लेखनीय है। सम्वत् १८२४ की फाल्गुन बुदी १० को महाराजा साहब ने आपको बख्शीगिरी (Commander-in-Chief) के प्रतिष्ठित पद पर अधिष्ठित किया। ये बड़े वीर और रणकुशल सेनाध्यक्ष थे। आपने कई लड़ाइयाँ लड़ीं। आपके वीरोचित कार्यों से प्रसन्न होकर महाराजा साहब ने आपको ६०००) की रेख के चार गाँव इनायत किये।

संम्वत् १८३४ में जब मरहठों की फौजें ढूँढाड़* लूट रही थीं, तब वीरवर भींवराजजी १५००० सेना के साथ वहाँ पर भेजे गये। जयपुर और जोधपुर की फौजों ने मिलकर मरहठों को शिकस्त दी। इस युद्ध में सिंघी भींवराजजी ने बड़ी वीरता दिखलाई जिसकी प्रशंसा खुद तत्कालीन महाराजा जयपुर ने की थी। तत्कालीन जयपुर नरेश ने जोधपुर दरबार को जो पत्र लिखा था, उसमें निम्नलिखित वाक्य थे।

" भींमराजजी और राठौड़ वीर हीं और हमारी आम्बेर रहे "

अर्थात—भींवराजजी और राठोड़ वीरों की ही बदौलत इस समय आम्बेर की रक्षा हुई है।

कहने का अर्थ यह है कि महाराजा विजयसिंहजी के शासन काल में भी ओसवाल मुत्सुद्दियों ने बड़े २ कार्य्य किये जिनमें से कुछ के उदाहरण हमने ऊपर की पंक्तियों में दिये हैं।

महाराजा मानसिंहजी और ओसवाल

मुत्सुद्दियों की कारगुजारी—महाराजा विजयसिंहजी के बाद संवत् १८५० में महाराजा भीमसिंहजी मारवाड़ के राज्य सिंहासन पर बिराजे। इनके समय का शासन सूत्र भी प्रायः ओसवाल मुत्सुद्दियों के हाथ में था। पर आपके समय में कोई ऐसी घटना नहीं हुई जिसका इतिहास विशेष रूप से उल्लेख कर सके। इसलिये हम आपके राज्यकाल को छोड़कर महाराजा मानसिंहजी के कार्य्यकाल की ओर अपने पाठकों का ध्याम आकर्षित करते हैं।

जिस समय महाराजा मानसिंहजी ने जोधपुर के शासन सूत्र को अपने हाथ में लिया था उस समय सारे भारतवर्ष में अराजकता की ज्वाला सिलग रही थी। मुगल साम्राज्य अपनी अंतिम सांसे ले रहा था और मरहठा वीर छत्रपति शिवाजी के आदर्शों को छोड़ कर इधर उधर लूटमार में लगे हुए थे। राजस्थान के राजागण एकता के सूत्र में अपने आपको बांधने के बजाय एक दूसरे के खून के प्यासे हो रहे थे। भारतवर्ष की इन बिखरी हुई शक्तियों का फायदा उठाकर ब्रिटिशसत्ता अपने पैर चारों ओर फैला रही थी। महाराजा मानसिंहजी का राज्यकाल एक दुःखान्त नाटक है जिसमें हमें हिन्दुस्थान की सारी निर्बलताओं के दर्शन होते हैं जिनसे कि यह भारतवर्ष इस अवस्था को पहुँचा है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि ऐसे विकट समय में ओसवाल मुत्सद्दियों ने महाराजा मानसिंह जी की जो अमूल्य सेवाएँ की हैं वे इतिहास में सदा चिरस्मरणीय रहेंगी। इन सेवाओं के विषय में कुछ लिखने के पूर्व यह आवश्यक है कि तत्कालीन राजस्थाम की राजनैतिक परिस्थिति पर भी कुछ प्रकाश डाला जाय।

---

* ढूँढाड़ उस प्रांत का नाम है जहाँ पर वर्त्तमान में जयपुर-राज्य स्थित है।

महाराजा भीमसिंहजी के बाद संवत् १८६१ में महाराजा मानसिंहजी गद्दी पर बिराजे। आप महाराजा भीमसिंहजी के भतीजे थे। जिस समय आप गद्दी पर बिराजे उस समय महाराजा भीमसिंहजी की एक रानी गर्भवती थी। कुछ सरदारों ने मिलकर उसे तलेटी के मैदान में ला रक्खा। वहीं पर उसके गर्भ से एक बालक उत्पन्न हुआ, जिसका नाम धोंकलसिंह रक्खा गया। इसके बाद उन सरदारों ने उसे पोकरण के तरफ भेज दिया पर महाराजा मानसिंहजी ने इस बात को बनावटी मानकर उसका राज्याधिकार अस्वीकार कर दिया।

महाराजा मानसिंहजी ने गद्दी पर बैठते ही अपने शत्रुओं से बदला लेकर उन लोगों को जागीरें दीं जिन्होंने विपत्ति के समय सहायता की थी। इसके बाद उन्होंने सिरोही पर फौज भेजी, क्योंकि वहाँ के राव ने संकट के समय में इनके कुटुम्ब को वहाँ रखने से इंकार किया था। कुछ ही समय में सिरोही पर इनका अधिकार हो गया। घाणेराव भी महाराज के अधिकार में आ गया।

वि० सं० १८६१ में धौंकलसिंहजी की तरफ से शेखावत राजपूतों ने डीडवाना पर आक्रमण किया, परन्तु जोधपुर की फौज ने उन्हें हराकर भगा दिया। इसी बीच में एक नई परिस्थिति उत्पन्न होगई। इतिहास के पाठक जानते हैं कि उदयपुर के राणा भीमसिंहजी की कन्या कृष्णाकुमारी का विवाह जोधपुर के महाराजा भीमसिंहजी के साथ होना निश्चित हुआ था। परन्तु उनके स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् राणाजी ने उसका विवाह जयपुर के महाराजा जगतसिंहजी के साथ करना चाहा। जब यह समाचार मान-सिंहजी को मिला तब उन्होंने जयपुर महाराज जगतसिंहजी को लिखा कि वे इस सम्बन्ध को स्वीकार न करें। क्योंकि उस कन्या का वाग्दान मारवाड़ के घराने से हो चुका है पर जब जयपुर महाराज ने इस पर कुछ ध्यान नहीं दिया तब महाराजा मानसिंहजी ने संवत १८६२ के माघ में जयपुर पर चढ़ाई कर दी। जिस समय ये मेड़ता के पास पहुँचे उस समय इनको पता लगा कि उदयपुर से कृष्णाकुमारी का टीका जयपुर जा रहा है। यह समाचार पाते ही महाराज ने अपनी सेना का कुछ भाग उसे रोकने के लिये भेज दिया। इससे लाचार होकर टीकावालों को वापिस उदयपुर लौट जाना पड़ा।

इस बीच जोधपुर महाराज ने इन्दौर के महाराजा जसवंतराव होल्कर को भी अपनी सहायता के लिये बुला लिया था। जब राठोड़ों और मरहठों की सेनाएँ अजमेर में इकट्ठी होगईं तब लाचार होकर जयपुर महाराज को पुष्कर नामक स्थान में सुलह करना पड़ी। जोधपुर के इन्द्रराजजी सिंघी और जयपुर के रतनलालजी (रामचन्द्रजी) के उद्योग से होलकर महाराज ने बीच में पड़कर जगतसिंह की बहिन का विवाह मानसिंहजी के साथ और मानसिंहजी की कन्या का विवाह जगतसिंहजी के साथ निश्चित करवा दिया। वि० सं० १८७३ के आश्विन मास में महाराजा जोधपुर लौट आये। पर कुछ ही दिनों के बाद लोगों

की सिखावट से यह मित्रता भंग हो गई। इस पर जयपुर महाराज ने धोंकलसिंहजी की सहायता के बहाने से मारवाड़ पर हमला करने की तैयारी की। जब सब प्रबन्ध ठीक होगया तब जयपुर नरेश जगतसिंहजी ने एक बड़ी सेना लेकर मारवाड़ पर चढ़ाई कर दी। मार्ग में खंडेले नामक गांव में बीकानेर महाराज सूरजसिंह जी, धोंकलसिंहजी और मारवाड़ के अनेक सरदार भी इनसे आ मिले। पिण्डारी अमीरखाँ भी मय अपनी सेना के जयपुर की सेना में आ मिला।

जैसे ही यह समाचार महाराजा मानसिंहजी को मिला वैसे ही वे भी अपनी सेना सहित मेड़ता नामक स्थान में पहुँचे और वहाँ पर मोरचा बाँध कर बैठ गये। साथ ही इन्होंने मरहठा सरदार महाराज जसवंतराव होलकर को भी अपनी सहायतार्थ बुला भेजा। जिस समय होलकर और अंग्रेजों के बीच युद्ध छिड़ा था उस समय जोधपुर महाराज ने होल्कर के कुटुम्ब की रक्षा की थी। इस पूर्व-कृत उपकार का स्मरण कर होल्कर भी तत्काल इनकी सहायता के लिये रवाना हुए। परन्तु उनके अजमेर के पास पहुँचने पर जयपुर महाराज ने उन्हें एक बड़ी रकम देकर वापिस लौटा दिया।

इसके बाद गाँगोली की घाटी पर जयपुर और जोधपुर की सेना का मुकाबिला हुआ। युद्ध के समय बहुत से सरदार महाराजा की ओर से निकलकर धोंकलसिंहजी की तरफ जयपुर सेना में जा शामिल हुए, इससे जोधपुर की सेना कमज़ोर हो गई। अन्त में विजय के लक्षण न देख बहुत से सरदार महाराजा को वापिस जोधपुर लौटा लाये। जयपुरवालों ने विजयी होकर मारोठ, मेड़ता, पर्वतसर, नागौर, पाली और सोजत आदि स्थानों पर अधिकार कर जोधपुर घेर लिया। सम्वत् १८६२ की चैत्र बदी ७ को जोधपुर शहर भी शत्रुओं के हाथ चला गया और केवल किले ही में महाराजा का अधिकार रह गया।

इसी समय मारवाड़ के राजनीतिक मंच पर दो महान् कार्य्यकुशल वीर और दूरदर्शी महानुभाव अवतीर्ण होते हैं। ये महानुभाव सिंघी इन्द्रराजजी और भण्डारी गंगारामजी थे। मारवाड़ की यह दुर्दशा उनसे न देखी गई। उन्होंने स्वदेश भक्ति की भावनाओं से प्रेरित होकर मारवाड़ को इन आपत्तियों से बचाने का निश्चय किया। वे उस वक्त जोधपुर के किले में कैद थे। महाराजा से प्रार्थना की कि अगर उन्हें किले से बाहर निकालने की आज्ञा दी जायगी तो वे शत्रु के दाँत खट्टे करने का प्रयत्न करेंगे। महाराजा ने इनकी प्रार्थना स्वीकार करली और इन्हें गुप्त मार्ग से किले के बाहर करवा दिया। इसके बाद ये दोनों वीर मेड़ते की ओर गये और वहाँ पर सेना संगठित करने का प्रयत्न करने लगे। उन्होंने एक लाख रुपये की रिश्वत देकर सुप्रख्यात पिण्डारी नेता अमीरखाँ को अपनी तरफ मिला लिया। इसी बीच बापूजी सिंधिया को भी निमंत्रित किया गया और वे इसके लिए रवाना भी हो गये थे। मगर बीच में ही जयपुरवालों ने उन्हें रिश्वत देकर वापिस लौटा दिया।

इसके बाद सिंघी इन्द्रराजजी भण्डारी, गंगारामजी और कुचामण के ठाकुर शिवनाथसिंहजी ने अमीरखाँ की सहायता से जयपुर पर कूँच बोल दिया। जब इसकी खबर जयपुर महाराज को लगी तब उन्होंने राय शिवलालजी के सेनापतित्व में एक विशाल सेना उनके मुकाबिले को भेजी। मार्ग में जयपुर और जोधपुर की सेनाओं में कई छोटी मोटी लड़ाइयाँ हुई पर कोई अंतिम फल प्रकट न हुआ। आखिर में टोंक के पास फागी नामक स्थान पर अमीरखाँ और सिंघी इन्द्रराजजी ने जयपुर की फौज को परास्त किया और उसका सब सामान लूट लिया। इसके बाद जोधपुरी सेना जयपुर पहुँची और उसे खूब लूटा। जब यह खबर जयपुर नरेश महाराजा जगतसिंहजी को मिली तब वे जोधपुर का घेरा छोड़ कर जयपुर की तरफ लौट चले।

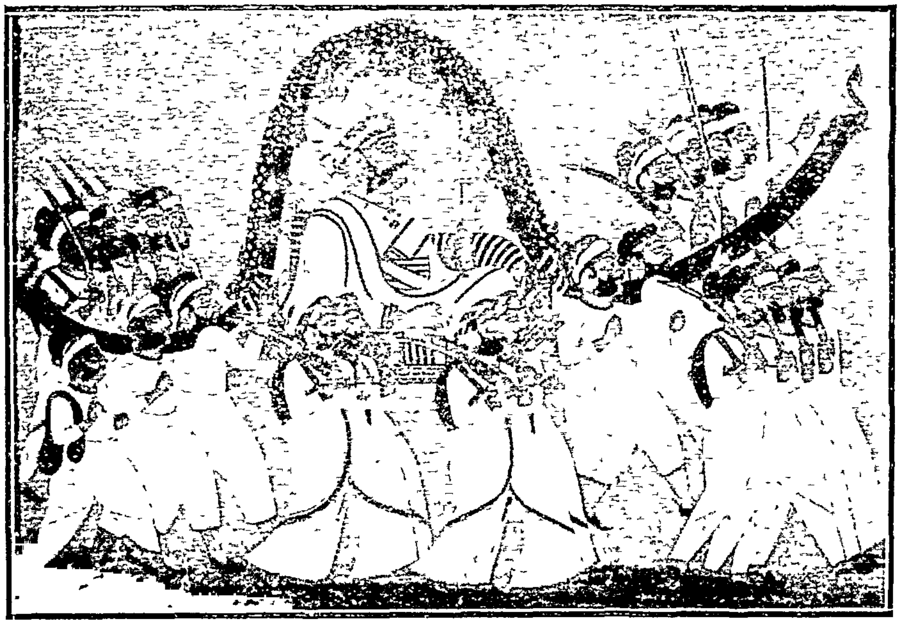
जयपुर की सेना पर विजय प्राप्त कर जब सिंघी इन्द्रराजजी अमीरखाँ के साथ जोधपुर पहुँचे तब महाराजा मानसिंहजी ने उन लोगों का बड़ा आदर किया। आपने इस समय सिंघी इन्द्रराजजी के पास एक खास रुक्का भेजा जिसको हम यहाँ ज्यों का त्यों उद्धृत करते हैं।

"श्री नाथजी"

सिंघवी इंदराज कस्य सुप्रसाद बाँचजो तथा आज पाछली रातरा जेपुर वाला कूंचकर गया और मोरचा बिखर गया और आपरे मते सारा कूंच करे है इण बात सूं थाने बड़ो जस आयो ने थे बड़ो नामून पायो इण तरारो रासो हुवे ने थे विखेरियो जणरी तारीफ कठाताई लिखां आज सूं थारो दियोड़ो राज है मारे राठोड़ा रो वंस रेती ने औ राज करसी उ थारे घर सूं एहसानमंद रहसी ने थारे घर सूं कांई तरा रो फरक राखसी तो इष्ट धरम सूं वेमुख होसी अब थे मारग में हलकारा री पूरी सावधानी राखजो संवत् १८६४ रो भादवा सुद ६

उक्त रुक्का मारवाड़ी भाषा में है। इसका आशय यह है कि आज पिछली रात को जयपुर वाले कूंचकर गये और उनका मोरचा बिखर गया। इस बात में तुम्हें बहुत यश आया और तुमने बड़ा नामून पाया। हम तुम्हारी तारीफ कहाँ तक करें। आज से यह तुम्हारा दिया हुआ राज्य है हमारा राठोडों का वंश जबतक रहेगा और जबतक वह राज्य करेगा तबतक वह तेरे घर का एहसानमंद रहेगा। तेरे घर से किसी तरह का फर्क रखेगा तो इष्ट धर्म से विमुख होगा!

इतना ही नहीं जयपुर से वापस लौटने पर सिंघी इन्द्रराजजी को प्रधानगी और जागीरी दी। राज्य शासन का सारा कारोबार इन्हें सौंपा।



स्वर्गीय श्री सिंघी भींवराजजी फौजबख्शी राज मारवाड़, जोधपुर।



स्वर्गीय श्री सिंघी अखेराजजी (भींवराजजी के पुत्र) फौजबख्शी, जोधपुर।

इसके बाद सिंघी इन्द्रराजजी ने १०००० जोधपुर की तथा १० हजार बाहरी फौज लेकर बीकानेर पर चढ़ाई की और उक्त शहर से ५ कोस पर डेरा डाला। तत्कालीन बीकानेर नरेश महाराजा सूरत सिंहजी ने आपसे समझौता कर फौज़ खर्च के लिये ४ लाख रुपये देने का वायदा किया। इसके बाद सिंघी इन्द्रराजजी अपनी फौज को लेकर जोधपुर चले आये।

इसके बाद सिंघी इन्द्रराजजी ने अपने प्राण देकर भी महाराजा मानसिंहजी को अमीरखाँ के कुचक्र से बचाया और मारवाड़ की रक्षा की। यह घटना इस प्रकार है। जब सिंघी इन्द्रराजजी ने बीकानेर पर फौजी चढ़ाई की थी, तब पीछे से अमीरखाँ ने महाराजा मानसिंहजी से अपनी दी हुई सहायता के बदले में पर्वतसर, मारोठ, डीडवाणा और सांभर का परगने अपने नाम पर लिखवा लिये थे। सम्वत १८७२ की आसौज सुदी ८ के दिन अमीरखाँ के कुछ पठान सैनिक जोधपुर के किले पर पहुँचे और वे सिंघीजी से अपनी चढ़ी हुई तनख्वाह और उक्त चारों परगनों का कब्जा माँगने लगे। कहा जाता है कि सिंघी इन्द्रराजजी ने मीरखाँ के आदमियों से महाराजा मानसिंहजी का दिया हुआ चार परगनों का अधिकार पत्र देखने के लिये माँगा ज्योंही उक्त पत्र उनके हाथ आया वे उसे निगल गये। इससे अमीरखाँ के लोग बड़े क्रोधित हुए और उन्होंने सिंघी इन्द्रराजजी को वहीं कत्ल कर डाला। जोधपुर राज्य की रक्षा के लिए इस प्रकार ओसवाल समाज के इस महा सेनानायक और प्रतिभा शाली मुत्सुद्दी का अन्त हुआ!

जब यह समाचार महाराजा मानसिंहजी को पहुँचा, तब वे बड़े शोक विह्वल हुए! उन्होंने इन्द्रराजजी के शव को किले के खास दरवाजे से, जहाँ से सिर्फ़ राजपुरुषों का शव निकलता है, निकलवाकर उनका राज्योचित सम्मान किया। इतना ही नहीं किले के पास ही उनका दाह संस्कार करवाया गया जहाँ अब भी उनकी छत्री बनी हुई है।

सिंघी इन्द्रराजजी की सेवाओं के बदले में महाराजा मानसिंहजी ने उनके पुत्र फतहराजजी को २५ हजार की जागीरी, दीवानगी तथा महाराज कुमार के बराबरी का सम्मान प्रदान किया। इस सम्बन्ध में महाराजा मानसिंहजी ने जो खास रुक्का भेजा था उसकी नकल यह है।

श्री नाथजी

सिंघवीं फतेराज कस्य सुप्रसाद बांचजो तथा इन्दराज रे निमित्त ११ जीणा ने पीयाला दिया ने सरकार रो खेरखुवा पणे राखणासुं मीरखां इन्द्रराज ने काम में लाया: ने परगना चार नहीं दिया जणा की कठा ताईं तारीफ करां। उननें मारी नोंकरियां बहुत बहुत दींवी। उणा रे मरणे सुं राजने बड़ो हरज हुओ। परंत अब दीवाणगिरी रो रु० २५०००) हजाररो पटो थाने इनायत कियो जावे है सो उणोर मुजब थे काम करजो और थारो कुरब इण

घर में महाराज कुँवार सु ज्यादा रेसी ओ थारी नौकरियाँ लायक थारे वास्ते का सजूक नहीं
कियो ने मने आदी मिलेला चोथाइ तो देने खावांला तू कोई तरांसु और तरे समझसी नहीं
थारे तो वाप मैं बेठा हाँ कसर पड़ी तो मारे पड़ी संवत् १८७२ रा आसोज सुदी १४

सही म्हारी

यह पत्र जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं महाराजा मानसिंहजी ने सिंघवी इन्द्रराजजी के पुत्र सिंघी फतेराजजी को इन्द्रराजजी की मृत्यु के बाद लिखा था। इसका आशय यह है।

" सिंघी फतेराज से सुप्रसाद वंचना। इन्द्रराज के निमित्त ११ आदमियों को विष के प्याले दिये गये हैं, सरकार के खैरख्वाह होने के कारण इन्द्रराज ने अमीरखाँ को चार परगने नहीं दिये जिससे अमीरखाँ ने इन्द्रराज का प्राण ले लिया। इन्द्रराज की इस राजभक्ति के लिये हम कहाँ तक तारीफ करें। उसने हमारी बहुत २ सेवाएँ कीं। उसके मरने से राज्य की बड़ी हानि हुई है। परन्तु अब तुम्हें दीवानगी और उसके साथ २५०००) का पट्टा इनायत किया जाता है। अब तुम उसके एवज में काम करना। इस घर में तुम्हारा कुरब (दर्जा) महाराज कुमार से अधिकार रहेगा। अगर हमें आधी मिलेगी तो चौथाई तुझे देकर के खावेंगे। तू किसी तरह की दूसरी बात नहीं समझना। तेरे तो बाप हम बैठे हैं। इन्द्रराज के मरने से कसर पड़ी तो हमारे पड़ी। संवत् १८७२ का आसोज सुदी १४।

महाराजा मानसिंहजी द्वारा दिये हुए उपरोक्त प्रशंसा पत्रों से सिंघी इन्द्रराजजी की उन महान् सेवाओं पर प्रकाश पड़ता है जो उन्होंने जोधपुर-राज्य की रक्षा के लिये समय २ पर की थीं। सिंघी इन्द्रराजजी का नाम मारवाड़ के इतिहास में सदा अमर रहेगा और उन वीरों में उनकी गौरव के साथ गणना की जायगी जिन्होंने स्वदेश रक्षा के लिये अपने प्राणों का बलिदान दिया है। महाराजा मानसिंहजी ने इस वीर की प्रशंसा में जो दोहे रचे थे, उनमें भी इन्होंने इस महापुरुष की भूरि २ प्रशंसा की है। वे दोहे मारवाड़ी भाषा में हैं जिन्हें हम पाठकों के लिये नीचे देते हैं।

गेह छुटो कर गेड, सिंह जुटो फूटो समद ॥ १ ॥
अपनी भूप अरोड़, अड़िया तीनुं इन्दड़ा ॥ २ ॥
गेह सांकल गजराज, वहैरह्यो सादुलवीर ॥ ३ ॥

---

* उक्त ग्यारह जनो पर यह सन्देह किया गया था कि उन्होंने अमीरखाँ से मिलकर सिंघी इन्द्रराजजी को मरवाने का षड्यंत्र रचा था।



स्वर्गीय श्री सिंघी इन्द्रराजजी दीवान राज मारवाड़, जोधपुर।



स्वर्गीय श्री सिंघी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) दीवान, राज मारवाड़ जोधपुर।

प्रकटी बाजी बाज, अकल प्रमाणों इन्दड़ा ॥ ४ ॥
पड़तां घेरो जोधपुर, अड़तां दला अथंभ ॥ ५ ॥
आप डींगता इन्दड़ा, थें दीयो भुज थंभ ॥ ६ ॥
इन्दा वे असवारियां, उण चौहटे आम्बेर ॥ ७ ॥
धिण मंत्री जोधाणरा, जैपुर कीनी जेर ॥ ८ ॥
पोडियो किण पोशाक सूँ, जगां केड़ी जोय ॥ ९ ॥
गेह कटे हैं जीवतां, होड़ न मरता होय ॥ १० ॥
बैरी मारण मीरखां, राज काज इन्दराज ॥ ११ ॥
में तो सरणे नाथ के, नाथ सुधारे काज ॥ १२ ॥

हमने सिंघी इन्द्रराजजी के महान् जीवन पर थोड़ा सा प्रकाश डालने की चेष्टा की है। इससे पाठकों को यह भली प्रकार ज्ञात हो जायगा कि राजस्थान के राजनैतिक और सैनिक रंग मंच पर ओसवाल वीरों ने कितने बड़े २ खेल खेले हैं। इन्होंने अपनी वीरता से, अपनी दूरदर्शिता से और अपने आत्मत्याग से मारवाड़ राज्य को बड़े २ संकटों से बचाया है और मारवाड़ के नरेशों ने भी समय २ पर इनकी बहुमूल्य सेवाओं को मुक्तकंठ से स्वीकार किया है।

भण्डारी गंगारामजी

महाराजा मानसिंहजी के राज्यकाल में सिंघी इन्द्रराजजी की तरह भण्डारी गंगारामजी भी बड़े नामांकित पुरुष हुए। गंगारामजी लूणावत भण्डारी थे। संवत् १८६७ के मार्गशीर्ष बदी ७ को इन्हें दीवानगी का उच्चपद प्राप्त हुआ। इसके पहले भी इनके घराने में राज्य के दीवानगी जैसे सर्वोच्च ओहदे रहे थे। ये बड़े राजनीतिज्ञ, दूरदर्शी और वीर थे। महाराजा मानसिंहजी को जालौर से जोधपुर लाने में जिन २ महानुभावों का हाथ था उनमें ये प्रधान थे। जयपुर की चढ़ाई में जो महत्वपूर्ण कार्य्य सिंघी इन्द्रराजजी ने किया ठीक वैसा ही इन्होंनें ही किया। इन्होंनें कई युद्धों में भाग लिया और तत्कालीन मारवाड़ को बड़े २ संकटों से बचाया।

सिंघी गुलराजजी, मेगराजजी, कुशलराजजी

इन तीनों सज्जनों ने एक समय में महाराजा मानसिंहजी की बड़ी २ सेवाएँ की। महाराजा मानसिंह को जालौर के घेरे से सुरक्षित रूप से जोधपुर लाकर उन्हें राज्यासन पर प्रतिष्ठित करने में इनका

बहुत बड़ा हाथ था। यह बात महाराजा मानसिंहजी ने अपने एक खास रुक्के में स्वीकार की है। हम उस रुक्के की नकल यहाँ पर देते हैं।

श्री नाथजी

सिंघवी गुलराज, मेघराज कुशलराज सुखराज कस्य सुप्रसाद बांचजो तथा थे बाबोजी तथा भामेजीरा स्याम धरमी चाकर हो सो हमारे माने जालोर रा किला सुँ शहर पधराया ने जोधपुर रो राज सारो माने करायो श्री बंदगी थारी कदे भूलसां नहीं मारी सदा निरन्तर मरजी रेसी थारी बख्शी गिरी ने सोजत गिवाणा री हाकिमी ने गांव बीजवां बराड़ ने सुरायतो पटे है जणा मैं कदेही तफावत पाड़ां में ने मारा वंसरो होसी थांसु ने थारा वंस सुँ तफावत करे तथा मै थाने कैद ही कैद करां तो श्री जलंधरनाथ धरम करम बिचे छे श्री नवासरे राह तांबापत्र जूँ इनायेत कियो है थे वडा महाराज तथा भामेजी रा स्याम धरमी हो जणी में अणी रुक्का में लिख्यो है जण में आखरी ही ओर तरे जणी तो पे बिने लिखी गा इष्टदेव लगायत एक बार नहीं सौ बार थे धणी जमाखातर राखजो संवत् १८६० ।"

उपरोक्त पत्र से उक्त महानुभावों की महान् सेवाओं का स्पष्टतया पता लगता है।

मेहता अखेचन्दजी

मेहता अखेचन्दजी के नाम का उल्लेख भी मारवाड़ राज्य के इतिहास में कई बार आया है। आपने भी एक समय महाराजा मानसिंहजी की बहुमूल्य सेवाएँ की। जब संवत् १८५७ में तत्कालीन जोधपुर नरेश महाराजा भीमसिंहजी ने मानसिंहजी पर घेरा डालने के लिये जालोर पर अपनी फौजें भेजी और इन फौजों ने जालोर के उस सुप्रसिद्ध किले को जहाँ पर महाराजा मानसिंहजी स्थित थे घेर लिया। उस समय मेहता अखेराजजी ने महाराजा मानसिंहजी की वे सेवाएँ की जिनसे वे इतने दिनों तक अपने विरोधियों के सामने टिक सके। महाराज मानसिंहजी अपने किले में कई दिन तक घिरे रहे। इससे वहाँ पर अन्न और धन की बहुत कमी हो गई। ऐसे विकट समय में मेहता अखेचन्दजी ने एक गुप्त मार्ग द्वारा महाराजा मानसिंहजी की सेवा में रसद और धन पहुँचाना शुरू किया। इससे महाराजा मानसिंहजी को बड़ी भारी सहायता मिली और वे अधिक दिनों तक अपनी विरोधी फौजों का मुकाबिला कर सके।

जब संवत् १८६० की काती सुदी ४ को महाराजा भीमसिंहजी का स्वर्गवास हुआ और जब मानसिंहजी के सिवाय राज्य का कोई दूसरा अधिकारी न रहा तब उन्हीं सरदार तथा मुत्सुद्दियों ने जो गढ़



भण्डारी गंगारामजी दीवान, जोधपुर.

का घेरा देने में शामिल थे, महाराजा मानसिंहजी से जोधपुर चलकर राज्यासन पर विराजने की प्रार्थना की। तदनुसार मार्गशीर्ष बदी ७ को जब महाराजा मानसिंहजी किले पर दाखिल हुए तब मेहता अखेचन्दजी भी उनके साथ थे।

इसी साल माघ सुदी ५ के दिन जब महाराजा का राजतिलक हुआ तब उन्होंने मेहता अखेचन्द जी को मोतियों की कंठी, कड़ा, सिरपेंच, मन्दील आदि का सिरोपाव तथा ३५००) की रेख का नीमली नामक गाँव उनके नाम पर पट्टे कर उनका सन्मान किया। साथ ही इसी वर्धमालाई नाम का एक और गाँव आपको जागीर में दिया गया।

जब जयपुर और बीकानेर की फौजों ने जोधपुर को घेर लिया और महाराजा मानसिंहजी का अधिकार केवल किले मात्र में रह गया, उस समय मेहता अखेचन्दजी ने महाराजा की बड़ी आर्थिक सेवा की। घेरा उठ जाने के बाद महाराजा मानसिंहजी ने मेहता अखेचन्दजी को जो खास रुक्का दिया, उसमें लिखा है—

"मुहता अखेचन्द कस्य सुप्रसाद बांचजो तथा थारी बंदगी आगे जालौर दोनों घेरा री तो छे ही ने अबार इण घेरा में ही बंदगी कीवी सो आच्छी रीत मालूम है। ने रुपया ४०००००) चार लाख आसरे सरकार में आया सो दिरीज जावसी तू जमा खातर राखे सदा शुभ दृष्टि है जिणसू सिवाय रहसी संवत् १८६४ रा आसोज वदी ९"

इसके पश्चात जब अमीरखाँ को २ लाख रुपये देने की आवश्यकता हुई तब महाराजा मानसिंहजी ने इन्हें उक्त रुपयों की व्यवस्था करने के लिये निम्न लिखित पंक्तियाँ लिखीं थीं।

"अबार दोय लाख अमीरखां ने फौज अटकीजी जो आवा सो अवार को काम थाने किये चाहिजेला आ बन्दगी आद अंत ताई भूलसा नहीं सं० १८६४ आसोज वदी १३"

इसी प्रकार अमीरखाँ को पुनः रुपया चुकाने की आवश्यता पड़ने पर महाराजा मानसिंहजी ने मेहता अखेराजजी को एक बार फिर लिखा था जिसकी नकल नीचे दी जाती है।

"हर हुनर कर दोय लाख री समाधान करणों ओ काम छाती चाढ़ने कीजे तो श्रीनाथजी अबार ही सहाय करी इसो व्येंत छे जूं जालौर ढाबियाँ री जूं आ जोधपुर ढाबियाँरी सिरारी बन्दगी छे...इत्यादि"। कहने का मतलब यह है कि मेहता अखेचन्दजी ने मारवाड़ राज्य की तन, मन, धन से सहायता पहुँचा कर उसकी बहुमूल्य सेवाएँ की हैं। मारवाड़ के महाराजा आपकी महत्व के कामों में सलाह लिया करते थे। राजपुताने के सुप्रसिद्ध अंग्रेज इतिहासकार कर्नल जेम्स टाड ने आपके विषय में अपने मारवाड़ के इतिहास में निम्न आशय के वाक्य लिखे थे।

"अखैचन्दजी का सामर्थ्य बहुत बढ़ा हुआ था। दरबार को ये ही ये दीखते थे। रियासत में एक समय ये बहुत प्रबल थे।

आपकी इन सब सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराजा मानसिंहजी ने आपको संवत् १८६६ में पालकी, सिरोपाव व एक खास रुक्का इनायत कर आपकी प्रतिष्ठा को खूब बढ़ाया था"।

रावराजा रिधमलजी—आप रावराजा शाहमलजी के पुत्र थे। महाराजा मानसिंहजी के समय में आप जोधपुर राज्य के फौज बख्शी हुए। सम्वत् १८८९ में आप और मुणोत रामदासजी १५०० सवारों को लेकर अजमेर में ब्रिटिश सेना की सहायता करने गये थे। सं० १८९८ में इन्हें १६ हजार की जागीरी दी गई। इसके थोड़े ही दिनों बाद आप जोधपुर राज्य के मुसाहिब बनाये गये। महाराजा मानसिंहजी इनका बड़ा सम्मान करते थे। इन्होंने महाराजा से प्रार्थना कर ओसवाल समाज पर लगनेवाले सरकारी कर को माफ़ करवाया था। आपने बहुत प्रयत्न करके पुष्करराज के कसाई खाने को बन्द करवाया। जिसके लिये अब भी यह कहावत मशहूर है—"राव मिटायो रिधमल, पुष्कर रो प्रायश्चित।"

सम्वत् १८९६ में इन्होंने जागीरदारों और जोधपुर दरबार के बीच कुछ शर्तें तय की जिनका व्यवहार अब तक हो रहा है।

महाराजा मानसिंहजी के पुत्र बाल्यकाल ही में गुजर गये थे और उनके दूसरी सन्तान न थी। अतएव राज्य गद्दी के लिये वारिस गोद लाने का विचार होने लगा। इस कार्य में रावराजा रिधमलजी ने बड़ी दिलचस्पी ली और महाराजा तख्तसिंहजी को गोद लाने में आपका खास हाथ था।

महाराजा मानसिंहजी के समय में और भी कई ओसवाल मुत्सद्दियों ने बड़े २ काम किये उन सब का विस्तृत विवरण अगले अध्यायों में कौटुम्बिक इतिहास, (Family History) में दिया जायगा।

इसके आगे चलकर महाराजा तख्तसिंहजी और महाराजा जसवन्तसिंहजी के जमाने में भी कुछ ओसवाल सज्जनों ने दीवानगिरी और फौज की बख्शीगिरी आदि बड़े २ ओहदों पर बड़ी सफलता के साथ कार्य किया। इन महानुभावों में मेहता विजयसिंहजी और सींघी बछराजजी का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

मेहता विजयसिंहजी राजनीतिज्ञ और वीर थे। आपने कई छोटी-बड़ी लड़ाइयों में हिस्सा लिया। सुप्रसिद्ध डूँगरसिंह, जवाहरसिंह को दबाने में आपका प्रधान हाथ था। इस सम्बन्ध में श्री दरबार ने और तत्कालीन ए० जी० जी० महोदय ने अपने पत्रों में आपकी बड़ी प्रशंसा की है।

सम्वत् १९१४ (ईसवी सन् १८५७) के बलवे का हाल हमारे पाठक भली प्रकार जानते होंगे। इस समय भारत में चारों ओर विद्रोहाग्नि फैल रही थी। मारवाड़ में भी कई जगह यह आग जल रही

थी। मारवाड़ के आऊवा नामक स्थान पर विद्रोह हुआ। इस पर मेहता विजयसिंहजी को उक्त स्थान पर चढ़ाई करने के लिए श्री दरबार का हुक्म हुआ। आपने आज्ञा पाते ही आऊवे पर फौजी चढ़ाई कर दी। आपकी सहायता के लिये ब्रिटिश सेना भी आ गई। कहने की आवश्यकता नहीं कि आपने वहां के विद्रोह को दबा दिया और पूर्ण शान्ति स्थापित कर दी। इसके बाद आपने आसोप, आलणियावास गूलर आदि स्थानों पर चढ़ाई कर वहाँ के ठाकुरों को वश में किया। इससे आपकी वीरता की चारों तर्फ बड़ी प्रशंसा होने लगी।

आप सिर्फ जोधपुर दरबार ही के द्वारा सम्मानित नहीं हुए। राजस्थान के अन्य नरेश भी आपको बहुत मानते थे। सम्वत् १९२० में जयपुर दरबार ने आपको हाथी, सिरोपाव और पालकी प्रदान कर आपका बड़ा सन्मान किया।

सम्वत् १९२१ में आपकी बहुमूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर श्री जोधपुर दरबार ने आपको नागोर प्रगने का राजोद नामक गाँव जागीर में प्रदान किया।

राजस्थान के नृपतियों के अतिरिक्त तत्कालीन कई बड़े २ अंग्रेजों ने आपकी कार्य-कुशलता की बड़ी प्रशंसा की है। जोधपुर के तत्कालीन पोलिटिकल एजण्ट ने आपके लिये लिखा था—"ये एक ऐसे मनुष्य हैं, जिनका निर्भयता से विश्वास किया जा सकता है। मारवाड़ी अफसरों में इनके समान बहुत कम आदमी पाये जाते हैं"। इसके बाद ही ईसवी सन् १८६५ की ४ जून को तत्कालीन पोलिटिकल एजण्ट मि० एफ० एफ० निकलसन ने लिखा था—

'ये बड़े बुद्धिमान और आदर्श देशी सज्जन हैं। इन्हें मारवाड़ की पूरी जानकारी है।'

मतलब यह कि अपने समय में रायबहादुर मेहता विजयसिंहजी बड़े नामाङ्कित मुत्सद्दी होगये। इनका विस्तृत परिचय आगे चलकर आपके इतिहास में दिया जा रहा है।

आगे चलकर महाराजा जसवन्तसिंहजी और महाराजा सरदारसिंहजी के जमाने में भी कुछ अच्छे मुत्सद्दी हुए, जिनका विवेचन यथावसर किया जायगा।

इस लेख के पढ़ने से पाठकों को यह भलीभान्ति ज्ञात हुआ होगा कि जोधपुर राज्य के लिये ओसवाल मुत्सद्दियों ने कितने बड़े २ कार्य किये, राजनीति के मैदान में कितने जबर्दस्त खेल खेले तथा अपनी जन्मभूमि की रक्षा के लिये रण के मैदान में बहादुरी के कितने बड़े २ हाथ बतलाये। मारवाड़ का सच्चा इतिहास इनके महान कार्यों के लिये सदा श्रद्धाञ्जली अर्पण करता रहेगा। मारवाड़ के इतिहास का कोई अध्याय—कोई पृष्ट—ऐसा नहीं है, जिनमें इनके महान् कार्यों की गौरव गाथा न हो।

उदयपुर

मारवाड़ की रंगस्थली में ओसवाल वीरों और राजतांत्रिज्ञों ने अपने जो अद्भुत् कारनामें दिखलाये हैं और राज्य की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बाजी लगाकर, स्वार्थ-त्याग के जिन अपूर्व उदाहरणों को इतिहास में अपनी अमर कीर्ति के रूप में अंकित कर रहे हैं उनका थोड़ा सा परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। आगे हम यह बतलाना चाहते हैं कि ओसवाल नर पुँगवों ने मारवाड़ की लीला-स्थली के अतिरिक्त और भी राजपूताने की भिन्न २ रियासतों में अपने महान व्यक्तित्व को किस प्रकार प्रदर्शित किया था। अगर हम कहना चाहें तो कह सकते हैं कि मारवाड़ के पश्चात् मेवाड़ ही एक ऐसा प्रांत है जहाँ पर ओसवाल जाति ने अपनी दिव्य सेवाओं का खूब प्रदर्शन किया। स्वाधीनता की लीला स्थली वीर प्रसवा मेवाड़ भूमि के इतिहास में ओसवाल जाति के वीरों का नाम भी स्थान २ पर अमर कीर्ति के साथ चमक रहा है। अपने देश और अपने स्वामी के पीछे अपने सर्वस्व को निछावर कर देने वाले त्याग मूर्ति भामाशाह, संघवी दयालदास, मेहता अगरचंद, मेहता सीताराम, इत्यादि महापुरुषों के नाम आज भी मेवाड़ के इतिहास में अपनी स्मृति को ताज़ा कर रहे हैं। अब नीचे बहुत ही संक्षिप्त में हम इन प्रतापी पुरुषों का परिचय पाठकों के सम्मुख रखने की कोशीश कर रहे हैं।

महाराणा हमीरसिंह और मेहता जालसी

चित्तौड़ के प्रसिद्ध महाराणा हमीर (प्रथम) उस समय में अवतीर्ण हुए थे जब कि भारत के राजनैतिक गगन-मण्डल में काले बादल मँडरा रहे थे। चारों ओर अशान्ति का दौर दौरा हो रहा था। राजपूताने के बहुत से राज्य मुसलमानों के शासन में चले गये थे। ठीक उसी समय मेवाड़-भूमि भी खिलजी बादशाह अलाउद्दीन द्वारा फतह की जा चुकी थी। चित्तौड़ का प्रथम साका समाप्त हो गया था। इस साके में वीर-प्रसवा मेवाड़-मेवाड़ भूमि के कई नर रत्न अपने अद्भुत पराक्रम और अलौकिक शौर्य्य का परिचय देते हुए, अपने देश अपनी जाति एवम् अपने कुटुम्ब की रक्षा के लिये, अपने प्राणों की आहुति प्रदान कर चुके थे। केवल केलवाड़े के आस पास के प्रान्त को छोड़कर समूचा मेवाड़ अलाउद्दीन खिलजी की अधीनता में जा चुका था और वहाँ का शासन सोनगरा मालदेव कर रहा था। मेवाड़ निवासी चारों ओर बिखर रहे थे। संगठन का भयंकर अभाव हो रहा था। ऐसी भयंकर परिस्थिति में महाराणा हम्मीरसिंह को केवल मेवाड़—उद्धार की चिन्ता सताया करती थी। वे हमेशा इसी विचार में निमग्न रहा करते थे कि मेवाड़ भूमि किस प्रकार स्वतन्त्र हो, किस प्रकार उसका उद्धार हो। अस्तु।

महाराणा हमीर स्वयं बड़े वीर एवम् पराक्रमी व्यक्ति थे। उनमें साहस था, वीरता थी और थी कार्य्य करने की अद्भुत क्षमता। उन्होंने सारे मेवाड़ में ऐलान करवा दिया था कि "जो व्यक्ति अपने सच्चे हृदय से मेवाड़-भूमि का उद्धार करना चाहें, उन्हें चाहिये कि मेवाड़ के ग्रामों को जन शून्य करके केलवाड़ा चले आयँ। यदि किसी व्यक्ति ने महाराणा की आज्ञा का उलंघन किया तो शत्रु समझा जाकर यम-पुर पहुँचा दिया जायगा।" इस वक्तव्य का मेवाड़ के वीर निवासियों पर बहुत प्रभाव पड़ा एवम् वे धीरे धीरे महाराणा के झंडे के नीचे आ खड़े हुए। महाराणा का उत्साह चमक उठा, उन्होंने शीघ्र ही सेना का संगठन करना प्रारम्भ किया। इसी समय चित्तौड़ के शासक मालदेव ने अपनी पुत्री का विवाह महाराणा के साथ करने की प्रार्थना की। कहना न होगा कि महाराणा ने प्रार्थना स्वीकार करली एवम् उनका माल-देव की पुत्री के साथ विवाह होगया। कर्नल टाड साहब का कथन है कि "अपनी नव विवाहिता पत्नि के कहने से महाराणा ने दहेज में जालसी मेहता को माँग लिया। ये जालसी मेहता बड़े बुद्धिमान एवम् राजनीतिज्ञ पुरुष थे।" ये ओसवाल जाति के भणसाली गौत्रिय सज्जन थे।

जब वीरता एवम् पराक्रम के साथ राजनीति एवम् बुद्धिमानी का सहयोग हो जाता है तब विजय-लक्ष्मी हाथ जोड़े हुए सामने खड़ी रहती है। यहाँ भी यही हुआ।

एक समय का प्रसंग है कि महाराणा हमीर के पुत्र लक्षसिंह को, जो आगे चल कर महाराणा लाखा के नाम से प्रसिद्ध हुए, चित्तौड़ के देवी-देवताओं की अप्रसन्नता को मिटाने के लिये पूजा करने चित्तौड़ जाना पड़ा। कहना न होगा कि इस अवसर पर चतुर जालसी मेहता भी साथ गये। चित्तौड़ जाकर मेहता जालसी ने धीरे धीरे वहाँ के सरदारों को मालदेव के खिलाफ उभारना प्रारम्भ किया। जब उसे विश्वास हो गया कि हमारे पक्ष में बहुत से सरदार हो गये हैं तब उसने महाराणा को खानगी तौर पर चित्तौड़ आने के लिये लिख भेजा। कहना न होगा कि ठीक अवसर पर महाराणा चित्तौड़ पहुँचे। युक्ति और योजनानुसार उन्हें चित्तौड़ का दरवाजा खुला मिला। फिर क्या था, बात की बात में तलवारें चम-कने लगीं। घनघोर युद्ध प्रारम्भ हो गया। चारों ओर भयंकर मारकाट मच गई। अंत में विजय श्री महाराणा के हाथ लगी। चित्तौड़ के वास्तविक अधिकारी का उस पर अधिकार हो गया।

प्रसिद्ध इतिहास-वेत्ता महा महोपाध्याय पं० गौरीशंकरजी ओझा अपने राजपूताने के इतिहास में लिखते हैं कि "चित्तौड़ का राज्य प्राप्त करने में हमीर को जाल (जालसी) मेहता से बड़ी सहायता मिली। जिसके उपलक्ष्य में उसने उसे अच्छी जागीर दी और प्रतिष्ठा बढ़ाई।"

महाराणा कुम्भ और ओसवाल मुत्सुद्दी

महाराणा हमीर के पश्चात् महाराणा कुम्भ के समय में भी कई ओसवाल मुत्सुद्दी ऐसे हुए जिन्होंने मेवाड़ राज्य की बड़ी २ सेवाएँ कीं। इनमें से वेला भण्डारी गुणराज और रतनसिंह के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। रतनसिंह जी ने गोड़वाड़ के राणकपुर नामक स्थान पर सुप्रसिद्ध जैन मन्दिर बनवाया। जिसका उल्लेख धार्मिक प्रकरण में दिया जावेगा।

इसी प्रकार राणा साँगा के समय में सुप्रसिद्ध कर्माशाह के पिता तोलाशाह, उनके पश्चात् राणा रतनसिंह के समय में शत्रुञ्जय के उद्धार कर्ता सुप्रसिद्ध कर्माशाह दीवान रहे। इनका गोत्र राजकोठारी था। इनका भी विशेष परिचय इस ग्रन्थ के धार्मिक प्रकरण में दिया जावेगा।

महाराणा उदयसिंह और ओसवाल मुत्सुद्दी

स्वामिभक्त आशाशाह—राणा साँगा के द्वितीय पुत्र महाराणा रतनसिंह के पश्चात् मेवाड़ की गद्दी पर राणा विक्रमादित्य बैठे। मगर सरदारों के साथ इनकी अनबन रहने से बहुत से सरदारों ने मिलकर इन्हें गद्दी से उतार दिया। इनके पश्चात् इनका भाई दासी पुत्र बनवीर गद्दी पर बैठा, इसकी प्रकृति बहुत कुटिल थी। उस समय मेवाड़ के भावी राणा उदयसिंह बिल्कुल बालक थे। बनवीर ने इन्हें मारने का षड्यन्त्र रचा। जब कुमार उदयसिंह भोजन करके सो गये, और उनकी पन्ना नामक धाय उनकी सेवा कर रही थी, उसी समय रात्रि में रणवास में घोर आर्तनाद का शब्द सुनाई पड़ा। जिसे सुनकर पन्ना धाय डर उठी। इतने ही में बारी नामक नाई ने आकर उससे कहा कि बनवीर ने राणा विक्रमादित्य को मार डाला। यह सुनते ही बालक उदयसिंह की अनिष्ट आशंका से धाय का हृदय काँप उठा। उसने तत्काल १५ वर्ष के बालक उदयसिंह को वहाँ से चतुराई पूर्वक निकाल दिया और उसके स्थान पर अपने लड़के को लिटा दिया। इतने ही में बनवीर वहाँ आ पहुँचा और उसने उदयसिंह के धोखे में धाय के पुत्र को कत्ल कर दिया।

इसके पश्चात् पन्ना धाय उदयसिंह को लेकर रक्षा के लिये कई स्थानों पर गई, मगर उस विपत्ति के समय किसी ने राजकुमार को शरण देना स्वीकार न किया। तब वह कुम्भलमेरु के किलेदार ओसवाल जातीय आशाशाह देपरा के पास गई, पहले तो आशाशाह ने शरण देने से इन्कार कर दिया। मगर जब उसकी माता को बात मालूम हुई तब उसने इस कायरता के लिये अपने पुत्र को बहुत फटकारा, और क्रोध में आकर उसे मारने को झपटी तब आशाशाह ने उसके पैर पकड़ लिये, और उदयसिंह को बहुत

सम्मान के साथ शरण दी, और उसे अपना भतीजा कह कर प्रसिद्ध किया। जब कुमार उदयसिंह होशियार हो गया तब वीरवर आशाशाह ने कई सरदारों की मदद से उसे उसका राज सिंहासन दिला दिया और इस महान् पुरुष ने इस प्रकार से मेवाड़ के नष्ट होते वंश को बचा लिया।

मेहता चीलजी

यह घटना उस समय की है जब कि बनवीर ने अपने षड्यंत्रों से महाराणा के स्थान पर चित्तौड़ में अपना अधिकार स्थापित कर लिया था और महाराणा उदयसिंहजी को चित्तौड़ छोड़ने के लिये बाध्य होना पड़ा था। इसी समय चित्तौड़गढ़ के किलेदार जालसी मेहता के वंशज चीलजी थे। चीलजी मेहता बड़े बुद्धिमान् स्वामिभक्त और वीर प्रकृति के पुरुष थे। इन्हें बनवीर की अधीनता बहुत खटक रही थी। ये कोई सुयोग्य अवसर की प्रतिक्षा में थे कि जिससे फिर चित्तौड़ पर महाराणा का अधिकार हो जाय।

उधर महाराणा उदयसिंह अर्वली में जाकर एक स्थान को पसंद कर वहीं रहने लगे। यही स्थान आजकल उदयपुर के नाम से प्रसिद्ध है। महाराणा के साथ आने वाले सरदारों के उत्साह से इन्होंने सेना का संगठन करना प्रारम्भ किया। अपने कतिपय सरदारों के साथ कूंच कर रास्ते में बनवीर के कई गाँवों को हस्तगत करते हुए महाराणा चित्तौड़ पहुँचे। मगर चित्तौड़ के किले को विजय करना हंसी-खेल नहीं था साथ ही इनके पास तोपखाने का भी उचित प्रबन्ध नहीं था। ऐसी परिस्थिति में किले को तोड़ना कठिन ही नहीं वरन असंभव था। कहना न होगा कि इस समय कुम्भलगढ़ के किलेदार वीर आशाशाह ने चीलजी मेहता को अपनी स्वामि-भक्ति के लिये कहा और कहा कि यही समय वास्तविक सेवा का है। अस्तु।

यह हम ऊपर लिखही चुके हैं कि मेहता चीलजी किसी सुयोग्य अवसर की प्रतिक्षा में थे। अतएव फिर क्या था। उन्होंने युक्ति रचकर बनवीर से कहा कि महाराज किले में खाद्य-द्रव्य बहुत कम रह गया है अतएव यदि अज्ञा करें तो रात के समय किले का दरवाज़ा खोलकर सामग्री मंगवाली जाय। बनवीर को यह युक्ति सोलह आने जँच गई। यह देख मेहता चीलजी ने सारे समाचार गुप्त रूप से प्रसिद्ध स्वामिभक्त आशाशाह को लिख भेजे।

योजनानुसार ठीक समय पर किले का दरवाज़ा खोल दिया गया। उधर महाराणा के साथी वीर राजपूत सरदार एवम् योद्धा तैयार थे ही। बस, फिर क्या था, बड़ी शीघ्रता से ये लोग हजार पाँच सौ भैंसों एवम् बैलों पर सामान लाद कर किले के फाटक में घुस गये। दर्वाजे पर अधिकार कर हमला बोल दिया। चारों ओर घमासान युद्ध प्रारम्भ हो गया। बनवीर हक्का-बक्का हो गया। केवल भागने के सिवा

उसके पास और कोई मार्ग उसकी रक्षा का न था। अतएव वह अपने बाल-बच्चों को लेकर लाखोटा की बारी से भाग गया। इस प्रकार मेहता चीलजी की बुद्धिमानी एवम् चतुराई से चित्तौड़ पर फिर से शुद्ध शिशोदिया वंश का राज्य कायम हो गाया।

भारमलजी कावड़िया

भारमलजी ओसवाल जाति के कावड़िया गौत्रीय सज्जन थे। ये मेवाड़ उद्धारक भामाशाह के पिता थे। शुरू २ में ये अलवर से बुलाये जाकर रणथम्भोर के किलेदार नियुक्त हुए। राणा उदयसिंह के शासनकाल में ये उनके प्रधान पद पर प्रतिष्ठित हुए। किलेदार से क्रमशः प्रधान पद पर पहुँचना इस बात को सूचित करता है कि ये बड़े बुद्धिमान, स्वामिभक्त और राजनीति कुशल थे।

सर्वस्व त्यागी भामाशाह

इतिहास प्रसिद्ध त्यागमूर्ति वीरवर भामाशाह का नाम न केवल मेवाड़ में प्रत्युत सारे भारतवर्ष में इतना प्रसिद्ध हो गया है कि उनके सम्बंध में कुछ भी लिखना सूर्य्य को दीपक दिखलाने के सदृश निरर्थक है। स्वामि-भक्ति और देश-भक्ति का जो आदर्श उदाहरण इस पुरुष पुँगव ने रखा था वह इतिहास के अन्दर बड़ा ही अद्भुत है। राजस्थान केशरी स्वाधीनता के दिव्य पुजारी प्रातः स्मरणीय महाराणा प्रताप के नाम को आज भारतवर्ष में कौन नहीं जानता। माता के इस दिव्य पुजारी ने, स्वाधीनता के सच्चे उपासक ने अपने देश की आजादी के लिये, अपने आत्म गौरव की रक्षा के लिये; अपने राज्य, अपनी दौलत और अपने एशो-आराम को मुट्ठीभर धूल की तरह विसर्जन कर दिया था। आजादी का यह मतवाला उपासक अपने देश की स्वाधीनता के लिये जंगल २ और रास्ते २ की खाक को छानता फिरता था। इन भयंकर विपत्तियों के अन्दर यह वीरात्मा हमेशा पहाड़ की तरह अटल रहा, मगर संयोग की बात है एक समय ऐसा आया जब कि भयंकर से भयंकर विपत्तियों में भी अटल रहने वाले इस वीर को भी एक छोटी सी घटना ने विचलित कर दिया, इसके हृदय को चूर २ कर डाला। बात यह हुई कि एक दिन जंगली आटे की रोटियाँ इन लोगों के लिये बनाई गई। इन रोटियों में से प्रत्येक व्यक्ति के हिस्से में एक २ रोटी-आधी सुबह और आधी शाम के लिये—आई। राणाजी की छोटी लड़की अपने हिस्से की उस आधी रोटी को खा रही थी कि इतने में एक जंगली बिलाव आया और उसके हाथ से रोटी छीन ले गया। जिससे वह लड़की एक दम चीत्कार कर बैठी और भूख के मारे करुण-क्रंदन करने लगी। इस आकस्मिक घटना से महाराणा का



महाराणा प्रताप और मेवाड़-उद्धारक भामाशाह.

वज्र तुल्य हृदय भी द्रवित हो उठा और जिसने विपत्ति के लहराते हुए दरिया में भी अपने आपको रक्षित रखा था उसने उपरोक्त घटना के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया। महाराणा ने इसी समय मेवाड़ को छोड़ने का दृढ़ संकल्प कर लिया और उसे छोड़ने की तैयारी करने लगे।

इस समय महाराणा के प्रधान के पद पर ओसवाल जाति के कावड़िया गौत्रीय वीरवर भामाशाह प्रतिष्ठित थे। जब भामाशाह ने अपने स्वामी के देश त्याग की बात सुनी और यह भी सुना कि धनाभाव के कारण ही वे देश त्याग कर रहे हैं तो उनसे न रहा गया और वे अपने जीवन भर के सारे संचित द्रव्य को लेकर महाराणा के चरणों में उपस्थित हुए। महाराणा के पैर पकड़ कर उन्होंने उनसे वह धन ग्रहण करने की ओर देश न छोड़ने की प्रार्थना की। जब महाराणा को उस धन के ग्रहण करने में कुछ हिचकिचाहट होने लगी तो उन्होंने अत्यन्त नम्रता के साथ महाराणा से कहा कि "अन्नदाता यह शरीर और यह धन यदि अपने स्वामी और अपने देश के लिये काम आय तो इससे बढ़कर इसका सदुपयोग दूसरा नहीं हो सकता। इसे आप अपना ही समझें और निःसंकोच हो ग्रहण करें। कर्नल जेम्स टॉड के कथनानुसार यह धन इतना था कि जिससे २५ हजार सैनिकों का १२ वर्ष तक निर्वाह हो सकता था। कहना न होगा कि इस विशाल सहायता के पाते ही राणा प्रताप ने अपनी बिखरी हुई शक्ति को बटोर कर रणभेरी बजा दी और बहुत शीघ्र अपने खोये हुए राज्य के बहुत बड़े हिस्से को (मांडलगढ़ और चितौड़ को छोड़कर सारा मेवाड़) पुनः अपने अधिकार में कर लिया। इन लड़ाइयों में भामाशाह की वीरता के हाथ देखने का भी महाराणा को खूब अवसर मिला और उससे वे बड़े प्रसन्न हुए। इसी समय से महात्मा भामाशाह की गिनती मेवाड़ के उद्धार कर्ताओं में होने लगी।

इस घटना को आज प्रायः साढ़े तीन सौ वर्ष होने को आ गये मगर आज भी मेवाड़ में भामाशाह के वंशज उनके नाम पर सम्मान पा रहे हैं। केवल मेवाड़ में ही नहीं प्रत्युत सारे भारतवर्ष के इतिहास में इस महापुरुष का नाम बड़े गौरव के साथ अङ्कित किया जाता है। मेवाड़ राजधानी उदयपुर में भामाशाह के वंशजों को पंच पंचायती और अन्य विशेष अवसरों पर सर्व प्रथम गौरव दिया जाता है। कुछ वर्ष पूर्व जाति के लोगों ने भामाशाह के वंशजों की इस परम्परागत प्रतिष्ठा को दूर करने की कोशिश की थी मगर जब यह बात तत्कालीन महाराणा शम्भूसिंहजी को मालूम हुई तो उनको भामाशाह के वंश गौरव की रक्षा के लिये एक फरमान निकालना पड़ा था जो इस प्रकार है।

श्रीरामो जयति

श्रीगणेशजी प्रसादात्, श्री एकलिंगजी प्रसादात्

(भाले का निशान)

सही

स्वति श्री उदयपुर सुँमे सूथानेक महाराजाधिराज महाराणाजी श्री सरूपसिंघजी आदेशात कावड्या जैचन्द कुनणो वीरचन्द कस्य अप्रन् थारा वडाँवा सा माने कावड्यो ई राज म्हें साम प्रमासु काम चाकरी करी जी की मरजाद ठेठसूं य्याह म्हाजना की जातम्ह बावनी त्था चौका को जीमण वा सीग पूजा होवे जीम्हे पहेली तलक थारे होतो हो सी अगला नगरसेठ वेणीदास करसो कधो अर वे दर्यापत तलक थारे नहीं करना दीदो आबरू सालसी दीखी सो नगे कर सेठ पेमचन्द ने हुकम कीदो सो वी भी अरज करी अर न्यात म्हे हकसर मालूम हुई सो अत्र तलक माफक दसतुर के थे थारो करारदा जाजो आगा सु थारे बंसको होवेगा जीके तलक हुवा जावेगा पंचाने वी हुकम कर दीयो है सो पेली तलक थारे होवेगा। प्रवानगी मेहता सेरसीघ संवत् १९१२ जेठ सुद १५ बुधे ×

मतलब यह कि महाजनों की जाति में बावनी (समस्त जाति का भोज) तथा चौके का भोजन व सिंह पूजा में पहला तिलक जो कि हमेशा से भामाशाह के वंशजों को होता आया है उन्हीं के वंशजों को होता रहे।

मेवाड़ के अप्राप्य ऐतिहासिक ग्रंथ "वीर विनोद" में पृष्ठ २५१ पर लिखा है कि भामाशाह बड़ी जुरअत का आदमी था। यह महाराणा प्रताप के शुरू समय से महाराणा अमरसिंह के राज्य के २॥ तथा ३ वर्ष तक प्रधान रहा। इसने कई बड़ी २ लड़ाइयों में हजारों आदमियों का खर्चा चलाया। यह नामी प्रधान संवत् १६५६ की माघ शुक्ला ११ को ५१ वर्ष और सात माह की उमर में परलोक को सिधारा। इसका जन्म संवत् १६०४ अषाढ शुक्ला १० (हि० ९५४ तारीख ९ जमादियुलअव्वल ई० स० १५४७ तारीख २८ जून) सोमवार को हुआ था। इसने मरने के एक दिन पहले अपनी स्त्री को एक बही अपने हाथ की दी और कहा कि इसमें मेवाड़ के खजाने का कुल हाल लिखा हुआ है जिस वक्त तकलीफ हो उस समय यह बही महाराणा की नज़र करना। यह खैरख्वाह प्रधान इस बही के लिखे कुल खजाने से महाराणा अमर-

सिंह का कई वर्षों तक खर्चा चलाता रहा। मरने पर उसके बेटे जीवाशाह को महाराणा अमरसिंह ने प्रधान का पद दे दिया।" इन्हीं भामाशाह के भाई ताराचन्द हुए जो हल्दीघाटी के युद्ध तथा और भी कई युद्धों में बड़ी वीरता के साथ लड़े। भामाशाह के पुत्र जीवाशाह और उनके पुत्र अक्षयराज महाराणा अमरसिंह और कर्णसिंह के प्रधान रहे।

महाराणा राजसिंह और संघवी दयालदास

मेवाड़ के इतिहास में संघवी दयालदास का स्थान राजनैतिक और सैनिक दोनों ही दृष्टियों से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। दयालशाह का समय, वह समय था, जब रत्नगर्भा भारत वसुन्धरा की छाती पर औरंगजेब के अमानुषिक अत्याचारों का तांडव नृत्य हो रहा था। उसकी धर्मान्धता से चारों ओर हाहाकार मचा हुआ था। अबलाओं, मासूमों और बेकसों पर दिन-दहाड़े अत्याचार होते थे, धार्मिक मन्दिर जमींदोज़ किये जाते थे, मस्तक पर लगा हुआ तिलक जबान से चाट लिया जाता था और चोटी बलपूर्वक मस्तक से जुदा कर दी जाती थी। इस अत्याचार को और भी प्रबल करने के लिये उसने हिन्दुओं पर जज़िया कर लगाने का बिचार किया, जिससे सारे देश का रहा सहा असंतोष और भी प्रज्वलित हो उठा। ऐसे संकट के समय में मेवाड़ के राणा राजसिंह ने औरंगजेब को एक पत्र लिखा, जिसमें ऐसा अमानुषिक कार्य्य न करने की सलाह दी।। इससे औरंगजेब का क्रोध और भी भड़क उठा और उसने अपनी विशाल सेना के साथ मेवाड़ पर आक्रमण कर दिया। उसकी सेना ने वि० सं० १७३६ के भाद्रपद शुक्ला ८ के दिन देहली से कूँच किया। उस समय महाराणा राजसिंह के प्रधान मंत्री संघवी दयालदास थे। इस युद्ध में महाराणा राजसिंह ने जिस रण कुशलता और चतुराई के साथ औरंगजेब की विशाल सेना को पराजय दी, वह इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। यहाँ यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि इस सारी रण-कुशलता और चतुराई के अंदर मंत्री दयालदास कंधे बकंधे महाराणा राजसिंह के साथ में थे। महाराणा राजसिंह संघवी दयालदास की सेवाओं से बड़े प्रसन्न हुए और औरंगजेब के द्वारा मेवाड़ पर की गई चढ़ाई का बदला लेने के लिये संघवी दयालदास को बहुत सी सेना के साथ मालवे पर आक्रमण करने के लिये भेजा। वीर दयालदास ने किस बहादुरी और तेजस्विता के साथ उसका बदला लिया इसका वर्णन कर्नल जेम्स टॉड ने इस प्रकार किया है:—

"राणाजी के दयालदास नामक एक अत्यन्त साहसी और कार्य्य चतुर दीवान थे; मुगलों से बदला लेने की प्यास उनके हृदय में सर्वदा प्रज्वलित रहती थी उन्होंने शीघ्र चलनेवाली घुड़सवार सेना को साथ लेकर नर्मदा और बेतवा नदी तक फैले हुए मालवा राज्य को लूट लिया, उनकी प्रचण्ड भुजाओं के बल के सामने

कोई भी खड़ा नहीं रह सकता था, सारंगपुर, देवास, सरोज, माँडू, उज्जैन और चन्देरी इन सब नगरों को इन्होंने अपने बाहु-बल से जीत लिया, विजयी दयालदास ने इन नगरों को लूटकर वहाँ पर जितनी यवन सेना थी, उसमेंसे बहुतसों को मार डाला; इस प्रकार बहुत से नगर और गाँव इनके हाथ से उजाड़े गये। इनके भय से नगर-निवासी यवन इतने व्याकुल हो गये थे, कि किसी को भी अपने बन्धु बाँधव के प्रति प्रेम न रहा, अधिक क्या कहें, ये लोग अपनी प्यारी स्त्री तथा पुत्रों को भी छोड़ २ कर अपनी २ रक्षा के लिये भागने लगे, जिन सम्पूर्ण सामग्रियों के ले जाने का कोई उपाय उनकी दृष्टि न आया अन्त में उनमें अग्नि लगाकर चले गये। अत्याचारी औरंगजेब हृदय में पत्थर को बाँधकर निराश्रय राजपूतों के ऊपर पशुओं के समान आचरण करता था, आज उन लोगों ने ऐसे सुअवसर को पाकर उस दुष्ट को उचित प्रतिफल देने में कुछ भी कसर नहीं की, संघवी दयालदास ने हिन्दू-धर्म से वैर करने वाले बादशाह के धर्म से भी पल्टा लिया। काज़ियों के हाथ पैरों को बाँधकर उनकी दाढ़ी मूँछों को मुंडा दिया और उनके कुरानों को कुए में फेंक दिया। दयालदास का हृदय इतना कठोर हो गया था कि, उन्होंने अपनी सामर्थ्य के अनुसार किसी भी मुसल्मान को क्षमा नहीं किया। तथा मुसल्मानों के राज्य को एक वार मरुभूमि के समान कर दिया, इस प्रकार देशों को लूटने और पीड़ित करने से जो विपुल धन उन्होंने इकट्ठा किया, वह अपने स्वामी के धनागार में दे दिया और अपने देश की अनेक प्रकार से वृद्धि की थी।"

"विजय के उत्साह से उत्साहित होकर तेजस्वी दयालदास ने राजकुमार जयसिंह के साथ मिलकर चित्तौड़ के अत्यन्त ही निकट बादशाह के पुत्र अजीम के साथ भयंकर युद्ध करना आरम्भ किया। इस भयंकर युद्ध में राठोड़ और खीची वीरों की सहायता से वीरवर दयालदास ने अजीम की सेना को परास्त कर दिया, पराजित अजीम प्राण बचाने के लिये रण थंभोर को भागा; परन्तु इस नगर में आने के पहले ही उसकी बहुत हानि हो चुकी थी, कारण कि विजयी राजपूतों ने उसका पीछा करके उसकी बहुत सी सेना को मार डाला। जिस अजीम ने एक वर्ष पूर्व चित्तौड़ नगरी का स्वामी बन अकस्मात् उसको अपने हाथ में कर लिया था, आज उसको उसका उचित फल दिया गया"।*

वीर दयालदास ने इन युद्धों के सिवा और भी कितने ही युद्ध किये। उसकी बहादुरी और राजनीति कुशलता से महाराणा राजसिंह बड़े प्रसन्न रहते थे। इन सिंघवी दयालदास के हस्ताक्षरों का राणा राजसिंह का एक आज्ञापत्र कर्नल टाड ने अंग्रेजी राजस्थान के परिशिष्ठ नं० ५ पृष्ट ६९७ में अंकित किया है, जिसका मतलब इस प्रकार है:—

---

* टाड राजस्थान द्वितीय खण्ड अध्याय बारहवां पृष्ठ ३६७, ३६८।

"महाराणा श्री राजसिंह मेवाड़ के दस हजार गाँवों के सरदार, मन्त्री और पटेलों को आज्ञा देता है, सब अपने २ पद के अनुसार पढ़ें।

१—प्राचीन काल से जैनियों के मन्दिरों और स्थानों को अधिकार मिला हुआ है, इस कारण कोई मनुष्य उनकी सीमा में जीव-बध न करे। यह उनका पुराना हक़ है।

२—जो जीव नर हो या मादा, वध होने के अभिप्राय से इनके स्थान से गुजरता है वह अमर हो जाता है।

३—राजद्रोही, लुटेरे और कारागृह से भागे हुए महा अपराधी को भी जो जैनियों के उपासरे में शरण ग्रहण कर लेगा, उसको राज कर्मचारी नहीं पकड़ेंगे।

४—फसल में कूंची (मुट्ठी), कराना की मुट्ठी, दान की हुई भूमि, धरती और अनेक नगरों में उनके बनाए हुए उपासरे कायम रहेंगे।

५—यह फरमान यति मान की प्रार्थना पर जारी किया गया है, जिसको १५ बीघे धान की भूमि के और २५ बीघे मालेटी के दान किये गये हैं। नीमच और निम्बाहेड़ा के प्रत्येक परगने में भी हरएक जती को इतनी ही पृथ्वी दी गई है। अर्थात् तीनों परगनों में धान के कुल ४५ बीघे और मालेटी के ७५ बीघे।

इस फरमान को देखते ही पृथ्वी नाप दी जाय और दे दी जाय और कोई मनुष्य जतियों को दुःख नहीं दे, बल्कि उनके हक्कों की रक्षा करे। उस मनुष्य को धिक्कार है जो उनके हक्कों को उलंघन करता है। हिन्दू को गौ और मुसलमान को सुवर और मुदारी कसम है। संवत् १७४९ महा सुदी ५ ई० सं० १६९३। शाह दयाल मन्त्री।

इन्हीं दयालशाहजी ने राजसमंद के पास वाली पहाड़ी पर एक किलेनुमा श्रीआदिनाथजी का भव्य मन्दिर बनवाया जिसका विवरण धार्मिक अध्याय में दिया जायगा।

मेहता अगरचन्दजी

जिस समय महाराणा अरिसिंहजी और महाराणा हमीरसिंहजी मेवाड़ के राजनैतिक गगन में अवतीर्ण हुए थे, उस समय भारतवर्ष का राजनैतिक वातावरण धुआँधार हो रहा था। सारे देश के अन्तर्गत जिसकी लाठी उसकी भैंस (Might is right) वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। समस्त भारत की राष्ट्रीयता धूलधानी हो रही थी; सब से बड़े अफ़सोस की बात यह थी कि उस सारे उपद्रव मय वायुमण्डल के अन्दर उच्च नैतिकता का एक जर्रा भी बाकी न रहा था। जातियाँ सब कुछ खो देती हैं, उनकी

स्वतन्त्रता नष्ट हो जाती है; उनकी राष्ट्रीयता भंग हो सकती है; उनका आत्मसम्मान भी चला जाता है मगर यदि उनके अन्दर नैतिकता का कोई अंश शेष रह जाता है तो वह उस नैतिकता के बल से इन सब खोई हुई चीज़ों को एक जोरदार धक्के के साथ पुनः प्राप्त कर लेती हैं। मगर जो जाति अपनी नैतिकता को खो चुकती है उसके भविष्य के अन्दर प्रकाश की एक रेखा भी बाकी नहीं रह जाती; उसका सर्वस्व चला जाता है। भारतीय जातियों का भी ठीक यही हाल था। वे अपनी नैतिकता को खो बैठी थीं। सारे देश में कोई भी ऐसी बलवान शक्ति का अस्तित्व शेष न था, जो देश के वातावरण को एकाधिपत्य में रख सके। देश की शान्ति स्वप्नवत हो गई थी; राजा लोग एक दूसरे के खून के प्यासे हो रहे थे औरंगजेब के मरते ही मुगल साम्राज्य के तख्त के पाये जीर्ण हो गये, जिसका लाभ उठा कर दक्षिण में मरहठा लोग शिवाजी के महान् आदर्श को भूल कर अपनी २ स्वार्थ लिप्सा को चरितार्थ करने के लिये लूटमार मचा रहे थे; दूसरी ओर होलकर और सिंधिया अपने २ राज्य विस्तार की चिन्ता में यत्र-तत्र आक्रमण कर रहे थे। तीसरी ओर राजपूताने के राजा अपनी सारी संगठन शक्ति को खोकर प्रतिहिंसा की आग में बावले हो रहे थे; चौथी ओर पिण्डारी दल अपनी भयंकर लूटमार से जनता के अमन आमान को खतरे में डाले हुए था और इन सब से ऊपर इन सब लोगों की कमजोरी और पारस्परिक फूट व वैमनस्यता का फ़ायदा उठा कर बुद्धिमान अंग्रेज़ अपनी राज्य-सत्ता का विस्तार करने में लगे हुए थे।

ऐसी भीषण परिस्थिति के अन्तर्गत ई० सन् १७६२ में महाराणा अरिसिंहजी सिंहासनारूढ़ हुए। आपका मिजाज बहुत तेज होने के की वजह से आपके विरोधियों की संख्या शीघ्र बढ़ गई। सलूम्बर, बीजोलिया, आमेर तथा बदनोर को छोड़ कर प्रायः मेवाड़ के सारे सरदार इनके खिलाफ हो गये और इन सरदारों ने महाराणा के खिलाफ सिंधिया को निमन्त्रित किया। एक बार तो अरिसिंहजी की सेना ने सिंधिया की सेना को परास्त कर दिया मगर दूसरी बार फिर सिंधिया ने आक्रमण किया और इस बार मेवाड़ की सेना पराजित हुई। अरिसिंहजी ने ६४ लाख रुपया सिंधिया को देने का इकरार करके अपना पिंड छुड़ाया। इस रकम में से ३३ लाख रुपया तो किसी प्रकार महाराणा ने नकद दे दिया और शेष के लिये जावद, जीरण, नीमच आदि परगने सिंधिया के यहाँ पर गिरवे रख दिये। इसी समय होलकर ने भी निम्बाहेड़े का परगना ले लिया। इस प्रकार मेवाड़ का बहुत उपजाऊ और कीमती हिस्सा मेवाड़ से निकल गया। ऐसे विकट समय में मेहता अगरचन्दजी को महाराणा अरिसिंहजी ने अपना दीवान बनाया और एक बहुत बड़ी जागीर के द्वारा उनका सम्मान किया। मेहता अगरचन्दजी बड़े स्वामिभक्त और कर्त्तव्य परायण व्यक्ति थे। जिस प्रकार मिलिटरी लाइन में वे अपनी बहादुरी व सैनिक शक्ति की वजह से प्रसिद्ध हुए उसी प्रकार राजनीति और शासन कुशलता के अन्दर उन्होंने अपने गम्भीर मस्तिष्क

से बड़े सुन्दर कारनामें कर दिखाये। इन्होंने सब से प्रथम मेवाड़ के सरदारों के बीच लगातार चार वर्षों से चली आई लड़ाई को शांत कर मेवाड़ में पुनः शान्ति स्थापित की।

इस प्रकार मेवाड़ के अन्तर्गत शान्ति स्थापित कर इस वीर योद्धा ने मेवाड़ के राज्य-विस्तार की ओर अपना हाथ बढ़ाया। इन्होंने सबसे प्रथम महाराणाजी की आज्ञा लेकर माँडलगढ़ पर आक्रमण कर दिया। उस समय मेवाड़ राज्य के इस किले पर मेवाड़ के कुछ बागी सरदारो ने अपना अधिकार कर रक्खा था तथा इस जिले के कुछ गाँवों को छोड़ कर शेष सारे जिले में इन बागी सरदारों का अधिकार हो गया था। ऐसी परिस्थिति में मेहता अगरचंदजी एक बड़ी सेना लेकर इन बागी सरदारों की शक्ति को तहस नहस करने के लिये मांडलगढ़ पहुँचे तथा वहाँ जाकर वीरता पूर्वक लड़ने के पश्चात् मांडलगढ़ पर अपना पूर्ण अधिकार स्थापित कर लिया। इस विजय से महाराणा साहब आपके ऊपर बड़े खुश हुए और आपका सत्कार करने के लिये आपके नाम पर एक खास रुक्का इनायत किया जिसकी नकल नीचे दी जाती है।

> "रुको मेहता भाई अगरा जोग अप्र परगणो मांडलगढ़ गेर अमली होर श्रीदरबार रो हुकम उठाय दीदो जणी थी थँहे माणा डील जूं जाणने मेलो है सो दरबार रो सुधरेजूँ कीजे सुधारतां बीगड़ जावे तो भी अटकाव राखे मती थारा मनख कबीला सुदी वठे रीजे सो श्री एकलिंगजी को राज रहेगा जत्रे ऊ परगणो तो थारा बाप रो जाणागां ई मे फरक पाड़े जी ने श्री एकलिंगजी पूगसी उठारो निपट जापतो राख अठारी संभाल आय कीजे थारे भी जगा बणावजे और आसामियां भी बसाव खात्री कर दीजै जणी परमाणे नभेगा मारो बचन है दल हाथ राख किला रो निपट जापतो राखजे में भी राजता गाजता किला पर आवां तो किला पर आवा दीजे कोई तरे ओछ रखिहे तो श्री एकलिंगजी का घर में थांसू समभांगा संवत १८२२ का काती बुदी १२ बुधवार

इस रुक्के के अन्दर उदयपुर के महाराणा ने मेहता अगरचंदजी को उनके मांडलगढ़ की फतह पर बधाई देकर के बड़े सत्कार सहित उन्हें मांडलगढ़ का शासक (Governor) नियुक्त किया। इसके साथ ही महाराणा जी ने यह भी लिखा कि हम यह मांडलगढ़ का किला तुम्हारे बाप दादों की प्रापर्टी (सम्पत्ति) मानेंगे। तुम इस किले की बड़ी चतुराई से रक्षा करना और खुद वहाँ पर बस कर प्रजा को भी सुविधायें देकर के बसाना।

इस प्रकार रुक्के प्रदान कर महाराणाजी ने मेहता अगरचंदजी के प्रति अपना अगाध विश्वास प्रगट किया। मेहता अगरचंदजी ने भी आपकी आज्ञा को शिरोधार्य्य कर मांडलगढ़ में निवास करना

आरम्भ कर दिया। आपने धीरे २ शत्रुओं की शक्ति को चूर २ करके सारे जिले के अन्तर्गत शांति स्थापित की। इसके कुछ दिनों पश्चात् आप खवास गुलाबजी को मांडलगढ़ का शासक (Governor) नियुक्त कर उदयपुर दरबार में आ दाखिल हुए।

मेहता अगरचंदजी ने उदयपुर दरबार में पुनः काम करना आरम्भ कर दिया। यह हम ऊपर लिख चुके हैं कि आप बड़े कुशल राजनीतिज्ञ थे। इसी समय रतनसिंह ने राज्य प्राप्ति की लालसा से कई सरदारों को मिलाकर एक बड़े षड्यंत्र की रचना की और उसमें मरहठा सरदार सिंधिया को भी आमन्त्रित किया। मेहता अगरचन्दजी निकट भविष्य में आनेवाली इस आपत्ति को तुरंत ताड़ गये तथा रावत पहाड़सिंहजी एवं शाहपुरा नरेश राजाधिराज उम्मेदसिंहजी के साथ इस षड्यंत्र की सब शक्तियों को नष्ट करने के लिये आक्रमण की तयारी करने लगे। लेकिन रतनसिंह अपने षड्यंत्र को बहुत मजबूत बना चुका था और इनके युद्ध के लिये तयार होने के पहले पहले अपनी पूरी २ शक्ति संचित कर चुका था। उधर मरहठा सरदार सिंधिया भी इनकी मदद पर आ पहुँचा। फिर क्या था, अत्यन्त वीरता पूर्वक लड़ने पर भी महाराणा की फौज हार गई और रावत पहाड़सिंहजी तथा शाहपुराधीश राजाधिराज उम्मेदसिंहजी वीरतासे लड़ते २ काम आये। उसी समय मेहता अगरचन्दजी भी बड़ी वीरता से लड़ते हुए शत्रु दल द्वारा पकड़े गये। इस प्रकार इस वीरवर योद्धा के पकड़े जाने से विरोधी पक्ष को बड़ी प्रसन्नता हुई। उस समय भी मेहता अगरचन्दजी ने अपूर्व स्वामिभक्ति का परिचय दिया। विरोधी दल वालों ने आपको, इस शर्त्त पर कि आप रतनसिंह को महाराणा मान लें, छोड़ना स्वीकार किया परन्तु आपने निर्भीकता से इसके लिये इन्कार कर दिया। जब ये बातें महाराणा को मालूम हुई तो वे बड़े दुखी हुए और उन्होंने मेहता अगरचन्दजी को इस आशय का एक रुक्का लिखकर भेजा कि तू मेरा स्यामधर्मी नौकर है और उज्जैन के झगड़े के बिगड़ने के कारण तुझे जिन २ कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है उनको जानकार मुझे बड़ी अमूझणी आ रही हैं। अब तू शत्रु के पंजे से जैसा वे कहलावें वैसा कह कर तुरंत चले आना। हमारा तुम पर पूरा विश्वास है। उस रुक्के की नकल इस प्रकार है—

"स्वस्ती श्री भाई अगरा जोग अपरंची उजीण रो झगड़ो बिगड़ गयो जी री म्हारे पूरी अमूझणी है तया थां जसा सपूत चाकर मारे है सो या अमूझणी भी श्रीएकलिंगजी मेटेगा परन्तु तू पकड़ाय गयो और गनीम था नकासुं जबान केवाय छोड़े जणी हेतु तू थारे नहीं या थारे नहीं पात्र म्हारे तो आंधा लकड़ी तू है थांथी ही राज करा हां अब वे केवावे जो केहन जीव बचा हजूर हाजर होजे अणी करवा में थारा साम धरमी में फरक जाणा तो श्रीएकलिंगजी

रा हजार हजार सौगन है तू माठची राखी है तो थारो जीव हर मारो राज जावेगा जीरो म्हूँ थारो दावणगीर होऊँगा अठा सु सौसिंहजी हे भी लिख्यो है सो जूं वणे जूं छूट हजूर हाजिर हूजै अणी मैं औछ राखी है तौ थाहें माणा लाख सूस है सम्वत् १८२५ रौ वरस महा वुद १३"

इस रुक्के से पाठकों को यह स्पष्टतः ज्ञात होगा कि मेहता अगरचन्दजी के कार्य्यों में महाराणाजी का कितना विश्वास था और उनकी सुख दुख की दशा में वे कितनी हमदर्दी प्रदर्शित करते थे। मेहता अगरचंदजी भी इस पत्र को पाते ही शिवचंद्रजी की मदद से शत्रु के पंजे से छूट कर निकल आये और महाराणा की सेवा में उपस्थित हुए। महाराजा ने आपका बहुत सम्मान किया और उसी प्रधानगी के उच्च पद पर आपको अधिष्ठित किया। कहने का मतलब यह है कि महाराणा को आपकी सेवाओं से बड़ा संतोष रहा जिसकी भूरि २ प्रशंसा आपने अपने निम्नलिखित रुक्के में मुक्त कंठ से की है।

सिद्ध श्री माई मैहता अगरा जोग अप्र मे तो थां सपूत चाकर थी नचीता हाँ राज थारा वापरौ छै थांहरी सेवा बंदगी म्हारा माथा पर छै निपट तू म्हारो साव धमाँ छै थारी चाकरी तो सपना मै भी भुला नहीं ई राज माहें आधी रोटी होसी जो भी बटका पेली थानें दे र खासां थारां बंश का सूं उरीण हेवां पावां नहीं सीसोदिया हौसी जो तो थारा बंस काने आखां की पलकां पर ही राखसी फरक पड़ेगा तौ जीणाने श्रीएकलिंगजी पूगसी ई राज म्हें तौ म्हारा बैटा बच भी थारा बैटा रो उर सौ वत्तो छै कतराक समाचार धामाई रूपा रा साह मोतीराम बूल्यारा कागद सूं जाणौगा सम्वत् १८२३ वरषे वैसाख वुदी १० गुरै

महाराणा अरिसिंहजी के पश्चात् संवत् १८२९ में उदयपुर के सिहांसन पर महाराणा हमीरसिंहजी विराजे। आप भी मेहता अगरचन्दजी की वीरता, कारकीर्दी एवं स्वामिभक्ति से बड़े प्रसन्न थे। महाराणा हमीरसिंहजी केवल ४ सालों तक राज्य कर संवत् १८३४ में स्वर्गवासी हुए। आपके जीवन काल में ऐसी कोई विशेष उल्लेखनीय घटना घटित न हुई।

महाराणा हमीरसिंहजी के पश्चात् महाराणा भीमसिंहजी उदयपुर के राज्यासन पर आरूढ़ हुए। उसी समय की बात है कि रामपुरा के चन्द्रावतों को मेहता अगरचन्दजी ने अपने यहाँ पर शरण दी। इस घटना से चन्द्रावतों के विरोधी ग्वालियर के सिंधिया को बड़ा क्रोध आया और उसने लखाजी तथा अम्बाजी के सेनापतित्व में मेहता अगरचन्दजी को परास्त करने के लिए एक बहुत बड़ी सेना भेजी। इस सेना का मेवाड़ की सेना के साथ घमासान युद्ध हुआ और अंत में मेहता अगरचन्दजी की ही विजय हुई। इसी प्रकार की और कई घरेलू लड़ाइयों में मेहता अगरचन्दजी ने हमेशा अपने स्वामी महाराणा भींमसिंह का पक्ष लिया और आजीवन तक वे बड़ी वीरता से युद्ध करते रहे।

मेहता अगरचंदजी वड़े वीर और रणकुशल व्यक्ति ही नहीं थे वरन् एक अच्छे शासक भी थे। उन्होंने मेवाड़ के इस अशान्ति काल में मांडलगढ़ का शासन बड़ी योग्यता से किया। आपने मांडलगढ़ निवासियों की सुविधा के लिये कई अच्छे २ काम किये तथा सैकड़ों वाहर के लोगों को लाकर बसाया। आपने वहाँ पर सागर और सागरी नामक दो वड़े २ जलाशय बनाये और किले की मरम्मत करवा कर उसे शत्रु के भय से सुरक्षित कर दिया। उदयपुर के तत्कालीन महाराणाजी ने भी आपकी बहुमूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर आपको वहाँ की तलेठी में जालेसवार नामक तालाब जागीरी में वख्शा।

इसके बाद की घटना है कि शाहपुरा नरेश ने बलवा करके मेवाड़ राज्य के जहाजपुर जिले को अपने कब्जे में कर लिया। इस पर उदयपुर के महाराणाजी की आज्ञा लेकर मेहता अगरचन्दजी ने एक बहुत बड़ी सेना के साथ शाहपुरा के राजाधिराज पर आक्रमण कर दिया। इस चढ़ाई में शाहपुरा के महाराजाधिराज तथा मेहता अगरचन्दजी के बीच घमासान लड़ाई हुई। इस लड़ाई में भी मेहता अगरचन्दजी की विजय हुई और जहाजपुर का सारा परगना पुनः मेवाड़-राज्यान्तर्गत आगया।

कहने का मतलब यह है कि मेहता अगरचन्दजी वड़े वीर, रणकुशल तथा स्वामिभक्त व्यक्ति थे। आपके जीवन की प्रत्येक घटना में इन बातों का पूरा २ समावेश था। आप बड़े राजनीतिज्ञ तथा दूरदर्शी भी थे। आपने अपने अन्तिम समय में अपने वंशजों के लिए उपदेशों का एक बहुमूल्य संग्रह लिखा जो आज भी आपके वंशजों के पास है और जिससे आपकी राजनीतिज्ञता और विद्वत्ता का गहरा परिचय मिलता है।

जहाजपुर की लड़ाई में घायल हो जाने से मेहता अगरचन्दजी का स्वर्गवास सम्वत् १८५७ की असाढ़ कृष्णा चतुर्दशी को हो गया। आपके स्वर्गवास से महाराणा भीमसिंहजी को बहुत दुःख हुआ। आपने इनके कामदार मौजीरामजी के पास मातमपुरसी के लिये एक कागज भेजा, जिस की नकल नीचे दी जा रही हैः—

> सिद्धश्री मोजीरामजी महता जोग अप्रंच मेहताजी श्रीशिवशरणे हुआ श्रीजी म्हांथी घणी बुरी कीधी, म्हांके तो श्री दाजी राज श्री बाई आज देवलोक हुआ है वारें कांधे कँवर पणे हो थारे तो मूँ हूँ सो कई फिकर करो मती मनख होसुँ तो थारा जतन ही करसुँ घणी कांई लिखूँ लिख्यो न जाय सारी वात हिम्मत थी काम कीजो नराई मत लावजो सावण बुदी ५ सोमवार

उपरोक्त सारे विवरण से मेहता अगरचन्दजी की राजनीति कुशलता, और महाराणा का उनपर अगाध विश्वास बहुत आसानी से प्रकट हो जाता है। ऐसे कठिन समय में इतनी बुद्धिमानी के साथ सारे

राज्य की जिम्मेवारी को ग्रहण करके उसे अन्त तक निभा ले जाने के उदाहरण इतिहास में बहुत कम मिलते हैं।

मोतीरामजी बोलिया

महाराणा अरिसिंहजी के समय में ओसवाल जाति के बोल्या वंश के साहा मोतीरामजी भी प्रधान रहे। ये सुप्रसिद्ध रंगाजी के वंशज थे, जो कि महाराणा अमरसिंहजी (बड़े) और कर्णसिंहजी के समय में प्रधान के पद पर रहे थे, इन्हीं रंगाजी ने बादशाह जहाँगीर और अमरसिंहजी के बीच समझौता करवाकर मेवाड़ से बादशाही थाना उठवाया था। महाराणा साहब ने इनकी सेवाओं से प्रसन्न होकर हाथी पालकी का सम्मान और चार गाँव की जागीर (मेवदा, काणोली, मानपुरा भी जामुणियो) का पट्टा इन्हें बक्षा था। उदयपुर की सुप्रसिद्ध घूमटा वाली हवेली आपने ही बनवाई थी।

प्रधान मोतीरामजी भी इस वंश में बड़े सुप्रसिद्ध पुरुष हुए। आपको भी महाराणा साहब से कई रुक्के प्राप्त हुए। आपके भाई मौजीरामजी भी महाराणा साहब की आज्ञा से जावद, गोड़वाड़, चित्तौड़, कुम्भलगढ़, माँडलगढ़ इत्यादि कई स्थानों पर सेना लेकर दुश्मनों से लड़ने गये थे। आपके कार्य्यों से महाराणा साहब ने प्रसन्न होकर कई खास रुक्के बक्षे थे उनमें से एक की नकल नीचे दी जा रही है—

श्री रामोजयति

श्री गणेश प्रसादातु — श्री एकलिंग प्रसादातु

भाले का निशान

सही

स्वति श्री उदयपुर सुथांने महाराजधिराज महाराणा श्रीअरसिंहजी आदेशातु साह मोजीराम कस्य १ अप्रं गोड़वाड़ तोहे सावधरमी जाणे मलाई है..........एका एक नकस ऊपर खपजे......(वगेरा) संमत १८२३ वर्षे चैत सुदी ६ भोमेर

इसी पत्र के हासिये पर खास श्री हस्ताक्षरों से लिखा हुआ है।

तुं खात्र जमा बंदगी कीजे थारी कोई सांची झूठी केगा तो तार काड्या बिना ओलम्बों दां तो म्हाने श्री एकलिंगजी री आण कदी मन में संदे लावे मत ने थने परगणो गोड़बाड़ रो भलाव्यौ है सो सावधरमी व्हे जणा ने दिलासा दिजे न बंदगी में कसर राखे जाने सजा दीजे म्हारो हुकम है तु या जाणजे सो हूं तो तीरे उभो हूं खरची लागे जी रो कई विचार राखे मत......थारी दाय आवे जीने तो दीजे ने दाय आवे जीरो उरो लीजे

शाह मोतीरामजी के पश्चात् उनके पुत्र एकलिंगदासजी केवल १८ वर्ष की वय में प्रधान बनाये गये। मगर आपकी उम्र बहुत कम होने से प्रधान का काम आपके काका सहा मौजीरामजी देखते रहे। मगर जब इनका भी स्वर्गवास हो गया तो एकलिंगजी ने प्रधान के पद से इस्तिफ़ा दे दिया। महाराणा साहब की आप पर भी बहुत कृपा रही। आपको कई बार फौजें लेकर भिन्न २ स्थानों पर युद्ध करने के लिये जाना पड़ा था। आप बहादुर एवम् वीर प्रकृति के पुरुष थे।

महाराणा भीमसिंह और ओसवाल मुत्सुद्दी

सोमचंद गाँधी—सन् १७६८ में उदयपुर के राज्य सिंहासन को महाराणा भीमसिंहजी (द्वितीय) सुशोभित कर रहे थे। इनके राजत्व काल में मेवाड़ की बहुत सी भूमि दूसरों के अधिकार में जाचुकी थी। बहुत से सरदार राज्य से बागी हो गये थे। खजाना एक दम खाली हो गया था। यहाँ तक कि राज्य प्रबन्ध का साधारण खर्च चलाना भी मुश्किल हो रहा था। ऐसी परिस्थिति में सोमजी गाँधी जनानी ड्योढ़ी पर काम कर रहे थे। ये सोमजी ओसवाल जाति के गांधी गोत्रीय सज्जन थे। ये बड़े बुद्धिमान, कुशाग्र बुद्धि एवम् समय सूचक व्यक्ति थे।

यह हम ऊपर लिख चुके हैं कि मेवाड़ का खजाना खाली हो गया था। जब कभी महाराणा को द्रव्य की आवश्यकता होती तो उन्हें तत्कालीन चूंडावत सरदार रावत भीमसिंहजी वगैरह का मुंह ताकना पड़ता था। इन भीमसिंहजी ने सब प्रकार से महाराणा को अपने वश कर रखा था। एक समय का जिक्र है राजमाता ने इन्हीं चूंडावत सरदार से महाराणा के जन्म दिन की खुशी में उत्सव मनाने के लिये रुपयों की आवश्यकता बतलाई। मगर चूंडावत बड़े चालाक थे। उन्होंने रुपया देने में टालम टूल कर दी। इससे राजमाता बहुत अप्रसन्न हुई। ऐसे ही अवसर को उपयुक्त जान सोमजी गांधी ने रामप्यारी नामक एक स्त्री के द्वारा राजमाता से अर्ज करवाई कि यदि आप मुझे प्रधान बनादें तो मैं रुपयों का प्रबन्ध कर सकता हूँ। कहना न होगा कि राजमाता द्वारा सोमजी प्रधान बना दिये गये।

सोमजी बड़े कार्य्यकुशल और योग्य व्यक्ति थे। सब से प्रथम उन्होंने मेवाड़ की पतनावस्था के कारणों को सोचा। उन्होंने सोचा कि जब तक मेवाड़ी सरदारों के आपसी मनमुटाव व वैमनस्य को न मिटाया जायगा, तब तक मेवाड़ का इस प्रकार की शोचनीय दशा से उद्धार पाना कठिन है। अतएव उन्होंने अपने विचारों को कार्य्य रूप में परिणित करने के लिये शक्तावतों से मेल जोल बढ़ाया और इनकी सहायता से कुछ रुपये एकत्रित कर राजमाता के पास भेजे। जब यह बात रावत भीमसिंहजी ने सुनी

तो उन्हें बहुत बुरा लगा। वे अब हमेशा इसी चिन्ता में रहने लगे कि किस प्रकार सोमजी गांधी का कंटक मार्ग से दूर हो।

इधर प्रधान सोमजी गांधी ने राजमाता द्वारा कई बिगड़े सरदारों को खिल्लत व सरोपाव दिलवा कर उन्हें वश में करने की कोशिश की। साथ ही भिंडर के स्वामी शक्तावत मोहकमसिंहजी के पास जो करीब २० वर्षों से राज्य-वंश के विरुद्ध हो रहे थे, महाराणा को भेजकर उन्हें सम्मान सहित उदयपुर बुलवाये। इसी प्रकार रामप्यारी को सलूम्बर भेजकर रावत भीमसिंहजी को जो शक्तावतों का जोर हो जाने के कारण उदयपुर छोड़ कर चले गये थे वापस उदयपुर निमंत्रित किया, क्योंकि उन्हें मेवाड़ राज्य से मरहठों को भगाना था। उपरोक्त काम कर लेने के पश्चात् इन्होंने जयपुर और जोधपुर के महाराजाओं को भी मरहठों के विरुद्ध खड़ा किया। इस प्रकार कार्य्य कर उन्होंने राजपूताने में मरहठों के खिलाफ एक बहुत बड़ा वातावरण पैदा कर दिया।

चूंडावत सरदार रावत भीमसिंहजी ने यद्यपि ऊपरी तौर पर सोमजी गांधी वगैरह से मेल कर लिया था मगर उनके दिल में हमेशा सोमजी से बदला लेने की प्रवृत्ति उत्तरोत्तर बढ़ती ही गई। उन्होंने इसी बीच और भी कुछ सरदारों को अपनी ओर मिला लिया। अन्त में एक दिन जब कि सोमजी महलों में थे तब कुराबड़ के रावत अर्जुनसिंह और चांवड़ के रावत सरदारसिंह दोनों व्यक्ति भी महलों में पहुँचे। वहां जाकर उन्होंने सलाह करने के बहाने से सोमजी को अपने पास बुलवाया और यह पूछते हुए कि "तुम्हें हमारी जागीरें जप्त करने का साहस किस प्रकार हुआ" इन दोनों सरदारों ने उनकी छाती में कटारें भोंक दीं। तत्काल रक्त का फव्वारा निकल पड़ा और दूरदर्शी, राजनीतिज्ञ और कार्य्य कुशल सोमजी का वहीं अन्त हो गया। महाराणा साहब के कहने से इनका दाह संस्कार पिछोलाकी बड़ी पाल पर किया गया जहां आज भी उनके स्मारक स्वरूप एक छत्री बनी हुई है।

प्रधान सोमजी के पश्चात् महाराणाजी ने इनके छोटे भाई सतीदासजी तथा शिवदासजी को क्रमशः प्रधान एवम् सहायक बनाए। ये दोनों अपने भाई का बदला लेने के लिये कोशिश करने लगे। उन्होंने भिंडर के सरदार मोहकमसिंहजी की सहायता से सेना एकत्रित की और चित्तौड़ की ओर प्रस्थान किया। इस समाचार को सुनते ही उधर से भी कुरावड़ के रावत अर्जुनसिंहजी की अधीनता में चूण्डावत सरदारों की एक सेना मुकाबला करने के लिये रास्ते में आ मिली। अकोला नामक स्थान पर दोनों ओर की सेना में घमासान युद्ध हुआ। प्रधान सतीदासजी विजयी हुए। रावत अर्जुनसिंह रण-क्षेत्र छोड़कर भाग गये और सतीदासजी ने अपने भाई के हत्यारे को मारडाला। इस प्रकार इन वीर बन्धुओंने धोखा करने वालों के साथ युद्ध कर अपने भाई का वदला चुका लिया।

मेहता मालदासजी

मेहता मालदासजी ओसवाल समाज के शिशोदिया गौत्र के सज्जन थे। ये बड़े वीर और पराक्रमी थे। महाराणा भीमसिंहजी के समय में सारे राजपूताने में मरहट्टों का बहुत प्राबल्य हो रहा था। इसी समय में सोमजी गाँधी महाराणा के प्रधान थे। उन्होंने मरहट्टों को अपने देश से निकालने के लिये कई उपाय सोचे। अन्त में, जब सं० १२४४ में लालसोट नामक स्थान पर जयपुर और जोधपुर की सेना द्वारा मरहट्टे पराजित हो चुके, तब उक्त अवसर को ठीक समझ कर सोमजी ने मेहता मालदासजी को कोटा एवम् मेवाड़ की संयुक्त सेना का सेनापति बनाकर मरहट्टों पर हमला करने के लिये भेजा।

वीर सेनापति मालदास बड़े उत्साह से दोनों सेनाओं का नेतृत्त्व ग्रहण कर उदयपुर से रवाना हुए। रास्ते में आने वाले ग्राम निम्बाहेड़ा, नकुम्प, जीरण आदि स्थानों पर अधिकार करते हुए आप जावद नामक स्थान पर पहुँचे, जहाँ कि सदाशिवराव नामक मरहट्टा सेनापति मुकाबला करने के लिये पहले ही से तैयार बैठा था। कुछ दिनों तक दोनों ओर की सेना में मुकाबिला हुआ। अन्त में सदाशिवराव कुछ शर्तों के साथ शहर छोड़कर चला गया। इस प्रकार मेहताजी के प्रयत्न से उनके ही सेनापतित्व में मेवाड़ी सेना ने मरहट्टी सेना पर विजय प्राप्त की।

कहना न होगा कि उपरोक्त समाचार विद्युत वेग से राजमाता देवी श्री अहल्याबाई के पास पहुँचा उन्होंने शीघ्र ही बुलाजी सिंधिया एवम् श्रीनाई नामक दो व्यक्तियों की अधीनता में अपने ५००० सवार सदाशिवराव की सहायतार्थ भेजे। यह सेना कुछ समय तक मंदसोर में ठहर कर मेवाड़ की ओर बढ़ी। उधर महाराणा ने भी मुकाबला करने के लिये मेहता मानदास की अधीनता में सादड़ी के सुल्तानसिंह, देलवाड़े के कल्याणसिंह, कानोड़ के रावत जालिमसिंह, सनवाड़ के बाबा दौलतसिंह आदि राजपूत सरदारों तथा सादिक, पूँजू वगैरह सिंधियों को अपनी २ सेना सहित मरहट्टों के मुकाबले के लिये रवाना किया।

वि० सं० १८४४ के माघ मास में दोनों ओर की सेना का हरकियाखाल नामक स्थान पर मुकाबला हुआ। दोनों ओर के वीर अपनी वीरता और बहादुरी का परिचय देने लगे। इस युद्ध में मेवाड के मन्त्री मेहता मालदासजी, बाबा दौलतसिंहजी के छोटे भ्राता कुशलसिंहजी आदि अनेक वीर राजपूत सरदार एवम् पूँजू आदि सिंधी लोग वीरता से लड़ अपने स्वामी के लिये, अपने अपूर्व वीरत्व का परिचय दे, वीर गति को प्राप्त हुए।

कर्नल टाड साहब ने मेहता मालदासजी के लिये एनाल्स आफ़ मेवाड़ नामक ग्रन्थ में एक स्थान

पर लिखा है कि "मालदास मेहता प्रधान थे और उनके डिप्टी मौजीराम थे। ये दोनों बुद्धिमान और वीर थे।" "Maldas mehta was civil member with Maujiram as his Deputy, both men of talent and energy" इत्यादि ।

मेहता देवीचन्दजी

मेहता अगरचन्दजी के बाद उनके बड़े पुत्र देवीचन्दजी मेवाड़ राज्य के प्रधान मन्त्री (Prime Minister) के पद पर अधिष्ठित हुए। पर कुछ ही वर्षों बाद जब उन्होंने देखा कि मेवाड़ाधिपति राज्य और प्रजाहित कार्य्यों में उनकी सलाह पर ध्यान नहीं देते हैं तो वे अपने प्रधान मन्त्री के पद से अलग हो गये। इतना ही नहीं उन्होंने प्रधान मन्त्री का पद स्वीकार न करने की भी सौगन्ध खा ली।

मेहता देवीचन्द जी के कार्य्य काल में किसी दवाव के कारण मेंवाड़ के महाराणा भीमसिंह जी ने सुप्रसिद्ध झाला जालिमसिंहजी को मांडलगढ़ का किला प्रदान कर दिया और इस सम्वन्ध में महाराणा ने मेहता देवीचन्दजी को एक पत्र लिखा, जिसका भाव यह है "मांडलगढ़ का किला खालसा तथा जागीर के सब गाँवों समेत जालिमसिंह को दे दिया गया है. सो वे सब उसके सुपुर्द कर देना और तू हूजूर में हाजिर होना। तेरी जागीर, गाँव कूआ, खेत आदि पर तू अपना अमल रखना। तेरे घरबार के सम्वन्ध में हम तब हुक्म देंगे जब तू जालिमसिंह के साथ हुजूर में हाजिर होगा। यह परवाना सम्बत १८५९ के भादवा सुदी ८ बुधवार के दिन श्री मुख की परवानगी से जाहिर हुआ है।

जब देवीचन्दजी ने यह परवाना देखा तो वे बड़े असमंजस में पड़ गये। जालिमसिंहजी के साथ यद्यपि उनका बड़ा ही मैत्री पूर्ण सम्वन्ध था, पर इससे भी अधिक मेवाड़ के हित पर उनका सारा ध्यान लगा हुआ था। इसलिये उन्होंने किसी बहाने से टालमटूल कर झाला को किला न सौंपा। इस पर फिर महाराणा भीमसिंहजी ने उक्त मेहताजी को जोरदार पत्र लिखा, वह इस प्रकार है:—

> स्वस्ती श्री मेहता देवीचन्दजी अपरंच परगणो मांडलगढ़ किला खालसा जागीर सुदी जलिमसिंहजी झाला है बगशो जणी में अमल करवारो परवानो थारे नाम भी लिख दियो परन्तु थें अणा से अमल करायो नहीं और लड़वाने तयार हुआ सो म्हारा जीव को भलो भाव और श्याम खौर होवे तो लख्या मुजब अणारो अमल कराय दीजो अब आगी काढ़ी है तो म्हारा हरामखौर होता संवत् १८५९ आसोज वुदी १४ भौमे

जब इस दूसरे पत्र पर भी देवीचन्दजी ने ध्यान नहीं दिया, तब महाराणा साहब ने एक तीसरा पत्र और लिखा। पर देवीचन्दजी जानते थे कि माँडलगढ़ का किला मेवाड़ में सैनिक दृष्टि से बड़े महत्व

की चीज़ है। अतएव उन्होंने तीसरे पत्र से भी किला सौंपना ठीक नहीं समझा। इस पर झाला जालिमसिंह ने जबर्दस्ती से किले पर अधिकार करने का निश्चय किया। उन्होंने माँडलगढ़ से १८ मील की दूरी पर लुहण्डी स्थान पर एक नया किला बनाना शुरू किया और वे माँडलगढ़ को हस्तगत करने की युक्ति सोचने लगे। इतना ही नहीं झालाजी ने मेवाड़ के तीन गाँवों पर अधिकार भी कर लिया। जब यह खबर देवीचन्दजी को लगी तो उन्होंने झाला पर फौजी चढ़ाई करके उन्हें भगा दिया। कहने की आवश्यकता नहीं कि एक ओसवाल वीर तथा मुत्सद्दी की कारगुजारी ने एक जबर्दस्त शत्रु के पंजे से मेवाड़ राज्य की रक्षा की।

जब यह खबर महाराणा साहब के पास पहुँची तो वे मेहता देवीचन्दजी पर बड़े ही प्रसन्न हुए। उन्होंने मेहताजी को फिर से दीवानगी पर प्रतिष्ठित करने को कहा, पर मेहताजी अपनी पूर्व प्रतिज्ञा से टलना नहीं चाहते थे। इसलिये उन्होंने प्रधानमन्त्री का पद स्वीकार करने में अपनी असमर्थता दिखलाई। हां, इस पद के लिये उन्होंने मेहता रामसिंहजी का नाम सूचित किया। महाराणा साहब ने यह बात स्वीकार करली। मेहता रामसिंहजी को दीवान का उच्चपद प्रदान कर दिया गया। देवीचन्दजी सुप्रीमकौन्सिलर (प्रधान सलाहकार) का काम करने लगे।

इसी समय कई बाहरी झगड़ों के कारण देवीचन्दजी ने यह मुनासिब समझा कि मेवाड़ राज्य का ब्रिटिश सरकार के साथ मैत्री सम्बन्ध हो जाय तो अच्छा है। कहने की आवश्यकता नहीं कि मेवाड़ राज्य और ब्रिटिश सरकार के बीच एक सुलह नामा हो गया। इसके बाद जब कर्नल टॉड साहब उदयपुर आये, तब वे देवीचन्दजी से बहुत प्रसन्न हुए और महाराणा से कहकर उनकी जागीर उन्हें दिलवा दी। कहने का तात्पर्य यह है कि मेहता देवीचन्दजी बड़े वीर, रणकुशल और शासन कुशल व्यक्ति थे।

मेहता रामसिंहजी

मेहता देवीचन्दजी के बाद उदयपुर के दीवान पद को मेहता रामसिंहजी ने सुशोभित किया। रामसिंहजी कार्य्य दक्ष, बुद्धिशाली और स्वामि भक्त थे। अपने कार्यों से इन्होंने मेवाड़ में अच्छी ख्याति प्राप्ति की। इन के गुणों पर रीझकर विक्रम संवत् १८७५ में महाराणा भीमसिंहजी ने उन्हें बदनोर जिले का अरना गाँव जागीर में प्रदान किया। उस समय मेवाड़ का शासन प्रबन्ध महाराणा और अंग्रेज सरकार दोनों के हाथ में था महाराणा की ओर से कामदार और ब्रिटिश गवर्नमेण्ट की तरफ से चपरासी नियुक्त रहते थे। इस द्वैध शासन से तंग आकर मेवाड़ की प्रजा ने ब्रिटिश गवर्नमेंट से शिकायत की तब वि० सं० १८८१ में मेवाड़ के तत्कालीन पोलिटिकल एजंट कप्तान कॉब ने शिवलाल गालुण्डिया की जगह मेहता रामसिंह को प्रधान पद पर नियुक्त किया।

उक्त कप्तान तथा रामसिंहजी के सुप्रबन्ध से मेवाड़ राज्य की बिगड़ी हुई आर्थिक दशा कुछ सुधर गई और ब्रिटिश गवर्नमेंट के चढ़े हुए खिराज में से ४००००० रुपये तथा अन्य छोटे वड़े कर्ज अदा कर दिये गये। रामसिंहजी की कारगुजारी से प्रसन्न होकर महाराणा ने इन्हें विक्रम संवत् १८८३ में जयनगर, कंकरोल, दोलतपुरा और बलधरखा नामक चार गाँव जागीर में वक्षे। महाराणा जवानसिंहजी की गद्दीन-शीनी के बाद फिजूल खर्ची की बजह से राज्य की आय घट गई और खिराज के ७००००० रुपये चढ़ गये। इसी समय महाराणा को किसी ने यह संदेह दिला दिया कि रामसिंहजी प्रतिवर्ष वचत के एक लाख रुपये हजम कर जाते हैं। इस पर महाराणा ने मेहता रामसिंहजी को अलग कर मेहता शेरसिंहजी को उनके स्थान पर नियुक्त किया। मगर जब उनसे भी खर्च पर नियंत्रण न हुआ तो वापस महाराणा ने रामसिंहजी को अपना प्रधान बनाया। इस बार उन्होंने पोलिटिकट एजंट से लिखा पढ़ी करके २ लाख रुपये जो ब्रिटिश सरकार की ओर से मेवाड़ के पहाड़ी प्रदेशों के प्रबन्ध के लिए महाराणा को मिले तथा एजंट के निर्देश के अनुसार खर्च हुए थे माफ करवा दिये और चढ़ा हुआ खिराज भी चुका दिया। इससे इनकी बड़ी नेकनामी हुई और महाराणा ने इन्हें सिरोपाव आदि देकर सम्मानित किया।

राजपूताने के तत्कालीन पोलिटिकल एजंट कप्तान कॉव का रामसिंहजी पर बड़ा विश्वास था। वे जब तक रहे तब तक रामसिंहजी अपने शत्रुओं के षड्यंत्र के बीच भी बराबर अपने पद पर बने रहे। कप्तान कॉव के जाने के बाद रामसिंहजी के शत्रुओं का दाव चल गया और उन्हें अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा। कप्तान कॉव रामसिंहजी की कार्य्य कुशलता से भली-भाँति परिचित था। इसलिये उसने कलकत्ते से रामसिंह जी के अच्छे कामों की याद दिलाते हुए महाराणा से उनकी मान मर्य्यादा के रक्षा करने की सिफारिश की।

मेहता रामसिंहजी वड़े राजनीतिज्ञ और गहरे विचारों के व्यक्ति थे। रियासत के भीतरी कार्य्यों में उनका मस्तिष्क अच्छा चलाता था। महाराणा भीमसिंहजी के समय से महाराणा और सरदारों के बीच छट्टूंद और चाकरी के लिए झगड़ा चला आरहा था, उसे मिटाने के लिए वि० सं० १८८४ में मेवाड़ के तत्कालीन पोलिटिकल एजंट कप्तान कॉव ने मेहता रामसिंहजी सलाह से एक कौल नामा तय्यार किया। मगर उस समय उस पर दोनों पक्षों में से किसी के हस्ताक्षर न हो सके। तब रामसिंहजी ने वि० सं० १८९६ में मेजर राबिन्सन से कहकर नया कोलनामा करवाया। इन्हीं रामसिहजी के उद्योग से वि० सं० १८१७ में भीलों की सेना संगठित किये जानें का कार्य्य आरम्भ हुआ। वि० सं १९०३ में महाराणा को यह संदेह हुआ एक षड्यन्त्र वागौर के महाराज शेरसिंहजी के पुत्र शार्दूलसिंह की अध्यक्षता में उनको जहर दिलाने के लिये रचा जा रहा है जिसमें रामसिंह भी शामिल है। यह सुनते ही रामसिंहजी मेवाड़ छोड़ कर अजमेर चले

आये। उदयपुर से चले आने पर उनकी सारी जायदाद जप्त कर ली गई और इनके बाल बच्चों को भी वहाँ से निकाल दिया गया।

जब बीकानेर के तत्कालीन महाराजा सरदारसिंहजी को यह बात मालूम हुई तब उन्होंने रामसिंहजी से बीकानेर आने के लिये बहुत आग्रह किया। मगर रामसिंहजी ने महाराजा को धन्यवाद देते हुए लिखा कि महाराणाजी को मेरी सेवाओं का पूरा ध्यान है, वे मेरे शत्रुओं द्वारा झूठी खबर फैलाने से मुझ पर इस समय अप्रसन्न हैं, तो भी कभी न कभी उनकी अप्रसन्नता दूर होगी और वे मुझे फिर से अवश्य बुलावेंगे। इससे रामसिंहजी की स्वामिभक्ति का गहरा परिचय मिलता है।

जब यह बात महाराणा सरूपसिंहजी को मालूम हुई तब उन्होने मेहता रामसिंहजी को पीछा बुलाया मगर उसके प्रथम ही मेहताजी का स्वर्गवास हो गया।

मेहता रामसिंहजी को महाराणाजी की तरफ से तथा पोलिटिकल एजंट कप्तान कॉब और राबिन्सन की तरफ से कई रुक्के और परवाने मिले थे, जो हम इनकी फेमिली-हिस्ट्री के साथ देने का प्रयत्न करेंगे।

मेहता शेरसिंहजी

मेहता शेरसिंहजी अगरचन्दजी के तीसरे पुत्र सीतारामजी के पुत्र थे। आप भी मेहता रामसिंहजी के समकालीन थे। जब मेहता रामसिंहजी पर महाराणा की नाराजी होती थी तब मेवाड़ के दीवान आप नियुक्त किये जाते थे और जब आप से महाराणा अप्रसन्न हो जाते थे तब महाराणा मेहता रामसिंहजी को अपना दीवान बना लिया करते थे। इस प्रकार करीब तीन चार बार बारी २ से आप दीवान बनाये गये। आप बड़े ईमानदार और सच्चे पुरुष थे। मगर ऐसा कहा जाता है कि प्रबन्ध कुशलता की आप में कुछ कमी थी, जिससे शासन-कार्य्य में आप को विशेष सफलता न हुई। फिर भी आपने उदयपुर राज्य की बहुत सेवाएँ की। आपने कई लड़ाइयों में भी बड़ी वीरतापूर्वक भाग लिया। इन सब का वर्णन हम आगे चल कर इनके परिवार के इतिहास में करेंगे।

सेठ जोरावरमलजी बापना

उदयपुर के ओसवाल मुत्सुद्दियों में सेठ जोरावरमलजी बापना का नाम भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यद्यपि आप व्यापारी लाइन के पुरुष थे फिर भी राजकीय वातावरण पर आपका और आपके बड़े भ्राता श्री बहादुरमलजी बापना का बहुत अच्छा प्रभाव था।

जिस समय अंगरेज लोग राजस्थान में राजपूत राजाओं के साथ मैत्री स्थापित करने के प्रयत्न में लगे हुये थे उस समय सेठ बहादुरमलजी और जोरावरमलजी बापना का बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर, उदयपुर, इन्दौर इत्यादि रियासतों पर अच्छा प्रभाव था। इसलिए ब्रिटिश सरकार के साथ इन रजवाड़ों का मैत्री सम्बन्ध स्थापित करवाने में आपने बहुत मदद दी। खास कर इन्दौर राज्य के कई महत्वपूर्ण कार्य्यों में जोरावरमलजी का बहुत हाथ रहा। ब्रिटिश गवर्नमेण्ट और रियासतों के बीच जो अहदनामे हुए उनमें कई मुश्किल बातों को हल करने में आपने बड़ी सहायताएँ कीं।

सन् १८१८ ई० में कर्नल टॉड राजपूताने के पोलिटिकल एजण्ट होकर उदयपुर गये। उस समय मेवाड़ की आर्थिक दशा बहुत खराब हो रही थी ऐसी विकट स्थिति में कर्नल टॉड ने महाराणा भीमसिंहजी को सलाह दी कि सेठ जोरावरमलजी ने इन्दौर की हालत सुधारने में रियासत को बहुत मदद की है इसलिए यहाँ पर भी उनको बुलाया जावे। इस पर महाराणा ने सेठ जोरावरमलजी को अपने यहाँ आमंत्रित किया और अत्यन्त सम्मान के साथ कहा कि आप अपनी कोठी को यहाँ स्थापित करें। महाराणा की आज्ञा को स्वीकार कर सेठ जोरावरमलजीने उदयपुर में अपनी कोठी स्थापित की, नये गाँव बसाये, किसानों को सहायताएँ दीं और चोर लुटेरों को दण्ड दिलवाकर राज्य में शान्ति स्थापित की। इनकी इन बहुमूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा ने उन्हें पालकी और छड़ी का सम्मान और "सेठ" की उपाधि बख्शी तथा बदनौर परगने का पारसौली ग्राम भी जागीर में दिया। पोलिटिकल एजेण्ट ने भी आपको प्रबन्ध कुशल देखकर अंग्रेजी राज्य के खजाने का प्रबन्ध भी आपके सिपुर्द कर दिया।

महाराणा स्वरूपसिंहजी के समय में रियासत पर बीस लाख रुपये का कर्ज हो गया था जिसमें अधिकांश सेठ जोरावरमलजी का था, महाराणा ने आपके कर्ज का निपटारा करना चाहा। उनकी यह इच्छा देख सन् १८४६ की २८ मार्च को सेठ जोरावरमलजी ने महाराणा को अपनी हवेली पर निमन्त्रित किया और जैसा महाराणा साहब ने चाहा उसी प्रकार कर्ज का फैसला कर लिया। इससे प्रसन्न होकर महाराणा साहब ने आपको कुण्डाल गाँव दिया तथा आपके पुत्र चान्दणमलजी को पालकी और पौत्र इन्द्रपाल जी को भूषण और सिरोपाव दिये। इन्हीं के अनुकरण पर दूसरे लेनदारों ने भी महाराणा की इच्छानुसार अपने कर्ज का फैसला कर लिया और इस प्रकार रियासत का भारी कर्ज सहज ही अदा हो गया इस बुद्धिमानी पूर्ण कार्य से आपकी बड़ी प्रशंसा हुई।

इस प्रकार अपनी बुद्धिमानी, राजनीतिज्ञता और व्यापार दूरदर्शिता से सारे राजस्थान में लोकप्रियता और नेकनामी प्राप्त कर सन् १८५३ की २६ फरवरी को आप स्वर्गवासी हुए।*

---

* इन्दौर के वर्तमान प्राइम मिनिस्टर रा० बा० सिरेमलजी बापना सी० आई० ई० आपके ही वंशज हैं।

मेहता गोकुलचन्दजी और कोठारी केशरीसिंहजी

महाराणा सरूपसिंहजी ने मेहता शेरसिंहजी की जगह देवीचन्दजी के पौत्र मेहता गोकुलचन्दजी को अपना प्रधान बनाया। फिर उनके स्थान पर संवत् १९१६ में कोठारी केशरीसिंहजी को प्रधान बनाया। वि० सं० १९२० में मेवाड़ के पोलिटिकल एजंट ने मेवाड़ रीजेंसी कौंसिल को तोड़ कर उसके स्थान पर "अहलियान श्री दरबार राज्य मेवाड़" नाम की कचहरी स्थापित की और उसमें मेहता गोकुलचन्दजी और पंडित लक्ष्मणराव को नियुक्त किया। वि० सं० १९२६ में कोठारी केशरीसिंहजी ने प्रधान पद से इस्तीफा दे दिया तो उनके स्थान पर महाराणा ने मेहता गोकुलचन्दजी और पंडित लक्ष्मणराव को नियुक्त किया। इसी समय बड़ी रूपाहेली और लांविया वालों के बीच कुछ जमीन के बाबद झगड़ा होकर लड़ाई हुई, जिसमें लांविया वालों के भाई आदि मारे गये। उसके बदले में रूपाहेली का 'तसवारिया' गाँव लांविया वालों को दिलाना निश्चय हुआ; परन्तु रूपाहेली वालों ने महाराणा शम्भुसिंहजी की बात न मानी, जिसपर गोकुलचन्दजी की अध्यक्षता में तसवारिया पर सेना भेजी गई। वि० सं० १९३१ में महाराणा शम्भुसिंहजी ने मेहता गोकुलचन्दजी और सही वाले अर्जुनसिंहजी को महकमा खास के काम पर नियुक्त किया। मेहता गोकुलचन्दजी इस काम को कुछ समय तक कर माँडलगढ़ चले गये और वहीं पर आप स्वर्गवासी हुए।

कोठारी केशरीसिंहजी सब से प्रथम संवत् १९०२ में रावली दुकान (State Bank) के हाकिम नियुक्त किये गये। तदनंतर संवत् १८७८ में आप महकमा दाण (चुंगी) के हाकिम हुए थे। महाराणा के इष्टदेव एकलिंगजी का मन्दिर-सम्बन्धी प्रबन्ध भी आपके सुपुर्द हुआ। आप महाराणाजी के सलाहकार भी रहे। आपकी इन सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणाजी ने आपको नेतावळ नाम का गाँव जागीर में इनायत किया तथा स्वयं महाराणाजी ने आपकी हवेली पर पधार कर आपका सत्कार किया। तदनंतर आप महाराणा के द्वारा मेवाड़ के प्रधान बनाए गये और बोरांव तथा पैरों में पहिनने का सोने के लंगर भी आपको बक्षे गये। जिस समय महाराणा शम्भुसिंहजी की बाल्यावस्था में रीजेंसी कौंसिल स्थापित हुई थी उस समय आप भी उस कौंसिल के एक सदस्य थे तथा रेव्हेन्यू के काम का निरीक्षण करते थे।

कोठारी केशरीसिंहजी बड़े स्पष्टवक्ता एवं स्वामिभक्त महानुभाव थे। आपने रीजेंसी कौंसिल के अन्दर रह कर मेवाड़ के हित के लिये कई कार्य किये। आपने कई समय कौंसिल के कार्यकर्त्ताओं को जागीरें-यह कह कर कि जागीरें देने का अधिकार महाराणाजी को है-देने से रोक दिया। इसी प्रकार के कई कार्य्यों में मेवाड़ के सरदारों के घोर विरोध का सामना करते हुए आपने मेवाड़ का बहुत बड़ा हित

किया। कोठारी केशरीसिंहजी पर इसके कारण बहुत से मेवाड़ के सरदार अप्रसन्न हो गये और वे उन्हें किसी भी प्रकार से निकालने का उपाय सोचने लगे। अन्त में तत्कालीन पोलिटिकल एजण्ट के पास कुछ सरदार पहुँचे और कोठारी केशरीसिंहजी पर २ लाख रुपये के गबन का अपराध लादकर मेवाड़ से उसे निकालने के लिये उकसाया। पोलिटिकल एजण्ट ने बिना जाँच किये ही इस कथन पर विश्वास कर लिया और उन्हें पदच्युत कर मेवाड़ राज्य से निकाल दिया। मगर महाराणा को कोठारी केसरीसिंहजी की स्वामिभक्ति पर पूरा विश्वास था, अतः उन्होंने इस झूँठे दोष की पूरी जाँच की तथा निर्दोष सिद्ध होने पर कोठारी केसरीसिंहजी को बड़े आदर के साथ वापिस बुलाकर उदयपुर का दीवान बनाया।

वि० संवत १९२५ में जब मेवाड़ में बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा तब आपने प्रजा हित के लिए राज्य के बड़े बड़े साहूकारों से मिलकर धान्य वगैरह की योग्य व्यवस्था करदी थी, कोठारी केसरीसिंहजी के इस कार्य से बहुत-सी प्रजा आप पर बड़ी प्रसन्न हो गई थी। तदनंतर वि० सं० १९२६ में आपने प्रधानगी के पद से इस्तीफा दे दिया।

कोठारी केसरीसिंहजी बड़े स्पष्ट वक्ता, अनुभवी, स्वामिभक्त, प्रबन्ध-कुशल तथा वीर पुरुष थे। आप अपने इन गुणों के कारण ही अपने बहुत से शत्रुओं के बीच राज्यकार्य करते रहे तथा महाराणा और प्रजा के हितैषी बने रहे। महाराणाजी भी आपका विशेष सत्कार करते थे। साथ ही महत्व के कामों में आपकी सलाह ले लिया करते थे। यह हम ऊपर लिख चुके हैं कि आप बड़े प्रबन्ध-कुशल भी थे। एक समय महाराणा ने अपने निरीक्षण में अलग अलग विभागों की व्यवस्था की और किसानों से अन्न का हिस्सा लेना बन्दकर ठेके के तौर पर नगद रुपया लेना चाहा। महाराणा के इस सुधारकार्य्य को कार्यान्वित करने के लिए कोई योग्य आदमी न मिला। तब आपने अपने विश्वसनीय स्वामिभक्त कोठारी केसरीसिंहजी को इसके प्रबन्ध का कार्य्य सौंपा जिसे आपने बड़ी योग्यता से संचालित किया। आपने उन सब विभागों का प्रबन्ध इतने सुचारु रूप से करके दिखला दिया कि आपका स्थापित किया हुआ प्रबन्ध आपकी मृत्यु के बहुत समय बाद तक बराबर चलता रहा। आपकी सेवाओं से महाराणाजी बड़े प्रसन्न हुए और आपका बहुत सत्कार किया। जब आप बीमार पड़े तब महाराणाजी स्वयं आपके घर पर पधारे और आपको पूर्णरूप से सांत्वना दी। इस प्रकार आप वि० सं० १९२८ में स्वर्गवासी हुए।

कोठारी छगनलालजी

कोठारी केशरीसिंहजी के बड़े भाई कोठारी छगनलालजी भी बड़े ही प्रतिभाशाली तथा स्वामिभक्त महानुभाव थे। आपने संवत् १९०० में खजाने का काम किया और उसके बाद क्रमशः कोठार तथा

फौज का कार्य किया। आप अपने कामों में बड़े ही कुशल थे। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर तत्कालीन महाराणा ने आपको सुरजाई नामक गाँव जागीरी में बख्शा। आपके आधीन समय २ पर कई परगने तथा एकलिंगजी के भण्डार का काम भी रहा। अपने छोटे भाई केशरीसिंहजी की मृत्यु के पश्चात् आप महकमे माल के आफिसर बनाये गये। उसी समय संवत् १९२० में महाराणा ने प्रसन्न होकर आपको पैरों में पहनने के लिये सोने के कड़े प्रदान किये तथा उसी समय भारत सरकार की ओर से दिल्ली दरबार में आपको 'राय' की सम्माननीय पदवी से सम्मानित किया गया। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर तत्कालीन पोलिटिकल एजण्ट तथा कई महानुभावों ने आपको सार्टिफिकेट प्रदान किये जिनमें से उदाहरणार्थ एक की नकल यहाँ पर दी जाती है।

This is to certify that Kothari Chhaganlal has been in-charge of the Darbar Treasuary during my tenure of office and has performed his duties in a highly satisfactory manner. He is an intelligent and highly respectable Darbar official and a very good man of his inness and I commend him to the notic of my successor.

Udaipur
27th November, 1869

S/d M. Miclon
Political Agent.

पन्नालालजी मेहता

मेहता अगरचन्दजी के खानदान में मेहता पन्नालालजी भी बड़े प्रतिष्ठित और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति हुए। ये बड़े राजनीतिज्ञ और शासन-कुशल व्यक्ति थे। इनका राजनैतिक दिमाग बहुत मंजा हुआ था। सबसे पहले आप संवत् १९२६ में महाराणा शम्भूसिंहजी के द्वारा महकमा खास के सेक्रेटरी बनाये गये। यहाँ यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि यह महकमा खास प्रधान का पद तोड़कर बनाया गया था। मेहता पन्नालालजी के महकमा खास में नियुक्त होते ही महकमा खास का काम जो कि पहले पूरी हालत पर नहीं पहुँच पाया था, इनकी बुद्धिमानी से उत्तरोत्तर तरक्की करने लगा। इसी समय से स्टेट में इन्तिजामी हालत का प्रारम्भ समझना चाहिये। महाराणा साहब की दिली यह ख्वाहिश थी कि मेवाड़ में अनाज बाँट लेने का रिवाज़ बंद कर दिया जाय और इसके स्थान पर ठेकेबंदी होकर नकद रुपया लिया जाय। आपने यह इच्छा कोठारी केशरीसिंहजी पर प्रकट की। कोठारी केशरीसिंहजी ने यह काम अपनी जिम्मेदारी पर लिया और करीब १० साल पीछे की आमदनी का औसत निकाल कर बड़ी बुद्धिमानी से

कुल मेवाड़ में ठेका बाँध दिया। इस काम में मेहता पन्नालालजी ने कोठारी केशरीसिंहजी को बड़ी मदद दी। कोठारीजी के पश्चात महकमा माल के अफसर कोठारी छगनलालजी एवम् मेहता पन्नालालजी रहे।

इसके पश्चात संवत् १९३० से १९३२ तक इनके जीवन में कई प्रकार की घटनाएं घटीं जिनका वर्णन हम उनकी फेमिली हिस्ट्री के साथ करेंगे। संवत् १९३२ की भादवा सुदी चौथ को फिर से उन्हें महकमा खास का काम सौंपा गया। आपके महकमा खास में आने के बाद रियासत में कई नये काम हुए। संवत् १९३५ में आपने स्टेट में सेटलमेंट की पद्धति को जारी किया। जो उस समय राजपूताने की सब रियासतों में पहली थी। आपके हाथों से दूसरा महत्व पूर्ण कार्य विद्या के विषय में हुआ। आपके द्वारा यहाँ के विद्या-विभाग को बहुत प्रोत्साहन मिला। आप ही ने मेवाड़ के जिलों के अन्दर जहाँ पहले स्कूल और हास्पिटल नहीं थे, खुलवाये। इसी प्रकार और भी प्रायः सभी विभागों में आपने अपनी बुद्धिमानी से बहुत सुधार किया। भारत गवर्नमेंट ने आपको पहले पहल राय की पदवी प्रदान की। उसके पश्चात् ही आपको सी० आई० ई० का सम्माननीय पद मिला। आपके कार्यों की प्रायः समी पोलिटिकल एजण्टस, ए० जी० जी० तथा वाइसराय जैसे महानुभवों ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की, तथा आपको कई सार्टीफिकेट प्रदान किये। इनमें से हम एक यहाँ दे रहे हैं शेष इनके पारवारिक इतिहास में देंगे।

> "Rai Pannalal is an intelligent, energetic and hard working officer and has rendered great assistance to the Political Agent in the administration of the state during the minority. He is the only person capable of holding the high post, he now Occupies in the state."

यह रुक्का संवत् १८७६ में राजपूताने के तत्कालीन पोलिटिकल एजण्ट द्वारा दिया गया था। आप लिखते हैं कि राय पन्नालालजी बड़े ही तीक्ष्ण बुद्धिवाले तथा उत्साही पुरुष हैं। महाराणाजी की नाबालिगी के समय में आपने मेवाड़ के राज्य कार्य्यों में मुझे बड़ी सहायता दी। आप बड़े परिश्रमी एवं इस उच्च ओहदे के योग्य महानुभाव हैं।

मेहता फतेलालजी

आप मेहता पन्नालालजी सी० आई० ई० के पुत्र हैं। आप बाल्यावस्था से ही बड़े विचक्षण बुद्धि और मेधावी हैं। आपके साहित्यिक और सामाजिक जीवन के विषय में आपके खान-दान के इतिहास के साथ प्रकाश डालेंगे। राजनैतिक जीवन के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि आपका जीवन उदयपुर के राजकीय वातावरण में बहुत महत्वपूर्ण रहा है। यद्यपि आप अपने पिता की तरह प्राइम मिनिस्टरी

के ओहदे पर नहीं रहे फिर भी उदयपुर के राजकीय वातावरण में आपका बहुत अच्छा प्रभाव रहा है। आप यहाँ की महद्राज सभा के मेम्बर हैं। दिल्ली के अंतर्गत् देशी रियासतों का प्रश्न हल करने के लिए बटलर कमेटी के सम्बन्ध में जो बैठक हुई थी उसमें चेम्बर आफ् प्रिंसेस की तरफ से स्पेशल आर्गेनिज़ेशन का एक आफ़िस खुला था। उसमें राज्य की ओर से जो कागजात् भेजे गये, उन्हें महाराणा साहब की आज्ञानुसार आप ही ने तैय्यार किये तथा उन्हें लेकर आप ही देहली भेजे गये। इसी प्रकार और भी राजनैतिक बातों में स्टेट में आपका अच्छा प्रभाव है।

सिंघी बछराजजी

आपका जन्म जोधपुर के सिंघी इन्द्रराजजी के भाई के खानदान में संवत् १९०५ में हुआ। महाराजा जसवंतसिंहजी (जोधपुर) के आप बड़े कृपा पात्र रहे। आपने संवत् १९४६ से संवत् १९५६ तक जोधपुर में बक्षीगिरी (Commander-in-Chief) का कार्य्य किया और वहाँ की स्टेट कौन्सिल के मेम्बर रहे। सिंघवी भीमराजोत खानदान में आपने अच्छा नाम और सन्मान पाया। मुत्सुद्दियों के अंतिम समय में इन्होंने कई स्थानों पर अपनी बहादुर प्रकृति का अच्छा परिचय दिया। संवत् १९५६ में आपको कई भीतरी कारणों की वजह से जोधपुर से उदयपुर आना पड़ा। यहाँ रियासत ने आपका बहुत सम्मान किया और १०००) एक हजार रुपया मासिक उनके हाथ खर्चे के लिये देकर उन्हें सम्मान पूर्वक यहाँ रखा। संवत् १९६८ में आप वापस जोधपुर बुलाए गये। उस समय महाराणा फतेसिंह जी ने बछराजजी की दावत स्वीकार की और रवाना होते समय दोनों पैरों में सोना बक्षा। जोधपुर में आपको अंतिम समय तक ६००) मासिक पेंशन मिलती रही।

मेहता भोपालसिंहजी जगन्नाथसिंहजी

मेहता भोपालसिंहजी भी उदयपुर के ओसवाल मुत्सुद्दियों में बड़े प्रतिभाशाली व्यक्ति हुए। आप केवल १८ वर्ष की अवस्था में राशमी जिले के हाकिम नियुक्त हुए। इसी समय मेवाड़ राज्य में सेटलमेंट का नया काम जारी किया गया जिसके खिलाफ राशमी जिले के किसानों और जाटों ने बहुत ज़ोरों का आन्दोलन उठाया और उपद्रव करना प्रारंभ किया। इस समय आपने बहुत बुद्धिमानी से उन लोगों को समझाया तथा सेटलमेंट का कार्य्य शांति पूर्वक करवाने में बहुत मदद दी। वहाँ से बदल कर आप मांडल जिले में गये। वहाँ जाकर आपने वहाँ की आमदनी को बहुत बढ़ाया। इससे प्रसन्न होकर महाराणा फतेसिंहजी ने आपको बैठक बक्षी। संवत् १९४६ में आप रेव्हेन्यू सेटलमेंट आफिसर नियुक्त किये गये। उस कार्य्य को आपने बहुत

योग्यता एवम बुद्धिमानी से संचालित किया तथा किसानों के साथ पूरी २ सहानुभूति रक्खी। संवत् १९५६ में अकाल पड़ने से किसानों पर बहुत बकाया रहने लगा, तब आपने उनकी आर्थिकदशा का खयाल करके उनको लाखों रुपयों की छूट दिलवाई। संवत् १९६१ में आप महकमा ख़ास के प्रधान नियुक्त हुए। इस काम को भी आपने बड़ी बुद्धिमानी के साथ संचालित किया।

आपके पुत्र मेहता जगन्नाथसिंजी भी बड़े बुद्धिमान सज्जन हैं। आपके पिता मेहता भोपालसिंहजी का स्वर्गवास हो जाने पर महाराणा साहब ने आपको अपनी पेशी का काम सिपुर्द किया। उसके पश्चात् संवत् १९७१ में आपको तथा पं० शुकदेवप्रसादजी को महकमा खास के प्रधान बनाए। जब संवत् १९७५ में पंडितजी जोधपुर चले गये तब आप ही अकेले महकमा खास का काम करते रहे। उसके पश्चात् संवत् १९७७ में लाला दामोदरलालजी पं० शुकदेवप्रसादजी के स्थान पर आये। संवत् १९७८ तक आप दोनों ही महकमा खास का काम करते रहे। वर्तमान में आप मेम्बर कौंसिल और कोर्ट आफ़ वार्डस के आफ़िसर है।

कोठारी बलवन्तसिंहजी

आप कोठारी केसरीसिंहजी के दत्तक पुत्र हैं। संवत् १९३८ में आपको महाराणा साहब ने महकमा देवस्थान का हाकिम मुकर्रर किया। फिर संवत् १९४५ में आप महाराणा फतेसिंहजी द्वारा महद्राज सभा के मेम्बर बनाये गये तथा सम्मानार्थ आपको सोने के लंगर भी इनायत किये गये। इसके पश्चात् इन्हें रावली दुकान (State Bank) का काम दिया गया। राय मेहता पन्नालालजी के इस्तीफ़ा देने पर महकमा खास का काम आपके तथा सही वाले अर्जुनसिंहजी के सिपुर्द किया। जब इन दोनों ने संवत् १९६८ में अपने पद से इस्तीफ़ा पेश कर दिया तब यह काम मेहता भोपालसिंहजी और पंचोली हीरालालजी को मिला। इन दोनों का स्वर्गवास हो जाने पर यह काम फिर से संवत् १९६९ में आपही को मिला, जिसे आप तीन वर्ष तक करते रहे। इसी प्रकार महकमा देवस्थान तथा टकसाल का काम भी बहुत वर्षों तक आपके हाथ में रहा। इन सब कार्य्यों को आप अवैतनिक रूप से करते रहे। इस प्रकार राज्य के और भी बहुत से भिन्न २ महकमों में कुशलता और राजनीतिज्ञता से आप सेवा करते रहे। आपके पुत्र गिरधारीसिंहजी इस समय हाकिम देवस्थान हैं।

कोठारी मोतीसिंहजी

आप कोठारी राय छगनलालजी के यहां दत्तक आये। आपको पहले पहल महाराणा साहब ने अफ़सर खजाना टकसाल, और स्टाम्प मुकर्रर फरमाया और कंठी, सिरोपाव तथा दरबार में बैठक इनायत

कर आपको सम्मानित किया। कुछ समय तक आप महकमा देवस्थान और जिला गिरवा के हाकिम भी रहे।

आपके पुत्र न होने से आपके यहाँ कुं० दलपतसिंहजी दत्तक आये। आप सन् १९२४ में सिरोही स्टेट में मुलाजिम हुए। वहाँ करीब ७ वर्ष तक मैजिस्ट्रेट, वकील आबू, असिस्टेन्ट चीफ मिनिस्टर, एक्टिंग चीफ मिनिस्टर इत्यादि ऊँचे २ पदों पर काम करते रहे। सन् १९२७ में आपको शाहंशाह हिन्द की ओर से गवर्नमेंटी फौज में (In His Majesty's Land forces) लेफ्टिनेन्ट का काम इनायत हुआ। आपको कई अंग्रेज हाई ऑफिसर्स ने कई सार्टिफिकेट दिये हैं जिन्हें हम आपके पारिवारिक इतिहास के साथ देंगे।

मेहता तेजसिंहजी

आप स्वर्गीय मेहता रामसिंहजी के वंशज हैं आप कई वर्षों से उदयपुर के वर्त्तमान महाराणा साहब के प्राइवेट सेक्रेटरी का कार्य्य कर रहे हैं। आप बड़े योग्य, अनुभवी, विद्याप्रेमी एवं मिलनसार सज्जन हैं। प्रत्येक सत्कार्य्य में आपकी बड़ी सहानुभूति रहती है। आपके छोटे भाई डाक्टर मोहनसिंहजी मेहता एम० ए० एल० एल० बी० पी० एच० डी० बैरिस्टर एट लॉ उदयपुर राज्य के रेव्हेन्यू कमिश्नर हैं। आप बड़े विद्वान, देशभक्त, स्वार्थत्यागी और शिक्षा के बड़े ही प्रेमी हैं। भारतीय युवकों के हृदयों को सुशिक्षा से प्रकाशित कर उनमें उच्च चरित्र का संगठन करना तथा उन्हें इस योग्य बनाना कि वे भारत का समुज्वल भविष्य निर्माण कर सकें यह आपके जीवन का प्रधान लक्ष्य है। सरकारी अफसर होते हुए भी आपका जीवन सार्वजनिक है। आपने उदयपुर में एक विद्याभवन नामकी संस्था खोल रक्खी है। वह भारतवर्ष की इनी-गिनी आदर्श संस्थाओं में से एक है।

बीकानेर

जोधपुर तथा उदयपुर की तरह बीकानेर के राजनैतिक रंग-मंच पर भी ओसवाल मुत्सुद्दियों ने बड़े मार्के के खेल खेले हैं। पाठक यह जानते हैं कि जोधपुर नगर के निर्माता राव जोधाजी के बड़े पुत्र राव बीकाजी ने नवीन राज्यस्थापित करने की महान् अभिलाषा से प्रेरित होकर मारवाड़ की तत्कालीन राजधानी मण्डौर से उत्तर की ओर प्रस्थान किया था। उस समय बच्छराजजी नामक एक ओसवाल मुत्सुद्दी इनके साथ थे। ये बच्छराजजी बड़े ही रण कुशल और राजनीति धुरंधर थे। मारवाड़ के राजा राव रणमलजी और राव जोधाजी के पास बड़ी सफलता के साथ ये प्रधानगी का काम कर चुके थे। इससे राव बीकाजी की महान् अभिलाषाओं की पूर्ति में बच्छराजजी के अनुभवों ने बड़ी सहायता दी थी। ईसवी सन् १४८८ में जब चारों ओर विजय प्राप्त कर राव बीकाजी ने राजधानी बीकानेर की नींव डाली थी उसमें उन्हें अपने वीर मंत्री बच्छराजजी से बड़ी सहायता मिली थी। राव बीकाजी ने भी उनकी बड़ी प्रतिष्ठा की और उन्हें वे अपने आत्मीय जन की तरह मानने लगे। इतना ही नहीं, बच्छराजजी के नाम से बच्छासार नामक एक गाँव भी बसाया गया।* जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं मंत्री बच्छराजजी बड़े राजनीतिज्ञ, दूरदर्शी और सफल सेना नायक थे। राव बीकाजी की सब लड़ाइयों में आपने अपनी वीरता के बड़े जौहर दिखलाये थे। इस पर रावजी ने प्रसन्न होकर आपको "पर भूमि पंचानन" की उच्च पदवी से विभूषित किया था।

राव लूनकरनजी और ओसवाल मुत्सुद्दी

राव बीकाजी के स्वर्गवासी होने के बाद इनके बड़े पुत्र राव लूनकरणजी संवत् १५५१ में बीकानेर के राज्य सिंहासन पर बिराजे। आपने बच्छराजजी के पुत्र करमसीजी को अपना प्रधान नियुक्त किया। करमसीजी अपने पिता की तरह बड़े वीर, धर्मात्मा और राजनीतिज्ञ थे। आपने कई युद्धों में भाग लिया। आखिर में नारनौल के लोदी हाजीखाँ के साथ युद्ध कर आप वीरगति को प्राप्त हुए। राव लूनकरणजी की मृत्यु के पश्चात् राव जैतसीजी बीकानेर के सिंहासन पर अधिष्ठित हुए। आपने करमसीजी के छोटे भाई वरसिंहजी बच्छावत को अपना प्रधान बनाया। कहने का अर्थ यह है कि राव बीकाजी और उनके पुत्र तथा

---

* यह बात बच्छावतों के ख्यात में लिखी है।

पौत्रों के समय में भी ओसवाल मुत्सुद्दियों का खूब दौर दौरा रहा। महाराजा की अधीनता में वे शासन के प्रधान सूत्रधार रहे।

जैतसिंहजी और ओसवाल मुत्सुद्दी

रात्र लूनकरनजी के बाद राव जैतसिंहजी बीकानेर के नरेश हुए। आपके समय में वरसिंहजी और उनके पश्चात् उनके पुत्र नगराजजी प्रधान मंत्री के पद पर अधिष्ठित हुए। आप बड़े राजनीतिज्ञ और कुशल शासक थे। तत्कालीन दिल्ली सम्राट की सेवा में भी आपको रहना पड़ा था। वहाँ आपने अपनी चतुराई से सम्राट को बहुत खुश कर लिया और बीकानेर का उससे हित साधन करवाया।

इसी समय जोधपुर के प्रतापी महाराजा मालदेव ने जाङ्गल (वर्तमान बीकानेर राज्य) देश पर अधिकार करने की इच्छा प्रदर्शित की। यह बात तत्कालीन बीकानेर नरेश जैतसिंहजी को मालूम होगई। इस पर महाराजा जैतसिंहजी ने नगराजजी को कहा कि मालदेव से विजय प्राप्त करना कठिन है। इसलिए उचित यह है कि उनके चढ़ आने के पहले ही सम्राट शेरशाह की सहायता प्राप्ति का प्रबन्ध कर लिया जाय। कहना न होगा कि नगराजजी सम्राट् शेरशाह की सेवा में पहुँचे और उन्होंने सम्राट को मालदेव के ऊपर चढ़ाई करने के लिये उकसाया। लेकिन सम्राट् शेरशाह की सहायता पहुँचने के प्रथम ही मालदेव के साथ युद्ध करते जैतसिंहजी मारे गये और बीकानेर पर मालदेवजी का अधिकार हो गया। इसके कुछ समय बाद सम्राट् शेरशाह एक बहुत बड़ी फौज के साथ मारवाड़ पर चढ़ आया। मारवाड़ के राव मालदेवजी ने बड़ी बहादुरी के साथ उसका मुकाबिला किया। वीर राठोड़ों की बहादुरी के सामने शेरशाह बादशाह किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गया। उसके सामने निराशा का अंधकार छागया, वह वापस लौटना ही चाहता था कि वीरमदेव नामक मेड़ता के एक-सरदार के षड्यंत्र और चालाकी से सारा पांसा उलट गया। सम्राट शेरशाह की विजय हो गई और इस तरह नगराजजी ने शेरशाह की मदद द्वारा मालदेव से बीकानेर का राज्य छीनकर जैतसीजी के पुत्र कल्याणसिंहजी को दिला दिया।

राव कल्याणसिंहजी और ओसवाल मुत्सुद्दी

राव कल्याणसिंहजी ने संवत् १६०२ से लेकर संवत् १६३० तक बीकानेर का राज्य किया। आपके समय में भी शासन की बागडोर प्रायः ओसवाल मुत्सुद्दियों के ही हाथ में रही। राव कल्याणमलजी ने भूत-पूर्व मंत्री नगराजजी के पुत्र संग्रामसिंहजी को अपना प्रधान मंत्री नियुक्त किया। संग्रामसिंहजी ने शत्रुंजय आदि तीर्थों की यात्रा के लिये संघ निकाले। जब आप यात्रा करते हुए चित्तोड़गढ़ में आये तब वहाँ के तत्कालीन

महाराणा उदयसिंहजी ने आपका बड़ा सत्कार किया। वहाँ से रवाना होकर जगह २ सम्मान पाते हुए आप सानंद बीकानेर पहुँच गये। आपके सद्व्यवहार से राव कल्याणसिंहजी बड़े प्रसन्न हुए।

राव रायसिंहजी और मेहता करमचन्द

राव कल्याणसिंहजी के पश्चात् राव रायसिंहजी बीकानेर के राजसिंहासन पर विराजे। कहने की आवश्यकता नहीं कि आपके समय में भी ओसवाल मुत्सुद्दियों का प्राधान्य रहा। आपने मेहता संग्रामसिंहजी के पुत्र करमचन्दजी को अपना प्रधान नियुक्त किया। ये करमचन्दजी महान् राजनीतिज्ञ, शासन कुशल, धर्मात्मा और वीर थे। आपके उद्योग से सम्राट् अकबर ने राव रायसिंहजी को राजा का खिताब प्रदान किया। इसी समय के लगभग नागपुर से मिर्जा इब्राहिम ससैन्य बीकानेर की सीमा पर आ पहुँचा। जब यह खबर बच्छावत करमचन्दजी को लगी तब वे भी अपनी फौजों के साथ उसके मुकाबिले के लिये चल पड़े। दोनों में युद्ध हुआ और विजय की माला मेहता करमचन्दजी के गले में पड़ी। इसके कुछ समय बाद आपने मुगल सम्राट् अकबर की ओर से गुजरात पर चढ़ाई की और वहाँ के शासक मिर्जा महम्मद हुसेन को हराकर विजय प्राप्त की। आपने कुछ समय के लिये सोजत पर बीकानेर राज्य का झण्डा उड़वाया और जालौर के स्वामी को अपने अधिकार में किया। आपने सिंध देश के बहुत से हिस्से को बीकानेर राज्य में मिलाया और वहाँ की नदी में मच्छियों का मारना बन्द करवाया। आपने इस युद्ध में बिलूचियों को हराकर विजय प्राप्त की। इस प्रकार अनेक स्थानों पर आपने अपने अपूर्व वीरत्व का परिचय दिया।

मेहता करमचन्दजी का दिल्ली के तत्कालीन प्रतापी सम्राट् अकबर पर भी खूब प्रभाव था। आपने सम्राट् अकबर को जैन-धर्म के महान् सिद्धान्तों का परिचय करवाया, आप ही ने सुप्रसिद्ध जैनाचार्य्य श्री जिनचन्द्रसूरिजी से सम्राट् अकबर की मुलाकात करवाई। सम्राट् अकबर ने उक्त आचार्य्य से जैनधर्म के महान् अहिंसा सिद्धान्त को श्रवण किया। इतना ही नहीं उन्होंने जैनियों के खास पर्वों के उपलक्ष में हिंसा न करने के आदेश सारे साम्राज्य में भेजे।

ओसवाल जाति के इतिहास में बच्छावत करमचन्दजी का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। क्या राजनैतिक दृष्टि से, क्या सैनिक दृष्टि से, क्या धार्मिक और सामाजिक दृष्टि से मेहता करमचन्दजी अपना विशेष स्थान रखते हैं। सं० १६३५ में जब भारतवर्ष में भयंकर दुर्भिक्ष पड़ा था, उस समय मेहता करमचन्दजी ने हजारों आदमियों का पालन किया था। सैकड़ों कुटुम्बों को आपने साल २ भर तक अन्न वस्त्र प्रदान कर उनके दुःखों को दूर किया था। इस प्रकार आपने जैन-धर्म के लिये भी कई ऐसे महान्

कार्य्य किये जो उक्त धर्म के इतिहास में सदा चिरस्मरणीय रहेंगे। हम उन सब का वर्णन ओसवालों का धार्मिक महत्व नामक अध्याय में विस्तार पूर्वक करेंगे।

करमचन्दजी की दूरदर्शिता

हम मेहता करमचन्दजी की परम राजनीतिज्ञता और दूरदर्शिता के विषय में पहले थोड़ा सा लिख चुके हैं। इस सम्बन्ध में उनके जीवन की एक घटना का और उल्लेख कर पाठकों के सामने उनकी दूरदर्शिता का जाज्वल्यमान उदाहरण उपस्थित करते हैं।

सम्राट् अकबर पर, जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, मेहता करमचन्दजी का बहुत काफी प्रभाव था। उक्त सम्राट कई वक्त उन्हें अपने दरबार में बुलाया करते थे। इस समय भी उन्होंने महाराजा रायसिंहजी के द्वारा इन्हें अपने दरबार में बुलाया और आपका बड़ा सम्मान किया। बादशाह ने बड़ी प्रसन्नता के साथ आपको सोने के जेवर सहित एक बहुत मूल्यवान घोड़ा प्रदान किया। इतना ही नहीं, वे इनके प्रति तरह २ की कृपाएँ बताने लगे। इससे इन्होंने अपना शेष जीवन दिल्ली ही में बिताने का निश्चय किया। इसका एक कारण यह भी था कि बीकानेर नरेश रायसिंहजी आपसे किसी कारणवश नाराज हो गये थे। जान पड़ता है कि महाराज रायसिंहजी के व्यवहार विशेष से इनकी कोमल आत्मा को धक्का पहुँचा होगा और निराशा के मानसिक वातावरण में गुजर कर वे देहली पहुँचे होंगे और सम्राट अकबर की कृपा के कारण उन्होंने अपना भावी जीवन देहली में ही व्यतीत करना निश्चय किया होगा। कुछ वर्षों के बाद महाराजा रायसिंहजी दिल्ली आये और उन्होंने जब मेहता कर्मचन्दजी की बीमारी का हाल सुना तब वे उनकी हवेली में पधारे और आँखों में आँसू भर कर उन्हें कई प्रकार से सांत्वना देने लगे। व्यवहारिक दृष्टि से करमचन्दजी ने भी महाराजा साहब को धन्यवाद दे दिया पर महाराजा साहब के चले जाने पर करमचन्दजी ने अपने पुत्रों को बुलाकर कहा कि महाराज के आँखों में आँसू आने का कारण मेरी तकलीफ़ नहीं है किन्तु इसका वास्तविक कारण यह है कि वे मुझे सज़ा नहीं दे सके। इसलिये तुम कभी बीकानेर मत जाना।

सूक्ष्मदर्शी राजनीतिज्ञ करमचंदजी की यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई। सफल राजनीतिज्ञ मानवी प्रकृति का गंभीर ज्ञाता होता है और करमचंदजी ने महाराजा की मनोवृत्ति का अध्ययन कर उससे जो वास्तविक सत्य निकाला, वह उनकी परम दूरदर्शितामयी राजनीतिज्ञता पर बड़ा ही दिव्य प्रकाश डालता है।

थोड़े ही दिनों में करमचंदजी का शरीर इस संसार में न रहा। इसके बाद ही संयोग-वश राजा रायसिंहजी बुरहानपुर में बीमार पड़ गये। उस समय उन्हें अपने बचने की कोई आशा न रही

उन्होंने तब अपने पुत्रों को बुला कर कहा कि करमचन्द तो मर गया, अब तो तुम उसके बेटों को मारना। मुझे मारने के षड्यन्त्र में जो २ लोग शरीक थे उनसे बदला लेना। क्योंकि वे दलपत को राज्य दिलाना चाहते थे। इस पर सूरसिंहजी ने अर्ज की कि यदि मैं राजा हुआ तो उन लोगों को अवश्य दण्ड दूंगा। महाराज रायसिंहजी की इस मनोवृत्ति की सूक्ष्म परीक्षा कर परम नीतिज्ञ मेहता करमचंदजी ने पहले ही जो अपने पुत्रों को भविष्यवाणी कही थी वह सच उतरी और उसकी सच्चाई महाराजा रायसिंहजी की मृत्यु समय की उन बातों से स्पष्टतः प्रगट होती है, जो उन्होंने अपने वारिश सूरसिंहजी को मेहताजी के बेटे पोतों से बदला लेने के लिये कही थी।

यह तो हुई सिर्फ मनोवृत्ति के सूक्ष्म अध्ययन की बात। अब मेहता करमचंदजी का भविष्य कथन किस प्रकार सोलह आना सच्चा निकला इसका वृतान्त भी सुन लीजिये।

रायसिंहजी के संवत १६६८ में स्वर्गवासी हो जाने पर बादशाह जहाँगीर ने दलपत को बीकानेर का स्वामी बनाया। परन्तु जब वह इससे अप्रसन्न हो गया तो फिर संवत् १६७० में सूरसिंहजी को बीकानेर का राजा बनाया। जब सूरसिंहजी बादशाह से रुखसत लेकर देहली से बीकानेर के लिये रवाना होने लगे तब आपने मेहता करमचन्दजी के दोनों पुत्र भाग्यचन्द और लखमीचन्द्र को अपने पास बुलवा कर बहुत तसल्ली दी और उन्हें अपने साथ चलने के लिये बहुत समझाया बुझाया। ये दोनों बच्छावत बंधु सपरिवार बीकानेर जाने के लिये राजी हो गये। जब ये बीकानेर पहुँच गये तब राजा सूरसिंहजी ने इन दोनों को मंत्री पद पर नियुक्त किया। छः मास तक उन पर ऐसी कृपा दिखलाई कि वे सब पुरानी बातें भूल गये, यहां तक कि एक दफे खुद महाराजा साहब इनकी हवेली पर गये जहाँ पर उक्त दोनों बन्धुओं ने एक लाख रुपये का चबूतरा बनवा कर उस पर महाराजा साहब की पधरावनी की। जब इन ऊपरी शिष्टाचारों में मेहता करमचन्दजी के दोनों बेटे मोहांध हो गये तब महाराणा ने एक दिन कुछ हजार राजपूतों को उन्हें मारने के लिये भेजा। वे भी बहादुर थे। उन्होंने पहले उस समय की क्रूर प्रथा के अनुसार अपनी माता, स्त्रियों एवं बच्चों को मार कर राज्य की फौजों का मुकाबिला करने का निश्चय किया। वे अपने ५०० वीरों सहित लड़ कर वीरगति को प्राप्त हुए।

जब हम इस घटना की संगति करमचन्दजी की उपरोक्त भविष्यवाणी से लगाते हैं तब हमें उस के मानव-प्रकृति के अगाध अध्ययन पर सचमुच बड़ा विस्मय होता है। कहने का मतलब यह है कि करमचंद के सारे के सारे कुटुम्बीगण मार डाले गये। सिर्फ उनके कुटुम्ब की एक गर्भवती स्त्री ने अपने विश्वसनीय सेवक रघुनाथ की सहायता से करणी माता के मन्दिर में शरण लेकर अपनी जान बचाई। इस स्त्री के गर्भ

से आगे चल कर जो वंश बढ़ा और उनसे जो महाप्रतापी पुरुष हुए, उनका वर्णन उदयपुर के विभाग में दिया गया है ।

जिस प्रकार बच्छराजजी तथा उनके वंशजों ने बीकानेर राज्य की बड़ी-बड़ी सेवायें कीं, वैसे ही ओसवाल वंश के महाराव वेद वंश के मुत्सद्दियों ने भी उक्त राज्य की प्रशंसनीय सेवाएँ कीं । बीकानेर राज्य की उत्पति से लगाकर आगे कई वर्षों तक इस वंश ने जो महान् कार्य्य किये हैं, वे बीकानेर के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेंगे ।

वेदों की ख्यातों में लिखा है कि जिस समय राव जोधाजी के पुत्र नवीन राज्य स्थापन करने की अभिलाषा से जांगलू देश (वर्तमान बीकानेर राज्य) में आये थे उस समय राव लाखनसींजी वेद भी इनके साथ थे । बच्छराजजी की तरह आपने भी बीकानेर शहर बसाने में बड़े मार्के का हिस्सा लिया । कहा जाता है कि पहले-पहल बीकानेर के २७ मुहल्ले बसाये गये, जिनमें १४ मोहल्लों के बसाने में राव लाखनसिंह जी का सबसे प्रधान हाथ था ।

राव लाखनसिंहजी के पाँच पुश्त बाद मेहता ठाकुरसिंहजी हुए । आप बीकानेर के दीवान थे । आपने कई युद्धों में बड़ा ही वीरत्वपूर्ण भाग लिया था । जिस समय तत्कालीन बीकानेर नरेश रायसिंहजी मुगल सम्राट् अकबर की ओर से दक्षिण विजय के लिये गये थे, उस समय मेहता ठाकुरसिंहजी भी आपके साथ थे । इस युद्ध में विजय प्राप्त करने से सम्राट् अकबर राजा रायसिंहजी से बहुत प्रसन्न हुए और उन्हें कई परगने इनायत किये । इसी समय राजा रायसिंहजी ने मेहताजी के वीरत्व और रण कौशल्य से खुश होकर उन्हें भटनेर (हनुमानगढ़) नामक गाँव जागीर में देकर आपका सम्मान किया । आपके बाद आपके बेटे पोतों ने भी राज्य के कई औहदों पर काम किया । आपकी आठवीं पुश्त में मेहता मूलचन्द जी हुए । ये बड़े बहादुर और सिपहसालार थे । संवत् १९७० में बीकानेर महाराजा ने चुरु के सरदार पर फौजी चढ़ाई की थी, उसमें आपभी महाराजा के साथ थे । वहाँ आपने बड़े वीरत्व का परिचय दिया । इस युद्ध में बरछी के घांवों से आप घायल हुए । आपके रण कौशल्य से प्रसन्न होकर महाराजा ने आपको नोरंग-देसर नामक एक गांव गुजारे के लिये दिया । संवत् १९०५ में आपके स्वर्गवास हो जाने पर तत्कालीन बीकानेर नरेश महाराजा रत्नसिंहजी आपके मकान पर पधारे और श्रीमान ने अपने हाथों से सारी रस्में उन्होंने अदा कीं । कहने का मतलब यह है कि वेद परिवार के कुछ सज्जनों ने सैनिक और राजनैतिक क्षेत्र में बड़े मार्के के काम किये कि जिनके लिये स्वयं बीकानेर नरेशों ने आपका बड़ा आदर सत्कार किया ।

मेहता अबीरचन्दजी

इस खानदान में आप बड़े बहादुर और प्रतापी हुए। जिस समय आप कार्य्यक्षेत्र में अवतीर्ण हो रहे थे, वह समय बड़ा अशान्ति-मय था। राज्य में डकैतियों की बड़ी धूम थी। आपने शान्ति स्थापित करने के लिये बड़ा परिश्रम किया और बड़ी दिलेरी से काम किया। आपको कई बार डाकुओं का मुकाबला करना पड़ा। इससे आपको समय-समय पर अनेक घाव लगे। इसके पश्चात् बीकानेर दरबार ने आपको इस काम से हटाकर राज्य की ओर से वकील बनाकर दिल्ली भेजा। वहाँ भी आपने बड़ी बुद्धिमानी से काम किया। आपके कार्य्य से दरबार साहब तथा रेसिडेण्ट दोनों ही खुश रहे। संवत् १८८४ में आपका उन घावों के कारण देहान्त हो गया जो आपको दिल्ली ही में डाकुओं का मुकाबला करते समय लगे थे।

मेहता हिन्दूमलजी

इस खानदान में आप बड़े बुद्धिमान, प्रतिभा सम्पन्न और ख्यातिवान पुरुष हुए। पहले पहल सम्वत् १८८४ में आप बीकानेर की ओर से वकील की हैसियत से दिल्ली भेजे गये। वहाँ आपने बड़ी ही बुद्धिमानी और चतुराई से कार्य्य किया। इस पर तत्कालीन बीकानेर नरेश महाराजा रत्नसिंहजी ने खुश होकर आपको अपना दीवान नियुक्त किया और सिक्केदारी की मुहर प्रदान की। अपने नरेश की आधीनता में आप राज्य के सारे कारोबार देखने लगे। सम्वत् १८८८ में आप तत्कालीन मुगल सम्राट् के पास दिल्ली गये और सम्राट को खुशकर अपने स्वामी महाराजा रत्नसिंहजी के लिये खिलअत और हिन्दू-शिरोमणि की उपाधि लाये। इससे महाराजा साहब पर आपका बड़ा प्रभाव पड़ा और उन्होंने आपको "महाराव" का खिताब इनायत किया।

मेहता हिन्दूमलजी ने बीकानेर राज्य के हित-सम्बन्धी और भी कई मार्के के काम किये। बीकानेर रियासत की ओर से भारत सरकार को प्रति साल २२ हजार रुपया फौजी खर्च के लिए दिये जाने का इकरार था। मेहता हिन्दूमल ने बहुत प्रयत्न कर यह रकम माफ करवाई। इसके अतिरिक्त मेहता साहब के सुयोग्य प्रबन्ध के कारण सरकार ने बीकानेर में अपने पोलिटिकल एजण्ट रखने की भी आवश्यकता नहीं समझी। इसी प्रकार एक समय बीकानेर और भावलपुर राज्यों के बीच सरहद सम्बन्धी झगड़ा खड़ा हो गया। इस झगड़े को आपने बहुत बुद्धिमानी के साथ निपटाया जिससे बीकानेर रियासत का बड़ा हित-साधन हुआ। इस फैसले में बीकानेर को बड़ी ही मौके की जमीन मिली। इस जमीन में बहुत से गाँव आबाद हो गये और इस रियासत को लाखों रुपये सालाना की आमद होने लगी।

ओसवाल जाति का इतिहास

ईस्वी सन् १८२६ की २ मई को तत्कालीन बादशाह लॉर्ड हार्डिंग से आपकी मुलाकात हुई। बादशाह महोदय आपसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने आपको खिलअत बख्शी।

महाराव हिन्दूमल का प्रभाव राजस्थान के बड़े बड़े नरेशों पर था। सम्वत् १८९७ में जब महाराजा रतनसिंहजी और उदयपुर के महाराणा सरदारसिंहजी गयाजी की यात्रा से लौटे तब मेहताजी की हवेली में ठहरने के लिए पधारे तब दोनों नरेशों ने आपके कार्यों का ऊंचा सम्मान कर आपका सम्मान किया। इस समय महाराणा साहब ने महाराजा रतनसिंहजी से कहा कि हमारी उदयपुर रियासत की दीवानगी भी महारावजी को दे दो। इस पर बीकानेर नरेश ने हिन्दूमलजी से कहा कि "महाराणा साहब की बात तुमने सुनली होगी, इस पर उन्होंने जवाब दिया कि "मैं जैसा बीकानेर की गद्दी का सेवक हूँ वैसा ही उदयपुर की गद्दी का भी हूँ। मैं सेवा के लिये हर वक्त तैयार हूँ।"

महाराव हिन्दूमलजी बड़े नमकहलाल पुरुष थे। उन्होंने बीकानेर राज्य की बड़ी २ सेवाएँ कीं। तत्कालीन बीकानेर नरेश ने बड़ी उदारता के साथ आपकी इन सेवाओं को अपने खास रुक्कों में स्वीकार किया है। हम एक रुक्के की नकल ज्यों की त्यों यहाँ पर उद्धृत करते हैं।

> "खास रुक्का महाराव हिन्दूमल कैसो [illegible] सूं मुजरो वांचजे [illegible] [illegible] थारो [illegible] रो [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] समाचार मेहतो मूलचन्द रा कागदां सूं जाणसी श्री दुर्गाजी [illegible] संवत् १८८६ मिती [illegible] सुद १२ ॥"

एक खास रुक्का पुरानी मारवाड़ी भाषा में है। इसका भाव यह है—तुम्हारे हाथ का लिखा समाचार पढ़कर खातिरी जमा करना। यहाँ के (बीकानेर राज्य) सारे काम का बन्दोबस्त कर दिया सारे काम को अपने हाथ में रखके आना। आखिर करके काम बिगाड़ कर मत जाना। जिस काम को हाथ में लिया है उसे अच्छी तरह पूरा करना। अगर वैसे काम होंगे तो तुमसे हमारी सौगंध है। दूसरे समाचार मूलचंद के पत्र से जानना। श्री दुर्गाजी और मरुदेश में [illegible]। [illegible] की हुई खिदमत को [illegible]

जाने देना। तेरी सेवा वंदगी बड़ी है। यह सेवा पुश्तदर पुश्त की है। तेरा हम पर हाथ है, सिर पर हाथ रखना। तेने हमारी जो सेवाएँ की हैं, उनसे हम उऋण न होंगे। तेरी सेवाओं की तारीफ केवल यहीं पर होगी ऐसी बात नहीं वरन् स्वर्ग में भी देवता उन सेवाओं की प्रशंसा करेंगे। तेने अपने मालिक की जो वंदगी की है, उसकी कहाँ तक तारीफ लिखें। मिती आसोज सुदी १२ संवत् १८९६।

उपरोक्त खास रुक्के से महाराव हिन्दूमलजी के उस अतुलनीय प्रभाव का पता लगता है जो उनका बीकानेर के राजनैतिक क्षेत्र में था। कहने का भाव यह है कि ओसवाल मुत्सुद्दियों ने राजस्थान की मध्ययुगीन राजनीति में महान् कार्य्य किये हैं कि जिन्हें तत्कालीन नरेशों ने भी मुक्त कंठ से स्वीकार किया है।

मेहता छोगमलजी

आप महाराव हिन्दूमलजी के छोटे भाई थे। आपका जन्म संवत् १८६९की माघ सुदी १० को हुआ। आप बड़े ही बुद्धिमान एवं अध्यवसायी महानुभाव थे। आप महाराजा सूरतसिंहजी के प्राइवेट सेक्रेटरी के पद पर अधिष्ठित थे। यह काम आपनें बड़ी ही खूबी से किया। आपसे महाराजा साहब बहुत प्रसन्न रहते थे। इससे महाराजा साहब ने आपको रेसीडेंसी के वकील का उत्तरदायित्व पूर्णपद प्रदान किया।

सम्वत् १९०९ में जब बीकानेर में सरहद बन्दी का काम हुआ, तब आपने इसे बड़े परिश्रम और बुद्धिमानी से किया। आपने सरहद सम्बन्धी बहुत से झगड़ों के बड़ी कुशलता के साथ फैसले करवा दिये। इसमें आपने बीकानेर राज्य की बड़ी हितरक्षा की। आपकी की हुई सरहद बन्दी से बीकानेर राज्य की बड़ी उन्नति हुई। आपके इस कार्य्य से बीकानेर के तत्कालीन महाराजा सरदारसिंहजी इतने खुश हुए कि उन्होंने आप को अपने गले से कंठा निकाल कर पहना दिया।

सम्वत् १९१४ (ई० सन् १८५७) में जब सारे भारतवर्ष में अंग्रेजों के खिलाफ भयंकर विद्रोहाग्नि धधक उठी, तब आप बीकानेर रियासत की ओर से अंग्रेजों की सहायता करने के लिये भेजे गये। उस समय आपने वहाँ बहुत सरगर्मी से काम किया। इस कार्य्य के उपलक्ष में तत्कालीन अंग्रेज अधिकारियों ने आप की प्रशंसा की।

सम्वत् १९२९ में बीकानेर नरेश महाराजा सरदारसिंहजी का स्वर्गवास हो गया। इस अवसर पर आपने महाराजा डूंगरसिंहजी को राजगद्दी पर अधिष्ठित करने में बहुत सहायता पहुँचाई। यह कहने में अत्युक्ति न होगी कि महाराज डूंगरसिंहजी को बीकानेर का स्वामी बनाने में सबसे प्रधान हाथ आप का था। स्वयं महाराज डूंगरसिंहजी ने तत्कालीन ए० जी० जी० को जो पत्र लिखा था, उसमें

मेहताजी की इस कारगुजारी की बड़ी तारीफ की थी । सम्वत् १९३४ में देहली दरबार में महाराज साहब की आज्ञा से आप गये थे । वहाँ आपको भारत सरकारने खिलअत आदि प्रदान कर आपका सन्मान किया था ।

सम्वत् १९३५ में बेरी और रामपुरा के झगड़ों को निपटाने के लिये आप जयपुर भेजे गये । वहाँ पर आपने अपने कागजातों से सबूत देकर उक्त मामले को बहुत ही अच्छी तरह तय करवा लिया । इस समय आपने जिस बुद्धि-कौशल्य का परिचय दिया, उसकी तारीफ जयपुर के तत्कालीन पोलिटिकल एजंट कर्नल बेन ने बहुत ही अच्छे शब्दों में की है । इतना ही नहीं उक्त कर्नल महोदय ने आपकी कारगुजारी की प्रशंसा में बीकानेर दरबार को भी पत्र लिखा था ।

मेहता छोगमलजी बड़े कुशल राजनीतिज्ञ और दूरदर्शी सज्जन थे । आप कई वर्षों तक बीकानेर की ओर से आबू पर वकील रहे । इसके अतिरिक्त आपने और भी कई बड़े २ ओहदों पर काम किया । आप खास मुसाहिब और कौन्सिल के मेम्बर भी रहे । आपको तनख्वाह के अतिरिक्त सारा खर्च भी रियासत से मिलता था ।

आप की महान् कारगुजारियों से प्रसन्न होकर बीकानेर दरबार ने डूंगराना, सरूपदेसर आदि गाँव आपको जागीरी में प्रदान किये तथा आपके कार्य्यों की प्रशंसा में बहुत से खास रुक्के बक्शे । सम्वत् १९४८ की माघ बुदी १० को आपका स्वर्गवास होगया । आपकी मृत्यु के पश्चात् बीकानेर नरेश महाराज गंगासिंहजी मातमपुरसी के लिये आपके घर पर पधारे और इस तरह आपकी सेवाओं का आदर किया ।

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं, मेहता छोगमलजी को उनकी बड़ी २ कारगुजारियों के लिये तत्कालीन बीकानेर नरेशों की ओर से कई खास रुक्के (प्रशंसा पत्र) दिये गये थे, जिनमें से एक दो की नकल हम नीचे देते हैं ।

१—"रुको खास महता छोगमलजी केसरीसिंघ दीसी सुपरसाद वंचे तथा थारे घराणो रुइ दीवे सू सामधरमी वा रियासत रा खैरखाही चित राख जे जिसी मुजब थे चित राख बंदगी करो छो तैसै में बोत खुस छां हणे थाने रियासत रा कारवाही वास्ते में मोत मदकर मेलिया छे सुजीसो थारो भरोसो छे जिसी मुजब थे बरतो छो आ बंदगी पीढीया तक याद रह जिसी छे सूं थे सब तरे हिम्मत राख हर तरे जलदी कारवाही करेजा तेमें मांहारी मरजी जादे बधसी व थारी बंदगी जादे समझसा अठेरो अेवाल छतरसिंघ व हुकुमसींघ लिखे तो मुजब जान सो थां जीसा दाना समझवार किताहीक छे सूं थाने रियासत री सरम छे सु कही सूं संकसो नहीं जादे काही लिखा संवत् १९४२ असाड़ सुदी ८"

श्रीरामजी

२—"रुक्का खास मेहता छोगमलजी केसरीसींघ राव छतरसींघ दी सी सुप्रसाद बंचे अपरंच थांने गांवा जावणा री हुकुम दियो सु श्री हुकम म्हारी बंदगी में रहा ते सूं दार जियो सूं थांने गोवाँ नहीं मेले छे म्हाने आज ई रियासत सूं उत्तर मिल्यो छे थांरो खानदान पीढ़ियों सूं सामधरमी छे जिसी तरह थे बंदगी में चित राख बंदगी करी छो सूं थारो बंदगी म्हे वा म्हारो पूत पोतो न भूलसां थारा गोवाँ व इज्जत मुलाजे में म्हें वा म्हारो पूत पोतो थांसूं वा थारा पूत पोता सूं कोई तरे रा फरक नहीं डालसी ये बात मे म्हा वा थारे बीच में श्री लक्ष्मीनरायणजी व श्री करणीजी छे थे जमाखातर राखी जो और थारे वास्ते साहब बहादुर ने लिखियो छे घबराजो मती श्री जी सारा सरा आछी करसी संवत् १६४३ रा मिती कातीक वुदी १२"

महाराव हरिसिंहजी

आप महाराव हिन्दूमलजी के प्रथम पुत्र थे। सम्वत् १८८३ की आसोज सुदी ८ को आपका जन्म हुआ। अपने पूर्वजों की तरह आप भी बड़े बुद्धिमान, दूरदर्शी और प्रभावशाली मुत्सुद्दी थे। राज्य में आपका बड़ा प्रभाव था। संवत् १९२० में आप मुसाहिब आला बनाये गये तथा आपको मुहर का अधिकार भी प्राप्त हुआ। महाराजा डूंगरसिंहजी की गद्दीनशीनी में आपने अपने चाचा छोगमलजी के साथ बड़ी मदद की। इससे खुश होकर महाराजा डूंगरसिंहजी ने अमरसर और पालटा आप को जागीरी में प्रदान किये। इतना ही नहीं, आप 'महराव' की पदवी, पेरों में सोना, हाथी, ताजीम आदि उच्च सम्मानों से विभूषित किये गये। आपने भी रियासत में कई मार्के के काम किये जिनकी प्रशंसा राज्य के खास रुक्कों में की गई है। उनमें से एक रुक्का हम नीचे उद्धृत करते हैं। यह रुक्का महाराजा लालसिंहजी के खास दस्तखत से दिया गया था।

"भाईजी श्री महारावजी हरसिंहजी सु म्हारो सुप्रसाद बंचसी अपरंच हमें ये कामरी थारी काई सलाह छे काल तो सारा रा मन एक छां आज मिनखां रा मन बिगड़ गया छे मान मन फूल लाले गंगविशन सु मिले छे म्हाने यां हु कारो किया छे सादानसींघ रे बेटे रो सुमाईजी म्हारे तो अब थेई छो थांगत सूं म्हांगत छे थांसु केई वात सूं उसरावण नहीं हुसुं चुरु भादरा रा रुक्का मांगे छे सो थारी सला बिना कोई ने रुक्का लिख देना नहीं आपणो काम खरच लागतां कीजो मिती आनन्द री छै।"

उक्त रुक्के के आरंभिक हिस्से में कुछ खास घरू तौर की बातें हैं जो हमारे पाठकों के लिये अधिक दिलचस्पी की नहीं होंगी। पर इसके अंत में जो कुछ कहा गया है, वह मेहता हरिसिंहजी के प्रभाव को स्पष्ट करता है। वह इस प्रकार है। मेरे तो अब तुम्ही हो। जो कुछ तुम्हारी गति होगी वही मेरी भी होगी। तुम्हारी सब बातें हम स्मरण रक्खेंगे। चुरू और भादरा के रुक्के मांगते हैं, वे तुम्हारी बिना सलाह के नहीं देंगे।

इसी प्रकार इस कुटुम्ब में मेहता केशरीसिंहजी, मेहता अभयसिंहजी, मेहता छत्रसिंहजी, महाराव सवाईसिंहजी आदि आदि कई प्रभावशाली पुरुष हुए जिन्होंने अपने अपने समय में राज्य की अच्छी सेवाएँ कीं। इन सबका विस्तृत विवरण हम आगे इनके पारवारिक परिचय में देंगे।

दीवान अमरचन्दजी सुराणा

महाराजा सूरतसिंहजी के राज्यकाल में जिन ओसवाल मुत्सुद्दियों ने अपने महान् कार्य्य के द्वारा राजस्थान के इतिहास में प्रसिद्धि पाई है उनमें अमरचन्दजी सुराणा का आसन बहुत ऊँचा है। सम्वत् १८६२ (ई० सन् १८०५) में बीकानेर राज्य की ओर से सुराणा अमरचन्दजी जापताखाँ पर आक्रमण करने के लिये भेजे गये। इन्होंने उसकी राजधानी भटनेर को घेर लिया। जापताखाँ भी पांच मास तक बड़ी बहादुरी से लड़ा और अंत में विजय से निराश होकर वह किले से भाग गया। इस वीरता के उपलक्ष में महाराजा साहब ने अमरचन्दजी को दीवान के उच्च पद पर नियुक्त किया।

संवत् १८७२ में सुराणा अमरचन्दजी चुरू के ठाकुर शिवसिंहजी के मुकाबिले पर भेजे गये। आपने चुरू शहर को घेर लिया और उक्त शहर का आवागमन बिलकुल बन्द कर दिया। इससे चुरू के ठाकुर की कठिनाई बहुत बढ़ गई और अधिक समय तक युद्ध करने में असमर्थ हो गये। उन्होंने (चुरू के ठाकुर) विजय की आशा खोदी और अपने अपमान के बजाय मृत्यु को उचित समझा और आत्मघात कर लिया। बीकानेर के तत्कालीन महाराजा ने अमरचन्दजी की वीरता से प्रसन्न होकर उनको 'राव' की पदवी, एक खिलअत तथा सवारी के लिये एक हाथी प्रदान किया।

राजलदेसर का बेद परिवार

बीकानेर राज्य में राजलदेसर नामक एक गाँव है। कहा जाता है कि बीकानेर बसने के पूर्व यहाँ पर एक स्वतंत्र राज्य था। जिस समय इस स्थान पर राजा रामसिंहजी राज्य कर रहे थे उस समय मेहता हरिसिंहजी बेद नामक एक ओसवाल सज्जन उनके दीवान थे। उक्त बेद परिवार की ख्यात में

लिखा है कि एक बार किसी शत्रु ने राजलदेसर पर चढ़ाई की तब मेहता हरिसिंहजी और राजा रायसिंहजी के पुत्र कुँवर जयमलजी बड़ी बहादुरी के साथ युद्ध करते हुए मारे गये और "जुझार" हुए। जुझार यह शब्द मारवाड़ी भाषा का है जिसका अर्थ सिर कट जाने के बाद भी कुछ समय तक युद्ध करते रहना है। जिस स्थान पर आपका सिर गिरा था वह स्थान आज भी जुंझारजी के नाम से प्रसिद्ध है। आज भी वहाँ उनके वंश वाले किसी शुभ कार्य्य पर जाते हैं और इनकी कुलदेव स्वरूप पूजा करते हैं। जिस स्थान पर आपका शव गिरा था वह स्थान मूथाथल के नाम से प्रसिद्ध है। इसी खानदान में सवाईसिंहजी नामक एक सज्जन राजलदेसर और बीदासर के बीच में जुझार हुए। जिस स्थान पर आप जुझार हुए वहाँ इनके स्मारक स्वरूप एक चबूतरा बना हुआ है। जो अभी भग्नावस्था में है।

चुरू का सुराणा खानदान—चुरू बीकानेर स्टेट में एक प्रसिद्ध स्थान है। यहाँ के सुप्रसिद्ध सुराणा परिवार में कई वीर पुरुष हो गये हैं, जिनमें जीवनदासजी का नाम विशेष प्रख्यात है। कहा जाता है कि ये भी किसी लड़ाई में जुंझार हुए। आज भी राजस्थान की स्त्रियाँ इनकी वीरता के गौरव गीत गातीं हैं। इन्हीं के वंश में वर्तमान में विद्याप्रेमी सेठ शुभकरणजी सुराणा विद्यमान हैं।

बीकानेर राज्य के ओसवाल मुत्सुद्दियो और वीरों का उपरोक्त वृतान्त पढ़ने से पाठकों को यह बात अवश्य ज्ञात हुई होगी कि जिस प्रकार जोधपुर, उदयपुर आदि रियासतों के विकास एवं राज्य बिस्तार में ओसवाल मुत्सुद्दियों का महत्व पूर्ण हाथ रहा है, ठीक वैसा ही हाथ बीकानेर की राजनीति के संचालन में रहा है। यहाँ सैनिक तथा राजनैतिक रंगमंच पर ओसवाल वीरों ने बड़े २ खेल खेले हैं जिनके पराक्रमों का वर्णन राजस्थान के इतिहास को गौरवान्वित कर रहा है।

काश्मीर

राजपूताने और मध्यभारत के विविध राज्यों में ओसवाल मुत्सुद्दी और सेनापतियों ने जो पहले एतिहासिक काम किये हैं। उनका उल्लेख हम यथा स्थान कर चुके हैं। हम देखते हैं कि काश्मीर तक पर ओसवाल जाति के एक मुत्सुद्दी ने अपनी राजनैतिक प्रतिभा का परिचय दिया था।

मेजर जनरल दीवान बिशनदासजी दूगड़ राय बहादुर सी. एस. आई. सी. आई. ई. जम्बू (काश्मीर) आपका परिवारिक इतिहास हम नीचे दूगड़ गोत्र में दे चुके हैं। आपने काश्मीर राज्य की बड़ी २ सेवाएं की। काश्मीर के भूत पूर्व महाराजा श्रीमान् प्रतापसिंहजी बहादुर ने आपके कार्य्यों की प्रशंसा करते हुए १८ सितम्बर १९२१ को आपको जो पत्र लिखा था, उसमें लिखा था कि

"The unification of the Rajput community is a matter of which you who have tried to establish it may feel justly proud. The part you played in furthering this movement shall be remembered with feelings of intense gratification not only by myself but the Rajputs in general and I have no

doubt by our posterity as an historic event of great significance to the welfare of community.

This adds another link to the chain which binds you and your family to the ruling House of Kashmir and places it under an obligation which I and my successors will never be able to repay too hight,

अर्थात् राजपूत जाति की एकता के सम्बन्ध में आपने जो प्रयत्न किया है, उसके लिए वास्तव में हम अभिमान कर सकते हैं। आपने राजपूत जाति के इस एकता सम्बन्धी आन्दोलन को बढ़ाने में जो कार्य्य किया है वह न केवल मेरे वरन् सारी राजपूत जाति के द्वारा बहुत ही गहरी हार्थिक कृतज्ञता के साथ स्मरण रक्खा जायगा। मुझे इसमें तिलमात्र में भी सन्देह नहीं है कि हमारी सन्तानों के लिए आपका यह कार्य्य एक ऐतिहासिक घटना समझी जायगी। इस कार्य्य से काश्मीर राजघराने के साथ आपका सम्बन्ध बहुत ही दृढ़तर हो गया है और आपने काश्मीर घराने को इतना कृतज्ञ किया है कि मैं और मेरी सन्तानें इसका किसी भी रूप में बदला नहीं चुका सकते। इसके आगे चल कर फिर इसी पत्र में महाराजा काश्मीर साहिब लिखते हैं कि

"The creation of the State added to the material prosperity of my House but the present success which owes itself to your devoted and strenewous advocacy of the cause is calculated to add still more to our well being"

अर्थात् इस राज्य की सम्पत्ति से हमारे राजघराने का वैभव बढ़ा है पर आपके सतत प्रयत्नों से वर्तमान में हमें जो सफलता हुई है वह हमारे हित को और भी अधिक बढ़ाती है।

इस प्रकार भूत पूर्व महाराज काश्मीर ने दीवान बिशनदासजी को और भी अनेक प्रशंसा पत्र दिये हैं जिनका उल्लेख हम स्थानाभाव के कारण नहीं कर सके।

इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने भी आपकी सेवाओं से प्रसन्न हो कर "रायबहादुर" "सी० आई० ई०" तथा सी० एस० आई० के सम्माननीय पदों में विभूषित किया है। आप काश्मीर स्टेट के मिलिटरी सेक्रेटरी, रेवेन्यूमिनिस्टर तथा चीफमिनिस्टर के पद पर रहे हैं तथा इस समय जम्मू (काश्मीर स्टेट) में रिटायर्ड लाइफ बिता रहे हैं।

जोधपुर के शाह उदयकरणजी लोढ़ा और अमरकोट जिले पर मारवाड़ राज्य का अधिकार

ओसवाल जाति के जिन मुत्सद्दियों और सेनापतियों ने अपनी जाति के इतिहास को गौरवान्वित किया है, उनमें शाह अभयकरणजी लोढा का भी विशेष स्थान है। आपके सेनापतित्व में अमरकोट में उस पर अधिकार करने के लिये सेना भेजी गई थी। हमें जोधपुर के प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता श्री जगदीशसिंहजी गहलोत की कृपा से तत्कालीन जोधपुर के पोलिटिकल एजन्ट केपटन ल्यूडला (Captain

Ludlow) के पत्र नंबर १८३ ईसवी सन् १८४३ की नकल प्राप्त हुई है। वह हम नीचे देते हैं, जिससे शाह अभयकरण की आज्ञा से उमरकोट पर सेना भेज जाने और उमरकोट पर पहले जमाने में महाराजा जोधपुर का अधिकार होने की बात पर अच्छा प्रकाश गिरता है।

No. 183 of 1843.

From

Captain Ludlow,

Political Agent, Jodhpur.

To All Officers in command of British Posts and in the direction of Omerkote.

Date 2nd June 1843.

I have the honour to notify that a Detachment of Jodhpur Troops was despatched hence, under the orders of SHA UBHEE KURN on the 21st Ultimo towards Omerkote to re-occupy, under the authority of the Right Honourable the Governor General of India and on the part of the Maharaja of Jodhpur, all the territories etc, formerly held by his ancestors in the District of Oomerkote, with the exception of Fort and Town, which for the present are to be occupied by British Troops, and over which together with the lands immediately connected with their British Jurisdiction is to be exercised.

I have had the honour to address to H.E. the Governor of Sind on this subject and to request that he would be pleased to issue such orders as he may consider called for by the occassion.

I have the honour to be

Gent.

Your most obedient servant,

Sd/- J. Ludlow,

Political Agent.

यह पत्र उमरकोट की ओर के सब ब्रिटिश थानों के फौजी अफसरों के नाम लिखा गया था। इसका आशय यह है कि "हम यह प्रकट करते हैं कि "शाह उदयकरण" के सेनापतित्व में राईट ऑनरवल गवर्नर जनरल की अनुमति से जोधपुर राज्य की सेना उमरकोट के शहर और किले को छोड़कर सारे जिले पर फिर से अधिकार करने के लिये भेजी गई है, जिस पर कि ऊँची ब्रिटिश फौजों का तावा है। यह जिला पहले जोधपुर महाराजा के पूर्वजों के अधिकार में था।

मैंने सिंध के गवर्नर साहव को भी इस सम्बन्ध में लिखा है कि वे इस सम्वन्ध के हुक्म जारी करने की कृपा करें।

इन्दौर

राजस्थान के राज्यों में ओसवाल वीरों तथा मुत्सुद्दियों ने जो महान् कार्य्य किये हैं, उनका उल्लेख हम गत पृष्ठों में कर चुके हैं। हम देखते हैं कि इन्दौर, काश्मीर प्रभृति कई दूरवर्ती रियासतों में भी ओसवाल मुत्सुद्दियों ने कई ऐसे मार्के के काम किये हैं जिनका उल्लेख उन रियासतों के पुराने कागज पत्रों तथा इतिहास में वड़े गौरव के साथ किया गया है। यहाँ हम इन्दौर राज्य के कुछ इतिहास प्रसिद्ध ओसवाल मुत्सुद्दियों का परिचय अपने पाठकों को देना चाहते हैं।

गंगारामजी कोठारी

इतिहास के पाठक जानते हैं कि इन्दौर के भूतपूर्व नरेश तुकोजीराव (प्रथम) के समय में इन्दौर के होलकर वंश का प्रभाव सारे भारतवर्ष में फैला हुआ था। ये तुकोजीराव बड़े सफल सेनानायक, महान् राजनीतिज्ञ और महत्वाकाँक्षी नरेश थे। इन्होंने चारों तरफ अपनी तलवार के जौहर दिखलाये थे। इन्हीं महाप्रतापी तुकोजीराव के समय में गंगारामजी कोठारी नामक एक वहादुर और दिलेर ओसवाल नवयुवक इन्दौर में पहुँचे। ये गंगारामजी नागौर के निवासी थे और वाल्यावस्था से ही सैनिक विद्या की ओर इनकी विशेष रुचि थी। धीरे २ ये इन्दौर की फौज में दाखिल हो गये और करतवगारी से सेनानायक के पद पर पहुँचे। महाराजा होलकर की ओर से इन्होंने कई लड़ाइयों में वहुत बड़ी वीरता का प्रदर्शन किया। इनकी वीरता और कारगुजारियों का वर्णन इन्दौर राज्य के हुजूर फड़नीसी के रिकार्डों में, सरजॉन मालकम साहव के मध्य हिन्दुस्तान के इतिहास में, टॉड साहब के राजस्थान के इतिहास में, तथा अन्य कई अंग्रेजी एवं मराठी के ग्रन्थों मे मिलता है। तत्कालीन पार्लियामेन्टरी पेपर्स में भी आपके सैनिक कार्य्यों का उल्लेख किया गया है।

श्रीमान् महाराजा तुकोजीराव (तृतीय) ने मिस्टर वाउल्जर (Boulger) नामक एक अंग्रेज की अधीनता में कुछ लोगों को विलायत से इण्डिया ऑफिस (India-office) में रक्खे हुए होलकर राज्य सम्वन्धी कागज पत्रों की व्यवस्थित रूप से नकल करने के लिये नियुक्त किया था। उन लोगों ने कोई तीन वरस काम कर होलकर राज्य सम्वन्धी लेखों तथा कागज-पत्रों की नकलें की। ये कोई तीस या पैंतीस जिल्दों में पूरी हुई हैं। ये सव जिल्दें टाइप की हुई हैं और इन्दौर के फॉरेन आफ़िस में सुरक्षित हैं। इनमें तत्कालीन

इतिहास-सम्बन्धी बहुत सी नवीन और बहुमूल्य सामग्री है। इन्हीं जिल्दों में कई स्थानों पर गंगारामजी कोठारी और उनके सेना संचालन का उल्लेख आया है।

उक्त पत्रों से मालूम होता है कि महाराजा यशवंतराव के समय में जो प्रभाव अमीरखाँ, गफूरखाँ प्रभृति व्यक्तियों का था वही प्रभाव इस समय गंगारामजी कोठारी का था। अन्तर केवल इतना ही था कि अमीरखाँ मौका पाते ही बहुत सी जमीन दबा बैठा और उसने अपना स्वतंत्र राज्य कायम कर लिया। गंगारामजी कोठारी के खून में स्वामिभक्ति के परिमाणु होने से, उन्होंने ऐसा करना ठीक न समझा। उन्होंने जो कुछ किया वह सब अपने स्वामी इन्दौर नरेश के लिये किया पर तत्कालीन इतिहास ग्रन्थों में उनके पराक्रमों का जो वर्णन है, उनसे उनकी महानता पर बहुत ही अच्छा प्रकाश गिरता है। Abarrey macke नामक एक तत्कालीन इतिहास लेखक अपने "Chiefs of Central India" नामक ग्रन्थ के पृष्ठ २० के फुटनोट में लिखते हैं।

"Gangaram Kothari, a Mahajan, was at this time Governor of Jaora. He was a man of considerable ability and Jaswantrao also employed him as Governor of Rampura and several other places.

अर्थात् गंगाराम कोठारी नामक महाजन इस वक्त जावरे के शासक थे। ये अत्यन्त प्रतिभा सम्पन्न महानुभाव थे। यशवंतराव होलकर ने इन्हें रामपुरा तथा बहुत से स्थानों का शासक (Governor) नियुक्त किया।

मि० वाउल्जर द्वारा संग्रहीत पार्लमेन्टरी पेपरों में २५ जनवरी सन् १८०६ में एक संवाद दिया गया है। वह इस प्रकार है।

'In the neighbourhood of Malhargarh and Narsinghgarh was a force belonging to Gangaram Kothari acting immediately under the authority of Jaswantrao Holkar. This force lately has committed Considerable depredations on the territory of Daulatrao Scindiah.

अर्थात् मल्हारगढ़ और नरसिंहगढ़ के पास एक फौज पड़ी हुई थी जो गंगाराम कोठारी के सेनापतित्व में थी। ये गंगाराम कोठारी यशवंतराव होलकर की आज्ञानुसार सेना संचालन का कार्य्य करते थे। इस फौज ने अभी-अभी दौलतराव सिंधिया के मुल्कों में बहुत लूट मार की।

मिस्टर वाउल्जर द्वारा संग्रहीत उक्त पार्लियामेन्टरी पेपरों के पृष्ठ २९८ में ईसवी सन् १८०९ की १८ वीं अक्टूबर का निम्नलिखित सम्वाद दिया गया है। वह इस प्रकार है।

'A pair of Cossids from Ujjain (Oujeni) state "Gangaram Kothari is at Jaora with two or four thousand men and four guns, the rest of his troops (ten thousand men and six guns) are in advance at Hatote. After the Dassera, this force will remove to Ratlam for the purpose of routing a body of Arabs who have been plundering that town."

अर्थात् उज्जैन से आये हुए दो कासीदों (समाचार वाहक,) ने सूचित किया कि गंगाराम कोठारी दो या चार हजार आदमियों और चार तोपों के साथ जावरा में डेरा डाले हुए हैं और उनकी बाकी की फौजें (१०००० आदमी और ६ तोपें) हतोद नामक स्थान पर पहले ही पहुँच गई हैं। दशहरे के बाद यह फौज रतलाम की ओर आगे बढ़कर अरबों के उस झुण्ड को, जो रतलाम में लूट मार कर रहा है, खदेड़ने का काम करेगी।

उपरोक्त अवतरणों से यह बात स्पष्टतः प्रगट होती है कि महाराजा यशवंतराव होल्कर के समय में कोठारी गंगाराम एक बड़े बहादुर सिपहसालार थे और उनकी अधीनता में दस २, पन्द्रह २ हजार फौजें तक उस अशांति के युग में रहती थी। कुशल सेनानायक के अतिरिक्त आप उच्चश्रेणी के शासक भी थे। जिस समय की यह बात है वह समय हिन्दुस्तान के लिये भयंकर अशांति का था। चारों तरफ अराजकता और लूट मार मची हुई थी। ऐसे समय में कई बड़े २ जिलों का प्रबन्ध करना कोई हँसी खेल नहीं था। जावरा रामपुरा, भानपुरा, गरोठ आदि परगनों का आपने जिस योग्यता से प्रबन्ध किया था उससे आपका सफल शासक होना स्पष्टतः सूचित होता है।

गंगारामजी कोठारी ने अपने अधीनस्थ परगनों में शांति स्थापित करने का बड़ा प्रयत्न किया। रामपुरा भानपुरा के पास मेवाड़ का जिला आ गया है। वहाँ के राजपूत आसपास के पड़ोसी राज्यों में बहुत लूट मार किया करते थे। होल्कर राज्य के जिले भी इनकी लूट मार से बड़े परेशान थे। गंगारामजी कोठारी से यह स्थिति नहीं देखी गई। उन्होंने इन राजपूतों को दमन करने का निश्चय किया। तत्काल उन्होंने चढ़ाई कर दी और उक्त राजपूतों को बहुत सख्त सजाएँ दी। इतना ही नहीं, उन्होंने मेवाड़ का धांगड़ मह्रू का किला भी फतह कर किया।

झाबुआ आदि रियासतों पर भी इन्होंने चढ़ाइयाँ की थी और उनमें इन्हें सफलता हुई थी। झाबुआ से खिरात वसूल करने के लिये इन्हें ही जाना पड़ता था।

हम पहले कह चुके हैं कि गंगारामजी कोठारी बड़े सफल सेना नायक थे। जब महाराजा होल-कर किसी बड़ी चढ़ाई पर जाते थे तब वे अपने इस बहादुर सेनापति को अपने साथ रखते थे। जब महा-

यंतराव होलकर ने उदयपुर पर चढ़ाई की तब गंगारामजी भी उनके साथ थे। वहीं आपका परलोक वास हुआ।

कोठारी गंगारामजी की इन कारगुजारियों का महाराजा होलकर ने बड़ा आदर दिया। आपको पालकी, छत्र, चँवर छड़ी आदि के सम्मान प्राप्त हुए थे। राजपूताने में भी आपकी बड़ी इज्जत थी। उदयपुर दरबार ने इन्हें अपने उमरावों में बैठक देकर इनका सम्मान किया था।

तत्कालीन इन्दौर नरेश ने आपको परगना रामपुरे में जन्नौर और दुधलाय नामक दो गाँव इस्त-मुरारी जागीर में दिये थे। इनके लिये उन्हें सरकार को ९०१) टाँका के देना पड़ते थे।

कोठारी शिवचन्दजी

कोठारी शिवचंदजी कोठारी गंगारामजी के बंधु एवं भवानीरामजी के पौत्र थे। आप बड़े वीर, सिपहसालार और सफल शासक थे। रामपुरा, भानपुरा, गरोठ आदि परगनों के आप शासक (Governor) बनाये गये थे। जिस समय की यह बात है उस समय चारों ओर बड़ी अशांति छाई हुई थी; अराजकता और लूट मार का दौरदौरा था। आस-पास के लुटेरे मीनों और सोंधियों के उत्पात से उन परगनों में त्राहि २ मची हुई थी। कोठारी शिवचन्दजी ने इन लुटेरों पर चढ़ाइयाँ कर इन्हें समुचित दण्ड दिया और रामपुरा भानपुरा परगनों में शांति का साम्राज्य कायम किया। इनकी वीरता की कहानियाँ आज भी रामपुर भानपुर जिले के लोग बड़े उत्साह के साथ कहते हैं। महामति टॉड साहब ने भी अपने प्रवास वर्णन में इन कोठारी साहब के प्रभाव का वर्णन किया है और भी कई अंग्रेजों ने इनकी बहादुरी और कारगुजारियों की बड़ी प्रशंसा की है। कहा जाता है कि उस समय वीरवर शिवचन्दजी का नाम लुटेरे, चोर और बदमाशों को कम्पा देने का काम करता था उस भयंकर अशांति के युग में इन्होंने जैसा अमन और चैन पैदा कर दिया था उससे उनकी ख्याति दूर २ तक फैल गई थी।

सन् १८५७ में जब अंग्रेज सरकार के खिलाफ हिन्दुस्थान में चारों ओर विद्रोह की आग भड़की थी और जब पिण्डारियों के दल के दल रामपुर भानपुर जिलों की ओर बढ़ रहे थे। तब कोठारी शिवचंदजी ने बड़ी हिकमत अमली से इन लोगों को दूसरी ओर निकाल कर अपने जिलों की रक्षा कर ली थी। इस प्रकार और भी कई मौकों पर इन्होंने बड़े २ काम किये और उन जिलों में अपना नाम चिरस्मरणीय कर लिया।

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कोठारी शिवचन्दजी में राजनीतिज्ञता और वीरता का बड़ा ही मधुर सम्मेलन हुआ था। एक ओर जहाँ हम आप को हाथ में तलवार लेकर युद्ध करते हुए देखते हैं,

दूसरी ओर अत्यन्त कठिन परिस्थिति में अपने जिलों का उत्तम से उत्तम प्रबन्ध करते हुए पाते हैं। इस भयंकर कोलाहल के समय में रामपुर भानपुर की प्रजा ने जिस सुख और शांति का अनुभव किया था वह बहुत कुछ आप ही की कारगुजारी का फल था। श्रीमंत महाराजा होल्कर ने आपकी इन सेवाओं की बड़ी कद्र की और आपको खजूरी और सगोरिया आदि गाँव की जागीरी प्रदान की। इतना ही नहीं वरन् आपको पालकी, छत्री, छड़ी, चँवर आदि ऊच्च सम्मान प्रदान कर महाराजा ने आपका बहुत सत्कार किया था। राज्य के अत्यन्त सम्माननीय सरदारों में आपका आसन रक्खा गया। रामपुर भानपुर जिले के इस महान् प्रभावशाली व्यक्ति का संवत् १९१४ (सन् १८५७) में भाले की चोट* से गरोठ मुकाम पर देहांत होगया। आपके स्मारक में गरोठ और भानपुर में आलीशान छत्रियाँ बनी हुई हैं जिनमें आपकी मूर्त्तियां प्रतिष्ठित हैं। ये छत्रियां कोठारी साहब की छत्रियों के नाम से प्रसिद्ध हैं।

कोठारी सावंतरामजी

कोठारी शिवचन्दजी के स्वर्गवासी होने के बाद संवत् १९१५ में आप मारवाड़ से दत्तक लाये गये और अपने स्वर्गवासी पिताश्री के स्थान पर अधिष्ठित किये गये। आप बड़े उदार, प्रजाप्रेमी, गुणज्ञ और विविध कलाओं के बड़े पुरस्कर्ता थे। प्रजा हित को ही आप राज हित का प्रधान अंग समझते थे। गरीब किसानों के लिये आपके उदार अंतःकरण में बहुत बड़ा स्थान था। जब २ राज्य और किसानों का स्वार्थ टकराता था तब २ आप श्रीमंत होलकर नरेश के सामने बड़े जोरों के साथ किसानों के पक्ष का समर्थन करते थे। इससे सारे जिले के लोग आपको पिता की तरह भक्ति की दृष्टि से देखते थे। आप अपने समय में बहुत ही अधिक लोकप्रिय थे।

विभिन्न कलाओं के आप अनन्य प्रेमी थे। कविगण, गायक आपकी कीर्त्ति सुनकर दूर २ से आते थे और आप से खासा पुरस्कार पाते थे। अपनी २ कलाओं का प्रदर्शन करने के लिये चारों ओर से लोग आप की सेवा में उपस्थिति होते थे और उन्हें आपसे काफी उत्तेजन मिलता था। आपके समय में भानपुरा में खासी गति विधि रहती थी और यह कसबा लोगों के लिये एक आकर्षण का केन्द्र हो रहा था। आप को स्वर्गीय महाराजा तुकोजीराव (द्वितीय) और महाराजा शिवाजीराव खूब मानते थे आप रामपुरा भानपुरा के सरसूबा (Governor) थे।

संवत् १९५० के लगभग आप को किसी कारणवश इन्दौर जाना पड़ा। वहाँ कुछ समय बाद

---

* आप भाला लेकर घोड़े को फिरा रहे थे कि एकाएक भाला आप के शरीर में घुस गया, जिससे आपकी मृत्यु हुई।

आप कौंसिल के मेम्बर हो गये। संवत् १९५७ में इन्दौर में आपका स्वर्गवास हो गया। जिस समय आपके स्वर्गवास का समाचार भानपुरा पहुँचा उस समय चारों ओर भानपुर परगने में हाहाकार सा मच गया। इन पंक्तियों का लेखक उस समय भानपुर में था। उसने उस समय भानपुर में जो शोक की घोर घटा देखी वह उसे सदा स्मरण रहेगी। इसका कारण है। जो व्यक्ति सैकड़ों हजारों आदमियों के सुख दुखों में साथ देता है, लोग भी उसे अपने पिता की तरह प्रेम और भक्ति भाव से देखने लगते हैं। कोठारी सावन्तरामजी रामपुर भानपुर परगने के एक विशेष पुरुष थे। वे लोगों से प्रेम करते थे और लोग उनसे प्रेम करते थे। जब राजसी ठाठ के साथ उनकी सवारी निकलती थी तब सैंकड़ों लोग उनका अभिवादन करने में गौरव अनुभव करते थे। अगर तत्कालीन प्रचलित लोकोक्ति पर विश्वास किया जाय तो कहना होगा कि किसानों के हित रक्षा का समर्थन करने के कारण ही आपको भानपुर से इन्दौर जाना पड़ा था। कहने का अर्थ यह है कि ओसवाल समाज में इन्दौर के कोठारी गंगारामजी, कोठारी शिवचन्दजी और कोठारी सावंतरामजी अपना खास स्थान रखते हैं।

राय बहादुर सिरेमलजी बापना

गत पृष्ठों में हम ओसवाल समाज के ऐसे कई ऐतिहासिक महानुभावों का परिचय दे चुके हैं जिन्होंने अपने २ समय में राजनैतिक और सैनिक क्षेत्रों में अपनी अपूर्व प्रतिभा का परिचय देकर राजस्थान के इतिहास को गौरवान्वित किया है। हम देखते हैं कि आज भी इस समाज में कुछ ऐसे सज्जन मौजूद हैं जिन्होंने अपनी दूरदर्शितापूर्ण (Far sighted statesmanship) राजनैतिक प्रतिभा के कारण भारत के शासकों (Administrators) में उच्च स्थान प्राप्त कर लिया है। इनमें सब से प्रथम उदाहरण इन्दौर राज्य के सफल प्राइमिनिस्टर राय बहादुर सिरेमलजी बापना सी० आई० ई० का दिया जाने योग्य है। वर्त्तमान ओसवाल समाज में इस समय सब से अधिक उच्च पद पर आपही हैं।

जिस समय आपने इन्दौर राज्य के शासन की बागडोर सम्हाली थी वह समय इन्दौर राज्य के इतिहास में अत्यंत जटिलता मय और कठिन समस्याओं से परिपूर्ण था। ऐसे समय में आपने इन्दौर राज्य के शासन को जिस अपूर्व नीतिज्ञता के साथ संचालित किया, वह आपके सफल शासक होने का ज्वलंत प्रमाण है। जिन लोगों ने देशी राज्यों की आंतरिक परिस्थिति का सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन किया है वे उनमें होने वाले राजनैतिक कुचक्रों और फिरकेबन्दियों से भली प्रकार परिचित होंगे। नाबालिगी शासन में इनका और भी प्राबल्य रहता है। ऐसी नाजुक परिस्थिति में इन सब षड्यंत्रों से ऊपर रह कर विशुद्ध हृदय से प्रजाहित की ओर बढ़ते चले जाने ही में उच्च श्रेणी की राजनीतिज्ञता रहती है। श्रीमान बापना महोदय एक विशाल हृदय के मुत्सद्दी हैं। उनका दृष्टि विन्दु बहुत व्यापक और दूरदर्शितापूर्ण है।

संकीर्ण और कुचक्रमयी राजनीति में उनका विश्वास नहीं। यही कारण है कि वे क्षुद्र राजनीति से अपने आपको परे रख कर प्रजा कल्याण की विशाल भावनाओं से अपने आपको प्रेरित करते हैं। आपने शिक्षा, व्यापार और उद्योग-धंधों की प्रगति में बड़ी सहायता पहुँचाई। इन्दौर में वाटर-वर्क्स की महान् विशाल योजना का निर्माण कर इन्दौर की प्रजा के लिये आपने एक महान् काम किया। कहा जाता है कि इस वाटर वर्क्स के समान विशाल योजना संसार भर में केवल एक दो जगह ही निर्मित की गई हैं। यह एक ऐसा कार्य है जिससे इन्दौर की प्रजा के हृदय में बापना महोदय का नाम चिरस्मरणीय रहेगा। इसके अतिरिक्त शिक्षा संबंधी प्रगति में भी आपने काफी सहायता पहुँचाई है। हम आपका विस्तृत परिचय आपके पारवारिक इतिहास में दे रहे हैं। यहाँ पर हम सिर्फ इतना ही कहना चाहते हैं कि श्री० बापना महोदय भारतवर्ष की रियासतों के प्रधान मन्त्रियों में अपना विशेष स्थान रखते हैं और नाबालिगी शासन में आपको जितने व्यापक अधिकार दिये गये थे, उतने जहांतक हमारा ख़याल है, सर प्रभाशङ्कर पट्टनी सरीखे एक आध सज्जन को छोड़ कर और किसी प्राइममिनिस्टर को नहीं रहे हैं। हमें हर्ष है कि आपने इन अधिकारों का बड़ा ही सदुपयोग किया और इन्दौर के प्रगतिशील शासन को विकसित कर उसे अत्यन्त सभ्य रियासतों के शासन के समकक्ष में ला रक्खा। मध्यभारत के भूतपूर्व ए० जी० जी० ने अपने एक व्याख्यान में श्री० बापना महोदय के शासन की बड़ी प्रशंसा की थी, तथा आखिर में कहा था कि प्रगतिशीलता के लिहाज से किसी भी रियासत के शासन से बापना महोदय का शासन दूसरे नम्बर पर न रहेगा (Second to none)। आपकी शासन योग्यता की प्रशंसा कई प्रभावशाली अंग्रेजों ने तथा अन्य भारतीय राजनीतिज्ञों ने की है।

राय बहादुर हीराचन्दजी कोठारी

वर्तमान समय में इन्दौर के कोठारी खानदान में रायबहादुर हीराचन्दजी कोठारी ने भी राज्य के कई बड़े २ पदों पर सफलता के साथ काम किया। ई० सन् १८८९ में आप इन्दौर राज्य की सर्विस में दाखिल हुए। आरम्भ में आप हाउस होल्ड डिपार्टमेंट (Household Department) में केवल १२) मासिक पर एक मामूली क्लर्क हुए। फिर आप अपनी कारगुजारी से बढ़ते २ अमीन, नायब सूबा, सूबा, रेव्हेन्यू कमिश्नर, रेव्हेन्यू मिनिस्टर और एक्साइज मिनिस्टर हुए। नायब दीवानी और फायनांस मिनिस्टरी का भी काम आपने बड़ी सफलता के साथ किया। जब मि० नरसिंहराव छुट्टी पर गये थे तब आपने प्राइम मिनिस्टरी का काम भी किया था। भूतपूर्व ए० जी०जी मि० बोझांकेट तथा सर जानवुड आपके कार्य से बड़े प्रसन्न रहे। आपको इन्दौर रियासत के सम्बन्ध में बहुत जानकारी है। राज्य के किसानों तकसे आप परिचित हैं। रेव्हेन्यू के कार्य में रियासत में आप एक ही समझे जाते हैं। आपकी सरलता और मिलनसारिता प्रशंसनीय है।

ओसवाल जाति के प्रधान, दीवान तथा प्रधान सेनापतियों की सूची

हम इस सूची में भारत की कुछ देशी रियासतों के ओसवाल प्रधानों, दीवानों, एवं प्रधान सेनापतियों की सूची दे रहे हैं। इनमें से कई सज्जनों ने अपने महान कार्य्यों से राजस्थान के इतिहास के पृष्ठों को उज्वल किया है।

जोधपुर राज्य के प्रधान ❀ (Presidents)

१—भण्डारी नराजी (समराजी के पुत्र) सं० १५१५ से १६ तक
२—भण्डारी नराजी (समराजी के पुत्र) सं० १९'६ से ३१ तक
३—भण्डारी नाथाजी (नराजी के पुत्र) सं० १५४४ से ४'८ तक
४—भण्डारी ऊदाजी (नाथाजी के पुत्र) सं० १५४८ से
५—भण्डारी गोरोजी (ऊदाजी के पुत्र) राव गांगाजी के समय में
६—भण्डारी लूणाजी (गोराजी के पुत्र) सं० १६५१ से ५४ तक
७—भण्डारी मानाजी (डावरजी के पुत्र) सं० १६५४ से ६५ तक
८—भण्डारी लूणाजी (गोराजी के पुत्र) सं० १६६५ से ७० तक
९—भण्डारी विट्ठलदासजी सं० १७६६
१०—भण्डारी खींवसीजी .... सं० १७७०
११—भण्डारी भानाजी (मानाजी के पुत्र) सं० १६७१ से ७५ तक
१२—भण्डारी पृथ्वीराजजी .... सं० १६७५ से ७६ तक
१३—भण्डारी लूणाजी (गोराजी के पुत्र) सं० १६७६ से १६८१ तक

जोधपुर राज्य के दीवान

१—भण्डारी नराजी (समराजी के पुत्र) जोधपुर शहर के स्थापन में राव जोधाजी के साथ सहयोग दिया। एवं संवत् १५१६ में "दीवान" का सम्मान पाया।
२—मुहणोत महराजजी (अमरसीजी के पुत्र)—राव जोधाजी के समय में दीवानगी तथा प्रधानगी की।

❀ प्रधानगी का ओहदा दीवान (Primeministers) के ओहदे से ऊँचा समझा जाता था।

* इनके पश्चात् लगभग १५० वर्षों तक जोधपुर राज्य के स्वामी राव जोधाजी, राव सातलजी, राव गाङ्गाजी, राव मालदेवजी, रावचन्द्रसेनजी, मोटाराजा उदयसिंहजी, सवाई राजा सूरसिंहजी एवं महाराजा गजसिंहजी के समयों में कई ओसवाल पुरुषों ने दीवानगी एवं प्रधानगी के ओहदों पर कार्य्य किये, लेकिन पूर्ण रेकार्ड प्राप्त न हो सकने से जितने नाम प्राप्त हुए उतने ही दिये जा रहे हैं।

३—भण्डारी ऊदाजी (नाथाजी के पुत्र) दीवानगी और प्रधानगी साथ में''' संवत् १५४८ में।
४—भण्डारी गोरोजी (ऊदाजी के पुत्र)''''''राव गाङ्गाजी के समय दीवानगी तथा प्रधानगी साथ में।
५—भण्डारी धनोजी (डावरजी के पुत्र)'''राव चन्द्रसेनजी के समय में।
६—भण्डारी मनाजी (डावरजी के पुत्र)'''मोटा राजा उदयसिंहजी के समय में।
७—भण्डारी हमीरजी " " "
८—भण्डारी रायचंदजी (जोधाजी के पुत्र) " " "
९—कोचर मूथा वेलाजी (जांजरजी के पुत्र)'''महाराजा सूरसिंहजी के समय में।
१०—भण्डारी ईसरदासजी " " "
११—भण्डारी भानाजी ... ... सम्वत् १६७६ में
१२—सिंघवी शाहामलजी — ''''''महाराजा गजसिंहजी के समय में
१३—मुहणोत जयमलजी (नैनसीजी के पिता) ... ... संवत् १६८६ से
१४—सिघवी सुखमलजी '''''' सम्वत् १६९० से सम्वत् १६९७ तक
१५—भण्डारी रायमलजी (लूणाजी के पुत्र)— ... ... संवत् १६९४ से १६९७ की पौष वदी ५ तक
१६—सिंघवी रायमलजी (शोभाचन्दजी के पुत्र)— ''' ''' सम्वत् १६९७ की पौष वदी ५ से
१७—भण्डारी ताराचन्दजी (नारायणोत) देश दीवानगी ... सम्वत् १७१४ से

१८	मुहणोत नेणसीजी (जयमलजी के पुत्र) देश दीवानगी मुहणोत सुन्दरसी (नेणसीजी के छोटे भाई) तन दीवानगी	सम्वत् १७१४ से १७२३ तक

१९—भंडारी विट्ठलदासजी (भगवानदासजी के पुत्र) ''' ''' ''' संवत् १७६२ से
२०—सिंघवी बख्तारमलजी और तख्तमलजी (सुखमलजी के पुत्र) ''' ''' संवत् १७६२ से
२१—भण्डारी विट्ठलदासजी (भगवानदासके पुत्र)१७६५की सावण सुदी१२से १७६६की कार्तिक वदी६ तक

२२—	भण्डारी माईदासजी (देवराजजी के पुत्र) तन दीवानगी भण्डारी खींवसीजी (रासाजी के पुत्र) देश दीवानगी	१७६६ की कार्तिक वदी ६से संवत् १७६७ तक

२३—राय रायन भण्डारी रघुनाथसिंहजी (रायचन्दजी के)''' '''देश दीवानगी, सम्वत् १७६७ से
२४—भण्डारी खींवसीजी (रासाजी के पुत्र) सम्वत् १७६७ के आसोज से १७६९ के फागुन तक
२५—भण्डारी माईदासजी (देवराजजी के पुत्र)— ... सम्वत् १७६९
२६—समदड़िया मूथा गोकुलदासजी ... सम्वत् १७६९

२७—	भण्डारी खींवसीजी (रासाजी के पुत्र) तन दीवानगी राय रायन भण्डारी रघुनाथसिंहजी—देश दीवानगी	१७७० के चैत्र से १७८१ की फागुन वदी १२ तक

२८—समदड़िया मूथा गोकुलदासजी ... ... सम्वत् १७८१ से ''' ''' '''
२९—राय रायन भण्डारी रघुनाथसिंहजी ... ... सम्वत् १७८२ से संवत् १७८५ तक

३०—भण्डारी अमरसिंहजी (खींवसीजी के पुत्र) सम्वत् १७८५ की आषाढ़ सुदी १४ से १७८८ तक
३१—सिंघवी अमरचन्दजी (रायमलजी के पुत्र) १७९३ आसोज सुदी १० से १७९४ चैत्र सुदी ७ तक
३२—भण्डारी अमरसिंहजी (खीवसीजी के पुत्र) सम्वत् १७९९ की कार्तिक सुदी १ से १८०१ के ज्येष्ठ तक
३३—भण्डारी गिरधरदासजी (रतनसिंहजी के भाई)—संवत् १८०१ के ज्येष्ठ से १८०४ के भादवा तक
३४—भण्डारी मनरूपजी (पोमसीजी के पुत्र) ········सम्वत् १८०४ के भादवा से १८०६ के मगसर तक
३५—भण्डारी सूरतरामजी (मनरूपजी के पुत्र) ··· ··· ··· ··· सम्वत् १८०६

३६—भण्डारी दौलतरामजी (थानसीजीके पुत्र)
३७—भण्डारी सूरतरामजी (मनरूपजी के पुत्र) } संवत् १८०६ की सावण सुदी १० से १८०७ की आसोज सुदी १० तक

३८—भण्डारी सवाईरामजी (रतनसिंहोत) १८०७ की आसोज सुदी १० से १८०८ की श्रावण वदी २ तक
३९—सिंघवी फतेचन्दजी (सरूपमलोत) १८०८ की श्रावण वदी २ से १८१८ की आसोज वदी १४ तक
४०—भण्डारी नरसिंहदासजी(मेसदासोत) संवत् १८१९ की जेठ सुदी ५ से १८२० की जेठ सुदी ५ तक
४१—मुहणोत सूरतरामजी (भगवतसिंहोत) १८२० की जेठ सुदी ५ से सं० १८२३ आसोज सुदी ९ तक
४२—सिंघवी फतेहचन्दजी* (सरूपमलजी के पुत्र) सम्वत् १८२३ की चैत्र सुदी ५ से १८३७ की—आसोज सुदी १० तक (जीवन पर्यन्त)
४३—†खालसे (कामसिंघवी फतेचन्दजीके पुत्र ज्ञानमलजी देखते थे) १८३७से १८४७ मगसर सुदी२ तक
४४—सिंघवी ज्ञानमलजी (फतेचन्दजी के पुत्र) संवत् १८४७ की मगसर सुदी २ से माघ सुदी ५ तक
४५—भण्डारी भवानीदासजी (जीवनदासजी के) १८४७ माह सुदी ५ से १८५१ की वैशाख वदी १४ तक
४६—भण्डारी शिवचन्दजी (शोभाचन्दोत) १८५१ की वैशाख वदी १४से १८५४ की आसोज सुदी १४ तक
४७—खालसे (काम सिंघवी नवलराजजी देखते थे) १८५४ आसोज सुदी १ से १८५५ श्रावण वदी ६
४८—सिंघवी नवलराजजी (जोधराजजी के पुत्र) संवत् १८५५ की सावण वदी ६ से कार्तिक वदी ९ तक
४९—भण्डारी शिवचन्दजी (शोभाचन्दोत) १८५५ की कार्तिक सुदी११ से १८५६ की वैशाख सुदी११ तक
५०—मुहणोत सरदारमलजी (सवाईरामोत) १८५६ वैशाख सुदी ११ से १८५८ की आसोज सुदी ३ तक
५१—खालसे (काम सिंघवी जोधराजजी देखते थे) १८५८ आसोज सुदी ३ से १८५९ भादवा वदी २ तक
५२—भण्डारी गङ्गारामजी (जसराजजी के पुत्र) सम्वत् १८६० मगसर वदी ७ से जेष्ठ वदी ४ तक
५३—मुहणोत ज्ञानमलजी (सूरतरामजी के) १८६० जेठ वदी ४ से १८६२ की आसोज सुदी ४ तक
५४—कोचर मेहता सूरजमलजी (सोजतके)१८६२ आसोज वदी ४ से १८६४ की आसोज सुदी ८ तक
५५—सिंघवी इन्द्रराजजी (भींवराजोत) १८६४ की आसोज सुदी ८ से १८७२ की आसोज सुदी ८ तक

* आपने अपने जीवन में २५ सालों तक "दीवान" पद का संचालन किया।

† जब किसी कारण वश "दीवानगी" का ओहदा दरबार अपने अधिकार में ले लेते थे, उस समय जबतक दूसरे ओहदेदार निर्वाचित नहीं किये जाते थे, वह ओहदा "खालसे" माना जाता था और उसके कार्य्य संचालन का भार वैसे ही किसी प्रभावशाली व्यक्ति के जिम्मे किया जाता था।

५६—*खालसे (काम मेहता अखेचन्दजी देखते थे) संवत् १८७२ कार्तिक सुदी १ से माघ सुदी ३ तक
५७—सिंघवी फतेराजजी† (इन्दराजजी के पुत्र) १८७२ माघ सुदी ३ से १८७३ भादवा सुदी १४ तक
५८—सिंघवी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के) संवत् १८७३ की कार्तिक सुदी १२ से वैसाख सुदी १४ तक
५९—मेहता अखेचन्दजी (खींवसीजी के पुत्र) १८७३ की वैसाख सुदी ५ से १८७४ सावण सुदी ३ तक
६०—मेहता लक्ष्मीचन्दजी‡ (अखेचन्दजी के पुत्र) १८७४ सावण सुदी ३ से १८७६ वैसाख सुदी १४ तक
६१—खालसे (काम सोजत के मेहता सूरजमलजी करते थे) १८७६ वैसाख सुदी १४ से आषाढ़ वदी ९ तक
६२—सिंघवी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) १८७६ की आषाढ़ वदी ९ से १८८१ की चैत्र सुदी ४ तक
६३—खालसे (काम सिंघवी फोजराजजी देखते थे) १८८१ की चैत सुदी ४ से १८८२ की पोष सुदी २ तक
६४—सिंघवी इन्द्रमलजी (जोरावरमलजी के पुत्र) १८८२ की पोष सुदी २ से १८८५ कार्तिक वदी १ तक
६५—सिंघवी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) १८८५ की काती वदी १ से १८८६ सावण वदी ३० तक
६६—खालसे (काम सिंघवी गुलराजजी के पुत्र फोजराजजी देखते थे) १८८६ सावण वदी ऽऽ से १८८७ तक
६७—सिंघवी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) ......संवत् १८८७ से १८८८ की चेत सुदी ९ तक
६८—सिंघवी गंभीरमलजी (फतेमलजी के पुत्र) १८८८ की चेत सुदी ९ से १८८९ की चेत वदी १३ तक
६९—मेहता जसरूपजी × (नाथजी के कामदार) सं० १८८९ चेत वदी १३ से १८९० काती सुदी ४ तक
७०—खालसे (भण्डारी लखमीचन्दजी काम देखते थे) १८९० काती सुदी ४ से १८९१ सावण वदी १४ तक
७१—भण्डारी लखमीचन्दजी (कस्तूरचन्दजी के पुत्र) १८९१ सावण वदी १४ से १८९२ माव वदी १० तक
७२—सिंघवी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) संवत् १८९२ की माव वदी १० से वैसाख सुदी १३ तक
७३—सिंघवी गंभीरमलजी ÷ (फतेचन्दजी के पुत्र) १८९२ वैसाख सुदी १४ से १८९४ सावण वदी ४ तक
७४—भण्डारी लखमीचन्दजी (कस्तूरचन्दजी के पुत्र) संवत् १८९४ सावण वदी ४ से आसोज सुदी ४ तक
७५—सिंघवी फतेराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) संवत् १८९४ आसोज सुदी ७ से १८९५ चेत सुदी १ तक
७६—सिंघवी गंभीरमलजी (फतेचन्दजी के पुत्र) १८९५ की चेत सुदी १ से १८९७ आसोज वदी १२ तक
७७—सिंघवी इन्द्रमलजी (जीतमलजी के पुत्र) संवत् १८९७ की आसोज वदी १२ से वैसाख सुदी १२ तक
७८—भण्डारी लखमीचन्दजी (कस्तूरचन्दजी के पुत्र) १८९७ वैसाख सुदी १२ से १८९८ चेत वदी १४ तक
७९—कोचर बुधमलजी (सोजत के मेहता सूरजमलजी के पुत्र) १८९८ चेत वदी १४ से १८९९ की भा० सु० १२
८०—सिंघवी सुखराजजी (बनराजजी के पुत्र) संवत् १८९९ की भादवा सुदी १२ से मगसर वदी ६ तक

---

*इस समय से जोधपुर के राजनैतिक वायु मण्डल में लगभग ३० सालों तक बहुत अधिक उथल-पथल एवं पार्टी बंदियाँ रही, अतएव "दीवान" पद भी बहुत जल्द २ परिवर्तित होते रहे।

† "दीवान" पद पर इन्होंने ७ वार कार्य्य किया।

‡ आप ५ वार दीवान हुए।

× इनकी तरफ से इनके कामदार पंचोली कालूरामजी इस ओहदे का काम देखते थे।

÷ इन्होंने ४ वार "दीवान" पद पर काम किया।

नोट—ध्यान रखना चाहिये कि जोधपुर राज्य का राजकीय सम्वत् श्रावण मास में परिवर्तित होता था।

८१—मेहता लखमीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र) १८९९ चेत सुदी १ से १९०० की फागुन वदी ३ तक
८२—सिंघवी गंभीरमलजी (फतेमलजी के पुत्र) सम्वत् १९०० की फागुन वदी ३ से जेठ सुदी ५ तक
८३—मेहता लखमीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र) सम्वत् १९०० की जेठ सुदी से १९०२ कार्तिक सुदी ९
८४—खालसे* काम सिंघवी फौजराजजी, भण्डारी शिवचंदजी, मेहता गोपालदासजी तथा २ अन्य जातीय सज्जन देखते थे। सं० १९०२ के कार्तिक सुदी ९ से माघ वदी ९ तक
८५—भण्डारी शिवचन्दजी (लखमीचन्दजी के पुत्र) १९०२ माघ वदी ९ से १९०३ आसोज सुदी ३ तक
८६—मेहता लखमीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र) १९०३ आसोज सुदी ३ से १९०७ आसोज वदी ७ तक
८७—मेहता मुकुन्दचन्दजी (लखमीचन्दजी के पुत्र) १९०७ की आसोज सुदी ७ से कार्तिक वदी ४ तक
८८—राव राजमलजी लोढ़ा—(रावरिधमलजी के) १९०७ चेत वदी १० से १९०८ भादवा सुदी १३ तक
८९—खालसे† (काम मेहता मुकुन्दचन्दजी, सिंघवी फौजराजजी और मेहता विजयसिंहजी आदि ५ व्यक्तियों की कमेटी के द्वारा होता था) सं० १९०८ भादवा सुदी १३ से पोष सुदी २ तक
९०—मेहता विजयसिंहजी (कृष्णगढ़ के मेहता करणमलजी के) १९०८ पोष सुदी २ से १९०९ आ० वदी १
९१—मेहता मुकुन्दचन्दजी (लक्ष्मीचन्दजी के पुत्र) १९०९ मगसर वदी १ से १९१० माह सुदी ९ तक
९२—खालसे‡—(काम मेहता गोपाललालजी, मेहता हरजीवनजी गुजराती तथा मेहता शंकरलालजी देखते थे)। सं० १९१० की माघ सुदी ९ से वैसाख वदी १३ तक
९३—खालसे (काम मेहता बिजयसिंहजी, राव राजमलजी लोढ़ा, और मेहता हरजीवनजी गुजराती देखते थे) सं० १९१३ की कार्तिक वदी ६ से पोष वदी १० तक
९४—मेहता विजयसिंहजी—संवत् १९१३ की पोष सुदी १० से संवत् १९१५ की पोष सुदी ९ तक
९५—मेहता गोपाललालजी और मेहता हरजीवनदासजी गुजरात वाले संवत् १९१५ की जेठ सुदी ११ तक
९६—मेहता मुकुन्दचन्दजी (लक्ष्मीचन्दजी के पुत्र) १९१६ की आषाढ़ वदी ८ से १९१९ सावन वदी १ तक
९७—+ खालसे (काम मेहता हरजीवनदासजी गुजराती, सिंघवी रतनराजजी तथा दो अन्य जातीय सज्जन देखते थे) सं० १९१९ की सावण वदी १ से चैत्र सुदी १ तक
९८—मेहता मुकुन्दचन्दजी (लखमीचन्दजी के) १९१९ चैत्र सुदी १ से १९२२ दूजा जेठ वदी ९ तक
९९—÷ खालसे—वेद मेहता सेठ प्रतापमलजी अजमेर वाले (गम्भीरमलजी के पुत्र) मेहता मुकुन्दचन्दजी, मेहता गोपाललालजी तथा भण्डारी पचानदासजी (बहादुरमलजी के भाई) काम करते थे। सं० १९२३ कार्तिक वदी ३ से १९२४ भादवा सुदी ५
१००—मेहता विजयसिंहजी (मेहता करणमलजी के पुत्र) १९२५ कार्तिक सुदी ५ से मगसर सुदी ५ तक

---

* इनके साथ ड्योढ़ीदार पेमकरणजी एवं जोशी प्रभूदानजी भी इस पद का कार्य्य देखते थे।
† इनके साथ जोशी प्रभूलालजी भी दीवान पद का कार्य्य देखते।
‡ इनके साथ खीचीं उम्मेदकरणजी काम देखते थे।
+ इनके साथ पंचोली मीनालालजी और जोशी प्रभूदयालजी काम देखते थे।
÷ आपके साथ जोशी शिवचन्दजी भी दीवान पद का कार्य्य संचालित करते थे।

१०१—खालसे —(काम मेहता विजयमलजी देखते थे) १९२५ जेठ वदी २ से १९२६ आसोज सुदी १० तक
१०२—खालसे (काम मेहता हरजीवनदासजी गुजराती मेहता विजयसिंहजी, सिंघवी समरथराजजी, मेहता हरजीवनदासजी एवं दो अन्य जातीय सज्जनों के साथ राज्य व्यवस्था होती थी) संवत् १९२९ की कार्तिक सुदी १४ तक
१०३—रा० ब० मेहता विजयसिंहजी—सं० १९२९ काती सुदी १४ से १९३१ की फागुन सुदी ९ तक
१०४—मेहता हरजीवनदासजी गुजरातवाले—१९३१ की चेत सुदी १५ से १९३२ कातिक सुदी ५ तक
१०५—रावराजा बहादुर लोढ़ा सिरदारमलजी—संवत् १९३३ की भादवा सुदी ८ से माघ सुदी १५ तक
१०६—रा० ब० मेहता विजयसिंहजी—सं० १९३३ की माघ सुदी १५ से १९४९ भादवा सुदी १३ तक
१०७—मेहता सरदारसिंहजी (विजयसिंहजी के पुत्र) संवत् १९४९ की भादवा सुदी १३ से अपने मृत्यु समय सं० १९५८ की आषाढ़ सुदी ३ तक

इस प्रकार "दीवान" के सम्माननीय पद पर सम्वत् १५१५ से सम्वत् १९५८ तक (२५० सालों में) करीब ८० ओसवाल मुत्सुद्दियों ने लगभग ३०० वर्षों तक १०७ बार कार्य्य किया। इसी प्रकार राज्य के सभी बड़े २ ओहदों पर अत्यधिक संख्या में ओसवाल पुरुष कार्य करते रहे। विक्रमी संवत् की सत्रहवीं, अठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताब्दि में जोधपुर के राजनैतिक क्षेत्र में ओसवाल जाति का बड़ा प्राधान्य रहा।

*जोधपुर राज्य के ओसवाल फौजबख्शी (Commander-in-Chiefs)

१—मुहणोत सूरतरामजी—संवत् १८०८ सावण वदी ३ से संवत् १८१३ सावण वदी १३ तक
२—भंडारी दौलतरामजी (थानसिंहजी के पुत्र) संवत् १८१३ की सावण वदी १३ से १८१९ तक
३—†सिंघवी भींवराजजी (लखमीचन्दजी के पुत्र) १८२४ की फागुन वदी ११ से १८३० तक
४—सिंघवी हिन्दूमलजी (चन्द्रभाणजी के पुत्र) सं० १८३० की चैत बदी १२ से १८३२ भादवा सुदी १४ तक
५—सिंघवी भींवराजजी—(लखमीचंदजी के पुत्र) १८३२ की भादवा सुदी १४ से १८४७ जेठ सुदी ४ तक
६—सिंघवी अखेराजजी (भींवराजजी के पुत्र) सं० १८४७ की जेठ बदी ४ से १८५१ सावण सुदी ११ तक
७—भंडारी शिवचन्दजी—संवत् १८५१ की सावण सुदी ११ से १८५५ की सावण वदी १४ तक
८—भंडारी भवानीरामजी (दौलतरामजी के पुत्र) १८५५ सावण वदी १४ से १८५६ चेत बदी ६ तक
९—सिंघवी अखेराजजी (भींवराजोत) सं० १८५६ की चेत वदी ६ से १८५७ की प्रथम जेठ सुदी १२ तक
१०—सिंघवी मेघराजजी—(अखेराजजी के पुत्र) १८५७ प्रथम जेठ सुदी १२ से १८७२ काती बदी १४ तक
११—भंडारी चतुर्भुजजी—(सुखरामजी के पुत्र) १८७२ काती वदी १४ से १८७४ दूजा सावण सुदी ६ तक

*आज कल की तरह उपरोक्त जमाना शान्ति का नहीं था। "फौजबख्शी" को हमेशा अपनी सेनाएँ यत्र तत्र युद्ध के लिये ले जाना पड़ती थी। इसी तरह रियासत के सेना विभाग में एवं प्रबन्ध विभाग में ओसवाल मुत्सुद्दी बड़े बड़े ओहदों पर प्रचुर प्रमाण में काम करते रहे। जिनकी नामावली स्थानाभाव के कारण हम यहाँ देने में असमर्थ हैं।

† सिंघवी भींवराजजी तथा उनके पुत्रों, पौत्रों एवं प्रपौत्रों ने लगभग १२५ सालों तक फौज बख्शी का काम किया।

१२—भंडारी अगरचन्दजी—(शिवचन्दजी के पुत्र) १८७४ दूजा सावण सुदी ६ से १८७६ दूजा जेठवदी १२ तक
१३—सिंघवी मेघराजजी—(अखेराजोत) १८७६ की दूजा जेठ बदी १२ से १८८२ की माघ सुदी १२ तक
१४—सिंघवी फौजराजजी—(गुलराजजी के पुत्र) १८९३ की सावण सुदी १ से १९१२ की आषाढ़ बदी ३ तक
१५—सिंघवी देवराजजी—(इनके पिता फौजराजजी के गुजरने पर फौजबख्शी देवराजजी के नाम पर हुई लेकिन इनकी ओर से इनके फूफा मुहणोत विजयसिंहजी तथा मेहता कालूरामजी बापना कार्य देखते थे) सं० १९१२ आषाढ़ बदी ३ से १९१६ सावण बदी १ तक
१६—खालसे—(काम सिंघवी देवराजजीकी ओरसे उनके कामदार बापना कालूरामजीके पुत्र मेहता रामलाल-जी बापना देखते थे।) सम्वत् १९१९ की सावण वदी १ से सम्वत् १९१९ की आसाढ़ सुदी १४ तक
१७—सिंघवी देवराजजी—(फौजराजजी के पुत्र) सं० १९१९ आषाढ़ सुदी ४ से १९२८ काती बदी ६ तक
१८—सिंघवी समरथराजजी—(सुखराजजी के पुत्र) १९२९ की मगसर सुदी ३ से १९३१ चेत बदी ६ तक
१९—सिंघवी करणराजजी—(सूरजराजजी के पुत्र) १९३१ चेत बदी ६ से १९३४ आसोज सुदी ५ तक
२०—सिंघवी किशनराजजी—(करणराजजी के पुत्र) १९३४ आसोज सुदी ५ से १९३५ भादवा बदी ३ तक
२१—सिंघवी बच्छराजजी (भींवराजजी के वंशज) ... ... सं० १९४५ से सं० १९५६ तक

जोधपुर के वर्तमान महा० साहिब का यहाँ के ओसवाल समाज के प्रति उद्गार

ओसवालों द्वारा संचालित सरदार हाई स्कूल की नई इमारत के उद्घाटन के समय गत १२ सितम्बर १९३२ को जोधपुर के वर्तमान नरेश श्रीमान् महाराजा उम्मेदसिंहजी साहब ने बड़ा ही महत्वपूर्ण भाषण दिया था। उसमें आपने ओसवाल जाति के पूर्वजों द्वारा की गई महान राजनैतिक सेवाओं का बड़ा ही गौरवशाली वर्णन किया है। हम आपके उक्त भाषण का कुछ अंश नीचे उद्धृत करते हैं।

I greatly appreciate the sentiments of loyalty and devotion expressed by you towards me and my house. The inestimable services rendered by your community to my ancestors are assured of a conspicuous and abiding place in the history of this great State. It is a magnificent record of devoted service. Indeed I cannot pay too high a tribute to your unflinching loyalty and single-minded devotion to duty which have been, and I hope should be, very valuable assets to this State, both in the past, and in the future.

I have no doubt that you prize those splendid traditions. I confidently believe that you will always strive to preserve and enhance them. It behoves you and your successive generations to see that the high example of duty and loyalty enshrined in those traditions is not in any way bedimmed or blurred in fut.

अर्थात् आपने मेरे और मेरे घराने के प्रति जिस राजभक्ति के भाव प्रदर्शित किये हैं। उन्हें मैं बहुत पसंद करता हूँ। आपकी जाति ने मेरे पूर्वजों की जो अमूल्य सेवाएं की हैं वह इस राज्य के इतिहास में प्रधान और चिरस्थाई स्थान गृहण करेगी। वह भक्ति पूर्ण सेवाओं का एक गौरवशाली इतिहास है। वास्तव में आपकी सदा स्थिर रहने वाली राज भक्ति और एक मन से की हुई कर्त्तव्य निष्टा—जो कि भूतकाल में इस राज्य के लिए बहुमूल्य सम्पत्ति रही है—मुझे उम्मीद है कि भविष्य में भी रहेगी—उसके प्रति मैं अधिक से अधिक सम्मान प्रदान करता हूँ।

मुझे संदेह नहीं है कि आप अपने महान गौरवशाली इतिहास का बहुत मान करते होंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि आप हमेशा अपने गौरव पूर्ण इतिहास को सुस्थिर रखने का यत्न करेंगे। अगर आप और आपकी संतानें इस बात के लिये अवश्य यत्न करेंगी कि आपके इतिहास में कर्तव्य निष्ठा और राज्य भक्ति का जो प्रकाश है, उसमें भविष्य में किसी भी प्रकार कमी न आवे।

उदयपुर (मेवाड़) के "ओसवाल" प्रधान, दीवान एवं फौज बख्शी

अब हम मारवाड़ की तरह मेवाड़ के कतिपय ओसवाल प्रधान, दीवान एवं सेनाध्यक्षों की सूची देते हैं। मारवाड़ की तरह मेवाड़ में भी अनेकों ओसवाल राजनीतिज्ञों और वीरों ने लगातार कई सौ वर्षों तक कठिन परिस्थितियों में राज्य की महान सेवाए की। हमें खेद है कि इन तमाम ओसवाल पुरुषों के हमें सिलसिलेवार पूरे नाम नहीं मिले हैं अतः हम बहुत थोड़ी नामावली यहाँ दे रहे हैं।

१—कोठारी तोलाशाहजी—महाराणा सांगा के समय में प्रधानगी की।
२—* कोठारी कर्माशाहजी—राणा रतनसिंह के समय में प्रधानगी के पद पर काम किया।
३—निहालचन्दजी बोलिया—सम्वत् १६१० में चित्तौड़ में महाराणा उदयसिंहजी के समय प्रधान रहे।
४—रंगाजी बोलिया—बड़े महाराणा अमरसिंहजी तथा महाराणा कर्णसिंहजी के समय में प्रधान रहे।
५—सर्वस्य त्यागी, वीरवर भामाशाह कावड़िया—महाराणा प्रतापसिंहजी के राजत्व काल में आरंभ से—अंत तक एवं उनके पुत्र अमरसिंहजी के समय में संवत् १६५६ की माघ सुदी ११ तक
६—कावड़िया जीवशाहजी (भामाशाह के पुत्र) अपने पिता के बाद महाराणा अमरसिंहजी के समय में।
७—कावड़िया अक्षयराजजी (जीवाशाह के पुत्र) महाराणा कर्णसिंहजी के राज्यकाल में।

* इन्होंने शत्रुंजय का उद्धार किया था। देखिये "धार्मिक विभाग"

८—सिंघवी दयालदासजी सीसोदिया—महाराणा राजसिंहजी के समय में

९—मेहता अगरचन्दजी वच्छावत—महाराणा अरिसिंहजी, हमीरसिंहजी तथा भीमसिंहजी के समय में

१०—मोतीराजजी बोलिया—महाराणा, अरिसिंहजी के राज्यकाल में सं० १८१९ से २६ तक

११—एकलिंगदासजी बोलिया (मोतीरामजी बोलिया के पुत्र) एकलिंगदासजी की वय छोटी होने से इनके काका मोजीरामजी काम देखते थे

१२—सोमजी गाँधी—महाराणा भीमसिंहजी के समय में

१३—सतीदासजी गाँधी (सोमजी के भाई) महाराणा भीमसिंहजी के समय में

१४—शिवदासजी गाँधी (सोमजी के भाई) महाराणा भीमसिंहजी के समय में

१५—मेहता देवीचन्दजी वच्छावत (अगरचन्दजी के पौत्र) महाराणा भीमसिंहजी के समय में

१६—मेहता रामसिंहजी—महाराणा भीमसिंहजी के समय में कई बार दीवान तथा प्रधान रहे।

१७—मेहता शेरसिंहजी वच्छावत (मेहता अगरचन्दजी के पौत्र) महाराणा भीमसिंहजी के समय आप और मेहता रामसिंहजी वारी २ से तीन चार बार दीवान और प्रधान रहे।

१८—मेहता गोकुलचन्दजी वच्छावत (मेहता देवीचन्दजी के पौत्र) महाराणा सरूपसिंहजी के समय में

१९—कोठारी केसरीसिंहजी—महाराणा सरूपसिंहजी के समय में सं० १९१६ से २६ तक

२०—मेहता गोकुलचन्दजी *—महाराणा सरूपसिंहजी के समय में संवत् १९२६ से प्रधानगी की

२१—मेहता पन्नालालजी वच्छावत सी० आई० ई०—महाराणा शंभूसिंहजी के समय में

२२—कोठारी बलवन्तसिंहजी—महाराणा फतेसिंहजी के समय में

२३—कटारिया मेहता भोपालसिंहजी—महाराणा फतेसिंहजी के समय में

२४—मेहता जगन्नाथसिंहजी† (भोपालसिंहजी के पुत्र) महाराणा फतहसिंहजी के समय में

इसी प्रकार मेवाड़ के सेनाध्यक्षों मे बोल्या रुद्रभाजी, सरदारसिंहजी, भारमलजी कावड़िया, मेहता जालसी, मेहता चीलजी मेहता नाथजी, मेहता मालदासजी आदि कई नामांकित वीर हुए। जिन्होंने अपनी अपूर्व वीरता से मेवाड़ राज्य की अमूल्य सेवाएँ की। मेहता चीलजी ने मेवाड़ राज्य के स्थापन में महाराणा हम्मीर को बहुत इमदाद दी।

बीकानेर स्टेट के ओसवाल दीवान

मारवाड़ एवं मेवाड़ की तरह बीकानेर राज्य के आरंभ काल से ही ओसवाल पुरुषों ने रियासत की अमूल्य सेवाओं में सहयोग लिया। अब हम बीकानेर के प्रधानों तथा दीवानों की सूची दे रहे हैं।

१—‡वच्छराजजी बच्छावत—संवत् १४८९ से राववीकाजी के साथ बीकानेर राज्य स्थापन में बहुत कार्य्य किया।

---

* आपके साथ पंडित लछमणरावजी भी प्रधानगी का काम करते थे।

† आपके साथ संवत् १९७५ तक पं० शुकदेव प्रसादजी एवं इनके बाद संवत् १९७८ तक पं० दामोदर लालजी भी राज्यकार्य्य सञ्चालनमें सहयोग देते रहे। इस समय आप "मेम्बर कौंसिल" एवं 'कोर्ट आफ वोर्ड आफीसर' हैं।

‡ इसके पूर्व आप राव रिणमलजी एवं राव जोधाजी के समय में भी प्रधानगी का काम कर चुके थे। आप राव बीकाजी के साथ जांगलू प्रदेश में आये। आपके परिवार ने लगातार ६ पीढ़ियों तक बीकानेर राज्य में प्रधानगी की।

२—*वेद मेहता राव लाखनसी,—बीकानेर राज्य के आरंभ काल में कार्य्य किया।

३—मेहता करमसी बच्छावत—(बच्छराजजी के पुत्र) संवत् १५५१ से राव लूणकरणजी के समय में।

४—मेहता वरसिंहजी बच्छावत (करमसी के छोटे भाई) राव जैतसिंहजी के समय में।

५—मेहता नगराजजी बच्छावत (वरसिंहजी के पुत्र) राव जैतसिंहजी के समय में।

६—मेहता संग्रामसिंहजी बच्छावत (नगराजजी के पुत्र) राव कल्याणसिंहजी के समय में

७—मेहता करमचन्दजी बच्छावत (संग्रामसिंहजी के पुत्र) राव रायसिंहजी के समय में।

८—वेद मेहता ठाकुरसीजी (राव लाखनसी की ५ वीं पीढ़ी में) राव रायसिंहजी के समय में।

९—†मेहता भागचन्दजी तथा लक्ष्मीचंदजी बच्छावत (करमचन्दजी के पुत्र) राव सूरसिंहजी के समय में।

१०—वेद मेहता महाराव हिन्दूमलजी—महाराजा रतनसिंहजी के समय में संवत् १८८५ में।

११—मेहता किशनसिंहजी—१९३५ में एक साल तक।

१२—दीवान अमरचन्दजी सुराणा—महाराजा सूरतसिंहजी के समय में १८८३ से

१३—राखेचा मानमलजी—संवत् १८५२-५३ में दीवान रहे।

१४—कोचर मेहता शहामलजी—महाराजा सरदारसिंहजी के समय में संवत् १९६७ में दीवान रहे।

किशनगढ़ स्टेट के दीवान

अब हम किशनगढ़ स्टेट के भी कतिपय ओसवाल दीवानों की सूची दे रहे हैं।

१—मुहणोत रायचन्दजी—महाराज कृष्णसिंहजी के साथ कृष्णगढ़ राज्य के स्थापन में एवं १६५८ में किशनगढ़ शहर बसाने में बहुत अधिक सहयोग दिया। आपको महाराजा कृष्णसिंहजी ने अपना प्रथम दीवान बनाया। आप लगभग १७२० तक इस पद पर रहे।

२—मेहता कृष्णसिंहजी मुहणोत—महाराजा मानसिंहजी के समय राज्य के मुख्य मन्त्री रहे।

३—मेहता आसकरणजी मुहणोत—महाराजा राजसिंहजी ने १७६५ में दीवान पद इनायत किया।

४—मेहता चैनसिंहजी मुहणोत—महाराजा प्रतापसिंहजी के समय में दीवान रहे।

५—मेहता रामचन्द्रजी मुहणोत—महाराजा बहादुरसिंहजी ने संवत् १७८१ में दीवान बनाया।

६—मेहता हठीसिंहजी मुहणोत—महाराजा बहादुरसिंहजी ने संवत् १८३१ में दीवान पद दिया।

७—मुहणोत हिन्दूसिंहजी—महाराज बहादुरसिंहजी के समय में माईदासजी के साथ दीवानगी की।

८—मेहता जोगीदासजी मुहणोत—महाराजा विरदसिंहजी तथा प्रतापसिंहजी के समय में दीवान रहे।

---

* आप भी राव बीकाजी के साथ जोधपुर से आये थे। बीकानेर शहर को बसाने में बच्छराजजी तथा लाखनसीजी ने बहुत अधिक प्रयत्न किया।

† इन बंधुओं को महाराजा सूरसिंहजी ने मरवा डाला उस समय इनके परिवार में केवल १ गर्भवती स्त्री रहगई जिनके कुक्ष से भाणजी नामक पुत्र हुए। इनकी चौथी पीढ़ी में मेहता अगरचन्दजी हुए। जो मेवाड़ के राजनैतिक गगन में चमकते हुए नक्षत्र की तरह भासित हुए। जोधपुर और बीकानेर के बाद इस परिवार के कई पुरुष मेवाड़ राज्य में प्रधान और दीवान रहे। इस समय इस परिवार में मेहता पन्नालालजी बच्छावत सी. आई. ई. के पुत्र मेहता फतेलालजी हैं।

९—मेहता शिवदासजी मुहणोत—महाराज कल्याणसिंहजी के समय में १८८७ में दीवान रहे।

१०—मेहता करणसिंहजी मुहणोत—१८७७ से १८९६ तक दीवान रहे। आपके द्वितीय पुत्र मेहता विजयसिंहजी तथा पौत्र सरदारसिंहजी जोधपुर राज्य के ख्याति प्राप्त दीवान रहे।

११—मेहता मोखमसिंहजी (मेहता करणमलजी के ज्येष्ट पुत्र) संवत् १८९६ से १९०८ तक दीवान रहे।

इसी प्रकार किशनगढ़ में मुहणोत परिवार के अलावा बोथरा परिवार में भी कुछ सज्जन दीवान रहे, लेकिन खेद है कि इन परिवारों के वर्तमान मालिकों के पास कई बार जाने पर भी हमें परिचय प्राप्त न हो सका, अतएव पूरी सूची नहीं दे सके। इसी प्रकार किशनगढ़ में मेहता उम्मेदसिंहजी, मेहता रघुनाथसिंहजी, मेहता माधवसिंहजी आदि सज्जनों ने भी स्टेट में फौज बख्शी के पदों पर कार्य्य किया।

जयपुर के ओसवाल दीवान

१—गोलेछा माणिकचन्दजी—प्रधानगी के पद पर कार्य किया।

२—गोलेछा नथमलजी—संवत् १९३७ से १९५८ तक दीवान पद पर कार्य किया।

काश्मीर के ओसवाल दीवान

१—मेजर जनरल दीवान विशनदासजी रायबहादुर सी० एस० आई० सी० आई० ई० जम्मू-भूत पूर्व दीवान काश्मीर, इस समय आप जम्मू में रिटायर्ड लाइफ बिता रहे हैं।

सिरोही—स्टेट के ओसवाल दीवान

इस स्टेट में भी बहुत पुराने समय से ओसवाल समाज का सिंघी परिवार दीवान के पदों पर काम करता आ रहा है। उन सज्जनों के नाम नीचे उद्धृत करते हैं।

१—सिंघी श्रीवंतजी
२—सिंघ श्यामजी
३—सिंघी सुन्दरजी
४—सिंघी अमरसिंहजी
} सिरोही के महाराजा सुलतानसिंहजी, अखेराजजी, वेरीसालजी दरजनसिंहजी, तथा मानसिंहजी के समय में दीवान के पदों पर काम किया।

५—सिंघी हेमराजजी
६—सिंघी कानजी
७—सिंघी पोमाजी
} ये तीनों बन्धु ईडर के दीवान सिंघी लालजी के पुत्र थे। इन्होंने सिरोही स्टेट के दीवन पद पर काम किया था इनमें कानजी ३ वार दीवान हुए।

८—सिंघी जोरजी—आप संवत् १९१६ में दीवान रहे।

९—बापना चिमनमलजी दुबानी वाले—आपने भी स्टेट में दीवान के पद पर कार्य किया था।

१०—सिंघी कस्तूरचन्दजी—आप संवत् १९१९,२५ तथा ३२ में तीन वार दीवान हुए।

११—राय बहादुर सिंघी जवाहरचन्दजी—आप संवत् १९४८,५५ तथा ५९ में तीन वार दीवान हुए।

इन्दौर स्टेट के ओसवाल दीवान

१—राय बहादुर सिरेमलजी बापना, बी० एस० सी० एल० एल० बी० एतमाद—वजीर-उद्दौला—आप सन् १९२६ से इन्दौर स्टेट के प्राइम मिनिस्टर एवं प्रेसिडेंट कौंसिल के पद पर अधिष्ठित हैं। वर्तमान में भारत के ओसवाल समाज में आपही एक महानुभाव इतने उच्च पदपर विभूषित हैं।

२—रा० ब० हीराचन्दजी कोठारी—आप भी कुछ मास तक टेम्परेरी रूप से प्रेसीडेंट कौंसिल तथा दीवान रहे थे।

रतलाम स्टेट के ओसवाल दीवान

१—स्वर्गीय कोठारी जव्हारसिंहजी दूगड़ नामली—आपने कुछ वर्षों तक स्टेटके दीवान पदपर काम किया था।

सीतामऊ के ओसवाल दीवान

१—मेहता नाथाजी—महाराजा रामसिंहजी के समय में १७३१ में।

२—मेहता हीराचन्दजी—महाराजा केशोदासजी के समय में।

३—मेहता भिखारीदासजी—महाराजा केशोदासजी के समय में १७६९ में।

बांसवाड़ा राज्य के ओसवाल दीवान

यहाँ के कोठारी परिवार ने बहुत समय तक दीवान पद पर काम किया। तथा अभी २ साल पूर्व ससूदा निवासी श्री जालिमचन्दजी कोठारी दीवान पद पर काम करते थे।

झाबुआ के ओसवाल दीवान

१—श्री डड्ढा गुलाबचन्दजी एम० ए० जयपुर—आप इस स्टेट के दीवान पद पर कार्य्य कर चुके हैं।

प्रतापगढ़ के ओसवाल दीवान

१—श्रीसुजानमलजी बांठिया प्रतापगढ़—आप कई वर्षों तक इस स्टेट के दीवान रह चुके हैं।

झालावाड़ स्टेट के फौजबख्शी

१—सुराणा गंगाप्रसादजी—आपको महाराज राणा पृथ्वीसिंहजी ने फौजबख्शी का पद इनायत किया था।

२—सुराणा नरसिंहदासजी—(गंगाप्रसादजी के पुत्र) अपने पिताजी की जगह फौजबख्शी मुकर्रर हुए।

धार्मिक क्षेत्र में ओसवाल जाति

Oswals in the Field of Religion.

ओसवाल जाति के राजनैतिक और सैनिक महत्व के ऊपर गत अध्याय में हम काफी प्रकाश डाल चुके हैं। उसके पढ़ने से किसी भी निष्पक्ष पाठक को यह पता बहुत आसानी के साथ लग जाता है कि राजपूताने के मध्ययुगीन इतिहास में राजपूत राजाओं के अस्तित्व की रक्षा के अन्तर्गत इस जाति के मुत्सुद्दियों का कितना गहरा हाथ रहा है। कई बार इतिहास के अन्दर हमको ऐसी परिस्थितियाँ देखने को मिलती हैं, जिनसे लाभ उठाकर अगर वे लोग चाहते तो किसी राज्य के स्वामी हो सकते थे। नवीन राज्यों की स्थापना कर सकते थे। मगर इन लोगों की स्वामिभक्ति इतनी तीव्र थी कि जिसकी वजह से उन्होंने कभी भी अपने मालिक के साथ विश्वासघात नहीं किया। उन्होंने सैनिक लड़ाइयाँ लड़ीं अपने मालिकों के लिये; राजनैतिक दावपेंच खेले वे भी अपने मालिकों के लिये; जो कुछ किया उसका फायदा उन्होंने सब अपने मालिकों को दिया। इस प्रकार राजनीति और युद्धनीति के साथ २ इनकी स्वामिभक्ति का आदर्श भी बहुत ऊँचा रहा है।

अब इस अध्याय में हम यह देखना चाहते हैं कि इस जाति के पुरुषों ने धार्मिक क्षेत्र के अन्तर्गत क्या २ महत्वपूर्ण काम किये। उनकी धार्मिक सेवाओं के लिये इतिहास का क्या मत है।

यहाँ पर यह बात ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है कि हर एक युग और हरएक परिस्थिति में जनता के धार्मिक आदर्श भिन्न २ होते हैं। एक परिस्थिति में जनता जिस धार्मिक आदर्श के पीछे मतवाली रहती है, दूसरी परिस्थिति में वह उसी आदर्श से उदासीन हो किसी दूसरे आदर्श के पीछे अपना सर्वस्व लगा देती है। एक समय था जब लोग अनेकानेक मन्दिरों का निर्माण करवाने में, बड़े २ संघों को निकालने में, आचार्य्यों के पाट महोत्सव कराने में धर्म के सर्वोच्च आदर्श की सफलता समझते थे आज के नवीन युग में शिक्षित और बुद्धिवादी व्यक्तियों का धर्म के इस आदर्श से बड़ा मतभेद हो सकता है। हमारा भी हो सकता है, मगर इस मतभेद का यह अर्थ नहीं है कि हम उन महान् व्यक्तियों की उत्तम भावनाओं की इज्जत न करें। उन्होंने अपने महान् आदर्शों के पीछे जो त्याग किया उसकी तो हमें इज्जत करनाही होगी, चाहे उन आदर्शों से हमारा कितना ही मतभेद क्यों न हो।

शत्रुंजय तीर्थ

शत्रुंजय तीर्थ और ओसवाल

शत्रुंजय तीर्थ के माहात्म्य के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना सूर्य्य को दीपक दिखाना है। भारतवर्ष का प्रत्येक जैन गृहस्थ इस तीर्थ की महानता और माहात्म्य के सम्बन्ध में पूर्णतया परिचित है। खास करके श्वेताम्बर जैन समाज के अन्तर्गत तो इस तीर्थ की महिमा खूब ही मानी गई है। इस समाज के अन्तर्गत प्राचीन और अर्वाचीन काल में जितने भी संघ निकाले गये उनमें से अधिकांश से भी अधिक शत्रुंजय और गिरनार के थे। इस तीर्थ के अन्दर इसके जीर्णोद्धार और इसकी जाहोजलाली के लिये ओसवाल श्रावकों ने कितने महत्वपूर्ण काम किये, वे नीचे लिखे शिलालेखों से भली प्रकार प्रकट हो जायँगे।

शत्रुंजय तीर्थ और धर्मवीर समराशाह

शत्रुञ्जय तीर्थ वैसे तो बहुत प्राचीन है मगर समय के धक्कों से हमेशा मन्दिरों में टूट फूट और जीर्णता आती ही रहती है, जिसका समय २ पर श्रद्धालु और समर्थ श्रावक पुनरुद्धार करवाते रहते हैं। मगर वि० सं० १३६९ में इस तीर्थ पर ऐसी भयङ्कर विपत्ति आई जैसी शायद न तो उसके पहले ही कभी आई थी और न उसके पश्चात ही।

वह समय अलाउद्दीन खिलजी का था—उसी अलाउद्दीन का जिसने महारानी पद्मिनी की रूप लालसा में पड़कर चित्तौड़ का सर्वनाश कर दिया था। इस यवन-राजा की निर्दयता और धर्मान्धता के सम्बन्ध में इतिहास के पाठक भली प्रकार परिचित हैं। इसी अलाउद्दीन की फ़ौजों ने वि० सं० १३६९ में शत्रुञ्जय तीर्थ पर हमला कर दिया। इन आक्रमणकारियों ने इस महान् तीर्थ को चौपट कर दिया। अनेकानेक भव्य मन्दिर और मूर्त्तियां नष्ट कर दी गईं। यहाँ तक कि मूलनायक श्रीआदीश्वर भगवान की मूर्त्ति भी खण्डित कर दी गई।

उस समय अणहिलपुरपट्टण में ओसवाल जाति के श्रेष्ठि (वैद मुहता) गौत्रीय धर्मवीर देशलशाह विद्यमान थे। ये बड़े धर्म भीरू और भावुक व्यक्ति थे। जब इन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ के नाश का हाल सुना तो इन्हें बड़ा दुःख हुआ। इन्होंने अपने प्रतिभाशाली और धार्मिक पुत्र समराशाह से यह सब हाल कहा। तब समराशाह ने कहा कि जब तक मैं इस तीर्थराज का पुनरुद्धार न कर लूँगा (१) भूमि पर सोऊंगा

(२) दिन में एक बार भोजन करूँगा (३) ब्रह्मचर्य्य से रहूँगा (४) शृङ्गारद्रव्यों का प्रयोग न करूँगा और (५) छः विषय में प्रतिदिन केवल एक विषय का सेवन करूँगा। धर्म वीर समराशाह की इस भीष्म प्रतिज्ञा को सुनकर तत्कालीन आचार्य्य श्री सिद्धसूरिजी बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने समराशाह की सफलता की मनोकामना की।

सबसे पहले समराशाह ने गुजरात के तत्कालीन अधिकारी अलपखान का पुनरुद्धार के लिए हुक्म और शाहीफर्मान प्राप्त किया। उसके पश्चात् मूर्त्ति निर्माण के लिए आरासण खान से संगमरमर की पुतली मँगवाई। उस समय अरासणखान का अधिकारी महिपालदेव था जो त्रिसङ्गमपुर में राज्य करता था। इस राजा के मंत्री का नाम पाताशाह था। जब समराशाह के भेजे हुए सेवक बहुमूल्य भेंटों को लेकर महिपालदेव के सम्मुख पहुँचे तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने वे सब भेंटे आदर पूर्वक वापस कर दीं और स्वयं समराशाह के सेवकों को लेकर संगमरमर की खान पर गया, और स्फटिक मणि के सदृश निर्दोष, सुन्दर फलही निकलवाकर समराशाह के सेवकों को देदी। इस फलही से उस समय के उत्तम शिल्पशास्त्रियों ने मूर्त्ति बनाकर तैय्यार की। इधर जो देवमन्दिर देवकुलिकाएँ, और मण्डप इत्यादि क्षत विक्षत हो गये थे, वे भी सब तैय्यार करवाकर नये बना लिये गए।* इसके अतिरिक्त देशलशाह ने रथ के आकार का एक नया मन्दिर और बनवाया।

सब काम हो जाने पर देशलशाह ने प्रतिष्ठा महोत्सव का मुहूर्त्त निकाला और सारे श्री संघ को दूर २ तक निमंत्रण भेजेगए। इस प्रकार बड़ी धूम धाम से लाखों रुपये खर्च करके धर्मवीर देशल- शाह और समराशाह ने जिन बिम्ब की प्रतिष्ठा करवाई। इस प्रतिष्ठा के समय में बहुत बड़ा उत्सव किया गया।

शत्रुञ्जय तीर्थ और धर्मवीर कर्माशाह

संवत् १५८७ में चित्तौड़ के सुप्रसिद्ध सेठ कर्माशाह ने इस महान् तीर्थ का पुनरुद्धार करके फिर से इसकी नई प्रतिष्ठा करवाई। उसका पूरा विवरण वहाँ के सबसे बड़े और मुख्य मंदिर के द्वार पर एक

* मण्डप के सम्मुख बलानक मण्डप का उद्धार श्रेष्ठि त्रिभुवनसिंह ने करवाया, स्थिरदेव के पुत्र शाह लंढुक ने ४ देव कुलिकाएँ बनवाई जैत्र और कृष्ण नामक संघवियों ने जिन बिम्ब सहित आठ दोहरियाँ करवाई पेथड़शाह के बनाए हुए सिद्ध कोटाकोटि चैत्य का उद्धार हरिश्चन्द्र के पुत्र शाह केशव ने कराया इसी प्रकार और भी श्रावको ने कई छोटे बड़े कार्य्य करवाये।

—मुनिज्ञान सुन्दरजी कृत समरसिंह चरित्र

शिला में खोदा हुआ है। इस शिलालेख में * सबसे पहले कर्माशाह के वंश का वर्णन किया गया है जिससे पता लगता है कि गवालियर के अन्दर आम राजा ने बप्प भट्टसूरि के उपदेश से जैन धर्म को ग्रहण किया। उसकी एक स्त्री वणिक कन्या थी। उसकी कुक्षि से जो पुत्र उत्पन्न हुए थे वे सब ओसवाल जाति में मिला लिये गये और उनका गौत्र राज कौष्टागार के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसी कुल में आगे चल कर सारणदेव नामक एक प्रसिद्ध पुरुष हुए। सारणदेव की ८ वीं पुश्त में तोलाशाह नामक एक व्यक्ति हुए। उनके लीलू नामक स्त्री से छः पुत्र हुए जिनमें सबसे छोटे कर्माशाह थे। आपके भी दो स्त्रियाँ थी। पहली स्त्री का नाम कपूरदे और दूसरी का कामलदे था। कर्माशाह का राज दरबार में बड़ा सम्मान था। यद्यपि वे एक व्यापारिक पुरुष थे फिर भी राजनैतिक वातावरण के ऊपर उनका बहुत अच्छा प्रभाव था। उस समय मेवाड़ की राज गद्दी पर राणा रत्नसिंहजी अधिष्ठित थे।

कर्माशाह ने अपने गुरु के पास से शत्रुञ्जय तीर्थ का महत्व सुनकर उसके पुनरुद्धार करने की इच्छा प्रगट की और चित्तौड़ से गुजरात आकर वहाँ के तत्कालीन सुल्तान बहादुरशाह के पास से उसके उद्धार का फरमान प्राप्त किया। तत्पश्चात् आप वहाँ से शत्रुञ्जय को गये। उस समय सोरठ के सूबेदार मजादखाँन के कारभारी रविराज और नरसिंह नाम के दो व्यक्तियों ने कर्माशाह का बहुत आदर किया। उनकी सहानुभूति और सहायता से कर्माशाह ने बहुत द्रव्य खर्च करके सिद्धाचल का पुनरुद्धार किया और संवत् १५८७ के वैसाख वदी ६ को अनेक संघ और अनेक मुनि आचार्य्यों के साथ उसकी कल्याण कर प्रतिष्ठा की।

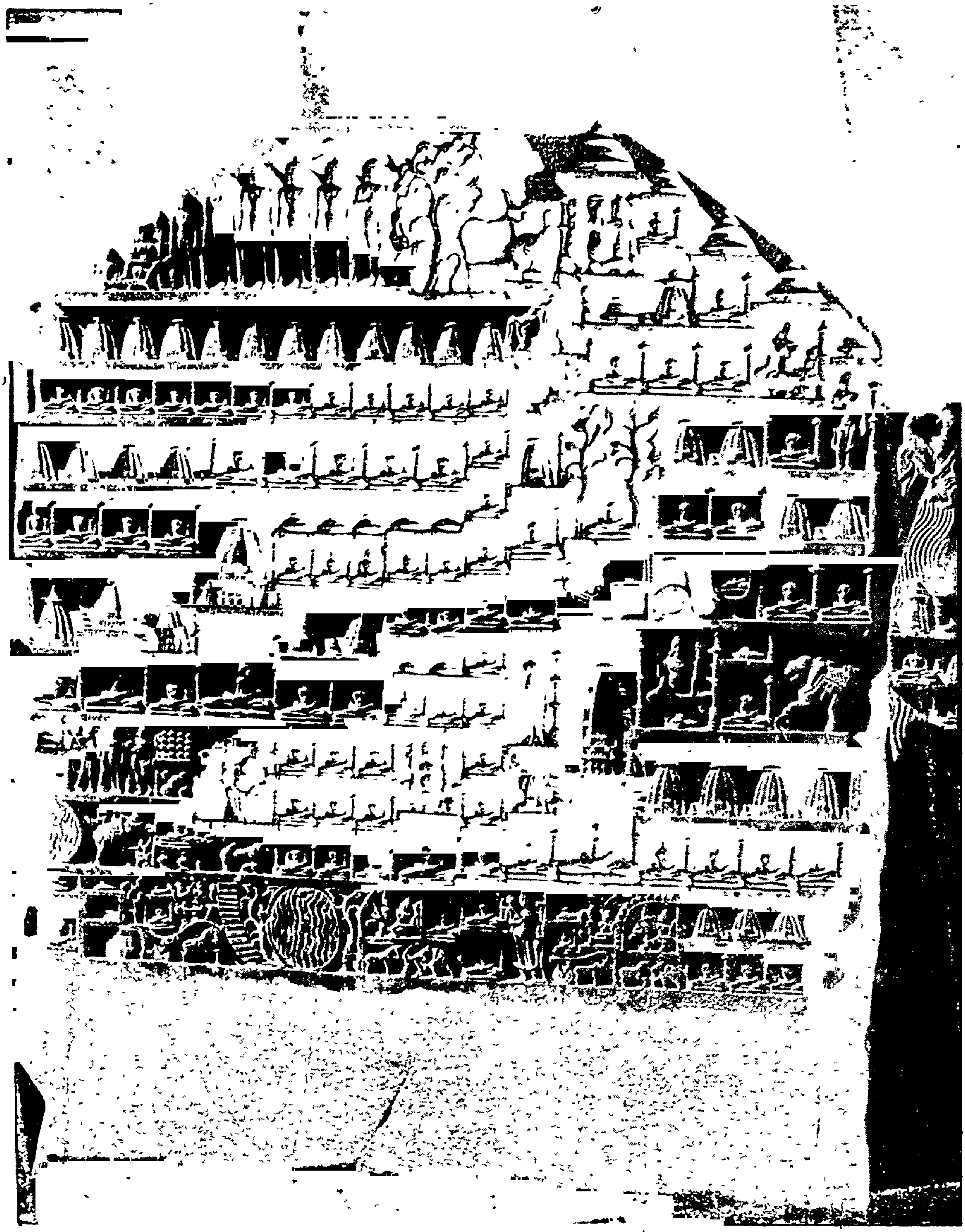
शत्रुञ्जय तीर्थ और शाह तेजपाल

कर्माशाह के ६० वर्ष के पश्चात् खम्भात के रहनेवाले प्रसिद्ध ओसवाल धनिक शाह तेजपाल सोनी ने शत्रुंजय के इस महान मंदिर का विशेष रूप से पुनरुद्धार कर फिर से उसे तय्यार करवाया और तपागच्छ के प्रसिद्ध आचार्य्य हीरविजय सूरि के हाथों से उसकी प्रतिष्ठा करवाई। इसका एक शिला लेख † मुख्य मंदिर के पूर्व द्वार के रंग मण्डप में लगा हुआ है। इस शिलालेख में शुरू २ में तो तपागच्छ के आचार्य्यों की पट्टावली और उनके द्वारा किये खास २ कामों का वर्णन किया गया है। उसके पश्चात् उद्धारकर्त्ता का परिचय देते हुए लिखा है।

---

* पूरे शिलालेख के लिए देखिए मुनि जिन विजयजी कृत "जैन लेख संग्रह" भाग २ लेखाङ्क १

† देखिये मुनि जिनविजयजीकृत जैन लेख संग्रह भाग २ लेख १२



शीतलनाथजी का मन्दिर शत्रुञ्जय (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

ओसवंश के सुप्रसिद्ध आभू सेठ के कुल में शिवराज सोनी नामक एक पुण्यशाली सेठ हुआ। उसके पश्चात क्रमशः सीधर, परवत, काला, बाघा और बच्छिया की पाँच पुश्तें और हुईं। बच्छिया के सुहासिनी नामक स्त्री से तेजपाल नामक महाप्रतापी पुत्र हुआ। शाह तेजपाल हीरविजयसूरि और उनके शिष्य विजयसेनसूरि का परम भक्त था। इन आचार्य्य श्री के उपदेश से उसने जिन मन्दिरों के बनाने में और संघ भक्ति के करने में विपुल द्रव्य खर्च किया। संवत् १६४६ में उसने अपने जन्मस्थान खम्भात में सुपार्श्वनाथ तीर्थङ्कर का भव्य चैत्य बनाया। संवत् १५८७ में आनन्दविमल सूरि के उपदेश से कर्माशाह ने शत्रुंजय तीर्थ के इस मन्दिर का पुनरुद्धार किया था। मगर अत्यंत प्राचीन होने की वजह से थोड़े ही समय में यह मूल मन्दिर फिर से जर्जर की तरह दिखाई देने लग गया। यह देखकर शाह तेजपाल ने फिर से इस मंदिर का पुनरुद्धार प्रारंभ किया और संवत् १६४९ में यह मंदिर बिलकुल नया बना दिया गया और इसका नन्दिवर्द्धन नाम स्थापित किया। साथ ही प्रसिद्ध आचार्य श्री हीरविजय सूरि के हाथों से इसकी प्रतिष्ठा करवाई जिसमें उसने विपुल द्रव्य खर्च किया। शत्रुञ्जय के ऊपर इस प्रतिष्ठा के समय अगणित मनुष्य एकत्र हुए थे। गुजरात, मेवाड़, मारवाड़, दक्षिण और मालव आदि देशों के हजारों यात्री यात्रा के लिये आये हुए थे, जिनमें ७२ तो बड़े २ संघ थे। स्वयं हीरविजयजी के साथ में उस समय करीब एक हजार साधुओं का समुदाय था। कहना न होगा कि इन सब लोगों के लिये रसोई इत्यादि की व्यवस्था सोनी तेजपाल के तरफ से की गई थी।

शत्रुञ्जय तीर्थ और वर्द्धमानशाह

वर्द्धमानशाह ओसवाल जाति के लालण गौत्रीय पुरुष थे। ये कच्छ प्रान्त के अलसाणा नामक गाँव के रहने वाले थे। ये बड़े धनाढ्य और व्यापार निपुण पुरुष थे। संयोगवश इस अलसाणा ग्राम के ठाकुर की कन्या का सम्बन्ध जामनगर के जाम साहब से हुआ, जब बिदाई होने लगी तब उस कन्या ने दहेज में, वर्द्धमानशाह और उनके सम्बन्धी रायसीशाह को जामनगर में बसने के लिये मांगा। तदनुसार ये दोनों ओसवाल जाति के बहुत से अन्य लोगों के साथ जामनगर में आ बसे।

जामनगर में रहकर ये दोनों लक्ष्मीपति अनेक देशों के साथ व्यापार करने लगे, और वहाँ की जनता में बड़े लोकप्रिय हो गये। वहां उन्होंने लाखों रुपये खर्च करके संवत् १६७६ में बड़े बड़े विशाल जैन मन्दिर निर्माण करवाये। उसके पश्चात् वर्द्धमानशाह ने शत्रुञ्जय तीर्थ की यात्रा की और वहां भी जैन मन्दिर बनवाये इनका जामनगर के राजदरबार में बहुत मान था और जाम साहब भी प्रत्येक महत्व पूर्ण कार्य्य में इन की सलाह लेते रहते थे। इन वर्द्धमानशाह का एक लेख शत्रुञ्जय पहाड़ पर विमलवसहि

टोंक पर, हाथी पोल के नजदीक वाले मन्दिर की उत्तर दिशावाली दीवाल पर लगा हुआ है।* उसका भाव इस प्रकार है—

"ओसवाल जाति में, लालण गोत्रान्तर्गत हरपाल नामक एक बड़ा सेठ हुआ। उसके हरीआ नामक पुत्र हुआ। हरीआ के सिंह, सिंह के उदेसी, उदेसी के पर्वत, और पर्वत के बच्छ नामक पुत्र हुआ। बच्छ की भार्य्या वाच्छलदे की कुक्षि से अमर नामक पुत्र हुआ। अमर की लिंगदेवी नामक स्त्री से वर्द्धमान, चांपसी और पद्मसिंह नामक तीन पुत्र हुए। इनमें वर्द्धमान और पद्मसिंह बहुत प्रसिद्ध थे। ये दोनों भाई जामसाहब के मंत्री थे। जनता में आपका बहुत सत्कार था। वर्द्धमानशाह की स्त्री वन्ना देवी थी, जिसके वीर और विजयपाल नामक दो पुत्र थे। पद्मसिंह की स्त्री का नाम सुजाणदे था जिसके श्रीपाल, कुँवरपाल और रणमल्ल नामक तीन पुत्र थे। इन तीनों भाइयों ने संवत् १६७१ के वैशाख सुदी ३ बुधवार को शान्तिनाथ आदि तीर्थङ्करों की २०४ प्रतिमाएँ स्थापित कीं और उनकी प्रतिष्ठा करवाई।"

"अपने निवासस्थान नवानगर (जामनगर) में भी उन्होंने बहुत विपुल द्रव्य खर्च करके कैलाश पर्वत के समान ऊँचा भव्य प्रासाद निर्माण करवाया और उसके आसपास ७२ देव कुलिका और ८ चतुर्मुख मन्दिर बनवाये। शाह पद्मसिंह ने शत्रुञ्जय तीर्थ पर भी ऊँचे तोरण और शिखरों वाला एक बड़ा मन्दिर बनवाया और उसमें श्रेयांस आदि तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ स्थापित कीं।"

"इसी प्रकार संवत् १६७६ के फाल्गुन मास की शुक्ला द्वितीया को शाह पदमसिंह ने नवानगर से एक बड़ा संघ निकाला और आञ्चलगच्छ के तत्कालीन आचार्य्य कल्याणसागरजी के साथ शत्रुञ्जय की यात्रा की और अपने बनाए हुए मन्दिर में उक्त तीर्थङ्करों की प्रतिमाएँ खूब ठाटबाट के साथ प्रतिष्ठित करवाईं।"

उपरोक्त प्रशस्ति को वाचक विनयचन्द्रमणि के शिष्य पण्डित श्रीदेवसागर ने बनाया। कहना न होगा कि ये देवसागर उत्तम श्रेणी के विद्वान थे। इन्होंने हेमचन्द्राचार्य्य के "अभिधान चिन्तामणि कोष पर "व्युत्पत्ति रत्नाकर" नामक २०००० श्लोकों की एक बड़ी टीका की रचना की है।

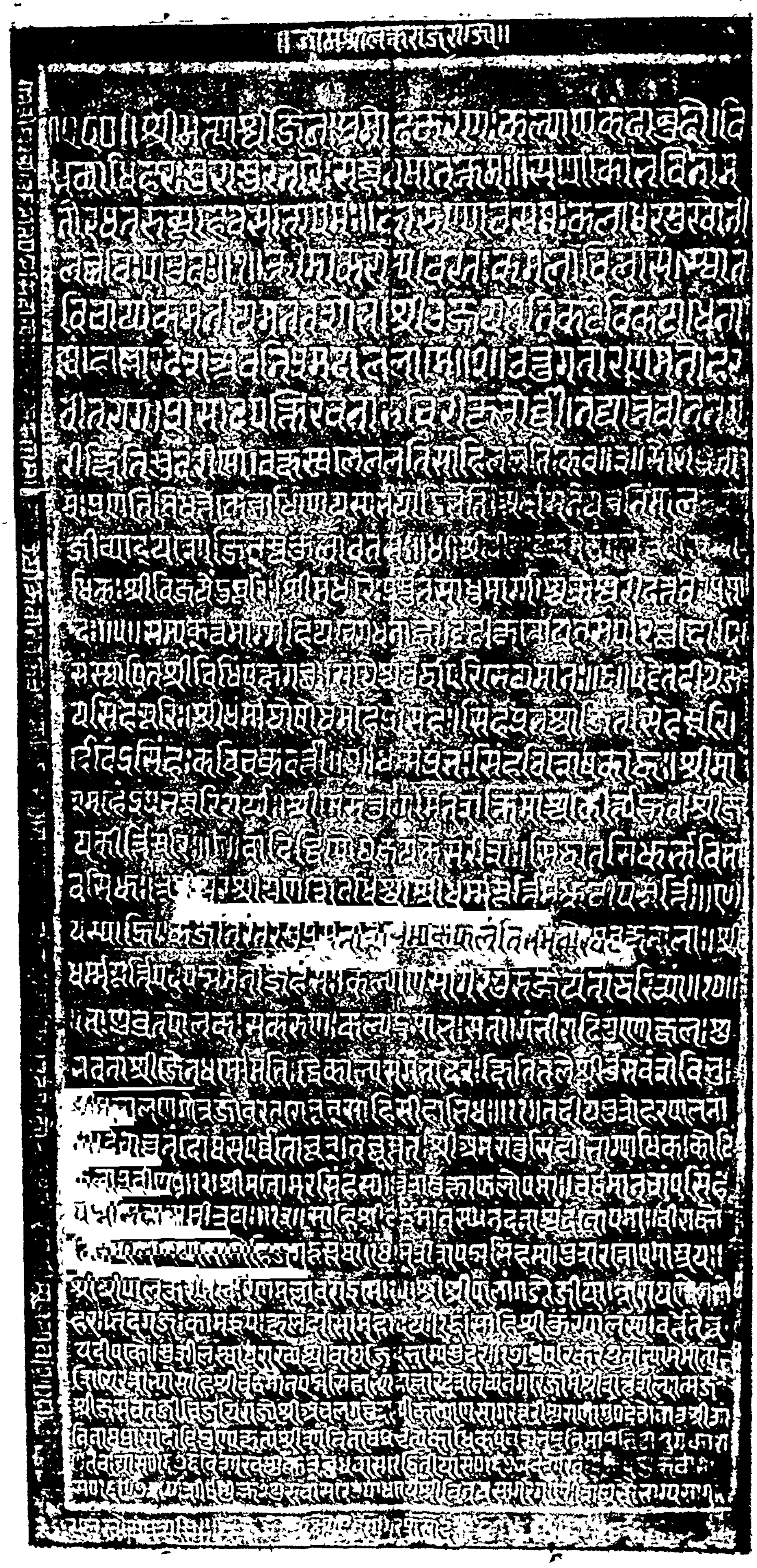
इन्हीं शाह वर्द्धमान और पद्मसिंह के द्वारा बनाया हुआ जामनगर वाला श्रीशान्तिनाथ प्रभु का मन्दिर भी आज वहां पर उनके पूर्व वैभव की सूचना देता हुआ विद्यमान है। इस मन्दिर में भी एक लेख लगा हुआ है।†

इन दोनों लेखों से मालूम होता है कि शाह वर्द्धमान और पद्मसिंह दोनों भाई तत्कालीन जाम-

---

* पूरा लेख देखिए मुनि जिनविजयजी कृत जैन लेख संग्रह २ य भाग के लेखाङ्क २१ में।

† देखिए मुनि जिन विजयजी कृत जैन लेख संग्रह लेखाङ्क ४५५



जामनगर के मन्दिर की प्रशस्ति (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

विक्रम सम्वत् १६९७ (ईस्वी सन् १६४०)

साहब के प्रधान थे। ये विपुल द्रव्य के स्वामी थे और इन्होंने धर्मप्रभावना और उसकी जहोजलाली के लिए लाखों रुपये खर्च किये।

शत्रुञ्जयतीर्थ और थीहरुशाह भंसाली

जैसलमेर के सुप्रसिद्ध थीहरुशाह भंसाली का नाम उनकी धार्मिकता और उनकी उदारता की वजह से आज भी मारवाड़ के बच्चे २ की जिव्हा पर अंकित है। इस थीहरुशाह भंसाली ने शत्रुंजयतीर्थ पर चौबीसों तीर्थङ्करों के १४५२ गणधरों के चरण युगल एक साथ स्थापित किये। उसका लेख शत्रुञ्जय पहाड़ पर खरतरवसही टोंक की पश्चिम दिशा में स्थित मन्दिर में उत्तर की ओर खुदा हुआ है। इसका मतलब इस प्रकार है।

"आदिनाथ तीर्थङ्कर से लेकर भगवान महावीर तक चौबीस तीर्थङ्करों के सब मिलाकर १४५२ गणधर हुए हैं। इन सब गणधरों के एक साथ इस स्थान पर चरणयुगल स्थापित किये गये हैं। जैसलमेर निवासी ओसवाल जातीय भँडसाली गौत्रीय सुश्रावक शाह श्रीमल (भार्या चापलदे) के पुत्र थीहरुशाह ने जिसने कि लोद्रवा पट्टन के प्राचीन जैन मन्दिरों का जीर्णोद्धार किया था और चिन्तामणि पार्श्वनाथ की प्रतिमा की प्रतिष्ठा की थी, प्रतिष्ठा के समय प्रति मनुष्य एक २ सोनेकी मुहर लाण में दी थी। इसके अतिरिक्त संघनायक के करने योग्य देव पूजा, गुरु उपासना, साधर्मी-वात्सल्य इत्यादि सभी प्रकार के धार्मिक कार्य्य किये थे और शत्रुंजय की यात्रा के लिए एक बड़ा संघ निकालकर संघपति का तिलक प्राप्त किया था—उन्होंने पुण्डरीकादि १४५२ गणधरों का अपूर्व पादुका स्थान अपने पुत्र हरराज और मेघराज सहित पुण्योदय के लिए बनाया और संवत् १६८२ की जेठ बदी १० शुक्रवार के दिन खरतरगच्छ के आचार्य जिनराजसूरि ने उसकी प्रतिष्ठा की।

इस प्रकार उपरोक्त लेखों को ध्यान पूर्वक मनन करने से पता चलता है कि इस महातीर्थ के पुनरुद्धार, रक्षा और जाहोजलाली के काम में ओसवाल जाति के नर रत्नों का कितना गहरा हाथ रहा है। इन लोगों ने इस महातीर्थ के लिए समय २ पर लाखों रुपये खर्च किये।

ऊपर हम खास २ बड़े २ दानवीरों के द्वारा किये हुए कामों का वर्णन कर चुके हैं। इनके सिवाय छोटे २ तो कई लेख शत्रुञ्जय तीर्थ पर ओसवालों के द्वारा किये हुए कामों के सम्बन्ध में पाये जाते हैं।

(१) यह लेख संवत् १७१० का है, जो बड़ी टोंक में आदीश्वर के मुख्य प्रासाद के दक्षिण द्वार के सम्मुख सहस्रकूट मंदिर के प्रवेश द्वार के पास खोदा हुआ है, जिससे पता लगता है कि संवत् १७१० के ज्येष्ठ सुदी १० गुरुवार को आगरा शहर निवासी ओसवाल जाति के कुहाड़ गौत्रीय शाह वर्द्धमान के पुत्र

शाह मानसिंह, रायसिंह, कनकसेन, उग्रसेन, ऋषभदास इत्यादि ने अपने परिवार सहित अपने पिता के आदेशानुसार यह सहस्त्रकूट तीर्थ बनवाया और अपनी ही प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित किया। तपागच्छाचार्य्य श्री हरिविजयसूरि की परम्परा में श्री विनयविजयजी ने इसकी प्रतिष्ठा करवाई।

(२) यह लेख संवत् १७९१ के वैसाख सुदी ८ का है जो विमलवंशीटूंक में हाथी पोल की ओर जाते हुए दाहिनी ओर लगा हुआ है। ओसवाल जाति के भण्डारी दीपाजी के पुत्र खेतसिंहजी, उनके पुत्र उदयकरणजी, उनके पुत्र भण्डारी रत्नसिंहजी ※ महामंत्री ने–जिन्होंने कि गुजरात में "अमारी" का ढिंढोरा पिटवाया—पार्श्वनाथ की प्रतिमा स्थापित की। जिसकी प्रतिष्ठा तपागच्छ के विजयदयासूरि ने की।

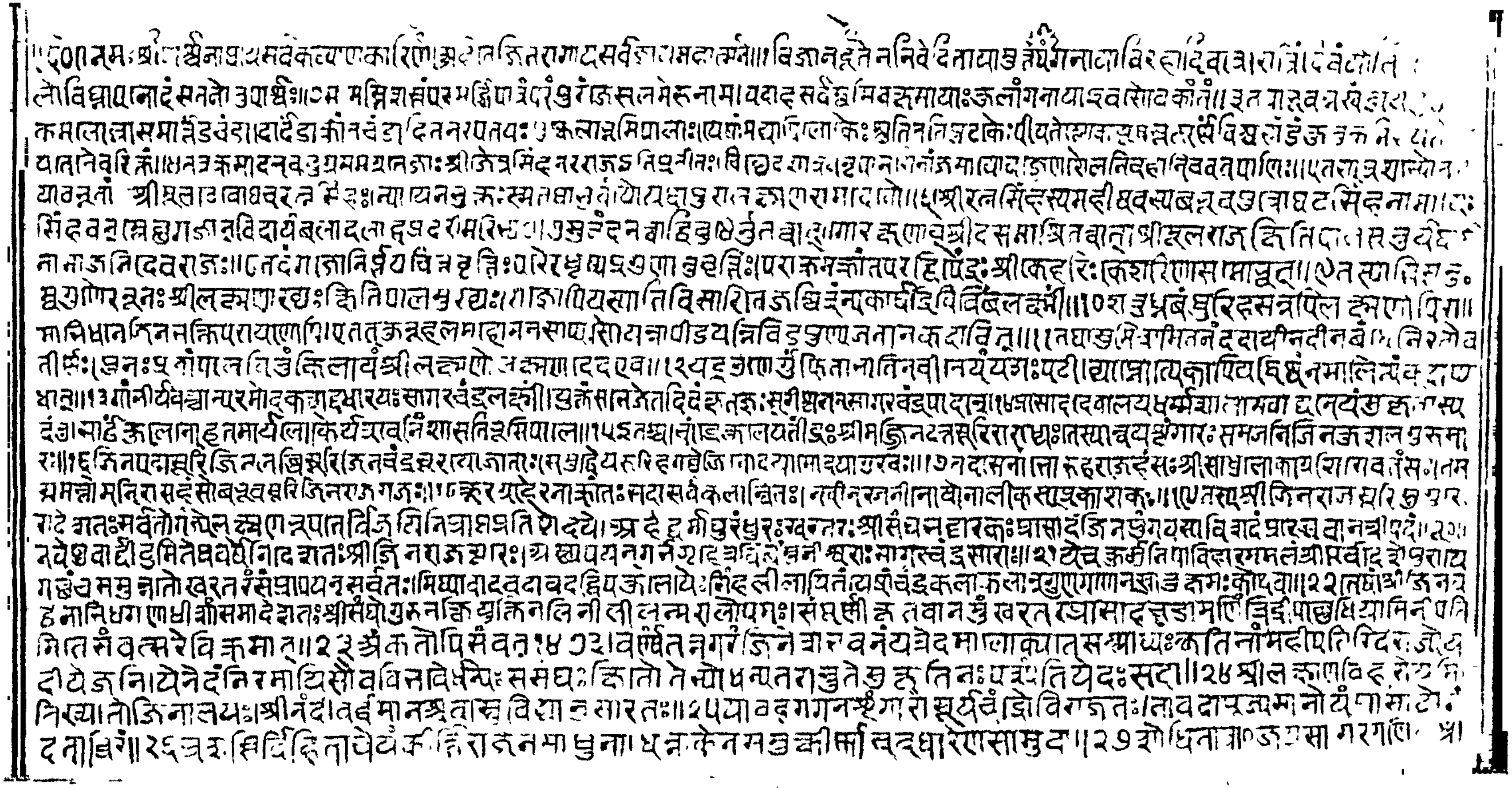
(३) इसी प्रकार संवत् १७९४ की असाढ़ सुदी १० रविवार को ओसवाल वंश के भण्डारी भानाजी के पुत्र भण्डारी नारायणजी, उनके पुत्र भण्डारी ताराचन्दजी, उनके पुत्र भण्डारी रूपचन्दजी उनके पुत्र भण्डारी शिवचंदजी, उनके पुत्र भण्डारी हरकचंदजी ने यह देवालय बनाया और पार्श्वनाथ की एक प्रतिमा अर्पण की तथा खरतर गच्छ के पंडित देवचन्द्रजी ने उसकी प्रतिष्ठा की। यह लेख शत्रुंजय पहाड़ के छीपावसी टूँक के एक देवालय के बाहर दक्षिण दिशा की दीवाल पर कोरा हुआ है।

(४) संवत् १८८५ की बैशाख सुदी ३ के दिन श्राविका गुलाब बहन के कहने पर बालूचर (मुर्शिदाबाद) निवासी दूगड़ गौत्रीय सा. बोहित्थजी के पौत्र बाबू किशनचंदजी और बाबू हर्षचंदजी ने पुण्डरीक देवालय से दक्षिण की ओर एक चन्द्रप्रभु स्वामी का छोटा देवालय बनाया जिसकी प्रतिष्ठा खरतर गच्छाचार्य श्रीजिनहर्षसूरि ने करवाई।

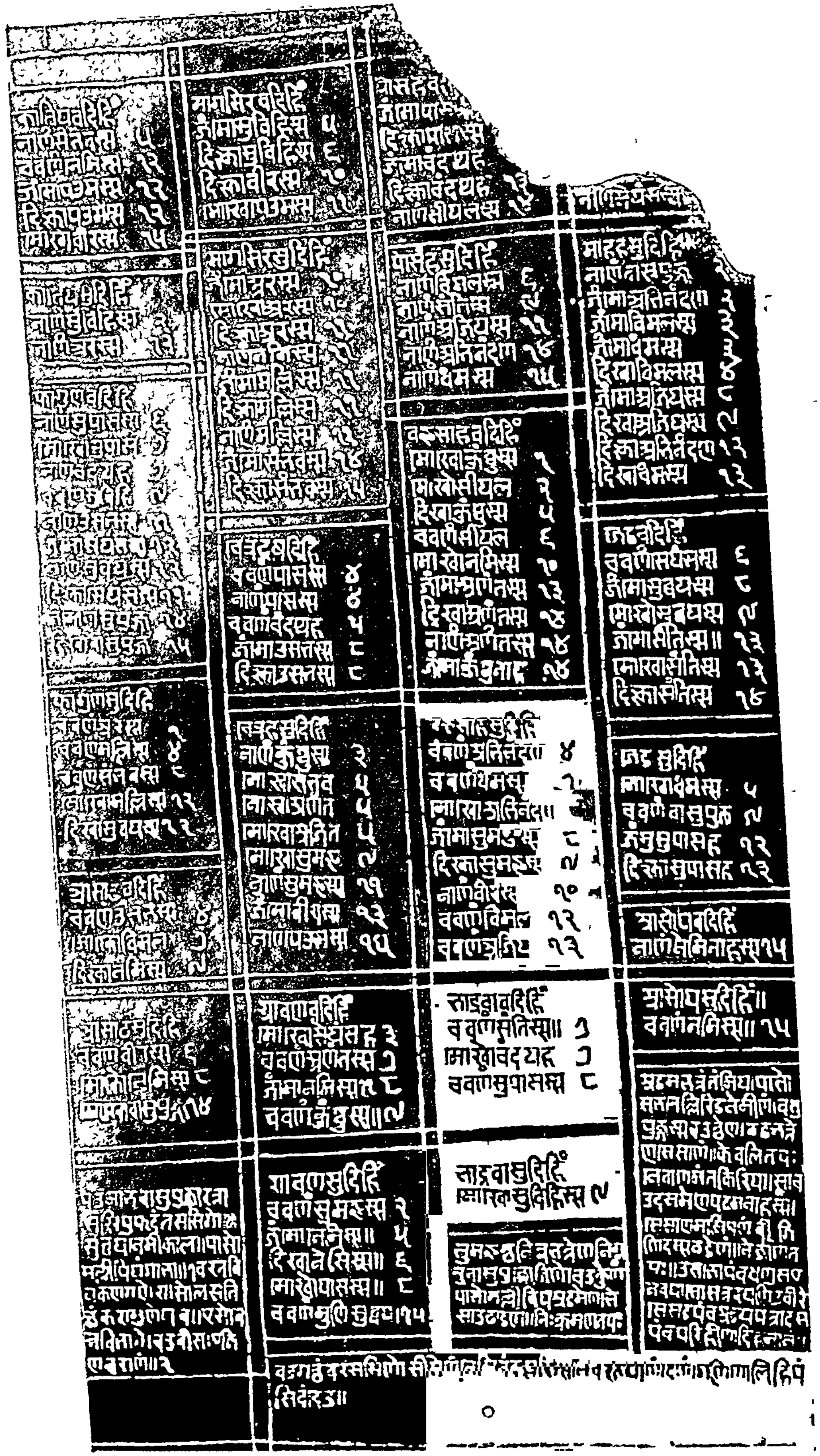
(५) संवत् १८८६ की माघ सुदी ५ को राजनगर वासी ओसवाल जाति के सेठ वखतचंद खुशालचंद के पौत्र नगिनदास की पत्नी ने अपने पति की शुभ कामना से प्रेरित हो हेमाभाई की टुंक पर एक देवालय और चन्द्रप्रभु स्वामी की प्रतिमा अर्पण की जिसकी प्रतिष्ठा सागरगच्छ के शान्तिसागर सूरिजी ने करवाई।

(६) संवत् १८८७ की वैशाख सुदी १३ को अजमेर निवासी ओसवाल जाति के लूणिया गौत्रीय साह तिलोकचंदजी के पुत्र हिम्मतरायजी तथा उनके पुत्र गजमलजी ने एक देवालय खरतरवासी टुंक के बाहर उत्तर पूर्व में बनाया तथा कुन्थनाथ की एक प्रतिमा अर्पण की इसकी प्रतिष्ठा खरतरगच्छ के भट्टारक जिन हर्षसूरि के द्वारा की गई।

※ भण्डारी रत्नसिंह ईसवी सन् १७३३ से १७३७ तक गुजरात के सूबा रहे थे। ये महान् योद्धा और कुशल राजनीतिज्ञ थे। महाराजा अभयसिंह के ये अत्यन्त विश्वासू और बाहोश प्रधान थे।



श्री पार्श्वनाथ मंदिर प्रशस्ति जैसलमीर (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)



आबू तीर्थ कल्याणक पट्ट (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

(७) संवत् १८९३ की माघ वदी ३ को खम्भनगर वासी ओसवाल जातीय सा हीराचन्द के पौत्र सा लक्ष्मीचन्द ने हेमाभाई टोंक पर एक देवालय बंधवाया और श्री अजितनाथ की प्रतिमा अर्पण की।

(८) संवत् १९०५ की माह सुदी ५ को नवीनपुर निवासी ओसवाल जाति लघुशाखा के नागड़ा गौत्रीय सा० हीरजी और वीरजी ने खरतरवासी टोंक पर एक देवालय बंधवाया और चन्द्रप्रभु तथा दूसरे तीर्थङ्करों की ३२ प्रतिमाएं स्थापित कीं। इसके अतिरिक्त पालीताणा के दक्षिण बाजू पर १२० गज लम्बी और ४० गज चौड़ी एक धर्मशाला और आंचलगच्छ के निमित्त एक उपाश्रय बनवाया। यह सब कार्य्य इन्होंने अञ्चलगच्छीय मुक्तिसागरसूरि के उपदेश से किया।

(९) अहमदाबाद निवासी ओसवाल जाति के शिशोदिया गौत्रीय सेठ वखतचंद, उनके पुत्र हेमा भाई और उनके पुत्र अहमदाबाद के नगर सेठ प्रेमाभाई ने अपनी टोंक में श्री अजितनाथ का देवालय बनवाया।

(१०) संवत् १९०८ के चैत वदी १० को बीकानेर निवासी ओसवाल जाति के मुहता पंचाण और पुण्य कुंवर के पुत्र वृद्धिचंदजी ने मुहता मोतीवसी की टुँक में एक देवालय बनाया जिसकी प्रतिष्ठा तपागच्छ के पं० देवेन्द्रकुशल ने की।

(११) संवत् १९१० के चैत सुदी १५ को अजमेर निवासी ओसवाल जाति के समैया गौत्रीय सेठ बाघमलजी ने एक देवालय बनवाया तथा उसमें श्री आदिनाथ नेमिनाथ, सुव्रतनाथ, शान्तिनाथ, पार्श्वनाथ इत्यादि तीर्थङ्करों की प्रतिमाएं स्थापित कीं, इसकी प्रतिष्ठा खरतर गच्छ के श्री हेमचन्द्र ने करवाई।

इसी प्रकार और भी पचीसों लेख ऐसे ओसवाल श्रावकों के मिलते हैं जिन्होंने अपनी श्रद्धानुसार जैन तीर्थङ्करों की खाली प्रतिमाएँ अर्पण कीं। स्थानाभाव से उन सब का यहाँ पर उल्लेख नहीं किया जा सकता। *

* विशेष विवरण के लिए मुनि जिनविजयजी कृत जैन लेख संग्रह दोनों भाग देखिए।

श्री आबू महातीर्थ*

अब हम पाठकों के सम्मुख जैनधर्म के सुप्रसिद्ध दानवीर पोरवाल जातीय मंत्री वस्तुपाल तेजपाल की अमरकीर्ति आबू के मन्दिरों का संक्षिप्त परिचय रखते हैं। कहना न होगा कि, क्या धार्मिकता की दृष्टि से, क्या कला के उच्च आदर्श की दृष्टि से, और क्या स्थान की रमणीयता की दृष्टि से आबू के जैन मन्दिर न केवल जैन तीर्थों में, न केवल भारतवर्ष में, प्रत्युत सारे विश्व में अपना एक खास स्थान रखते हैं। स्थापत्य कला के उच्च आदर्श की दृष्टि से तो शायद सारे भारतवर्ष में एक ताजमहल को छोड़कर और कोई दूसरा स्थान नहीं जो इसका मुकाबिला कर सके। ऐसा कहा जाता है कि इन मन्दिरों के बनवाने में, इनकी कोरी करवाने में, तथा इनके प्रतिष्ठा महोत्सव में, इन दोनों भाइयों के हजारों नहीं, लाखों नहीं प्रत्युत करोड़ों रुपये खर्च हुए थे। उन लोगों के साहस, उनके कलेजे की विशालता और उनकी धार्मिकता का वर्णन इतिहास तक करने में असमर्थ है। अस्तु।

अब हम क्रम से आबू के इन सब खास २ मंदिरों का संक्षिप्त वर्णन करने का नीचे प्रयत्न करते हैं।

देलवाड़ा †

अर्बुदा देवी से करीब एक माइल उत्तर पूर्व में यह देलवाड़ा नामक गाँव स्थित है। यहाँ के मन्दिरों में आदिनाथ और नेमिनाथ के दो जैन मंदिर अपनी कारीगरी और उत्तमता के लिये संसार भर में अनुपम हैं। ये दोनों मन्दिर संगमरमर के बने हुए हैं। इनमें दण्डनायक विमलशाह का बनाया हुआ विमलवसहि नामक आदिनाथ का मंदिर अधिक पुराना और कारीगरी की दृष्टि से अधिक सुन्दर है। यह मंदिर वि० सं० २८८ में बन कर तयार हुआ था। इसमें मुख्य मंदिर के सामने एक विशाल सभा मण्डप है और

---

* इन मंदिरों के परिचय की सामग्री ललितविजयजी कृत आबू जैन मंदिर के निर्माता नामक पुस्तक से ली है।

† यद्यपि इन जैन मंदिरों के निर्माता वस्तुपाल और तेजपाल पोरवाल जाति के पुरुष हैं मगर इन मदिरों का सम्बन्ध सारे श्री संघ के साथ होने की वजह से ओसवाल जाति के इतिहास में इनका परिचय देना अत्यंत आवश्यक समझा गया।



देलवाड़ा मन्दिर

(श्री बा० पूरणचन्दजी नाहर के सौजन्य से)

चारों तरफ छोटे २ कई एक जिनालय हैं। इस मंदिर में मुख्य मूर्ति ऋषभदेव की है जिसकी दोनों तरफ एक २ खड़ी हुई मूर्ति है। और भी यहाँ पर पीतल तथा पाषाण की मूर्त्तियाँ हैं जो सब पीछे की बनी हुई हैं। मुख्य मंदिर के चारों ओर छोटे २ जिनालय बने हुए हैं जिनमें भिन्न २ समय पर भिन्न २ लोगों ने मूर्त्तियाँ स्थापित की थीं, ऐसा उन मूर्त्तियों पर अंकित किये हुए लेखों से प्रतीत होता है। मंदिर के सम्मुख हस्तिशाला बनी हुई है जिसमें दर्वाजे के सामने अश्वारूढ़ विमलशाह की पत्थर की मूर्त्ति है। हस्तिशाला में पत्थर के बने हुए दस हाथी हैं जिनमें से ६ विक्रम संवत् १२०५ की फाल्गुन सुदी १० के दिन नेढक्, आनन्दक्, पृथ्वीपाल, धीरक्, लहरक् और मीनक् नाम के पुरुषों ने बनवा कर यहाँ रक्खे थे। इनके लेखों में इन सब को महामात्य अर्थात् बड़ा मंत्री लिखा है। बाकी के हाथियों में से एक पंवार ठाकुर जगदेव ने और दूसरा महामात्य धनपाल ने विक्रम संवत् १२३७ की आषाढ़ सुदी ८ को बनाया था। शेष दो हाथियों के लेख के संवत् पढ़ने में नहीं आते।

हस्तिशाला के बाहर चौहान महाराव लूण्डा और लुम्बा के दो लेख हैं। एक लेख विक्रम संवत् १३७२ का व दूसरा १३७३ का है। इन लुम्बा और लूण्डा ने आबू का राज्य परमारों से छीन कर अपने कब्जे में कर लिया था।

इस अनुपम मंदिर का कुछ हिस्सा मुसलमानों ने तोड डाला था जिसका जीर्णोद्धार लल्ल और बीजड़ नामक दो साहुकारों ने चौहान राजा तेजसिंह के समय में करवाया *।

यहाँ पर एक लेख बघेल (सोलंकी) राजा सारंगदेव के समय का वि० संवत् १३५० का एक दीवाल में लगा हुआ मिलता है।

इस मंदिर की कारीगरी की प्रशंसा शब्दों के द्वारा किसी भी प्रकार नहीं हो सकती। स्तम्भ, तोरण, गुम्मज, छत, दरवाजे इत्यादि जहाँ भी कहीं देखा जाय, कारीगरी का कमाल पाया जाता है कर्नल टॉड ने लिखा है कि हिन्दुस्थान भर में कला की दृष्टि से यह मंदिर सर्वोत्तम है और ताजमहल के सिवाय कोई दूसरा मकान इसकी समानता नहीं कर सकता।

लूणावसही नेमिनाथ का मन्दिर

उपरोक्त आदिनाथ के मन्दिर के पास ही यह सुप्रसिद्ध लूणावसही नेमिनाथ का मन्दिर बना हुआ है। यह मन्दिर अणहिलपुर पट्टण के निवासी अश्वराज के पुत्र वस्तुपाल और उनके भाई तेजपाल

* जिनप्रभसूरि ने अपनी तीर्थ कल्प नामक पुस्तक में लिखा है कि मुसलमानों ने विमहलशाह और तेजपाल के दोनों मंदिरों को तोड़ डाला। वि० सं० १३७८ में इनमें से पहले का उद्धार मदणसिंह के पुत्र लल्ल ने और चण्डसिंह के पुत्र पैथाड़ ने दूसरे मंदिर का पुनरुद्धार करवाया।

का बनाया हुआ है। ये गुजरात के धौलका प्रदेश के सोलंकी राणा वीरधवल के मन्त्री थे। कहना न होगा कि जैन तीर्थ स्थानों के निमित्त उनके समान द्रव्य खर्च करने वाला दूसरा कोई भी पुरुष इतिहास के पृष्ठों पर नहीं है। यह मन्दिर मन्त्री वस्तुपाल के छोटे भाई तेजपाल ने अपने पुत्र लूणसिंह तथा अपनी स्त्री अनुपमादेवी के कल्याण के निमित्त अटूट द्रव्य लगाकर वि० सं० १२८७ में बनवाया था। यही एक दूसरा मन्दिर है जो कारीगरी में उपरोक्त विमलशाह के मन्दिर की समता कर सकता है।

भारतीय शिल्प सम्बन्धी विषयों के विशेषज्ञ फर्ग्युसन साहब अपनी 'Pictures Illustrations of Ancient architecture in India' नामक पुस्तक में लिखते हैं कि "इस मन्दिर में जो कि संगमरमर का बना हुआ है अत्यन्त परिश्रम सहन करने वाली हिन्दुओं की टाँकी से फीते जैसी बारीकी के साथ ऐसी मनोहर आकृतियाँ बनाई गई हैं कि अत्यन्त कोशिश करने पर भी उनकी नकल कागज पर बनाने में मैं शक्तिवान नहीं होसका।"

यहाँ के गुम्मज की कारीगरी के विषय में कर्नल टॉड * लिखते हैं कि—

"इसका चित्र तयार करने में अत्यन्त कुशल चित्रकार की कलम को भी महान् परिश्रम करना पड़ता है।"

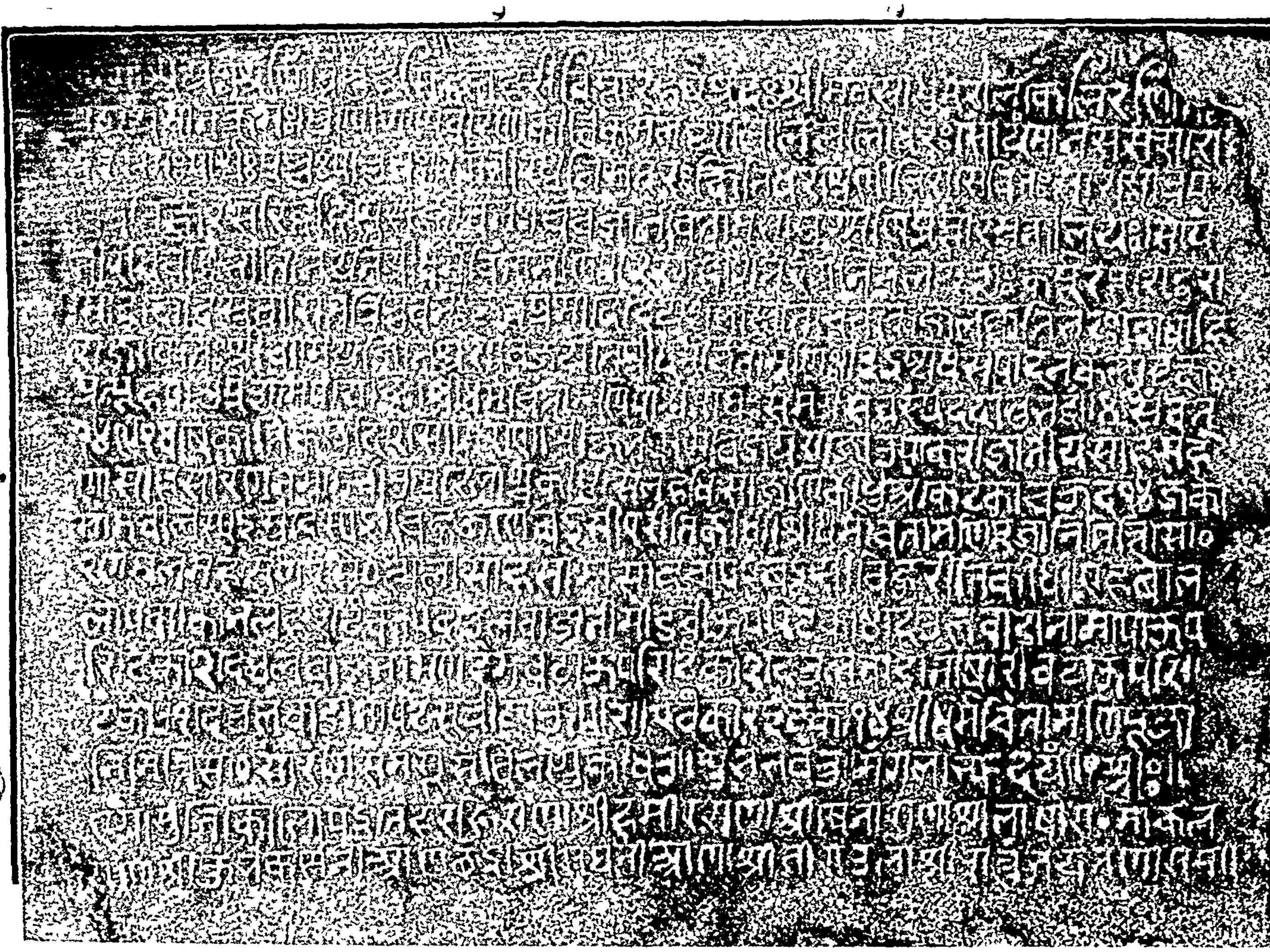
गुजरात के प्रसिद्ध ऐतिहासिक रासमाला के कर्त्ता फारबस साहब लिखते हैं कि:—

"इन मंदिरों की खुदाई के काम में स्वाभाविक निर्जीव पदार्थों के चित्र बनाये हैं। इतना ही नहीं, किन्तु सांसारिक जीवन के दृश्य व्यवहार तथा नौका शास्त्र सम्बन्धी विषय एवं रणखेत के युद्धों के चित्र भी खिंचे हुए हैं।" इन मन्दिरों की छतों में जैन धर्म की अनेक कथाओं के चित्र भी खुदे हुये हैं।"

यह मन्दिर भी विमलशाह के मन्दिर के ही समान बनावट का है। इसमें मुख्य मन्दिर, उसके आगे गुम्मजदार सभा-मण्डप और उनके अगल बगल पर छोटे २ जिनालय तथा पीछे की ओर हस्तीशाला है। इस मन्दिर में मुख्य मूर्त्ति नेमिनाथ की है। और छोटे २ जिनालयों में अनेक मूर्त्तियाँ हैं। यहां पर दो बड़े २ शिला-

---

* कर्नल टाड के विलायत पहुँचने के पीछे 'मिसेज विलियम हण्टर वेर' नाम की एक अंग्रेज महिला ने अपना तयार किया हुआ वस्तुपाल तेजपाल के मन्दिर के गुम्बज का चित्र टॉड साहब को दिया। उस चित्र को देख कर उनको इतना हर्ष हुआ कि उन्होंने अपनी ट्रेवलर्स इन वेस्टर्न इण्डिया नामक पुस्तक उसी अंग्रेज महिल को समर्पित कर दी और उससे कहा कि तुम आबू नहीं गई प्रत्युत आबू को यहां ले आई हो। वही सुन्दर चित्र उन्होंने अपनी पुस्तक के आरम्भ में दिया है।



देलवाड़ा प्रशस्ति

विक्रम सम्वत् १४९१ (ईस्वी सन् १४३४)

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

लेख हैं। जिनमें एक धौलका के राणा वीरधवल के पुरोहित तथा कीर्त्तिकौमुदी, सुरथोत्सव आदि काव्यों के रचयिता प्रसिद्ध कवि सोमेश्वर का रचा हुआ है। उसमें वस्तुपाल तेजपाल के वंश का वर्णन, अरणोराज से लगाकर वीरधवल तक की नामावली, आबू के परमार राजाओं का वृतान्त तथा मन्दिर और हस्तिशाला का वर्णन है। यह ७४ श्लोकों का एक छोटा सा सुन्दर काव्य है। इसीके पास के दूसरे शिलालेख में, जो बहुधा गद्य में लिखा है, विशेष कर इस मन्दिर के वार्षिकोत्सव की जो व्यवस्था की गई थी, उस का वर्णन है। इसमें आबू पर के तथा उसके नीचे के अनेक गाँवों के नाम लिखे गये हैं, जहाँ के महाजनों ने प्रति वर्ष नियत दिनों पर यहाँ उत्सव करना स्वीकार किया था। इसी से सिरोही राज्य की उस समय की उन्नत दशा का बहुत कुछ परिचय मिलता है।

इन लेखों के अतिरिक्त छोटे २ जिनालयों में से बहुधा प्रत्येक के द्वार पर भी सुन्दर लेख खुदे हुए हैं। इस मन्दिर को बनवा कर तेजपाल ने अपना नाम अमर कर दिया, इतना ही नहीं किन्तु उसने अपने कुटुम्ब के अनेक स्त्री पुरुषों के नाम अमर कर दिये, क्योंकि जो छोटे ५२ जिनालय बने हुए हैं उनके द्वार पर उसने अपने सम्बन्धियों के नाम के सुन्दर लेख खुदवा दिये हैं। प्रत्येक छोटा जिनालय उनमें से किसी न किसी के स्मारक में बनवाया गया है। मुख्य मन्दिर के द्वार की दोनों ओर बड़ी कारीगरी से बने हुए दो ताक हैं जिनको लोग देराणी जेठाणी के आलिये कहते हैं और ऐसा सिद्ध करते हैं कि इनमें से एक वस्तुपाल की स्त्री ने तथा दूसरा तेजपाल की स्त्री ने अपने अपने खर्च से बनवाया था। महाराज शान्तिविजयजी की बनाई हुई 'जैनतीर्थ गाइड" नामक पुस्तक में भी ऐसा ही लिखा है लेकिन स्वीकार करने योग्य नहीं है। क्योंकि ये दोनों आले (ताक) वस्तुपाल ने अपनी दूसरी स्त्री सुहड़ादेवी के श्रेय के निमित्त बनवाये थे। सुहड़ादेवी पत्तन (पाटन) के रहने वाले मोढ़ जाति के महाजन ठाकुर (ठक्कुर) जाल्हणा के पुत्र ठाकुर आसा की पुत्री थी। इस प्रकार का वृतान्त उन ताकों पर खुदे हुए लेखों से पाया जाता है। इस समय गुजरात में पोरवाल और मोढ़ जाति में परस्पर विवाह नहीं होता है। परन्तु इन लेखों से पाया जाता है कि उस समय उनमें परस्पर विवाह होता था।

इस मन्दिर की हस्तीशाला में बड़ी कारीगरी से बनाई हुई संगमरमर की दस हथनियां एक पंक्ति में खड़ी हैं जिन पर चंडप, चण्डप्रसाद, सोमसिंह, अश्वराज, लूणिग, मल्लदेव, वस्तुपाल, तेजपाल, जैत्रसिंह और लावण्यसिंह (लूणसिंह) की बैठी हुई मूर्त्तियाँ थीं। परन्तु अब उनमें से एक भी नहीं रही। इन हथिनियों के पीछे की पूर्व की दीवार में १० ताक बने हुए हैं जिनमें इन्हीं दस पुरुषों की स्त्रियों सहित पत्थर की खड़ी हुई मूर्त्तियाँ बनी हैं जिन सब के हाथों में पुष्पों की मालाएँ हैं। वस्तुपाल के सिर पर पाषाण का छत्र भी है। प्रत्येक पुरुष और स्त्री का नाम मूर्त्ति के नीचे खुदा हुआ है। अपने

कुटुम्ब भर का इस प्रकार स्मारक चिह्न बनाने का काम यहां के किसी दूसरे पुरुष ने नहीं किया। यह मन्दिर शोभनदेव नाम के शिल्पी ने बनाया था। मुसलमानों ने इसको भी तोड़ डाला जिससे इसका जीर्णोद्धार पेथड़ (पीथड़) नाम के संघपति ने करवाया था। जीर्णोद्धार का लेख एक स्तम्भ पर खुदा हुआ है परन्तु इसमें संवत् नहीं दिया है। वस्तुपाल के मन्दिर से थोड़े अंतर पर भीमशाह का, जिस को लोग भैंसाशाह कहते हैं, बनवाया हुए मन्दिर है जिसमें १०८ मन की पीतल की सर्वधातु की बनी हुई आदिनाथ की मूर्त्ति है जो वि० सं० १५२५ के (ई० सन् १४६९) फाल्गुन सुदी ७ को गुर्जर श्रीमाल जाति के मंत्री मण्डल के पुत्र मंत्री सुन्दर तथा गदा ने वहां पर स्थापित की थी।

इन मंदिरों के सिवाय देलवाड़े में श्वेताम्बर जैनों के दो मंदिर और हैं। चौमुखजी का तिमंजिला मंदिर, शान्तिनाथजी का मंदिर तथा एक दिगंबर जैन मंदिर भी है। इन जैन मंदिरों से कुछ दूर गाँव के बाहर कितने ही टूटे हुए पुराने मंदिर और भी हैं। जिनमें से एक को लोग रसियावालम का मंदिर कहते हैं। इस टूटे हुए मंदिर में गणपति की मूर्त्ति के निकट एक हाथ में पात्र धरे हुए एक पुरुष की खड़ी हुई मूर्त्ति है जिसको लोग रसियावालम की और दूसरी स्त्री की मूर्त्ति को कुँवारी कन्या की मूर्त्ति बतलाते हैं। कोई २ रसियावालम को ऋषि बाल्मीकि अनुमान करते हैं। यहाँ पर वि० सं० १४५२ (ई० सन् १३९५) का एक लेख भी खुदा हुआ है।

अचलेश्वर के जैन मंदिर

अचलेश्वर में महाराव मानसिंहजी के शिव मंदिर से थोड़ी दूर पर शान्तिनाथ का जैन मंदिर स्थित है। इसको जैन लोग गुजरात के सोलंकी राजा कुमारपाल का बनवाया हुआ बतलाते हैं। इसमें तीन मूर्त्तियाँ है जिनमें से एक पर वि० सं० १३०२ (ई० १२४५) का लेख है।

कुंथुनाथ का जैन मंदिर

अचलेश्वर के मंदिर से थोड़ी दूर पर जाने से अचलगढ़ के पहाड़ के ऊपर चढ़ने का मार्ग है। यह चढ़ाई गणेशपोल के यहाँ से शुरू होती है। मार्ग में लक्ष्मीनारायण का मंदिर तथा फिर कुंथुनाथ का जैन मंदिर आता है। इसमें कुंथुनाथ स्वामी की पीतल की मूर्त्ति है जो वि० सं० १५२७ में बनी थी। यहाँ पर एक पुरानी धर्मशाला तथा महाजनों के थोड़े से घर भी हैं। इसके ऊपर पार्श्वनाथ, नेमिनाथ तथा आदिनाथ के जैन मंदिर स्थित हैं।

जैसलमेर

शत्रुंजय आदि तीर्थ स्थानों में ओसवाल सज्जनों ने जैन मन्दिरों की प्रतिष्ठा तथा पुनरुद्धार के जो कार्य किये हैं, उनके सम्बन्ध में हम गत पृष्ठों में लिख चुके हैं। इसी प्रकार अन्य कई स्थानों में भी ओसवालों ने ऐसे २ सुन्दर और विशाल मंदिर बनवाये हैं या उनका पुनरुद्धार करवाया है, जिनकी बड़े २ पाश्चात्य शिल्पकारों ने बड़ी प्रशंसा की है और शिल्पकला की दृष्टि से उन्हें अपने ढंग का अपूर्व स्थापत्य (Architecture) माना है। इनमें से कुछ जैन मन्दिरों में प्राचीन जैन ग्रन्थों का बड़ा ही सुन्दर संग्रह है, जिनकी ओर संसार के कई नामी पुरातत्ववेत्ताओं का ध्यान आकर्षित हुआ है। ओसवालों के बनाये हुए जैसलमेर के जैन मन्दिर, उनमें लगे हुए विविध शिलालेख तथा प्राचीन पुस्तक भण्डार भी पुरातत्ववेत्ताओं के लिये ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत ही मूल्यवान सामग्री उपस्थित करते हैं। तिस पर भी वहाँ का जैन भण्डार तो बड़ी ही अपूर्व चीज है। जैसलमेर किले के अन्दर जो जैन मन्दिर है उसी में यह महान् ग्रन्था-गार है। इसके विषय में बहुत समय तक हम लोग बड़े अंधकार में रहे। इस ग्रंथागार में ताड़ पत्र (Palm leaves) पर लिखे हुए सैंकड़ों हस्तलिखित ग्रन्थ हैं, जिनकी विस्तृत सूची बनाने में भी कई वर्षों की आवश्यकता होगी।

सुप्रख्यात् पुरातत्वविद् डाक्टर बुल्हर की कृपा से यह महान् जैन ग्रंथागार पहले पहल प्रकाश में आया। डाक्टर बुल्हर महोदय के साथ सुप्रसिद्ध जैन विद्वान् डाक्टर हरमन जैकोबी भी जैसलमेर गये थे। जब आप लोगों ने यह ग्रन्थागार देखा तब आप को बड़ी ही प्रसन्नता हुई। उन्होंने ताड़पत्रों पर लिखे हुए सैकड़ों प्राचीन ग्रन्थों को देख कर भारतीय विद्वानों का ध्यान इस ओर आकर्षित किया तथा इस सम्बन्ध में विशेष खोज करने के लिये उनसे आग्रह किया। आपके बाद स्वर्गीय प्रोफेसर एस० आर० भण्डारकर महोदय जैसलमेर पहुँचे और आपने वहाँ के भिन्न २ ग्रन्थागारों को तथा विविध शिलालेखों को देख कर ईसवी सन् १९०९ में इस सम्बन्ध में एक विस्तृत रिपोर्ट प्रकाशित की। अभी थोड़े वर्षों के पहले बड़ौदा सेन्ट्रल लाइब्रेरी के संस्कृत विभाग के अध्यक्ष मि० चिमनलाल डायाभाई दलाल एम० ए० ने जैसलमेर जाकर वहाँ के पुराने जैन ग्रन्थागारों का तथा जैन मन्दिरों में लगे हुए विविध शिलालेखों का अवलोकन किया। आपने इन सब पर एक बड़ा ही विवेचनात्मक ग्रन्थ लिखा, पर इस ग्रन्थ के प्रकाशित होने के पहले ही आप स्वर्गवासी हो गये! आपके बाद बड़ौदा सेन्ट्रल लायब्रेरी के जैन पण्डित श्रीयुत

लालचन्द्र भगवानदास ने उक्त ग्रन्थ प्रकाशित किया। इसमें विभिन्न जैन ग्रन्थागारों और शिलालेखों का विवरण है। आपने बाईस शिलालेखों की नकलें लीं, जिनमें एक शिलालेख लक्ष्मीकांतजी के हिन्दू मन्दिर में लगा हुआ है और शेष शिलालेख जैन मन्दिरों में लगे हुए हैं। सुप्रसिद्ध जैन विद्वान् बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर भी सन् १९२५ में जैसलमेर पधारे थे। आप वहाँ पर लगभग दस दिन रहे और जैसलमेर के अतिरिक्त लोद्रवा, अमरसागर और देवीकोट आदि स्थानों को भी गये। आपने इन सब स्थानों के शिलालेखों, प्रशस्तियों, मूर्तियों और ग्रंथागारों का अवलोकन किया। आपको अमरसागर में एक नवीन शिलालेख मिला जिसे आपने अपनी टिप्पणी सहित पूना के जैन साहित्य-संशोधक नामक त्रैमासिक में प्रकाशित किया। इतना ही नहीं आपने जैसलमेर, लोद्रवा, अमरसागर के जैन मन्दिरों, शिलालेखों तथा प्रशस्तियों का बहुत ही सुन्दर संग्रह भी प्रकाशित किया, जिसका नाम "Jain Inscriptions Jaisalmer" है।* इस ग्रंथ में जैसलमेर के जैन मन्दिरों और शिलालेखों पर बहुत ही अच्छा प्रकाशडाला गया है।

हम आप ही की खोजों के प्रकाश में जैसलमेर के मन्दिरों, शिलालेखों, मूर्ति पर खुदे हुए लेखों आदि का ऐतिहासिक विवेचन करते हैं।

श्री पार्श्वनाथजी का मन्दिर

जैसलमेर में यह मन्दिर सबसे प्राचीन है। बारहवीं शताब्दी के मध्य में जैसलमेर नगर की नींव डाली गई। इसके पहले भाटियों की राजधानी लोद्रवा में थी। उस नगर में भी जैनियों की बहुत बड़ी बस्ती थी। जब लोद्रवा का नाश हुआ तब राजपूतों के साथ जैन ओसवाल भी जैसलमेर आये और वे उस समय अपने साथ भगवान पार्श्वनाथ की पवित्र मूर्ति को ले आये। सं० १४५९ में खरतरगच्छाधीश श्री जिनराजसूरि के उपदेश से श्री सागरचन्द्रसूरि ने एक जैन मन्दिर की नींव डाली और संवत् १४७३ में श्री जिनचन्द्रसूरिजी के समय में इसकी प्रतिष्ठा हुई। यह मन्दिर श्री पार्श्वनाथजी के मंदिर के नाम से मशहूर है। ओसवाल वंश के सेठ जयसिंह नरसिंह रांका ने इसकी प्रतिष्ठा कराई थी। साधु कीर्त्तिराजजी नामक एक जैन मुनि ने उक्त मंदिर में एक प्रशस्ति लगाई। श्री जयसागर गणी ने इस प्रशस्ति का संशोधन किया और धन्ना नाम के कारीगर ने इसे खोदा था। इस प्रशस्ति में उक्त मंदिर की प्रतिष्ठा तथा अन्य उत्सवों का उल्लेख है। यह अधिकाँश में गद्य में है। इसके अतिरिक्त इसमें उन सेठों की वंशावली है जिन्होंने इसकी प्रतिष्ठा करवाई थी। ये सेठ उकेश वंशीय रांका गौत्र के थे। इस प्रशस्ति में

---

* यह ग्रंथ बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर एम० ए० बी० एल० ४८ इण्डियन मिररस्ट्रीट कलकत्ता से प्राप्त हो सकता है।



श्री सम्भवनाथ मन्दिर प्रशस्ति जैसलमेर (श्री बा० पूरणचन्दजी नाहर के सौजन्य से)

श्री शांतिनाथजी और अष्टापदजी के मंदिर

ये दोनों मंदिर एक ही अहाते में है। ऊपर की भूमि में श्री शान्तिनाथजी का और निम्नतल में अष्टापदजी का मंदिर बना हुआ है। निम्नतल के मंदिर में सत्रहवें जैन तीर्थङ्कर श्री कुंथनाथजी की मूर्ति मूलनायक रूप से प्रतिष्ठित है। इन दोनों मन्दिरों की प्रशस्ति एक ही है और जैनी हिन्दी में लिखी हुई है। संवत् १५३६ में जैसलमेर के संखवालेचा और चौपड़ा गौत्र के दो धनाढ्य सेठों ने इन मंदिरों की प्रतिष्ठा करवाई। संखवालेचा गौत्रीय खेता और चौपड़ा गौत्रीय पांचा में वैवाहिक सम्बन्ध था। इन दोनों ने मिलकर दोनों मंदिर बनवाये थे। खेताजी ने सहकुटुम्ब शत्रुंजय, गिरनार, आबू आदि तीर्थों की यात्रा कई बार बड़े धूमधाम के साथ की। सम्वत् १५८१ में इनके पुत्र बीदा ने मंदिर में एक प्रशस्ति लगाई जिसमें इन सब बातों का उल्लेख है। मंदिर के बाहर दाहिनी तरफ पाषाण के बने हुए दो बड़े २ सुन्दर हाथी रखे हुए हैं। इन दोनों पर धातु की मूर्त्तियां हैं जिनमें एक पुरुष की और दूसरी स्त्री की है। खेताजी के पुत्र बीदा ने संवत् १५८० में अपने माता पिता की ये मूर्त्तियाँ प्रतिष्ठित की थीं। इनमें से केवल एक पर एक लेख खुदा हुआ है। इस समय जैसलमेर की गद्दी पर महारावल देवकरणजी थे। सम्वत् १५३६ में जब इस मंदिर की प्रतिष्ठा हुई उस समय खरतर गच्छ के श्री जिनसमुद्रसूरिजी उपस्थित थे।

श्री चन्द्रप्रभूस्वामी का मंदिर

संवत् १५०९ में ओसवाल वंशीय भणशाली गौत्रीय शाह बीदा ने इस मंदिर की प्रतिष्ठा कराई थी। इस मंदिर के द्वितल की एक कोठड़ी में बहुत सी धातुओं की पंचतीर्थी और मूर्त्तियों का संग्रह है।

श्री शीतलनाथजी का मंदिर

यह मंदिर ओसवाल वंशके डागा गौत्रीय सेठों का बनवाया हुआ है। यहाँ की पट्टिका के लेख में संवत् १४७९ में इन्हीं डागों द्वारा इसकी प्रतिष्ठा करवाई जाने का उल्लेख है। इस मंदिर में कोई प्रशस्ति नहीं है।

श्री ऋषभदेवजी का मंदिर

इस मंदिर की मूर्त्तियों पर जो लेख हैं उनसे ज्ञात होता है कि यह मंदिर ओसवाल समाज के गणाधर चौपड़ा गौत्रीय शाह धन्ना ने बनवाया था, और उसीने खरतरगच्छीय आचार्य्यों के द्वारा इसकी प्रतिष्ठा करवाई थी। इसकी मूर्त्ति संख्या लगभग ६०७ है।



श्री पार्श्वनाथ मन्दिर प्रशस्ति जैसलमीर (श्री बा० पूरणचन्दजी नाहर के सौजन्य से)

श्री महावीरस्वामी का मंदिर

इस मंदिर में लगे हुए शिलालेख से ज्ञात होता है कि ओसवंश के बरड़िया गौत्रीय शाह दीपा ने इस भव्य मंदिर की प्रतिष्ठा कराई थी। संवत् १४५३ में यह मंदिर बना था। जिनसुखसूरिजी लिखते हैं किइस मंदिर की मूर्त्तियों की संख्या २३२ है।

उपरोक्त सब मंदिर किले के अंदर है। इसके अतिरिक्त शहर में भी कुछ मंदिर और देरासर हैं जिनमें से कुछ का उल्लेख हम नीचे करते हैं।

श्री सुपार्श्वनाथजी का मंदिर

ऊपर हमने जिन मंदिरों का उल्लेख किया है, वे सब श्वेताम्बर समाज के खरतरगच्छ सम्प्रदाय के हैं। पर इस मंदिर की प्रतिष्ठा तपगच्छीय श्रावकों की ओर से संवत् १८६९ में हुई। इसमें एक प्रशस्ति लगी हुई है। उससे ज्ञात होता है कि इसकी प्रतिष्ठा करानेवाले तपगच्छ के प्रसिद्ध आचार्य हीरविजयसूरि की शाखा के मुनि नगविजयजी थे तथा उन्होंने ही उक्त प्रशस्ति भी लिखी थी। इस प्रशस्ति की रचना गद्य पद्य युक्त पाण्डित्य पूर्ण क्लिष्ट संस्कृत भाषा में है।

श्री विमलनाथजी का मंदिर

इस मंदिर के मूलनायकजी की प्रतिमा के लेख से ज्ञात होता है कि संवत् १६६६ में तपगच्छाचार्य्य विजयसेनसूरिजी के हाथ से इसकी प्रतिष्ठा हुई थी।

सेठ थीहरूशाहजी का देरासर

जो ख्याति मेवाड़ में भामाशाहजी की है, वही ख्याति जैसलमेर में थीहरूशाह जी की है। आप भणसाली गौत्र के थे। आपका विशेष परिचय गत पृष्ठों में दिया जा चुका है। लोद्रवा के वर्त्तमान मंदिर का आप ही ने जीर्णोद्धार करवाया था। उक्त देरासर आपकी हवेली के पास है।

इसके अतिरिक्त सेठ केशरीमलजी, सेठ चाँदमलजी, सेठ अक्षयसिंहजी, सेठ रामसिंहजी तथा सेठ धनराजजी के देरासर हैं। पर वे विशेष प्राचीन नहीं हैं।

देरासरों के अतिरिक्त जैसलमेर में कई उपासरे हैं जिनमें बेगड़-गच्छ उपासरा, बृहत् खरतर गच्छ उपासरा, तपगच्छ उपासरा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

लोद्रवा के जैन मंदिर

अभी तक हमने जैसलमेर के किले तथा शहर के जैन मंदिरों का उल्लेख किया है। अब हम लोद्रवा के जैन मंदिरों पर कुछ ऐतिहासिक प्रकाश डालना चाहते हैं। लोद्रवा एक प्राचीन ऐतिहासिक स्थान है। प्राचीनकाल में यह स्थान लोदू नामक राजपूतों की राजधानी थी। वर्त्तमान में इन्हें लोधा कहते हैं। संवत् ९०० के लगभग रावल देवराज भाटी ने इन लोदा राजपूतों से लोद्रवा छीनकर वहाँ पर अपनी राजधानी कायम की। उस समय यह नगर बड़ा समृद्धिशाली था। इसके बारह प्रवेश द्वार थे। प्राचीन काल से ही यहाँ पर श्री पार्श्वनाथजी का मंदिर था। रावल भोज देव के गद्दी बैठने के पश्चात् उनके काका जैसल ने महम्मद गौरी से सहायता लेकर लोद्रवा पर चढ़ाई की। इस युद्ध में भोज देव मारे गये और लोद्रवा नगर भी नष्ट हो गया। पश्चात् राव जैसल ने लोद्रवा से राजधानी हटाकर संवत् १२१२ में जैसलमेर नाम का दुर्ग बनाया।

ओसवाल वंशीय सुप्रख्यात् दानवीर सेठ थीहरूशाहजी ने, श्री पार्श्वनाथजी के उक्त मंदिर का, जो लोद्रवा के विध्वंश के साथ नष्ट हो गया था, पुनरुद्धार करवाकर खरतरगच्छ के श्री जिनराजसूरि से उसकी प्रतिष्ठा करवाई। यह मंदिर भी अत्यन्त भव्य और उच्चश्रेणी की कला का उत्तम नमूना है। इस मंदिर के कोने में चार छोटे २ मंदिर हैं। उनमें से उत्तरपूर्व के तरफ के मंदिर में एक शिलालेख रक्खा हुआ है। इसका कुछ अंश टूट गया है। इसकी लम्बाई चार फीट और चौड़ाई डेढ़ फीट से कुछ अधिक है। सुप्रख्यात् पुरातत्वविद् बाबू पूरणचन्दजी नाहर एम० ए० बी० एल० का कथन है कि आज तक जितने शिलालेख उनके दृष्टिगोचर हुए हैं तथा जितने अन्यत्र प्रकाशित हुए हैं उनमें से किसी में भी अपनी पट्टावली का शिलालेख देखने में नहीं आया है। इस शिला लेख में श्री महावीरस्वामी से लेकर श्री देवर्द्धिगण क्षमा-श्रमण तक के आचार्य्य गण और उनके शिष्यों के चरण सहित नाम खुदे हुए हैं। श्री महावीर स्वामी के निर्वाण के पश्चात् ९८० वर्ष व्यतीत होनेपर श्री देवर्द्धिगणजी ने जैनागम को लेख बद्ध किया था। इनके विषय में श्रीकल्पसूत्रादि में जो कुछ संक्षिप्त परिचय मिलता है, उससे अधिक अद्यावधि कोई विशेष इतिहास ज्ञात नहीं हुआ है। इस शिलालेख में कुल चरणों की समष्टि १०९ है, परन्तु देवर्द्धिगण के नाम के बाद जो ७, ९० खुदा हुआ है, वह संकेत समझ में नहीं आया। इसके सिवाय शिलालेख के आदि में दक्षिण की तरफ

नीचे के भाग में तीन कोष्ट में अष्ट माङ्गलिक खुदे हुए हैं, और मध्य में तीन कोष्टक में नंद्यावर्त्त और स्वस्तिक है। परन्तु इस लेख में कोई संवत् मिति अथवा प्रतिष्ठा करनेवाले आचार्य्य या करानेवाले श्रावक अथवा खोदनेवाले का नाम अथवा प्रतिष्ठा स्थानादि का उल्लेख नहीं है। *

अमरसागर का मंदिर

यह स्थान जैसलमेर से पाँच मील की दूरी पर है। यहाँ तीन जैन मंदिर हैं। इनमें से दो सुप्रख्यात् बापना वंशीय सेठों के बनवाये हुए हैं। छोटा मंदिर श्री सवाईरामजी बापना ने संवत् १८९७ में और बड़ा मंदिर श्री सेठ हिम्मतरामजी बापना ने संवत् १९२८ में बनाया था। इन दोनों मंदिरों की प्रतिष्ठा खरतरगच्छाचार्य्य जिनमहेन्द्रसूरिजी के हाथ से हुई है। इनमें से बड़ा मंदिर बहुत ही सुन्दर और विशाल है। इसके सन्मुख बड़ा ही सुरम्य उद्यान है। इस मंदिर में शिल्प कला का बड़ा ही सुन्दर काम हुआ है। यह देखकर सचमुच बड़ा आश्चर्य्य होता है कि ऐसी विशाल मरुभूमि में मकराने के पत्थर पर भारतीय शिल्पकला का कितना बढ़िया काम हुआ है।

इनके अतिरिक्त जैसलमेर के पास देवी कोट, ब्रह्मसर आदि स्थानों में भी छोटे मोटे जैन मंदिर हैं। वहाँ का दादाजी का स्थान भी ऐतिहासिक है।

जैसलमेर के जैन मंदिर और शिल्पकला

हमने गत पृष्ठों में जैसलमेर के विविध ऐतिहासिक जैन मंदिरों और शिलालेखों का विवेचन किया है। अब हम इन मंदिरों की शिल्पकला के सम्बन्ध में भी दो शब्द लिखना आवश्यक समझते हैं। कुछ शिल्पकला विशारदों ने इन मंदिरों की अपूर्व कारीगरी की बड़ी प्रशंसा की है। पुरातत्व विषयक सुप्रख्यात् त्रैमासिक पत्रिका की ५ वीं जिल्द के पृष्ट ८२-८३ में जैसलमेर के जैन मंदिरों और वहाँ के श्रीमान् लोगों की रमणीय अट्टालिकाओं की प्रशंसा में एक विद्वत्तापूर्ण लेख प्रकाशित हुआ है। जैसलमेर के स्टेट इञ्जीनियर महोदय ने हाल ही में स्थापत्य शिल्प नामक प्रबंध प्रकाशित किया है। इसमें उन्होंने वहाँ की शिल्प-

---

* Jain Inscriptions Jaisalmer (By B. Puranchandra Ji Nahar M. A, B, L.) Page 177.

कला का सचित्र परिचय दिया है। हम भी इस ग्रंथ में जैसलमेर के कुछ जैन मंदिरों के चित्र दे रहे हैं। इनसे पाठकों को वहाँ की शिल्पकला की उत्कृष्टता का थोड़ा परिचय अवश्य होगा। इसमें विशेषता तो इस बात की है कि जैसलमेर जैसे दुर्गम स्थान पर भारत के शिल्पकला विशारदों ने जो भव्य मंदिर बनवाये हैं, वे तत्कालीन जैन श्रीमानों की धर्म-परायणता और शिल्प-प्रेम के ज्वलंत उदाहरण हैं।

इन मंदिरों में पाषाण में जिस कौशल्य से शिल्पी मूर्त्तियाँ बनाई गई हैं; वह उस समय की कारीगरी पर बहुत ही अच्छा प्रकाश डालती हैं। आप शान्तिनाथजी के मंदिर को ले लीजिये। उक्त मंदिर के ऊपर का दृश्य क्या ही सुन्दर है। इसे देखकर शिल्प-विद्या-विशारद यह कहे बिना न रहेंगे कि इसमें शिल्पकला की सर्व प्रकार की श्रेष्ठता विद्यमान है। मंदिर के ऊपर खुदे हुए मूर्त्तियों के आकार बहुत ही बारीक अनुपात से बनाये गये हैं। यही कारण है कि ऊपर से नीचे तक के सम्पूर्ण दृश्य चित्ताकर्षक हैं। कहीं भी सौन्दर्य की कमी नहीं मालूम होती।

इसके अतिरिक्त इसमें यह भी एक विशेषता है कि बहुत सी मूर्त्तियों के रहने पर भी दृश्य भयंकर अथवा सघन नहीं दिखाई पड़ते। इस मंदिर पर की गई अद्भुत् शिल्पकला के काम को देखकर जावा के सुप्रसिद्ध बोरोबोडू नामक स्थान के प्राचीन हिन्दू मंदिर नाम स्मरण हो आता है क्योंकि उक्त मंदिर के ऊपर का दृश्य और मूर्त्तियों के अनुपात भी प्रायः इसी प्रकार के हैं।

जैसलमेर के श्रीपार्श्वनाथजी के मंदिर की कारीगरी भी अपने ढंग की अपूर्व है। वहाँ की मूर्तियों में भारतीय कला की श्रेष्ठता झलकती है। उनमें सौन्दर्य और गम्भीर्य्य दोनों का समावेश है। अमर सागर में भी वर्त्तमान शताब्दी की कारीगरी का उज्वल उदाहरण दिखाई देता है। उक्त मंदिर के शिल्प-कौशल्य को देखने से उसके निर्माता के अगाध शिल्प प्रेमका परिचय मिलता है।

श्री आरासन तीर्थ

आबू पर्वत से थोड़ी दूरीपर कुम्भारिया नामक एक छोटा सा गाँव बसाहुआ है। इसी का दूसरा नाम आरासन तीर्थ है। इस तीर्थ में जैनियों के ५ बहुत सुन्दर और प्राचीन मन्दिर बने हुए हैं। मंदिरों की कारीगरी और बंधाई बहुत ही ऊँचे दरजे की है। सभी मन्दिर सफेद आरस पत्थर के बने हुए हैं। इस स्थान का पुराना नाम आरासनकर है, जिसका अर्थ आरस की खदान होता है। जैनग्रन्थों को देखने से इस बात का पता तुरन्त लगजाता है कि पहिले इस स्थान पर आरस की बहुत बड़ी खदान थी। सारे गुजरात में मूर्ति निर्माण के लिये यहीं से पत्थर जाता था।

दानवीर समराशाह ने भी शत्रुंजय तीर्थ का पुनरुद्धार करते समय यहीं से आरस की फलही मंगाई थी। विमलशाह, वस्तुपाल, तेजपाल, इत्यादि महान् पुरुषों ने आबू पर्वत के ऊपर जो अनुपम कारीगरी वाले आरस के मंदिर बनाये हैं, वह सब आरस भी यहीं का था। सौभाग्य-काव्य से पता चलता है कि तारङ्गा पर्वत पर ईडर के संघपति गोविंद सेठने वहाँ के महामन्दिर में अजितनाथ स्वामी की जो विशाल काय प्रतिमा प्रतिष्ठित की थी उसकी फलही ही भी यहीं से लेजाई गई थी, मतलब यह कि अधिकांश जिन प्रतिमाएं इसी आरस खान के पत्थरों से बनाई जाती थीं।

आर्कियालौजिकल सर्वे आफ वेस्टर्न इण्डिया सरकल की सन् १९०५।६ की रिपोर्ट में कुम्भारिया के जैन मन्दिरों के सम्बन्ध में विस्तार पूर्वक लिखा हुआ है। उसका भाव इस प्रकार है।

"कुम्भारिया में जैनियों के बहुत सुन्दर मन्दिर बने हुए हैं, जिन की यात्रा करने के लिये प्रति वर्ष बहुत जैनी आते हैं। इन मन्दिरों के सम्बन्ध में जो दंत-कथा प्रचलित है वह इस प्रकार है कि विमल शाह ने ३६० जैन मन्दिर बँधाये थे और इस काम में अम्बिका माता ने उन्हें बहुत दौलत दी थी पीछे जब अम्बिका देवी ने उससे पूछा कि तुमने किसकी मदद से ये देवालय बँधाये तो उत्तर में उसने कहा कि 'मेरे गुरुदेव की कृपा से" देवी ने ३ बार इस प्रश्न को दोहराया, मगर विमलशाह ने तीनों बार वही उत्तर दिया। इस कृतघ्नता से क्रोधित होकर देवी ने उससे कहा कि अगर जीना होतो भाग जा। तब वह एक देवालय के तल घर में घुस गया और आबू पर्वत पर निकल गया। उसके पश्चात् माताजी ने ५ देवालयों को छोड़ कर बाकी सब देवालयों को जला डाला जिनके जले हुए पत्थर अभी भी वहाँ चारों ओर बिखरे हुए नज़र आते हैं। फारबस साहब का कथन है कि यह घटना किसी ज्वालामुखी पर्वत के फटने से

हुई है। चाहे जो हो पर इन पत्थरों को देखने से यह पता तो आसानी से लग जाता है कि यहाँ पर पहिले बहुत अधिक देवालय बने हुए थे।

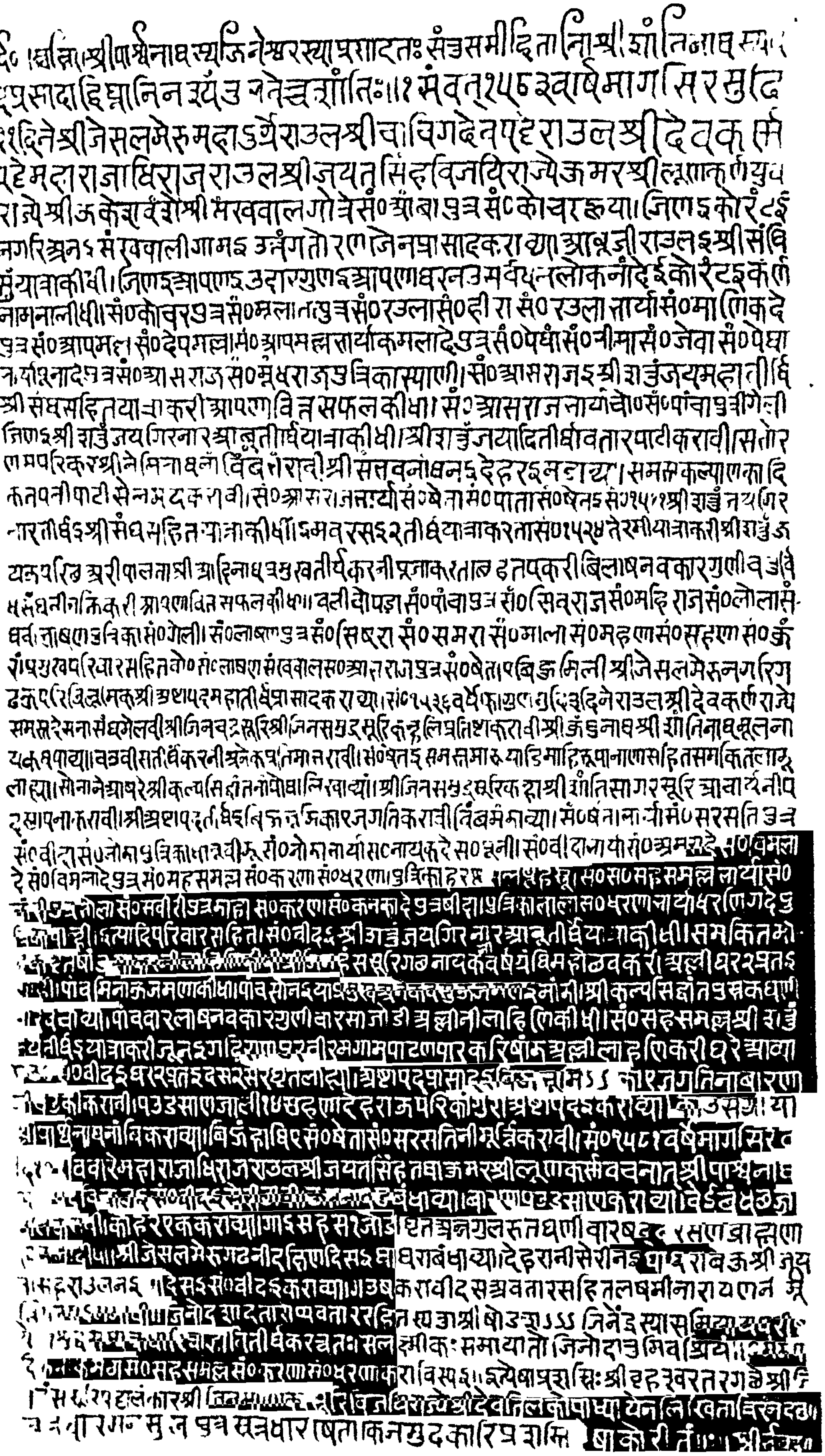
कुंभारिया में खास कर के ६ मन्दिर हैं जिनमें पाँच जैनियों के और एक हिन्दुओं का है। इन मन्दिरों की समय समय पर मरम्मत होती रही है जिससे नया और जूना काम भेल-सेल हो गया है। इन मन्दिरों के स्तम्भ द्वार तथा छत में जो काम किया गया है, वह बड़ा ही सुन्दर और उत्तम है।

नेमिनाथ का मन्दिर

जैन मन्दिरों के समूह में सब से बड़ा और महत्वपूर्ण मन्दिर श्रीनेमिनाथ का है। इसमें बाहर के द्वार से लेकर रंगमण्डप तक एक चढ़ाव बना है। देवगृह में एक देवकुलिका, एक गूढ़ मण्डप और एक परसाल बनी है। देवकुलिका की दीवारें पुरानी हैं, पर उसका शिखर और गूढ़ मण्डप के बाहर का भाग नया बना हुआ है। इस मन्दिर का शिखर तारंगाजी के जैन मन्दिर जैसा है। इसकी परसाल के एक स्तम्भ पर एक लेख है, जिससे पता चलता है कि ईसवी सन् १२५३ में आसपाल नामक किसी व्यक्ति ने इसे बँधाई थी। रंगमण्डप की दूसरी बाजू पर ऊपर के दरवाजे में तथा अन्त के २ थम्भो के बीच की कमानों पर मकराकृति के मुखों से शुरू करके एक सुन्दर तोरण कोरा गया है जोकि देलवाड़ा के विमलशाह वाले मन्दिर के तोरण के समान हैं। मन्दिर के दोनों ओर मिलाकर ८ देवकुलिकाएँ हैं। दाहिनी बाजू वाली देवकुलिका में आदिनाथ की और बाई बाजूवाली देवकुलिका में पार्श्वनाथ की भव्य मूर्तियां विराजमान हैं। इस मन्दिर में कई शिलालेख हैं। एक शिलालेख इस मन्दिर की नेमिनाथ स्वामी की खास प्रतिमा के आसन के नीचे खुदा हुआ है। जिसका भाव इस प्रकार है। संवत् १६७५ के माघ सुदी ४ को शनिवार के दिन ओसवाल जाति के बोहरा गौत्रीय राजपाल ने श्री नेमिनाथ के मन्दिर में नेमिनाथ का बिम्ब स्थापित किया, उसकी प्रतिष्ठा हीरविजयसूरि के पट्टधर आचार्य श्री विजयसेनसूरि के शिष्य श्री विजयदेवसूरि ने पण्डित कुशल सागर गणि आदि साधुओं के साथ करवाई। इसी प्रकार एक शिलालेख श्रीमाल ज्ञाति के शाह रंगा का और एक पोरवाल जाति के श्रेष्ठि बहाड़ का भी खुदा हुआ है।

महावीर का मन्दिर

नेमिनाथ के देवालय के पूर्व की ओर यह मन्दिर बना हुआ है। बाहर की दो सीढ़ियों से एक आच्छादित दरवाजे में प्रवेश किया जाता है, जो अभी नया बना है। यह मन्दिर भी बड़ा सुन्दर बना



॥द० ॥स्वस्ति॥ श्रीपार्श्वनाथस्य जिनेश्वरस्य प्रसादतः संउसमीहितानि श्री शांतिनाथस्य
द्प्रसादाद्विघ्नानि नश्यंतु नेत्रत्र शांतिः॥१ संवत् १५८ वर्षे मागसिर सुदि
११ दिने श्री जेसलमेरु महादुर्गे राउल श्री चाचिगदेव पट्टे राउल श्री देवकर्ण
पट्टे महाराजाधिराज राउल श्री जयतसिंह विजयिराज्ये कुमर श्री लूणकर्ण युव
राज्ये श्री ऊकेश वंशे श्री संखवाल गोत्रे सं० आंबा पुत्र सं० कोचर हूया। जिणइ कोरंटई
नगरि अनइ संखवाली गामइ उत्तंग तोरण जैन प्रासाद कराव्या आबूजी राउलइ श्री संघ
मुं यात्रा कीधी। जिणइ आपणइ उदारगुणइ आपणा वरनउ मर्दयन लोक नांदेई कोरंटइ कर्ण
नाम नाली धी॥ सं० कोचर पुत्र सं० मूला नत्पुत्र सं० रउला सं० हीरा सं० रउला भार्या सं० माणिकदे
पुत्र सं० आपमल्ल सं० देपमल्ल। सं० आपमल्ल भार्या कमलादे पुत्र सं० पेथा सं० नीमा सं० जेवा सं० पेथा
भार्या नादे पुत्र सं० आसराज सं० मूधराज पुत्रिका स्याणी। सं० आसराजइ श्री शत्रुंजय महातीर्थ
श्री संघ सहित यात्रा करी आपणा वित्त सफल कीधा। सं० आसराज भार्या सं० पांचा पुत्री गेली
जिणइ श्री शत्रुंजय गिरनार आबू तीर्थ यात्रा कीधी। श्री शत्रुंजयादि तीर्थावतार पाटी करावी। सतोर
ण मपरिकर श्री नेमिनाथ नां बिंब भराव्यां श्री सत्तरि नां पट्ट देहरइ मंडाव्यां। समस्त कल्याणका दि
कतपनी पाटी सेलम दकरावी। सं० आसराज भार्या सं० खेता सं० पाता सं० खेतइ सं० १५११ श्री शत्रुंजय गिर
नार तीर्थइ श्री संघ सहित यात्रा कीधी। इम तरसइ रतीर्थ यात्रा करता सं० १५२४ तेरमी यात्रा करी श्री शत्रुंज
[illegible]

श्री शान्तिनाथ मंदिर प्रशस्ति जैसलमीर

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

हुआ है। इसके अन्दर महावीर देव की एक भव्य मूर्ति है। जिसके ऊपर ईस्वी सन् १६१८ का एक लेख पाया जाता है, पर जिस बैठक के ऊपर उस प्रतिमा को बैठाया गया है वह बैठक पुरानी है और उस पर ईस्वी सन् १०६१ का लेख पाया जाता है। इस देवालय में मूल नायक के स्थान पर महावीर देव की जो मूर्ति प्रतिष्ठित है उसकी पलथी पर सम्वत् १६७५ विक्रमीय का एक लेख है जिससे पता चलता है कि उपकेश वंश के (ओसवाल वंश के) साः नानिया नामक श्रावक ने अरासन नगर में श्री महावीर का बिम्ब स्थापित किया और उसकी प्रतिष्ठा श्री विजयदेवसूरि ने की। एक लेख इसी स्थान पर मूर्ति की बैठक के नीचे खोदा हुआ है, यह संवत् १११८ के फाल्गुन सुदी ९ सोमवार का है। मगर खण्डित हो जाने की वजह से इसमें लिखने वाले के नाम का पता नहीं चलता।

उपरोक्त दोनों मन्दिरों की तरह पार्श्वनाथ का मन्दिर शांतिनाथ का मन्दिर तथा सम्भवनाथ का मन्दिर और है। इन देवालयों की कारीगरी और बनावट थोड़े फेर-फारों के साथ प्रायः उपरोक्त मन्दिरों की सी है इसलिए इनके विषय में विशेष विवेचन की आवश्यकता नहीं। इनके ऊपर जो लेख पाये जाते हैं उनमें चार का लेख का सम्वत् '११३८ और एक का ११४६ है। चार गोखड़ों पर भी लेख खुदे हुए हैं जो ईस्वी सन् १०८१ के हैं।

राणकपुर

राणकपुर या राणपुर गोड़वाड़ प्रान्त की पंचतीर्थियों में १ प्रमुखतीर्थ है। मारवाड़ देश में जितने प्राचीन जैन मन्दिर हैं उनमें राणपुर का मंदिर सब से कीमती और कारीगरी की दृष्टि से सब से अनुपम हैं। इसके सम्बन्ध में सर जेम्स फर्ग्यूसन ने लिखा है कि "इसके सभी स्तम्भ एक दूसरे से भिन्न हैं और बहुत अच्छी तरह से संगठित किये हुए हैं।" इस प्रकार १४४४ विशाल प्रस्तर स्तम्भों पर यह मंदिर अवस्थित हैं। इनके ऊपर भिन्न २ ऊँचाई के अनेकों गुम्मच लगे हुए हैं जिनसे इसकी बनावट का मन के ऊपर बड़ा प्रभावशाली असर होता है, वास्तव में मन के ऊपर इतना अच्छा असर करनेवाला स्तम्भों का कोई दूसरा संगठन सारे भारत के किसी भी देवालय में नहीं है। यह मंदिर ४८००० वर्ग फीट जमीन पर बनाया हुआ है इस मंदिर के शिलालेखों से ज्ञात होता है कि इसे संवत् १४३४ में नादिया ग्राम निवासी धनासा और रतनासा नामक पोरवाड़ जाति के दो सेठों ने बनवाया था।

ऐसा कहा जाता है कि जब ओरंगजेब ने राजपूताने पर चढ़ाई की थी तब इस देवालय पर भी

उसकी फौजें पहुँची थीं और मूर्त्तियों का तोड़ना प्रारम्भ कर दिया था। कुछ परिकर और तोरण टूटे हुए रूप में अभी भी वहाँ पाये जाते हैं। जिनको लोगों की किम्बदन्ति औरंगज़ेब के द्वारा तोड़े हुए बतलाती है। आगे चलकर यह किम्बदन्ति यह भी कहती है कि जिस रात्रि में उसने इनको तोड़ने का काम शुरू किया उसी रात को बादशाह और उसकी बेगम दोनों बीमार पड़े और बेगम को स्वप्नमें ऋषभनाथ तीर्थङ्कर की मूर्त्ति को देखा, यह देखकर ओरंगज़ेब ने मूर्त्तियों का तोड़ना बंद कर दिया। इसी मंदिर में ३ छोटी ईदगाहें भी बनी हुई हैं। ऐसा कहते हैं कि जब उसने तोड़ फोड़ का काम आरम्भ किया तो साथ ही ३ ईदगाहें भी बनवा डाली। यह किम्बदन्ति सच है या झूठ, औरंगजेब इस मन्दिर में आया या नहीं यह बात निश्चय पूर्वक नहीं कही जा सकती पर यह बात तो निश्चित है कि मुसलमानों ने इस मंदिर को नुकसान पहुँचाया और तोरण गुम्मच वग़ैरा की तोड़ फोड़ की, तथा ३ ईदगाहें बनाकर बाद में उपद्रव रोक दिया।

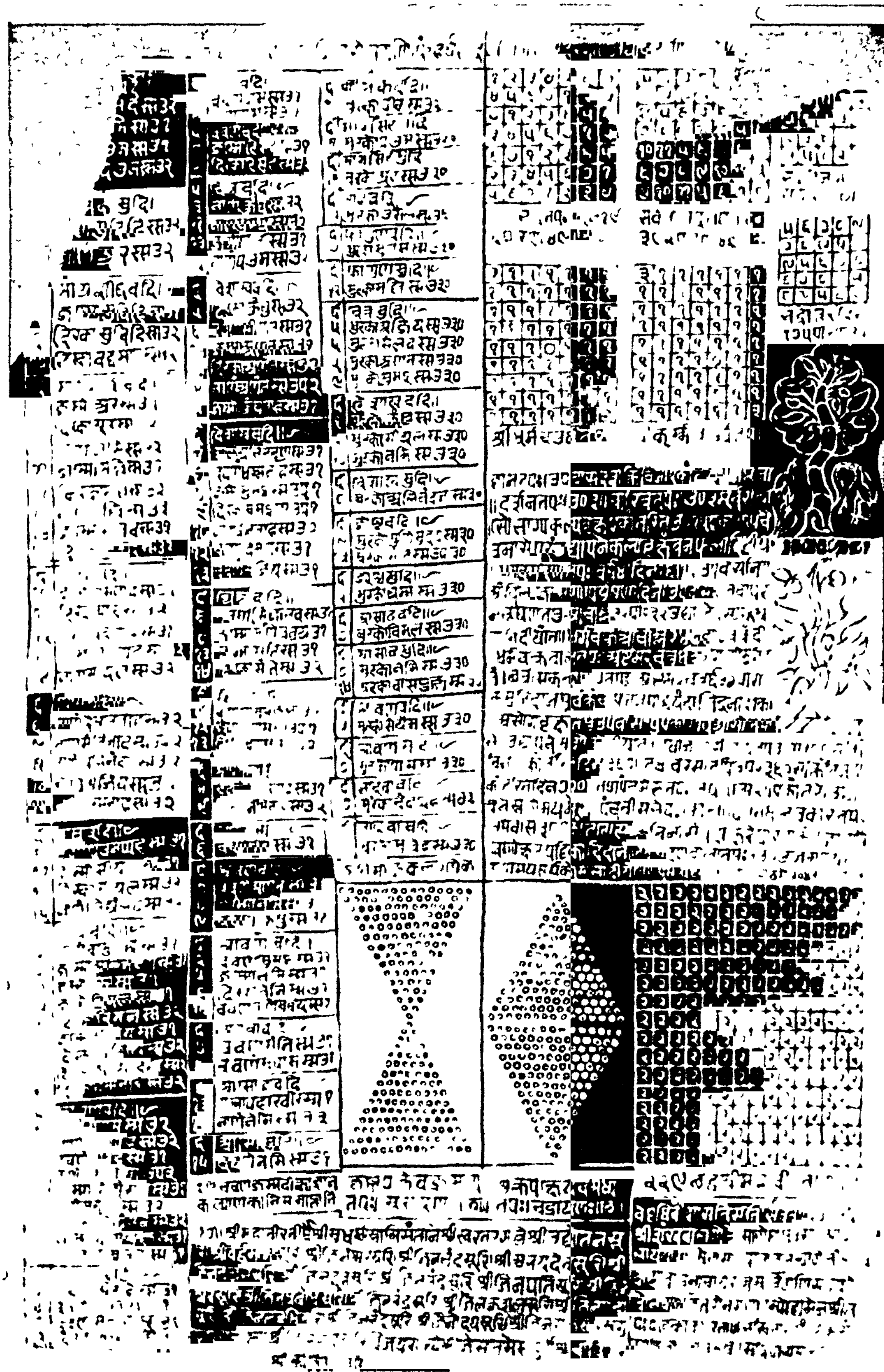
ऐसा कहा जाता है कि इस देवालय के निर्माण कर्त्ता धन्नासा और रतनासा का विचार इसको ७ मंजिला बन वानेका था, जिसमें से ४ मंजिल तो बनाये जा चुके थे और तीन मंजिलों के लिये काम अधूरा रह गया जो अभी तक नहीं बन सका। इसके लिये रत्नाशाह के वंशज अभी तक उस्तरे से हजामत नहीं बनवाते हैं।*

सादड़ी ग्राम से पूर्व ३ मील की दूरी पर निर्जन स्थान में यह मन्दिर अवस्थित है। यह मंदिर शास्त्रों में वर्णित नलिनी गुल्म विमान के आकार का बनाया गया है। इसमें १४४४ खम्बे और ८४ तलघर हैं। संवत् १४९६ में श्री सोमचन्द्रसूरिजी ने इस मन्दिर की प्रतिष्ठा कराई। अभी कुछ समय पूर्व सेठ आनन्दजी कल्याणजी की पेढ़ी ने उक्त राणकपुर के मन्दिर की लागत आंकने के लिये एक होशियार इंजिनियर को बुलाया था उस इंजिनियर ने इस विशाल मन्दिर की लागत १५ करोड़ रुपया आंकी है। इससे पाठकों को ज्ञात हो जायगा कि गोडवाड प्रान्त में जैन समाज की यह एक मूल्यवान सम्पत्ति व कृति है। इस मन्दिर के आसपास नेमिनाथजी व पार्श्वनाथजी के दो मन्दिर हैं।

इस मन्दिर की व्यवस्था पहिले सेठ हेमाभाई हठीसिंह रखते थे जब उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर हो गई तब यह बीड़ा सादड़ी के जैन संघ ने उठाया और इधर संवत् १९५३ से सेठ आनंदजी कल्याणजी की पेढ़ी इसका प्रबन्ध करती है। इस पेढ़ी का आफिस सादड़ी में है, यात्रियों के लिये सब प्रकार की व्यवस्था करादेने में अफिस के व्यक्ति बड़े प्रेम का व्यवहार करते हैं।

---

* इस समय प्राग्वाट कुल श्रेष्ठ रत्नाशाह के वंशजों के ५२ घर घाणेराव में निवास करते हैं।



श्री संभवनाथ मंदिर तपपट्टिका जैसलमेर

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)।

श्रीनाडलाई तीर्थ

मारवाड़ के गोड़वाड़ प्रान्त के देसूरी जिले में यह गांव अवस्थित है। ऐतिहासिक दृष्टि से इसका बड़ा महत्व है। गोड़वाड़ प्रान्त के प्रमुख जैन तीर्थों में से यह एक है। इस गाँव में ११ जैन मंदिर हैं। इसमें से ९ गाँव में तथा २ पास के पर्वत पर हैं। इन पर्वतों को लोग शत्रुञ्जय और गिरनार के नाम से पहचानते हैं।

इस ग्राम में बहुत से जैन लेख मिले हैं, उन शिलालेखों में इस गाँव को नन्दकुलवती, नडडुलाई, नडडूल डानिगा आदि नामों से सम्बोधन किया गया है। ऐतहासिक राससंग्रह के दूसरे भाग में इसे वल्लभपुर नाम से भी पुकारा गया है।

इस ग्राम में भगवान आदिनाथ का एक प्राचीन मंदिर है। इस मंदिर में पत्थर पर खुदे हुए कई लेख हैं, एक लेख संवत् ११८६ की माघ सुदी ५ का है इसमें चहामान (चौहान) वंश के महाराजाधिराज रायपाल के पुत्र रुद्रपाल तथा अश्वपाल तथा उनकी माता मानल देवी द्वारा मंदिर में चढ़ाई गई भेंट का उल्लेख है। इसके अलावा समस्त ग्रामीणों के सर पंच भण्डारी नागसीजी; लक्ष्मणसी आदि ओसवालों का उल्लेख है।

उक्त आदिनाथ मंदिर के रंग मंडप के बाएँ बाजू की दीवार पर एक और लेख खुदा हुआ है। उक्त लेख में मेवाड़ के राजाओं की वंशावली दी गई है। यह वंशावली विशेष विश्वसनीय होने के कारण कई इतिहास वेत्ताओं ने अपनी पुस्तकों तथा रिपोर्टों में इसका उल्लेख किया है। इसके बाद इस लेख में उकेश वंश (ओसवाल जाति) के भण्डारी गौत्रीय सायर सेठ के वंश में शंकर आदि पुरुषों द्वारा श्रीआदिनाथ की प्रतिमा की स्थापना करने का उल्लेख है। यह लेख संवत् ११७४ का है इसी प्रकार संवत् १२०० की कार्तिक वदी ७ का दूसरा लेख है। इस लेख में जो कुछ लिखा है, उसका आशय यह है—

"महाराजाधिराज रायपालदेव के राज्य में उनके दीवान ठाकुर राजदेव के समक्ष नाडलाई के समस्त महाजनों ने (ओसवालों) मिलकर इस मंदिर के लिये घी, तेल, नमक, धान्य, कपास, लोहा, शक्कर, हींग, मंजीठ आदि चीजों को भेंट करने का निश्चय किया।

कहने का अर्थ यह है कि नाडलाई तीर्थ स्थान में भी ओसवाल दानवीरों के धार्मिक कार्य्यों के स्थान २ पर उल्लेख पाये जाते हैं।

श्री नाडोल तीर्थ

मारवाड़ के गोड़वाड़ प्रान्त में यह एक प्रसिद्ध ऐतहासिक स्थान है। जैन लोग इसे अपने पंच तीर्थों में शुमार करते हैं। पुराने समय में यह चौहानों का पाट नगर था। इस गाँव में पद्मप्रभु स्वामी का, एक भव्य और सुन्दर मंदिर है। इस मंदिर के गूढ़ मण्डप के दोनों ओर भगवान नेमिनाथ और भगवान शान्तिनाथ की दो प्रतिमाएँ है। उनके ऊपर संवत् १२१५ की वैसाख सुदी १० का लेख है। इस लेख से यह मालूम होता है कि वीसाड़ा नामक स्थान के मंदिर में जसचन्द्र, जसदेव, जसधवल और जसपाल नामक श्रावकों ने इन मूर्त्तियों को बनवाई और पद्मचन्द्र गणि के हाथ से इनकी प्रतिष्ठा करवाई।

उक्त मन्दिर के अतिरिक्त वहाँ पर और कई प्राचीन जैन मन्दिर विद्यमान हैं। इन मन्दिरों के शिलालेखों में कई स्थानों पर ओसवाल जाति के बहुत से महानुभावों के नामों का उल्लेख मिलता है। भगवान नेमिनाथ का मन्दिर भी बड़ा प्राचीन तथा सुन्दर बना हुआ है।

श्री वरकाणातीर्थ

यह तीर्थ स्थान राणी स्टेशन से १ मील की दूरी पर है। यहां पर भगवान पार्श्वनाथजी का एक बहुत बड़ा और प्राचीन मन्दिर विद्यमान है। इसके अतिरिक्त यहां पर दो धर्मशालाएँ तथा एक श्रीपार्श्वनाथ जैन विद्यालय भी है।

श्री सोमेश्वर तीर्थ

उक्त तीर्थ स्थान नाडलाई तीर्थस्थान से छः मील की दूरी पर विद्यमान है। यहाँ पर जैनियों के चार मन्दिर हैं जिसमें शांतिनाथजी का मन्दिर सुन्दर, भव्य और अत्यन्त प्राचीन है। इस मन्दिर के अनेक शिलालेखों में ओसवाल जाति के सज्जनों का उल्लेख पाया जाता है। यहां पर कुआ, बगीचा तथा एक विशाल धर्मशाला भी बनी हुई है।

इस तीर्थस्थान के दो मील की दूरी पर घाणेराव नामक गाँव विद्यमान है। इस गाँव में आठ सुन्दर जिनालय तथा एक धर्मशाला बनी हुई है।

श्री मुच्छाला महावीर तीर्थ

यह तीर्थ स्थान घाणेराव से २ मील की दूरी पर स्थित है। इसमें एक बहुत पुराना जैन मन्दिर विद्यमान है। यहां पर एक धर्मशाला भी बनी हुई है।

जालोर (मारवाड़)

मारवाड़ के दक्षिण भाग में जालोर नाम का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है। मारवाड़ की राजधानी जोधपुर से यह ८० माईल की दूरी पर सूकड़ी नामक नदी के किनारे बसा हुआ है। प्राचीन लेखों और ग्रन्थों में यह नगर जवालीपुर के नाम से प्रसिद्ध था। सुप्रसिद्ध श्वेताम्बर आचार्य्य श्री जिनेश्वरसूरि ने वि० संवत् १०८० में श्री हरिभद्राचार्य्य रचित अष्टक संग्रह नामक ग्रन्थ की विद्वत्तापूर्ण टीका यहीं पर की थी। और भी अनेक ग्रन्थों में इस नगर का नाम मिलता है। इस पर से यह स्पष्ट ज्ञात होता है, कि प्राचीन काल में यह नगर जैन संस्कृति से प्रकाशमान था। वहां के संवत् १२४२ के एक लेख से मालूम होता है कि उस देश के तत्कालीन अधिपति चहामान (चौहान) श्री समरसिंघ देव की आज्ञा से भण्डारी पांसू के पुत्र भण्डारी यशोवीर ने कुँवर विहार नामक मन्दिर का पुनरुद्धार किया।

इसके अतिरिक्त जोधपुर नरेश महाराजा गजसिंहजी के मन्त्री जयमलजी ने यहां पर कुछ जैन मन्दिर और तपेगच्छ के उपाश्रम बनवाये। जालौर के किले पर जो जैन मन्दिर विद्यमान है उसका जीर्णोद्धार भी आप ने करवाया। उस मन्दिर में प्रतिमा पधरा कर आप ही ने उसकी प्रतिष्ठा करवाई।

राजा कुँवरपाल के समय का बना हुआ जैन मन्दिर गिर गया था। उसकी नींव मात्र शेष रह गई थी। उसी स्थान पर जयमलजी ने मन्दिर बनवाकर संवत् १६८१ के चैत्र वदी ५ को प्रतिष्ठा करवाई। इनके पश्चात् इनके पुत्र नैनसीजी ने इसी मन्दिर के सामने मण्डप बनवाकर उसमें अपने पूज्य पिता श्री जयमलजी की मूर्त्ति संगमरमर के बने हुए श्वेत रंग के हाथी के हौदे पर स्थापित की। यह मूर्त्ति मूलनायकजी की प्रतिमा के सन्मुख हाथ जोड़े हुए विराजमान है। इस मन्दिर का द्वार उत्तर की ओर मुखवाला है। यह किले की ऊपर की अंतिम पोल के नैऋत्य कोण में थोड़ी ही दूर पर अवस्थित है। यह मन्दिर महावीर स्वामी के नाम से मशहूर है। इस मन्दिर की मूलनायक की प्रतिमा के नीचे एक लेख खुदा हुआ है जिसमें शाह जैसा की भार्य्या जेवंतदे के पुत्र शाह जयमलजी और तत्पुत्र मुणोत नैनसी जी और सुन्दरदासजी का उल्लेख है।

महावीरजी के मन्दिर की तरह यहां पर एक चौमुखाजी का मन्दिर है। यह किले के ऊपर की अंतिम पोल के पास किलेदार की बैठक के स्थान से थोड़ी दूर पर नक्कारखाने के मार्ग पर बना हुआ है। मन्त्री जयमलजी ने इस मन्दिर में संवत् १६८१ के प्रथम चैत्र वदी ५ को श्री आदिनाथ स्वामीजी की प्रतिमा को पधराई, जिसका लेख इस प्रतिमाजी पर खुदा हुआ है। इसी किले में एक तीसरा जैन

मन्दिर और भी है और कहा जाता है कि इसका जीर्णोद्धार भी मुणोत जयमलजी ने करवाया था। जालोर कसवे के तपागढ़ा मुहल्ले में एक जैन मन्दिर और तपेगच्छ का उपाश्रय अभी तक विद्यमान है। क़िले की तलेटी में एक जागोड़ी पार्श्वनाथजी का मन्दिर है। उसे आहोर निवासी मेहता अखेचन्दजी ने महाराजा मानसिंहजी के समय में बनवाया।

सांचोर

सांचोर भी मारवाड़ का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है। पर बहुत पुराना बसा हुआ है। इस नगर की उत्पत्ति और विकास का वृत्तान्त मुणोत नैनसीजी ने अपनी ख्यात में बड़ी खोज के साथ लिखा है। यहां पर भी कई जैन मन्दिर और उपाश्रय हैं जो प्रायः ओसवालों के बनवाये हुए हैं। मुणोत जयमलजी ने भी इस स्थान पर संवत् १६८१ की प्रथम चैत्र वदी ५ को एक जैन मन्दिर बना कर उसकी प्रतिष्ठा करवाई।

खुड़ाला (मारवाड़) के जैन मंदिर

जोधपुर राज्य के गोड़वाड़ प्रात में खुड़ाला नामक एक ग्राम है—इस गाँव के जैनमंदिरों की मूर्तियों पर कई लेख हैं, इस मंदिर की धर्म नाथजी की प्रतिमा पर से प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता श्रीयुत भंडार कर साहब ने एक लेख का उतारा लिया था, वह लेख संवत् १२४३ की मार्गवदी ५ का था, पर यह लेख बहुत कुछ खंडित हो जाने से इसका विशेष स्पष्टी करण न हो सका। श्रीयुत भंडारकर महोदय ने अपने संग्रह में इसी ग्राम के एक दूसरे जैन लेख का उल्लेख किया है, यह लेख संवत् १३३३ की आश्विन सुदी १४ सोमवार का है। इस लेख में प्रथम भगवान महावीर की स्तुति की गई है और कहा गया है कि भगवान महावीर स्वयं श्रीमाल (भीनमाल) नगर में पधारे थे इसके बाद उक्त लेख में तत्कालीन राजनैतिक परिस्थिति पर भी कुछ प्रकाश डाला गया है, उससे ज्ञात होता है कि संवत् १३३३ के लगभग श्रीमाल नगर में महाराजा कुल श्री चाचिकदेव, राज करते थे, और उनके मंत्री गजसिंह थे। इन्हीं महाराज चाचिकदेव का एक बड़ा लेख, जोधपुर राज्य के यशवंतपुरा गाँव से १० मील की दूरी पर सुँधा नामक टेकरी पर के चामुँडा देवी के मंदिर में मिला है, इस प्रशस्ति लेख की रचना श्रीदेवसूर्य के प्रशिष्य और रामचन्द्र सूरि के शिष्य जयमंगलाचार्य्य ने की थी। सुप्रख्यात पुरातत्व विद् प्रोफेसर किलहोर्न ने ईसवी सन् १९०७ के एपीग्राफिया इण्डिका में यह लेख प्रकाशित किया है।

पाली का नवलखा मन्दिर

मारवाड़ में पाली नाम का एक प्रसिद्ध और प्राचीन नगर है। वहाँ पर नवलखा मन्दिर नाम का बड़ा ही भव्य और ५२ जिनालय वाला प्राचीन देवालय है। इस मन्दिर की दो प्रतिमाओं पर दो लेख खुदे हुए हैं। पहिले लेख का भाव यह है—"संवत् १२०१ के ज्येष्ठ वदी ६ रविवार के दिन पल्लिका अर्थात पाली नगर के महावीर स्वामी के मन्दिर में महामान्य-आनन्द के पुत्र महामान्य पृथ्वीपाल ने अपने आत्म-कल्याण के लिये दो तीर्थङ्करों की मूर्त्तियां बनवाई, उनमें से यह अनंतनाथ की प्रतिमा है"।

दूसरी प्रतिमा पर भी इसी प्रकार का लेख खुदा हुआ है, पर उसके अंतिम वाक्य में "अनंत" के बदले "विमल" का उपयोग किया गया है। उससे ज्ञात होता है कि उक्त प्रतिमा भगवान विमलनाथ की है।

इसी मन्दिर में रक्खी हुई एक प्रतिमा के सिंहासन पर निम्न लिखित आशय का लेख खुदा हुआ है। संवत् ११८८ की माघ सुदी ११ के दिन अजित नाम के एक गृहस्थ ने शांतिनाथ की मूर्त्ति बनायी और ब्राह्मी गच्छीय देवाचार्य ने उसकी प्रतिष्ठा की। उक्त मन्दिर में श्री आदिनाथ भगवान की मूर्त्ति के नीचे पद्मासन के ऊपर एक लेख खुदा हुआ है जिसका सार यह है "संवत् ११७८ की फाल्गुन सुदी ११ शनीवार को पाली के वीरनाथ के महान् मन्दिर में उद्योदनाचार्य के शिष्य महेश्वराचार्य्य और उनके शिष्य देवाचार्य्य के साहार नामक श्रावक के दो पौत्र देवचन्द्र तथा हरिश्चन्द्र ने मिल कर देवचन्द्र की भार्य्या वसुंधरी के पुण्यार्थ ऋषभदेव तीर्थङ्कर की प्रतिमा निर्माण करवाई। इसके अतिरिक्त इस मन्दिर के मुख्य गर्भागार की वेदिका पर विराजमान तीन प्रतिमाओं पर तीन लेख खुदे हुए हैं। ये लेख संवत् १६८६ की वेशाख सुदी ८ के हैं। पहिले और अंतिम लेख में जो कुछ लिखा गया है उसका सारांश यह है कि "जब महाराजाधिराज गजसिंहजी जोधपुर में राज्य करते थे और महाराज कुमार अमरसिंहजी युवराज पद भोग रहे थे, और जब उनका कृपा पात्र चौहान वंशीय जगन्नाथ पालीनगर की हुकूमत कर रहा था, उस समय उक्त नगर के निवासी श्रीमाली जाति के सा डूँगर तथा भाखर नाम के दो भाइयों ने अपने द्रव्य से नोलखा नामक मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया और उसमें पार्श्वनाथ तथा सुपार्श्वनाथ की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित कीं।"

पाली नगर में "लोढ़ा रो वास" एक मोहल्ला है, उसमें शांतिनाथ के मन्दिर की मूल नायकजी की प्रतिमा पर एक लेख खुदा हुआ है। उक्त लेख से यह ज्ञात होता है कि उक्त मूर्तियों की प्रतिष्ठा कराने वाले डूँगर और भाखर दोनों भाई थे। ये ओसवाल जाति के थे, और उनका वंश श्री श्रीमाल तथा गौत्र

चंडालिया था। इन्होंने ही, जैसा कि ऊपर कहा गया है, पाली के नौलखा मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया था।

इन सब लेखों से यह स्पष्टतया प्रतीत होता है कि पाली का नवलखा मन्दिर अत्यन्त प्राचीन है। मूल में वह महावीरजी का मन्दिर कहलाता था पर पीछे से नवलखा नामक कुटुम्ब ने उसका जीर्णोद्धार करवाया, इससे वह नवलखा प्रासाद के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अन्त में डूँगर, भाखर नामक ओसवाल बन्धुओं ने उसका पुनरुद्धार करवाकर उसमें मूल नायक के रूप में पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा पधराई।

गोड़ी पार्श्वनाथ का मन्दिर

गोड़ी पार्श्वनाथजी का मन्दिर बड़ा ही प्रसिद्ध मन्दिर है। यह मन्दिर तेरहवीं सदी का बना हुआ है। इसकी प्रतिष्ठा करने वाले विजयदेव सूरि नाम के जैनाचार्य्य थे। मेड़ता नगर निवासी ओसवाल जाति के कुहाड़ा गौत्र वाले साह हरपा तथा उनकी भार्य्या जयवन्तदे के पुत्र जसवन्त ने उक्त मूर्ति निर्माण करवाई थी।

वेलार के जैन मन्दिर

मारवाड़ राज्य के देसूरी प्रान्त के प्रसिद्ध नगर वाणेराव के पास वेलार नाम का एक गाँव है। वहाँ भगवान आदिनाथ का एक प्राचीन मन्दिर है। इस मन्दिर में ५ लेख मिले हैं जो महत्व के हैं। प्रथम लेख संवत् १२६५ के फाल्गुन वदी ७ का है, उस से मालूम होता है कि धांधलदेव के राज्य के समय में नाणकीय गच्छ के आचार्य्य शांतिसूरि ने वधिलदे[1] के चैत्य में रामा और गोसा ने रंग मण्डप बनाया। रामा यह धर्कट[2] वंश के ओसवाल श्रावक परिवार के पार्श्व नामक पुरुष का पुत्र था। गोसा अथवा गोसाक यह आसदेव का पुत्र थांथा का पुत्र था।

मेड़ता के मन्दिर

मेड़ता मारवाड़ का अत्यन्त प्राचीन और प्रख्यात् नगर है। प्राचीन काल में यह नगर अत्यन्त समृद्धिशाली था। अकबर जहांगीर और शाहजहां बादशाहों के राज्य काल में यहां जैन कौम की बहुत

(१) वधिलदे यह वेलार का प्राचीन नाम है।

(२) यह ओसवाल जाति का एक गौत्र है। इस वक्त इस धरकट गौत्र का रूप बदल कर धाकड़ हो गया है। मारवाड़ में इस गौत्र के बहुत से घर हैं।

बड़ी आबादी थी। यहां पर कई लक्षाधीश और कोट्याधीश जैन गृहस्थ थे। तपेगच्छ और खरतरगच्छ का यहां बड़ा प्राबल्य था। तपेगच्छ के सुप्रख्यात् आचार्य्य हरिविजयसूरि, विजयसेन और विजयदेव तथा खरतरगच्छ के जिनचन्द्र, जिनसिंघ और जिनराज आदि आचार्य्यों ने यहां पर कई चातुर्मास किये। इस नगर में हाल में १२ जैन मन्दिर हैं। इन मन्दिरों की कई प्रतिमाओं की वेदियों पर कई लेख खुदे हुए हैं। इन लेखों में से पहले तीन लेख वहां के नये मन्दिर की प्रतिमा के ऊपर खुदे हुए हैं। उनमें से एक लेख संवत् १५६९ का है। उससे मालूम होता है कि स्तम्भ तीर्थ (खम्भात) के ओसवाल जाति के शाह जीरागजी ने अपने कुटुम्ब के साथ सुमतिनाथजी की प्रतिमा पधराई। इसकी प्रतिष्ठा तपेगच्छ के सुमति साधुसूरि के पट्टधर श्रीहेमविमलसूरि थे। इनके साथ महोपाध्याय अनन्त हंसगणि आदि का शिष्य परिवार था।

दूसरा लेख संवत् १५०७ की फाल्गुन बुदी ३ बुधवार का है। उससे मालूम होता है कि ओसवाल जाति के बोहरा गौत्र के एक सज्जन ने अपने पिता के कल्याणार्थ शन्तिनाथ की प्रतिमा बनवाई और खरतरगच्छ के श्री जिनसागरसूरि से उसकी प्रतिष्ठा करवाई।

इस नगर में 'चौपड़ों का मन्दिर' नामक एक देवालय है जिसकी प्रतिमाओं पर कुछ लेख खुदे हुए हैं। एक लेख संवत् १६७१ की ज्येष्ठ वदी पंचमी का है। उससे मालूम होता है कि उस समय हिन्दुस्थान पर मुगल सम्राट् जहांगीर राज्य करता था और शाहज़ादा शाहजहां युवराज पद पर था। ओसवाल जाति के गणधर चौपड़ा गौत्र के सिंघवी आसकरण ने अपने बनाये हुए संगमरमर के पत्थर के सुन्दर बिहार में तीर्थङ्कर शान्तिनाथजी की मूर्ति की स्थापना की और उसकी प्रतिष्ठा बृहद् खरतरगच्छ के आचार्य्य जिनराजसूरि ने की। इस लेख में उक्त सिंघवी आसकणजी के पूर्वजों तथा कुटुम्बियों का वंश वृक्ष भी दिया हुआ है। इन्हीं सिंघवी आसकरणजी ने आबू और शत्रुंजय के लिये संघ निकाले थे जिनके कारण इन्हें संघपति का पद प्राप्त हुआ था। इन्होंने जिनसिंहसूरि की आचार्य पदवी के उपलक्ष्य में नन्दी महोत्सव किया था। *

इसी प्रकार इन्होंने और भी कई धार्मिक कार्य्य किये। इसी लेख में प्रतिष्ठाकर्त्ता आचार्य्य की वंशावली भी दी गई है जिसमें प्रथम जिनचन्द्रसूरि का नाम है। ये वे ही जिनचन्द्रसूरि हैं जिन्होंने सम्राट् अकबर को प्रतिबोध दिया था और उक्त सम्राट् ने उन्हें "युग प्रधान" की पदवी प्रदान की थी। उनके पीछे जिनसिंहसूरि का नाम दिया गया है। इन्होंने काश्मीर देश में प्रवास किया था। इतना

* क्षमाकल्याण गणि की खरतरगच्छ पट्टावली के अनुसार यह महोत्सव संवत् १६७४ की फाल्गुन सुदी ७ को किया गया था।

ही नहीं, उन्होंने ठेठ गजनी तक जैन धर्म के महान् सिद्धान्त-जीव दया-का प्रचार किया था। बादशाह जहांगीर ने उन्हें "युग प्रधान" की पदवी समर्पण की थी।

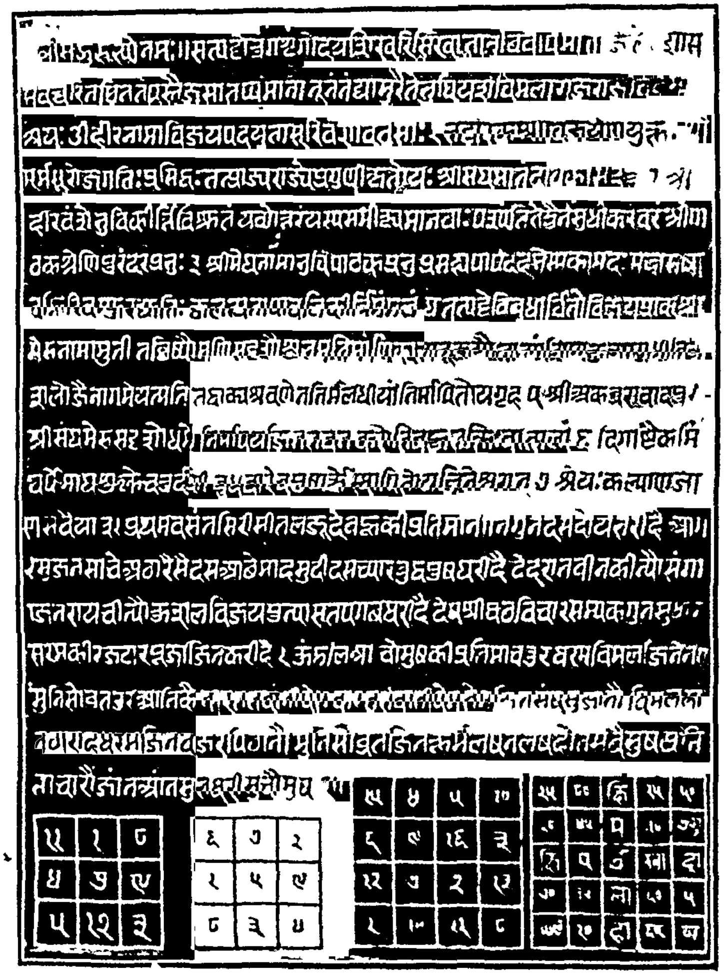
इस नगर में लोढ़ों का एक मन्दिर है जिसमें चिंतामणि पार्श्वनाथ की प्रतिमा है। उस प्रतिमा पर संवत् १६६९ की माघ सुदी ५ शुक्रवार का एक लेख खुदा हुआ है। उससे ज्ञात होता है कि महाराजाधिराज सूर्यसिंहजी के राज्यकाल में ओसवाल जाति के लोढ़ा गौत्रीय शाह रायमल के पुत्र लखा ने पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा तैयार करवाई तथा खरतरगच्छ आदि शाखा वाले जिनसिंहसूरि के शिष्य जिनचन्द्रसूरि ने उसकी प्रतिष्ठा की। इस प्रकार वहाँ के कई मन्दिरों की कई मूर्तियों पर अनेक लेख हैं उन सब का स्थानाभाव के कारण हम वर्णन नहीं कर सकते। हम सिर्फ एक दो खास २ लेखों के सम्बन्ध में ही कुछ प्रकाश डालना चाहते हैं।

मेड़ते के नये मन्दिर की मूर्ति पर जो लेख है उसमें कुछ गड़बड़ हो गई है। आरम्भ की चार पंक्तियों के साथ अन्त की चार पंक्तियों का बराबर सम्बन्ध नहीं मिलता। अनुमान किया जाता है कि कि इसमें जुदे २ लेखों का सम्मिश्रण हो गया है। पर इसके पिछले भाग में जिनचन्द्रसूरि का वर्णन है जिसमें कहा गया बादशाह अकबर ने उक्त सूरिजी को "युग प्रधान" की पदवी प्रदान की थी। उनके कहने से बादशाह ने प्रतिवर्ष आषाढ़मास के शुक्ल पक्ष के आखिरी आठ दिनों में जीव हिंसा न करने का आदेश प्रसारित किया था। इतना ही नहीं स्तंम्भन तीर्थ (खम्भात) के सागर में मछली मारने की भी सख्त मनाई कर दी थी। शत्रुंजय तीर्थ का कर बंद कर दिया गया था। सब स्थानों में गौरक्षा करने की आज्ञा प्रसारित की गई थी।

फलौदी पार्श्वनाथ का जैन मन्दिर

मारवाड़ का सुप्रख्यात् तीर्थ फलौदी पार्श्वनाथ का नाम सारे जैन जगत् में प्रख्यात् है। यहां पर बड़ा ही विशाल, भव्य और सुन्दर जैन मन्दिर है। यहां पर प्रति वर्ष मेला लगता है। तपेगच्छ की पट्टावली के अनुसार सुप्रसिद्ध आचार्य्य देवसूरिजी ने विक्रम संवत् १२०४ में इस मन्दिर की प्रतिष्ठा की थी। इस मन्दिर के द्वार के दोनों बाजुओं पर दो लेख खुदे हुए हैं। पहला लेख संवत् १२२१ के मार्गशीर्ष ६ का है, जिससे ज्ञात होता है कि पोरवाल जाति रांपिमुरसी और भं० दशाद ने मिल कर इस मन्दिर को जरी से भरा हुआ चन्दरवा चढ़ाया।

दूसरा लेख तीन श्लोकों में समाप्त हुआ है। उससे ज्ञात होता है कि श्रेष्ठी (सेठ) मुनिचन्द्र ने फलौदी पार्श्वनाथ के मन्दिर में एक अद्भुत् उत्तानपट्ट बनवाया और इसने नरवर गाँव के मन्दिर में सुंदर



आगरा मन्दिर प्रशस्ति

विक्रम सम्वत् १८१८ (ईस्वी सन् १७६१)

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

मण्डप तैयार करवाया और अजमेर के महावीर स्वामी के शिखर वाले चौबीस मन्दिर (छोटे मन्दिर) बनवाये।

जस्सोल का जैन मंदिर

जोधपुर राज्य में जस्सोल नाम का एक ग्राम है। वहां शांतिनाथजी का एक प्राचीन मन्दिर है। इसमें दो लेख खुदे हुए हैं। उनमें पहला लेख सं० १२४६ को कार्तिक बदी २ का है, जिससे ज्ञात होता है कि श्री देवाचार्य्य (वादीदेवसूरि) के गच्छ वाले खेट गाँव के महामन्दिर में श्रेष्ठी सहदेव के पुत्र सोनीगेय ने स्तम्भयुग अर्थात् दो थंभे बनवाये। उक्त लेख से यह प्रतीत होता है कि जस्सोल का पुराना नाम खेड़ (खेट-संस्कृत में) था तथा उक्त मन्दिर मूल में महावीर स्वामी का था जो वर्तमान में शान्तिनाथजी के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है।

झाड़ोली का जैन मंदिर

यह गाँव सिरोही से १४ माइल की दूरी पर और पींडवाड़ा स्टेशन से २ माइल वायव्य कोण में है। यहां पर एक प्राचीन जैन मन्दिर है जो आज कल शान्तिनाथ के नाम से प्रसिद्ध है। यह मन्दिर अन्य जैन मन्दिरों की तरह एक कम्पाउण्ड से घिरा हुआ है और उसके आस पास देव कुलिकाएँ तथा परसालें हैं। आगे के भाग के देवगृह में एक बड़ी शिला जड़ी हुई है जिस पर एक लेख खुदा हुआ है। यह लेख संवत् १२५५ की आसोज वदी ७ बुधवार का है। इस लेख से पाया जाता है कि परमार राजा धारावर्ष की रानी शृंगारदेवी ने उक्त मन्दिर को एक वाड़ी भेंट की थी। इस देवालय के अन्दर का भाग बड़ा ही सुन्दर और नयन-मनोहर है। इसके बाहर का द्वार उदयपुर राज्य के करेड़ा गाँव के पार्श्वनाथ के मन्दिर के समान तथा उसके स्तम्भ और उसके कमान आबू के विमल शाह के देवालय की तरह है।

इसके आगे परसाल में एक दूसरा शिला लेख है जो संवत् १२३६ की फाल्गुन वदी चतुर्थी का है। इसमें श्री देवचन्द्रसूरि द्वारा की गई ऋषभदेव की प्रतिमा की प्रतिष्ठा का उल्लेख है। इसी गाँव के बीच में एक सुन्दर पुरानी बावड़ी है जिसमें वि० संवत् १२४२ का एक टूटा हुआ लेख है। इसमें उक्त परमार धारावर्ष की पटरानी गीगादेवी का नाम है।

वासाका जैन मन्दिर

इस मन्दिर के विषय में सुप्रख्यात पुरातत्वविद् राय बहादुर महामहोपाध्याय पं० गौरीशङ्करजी ओझा लिखते हैं :—

"सिरोही राज्य के वासा से २ मील की दूरी पर कालगरा नामक एक गांव था तथा वहाँ पर एक पार्श्वनाथ का मन्दिर भी था। परन्तु अब उस गांव और मन्दिर का कुछ भी अंश नहीं रहा। केवल कहीं-कहीं घरों के निशान मात्र पाये जाते हैं। वहां से विक्रमी सम्वत १३०० (ईस्वी सन् १२४३) का एक शिलालेख मिला है, जिससे पाया जाता है, कि उक्त सम्वत् में चन्द्रावती का राजा आल्हणसिंह था"। उक्त गांव तथा मन्दिर का पता भी उसी लेख से चलता है।"

कायंद्रा का जैन मन्दिर

सिरोही राज्य के कीवरली के स्टेशन से करीब चार माइल की दूरी पर कायन्द्रा नामक गांव है। यह एक अत्यन्त प्राचीन स्थान है। शिलालेखों में इसे कासहृद नाम से सम्बोधित किया है। इस ग्राम के भीतर एक प्राचीन जैन मन्दिर है जिसका थोड़े वर्षों पहले जीर्णोद्धार हुआ था। उसमें मुख्य मन्दिर के चौतरफ के छोटे-छोटे जिनालयों में से एक के द्वार पर वि० सं० १०९१ (ई० सन् १०३४) का लेख है। यहां पर एक दूसरा भी जैन मन्दिर था जिसके पत्थर आदि यहां से लेजाकर रोहेड़ा के नवीन बने हुए जैन मन्दिर में लगा दिये हैं। यह मन्दिर भी ओसवालों का बनाया हुआ है।

वैराट के जैन मन्दिर

जयपुर राज्य में वैराट स्थान अत्यन्त प्राचीन है, जहाँ पर पाण्डवों ने अपने अज्ञातवास के दिन विताये थे। यहाँ पर अशोक और उससे भी पहले के सिक्के पाये गये हैं। पुरातत्ववेत्ताओं ने अनुसंधान द्वारा यह निश्चित किया है कि यह नगर प्राचीन मत्स्यदेश की राजधानी था। ईसवी सन् ६३४ में जब प्रसिद्ध चीनी यात्री हुएनसांग यहां आया था तो उसे यहाँ आठ बौद्ध मठ (Buddhist Monasteries) मिले थे। यहीं पर सम्राट् अशोक ने बौद्ध साधुओं के लिए आदेश निकाला था। यह शिलालेख आज भी बंगाल की ऐशियाटिक सोसाइटी के दफ्तर में मौजूद है। ईस्वी सन् की ११ वीं शताब्दी में महम्मद गज़नवी ने वैराट पर आक्रमण किया जिसका वर्णन आइने अकबरी में किया गया है।

इस नगर में पुरातत्व की दृष्टि से जो वस्तुएँ देखने योग्य हैं उनमें पार्श्वनाथ का मन्दिर और भीम की डूँगरी विशेष उल्लेखनीय है। पार्श्वनाथ का मन्दिर हाल में दिगम्बर जैनियों के हाथ में है पर इस मन्दिर के लेखों से यह स्पष्टतया प्रकट होता है कि यह मंदिर मूलतः श्वेताम्बर सम्प्रदाय वालों का था। इस देवालय के नजदीक के कम्पाउण्ड की एक भींत में वि० संवत् १६४४ (शक सं० १५०९, ई० सन् १५८७) का एक लेख खुदा हुआ है। उस समय भारत में सम्राट् अकबर राज्य करते थे और जैनमुनि हीरविजयसूरि तत्कालीन प्रसिद्ध जैनाचार्य्य थे। सम्राट् अकबर ने वैराट में इन्द्रराज नामका एक अधिकारी नियुक्त किया

था। वह जाति का श्रीमाली था। यह भी ज्ञात होता है कि सम्राट् अकबर के वजीर टोडरमल ने पहले इसके तावे में और भी गांव दिये थे।

इसी इन्द्रराज ने इस मन्दिर को बनवाया और इसका नाम महोदयप्रासाद या इन्द्रविहार रक्खा। इस मन्दिर की एक शिला पर चालीस पंक्ति का एक लेख है जिसकी भाषा गद्यात्मक संस्कृत है। इस लेख में सम्राट् अकबर की बड़ी प्रशंसा की गई है। इसमें हीरविजयसूरि और सम्राट् की मुलाक़ात का तथा सम्राट् के जीव रक्षा सम्बन्धी फरमानों का उल्लेख भी किया गया है।

इसके आगे चल कर वैराट नगर के तत्कालीन अधिकारी इन्द्रराज तथा उसके कुटुम्ब का व इसके द्वारा बनाये गये मन्दिर का उल्लेख किया गया है।

हीरविजयसूरि के जीवन सम्बन्धी लिखे हुए प्रत्येक ग्रन्थ में इन्द्रराज तथा उसके द्वारा किये गये प्रतिष्ठा महोत्सव का उल्लेख किया गया है।

पंडित देवविमल गणि रचित हरिसौभाग्य महाकाव्य के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उक्त आचार्य्यवर्य्य अकबर बादशाह की मुलाकात लेने के बाद जब आगरा से वापस गुजरात जा रहे थे तब संवत् १६४३ में उन्होंने नागोर में चातुर्मास किया था। चातुर्मास समाप्त होने पर वे बिहार करके पीपाड़ नामक गांव में आये। वहाँ वैराट नगर से इन्द्रराज के प्रधान पुरुष आपके स्वागत के लिए उपस्थित हुए तथा आपसे इन्द्रराज द्वारा बनाये गये वैराट नगर के जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा करने की प्रार्थना की। इस पर खास सूरिजी महाराज ने तो वहाँ जाने से इंकार किया पर उन्होंने अपने प्रभावशाली शिष्य महोपाध्याय कल्याणविजयजी को वैराट जाने की आज्ञा दी। कहना न होगा कि उक्त कल्याणविजयजी अपने शिष्य परिवार सहित पीपाड़ से बिहार कर वैराट पधारे और उन्होंने इन्द्रराज के मन्दिर की प्रतिष्ठा की। यह प्रतिष्ठा महोत्सव बड़े धूमधाम के साथ हुआ। हाथी, घोड़ा आदि का बड़ा भारी लवाजमा इस उत्सव में मौजूद था। इस समय इन्द्रराज ने गरीबों को बहुत दान दिया और लगभग ४००००) चालीस हजार रुपया इस महोत्सव में खर्च किया।

हरिविजयसूरि के पट्टधर आचार्य्य विजयसेन के परमभक्त खम्भात निवासी कवि ऋषभदास ने भी 'हरिविजयसूरी रास' नामक ग्रन्थ में इस प्रतिष्ठा महोत्सव का उल्लेख किया है।

महोपाध्याय कल्याणविजयजी के शिष्य जयविजयजी ने संवत् १६५५ में 'कल्याणविजय रास' नामक ग्रन्थ रचा था। उसमें भी उन्होंने उक्त प्रतिष्ठा महोत्सव का सविस्तार वर्णन किया है।

उपरोक्त विवरण से यह स्पष्टतः प्रगट होता है कि वैराट् का उक्त मन्दिर दिगम्बर नहीं वरन् श्वेताम्बर है, तथा किसी प्रभाव विशेष से वह दिगम्बरियों के अधिकार में चला गया है।

गाँधाणी का प्राचीन जैनमंदिर

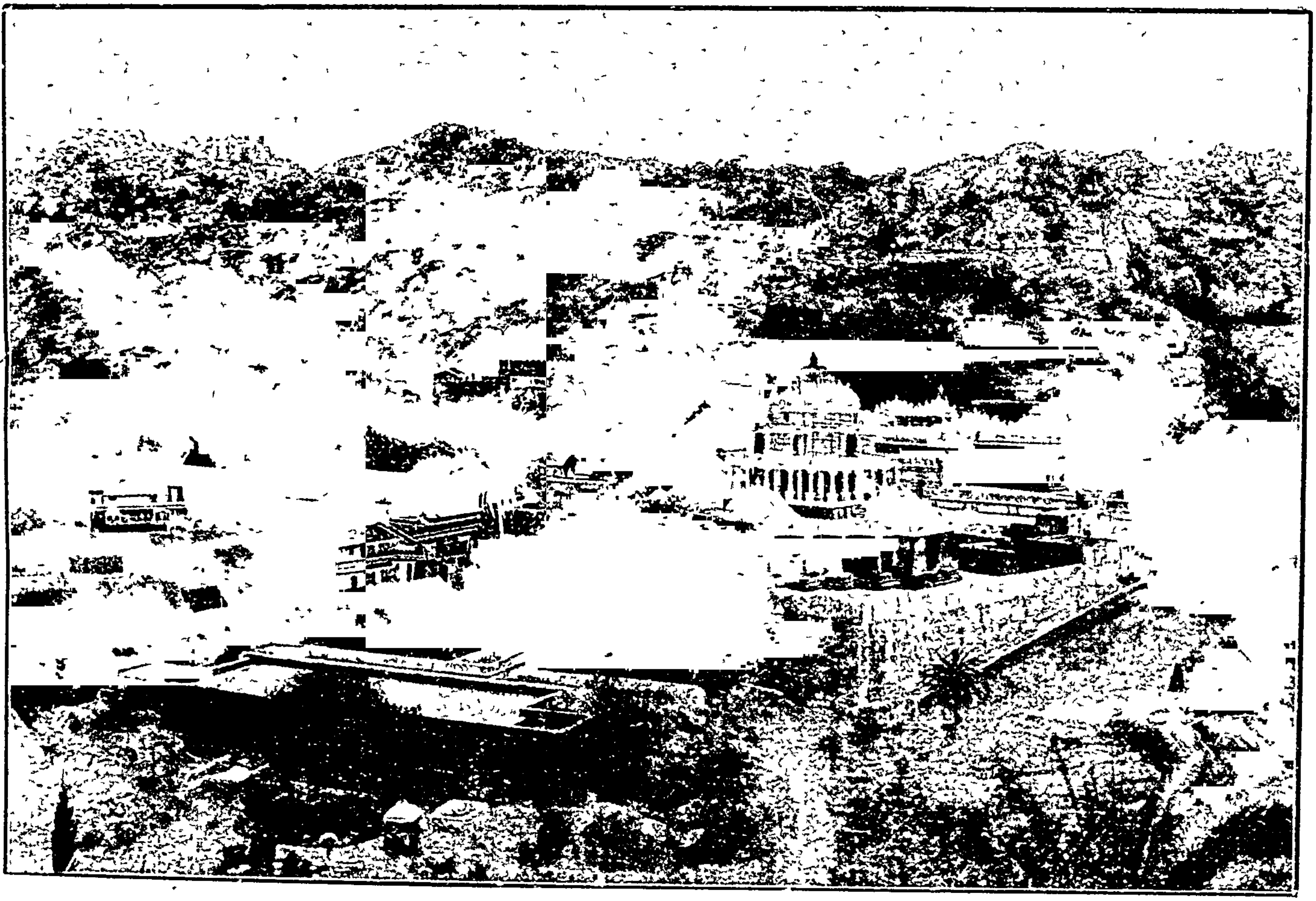
गाँधाणी ग्राम जोधपुर से उत्तर दिशा में ९ कोस पर है, वहाँ के तालाब पर एक प्राचीन जैन मंदिर है, उक्त मंदिर में एक सर्व धातु की श्री आदिनाथ भगवान की मूर्ति है, जिसके पृष्ठभाग पर एक लेख खुदा हुआ है। उक्त लेख का संवत् ९३७ आषाढ़ मास है। इसमें उद्योतनसूरि का उल्लेख आया है, जिसमें कहा गया है कि उन्होंने उक्त संवत् में आचार्य पद को प्राप्त किया। पट्टावली में इन सूरिजी के स्वर्गवास का संवत् ९९४ मिलता है। इस लेख में किसी गच्छ विशेष का उल्लेख नहीं है, इससे यह पाया जाता है कि विक्रम की दसवीं सदी में किसी प्रकार का गच्छ भेद नहीं था। ऐतिहासिक दृष्टि से उक्त लेख बड़े महत्व का है।

चित्तौड़ की श्रृंगार चावड़ी

राजस्थान के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल चित्तौड़ के किले में श्रृंगार चावड़ी नामक एक जैन मंदिर है। चित्तौड़ के किले में जो प्रसिद्ध स्थान है उनमें इसकी गणना है। महामति टॉड से लगाकर आज तक जिन २ पुरातत्व वेत्ताओं ने इस किले का वर्णन किया है, उनमें इस मंदिर का भी उल्लेख है। आर्क्यालॉजिकल सर्वे ऑफ़ वेस्टर्न सर्कल के सुपरिन्टेन्डेन्ट मि० हेवर कॉउसेन्स अपनी ईसवी सन् १९०४ की प्रोग्रेस रिपोर्ट में इस मन्दिर के विषय में लिखते हैं।

"श्रृंगार चावड़ी नाम का एक पश्चिमाभिमुख जैन देवालय है। उसके फर्श के मध्य भाग में एक ऊँचा चौरस चौंतरा बना हुआ है, और उसके चारों कोनों में चार खम्भे हैं। ये खम्भे ऊपर के गुम्मज को सम्भाले हुए हैं। इसके नीचे चौमुख प्रतिमा विराजमान है। महामति टॉड साहब को इसी मंदिर में एक लेख मिला था जिसमें लिखा था कि राणा कुम्भ के जैन खजाँची ने इस मन्दिर को बनवाया था।"

यह जैन मंदिर ई० सन् ११५० के लगभग का मालूम होता है।



गिरनार पर्वत

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

कोरटा तीर्थ

कोरटा का दूसरा नाम कोरंट नगर तथा कोरट है। यह कसबा जोधपुर रियासत के बाली परगने में राजपूताना मालवा रेलवे के एरनपुरा स्टेशन से १२ माइल पश्चिम में आबाद है। इस कसबे के चारों ओर प्राचीन मकानों के खँडहर पड़े हुए हैं। उन्हें देखने से अनुमान किया जा सकता है कि किसी समय यह नगर बड़ा शहर होगा। इस नगर से आधा मील की दूरी पर भगवान महावीर स्वामी का एक भव्य मन्दिर है, जिसके चारों ओर एक पक्का कोट बना हुआ है और इसके भीतरी दैलान में बड़ा मजबूत तलघर है। यह तलघर बहुत ही प्राचीन प्रतीत होता है।

इस अति प्राचीन मन्दिर का निर्माण तथा प्रतिष्ठा श्री रत्नप्रभाचार्य्य द्वारा हुई है, जैसा कि कल्पद्रुमकलिका टीका के स्थविरावली अधिकार में लिखा है,

" उपकेश वंश गच्छे श्रीरत्न प्रभु सूरिः येन उसियनगरे कोरंटनगरे च समकालं प्रतिष्ठा कृता रूप व्दय कारेणन चमत्कारश्च दर्शितः "

अर्थात् उपकेश वंश गच्छीय श्रीरत्न प्रभाचार्य्य हुए जिन्होंने ओसियां और कोरंटक (कोरटा) नगर में एक ही लग्न से प्रतिष्ठा की, और दो रूप करके चमत्कार दिखलाया।

धाराधिपति सुप्रख्यात महाराजा भोज की सभा के नो रत्नों में पंडित धनपाल नाम के एक सज्जन थे। बि० सं० १०८१ के आस पास उन्होंने 'सत्यपुरीय श्री महावीर उत्साह' नामक प्राकृत भाषा में एक ग्रन्थ बनाया था। उसकी तेरहवीं गाथा के प्रथम चरण में 'कोरिंट-सिरिमाल-धार-आहुड-नराणउ' आदि पद हैं जिनमें अन्य तीर्थों के साथ साथ कोरटा तीर्थ का भी उल्लेख है। इससे यह पाया जाता है कि ग्यारहवीं शताब्दी में इस तीर्थ स्थान का अस्तित्व था। तपेगच्छ के मुनि सोमसुन्दरसूरि के समकालीन कवि मेघ ने संवत् १४९९ में तीर्थमाला नामक एक ग्रन्थ रचा जिसमें "कोरटऊँ" नामक तीर्थ का उल्लेख है! कवि शील विजयजी ने संवत् १४३६ में तीर्थ माला पर एक दूसरा ग्रन्थ बनाया जिसमें भी इस तीर्थ स्थान का विवेचन किया गया है।

इससे यह जान पड़ता है कि ग्यारहवीं शताब्दी से लगाकर अठारहवीं शताब्दी तक यहाँ अनेक साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविकाएँ यात्रा के लिए आते थे और यह स्थान उस समय में भी तीर्थ स्वरूप माना जाता था। कहने का अर्थ यह है कि यह तीर्थ प्राचीन है और इसका निर्माण, पुनरुद्धार आदि सब कार्य्य ओसवालों के द्वारा हुए हैं।

श्री पावापुरी तीर्थ

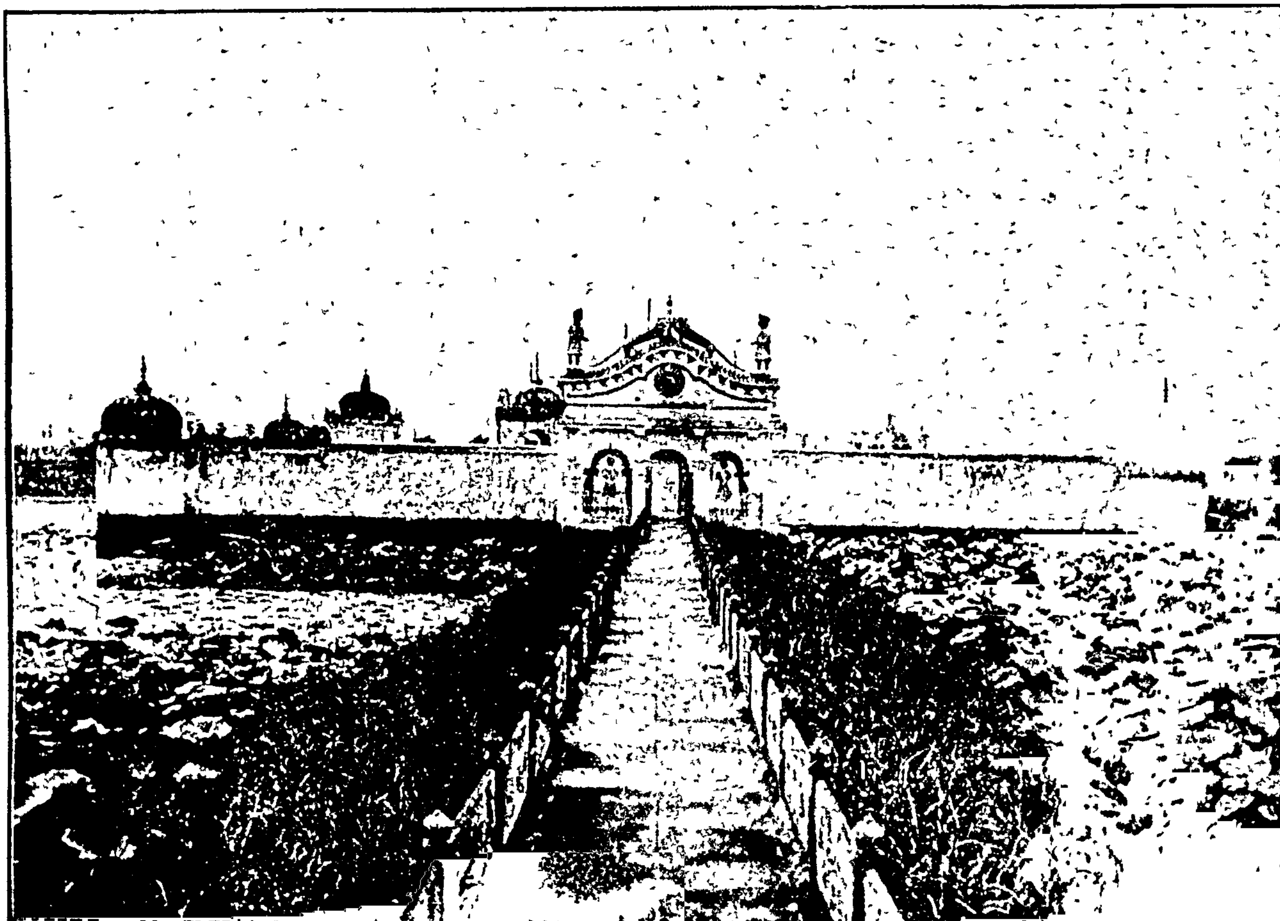
जैनियों के चौबीसवें तीर्थंङ्कर भगवान महावीर आज से लगभग २४६० वर्ष पूर्व इस परम पवित्र पांवापुरी नगरी में निर्वाण को प्राप्त हुए थे। इसलिये यह स्थान जैनियों का महा पवित्र तीर्थस्थान माना जाता है। यद्यपि इस तीर्थ स्थान की स्थापना ओसवालों की उत्पत्ति के पहले * हो चुकी थी। पर कोई एक हजार वर्ष के पूर्व से इस तीर्थ स्थान का सारा कारोबार श्वेताम्बर मूर्त्ति पूजक ओसवालों के हाथ में रहता आया है। ये ही इस पवित्र पांवापुरी तीर्थ की रक्षा व देख रेख बराबर करते आ रहे हैं। इतना ही नहीं वहाँ पर जितने मंदिर और धर्मशालाएँ हैं उनमें एक भाग को छोड़कर प्रायः सब की प्रतिष्ठा व पुनरुद्धार ओसवालों ने ही करवाये हैं। अब हम श्री पांवापुरीजी के विभिन्न जैन मंदिरों का कुछ ऐतिहासिक विवेचन करना चाहते हैं जिससे पाठकों को हमारे उक्त कथन की सचाई प्रगट हो जाय।

गांवमंदिर

यह मंदिर पाँच भव्य शिखरों से सुशोभित है। विक्रम संवत् १६९८ की वैसाख सुदी पंचमी सोमवार को खरतरगच्छाचार्य श्री जिनराजसूरिजी की अध्यक्षता में विहार के श्री श्वेताम्बर श्री संघ ने इस मंदिर की प्रतिष्ठा कराई थी। उस समय कमलालाभोपाध्याय एवं पं० लब्धकीर्ति आदि कई विद्वान साधुओं की मण्डली उपस्थित थी कि जिनका उक्त मंदिर में लगी हुई प्रशस्ति में उल्लेख मिलता है। मंदिर की यह प्रशस्ति श्याम रंग की शिला पर बड़े ही सुन्दर अक्षरों में खुदी हुई है। इस प्रशस्ति की लम्बाई १३ फूट और चौड़ाई १ फूट है। सुप्रख्यात पुरातत्व विद् बाबू पूरणचन्द नाहर एम० ए० बी० एल ने इस प्रशस्ति का पुनरुद्धार किया और अपने जैन लेख संग्रह भाग प्रथम के पृष्ठ ४६ में उसे प्रकाशित किया। इसके बाद आप ही ने उक्त प्रशस्ति की शिला को बड़ी सावधानी के साथ वेदी से निकलवा कर मंदिर की दीवार पर स्थापित कर दी।

मूल मंदिर के मध्य भाग में मूलनायक श्री महावीरस्वामी की पाषाण मय मनोज्ञ मूर्त्ति विराजमान है, दाहिने तरफ श्री आदिनाथ की एवं बाई तरफ श्री शांतिनाथ की श्वेत पाषाण की मूर्तियाँ हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ कई धातु की पंच तीर्थियाँ और छोटी २ मूर्तियाँ रक्खी हुई हैं। मूल वेदी के दाहिने

* जिस समय इस तीर्थस्थान की उत्पत्ति हुई उस समय जैनियों में आज की तरह कोई भेद नहीं थे।



श्री पाँवापुरीजी का मन्दिर

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

तरफ की वेदी में संवत् १६४५ की वैशाख शुक्ला ३ गुरुवार का प्रतिष्ठित एक विशाल चरणयुग भी विराजमान है। मूल गभारे के दक्षिण की दीवाल के एक आले में संवत् १७७२ की माह सुदी १३ सोमवार की प्रतिष्ठित श्री पुण्डरीक गणधर की चरण पादुका है तथा मूल वेदी के बाईं तरफ की वेदी पर श्री वीर भगवान के ११ गणधरों की चरण पादुका खुदी हुई हैं। यह चरण पादुका मंदिर के साथ संवत् १६९२ से प्रतिष्ठित है, और इसी वेदीपर संवत् १९१० की श्री महेन्द्रसूरि द्वारा प्रतिष्ठित श्री देवर्द्धिगणि क्षमाश्रमण की पीले पाषाण की सुन्दर मूर्त्ति रक्खी हुई है। मूल मंदिर के बीच में वेदीपर एक अति भव्य चरण पादुका विराजमान है जिस पर १६९८ का लेख है।

मंदिर के चारों कोनों में चार शिखर के अधो भाग की चारों कोठरियों में कई चरण और मूर्त्तियाँ हैं। इन पर के जिन लेखों के सम्वत् पढ़े जाते हैं, उन सबों की प्रतिष्ठा का समय विक्रम की सत्रहवीं शताब्दी से वर्त्तमान शताब्दी तक पाया जाता है। इन मूर्त्तियों के अतिरिक्त उक्त मंदिर में दिक्पाल, (भैरव) शासन देवी आदि भी विराजमान हैं। प्राचीन मंदिर का सभा मण्डप संकुचित था। उसे अजीमगंज के सुप्रसिद्ध ओसवाल जमींदार बाबू निर्मल कुमारसिंहजी नौलखा ने विशाल बनवा दिया है।

जलमन्दिर

यह बड़ा ही भव्य मंदिर है। कई विद्वान यात्रियों ने अपने प्रवास वर्णन में इसके आस-पास के नयन मनोहर दृश्यों का बड़ा सुन्दर विवेचन किया है। वर्षाऋतु के प्रारंभ में जब जल से लबालब भरे हुए इस सरोवर में कमलों का विकास होता है उस समय वहाँ का दृश्य एक अनुपम शोभा को धारण करता है। यदि कोई भावुक अपनी शुद्ध भावना और आत्म चिंतवन के लिये इस जलमंदिर में जाकर अनंत के साथ तन्मय हो जाय, तो वह इस दुखमय संसार की अशांति को भूल जाता है। यह मंदिर एक सुन्दर सरोवर के बीच में बना हुआ है। उस सरोवर में सुन्दर कमल खिले हुए हैं और मत्स्यगण बड़ी निर्भयता से उसमें विचरण करते हैं।

इस मंदिर में यद्यपि कोई शिखर नहीं है पर उसका गुम्मज बहुत दूर २ तक दिखाई पड़ता है। मंदिर के भीतर कलकत्ता निवासी सेठ जीवनदासजी ओसवाल की बनाई हुई मकराणे की सुन्दर तीन वेदियाँ हैं। बीच की वेदी में श्री वीरप्रभु की प्राचीन छोटी चरण पादुका विराजमान है। इस चरण पट्ट पर कोई लेख दिखलाई नहीं पड़ता। ये चरण भी अति प्राचीन होने की वजह से घिस गये हैं। इस वेदी पर श्री महावीरस्वामी की एक धातु की मूर्त्ति रक्खी हुई है, जिसकी संवत् १२६० में आचार्य्य श्री अभयदेव-

सूरि ने प्रतिष्ठा की थी। दाहिनी वेदी पर श्री महावीर स्वामी के प्रथम गणधर श्री गौतमस्वामी की, और बाईं पर पंचम गणधर श्री सुधर्म स्वामी की चरण पादुकाएँ विराजमान हैं।

मंदिर के बाहर दोनों तरफ दो क्षेत्रपाल की मूर्त्तियाँ हैं। तथा नीचे की प्रथम प्रदक्षिणा में एक और ब्राह्मी, चन्दनादि सोलह सतियों का विशाल चरण पट और दूसरी ओर जैन मुनि श्री दीपविजयजी गणि की पादुका अवस्थित है। बाहर की प्रदक्षिणा में श्री जिनकुशलसूरिजी की पादुका है। मंदिर की उत्तर दिशा में सरोवर में उतरने के लिये सीढ़ियाँ बनी हुई हैं।

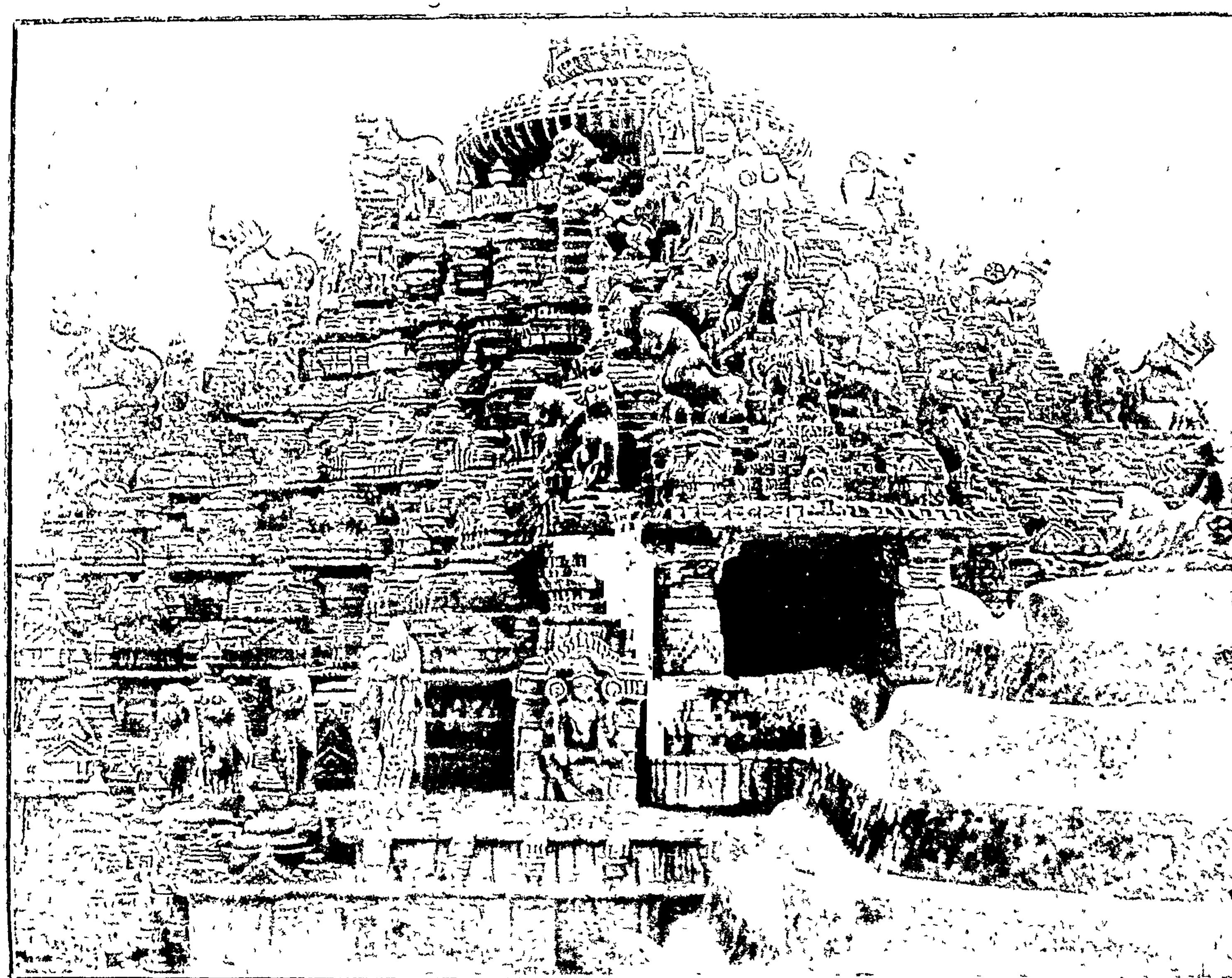
श्री समवसरणजी

श्री पांवापुरी ग्राम के पूर्व की ओर सुन्दर आम्र उद्यान के पास एक छोटा सा स्तूप बना हुआ है। कहा जाता है कि इस स्थान में भगवान महावीर का प्रचीन समवशरण था। यह स्थान थोड़ी दूरी पर होने के कारण श्वेताम्बर श्रीसंघ ने सरोवर के तट पर ही समवशरणजी की रचना की है तथा वहीं मन्दिर बनवाये हैं। गोलाकार हाते के चारों ओर रेलिंग लगी हुई है और भूमि से प्राकारमय का भाव दर्शाते हुए बीच में एक अष्टकोण सुंदराकृति मंदिर बना हुआ है। सम्वत् १९५३ में बिहार निवासी बाबू गोविन्दचन्दजी सुचंती ने श्वेताम्बर श्रीसंघ की ओर से इसकी प्रतिष्ठा करवाई थी। उक्त मंदिर के बीच में एक चतुष्कोन वेदी है जिस पर संवत् १६४५ की वैसाख शुक्लपक्ष ५ का प्रतिष्ठित श्री वीरप्रभु का चरण युगल है। इस समवशरणजी के मन्दिर के समीप पश्चिम दिशा में सुप्रसिद्ध पुरातत्व बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर की स्वर्गीय मातेश्वरी श्रीमती गुलाब कुमारी की दुमंजली धर्मशाला है। इसके उत्तर की तरफ रायबहादुर बुधसिंहजी दुधोरिया की धर्मशाला है।

बाई महताब कुँअर का मंदिर

यह मन्दिर श्री महावीर स्वामी का है। इसकी मूलवेदी पर श्री महावीर स्वामी की मूर्त्ति के के साथ और कई पाषाण व धातु की मूर्त्तियाँ है। कहा जाता है कि अजीमगंज निवासी श्रीमती महताब कुँअर बाई ने अपनी देख रेख में यह मन्दिर बनवाया और संवत् १९३२ में उसकी प्रतिष्ठा करवाई।

श्रीपांवापुरीजी का तीर्थ बड़े ही रम्य स्थान में है। यहां पर जाते ही हृदय में अनुपम शान्ति का पवित्र अनुभव होने लगता है। भगवान् महावीर की निर्वाण तिथि पर यहाँ एक धार्मिक मेला लगता है जिसमें दूर २ से सैकड़ों हजारों यात्री आते हैं। इस मेले के प्रसंग पर आस पास के गांवों के अतिरिक्त दूर २ से कुष्टादि रोगों से पीड़ित, चक्षु विहीन तथा अन्य व्याधियों से ग्रसित हजारों लोग आते



श्रीशान्तिनाथ मन्दिर जैसलमेर के शिखर का दृश्य (श्री बा० पूरणचन्दजी नाहर के सौजन्य से)

हैं। इन लोगों के ठहरने के लिये बाबू पूर्णचन्द्रजी नाहर की स्वर्गीया पत्नी श्रीमती कुन्दन कुमारी की स्मृति में एक दीनशाला बनवाई गई है, जिसका उद्‌घाटन कुछ वर्ष पूर्व आगरा के सुप्रसिद्ध देशभक्त श्रीयुत चांदमलजी वकील के कर कमलों द्वारा हुआ। आज कल इसी दीनशाला में पटना डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की तरफ से एक आयुर्वेद चिकित्सालय भी खोला गया है जहाँ से रोगियों को बिना मूल्य औषधि दी जाती है। पांवापुरी में भगवान् महावीर के निर्वाणोत्सव पर कार्त्तिक शुक्ल प्रतिपदा को बड़े धूम धाम से रथोत्सव मनाया जाता है।

चम्पापुरी

पाठक जानते हैं कि चम्पापुरी जैनियों का महा पवित्र और प्रसिद्ध तीर्थ स्थान है। जैन शास्त्रों के अनुसार यहाँ पर इनके बारहवें तीर्थङ्कर श्री वासुपूज्य स्वामी के पंच कल्याणक हुए हैं। इसके अतिरिक्त और भी कई दृष्टि से यह स्थान महत्व पूर्ण है। राजगृह के सुप्रसिद्ध श्रेणिक राजा का बेटा कोणिक, जिसे अजातशत्रु व अशोकचन्द्र भी कहते हैं, राजगृह से अपनी राजधानी उठाकर वहाँ लाया था। जैन शास्त्रों में कथित सुभद्रासती भी इसी नगर की रहनेवाली थी। भगवान महावीर ने यहाँ तीन चौमासे किये थे। उनके मुख्य श्रावकों में से कामदेव नामक श्रावक यहाँ का निवासी था। जैनागम के प्रसिद्ध दश वैकालिक सूत्र भी श्री शय्यंभयसूरि महाराज ने इसी नगर में रचा था। जैनियों के बारहवें तीर्थङ्कर श्री वासु पुज्य स्वामी का च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवल-विज्ञान और मोक्ष आदि पाँच कल्याणक इसी नगर में हुए। इस कारण यह स्थान बड़ा पवित्र समझा जाता है।

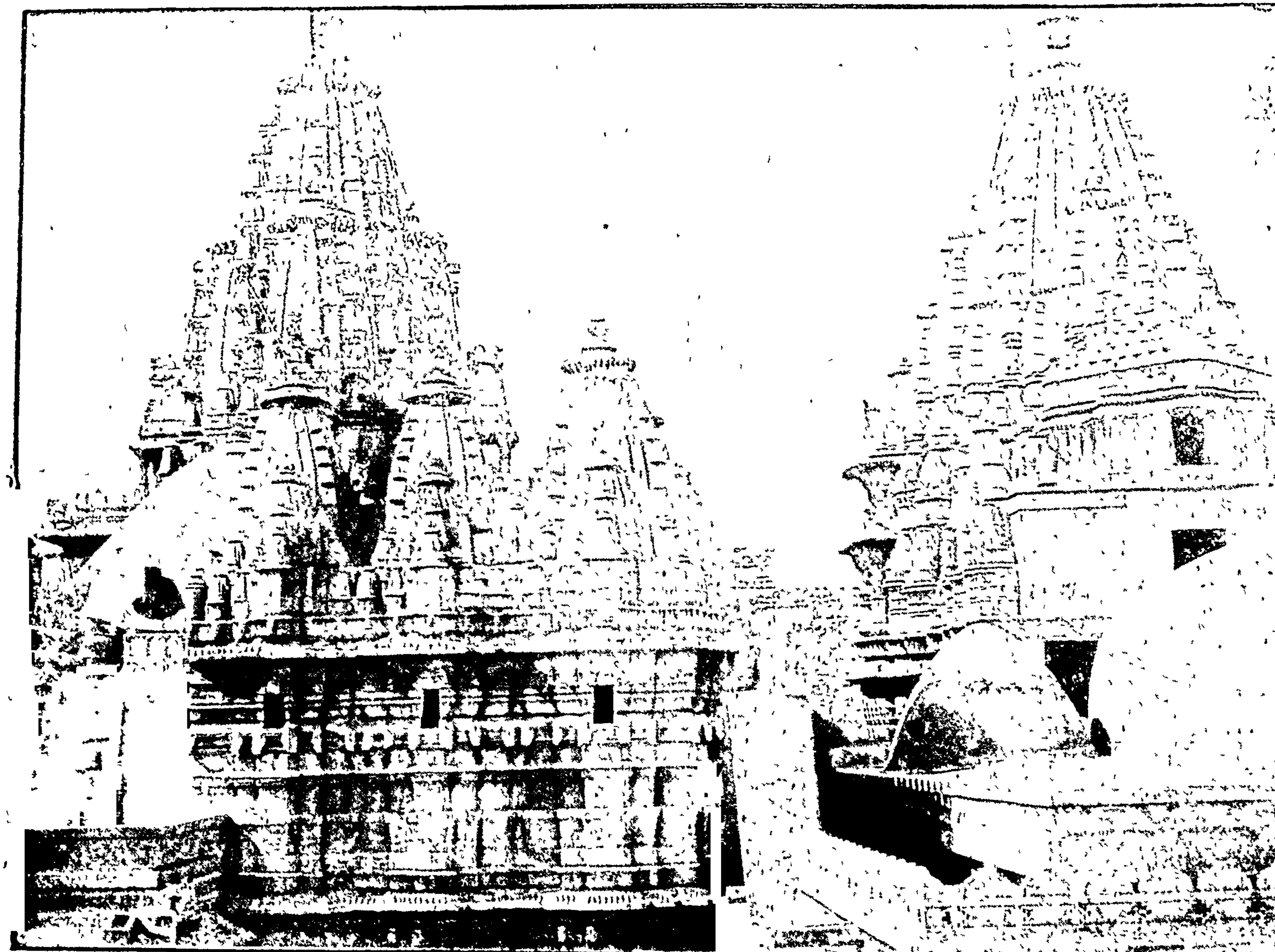
इस महा पवित्र तीर्थ स्थान में भी धार्मिक ओसवालों ने कई मन्दिर तथा बिम्ब बनवाये तथा कई चरणपादुकाओं की स्थापना की। इस सम्बन्ध के पत्थरों पर खुदे हुए कई लेख वहाँ पर मौजूद हैं। संवत् १६६८ में मुर्शिदाबाद के प्रसिद्ध जगत सेठ के पूर्वज साह हीरानंदजी ने १५ वे तीर्थङ्कर श्री धर्मनाथ स्वामी का बिम्ब स्थापित किया जिसकी प्रतिष्ठा श्री जिनचन्द्रसूरि ने की। संवत् १८२८ के बैसाख सुद ११ को तपेगच्छ के आचार्य्य श्री वीर विजयसूरि ने श्री वासु पूज्य स्वामी के बिम्ब की प्रतिष्ठा की। संवत् १८५६ की वैसाख मास की शुक्लपक्ष की तृतीया को तीर्थाधिराज चम्पापुरी में श्री वासुपूज्य स्वामी का जिन बिम्ब श्री श्वेताम्बर संघ की ओर से गणचन्द्र कुलालंकार ने स्थापति किया जिसकी प्रतिष्ठा श्री सर्व सूरि महाराज ने की। संवत् १८५६ के वैसाख मास के शुक्लपक्ष की तीज को श्री अजितनाथ स्वामी के बिम्ब की प्रतिष्ठा की गई। इसके प्रतिष्ठाचार्य्य श्री जियचन्द्र सूरि थे। इसी दिन बीकानेर निवासी कोठारी अनूपचन्द के पुत्र जेठमल ने श्री चन्द्रप्रभू के जिन बिम्ब की खरतर गच्छचार्य्य श्री जिनचन्द्र सूरि के द्वारा प्रतिष्ठा करवाई।

संवत् १८५६ की वेसाख सुदी ३ को खरतर गच्छाधिराज श्री जिनलाभसूरि पट्टलिकार ने समस्त श्री संघ के श्रेय के लिये श्री शांतिनाथ जिन विम्ब की प्रतिष्ठा की। इसीदिन श्री जिनचन्द्रसूरि द्वारा वासुपूज्य स्वामी की बिम्ब-प्रतिष्ठा कराई गई। प्रतिष्ठा का प्रबन्ध कराने वाले ओसवाल समाज के गोलेछा गौत्र के कोई सज्जन थे। इस प्रकार इसी तारीख को भगवान विमलनाथ और जिनकुशलसूरि की पादुकाओं की प्रतिष्ठा की गई।

इस प्रकार और भी विभिन्न तीर्थङ्करों के विम्ब और पादुका की प्रतिष्ठा कराये जाने के उल्लेख वहाँ के पत्थर पर खुदे हुए लेखों में पाये जाते हैं। इनमें प्रतिष्ठाचार्य्य जैन श्वेताम्बर आचार्य थे और प्रतिष्ठा के लिये धन व्यय करने वाले ओसवाल धनिक थे। इन लेखों में दूगड़ सरूपचन्द, करमचन्द, हुलासचन्द, प्रतापसिंह, राय लक्ष्मीपतसिंह बहादुर, राय धनपतसिंह बहादुर तथा कुछ ओसवाल महिलाओं के नाम हैं, जिन्होंने उक्त बिम्बों की प्रतिष्ठा करवाने में सब से अधिक भाग लिया था। बिम्बों के अतिरिक्त यहाँ की धातु की प्रतिमाओं पर भी कई लेख हैं। संवत् १५०९ के ज्येष्ठ सुदी में साहस नामक एक जैन ओसवाल श्रावक ने श्री नेमिनाथ स्वामी की प्रतिमा की प्रतिष्ठा करवाई। संवत् १५५१ में ओसवाल वंश के सिंघाड़िया गौत्र के शाह चम्पा, शाह पूजा, शाह काजा, शाह राजा, धन्ना आदि ने श्री आदिनाथ भगवान की मूर्ति की प्रतिष्ठा पूज्य श्री जिनहर्षसूरि द्वारा करवाई। इस प्रकार यहाँ की मूर्त्तियों पर और भी कई ओसवाल सज्जनों के नामों का उल्लेख मिलता है। यहाँ के कई मन्दिर भी ओसवाल सज्जनों के बनाये हुए तथा प्रतिष्ठित किये हुए हैं। कहने का अर्थ यह है कि चम्पापुरी के महा तीर्थ राज पर भी ओसवाल महानुभावों के जैन धर्म प्रेम के चिह्न स्थान २ पर दृष्टि गोचर होते हैं।

राजगृह

मगध देश में राजगृह (राजगिरी) अत्यन्त प्राचीन नगर है। बीसवें तीर्थङ्कर श्री मुनि सुव्रत स्वामी का यह जन्म स्थान बतलाया जाता है। इतना ही नहीं, उक्त तीर्थङ्कर ने यहीं दीक्षा ली थी और यहीं पर वे मोक्ष गामी हुए थे। बाइसवें तीर्थङ्कर श्री नेमिनाथ के समय में यह जरासंघ की राजधानी थी। चोवीसवें तीर्थङ्कर श्री महावीर स्वामी के समय में भी यह नगर संस्कृति और समृद्धि के ऊँचे शिखर पर चढ़ा हुआ था। भगवान बुद्धदेव की भी यह लीला भूमि थी। प्रसेनजित, उनके पुत्र श्रेणिक तथा श्रेणिक पुत्र कोणिक यहाँ के राजा थे। भगवान महावीर स्वामी ने यहाँ पर चौदह चौमासे किये। जम्बू स्वामी, धन्नासेठ तथा शालिभद्रजी आदि बड़े २ विख्यात् पुरुष यहाँ के निवासी थे। यह स्थान बहुत ही रमणीक और नयन मनोहर है। यहाँ पर जो पहाड़ हैं उनके नीचे ब्रह्म कुण्ड, सूर्य्यकुण्ड



श्रीचन्द्रप्रभु और ऋषभदेवजी का मन्दिर, जैसलमेर (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

आदि कई उष्ण कुण्ड हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ विपुलगिरी, रत्नागिरी, उदयगिरी, स्वर्णगिरी और वैभारगिरी नामक कई पर्वतमालाएँ हैं। इन पर्वतों पर बहुत से जैन मन्दिर बने हुए हैं। बहुत सी मूर्त्तियां व चरण इधर उधर विराजमान हैं।

यहाँ के पत्थर पर खुदे हुए विभिन्न लेखों के पढ़ने से ज्ञात होता है कि इस तीर्थ स्थान पर ओसवाल सज्जनों के बनाये हुए कई मन्दिर, प्रतिष्ठा करवाई हुई कई मूर्त्तियाँ, बिम्ब तथा चरण पादुका भी हैं। इन लेखों में बच्छराजजी, पद्दराजजी धर्मसिंहजी, बुलाकीदासजी, फतेचन्दजी, जगत सेठ के महताबचन्दजी आदि ओसवाल महानुभावों के नाम मिलते हैं।

कुण्डलपुर

इस नगर का आधुनिक नाम बड़गांव है। जैन शास्त्रों में इस नगर का कई जगह उल्लेख आया है। भगवान महावीर स्वामी के प्रथम गणधर श्री गोतमस्वामी का यह जन्मस्थान है। नालंद का सुप्रख्यात बौद्ध विश्वविद्यालय इसी के निकट था। इसके चारों तरफ प्राचीन कीर्तियों के चिह्न विद्यमान् हैं। सरकार के पुरातत्व विभाग की ओर से भी इसकी खुदाई हो रही है। आशा है यहां बहुत से महत्व के निशान मिलेंगे। यहां का सब से पुराना शिला लेख संवत् १४७७ का है। संवत् १६८६ के वैसाख सुदी १५ का एक दूसरा पाषाण पर खुदा हुआ लेख है जिससे मालुम होता है कि चोपड़ा गौत्र के ठाकुर विमलदास के पौत्र ठाकुर गोवर्धनदास ने यहाँ गौतम स्वामी के चरणों को प्रतिष्ठित करवाया। इस प्रकार के यहाँ पर और भी लेख हैं।

पटना (पाटलिपुत्र)

हम ऊपर लिख चुके हैं कि राजगृह के राजा श्रेणिक ने चम्पानगरी को अपनी राजधानी बनाया था। कोणिक के पुत्र राजा उदई ने पाटलिपुत्र नामक नवीन नगर बसा कर उसे अपनी राजधानी बनाई। इसके पश्चात् यहां पर नवनन्द, सम्राट चन्द्रगुप्त, सम्राट अशोक आदि बड़े २ साम्राज्याधिकारी नृपति हो गये। चाणक्य, ऊमास्वामी, भद्रबाहु, महागिरी, सहस्थि, वज्र स्वामी सरीखे महान् पुरुषों ने भी इसी नगर की शोभा को बढ़ाया था। आचार्य्य श्री स्थूलभद्र स्वामी और सेठ सुदर्शनजी का भी यही स्थान है। यहां का जैन मन्दिर बहुत जीर्ण हो गया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि यह मन्दिर ओसवालों का बनाया हुआ है।

यहां धातुओं की मूर्तियों पर कई लेख खुदे हुए हैं। इनमें पहला लेख संवत् १४८६ की वैसाख

सुदी ७ सोमवार का है। उसमें ओसवाल समाज के दूगड़ गौत्र के शाह उदयसिंह, मूला शाह, शाह॰ नगराज आदि नामों के उल्लेख हैं। दूसरा लेख संवत् १४९२ का है जिसमें ओसवाल समाज के कांकरिया गौत्र के शाह सोहड़ और उनकी भार्य्या हीरादेवी द्वारा श्री आदिनाथ बिम्ब की प्रतिष्ठा करवाये जाने का उल्लेख है। तीसरा लेख संवत् १५०८ का है इस लेख में ओसवाल वंश के शाह छेता डूंगरसिंह द्वारा श्री धर्मनाथ भगवान की बिम्ब प्रतिष्ठा करवाने का उल्लेख है। इस प्रकार यहां पर कई लेख हैं जिनमें ओसवाल सज्जनों के नामों का जगह २ पर उल्लेख किया गया है।

श्री सम्मेदशिखरजी

जैनियों का यह अत्यंत प्रख्यात तीर्थ स्थान है। क्योंकि इस महान् तीर्थराज पर उनके बीस तीर्थङ्कर निर्वाण पद को प्राप्त हुए हैं। इस पवित्र पहाड़ के बीस टोंक में से उन्नीस टोंक पर छत्रियों में चरण पादुका विराजमान है और श्री पार्श्वनाथ स्वामी की टोंक पर मन्दिर है। तलैटी के मधुवन में मंदिर और धर्मशाला बने हुए हैं। यहां से चार कोस पर ऋजुवालुका नदी बहती है जिसके समीप में श्री वीर भगवान् को केवलज्ञान हुआ था। यहां पर चरण पादुका है।

इस नदी के तट पर की छतरी पर संवत् १९३० की वैसाख शुक्ल १० का एक लेख है जिससे ज्ञात होता है कि मुर्शिदाबाद निवासी प्रतापसिंहजी और उनकी भार्य्या महताब कुँवर तथा उनके पुत्र लक्ष्मीपतसिंह बहादुर और उनके छोटे भाई धनपतसिंह बहादुर ने उक्त छतरी का जीर्णोद्धार करवाया। इसी प्रकार यहां पर तथा टोंको पर बीसों लेख हैं जिनमें ओसवाल सज्जनों के पुनरुद्धार तथा प्रतिष्ठा आदि कार्य्यों के उल्लेख हैं। यहां पर ओसवाल समाज की तरफ से बड़ी २ धर्मशालाएँ बनी हुई हैं और तीर्थ स्थान का सारा प्रबन्ध ओसवालों के हाथ में है।

कलकत्ते का जैन मन्दिर

यह जैन मंदिर नगर के उत्तर में मानिकतल्ला स्ट्रीट में है। यहाँ पर सर्क्युलर रोड से आसानी से पहुँचा जा सकता है। वास्तव में यहाँ तीन मन्दिर हैं, जिनमें मुख्य मन्दिर जैनियों के दशवें तीर्थंकर शीतलनाथजी का है। ये मन्दिर राय बद्रीदास बहादुर जौहरी द्वारा सन् १८६७ ई० में बनवाये गये थे।

टेम्पल स्ट्रीट के द्वार से घुसते ही बड़ा सुन्दर दृश्य सामने आता है। स्वर्ग सदृश भूमि पर मनोहर मन्दिर बड़ा ही भव्य मालूम पड़ता है। भारत की जैन शिल्पकला का यह ज्वलंत उदाहरण है। मन्दिर के सामने संगमरमर की सीढ़ियाँ बनी हैं और इसके तीन ओर चित्ताकर्षक बरामदे बने हुए हैं। दीवारों पर रंग बिरंगे छोटे २ पत्थर के टुकड़े जड़े हुए हैं और दालान तथा छत इस खूबी से बनाये गये हैं कि उन पर से आँख हटाने को जी नहीं चाहता। शीशे और पत्थर का काम भी उतना ही नयनाभिराम है। छत के मध्य में एक वड़ा भारी फानूस टँगा है। मंदिर के चारों तरफ सुन्दर बगीचा बना हुआ है। इसमें बढ़िया से बढ़िया फव्वारे, चबूतरे आदि बने हैं। बगीचे के उत्तर में शीशमहल है, जिसमें दीवाल, छत, फानूस, कुर्सियाँ इत्यादि सभी वस्तुएँ शीशे ही की हैं। इसके भीतर का भोजनागार सबसे अधिक देखने योग्य है। ये मन्दिर और बगीचा अवश्य ही किसी चतुर शिल्पी के कार्य हैं।

अजण्टा के जैन मन्दिर

भारत में ऐसा कौन इतिहासज्ञ होगा कि जिसने अजण्टा की ऐतिहासिक गुफा का नाम न सुना हो। इस मन्दिर में अत्यन्त प्राचीन बौद्ध मंदिर तथा तत्सम्बन्धी अनेक ऐतिहासिक चित्र हैं। सैकड़ों वर्ष हो जाने पर आज भी उनकी सुन्दरता और रंग बराबर ज्यों के त्यों बने हुए हैं। इस गुफा में जैन मन्दिर भी थे, जो अभी भग्नावस्था में हैं। इनमें से एक का फोटो ईसवी सन् १८६६ में प्रकाशित "Architecture at Ahmadabad" नामक ग्रन्थ में प्रकाशित हुआ है। यद्यपि इस मंदिर का शिखर नष्ट हो गया है पर जान पड़ता है कि वह वहुत बड़ा और मिश्र देश के सुप्रख्यात पिरामिड के आकार का था। इस मन्दिर का मण्डप अति विशाल था। इसके खम्भों पर बड़ी ही सुन्दर कारीगरी का काम हो रहा है। यह मंदिर आठवीं सदी का प्रतीत होता है।

खम्भात का पार्श्वनाथ का मन्दिर

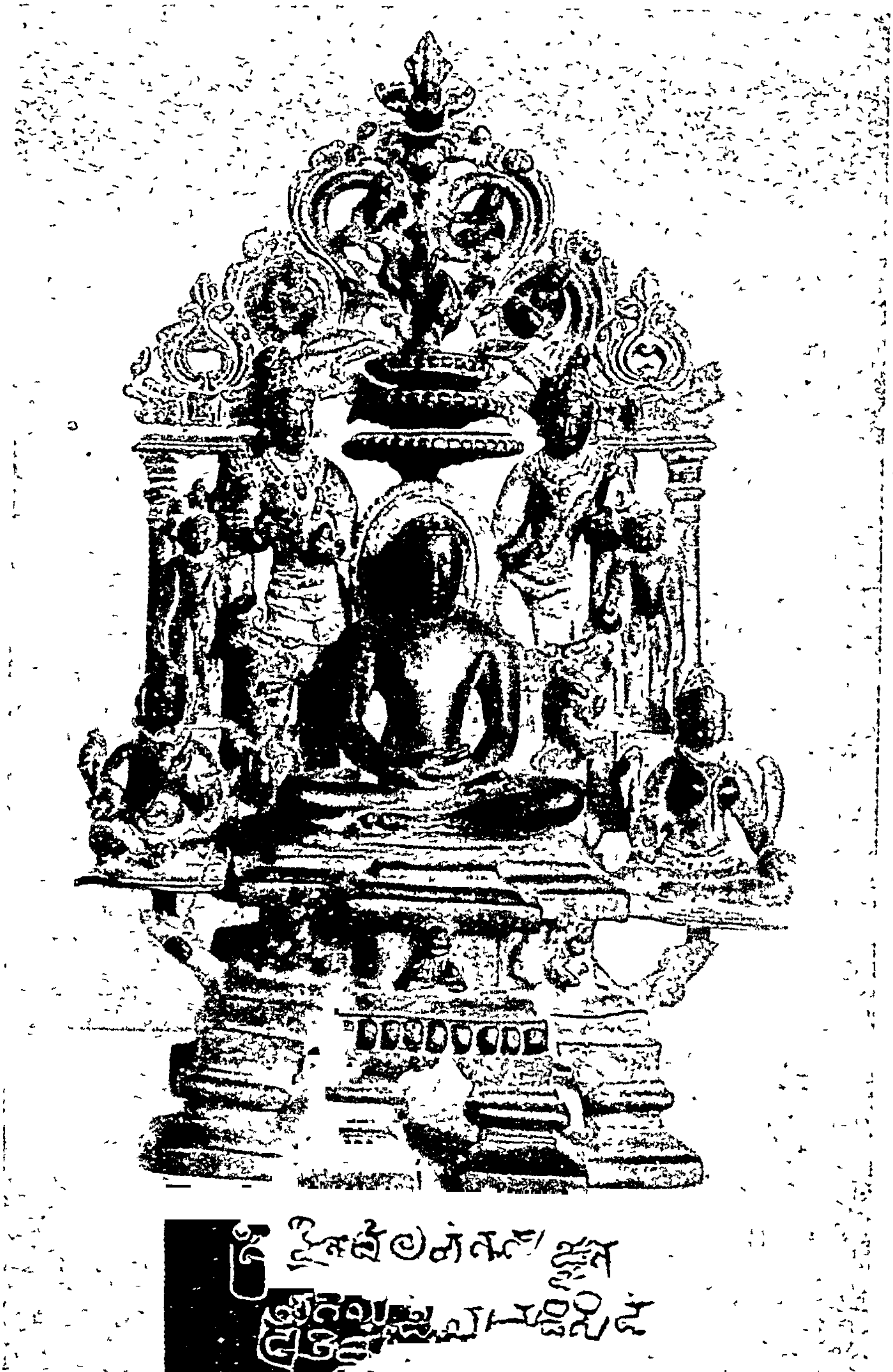
खम्भात का प्राचीन नाम स्तम्भनपुर है। वहाँ पर पार्श्वनाथ का एक प्राचीन मन्दिर है। उस मंदिर की एक शिला पर एक लेख खुदा हुआ है, जिसे बड़ौदा की सेन्ट्रल लायब्ररी के संस्कृत-साहित्य-विभाग के निरीक्षक स्वर्गीय श्री चिम्मनलाल डायाभाई दलाल एम० ए० ने प्राप्त किया था। उक्त लेख का सारांश इस प्रकार है।

संवत् १३६६ के साल में जब स्तम्भनपुर (खम्भात) में पृथ्वीतल को अपने पराक्रम से गुँजा देनेवाला अल्लाउद्दीन बादशाह का प्रतिनिधि अल्फखान राज्य करता था, उस समय जिन प्रबोधसूरि के शिष्य श्री जिनचन्द्रसूरि के उपदेश से उकेश (ओसवाल) वंशीय शाह जैसल नामक सुश्रावक ने पौषध शाला सहित अजितदेव तीर्थङ्कर का भव्य मंदिर बनवाया। शाह जैसल जैन धर्म का प्रभाविक श्रावक था। उसने बहुत से याचकों को विपुल दान देकर उनका दरिद्र नाश किया था। बड़े समारोह के साथ उसने शत्रुंजय, गिरनार आदि तीर्थों की संघ के साथ यात्रा की थी। उसने पट्टन में भगवान शाँतिनाथ का विधि-चैत्य और उसके साथ पौषधशाला बनवाई थी। उसके पिता का नाम शाह केशव था। उसने जैसलमेर में पार्श्वनाथ भगवान का सम्मेद शिखर नामक विधि-चैत्य बनवाया था।

इसी खम्भात नगर में भगवान कुंथुनाथ का जैन मंदिर है। इसमें एक शिलालेख है, जिसमें कोई साल संवत् नहीं दिया गया है। इस शिला लेख में १९ पद्य हैं। पहले पद्य में भगवान ऋषभदेव का स्तवन है। दूसरे और तीसरे में तेइसवें तीर्थङ्कर भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति है। चौथे पद्य में सामान्य रूप से सब तीर्थङ्करों की प्रशंसा है। पांचवे और छटे पद्य में चौलुक्य वंश की उत्पत्ति का वर्णन है। सातवें और आठवें पद्य में उक्त वंश के अर्णोराज राजा की प्रशंसा है। और नोवें श्लोक में अर्णोराज की सुलक्षणा देवी नामक रानी का उल्लेख है। दसवें, ग्यारहवें तथा बारहवें पद्य में उनके पुत्र लवणप्रसाद का वर्णन है। तेरहवें श्लोक में उनकी स्त्री मदनदेवी का उल्लेख है। इसके बाद के चार पद्यों में उनके पराक्रमी पुत्र वीरधवल का वर्णन है और अठारहवें श्लोक में उनकी रानी वैजलदेवी का नाम निर्देश किया गया है। उन्नीसवें काव्य में विसलदेव राजा के गुण वर्णित हैं।

इसी खम्भात नगर में चिंतामणि पार्श्वनाथ का एक प्राचीन मंदिर है। उसमें एक जगह काले पत्थर पर एक लेख खुदा हुआ है जिसका सारांश सुप्रख्यात पुरातत्वविद् मुनि जिनविजयजी ने इस प्रकार प्रगट किया है।

"प्रारंभ के चार श्लोकों में भगवान पार्श्वनाथ की स्तुति की गई है। पांचवे श्लोक में संवत्



अर्द्ध-पद्मासन मूर्ति

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

११६५ की ज्येष्ठ बदी ७ सोमवार की मिती दी गई है। शायद यह मिती मंदिर के नींव डलवाने के समय की हो। छः से १० वें श्लोक तक गुजरात के राज्यकर्त्ता चौलुक्य (चालुक्य) वंश के आखिरी राजाओं की वंशावली दी गई है जो इतिहास में बघेल वंश के नाम से प्रसिद्ध है। इसके बाद अर्णोराज और उनके वंशजों का उल्लेख है।"

खम्भात नगर में इस प्रकार के और भी जैन मंदिर हैं और उनमें शिलालेख भी हैं। लेकिन उनका विशेष ऐतिहासिक महत्व न होने से यहां पर उन्हें हम देना ठीक नहीं समझते।

क्षत्रिय कुंड

लछवाड़ ग्राम से १ कोस दक्षिण पर एक छोटे से ग्राम में यह स्थान है। श्वेताम्बर सम्प्रदाय वाले अपने चौबीसवें तीर्थङ्कर श्री महावीर स्वामी का च्यवन, जन्म तथा दीक्षा ये तीन कल्याणक इसी स्थान पर मानते हैं। वहाँ के लोग इसे "जन्मस्थान" कह कर पुकारते हैं। पहाड़ की तलहटी में २ छोटे मंदिर हैं, उनमें श्री वीरप्रभू की श्यामवर्ण की पाषाण की मूर्तियाँ हैं। पहाड़ पर के मंदिर में भी श्याम पाषाण की मूर्तियाँ हैं। मंदिर के पास ही एक प्राचीन कुंड का चिन्ह वर्तमान है। इसकी पंचतीर्थी पर एक लेख संवत् १५५२ की महा सुदी ५ का खुदा हुआ है जिसमें बारलेचा गौत्र के किसी ओसवाल सज्जन द्वारा कुंथुनाथ का बिम्ब स्थापित किये जाने का उल्लेख है।

अयोध्या के जैनमंदिर

यह अत्यंत प्राचीन नगरी है। जैन शास्त्रों में इसके महत्व का जहाँ तहाँ वर्णन किया गया है। जैनियों के प्रथम तीर्थङ्कर श्री ऋषभदेवजी के च्यवन, जन्म और दीक्षा ये तीन कल्याणक यहीं हुए। दूसरे तीर्थङ्कर श्री अजितनाथजी, चतुर्थ तीर्थंकर श्री अभिनंदनजी, पाँचवें तीर्थंकर श्री सुमतिनाथजी तथा चौदहवें तीर्थंकर श्री अनन्तनाथजी के च्यवन जन्म दीक्षा और केवल-ज्ञान ये चार कल्याणक इसी नगरी में हुए थे। श्री महावीर स्वामी के नवें गणधर श्री अचल भ्राता इसी अयोध्या नगरी के रहने वाले थे। रघुकुल तिलक श्री रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मणजी इसी नगरी के राजा थे।

इस नगरी में श्री अजितनाथजी के मंदिर की पाषाण मूर्तियों पर कई लेख खुदे हुए हैं। उनमें बहुत से तो नवीन हैं, और कुछ पंद्रहवीं सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दी के हैं। पंचतीर्थियों पर खुदा हुआ लेख संवत् १४९५ की मार्ग बदी ४ गुरुवार का है। इससे यह ज्ञात होता है कि ओसवालजाति के सुचिंती

(संचेती)-गौत्र के साहा भीकू के पुत्र साहा नान्हा ने अपने माता पिता के श्रेय के लिये श्री शांतिनाथ का विम्व स्थापित किया और उपकेश गच्छ के कक्कूदाचार्य्य ने उसकी प्रतिष्ठा की।

नवराई का जैनमंदिर

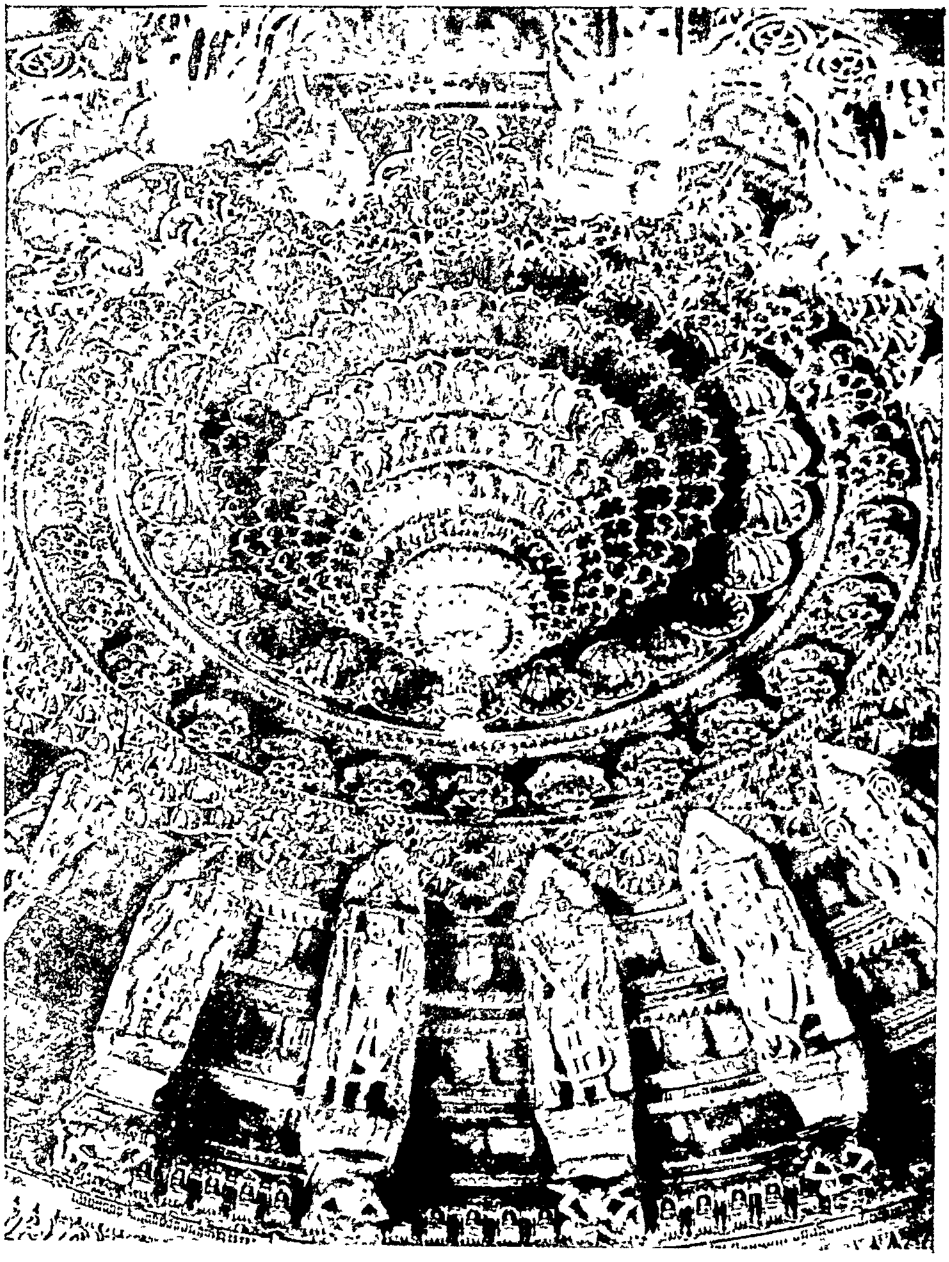
यह स्थान फैजाबाद से १० मील और सोहावल स्टेशन से अंदाज २ मील पर बसा हुआ है। यह प्राचीन तीर्थ 'रत्नपुरी' कहलाता है। यहाँ पंद्रहवें तीर्थंकर श्री धर्मनाथस्वामी का च्यवन, जन्म दीक्षा तथा केवल ज्ञान ये चार कल्याणक हुए हैं। यहाँ की पंचतीर्थियां और पाषण के चरणों व धातु तथा पाषण की मूर्तियों पर कुछ लेख खुदे हुए हैं। इनमें पुराने लेखों की संख्या बहुत कम है। एक लेख संवत् १५१२ की माघ सुदी ५ का है, जिसमें श्री सिद्धसूरि द्वारा श्री सुविधिनाथ के विम्ब के प्रतिष्ठित किये जाने का उल्लेख है। दूसरा लेख १५६७ की वैशाख सुदी १० बुधवार का है जिसमें ओसवाल जाति के हासा नामक एक सज्जन द्वारा श्री पार्श्वनाथ भगवान के विम्ब के स्थापित किये जाने का उल्लेख है। तीसरा लेख सम्वत् १६१७ की जेठ सुदी ५ का है। इसमें ओसवाल जाति के साः अमरसी के पौत्र कहाना के द्वारा पद्मप्रभुनाथ का विम्ब स्थापित किये जाने का वर्णन है और प्रतिष्ठाचार्य्य के स्थान में तपगच्छ के श्री विजयदानसूरि का नाम दिया है।

चन्द्रावती का जैन मंदिर

यह तीर्थ बनारस से ७ कोस पर गंगा किनारे अवस्थित है। जैन ग्रन्थों में लिखा है कि आठवें तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभू स्वामी का च्यवन, जन्म, दीक्षा और केवलज्ञान इसी नगरी में हुए। दुःख है कि इसमें जितने शिलालेख हैं वे सब नवीन हैं उन्नीसवीं सदी के पहले का कोई शिलालेख यहाँ नहीं मिलता।

मधुवन

यह स्थान बिहार में है तथा जैन शास्त्रों में स्थान-स्थान पर इसका उल्लेख आया है। यहाँ के जैन श्वेताम्बर मन्दिर की पंच तीर्थियों पर कई लेख खुदे हुए हैं। एक लेख संवत् १२१० की आषाढ़ सुदी ९ का है। यह लेख खंडित होने से पूरा नहीं पढ़ा गया। दूसरा लेख संवत् १२३५ की वैशाख सुदी २ बुधवार का है। इसमें श्री पूर्ण भद्र सूरि के द्वारा श्रीपार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमाके प्रतिष्ठित किये जाने का उल्लेख है। तीसरा लेख संवत् १२४२ की वैशाख सुदी ४ का है, जिसमें श्री जिनदेव सूरि



श्री आबू मन्दिर की कोराई का दृश्य

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

का उल्लेख है। चौथा लेख संवत् १४९६ की जेठ सुदी १० बुधवार का है जिसमें श्रीमाल जाति के सेठ करमसी तथा उनकी भार्या मटकू के पुत्र द्वारा अपने कुल के श्रेय के लिए श्री कुथुंनाथ का बिम्ब प्रतिष्ठित किये जाने का उल्लेख है। पाँचवा लेख संवत् १५५२ की वैशाख सुदी ११ शुक्रवार का है इसमें ओसवाल वंशीय साः पनरवद और उनकी भार्य्या मानू के पुत्र साः वदा के पुत्र कुँवरपाल, सोनपाल के द्वारा श्री वासु पूज्य बिम्ब प्रस्थापित किये जाने का उल्लेख है। प्रतिष्ठाचार्य्य खरतर गच्छ नायक श्री जिनसमुद्र सूरि थे। छठा लेख संवत् १५७० की माघ वदी १३ बुधवार का है। इसमें लिखा है कि ओसवाल वंशीय सुराणा गौत्र के साः केशव के पौत्र पृथ्वी मल ने महाराज करमसी धरमसी के सहयोग में श्री अजितनाथ भगवान के बिम्ब को बनवाकर माता पिता के पुण्य के अर्थ प्रतिष्ठित करवाया। इसके प्रतिष्ठा-चार्य्य श्री धर्मघोष गच्छ के भट्टारक श्री नंदवर्द्धन सूरि थे। यहाँ की चौबीसी पर भी कुछ लेख खुदे हैं, जिनमें पहिला लेख संवत् १२२७ तथा दूसरा लेख संवत् १५०७ का है।

श्री आदिनाथ की धातु प्रतिमा

यह प्राचीन मूर्त्ति भारत के वायव्य प्रांत से बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर को प्राप्त हुई है। यह मूर्ति पद्मासन लगा कर बैठी हुई है और इसके आस पास की मूर्त्तियां कायोत्सर्ग के रूप में खड़ी हैं। सिंहासन के नीचे नवग्रहों के चित्र और वृषभ युगल हैं। इससे यह मूर्त्ति बड़ी सुन्दर और मनोज्ञ हो गई है। अभी तक जो सब से अधिक प्राचीन जैन मूर्त्तियां मिली हैं उनमें से यह एक है। इस मूर्त्ति के पीछे जो लेख खुदा हुआ है वह इस प्रकार है।

'पञ्जक सुत अस्वदेवेन ॥ सं० १०७७ ॥'

इससे यह मालूम होता है कि यह मूर्त्ति संवत् १०७७ के साल की है।

आठवीं सदी की जैन मूर्त्ति

उदयपुर के पास के एक गांव से बाबू पूरणचन्द को एक जैन मूर्त्ति मिली थी। वह मूर्त्ति अभी तक उनके पास है। इस मूर्त्ति के ऊपर कर्नाटकी लिपि में एक लेख खुदा हुआ है। वह इस प्रकार है।

'श्री जिनवलमन सज्जन भजीय वय मडिसिदं प्रतीमः,
श्री जिन वल्लभन सज्जन चेटिय भय मडिसिद प्रति में'

इस मूर्त्ति के नीचे नवग्रहों के चित्र हैं और सिर पर तीन छत्र और शासन देव तथा देवी है।

सुप्रख्यात् पुरातत्वविद् रायबहादुर महामहोपाध्याय पं० गौरीशङ्करजी ओझा के मतानुसार यह मूर्त्ति आठवीं सदी की है।

हस्तिकुण्डी के जैन मन्दिरों के लेख

हस्तीकुण्डी मारवाड़ के गोड़वाड़ प्रांत में अत्यन्त प्राचीन स्थान है। यहां के एक जैन मन्दिर में बहुत ही प्राचीन शिलालेख है। उन्हें जोधपुर निवासी पण्डित रामकरणजी ने 'एपिग्राफिया इण्डिका' के दसवें भाग में प्रकाशित किये हैं।

ये शिलालेख पहले पहल केप्टन बर्क को मिले थे। इसके बाद वह बीजापुर की एक जैन धर्मशाला में भेज दिये गये। इसके बाद वह अजमेर के म्युजियम में लाये गये।

प्रथम लेख में सब मिल कर ३२ पंक्तियां है। इसका कुछ भाग घिसा हुआ है और कुछ अक्षर मिट गये हैं। इसकी लिपि नागरी है। प्रोफेसर किलहार्न ने प्रगट किया है कि यह लिपि विक्रम सम्वत् १०८० के विग्रह राज वाले लेख से मिलती जुलती है। भाषा पद्यात्मक संस्कृत है। एक ही शिलालेख में दो जुदे-जुदे लेख खुदे हुए हैं। पहला लेख ४० पद्यों में समाप्त हुआ है और वह वि० सं० १०५३ का है और दूसरा लेख २१ पद्यों का है। वह संवत् ९९६ का है। पहले लेख में २२ पंक्तियां और दूसरे में १० पंक्तियां है। पहले लेख की रचना सूर्य्याचार्य्य नामक किसी जैन साधु ने की है। इसके प्रारम्भ के दो काव्यों में जिन देव की स्तुति की है। तीसरे काव्य में राजवंश का वर्णन है। पर दुर्भाग्य से उनका नाम घिस जाने से पढ़ा नहीं जाता। चौथे काव्य में राजा हरिवर्म्मा का और पाँचवें में विदग्धराज का वर्णन है। विदग्धराज, जैसा कि शिलालेख के दूसरे भागों में कहा गया है, राष्ट्रकूट वंश का था। छठे पद्य में वासुदेव नामक आचार्य के उपदेश से हस्ती कुण्डी में विदग्धराज द्वारा एक मंदिर बनवाये जाने का उल्लेख है। सातवें श्लोक में अपने शरीर के वजन के बराबर उक्त राजा द्वारा स्वर्णदान किये जाने का उल्लेख है। आठवें पद्य में विदग्धराज राजा की गादी पर मंमट नामक राजा के बैठने का और फिर उसकी गद्दी पर धवलराज के बैंठने का उल्लेख है। धवलराज के यश और शौर्य्यादि गुणों के वर्णन में दस काव्य लिखे गये हैं। दसवें श्लोक में लिखा है—" जब मुंजराज ने मेदपाट (मेवाड़) के अघाट नामक स्थान पर चढ़ाई की और उसका नाश किया और जब उसने गुर्जर नरेश को भगा दिया तब धवलराज ने उनकी सैन्य को आश्रय दिया था। ये मुंजराज प्रोफेसर किलहॉर्न के मतानुसार मालव के प्रसिद्ध वाक्पति मुंजराज थे। क्योंकि वे वि० संवत १०३१ से १०५० तक विद्यमान थे। यद्यपि उक्त लेख में तत्कालीन मेवाड़ नरेश का नाम नहीं दिया गया है पर उस समय मेवाड़ में खुमाण नामक प्रसिद्ध राजा राज्य करता था।

उक्त लेख में मेवाड़ के जिस अघाट स्थल का नाम आया है उसका वर्तमान नाम आहड़ नगर है जो उदयपुर की नई स्टेशन से बहुत थोड़ी दूरी पर है। ग्यारहवें काव्य में धवलराज द्वारा महेन्द्र नामक राजा को दुर्लभ राज के पराजय से बचाये जाने का उल्लेख है। प्रोफेसर किलहार्न इस दुर्लभराज को चौहान राजा विग्रह राज का भाई बतलाते हैं। बिजौलिया और किनसरी के लेखों में भी आपका वर्णन आया है।

महेन्द्रराज उक्त प्रोफेसर किलहोर्न के मतानुसार नाडौल के चौहानों के लेख में वर्णित लक्ष्मण का पौत्र और विग्रहपाल का पुत्र था। बारहवें काव्य में कहा गया है कि जब मूलराज ने धरणीवराह पर चढ़ाई कर उसके राज्य का नाश किया था तब अनाश्रित धरणीवराह को धवल ने आश्रय देकर उसकी रक्षा की थी। उक्त लेख में वर्णित मूल राज निःसन्देह रूप से चौलुक्य वंश का मूलराज ही है। पर यह धरणीवराह कौन था, इस बात का निश्चित रूप से अभी तक कोई पता नहीं लगा है। शायद यह परमार वंश का या दंतकथानुसार नौकोटि—मारवाड़ का राजा होगा। तेरह से अट्ठारह तक के श्लोकों में धवल के गुणों की प्रशंसा की गई है। उन्नीसवें श्लोक में वृद्धावस्था के कारण धवल राज द्वारा उनके पुत्र बालप्रसाद को राज्य भार सौंपने का उल्लेख है। बीसवें और इक्कीसवें श्लोक भी प्रशंसा के रूप में लिखे गये हैं। बाइसवें श्लोक से सत्ताइसवें श्लोक तक इस राजा की राजधानी हस्तिकुण्डी का वर्णन और उसकी अलंकारिक भाषा में प्रशंसा की गई है।

अट्ठाइसवें श्लोक में लिखा है कि समृद्धिशाली और प्रसिद्ध हस्तिकुण्डी नगर में शांति भद्र नामक एक प्रभावशाली आचार्य्य रहते थे जिनका बड़े २ नृपति गौरव करते थे। २९ वें श्लोक में इन्हीं सूरिजी की प्रशंसा की गई है। तीसवें काव्य में शांति भद्र सूरि को वासुदेवसूरि द्वारा आचार्य्य पदवी दिये जाने का उल्लेख है। ये वासुदेव उक्त छठे काव्य में वर्णित विग्रहराज के गुरु थे। ३१ वें तथा ३२ वें काव्य में शांतिभद्रसूरि की प्रशंसा की गई है। तेतीसवें श्लोक में उक्त सूरि महोदय के उपदेश से गोठी संघ वालों द्वारा तीर्थंकर ऋषभदेव के मन्दिर का पुनरुद्धार किये जाने का उल्लेख है। इसके बाद दो श्लोकों में उक्त मन्दिर का अलंकारिक वर्णन है। छत्तीसवें और सेंतीसवें काव्य में कहा गया है कि उक्त मन्दिर पहले विदग्ध राजा ने बनवाया था। इसके जीर्ण हो जाने से इसका पुनरुद्धार किया गया। जब मन्दिर बन कर फिर तैयार हो गया तब संवत् १०५३ की माघ सुदी १३ को श्री शांति सूरिजी ने उसमें प्रथम तीर्थङ्कर की सुन्दर मूर्त्ति प्रतिष्ठित की।

अड़तीसवें पद्य में विदग्धराज द्वारा स्वर्णदान किये जाने का उल्लेख है। ३९ वें पद्य में उक्त मन्दिर के लिये जब तक चन्द्रमा और सूरज रहे तब तक उसके स्थिर रहने की प्रार्थना की गई है। आखिरी के ४० वें काव्य में प्रशस्ति-कर्त्ता सूर्य्याचार्य्यजी की प्रशंसा की गई है।

इसके बाद एक पंक्ति गद्य में लिखी हुई है कि जिसमें उक्त मन्दिर की प्रतिष्ठा का समय १०५३ की माघ सुदी १३ पुष्य नक्षत्र का बताया गया है। इसी दिन इस मन्दिर के शिखर के ऊपर ध्वजारोपण भी किया गया था।

इसके बाद दूसरा लेख शुरू होता है। इस लेख में कुल २१ पद्य हैं। यह लेख भी बहुत कुछ ऊपर के लेख से मिलता जुलता है। इस लेख के पहले श्लोक में जैन धर्म की प्रशंसा की गई है। दूसरे श्लोक में हरिवर्म राजा का, तीसरे में विदग्ध राजा का और चौथे में मम्मट राजा का वर्णन है। इसमें यह भी लिखा गया है कि बलभद्र आचार्य्य के उपदेश से विदग्ध राज ने हस्तीकुण्डी में एक मनोहर जैन मन्दिर बनवाया और उक्त मन्दिर के खर्च के लिये आवक जावक माल पर कुछ कर लगाये जाने का भी उल्लेख है। राजा का यह आदेश संवत् ९७३ के आषाढ़ मास का है। इसके बाद संवत् ९९६ की माघ बदी ११ को मम्मट राज ने फिर उसका समर्थन किया था। इस लेख के आखिरी में यह प्रार्थना की गई है कि जब तक पृथ्वी पर पर्वत, सूर्य्य, भारतवर्ष, गंगा, सरस्वती, नक्षत्र, पाताल और सागर विद्यमान रहें तब तक यह शासन पत्र केशवसूरि की संतति में चलता रहे।

वामनवाड़जी का जैन मन्दिर

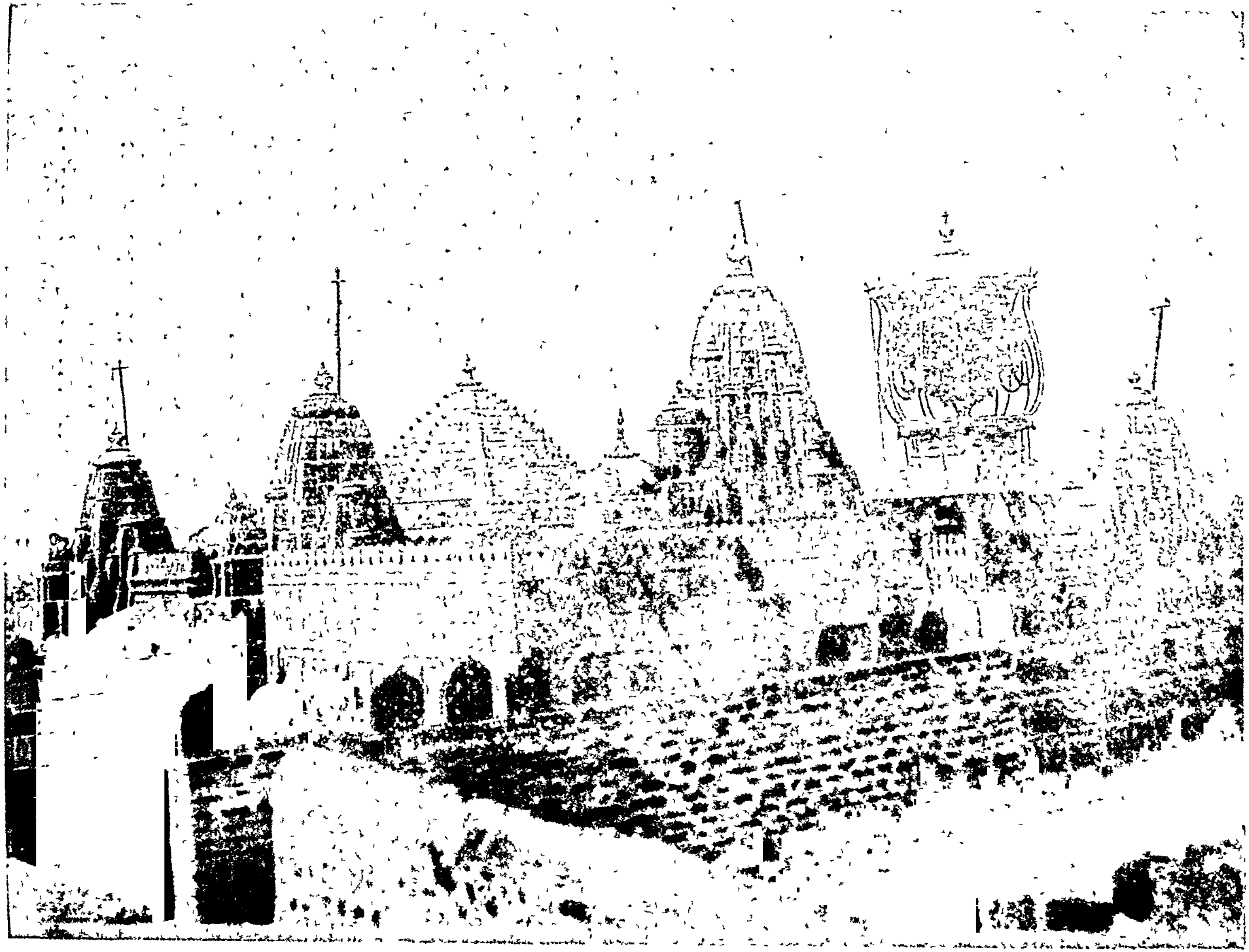
सिरोही राज्य में पिंडवाड़े के स्टेशन से करीब चार माइल उत्तर पश्चिम में वामनवाड़जी का प्रसिद्ध और विशाल महावीर स्वामी का जैन मन्दिर है जहाँ पर दूर २ के लोग यात्रा के लिये आते हैं। यह मन्दिर कब बना, इसका पता नहीं लगता। परन्तु इसके चौतरफ के छोटे २ मन्दिरों में से एक पर संवत् १५१९ का लेख है। इस से यह मालूम होता है कि मुख्य मन्दिर उक्त संवत् से पूर्व का होना चाहिये। इस मन्दिर के पास एक शिवालय भी है, जिसमें परमार राजा धारावर्ष के समय का वि० सं० १२४९ का लेख है। यहाँ पर फाल्गुन सुदी ७ से १४ तक मेला होता है।

पिंडवाड़ा का जैन मन्दिर

पिंडवाड़ा यह एक पुराना कसबा है। यहां पर एक प्राचीन महावीर स्वामी का जैन मन्दिर है। इसकी दीवाल में वि० सं० १४६५ का एक शिलालेख लगा हुआ है। उक्त लेख में इस गाँव का नाम पिंडरवाटक लिखा है।

वसंतगढ़ का जैन मन्दिर

सिरोही राज्य में अजारी से करीब तीन माइल दक्षिण में वसंतगढ़ है। इसको वसंतपुर भी



(सामने का भाग) श्रीपार्श्वनाथ मन्दिर लोद्रवा जैसलमेर (श्री बा० पुरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

कहते हैं। यह सिरोही राज्य के बहुत पुराने स्थानों में से यह एक है। अब तक इस राज्य के जितने शिलालेख मिले हैं उनमें सब से पुराना वि०सं० ६८२ का यहीं से मिला है। मेवाड़ के सुप्रसिद्ध महाराणा कुम्भ ने यहाँ की पहाड़ियों पर एक गढ़ बनवाया था। जान पड़ता है कि इसी से बसंतपुर के स्थान में बसंतगढ़ नाम स्थापित हुआ। यहाँ के एक टूटे जैन मन्दिर में वि० सं० ७४४ के समय की मूर्तियां भी मिली हैं।

केशरियाजी तीर्थ—यह जैनियों का अत्यन्त प्रख्यात तीर्थ स्थान है। उदयपुर से लगभग ४० मील की दूरी पर धुलेवा नामक गाँव में श्री ऋषभदेव स्वामी का एक बड़ा ही भव्य और विशाल मन्दिर बना हुआ है। उक्त मन्दिर में बड़ी ही प्रभावोत्पादक ऋषभदेवजी की मूर्ति है। यह मूर्ति बहुत प्राचीन है। इसके पहले यह प्रतिमा डूंगरपुर राज्य की प्राचीन राजधानी बड़ौद (वटपद्रक) नामक जैन मन्दिर में थी। जान पड़ता है कि किसी विशेष राजनैतिक परिस्थिति के कारण उक्त मूर्ति बड़ौद से यहाँ लाकर पधराई गई।

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं ऋषभदेवजी की उक्त प्रतिमा बड़ी भव्य और तेजस्वी है। इसके साथ के विशाल परिकर में इन्द्रादि देवताओं की मूर्तियाँ बनी हुई हैं और दो बाजुओं पर दो नग्न काउस (कार्योत्सर्ग स्थिति वाले पुरुष) खड़े हुए हैं। मूर्ति के चरणों के नीचे छोटी २ नौ मूर्तियाँ हैं जिनको लोग नवग्रह या नवनाथ बतलाते हैं। उक्त नवग्रहों के नीचे कुछ सपने खुदे हुए हैं।

इस मन्दिर के मण्डप में तीर्थङ्करों की बाइस और देव कुलिकाओं की चौपन मूर्तियाँ विराजमान हैं। देव कुलिकाओं में वि० सं० १७५६ की बनी हुई विजयसागरसूरि की मूर्ति भी है और पश्चिम की देव कुलिकाओं में से एक में करीब ६ फीट ऊँचा ठोस पत्थर का मन्दिर बना हुआ है, जिसपर तीर्थङ्कर की बहुतसी छोटी २ मूर्तियाँ बनी हुई हैं। इसको लोग गिरनारजी का बिम्ब कहते हैं। उक्त ७६ मूर्तियों में से ४९ मूर्तियों पर लेख खुदे हुए हैं। ये लेख वि० सं० १६११ से लगाकर वि० सं० १८६३ तक के हैं और वे जैनों के इतिहास के लिए बड़े उपयोगी हैं।

इस मन्दिर में केशर बहुत चढ़ती है। इसीसे तीर्थ का दूसरा नाम केशरियानाथ भी है। यात्री लोग यहाँ पर केशर की मानता करते हैं। कोई २ जैन तो अपने बच्चों के बराबर केशर तौल कर मूर्तियों पर चढ़ा देते हैं। जैनियों के सिवाय भील आदि भी इस मूर्ति पर केशर चढ़ाते हैं। इस मूर्ति का रंग काला होने से भील लोग इसे कालाजी के नाम से पुकारते हैं। वे इन्हें अपना इष्टदेव समझते हैं। इस मन्दिर में कई बातें बड़ी विचित्र हैं। यहाँ पर ब्रह्मा और शिव की मूर्तियाँ भी विराजमान हैं और एक हवनकुण्ड भी बना हुआ है। जहाँ पर नवरात्रि के दिनों में दुर्गा का हवन होता है। पर जान पड़ता है कि ये सब बातें पीछे से उक्त मन्दिर में जोड़ दी गई हैं। इस मन्दिर की मूर्ति पर सोने, चांदी और जवाहरात की अंगी चढ़ाई जाती है जिनमें कुछ अंगियों की कीमत एक लाख से भी ऊपर की है। हाल में उदयपुर के भूतपूर्व महाराणा फतेसिंहजी ने कोई ढाई लाख की कीमत की अंगी चढ़ाई थी। इस मंदिर में प्रायः श्वेताम्बर विधि से पूजा होती है क्योंकि अंगी, केशर आदि का चढ़ना ये सब बातें श्वेताम्बर विधि ही में सम्मिलित हैं। गत तीन सौ वर्षों के विभिन्न प्रकार के लेखों से यह प्रतीत होता है कि इस मन्दिर में इसी विधि से पूजा होती आई है।*

---

* संवत् १८६३ में विजयचंद गांधी ने इस मन्दिर के चारों तरफ पक पक्का कोट बनवाया। वि० सं० १८८९

इस मन्दिर में कुछ शिलालेख भी हैं जिनमें से पहला शिलालेख वि० सं० १४३१, दूसरा १५७२ और तीसरा १७५४ का है।*

श्री कापरड़ा पार्श्वनाथ का मन्दिर—जोधपुर राज्य में कापरड़ा पार्श्वनाथ का मन्दिर भी एक दर्शनीय वस्तु है। यह बड़ा ही सुन्दर और भव्य मंदिर है। शिल्पकला का बढ़िया नमूना है। इसे जेतारण के ओसवाल जाति के भण्डारी अमराजी के पुत्र भानाजी ने बनवाया था। उक्त मन्दिर में सम्वत् १६७८ के वैशाख सुदी पूर्णिमा का एक लेख है जिससे मालूम होता है कि भण्डारी अमराजी और उनके पौत्र ताराचन्दजी ने पार्श्वनाथ के उक्त चैत्य की जैनाचार्य्य श्री जिनचन्द्रसूरिजी से प्रतिष्ठा करवाई।

कुलपाक तीर्थ—यह तीर्थस्थान दक्षिण हैदराबाद से ४५ मील की दूरी पर बसा हुआ है। यहाँ एक बहुत बड़ा भव्य मन्दिर तथा माणिक्य स्वामी की प्रतिमा विराजमान है। यह मन्दिर तथा प्रतिमा अति ही प्राचीन बतलाई जाती है। यह स्थान बड़ा भव्य तथा रमणीय बना हुआ है। यहाँ पर कई शिलालेख भी प्राप्त हुए हैं जो आज भी एक कमरे में सुरक्षित रक्खे हुए हैं। कई शिलालेखों के बीच में कहीं २ कुछ अक्षर नष्ट हो गये हैं जिनके कारण बहुत सा अर्थ समझ में नहीं आता। यहाँ पर एक शिलालेख संवत् १३३३ के भादो वदी ४ का भी मिला है जो मारवाड़ी लिपि में लिखा हुआ है। ऐसा मालूम होता है कि किसी यात्री ने उसे खुदवा कर लगा दिया होगा। कुछ भी हो इस शिलालेख से तो यह अवश्य ही सिद्ध होता है कि यह मंदिर सं० १३३३ के पहिले का बना हुआ है। इसके पश्चात् के तो कई शिलालेखों में उक्त मन्दिर तथा प्रतिमा का उल्लेख आया है। यहाँ की प्रतिमा बड़ी प्रतिभावान, भव्य तथा तेजस्वी प्रतीत होती है।

श्री भान्दक पार्श्वनाथ तीर्थ—यह तीर्थस्थान वर्धा से ६० मील की दूरी पर जी० आई० पी० रेलवे के भान्दक नामक स्टेशन के पास है। लगभग बीस वर्ष पूर्व चतुर्भुज भाई, हीरालालजी दूगड़, तथा सिद्धकरणजी गोलेछा ने पार्श्वनाथ की विशाल सात फूट की पद्मासनमय मूर्ति खोज निकाली एवं परिश्रम पूर्वक हजारों रुपये एकत्रित कर एक बड़ा विशाल मंदिर बनवाया, तथा इसकी प्रतिष्ठा पंडित रामविजय जी और जयमुनिजी के द्वारा हुई। उपरोक्त सज्जनों के बाद सेठ छोटमलजी कोठारी ने इस तीर्थ के फण्ड को खूब बढ़ाया। इस स्थान पर एक भद्रावती जैन गुरुकुल भी स्थापित है जिसकी देख रेख व मन्दिर का निरीक्षण आजकल नथमलजी कोठारी करते हैं। इस तीर्थ में एक देरासर नागपुर के प्रसिद्ध जोहरी पानमलजी एवं महेन्द्रकुमारसिंहजी चोरड़िया ने बनवाया है।

सुजानगढ़ का जैन मन्दिर—सुजानगढ़ का यह प्रसिद्ध जैन मन्दिर यहाँ के सुविख्यात सिंघी परिवार द्वारा बनाया गया है। यह मन्दिर बड़ा ही भव्य, रमणीय तथा दर्शनीय है। यहाँ की कोराई व कारीगरी को देखकर दर्शक मुग्ध हो जाते हैं। इस मंदिर के बनवाने में लाखों रुपये व्यय हुए होंगे।

में उदयपुर के सुप्रख्यात बापना वंशीय सेठ बहादुरमलजी एवं सेठ जोरावरमलजी ने मन्दिर के प्रथम द्वार पर नक्कारखाना बनवाकर वर्तमान ध्वजा दण्ड चढ़ाया।

* इस लेख के पूर्वांश के लिखने में रा० ब० महामहोपाध्याय पं० गौरीशंकरजी ओझा कृत उदयपुर राज्य का इतिहास नामक ग्रंथ से बहुतसी सहायता मिली है।

ओसवाल जाति की कुछ खास खास संस्थाएँ

श्री संघ सभा और सरदार हॉईस्कूल जोधपुर—वर्तमान संस्कृति एवं सभ्यता के युग में उन्नति की तीव्र भावना से प्रेरित होकर जोधपुर शहर के गण्यमान्य ओसवाल पुरुषों ने ता० १९ जुलाई सन् १८९६ के दिन "श्री संघ सभा" की स्थापना की एवं २० हजार रुपयों का चंदा एकत्रित किया। इस कार्य्य में जोधपुर दरबार महाराजा सुमेरसिंहजी बहादुर ने ९ हजार प्रदान कर अपनी राजभक्त प्रजा का सम्मान किया। इस श्रीसंघ सभा के सभापति स्व० मेहता सरदरचंदजी दीवान सभापति और उपसभापति भण्डारी मानचन्दजी चुने गये, एवं अन्य १७ मुत्सुद्दियों की एक व्यवस्थापक कमेटी बनाई गई। इस सभा ने ता० २९ अगस्त सन् १८९६ के दिन दरबार की आज्ञा ले महाराजा सर प्रतापसिंह जी द्वारा "सरदार हॉईस्कूल" का उद्‌घाटन करवाया। यह हॉईस्कूल अपनी दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करता गया और इस समय जोधपुर की शिक्षा संस्थाओं में अपना खास स्थान रखता है। इस हॉईस्कूल की उन्नति में शाह नौरतनमलजी भांडावत, मेहता बहादुरमलजी गधैया, शाह गणेशमलजी सराफ आदि सज्जनों के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। इस समय हॉईस्कूल की निजकी एक भव्य बिल्डिंग है।

श्री आत्मानन्द जैन हॉईस्कूल अम्बाला—इस संस्था की स्थापना लगभग ३० वर्ष पूर्व आचार्य्य विजयवल्लभसूरिजी के उपदेश से हुई। सन् १९२६ में यह हॉईस्कूल बन गया। यह हॉईस्कूल पंजाब प्रान्त के प्रसिद्ध हॉईस्कूलों में माना जाता है। इस संस्था की शानदार नयी बिल्डिंग हाल ही में तैयार हुई है। "आत्मानन्द जैनगंज" नामक बाजार के किराये की आय, गवर्नमेंट की एड व अन्य सहायता से हॉईस्कूल का व्यय चलता है। संस्था का कार्य्यवाहन अम्बाले के १६ गण्य मान्य सज्जनों की एक कमेटी के जिम्मे है।

श्री ओसवाल हॉईस्कूल अजमेर—इस संस्था की स्थापना अजमेर में छोटी सी संस्कृत पाठशाला के रूप में संवत् १९५६ में हुई। तदनन्तर संवत् १९७५ में यह संस्था मिडिल स्कूल के रूप में परिणत हुई। इस संस्था की आरंभिक उन्नति का प्रधान श्रेय श्री धनराजजी कांसटिया को है। कहना न होगा कि अजमेर की जनता के उत्साह प्रदर्शन से तथा कार्य्यकर्त्ताओं की कार्य्य चातुरी से यह संस्था शीघ्रगामी गति से उन्नति की ओर अग्रसर होती गई, तथा संवत् १९८६ से यह मिडिल स्कूल से हॉयस्कूल हो गया। यह हॉयस्कूल इस समय राजपूताना एज्युकेशन बोर्ड से रिकग्नाइज हो गया है। यह बहुत सुचारु रूप से संचालित किया जा रहा है। इसमें हायस्कूल की अन्य क्लासों के साथ २ कामर्स क्लास की शिक्षा भी दी जाती है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों के शारीरिक स्वास्थ्य की ओर भी काफी ध्यान रक्खा जाता है। इस हायस्कूल के प्रेसिडेन्ट सेठ हीराचन्दजी संचेती और मंत्री श्री धनराजजी लूणिया है।

सेठ नन्दलाल भण्डारी हॉईस्कूल—इस हॉयस्कूल को इन्दौर के प्रसिद्ध मिल ओनर श्री कन्हैया लालजी भण्डारी ने अपने पिताजी के स्मारक में "नंदलाल भण्डारी विद्यालय" के नाम से खोला है। आपकी उच्च व्यवस्थापिका शक्ति एवं योग्य निरीक्षण के कारण विद्यालय दिनों दिन तरक्की करता गया और

इधर २।३ वर्ष पूर्व से हाईस्कूल हो गया है। वर्तमान में यह हाईस्कूल बहुत संगठित रूप से कार्य्य कर रहा है एवं इन्दौर की एज्यूकेशन संस्थाओं में अपना खास स्थान रखता है।

श्री महावीर हॉईस्कूल देहली—इसका संचालन देहली के जैन समाज द्वारा होता है। यह संस्था भी बहुत उन्नति के साथ अपना कार्य्य कर रही है।

श्री आत्मानन्द जैन गुरुकुल गुजरानवाला—इस गुरुकुल की स्थापना जैनाचार्य्य श्री विजय वल्लभ सूरिजी ने अपने गुरू आत्मारामजी महाराज के स्मारक में माघ सुदी ५ संवत् १९८२ में गुजरानवाला में की। इस गुरुकुल में इस समय विभिन्न प्रांतों के ३७ छात्र पढ़ते हैं। दसवीं क्लास (विनीत परीक्षा) तक पढ़ाई होती है। संस्था का सालियाना व्यय १५ हजार का है। पंजाब प्रांत के गणमान्य एवं शिक्षित ७ ट्रस्टियों के जिम्मे संस्था की व्यवस्था का भार है। इस समय गुरुकुल के पास २। लाख रुपयों का स्थाई फंड है तथा २१ हजार की जमीन है। यहाँ से साहित्य मंदिर की परीक्षा पास करनेवाले विद्यार्थी को "विद्या भूषण" की पदवी दी जाती है। संस्था के सभापति सेठ माणिकचंदजी हैं।

श्री जैनेन्द्र गुरुकुल पंचकूला—गिरिराज हिमालय के अंचल में शिमला के रम्य मार्ग पर कालका के समीप अत्यंत शांतिमय, प्राकृतिक एवं मनोहारी स्थान में यह गुरुकुल स्थापित है। इस के चारों ओर ५ जल श्रोत्र अहर्निशि प्रवाहित होते रहने के कारण संस्था का नाम "पंचकूला", उदघोषित किया। इसके स्थापन कर्ता स्वामी धनीरामजी एवं उनके शिष्य पंडित कृष्णचन्द्रजी हैं। स्वामी धनीरामजी नूतन उन्नत विचारों के जैन साधु हैं, एवं गुरुकुल की उन्नति में अपना सारा समय प्रदान कर रहे हैं। संस्था का १५ हजार रुपया सालियाना का व्यय है जो आसपास के जैन समाज की सहायता से चलता है। इस समय संस्था के पास ६० हजार की बिल्डिंग एवं १५ हजार स्थाई कोष में हैं। यहाँ ५६ छात्र अध्ययन करते हैं, और छठी तक पढ़ाई होती है। इसके वर्तमान प्रेसिडेन्ट लाला रूपलालजी जैन फरीदकोट निवासी हैं।

श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय वरकाणा (मारवाड़)—गोडवाड़ तथा जालोर प्रान्त के पिछड़े हुए जैन समाज को जागृत करने के उद्देश से आचार्य्य श्री विजयवल्लभसूरिजी एवं उनके शिष्य पन्यास ललित विजयजी महाराज ने मिलकर श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय की स्थापना वरकाणा एवं उम्मेदपुर में की। संवत् १९८३ की माघ सुदी ५ से पन्यासजी महाराज ने कुछ विद्यार्थियों को स्वयं ही शिक्षा देना प्रारंभ किया। विद्यालय की स्थापना करवाने में श्रावक सिंघी जसराजजी घाणेराव वालों ने गोडवाड़ प्रांत की जनता से सम्पत्ति एकत्रित करने में बहुत परिश्रम उठाया। स्कूली एवं धार्मिक शिक्षा के साथ २ छात्रों के शारीरिक एवं मानसिक विकास को दृढ़ बनाने का भी यहाँ समुचित प्रयत्न किया जाता है। लगभग १०० गोडवाड़ प्रांत के छात्र यहाँ निवास करते हैं। गोडवाड़ की धार्मिक जनता ने विद्यालय को लाखों रुपये सहायतार्थ दिये हैं। कुछ गण्य मान्य व्यक्तियों की कमेटी के जिम्मे संस्था की व्यवस्था का भार है।

श्री पार्श्वनाथ उम्मेद जैन बालाश्रम उम्मेदपुर—गोडवाड़ प्रान्त की जैन जनता के लिये वरकाणा, विद्यालय के पश्चात् माघसुदी १३ संवत् १९८७ के दिन पन्यासजी महाराज ने उम्मेदपुर में बालाश्रम की स्थापना की। इस बालाश्रम में इस समय १४० छात्र निवास करते हैं। VII तक पढ़ाई होती है। यहाँ छात्रों

के व्यवहारिक, नैतिक एवं धार्मिक जीवन को उच्च बनाने का पूर्ण प्रयत्न किया जाता है। संस्था को व्यवस्थित रूप से संचालित करने के लिये पन्यासजी ललित विजयजी महाराज अपना पूर्ण समय दे रहे हैं। बालाश्रम की सुंदर व्यवस्था एवं भव्य इमारतें दर्शनीय हैं।

श्री नेमिनाथ ब्रह्मचर्य्याश्रम चांदवड़ (नाशिक)—इस गुरुकुल की स्थापना संवत् १९८३ में महावीर जैन पाठशाला के रूप में हुई थी। श्रीमान् सुमति मुनिजी के उपदेश से इस संस्था को उत्कृष्ट रूप दिया गया। चांदवड़ के समीप बम्बई आगरा रोड पर प्राचीन डिस्पेंसरी की भव्य बिल्डिंग हस्तगत करने में इस संस्था के सेक्रेटरी श्री केशवलालजी आबड़ ने बहुत परिश्रम उठाया। इस संस्था का प्रबंध खानदेश तथा महाराष्ट्र प्रान्त के गण्यमान्य सज्जनों की एक कमेटी के जिम्मे है। सेठ मेघजी भाई सोजपाल बम्बई निवासी आश्रम में एक मंदिर भी बनवा रहे हैं। श्री राजमलजी ललवाणी, सुगन्धचन्द्रजी लूणावत, व इन्द्रचन्दजी लूणिया आदि सज्जनों ने संस्था में अच्छी सहायता पहुँचाई है। इस संस्था के ब्रह्मचारियों ने विभिन्न प्रकार की शारीरिक कसरत एवं योगासनों में उत्कृष्ट जानकारी रखने के कारण बहुत प्रशंसा प्राप्त की है। संस्था में सातवीं क्लास तक पढ़ाई होती है।

श्री फतेचन्द जैन विद्यालय चिंचवड़ (पूना)—संवत् १९८४ में पेमराजजी महाराज के उपदेश से इस संस्था की स्थापना हुई। पूना, चिंचवड़ तथा लोनावला के ५ गृहस्थों के एक ट्रस्ट के जिम्मे संस्था का प्रबंध भार है। संस्था से २०० छात्र अभी शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं। यहाँ महाजनी, धार्मिक प्रवेशिका व अंग्रेज IV तक पढ़ाई होती है। इस समय ८१ छात्र पढ़ते हैं, तथा ३० छात्रों के रहने का प्रबंध विद्यालय के जिम्मे है। इस संस्था के अध्यक्ष चिंचवड़ के सेठ रामचन्द्र पूनमचन्द्र लूंकड़ हैं।

कुमारसिंह हॉल कलकत्ता—यह संस्था भारतवर्ष की उन प्राइवेट संस्थाओं में से एक है जो अपने ढंग का एक खास आदर्श उपस्थित करती हैं। इसके अन्तर्गत प्राचीन वस्तुओं का, शिलालेखों का, मूर्त्तियों का, सिक्कों का तथा इसी प्रकार अन्य कई प्राचीन ऐतिहासिक सामग्रियों का अत्यंत ही अनूठा एवं मनोमुग्धकारी संग्रह है। बात यह है कि यों तो भारतवर्ष के अन्तर्गत प्राचीन ऐतिहासिक संग्रहालयों का अभाव नहीं है, लेकिन यह एक प्राइवेट संस्था है और एक ही शक्ति के द्वारा बहुतसी प्राचीन सामग्रियों से सजाई गई है। भारत हृदय सम्राट महात्मा गांधी, देशरत्न पं० जवाहरलालजी नेहरू आदि पूज्य महानुभावों ने भी इसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा की है। इस प्राचीन संग्रहालय के संग्रहकर्ता प्रसिद्ध जैन पुरातत्ववेत्ता श्री पूरणचन्दजी नाहर एम० ए० बी० एल हैं। आपकी सुरुचि पूर्ण ऐतिहासिक संग्रह शक्ति ने आपके नाम को अमर कर दिया है।

सुराणा पुस्तकालय चुरू—चुरू के सुराणा परिवार की यह प्राइवेट लायब्रेरी है जो बड़ी ही विशाल एवं जैन प्राचीन शास्त्रों से परिपूर्ण भरी है।

आत्मानन्द जैन सभा अम्बाला—यह सभा संवत् १९१२ में धार्मिक एवं शिक्षा की उन्नति के उद्देश्य को लेकर स्थापित हुई। इस संस्था की उन्नति में अम्बाला के सुप्रख्यात एडवोकेट लाला गोपीचंदजी बी० ए० ने बहुत योग दिया। वर्तमान में अम्बाला में इस संस्था द्वारा श्री आत्मानंद जैन हॉयस्कूल, प्रायमरी स्कूल, कन्या पाठशाला, रीडिंग रूम, ट्रेक्ट सोसायटी, ग्रंथ भण्डार, जैन स्कूल आदि २ संस्थाएँ

सुचारु रूप से संचालित की जा रही हैं। इस संस्था की स्थाई सम्पत्ति में "आत्मानन्द जैन गंज" मुख्य है जिसकी किराये की आय से संस्था का व्यय चलता है। अम्बाला के शिक्षित सज्जनों की एक कमेटी के जिम्मे इस संस्था का सारा प्रबन्ध भार है।

श्री नाथूलाल गोधावत जैन आश्रम सादड़ी—इस संस्था को स्व० सेठ नाथूलालजी गोधावत ने सवालाख रुपये के आदर्श दान द्वारा छोटी सादड़ी में स्थापित किया। वर्तमान में भी आपके पौत्र सेठ छगनलालजी गोधावत उक्त संस्था को सुचारु रूप से संचालित कर रहे हैं।

श्री जैन गुरुकुल ब्यावर—यह संस्था ओसवाल जाति के कई विद्या प्रेमी सज्जनों द्वारा संवत् १९८५ में ब्यावर में स्थापित की गई है। इसके अन्तर्गत प्राचीन एवं अर्वाचीन पद्धतियों का सम्मिश्रण करके विद्यार्थियों (ब्रह्मचारियों) को धार्मिक, व्यवहारिक, मानसिक व शारीरिक शिक्षा बड़े ही उचित ढंग से दी जाती है। यह गुरुकुल, ब्यावर से करीब डेढ़ मील की दूरी पर बड़े ही अच्छे स्थान पर बना हुआ है। यह पहले बगड़ी में जैन बोर्डिंग के नाम से प्रख्यात् था। इस संस्था का प्रबन्ध सेठ मिश्रीलालजी वेद आदि ५ ट्रस्टियों द्वारा होता है। इसकी वार्षिक आय करीब तेरह हजार की है और व्यय दस हजार के लगभग होता है। यहाँ से "कुसुम" नामक मासिक समाचार पत्र भी निकलता है। इसके ऑनरेरी प्रबन्धक श्री धीरजमलजी तुरकिया योग्य व्यवस्थापक सज्जन हैं। इस संस्था को १० सज्जन मिलकर १० हजार रुपये प्रतिवर्ष स्थायी सहायता देते हैं।

श्री अमर जैन होस्टल लाहौर—इस संस्था का स्थापन श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा पंजाब ने सन् १९१६ में किया। पंजाब के कॉलेज शिक्षा प्राप्त करनेवाले जैन छात्रों के लिए शुद्ध भोजन एवं निवास का प्रबन्ध करने के उद्देश्य से यह संस्था खोली गई। संस्था की भव्य बिल्डिंगें लगभग २ लाख रुपयों की हैं। पंजाब के गण्यमान्य शिक्षित सज्जनों की एक कमेटी के जिम्मे इस संस्था की व्यवस्था का भार है।

श्री खानदेश ओसवाल शिक्षण संस्था, भुसावल (एज्युकेशन सोसायटी)—इस संस्था का उद्देश्य ओसवाल जाति के उच्च शिक्षा प्राप्त करनेवाले युवकों को आर्थिक सहायता देना है। इस संस्था का स्थापन खानदेश के नामी श्रीमंत सेठ राजमलजी ललवाणी ने २० हजार रुपये देकर किया था, एवं आप ही उसके सभापति हैं। इस सोसायटी के सेक्रेटरी श्रीयुत पूनमचन्दजी नाहटा का संस्था की अभ्युदय में बहुत बड़ा सहयोग रहा है। संस्था के पास लगभग ५२ हजार का फंड है, तथा अभी तक २० हजार रुपया विद्यार्थियों को यह संस्था वितरित कर चुकी है।

श्री सेठिया परमार्थिक संस्थाएँ बीकानेर—इन संस्थाओं को स्थापन बीकानेर के प्रसिद्ध धार्मिक सेठ भेरोंदानजी ने किया, एवं आपके परिवार के सज्जनों ने कलकत्ते के ११ मकानात, दुकानें एवं कई हज़ार रुपया संस्था के स्थाई प्रबन्ध के लिये दिया, जिनके किराये तथा ब्याज की आय लगभग २१ हज़ार सालियाना संस्था को होती है। इतना ही नहीं स्वयं सेठ भेरोंदानजी एवं उनके सुपुत्र कुँवर जेठमलजी सेठिया इन संस्थाओं का संचालन करते हैं। इस संस्था के आधीन जैनस्कूल, श्राविक पाठशाला, जैन संस्कृत प्राकृत विद्यालय, जैन बोर्डिङ्ग हाउस, शास्त्र भण्डार, जैन विद्यालय, श्राविकाश्रम एवं प्रिंटिंग-प्रेस आदि संस्थाएँ संचालित की जा रही है।

श्री जैन ओसवाल परस्पर सहायक कोष मध्यप्रदेश एण्ड बरार—यह संस्था ओसवाल जैन कुटुम्बों को उनकी मृत्यु के अनंतर या ५५ वर्ष के पश्चात् सहायता पहुँचाने के उद्देश से सन् १९३२ में स्थापित हुई। संस्था का आफिस सिवनी छपरा (सी० पी०) में है। इसके प्रेसिडेंट सेठ माणिकचन्दजी माल हैं।

श्री जैन सुमति मित्र मंडल, रावलपिंडी—इस संस्था की स्थापना २१ साल पूर्व स्वामी धनीरामजी महाराज ने की। संस्था के पास इस समय ३५ हजार रुपयों का फंड है, और रावलपिंडी के २४ सभ्यों की कमेटी के जिम्मे समिति का प्रबंध भार है। समिति के अंडर में शास्त्र भंडार, ट्रेक्टमाला, कन्या पाठशाला, एजूकेशन बोर्ड आदि संस्थाएं चलती हैं। सुदूर पंजाब प्रांत में यह संस्था हिन्दी भाषा का आदर्श प्रचार कार्य्य कर रही है। इसके प्रेसिडेंट लाला उत्तमचन्दजी जैन हैं।

श्री स्थानकवासी जैन बोर्डिंग पूना—यह संस्था भी कालेज में उच्च शिक्षा प्राप्त करनेवाले छात्रों के लिए भोजन एवं निवास की सुव्यवस्था के उद्देश्य से स्थापित हुई है। इसका प्रबन्ध महाराष्ट्र प्रान्त के गण्य मान्य सज्जनों की एक कमेटी के जिम्मे है।

श्री सोहनलाल जैन अनाथालय, अमृतसर—इस संस्था की स्थापना युवाचार्य्य काशीरामजी महाराज ने की। स्थापना के समय संस्था को ४० हजार की सहायता के वचन मिले थे। इस संस्था के पास इस समय ११ हजार रुपयों का फण्ड है। इसके प्रधान कार्य्य संचालक लाला मस्तरामजी जैन M.A.L L.B., लाला हरजसरायजी बरड B. A. एवं लाला मुन्नीलालजी हैं।

श्री केशव विजय जैन लायब्रेरी, जालौर—इस लायब्रेरी की वेल्यू लगभग १ लाख रुपयों की है। लायब्रेरी के पास १० हजार का फंड है। तथा ताड़ पत्र पर हस्तांकित एवं अन्य ग्रन्थों का अच्छा संग्रह है। संस्था के सेक्रेटरी श्रीयुत भेरूमलजी गधैया योग्य एवं उत्साही सज्जन हैं।

उपरोक्त संस्थाओं के अतिरिक्त ओसवाल समाज की ऐसी कई संस्थाएँ हैं जिनका स्थानाभाव के कारण परिचय न देकर हम नाम ही दे रहे हैं।

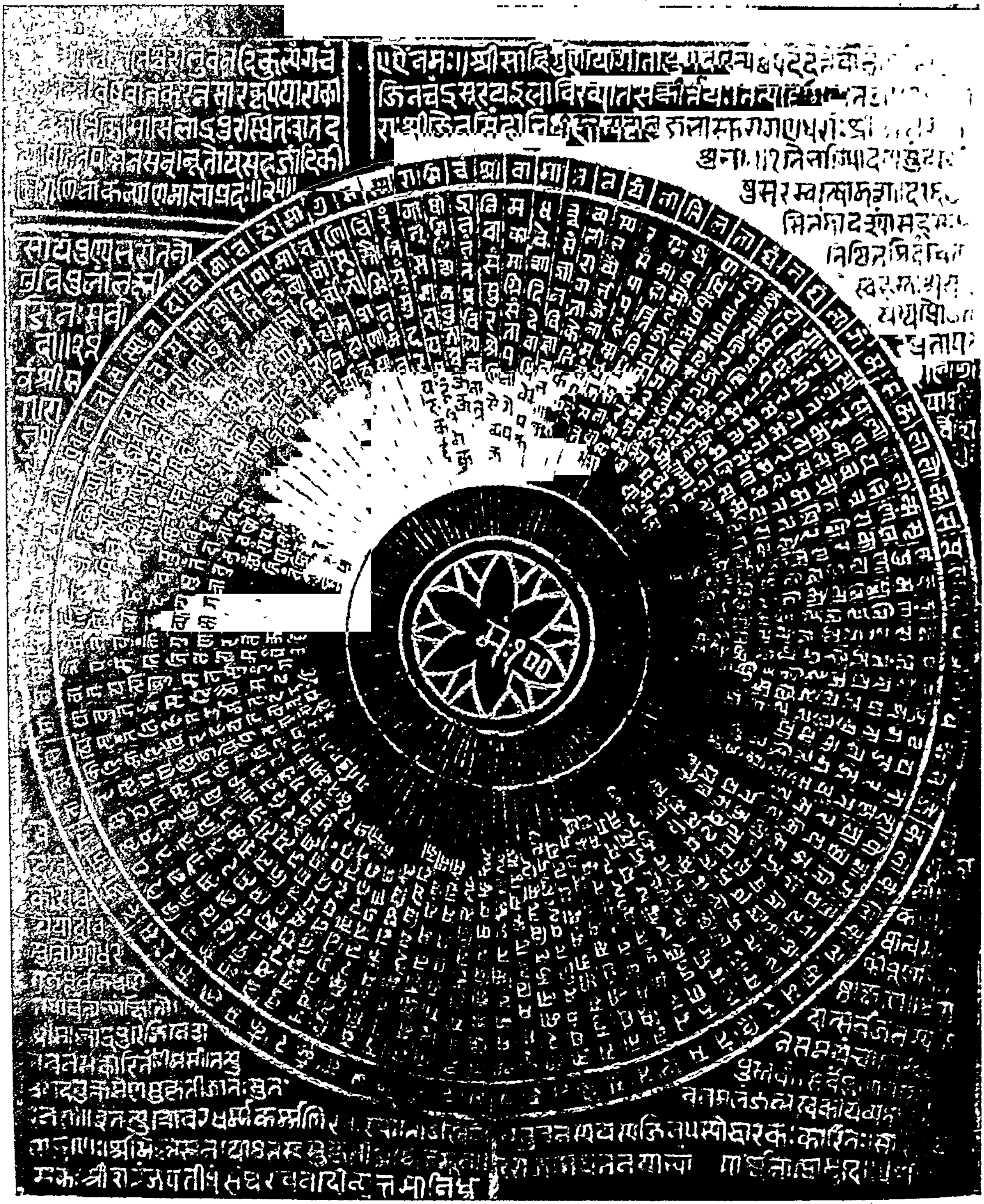
अ० भारतवर्षीय श्वे०जैन स्थानकवासी ओसवालसभा
अखिल भारतवर्षीय मन्दिर मार्गीय श्वेताम्बर जैन सभा
एस० एस० जैन सभा पंजाब, लाहौर
अ० भा० तेरापन्थी सभा, कलकत्ता
नाशिक जिला ओसवाल सभा, नाशिक
जैन गुरुकुल पाथरड़ी (अहमदनगर)
ओसवाल जैन बोर्डिंग हाउस, नाशिक
जैनोदय पुस्तक-प्रकाशक समिति, रतलाम
जैन स्त्री औषधालय, जीरा (पंजाब)
जैनोदय पुस्तक प्रकाशक समिति, रतलाम
ओसवाल औषधालय, अजमेर
मूलचन्द जवाहरमल औषधालय, वार्शी
गिरधारीलाल अन्नराज विद्यालय, ब्यावर
श्री आत्मानन्द जैन विद्यालय, सादड़ी
ओसवाल बोर्डिंग हाउस, जलगांव
भद्रावती जैन गुरुकुल, भांदक तीर्थ
शांति जैन मिडिल स्कूल एण्ड काम० इन्स्टीट्यूट ब्यावर
सिंघी हरिसिंह निहालचन्द संस्था बौलपुर (बंगाल)
शंभूमल गंगाराम जैन विद्यालय, जेतारन
नथमल दातव्य औषधालय, सरदारशहर
घेवरचन्द पुस्तकालय, सुजानगढ़
फूलचन्द जैन कन्या पाठशाला, जोधपुर

श्री आत्मानन्द जैन सभा, आगरा
स्थानकवासी ज्ञान वर्द्धक सभा, सादड़ी
जैन श्वे० तेरापन्थी पुस्तकालय, चुरू
ओसवाल विद्यालय, सुजानगढ़
अमर जैन यूनियन, सियाल कोट
महावीर जैन लायब्रेरी, सियालकोट
जैन कन्या पाठशाला, सियालकोट
जैन श्वे० तीर्थ कमेटी, अम्बाला
आनन्दजी कल्याणजी की पेढ़ी, सादड़ी
दयाचन्द धर्मचन्दजी की पेढ़ी, सादड़ी
शांति वर्द्धमान पेढ़ी, सोजत
कुन्दन कन्या पाठशाला, ब्यावर
गणपति औषधालय, ब्यावर
जैन सेवा समिति औषधालय, ब्यावर
जैन कन्या पाठशाला, अलवर
आत्मानन्द जैन लायब्रेरी, जण्डियाला (पंजाब)
पाँजरापोल, होशियारपुर
प्राचीन जैन ग्रंथ भण्डार, होशियारपुर
आत्मवल्लभ जैन सेन्ट्रल लायब्रेरी, सादड़ी
आत्मानंद जैन मिडिल स्कूल जंडियाला, (पंजाब)
गुलाबकुँवर जैन कन्या पाठशाला, अजमेर
श्रमणोपासक जैन पाठशाला, अजमेर
ओसवाल नवयुवक मण्डल, धामक
महावीर मण्डल, अहमदनगर
वर्द्धमान जैन पाठशाला, शिवनी–छपारा
जैन कन्या पाठशाला, फरीदकोट (पंजाब)

श्वे० जैन पाठशाला, जयपुर
श्वे० जैन पाठशाला, भोपाल
जैन स्कूल, घाणेराव
जैन श्वेताम्बर वर्द्धमान पाठशाला, नागौर
महावीर जैन वाचनालय, सोजत
जैन महावीर मण्डल, हिंगनघाट
जैन कन्याशाला, सादड़ी
स्था० जैन कन्याशाला, सादड़ी
ओसवाल स्कूल, बीकानेर
ओसवाल हितकारिणी सभा, सरदारशहर
ओसवाल हितकारिणी सभा, सुजानगढ़
महावीर जैन युवक मण्डल, बाली।
स्था० जैन लायब्रेरी, अजमेर
महाराष्ट्र जैन युवक संघ, नाशिक
शांति जैन पुस्तकालय, जबलपुर
जैन ओसवाल वाचनालय, भोपाल
जैन प्रचारक सभा, गुजरांवाला (पंजाब)
श्री सोहनलाल जैन कन्या पाठशाला, अमृतसर
श्री आत्माराम जैन लायब्रेरी, अमृतसर
उदयचंद जैन लायब्रेरी, कसूर (पंजाब)
आत्मानन्द जैन लायब्रेरी, ज़ीरा (पंजाब)
आत्माराम जैन पाठशाला, होशियारपुर
हित हेम लायब्रेरी, घाणेराव
श्री महावीर वाचनालय, इन्दौर
ओसवाल हितकारिणी सभा, लाडनूं

ओसवाल जाति और उसके आचार्य

Oswals & their Acharyas



श्री शतदल पद्म यंत्र लोद्रवा पार्श्वनाथ मन्दिर लोद्रवा

(श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

जैन आचार्य्यों ने ओसवाल जाति के सामाजिक, धार्मिक, कौटुम्बिक और राजनैतिक जीवन पर प्रभाव डाला, उनका थोड़ा सा परिचय देना भी आवश्यक प्रतीत होता है। इनमें से कई आचार्य्य स्वयं ओसवाल जाति के थे और उन्होंने जैन संस्कृति के विकास में बहुमूल्य सहायता पहुँचाई थी। इसके विपरीत कई आचार्य्य यद्यपि दूसरी जातियों के थे पर उनका इस जाति के साथ इतना निकट सम्बन्ध था कि उसके जीवन के विविध पहलुवों पर इन आचार्य्यों ने बहुत ही गम्भीर संस्कार डाले थे। हम पहिले कह चुके हैं कि ओसवाल जाति की उत्पत्ति आठवीं तथा नवमी सदी के बीच (८०० से ९०० तक) किसी समय में हुई है; अतएव हम उसी समय से अब तक के खास २ ऐसे आचार्य्यों की जीवनी पर और उनके कार्य्यों पर प्रकाश डालना आवश्यक समझते हैं, जिन्होंने इस जाति के जीवन को बनाने में सबसे अधिक परिश्रम किया था।

श्री बप्पभट्टि सूरि

इस सम्बन्ध में सबसे पहिले श्री बप्पभट्टिसूरि का नाम उल्लेखनीय है। आप का जन्म विक्रम संवत् ८०० की भादवा सुदी ३ को हुआ था, अर्थात् जिस समय ओसवाल जाति की उत्पत्ति हुई थी उसी समय इस महान् आचार्य्य का उदय हुआ था। ये महान् विद्वान् तथा प्रतापी आचार्य्य थे। दीर्घ तपश्चर्य्या के द्वारा इन्होंने अपनी आत्मिक शक्तियों का उच्च विकास किया था। इन्होंने कन्नोज के राजा आम को प्रतिबोध देकर उन्हें भगवान महावीर के पवित्र झण्डे के नीचे बैठाया था। ये आम राजा बड़े प्रतापी थे। गवालियर की प्रशस्ति के अनुसार इन्होंने अनेक देशों पर अपनी विजय पताका फहराई थी, इन्होंने कन्नोज में १८ मन सोने की भगवान महावीर को प्रतिमा बनवाकर अपने आचार्य्य बप्पभट्ट के द्वारा उसकी प्रतिष्ठा करवाई थी। इन्होंने गोपगिरी (गवालियर) में भी २३ हाथ ऊँची महावीर की प्रतिमा स्थापित की थी। इन महान् आचार्य्य महोदय ने गौंड (बङ्गाल) देश की राजधानी लक्षणावती के राजा धर्म को महान् उपदेश देकर उसके तथा आम राजा के बीच के बैर-भाव को दूर किया और उनके आपस में मैत्री का मधुर सम्बन्ध स्थापित किया। इतना ही नहीं, श्रीबप्पभट्टसूरि ने बर्द्धन कुंजर नामक एक विख्यात् बौद्ध पण्डित को जीत कर सारे देश में अपने प्रभाव की छाप डाली। इससे उक्त गौड़ाधिपति धर्मराज ने आपको

"वादि कुञ्जर केशरी" की उपाधि से विभूषित किया। इसके बाद आचार्य्य महोदय ने शैवमत के वाक्पति नामक योगी को जैन बनाया। आम राजा पर इन आचार्य्य महोदय का अप्रिहत धार्मिक प्रभाव पड़ा था। इससे संवत् ८२६ में इन्होंने कन्नोज, मथुरा, अनहिलपुर पट्टण, सतारक नगर, मोढेरा आदि नगरों में जिनालय बनवाये, उसने शत्रुंजय तथा गिरनार की तीर्थ यात्रा की। उस समय गिरनार तीर्थ के अधिकार के सम्बन्ध में दिगम्बर तथा श्वेतांबर समुदाय में झगड़ा पड़ गया था। श्री बप्पभट्टसूरि के प्रभाव से उक्त तीर्थ स्थान श्वेताम्बर तीर्थ माना गया। श्री बपप्भट्टसूरि के शिष्य नन्नसूरि तथा गोविंदसूरि के उपदेश से, आम राजा के पौत्र भोज राजा ने आम राजा से भी अधिक जैन धर्म की प्रभावना की। इस भोजदेव का दूसरा नाम मिहिर तथा आदि वरहा था। वह संवत् ९०० से लगाकर ९३८ तक गद्दी पर रहा। किसी २ इतिहास वेत्ता के मतानुसार संवत् ९५० तक उसने राज्य किया। *

शिलाचार्य्य

आप निवृत्ति गच्छ के मानदेवसूरि के शिष्य थे। संवत् ९२५ में आपने दस हजार प्राकृत श्लोकों में "महापुरुपचर्य्य" नामक एक गद्यात्मक ग्रन्थ रचा, जिसमें ५४ महापुरुषों का चरित्र है। उसकी छाया लेकर सुप्रख्यात् जैनाचार्य हेमचन्द्रसूरि ने 'त्रिशष्ठिशलाका पुरुष चरित्र' संस्कृत में रचा। इन्हीं आचार्य्य देव ने (शिलाचार्य्य या शिलांगाचार्य्य) संवत् ९३३ में आचारांग सूत्र और सूयगडांग सूत्र पर संस्कृत में वृत्ति रची। उन्होंने इन दो सूत्रों के सहित ग्यारह अंगों पर भी टीका रची। †

हाल में उनकी रची हुई आचारांग सूत्र तथा सूयगडांग सूत्र नामक दो अंगों की टीकाएँ उपलब्ध हैं। उन टीकाओं के अवलोकन से यह प्रतीत होता है कि इनके पहले श्रीगंधहस्तिसूरिजी ने इन सूत्रों की टीका की थी। शीलाचार्य्य को इन टीकाओं के करने में श्री वाहरी गणी से बड़ी सहायता मिली थी। इस बात को वे अपनी टीकाओं में स्वीकार करते हैं।

---

* आम राजा तथा भोजदेव के लिये श्रीमान् ओझाजी कृत राजपूताने के इतिहास के प्रथम खण्ड के पृष्ठ १६१ तथा १६२ देखिये। उक्त पैरेग्राफ मे लक्षणावती नामक नगर का वर्णन आया है, उसका आधुनिक नाम लखनऊ है। गौड़ाधिपति धमराज बंगाल के इतिहास में धर्मपाल के नाम से प्रसिद्ध हैं। वह पाल वंश का प्रतिष्ठाता था और संवत् ७६५ से ८३४ संवत तक उसने राज्य किया।

† जैन साहित्य नो इतिहास पृष्ठ१८१.

सिद्धऋषिसूरि

आप महान जैनाचार्य्य थे। आपने 'उपमिती भव प्रपंच कथा' नाम का एक विशाल महारूपक ग्रन्थ रचा कि जो न केवल जैन साहित्य का सबसे पहला रूपक ग्रन्थ था वरन् समस्त भारतीय साहित्य के रूपक ग्रन्थों में वह शिरोमणि गिना जाता है। उसका साहित्यक मूल्य महान् है। सुप्रख्यात डा० याकोबी अपनी 'उपमिती भव प्रपंच कथा' की अंग्रेजी प्रस्तावना में लिखते हैं—

I did find something still more important. The great literary value of the U. Katha and the fact that it is the first allegorical work in Indian Literature.

अर्थात् मुझे और भी अधिक महत्व की वस्तु मालूम हुई है। उपमिति भव प्रपंच कथा का साहित्यक मूल्य महान् है और यह भारतीय साहित्य का प्रथम रूपक ग्रन्थ है। *

यह ग्रंथ संवत् ९६२ की ज्येष्ठ सुदी पंचमी को समाप्त हुआ था। उपरोक्त सिद्धऋषिसूरि के सम्बन्ध में विभिन्न ग्रंथों में कुछ ऐतिहासिक विवरण हैं। उससे यह प्रगट होता है कि लाटदेश अर्थात् गुजरात में सूर्य्याचार्य्य नामक एक जैन आचार्य्य हुए। † उनके शिष्य के शिष्य दुर्गस्वामी थे। वे मूल में बड़े धनवान, कीर्तिशाली तथा ब्रह्म गौत्र विभूषण ब्राह्मण थे। पीछे से उन्होंने जैन साधु की दीक्षा ली थी। इनका मारवाड़ के भीनमाल नगर में स्वर्गवास हुआ। श्री सिद्धऋषि इन्हीं दुर्गस्वामी के शिष्य थे।

दुर्गस्वामी सिद्धऋषि के गुरु थे और सिद्ध ऋषि ने उनकी अनुकरणीय धर्मवृत्ति की बड़ी प्रशंसा की है। इन दोनों गुरु शिष्यों को गर्गस्वामी ने दीक्षित किया था। ये गर्गस्वामी संवत् ९६२ में विद्यमान थे। उन्होंने 'पासक केवली' तथा 'करम विपाक' नामक ग्रन्थों की रचना की थी।

आचार्य्य सिद्धऋषि ने अपने ग्रन्थ में श्री हरिभद्रसूरि की बड़ी स्तुति की है। आपने कहा है कि मैं "इस प्रकार के हरिभद्रसूरि के चरण की रज के समान हूँ"। इसके आगे चल कर फिर आपने कहा है कि "मुझे धर्म में प्रवेश कराने वाले धर्मबोधक आचार्य्य हरिभद्रसूरि हैं। श्री हरिभद्रसूरि ने अपनी अचिन्त्य शक्ति द्वारा मुझ में से कुर्वासना-मय विष को दूर करने की कृपा की और सुवासना रूप अमृत मेरे लाभ के लिये ढूंढ निकाला। ऐसे हरिभद्रसूरि को मेरा नमस्कार है"।

---

* संवत्सर शत नव के द्विषष्टि सहिते ऽतिलंघिते चास्याः ज्येष्टे सित पंचम्यां पुनर्वसौ गुरु दिने समाप्तिर भूत्

† इन्हे श्री प्रभावकचरित्र मे सूराचार्य्य कहा है।

उपरोक्त वाक्यों से यह प्रतीत होता है कि यद्यपि हरिभद्रसूरि सिद्ध ऋषि के साक्षात गुरु नहीं थे पर उनके परोक्ष धर्मोपदेशक थे। श्री सिद्ध ऋषि ने इस महान् ग्रन्थ की रचना मारवाड़ के भीनमाल नगर के एक जैन देरासर में की थी और श्री दुर्गस्वामी की गणा नाम की शिष्या ने इस ग्रन्थ की प्रथम प्रति लिखी थी।

यह ग्रंथ संस्कृत भापा का एक अमूल्य रत्न है। आंतरिक वृत्तियों का सूक्ष्म इतिहास जैसा इस ग्रन्थ में मिलता है वैसा दूसरे किसी ग्रन्थ में नहीं मिलता। एक विद्वान् का कथन है कि भारतीय धर्म और नीति के लेखकों में सिद्धऋपि का आसन सर्वोपरि है।

आचार्य्य सिद्धऋपि ने और भी कई महत्पूर्ण ग्रन्थ लिखे थे। चन्द्रकेवली* नामक प्राकृत भाषा के ग्रन्थ का आपने संस्कृत में अनुवाद(१) किया था। वि० सं० ९७४ में उन्होंने धर्मनाथ गणी कृत प्राकृत उपदेशमाला की संस्कृत टीका लिखी, जो अतीव महत्वपूर्ण और उपयोगी है। श्री सिद्धसेन दिवाकर कृत न्यायावतार ग्रन्थ पर भी आपने एक वहुत ही उत्तम वृत्ति लिखी है। तत्वार्थाधिगम नामक सूत्र पर भी सिद्ध ऋषि की एक वृत्ति है पर ये सिद्धऋपि उक्त सिद्धऋपि से जुदे मालूम पड़ते हैं।

श्री प्रभावक चरित्र में श्री सिद्ध ऋपि, उनकी गुरु परंपरा तथा हरिभद्रसूरि के साथ का उनका सम्बन्ध आदि वार्तों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है। कहने का अर्थ यह है कि श्री सिद्ध ऋपि आचार्य्य जैन साहित्य के प्रकाशमान रत्न थे और उनकी उपमिती भवप्रपंच कथा मानवीय हृदयों को जीवन के उच्चातिउच्च क्षेत्र में लेजाकर शान्ति के अलौकिक वायु मण्डल से परिवेष्ठित कर देती है।

आचार्य्य जम्मूनाथ

आप बड़े विद्वान् जैन ग्रन्थकार थे। विद्वत्समाज में आपका बड़ा गौरव था। सवत् १००५ में आपने मणिपति चरित्र नामक ग्रन्थ की रचना की। इसके वाद आपने जिनशतक काव्य वनाया, जिसपर संवत् १०२५ में सांव मुनिने इसपर विस्तृत टीका लिखी। मुनी जम्मूनाथ ने दूत काव्य नामक एक अन्य काव्य-ग्रन्थ भी रचा था।

मुनी प्रद्युम्नसूरि

चन्द्रगच्छ में प्रद्युम्नसूरि नामक एक जैन साधु हो गये। आप वैदिक शास्त्र के बड़े पारगामी

* इस ग्रंथ की मूल प्रति श्री कांति विजयजी के वड़ौदे के भण्डार में मौजूद है।

(१) वस्वङ्केषु मिते वर्षे श्री सिद्धर्षिरिदं महत्।
प्राक् प्राकृत चरित्राद्ध पि चरित्रं संस्कृत व्यधात् ॥

विद्वान् थे, उन्होंने अल्ल (२) की राजसभा में दिगम्बरियों को परास्त किया था। इसके अलावा उन्होंने सपादलक्ष, त्रिभुवनगिरि आदि राजाओं को जैन धर्म में दीक्षित किया था। ये बड़े जबर्दस्त तर्कवादी थे। आपके शिष्य समुदाय के माणिकचन्द्रसूरि ने अपने पार्श्वनाथ चरित्र की प्रशस्ति में आपके गुणों का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है।

मुनी न्यायवनासिंह

आप प्रद्युम्नसूरि के शिष्य थे। सुप्रख्यात आचार्य्य अभयसेनसूरि सिद्धसेन दिवाकर कृत सन्मति तर्क नामक ग्रंथ पर आपने तत्त्वबोध विधायनी टीका रची, जो "वाद महार्णव" नाम से प्रख्यात् है। इस पर से आपकी अगाध विद्वत्ता का पता चलता है। यह अनेकान्त दृष्टि का दार्शनिक ग्रंथ है और उसमें अनेकांत दृष्टि का स्वरूप और उसकी व्याप्ति तथा उपयोगिता पर बहुत ही अच्छा प्रकाश डाला गया है। इसमें सैकड़ों दार्शनिक ग्रंथों का दुहन करके जैन धर्म के गूढ़ातिगूढ़ दार्शनिक सिद्धान्तों को बहुत ही उत्तमता के साथ समझाया गया है।

महाकवि धनपाल

सुप्रख्यात् विद्याप्रेमी महाराजा भोज मालवाधिपति की सभा में जो नवरत्न थे, उनके महाकवि धनपाल का आसन अपना विशेष स्थान रखता था। बाल्यावस्था से ही महाराजा भोज और धनपाल में बड़ी मैत्री का सम्बन्ध था। महाराज ने इनकी अगाध विद्वत्ता से प्रसन्न होकर इन्हें "सरस्वती" की उच्च उपाधि से विभूषित किया था। महाकवि धनपाल पहिले वैदिक धर्मावलम्वी थे पर पीछे से अपने बन्धु सोभनमुनि के संसर्ग से उन्होंने जैनधर्म स्वीकार किया। इतना ही नहीं, उन्होंने महेन्द्रसूरि नामक जैन साधु के पास से स्याद्वाद् सिद्धान्त का अध्ययन कर जैन दर्शन में गम्भीर पारदर्शिता प्राप्त की थी। महाकवि धनपाल के इस धर्म परिवर्तन से महाराजा भोज को बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने धनपाल से इस संबंध में शास्त्रार्थ किया। पर इसमें महाकवि धनपाल ने जैन धर्म के महत्वको महाराजा भोज पर अंकित किया।

महाकवि धनपाल बड़े प्रतिभाशाली कवि और ग्रंथकार थे। आपकी लिखी हुई "तिलक मञ्जरी" बड़ा ही उच्च श्रेणी का ग्रंथ है। इसमें जैन सिद्धान्तों का गम्भीर तथा सुन्दर विवेचन है।

इस ग्रन्थ के अवलोकन से महाकवि धनपाल के उदार हृदय का पता लगता है, आपने स्वमत तथा

(२) अल्लू से शायद मेवाड़ के अल्लू रावल का बोध होता है। संवत् १००८ के शिला लेखों से ज्ञात होता है कि वह मेवाड़ के आहड़ (आघाट) प्रान्त में राज करता था

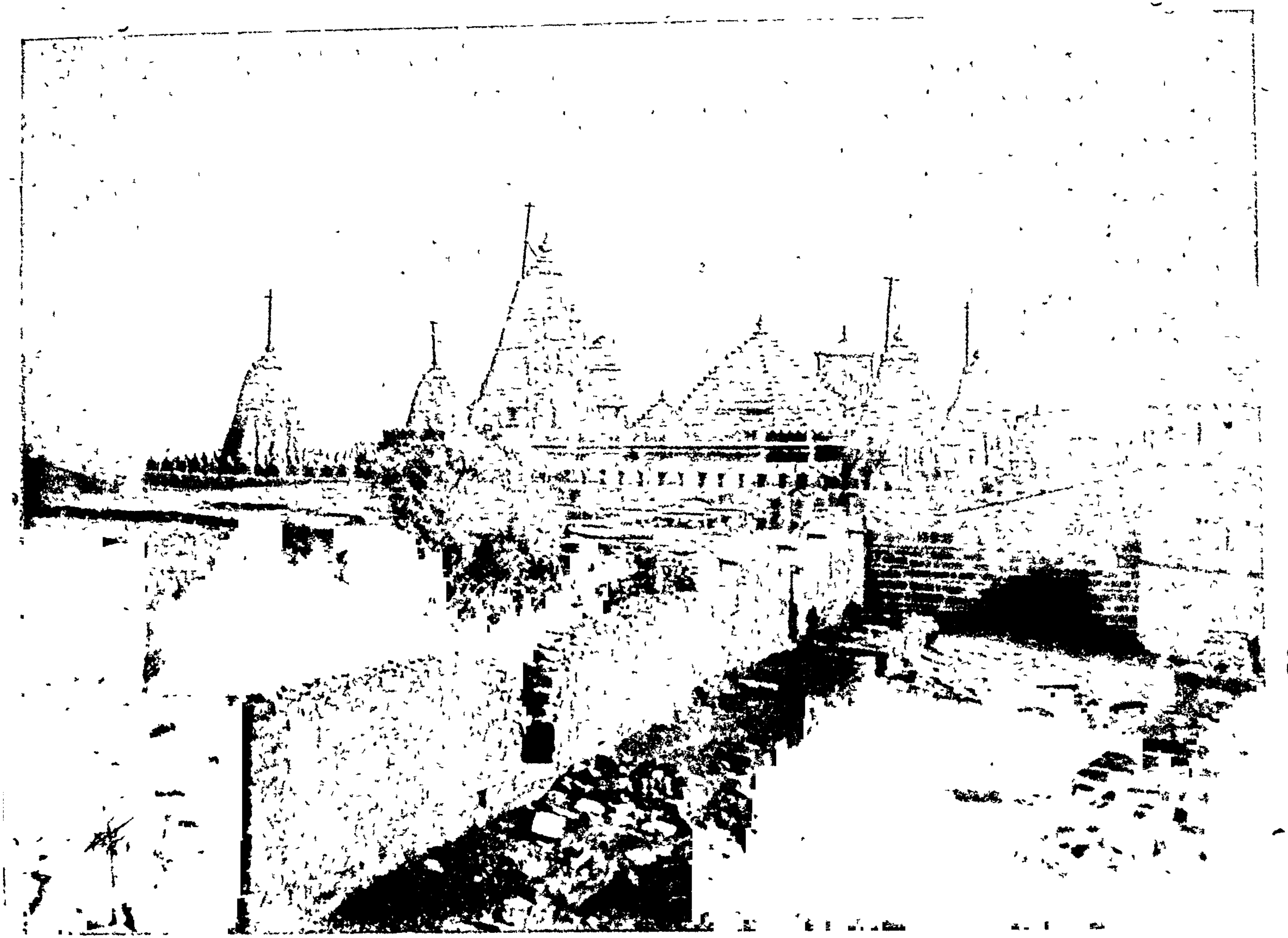
पर मत के महाकवियों की और उनकी कृतियों की बड़ी प्रशंसा की है। इन्द्रभूति, गणधर, वाल्मीकि, वेद-व्यास, गुणाढ्य, (बृहत्कथाकार) प्रवरसेन पाद लिप्त कृत तरंगवती, जीवदेवसूरि, कालिदास, बाण, भारवी, हरिभद्रसूरि, भवभूति, वाक्पति राज, बपभट्ट, राजशेखर कवि, महेन्द्रसूरि, रुद्रकवि आदि अनेक महाकवियों की बड़ी प्रशंसा की है। महाकवि धनपाल का तिलक मंजरी ग्रंथ संस्कृत साहित्य का एक अमूल्य रत्न है। यह ग्रंथ बड़ा ही लोक प्रिय है। इसकी समग्र कथा सरल और सुप्रसिद्ध पद्यों में लिखी गई है। प्रसाद गुण से वह अलंकृत है। हेमचन्द्राचार्य्य सरीखे प्रकाण्ड विद्वानों ने इस ग्रन्थ को उच्चकोटि का ग्रंथ माना है। उन्होंने अपने काव्यानुशासन में उसका बहुत कुछ अनुकरण करने की चेष्टा की है। यह कथा नवरस और काव्य से परिपूर्ण है। प्रभावक चरित्रकार का कथन है, कि उक्त कथा को जैनाचार्य्य शांतसूरिजी ने संशोधित किया था। संवत् ११३० की लिखी हुई इसकी १ प्रति इस समय भी जैसलमेर के भण्डार में विद्यमान है। इसके अतिरिक्त महाकवि धनपाल ने प्राकृत भाषा में श्रावकविधि, ऋषभ पंचाशिका, "सत्यपुरीय श्रीमहावीर उत्साह" नामक ग्रन्थ रचे, जिनमें अंतिम ग्रंथ स्तुति काव्य पर है, और उसमें कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिक जानकारी है।

आचार्य्य शन्तिसूरिजी

आप प्रभावशाली तथा विद्वान थे। आपने ७०० श्रीमाली कुटुम्बों को जैन बनाया था। आप वड़गच्छ के थे। महाराजा भोज ने आपको अपनी राजधानी धार में निमंत्रित किया था। वहाँ विद्वानों की सभा में आपने अपनी अलौकिक प्रतिभा का परिचय दिया, इससे महाराजा भोज ने आपको "वादि बैताल" की उपाधि से विभूषित किया। आपने जैनियों के सुप्रसिद्ध उत्तराध्ययन "सूत्र पर बड़ी ही सुन्दर टीका की। उसमें प्राकृत भाषा का बाहुल्य होने से उसका नाम" "पाईय टीका" रक्खा गया। संवत् १०९६ में आपका स्वर्गवास हुआ।

आचार्य्य वर्द्धमानसूरि

संवत् १०५५ में आपने हरिभद्र कृत उपदेश पद की टीका की। इसके अतिरिक्ति आपने उपदेश माला वृहद् वृत्ति नामक ग्रन्थ लिखा। विक्रम संवत् ९४५ का कटिग्राम में एक प्रतिमा लेख प्राप्त हुआ है, जिसमें आपके नाम का उल्लेख है। संवत् १०८८ में आपका स्वर्गवास हुआ।



(पश्चात् भाग) श्रीपार्श्वनाथ मंदिर लोद्रवा जैसलमेर) (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

आचार्य्य अभयदेवसूरिजी

आप बड़े प्रभावशाली जैन आचार्य्य थे। सुप्रसिद्ध गुर्जराधिपति राजा सिद्धराज जयसिंह ने आप को "मलधारी" की उपाधि से विभूषित किया था। सौराष्ट्र के राजा खेंगार ने भी आपका बड़ा सन्मान किया था। आपने एक हजार से अधिक ब्राह्मणों को जैन धर्म में परिवर्तित किया। आपके उपदेश से भुवनपाल राजा ने जैन मन्दिर में पूजा करने वालों पर लगने वाला कर माफ़ किया था। शांकभरी (सांभर) के राजा पृथ्वीराज ने आपके उपदेश से रणथंभोर नगर में जैन मन्दिर बनवा कर उस पर स्वर्ण कलश चढ़वाया। आपके प्रतिबोध से सिद्धराज ने अपने राज में पर्यूषण पर्व पर हिंसा करने की मनाही कर दी थी। विक्रम संवत् ११४२ की माघ सुदी ५ को अंतरीक्ष पार्श्वनाथ की मूर्ति की आपने प्रतिष्ठा की। उक्त अंतरीक्ष पार्श्वनाथ का तीर्थ आज दिन भी प्रसिद्ध है। श्री भावविजय गणीजीने अपने अंतरीक्ष महात्म्य में आपकी इस प्रतिष्ठा का सविस्तृत उल्लेख किया है।

आपने अपने जीवन के अन्तिम काल में अनशनव्रत धारण किया और इसीसे आप अजमेर नगर में स्वर्गधाम पधारे। आपका अग्निसंस्कार बड़े धूमधाम के साथ हुआ। रणथंभोर के जैन मन्दिर के एक शिलालेख में लिखा है कि "अजमेर के तत्कालीन राजा जयसिंहराज अपने मन्त्रियों सहित आपकी रथी के साथ श्मशान तक गये थे"। इतना ही नहीं प्रति घर एक एक आदमी को छोड़ कर अजमेर नगर की सारी की सारी जनता आपके अग्नि संस्कार के समय उपस्थित थी।

आचार्य्य जिनदत्तसूरिजी

आप आचार्य्य जिनवल्लभसूरिजी के पट्टधर शिष्य थे। आपने हजारों राजपूतों को प्रतिबोध देकर उन्हें जैन श्रावक अर्थात् ओसवाल बनाया था। आप बड़े प्रभावशाली और विद्वान् आचार्य्य थे और आज यद्यपि आपका शरीर इस संसार में नहीं है पर आज भी आप सारे जैन संसार में दादा नाम से विख्यात हैं। संवत् ११६९ में आपको सूरिपद प्राप्त हुआ। संवत् १२११ में अजमेर में आपका स्वर्गवास हुआ, जहाँ आपका स्मारक अभी तक विद्यमान है जो दादा वाड़ी के नाम से विख्यात है। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की, जिनमें निम्नलिखित ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं। (१) गणधर सार्धशतक प्राकृत गाथा (२) संदेह दोलावली (३) गणधर सप्तती (४) सव धिष्ठायि स्तोत्र (५) सुगुरु पारतंत्र्य (६) विघ्न विनाशी स्तोत्र (७) अवस्था कुलक (८) चैत्य वंदन कुलक, आदि आदि।

आचार्य्य नेमीचन्द्रसूरिजी

आपका दूसरा नाम देवेन्द्रगणि था। आप बड़गच्छ के आम्रदेवसूरि के शिष्य थे। विक्रम संवत् ११२९ में आपने उत्तराध्ययन सूत्र पर टीका की। आपने पर वचन सारोद्धार आख्यान मणिकोष तथा वीर चरित्र आदि ग्रन्थ रचे हैं। आपको सैद्धान्तिक शिरोमणि की उपाधि भी प्राप्त थी।

आचार्य्य जिन वल्लभसूरि

जैन धर्म के आप महान् प्रतिभाशाली, कीर्तिमान और प्रख्यात् आचार्य्य थे। आप खरतरगच्छ के जन्मदाता कहे जाते हैं। चित्रकूट में आपने अपने उपदेश से सैकड़ों आदमियों को जैन धर्म से दीक्षित किया और २ विधि चैत्य की प्रतिष्ठा की। इसके बाद आप ने बागड़ प्रान्त के लोगों को जैन धर्म का प्रतिबोध दिया और वहाँ भगवान महावीर की धर्मध्वजा उड़ाई। इसके बाद आप धारा नगरी पधारे, जहाँ के राजा नरवर ने आपका बड़ा आदरातिथ्य किया। इसके बाद आपने नागोर में नेमिजिनालय की और नरवरपुर में विधि-चैत्य की प्रतिष्ठा की।

अभयदेव सूरि के आदेश से देवभद्राचार्य्य ने आपको सूरि का पद प्रदान किया। इससे वे अभयदेव सूरि के पट्ट-धर शिष्य हो गये। इसके ६ मास बाद संवत् ११६७ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपने कई ग्रंथ रचे, जिनमें से कुछ के नाम इस प्रकार हैं। (१) पिंड विशुद्धि प्रकरण (२) गणधर सार्धशतक (३) आगमिक वस्तु विचारसार (४) पौषध विधि प्रकरण (५) संघ पट्टक प्रतिक्रमण समाचारी (६) धर्म शिक्षा (७) धर्मोपदेशमय द्वादश कूलकरूप प्रकरण (८) प्रश्नोत्तर शतक (९) शृंगार शतक (१०) स्वप्नाष्टक विचार (११) चित्रकाव्य (१२) अजित शांति स्तव (१३) भावारि वारण स्तोत्र (१४) जिनकल्याणक स्तोत्र (१५) जिन चरित्रमय जिन स्तोत्र (१६) महावीर चरित्रमय वीरस्तव आदि आदि॥

कहा जाता है कि संवत् ११६४ में जिन वल्लभसूरिजी ने अपनी कृतियों में से अष्टसप्तति का संघ पट्टक और धर्म शिक्षा आदि को चित्रकूट, नरवर, नागोर, मरुपुर आदि के स्वप्रतिष्ठित विधि चैत्यों में प्रशस्ति रूप से खुदवाये।

कक्क सूरिजी

आप उकेशगच्छ के देवगुप्त सूरि के शिष्य थे। आपने श्री हेमचन्द्राचार्य्य तथा कुमारपाल राजा

की प्रेरणा से क्रियाहीन चैत्यवासियों को हराकर गच्छ से बाहर किये। ये महान् विद्वान् और प्रभावशाली थे। उन्होंने पंच प्रमाणिका, तथा जिन-चैत्य-वंदन विधि आदि बहुत से ग्रन्थ रचे। संवत् ११५४ में आपका देहान्त हुआ।

देवभद्रसूरिजी

आप संवत् ११६८ में विद्यमान थे। आपने अनेक ग्रंथ रचे जिनमें पार्श्वनाथ चरित्र, संवेग रंगशाला, वीरचरित्र तथा कथा रत्न कोष आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। जिस वक्त आपने भड़ौच में श्री पार्श्वनाथ चरित्र रचा था उस समय वहां मुनि सुव्रतस्वामी का स्वर्ण गुम्मज वाला जैन मन्दिर विद्यमान था।

श्री हेमचन्द्राचार्य्यजी

जैन साहित्याकाश में श्री हेमचन्द्राचार्य्य का नाम शरद् पौर्णिमा के पूर्ण चन्द्र की तरह आलोकित हो रहा है। संसार के अत्यन्त प्रकाशमान विद्वानों, कवियों और तत्वज्ञों में हेमचन्द्राचार्य्य का आसन बहुत ऊँचा है। श्री हेमचन्द्राचार्य की विद्वत्ता अलौकिक और अगाध थी। उनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। उन्होंने विविध विषयों पर महान् ग्रन्थ रचे जो आज भी संस्कृत साहित्य के लिये बड़े गौरव की वस्तु हैं।

इन महाप्रतिभाशाली आचार्य्यदेव का जन्म संवत् ११४५ की कार्तिक पौर्णिमा के दिन हुआ। "होनहार बिरवान के होत चीकने पात" वाली कहावत इनपर पूर्ण रूप से लागू होने लगी। थोड़ी ही अवस्था में आपने देवचन्द्र सूरि से जैनधर्म की दीक्षा ली। आप पूर्व जन्म के सुसंस्कार से कहिये तथा आपकी तीव्र स्मरण शक्ति वा धारणा शक्ति से कहिये, आपने जैन शास्त्रों का गंभीर ज्ञान प्राप्त कर लिया। उत्कट आत्म संयम, इन्द्रिय दमन, वैराग्य वृत्ति से आजन्म तक आपने नैष्टिक ब्रह्मचर्य्य व्रत सेवन किया। पहिले आपका नाम सोमचन्द्र था, पर संवत् ११६२ में आप के गुरू ने मारवाड़ के नागोर नगर में आपको आचार्य्य पद से विभूषित किया और आप का नाम सोमचन्द्र से बदल कर हेमचन्द्र रक्खा। धीरे २ आप की विद्वत्ता का प्रकाश बढ़ती हुई चन्द्रकला की तरह चमकने लगा। आप विविध ग्रामों में घूमते हुए गुजरात की तत्कालीन राजधानी अणहिलपुरपाटण में पधारे। उस समय वहाँ महाराज सिद्धराज जयसिंह राज्य करते थे। ये बड़े पराक्रमी, प्रजाप्रिय और विद्वानों का बड़ा सत्कार करनेवाले थे। हेमचन्द्राचार्य्य की कीर्ति शीघ्र ही सारे नगर से फैल गई। राजा ने आप को अपनी सभा में निमन्त्रित किया। आचार्य्यवर के अलौकिक व्यक्तित्व से सारी सभा में संस्कृति का प्रकाश चमकने लगा। श्री हेमचन्द्राचार्य्य के अगाध

पांडित्य और अनुकरणीय दूरदर्शिता से सिद्धराज नरेश और उनका मन्त्रि मण्डल बहुत ही प्रभावित हुआ। आपने जैनधर्म के सिद्धान्तों को इतनी खूबी के साथ राजा और उनकी विद्वन्मण्डली के सम्मुख रक्खा, कि सब लोग आप को अकाट्य दलीलों पर वाह २ करने लगे। पहिले कहा जा चुका है कि महाराज सिद्धराज जयसिंहदेव विद्या के अनन्य प्रेमी व विद्वानों के भक्त थे तथा इसके कुछ ही समय पहिले जयसिंहदेव ने सुप्रख्यात् विद्याप्रेमी मालवाधिपति राजा भोज पर विजय प्राप्त की थी। मालवे की राजधानी धारा नगरी की समग्र समृद्धि तथा भोज राजा का विशाल पुस्तक भंडार पाटण में लाया गया था। विजयलक्ष्मी से सुशोभित होकर जब महाराजा पाटन में आये, तब अनेक पंडित उन्हे आशीर्वाद देने के लिये उनके महल में उपस्थित हुए। कहने की आवश्यकता नहीं कि हेमचन्द्रसूरि भी राजा को आशीर्वाद देने पधारे। इस समय आपने महाराजा भोज के ग्रन्थ भण्डार का निरीक्षण किया। भण्डार के रक्षकों ने उस समय भण्डार से एक ग्रन्थ निकाल कर राजा की सेवा में भेंट किया, उस पर राजा ने आचार्य्य देव से पूछा कि "यह क्या ग्रन्थ है।" तब आचार्य्यदेव ने जवाब दिया, "यह भोज व्याकरण नाम का शब्द शास्त्र है" इसके बाद भोज की प्रशंसा करते हुए आचार्य्य देव ने महाराजा जयसिंह से कहा कि "मालव नरेश भोज विद्वच्चक्र शिरोमणि थे।" उन्होंने शब्द शास्त्र, अलंकारशास्त्र, ज्योतिषशास्त्र, तर्कशास्त्र, चिकित्सा शास्त्र, राजनीतिशास्त्र, तरुशास्त्र, वास्तुलक्षण, अंकगणित शकुन विद्या, अध्यात्म शास्त्र, स्वप्नशास्त्र, सामुद्रिकशास्त्र, आदि अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया था। यह सब सुन कर सिद्धराज जयसिंहदेव बोले, "क्या हमारे यहाँ इस प्रकार का सर्व शास्त्र, निष्णात पंडित नहीं हैं?" इस समय सब उपस्थित विद्वानों की दृष्टि आचार्य्य हेमचन्द्र पर पड़ी। राजा ने हेमचन्द्र से विनय की कि आप 'शब्द व्युत्पत्ति' शास्त्र पर कोई ग्रन्थ रच कर हमारे मनोरथ को सफल करें। आपके सिवाय इस कार्य्य को पूरा करने वाला कोई दूसरा विद्वान् नहीं है। मेरा देश और मैं धन्य हूँ, कि जिसमें आप सरीखे अलौकिक विद्वान् निवास करते हैं।

श्री हेमचन्द्राचार्य्य ने राजा की अभिलाषानुसार "सिद्ध हेम व्याकरण" नामक महान् ग्रन्थ रचा। राजा को उक्त ग्रन्थ बहुत पसन्द आया, और उन्होंने अपने देश में उसके अध्ययन और अध्यापन का प्रारम्भ किया। इतना ही नहीं उन्होंने अपने मित्र राजाओं को भी लिख कर अङ्ग, वङ्ग, कलिंग लाट और कर्नाटक आदि देशों में भी उसका प्रचार करवाया और उसकी २० प्रतियाँ काश्मीर भेजीं। उसकी कुछ प्रतियां अपने राजकोष में भी रक्खीं। जो लोग इस व्याकरण का अध्ययन करते थे, उन्हें राज्य की ओर से कॉफी उत्तेजन मिलता था। काकल नामक अष्ट व्याकरण का एक विद्वान कायस्थ इस व्याकरण को पढ़ाने के लिये रक्खा गया। ज्ञान पंचमी आदि दिनों में इसकी पूजा अर्चना होने लगी। (श्री प्रभावक चरित्र श्लोक ९५—११५) इतना ही नहीं यह ग्रन्थ स्वयं राजा की सवारी करने के हाथी पर रख कर बड़े समारोह

के साथ राज दरबार में लाया गया। जब हाथी पर इस ग्रन्थ की सवारी निकल रही थी तब दो सुन्दरियाँ इस पर चँवर डुला रही थी। इसके बाद राजसभा में विद्वानों द्वारा इसका पठन करवाया गया। यह व्याकरण भारतवर्ष के विद्वानों में अत्यधिक विश्वसनीय और माननीय समझा जाता है। पाणिनी और शाकटायन को छोड़कर इस व्याकरण के बराबर किसी भी अन्य संस्कृत व्याकरण का आदर नहीं है।

श्री हेमचन्द्राचार्य्य ने लोक-कल्याण में अपने जीवन को समर्पित कर दिया था। वे महाप्रभावशाली पुरुष थे। उन्होंने कोई १॥ लाख मनुष्यों को जैनधर्म का अनुयायी बनाया। उन्हीं के उपदेश से कुमारपाल ने जैनधर्म की बड़ी ही प्रशंसनीय प्रभावना की। जिस प्रकार आचार्य्य श्री ने सिद्धराज के आग्रह से सिद्ध हेम व्याकरण रचा उसी प्रकार आपने कुमारपाल के लिए योगशास्त्र, वीतराग स्तोत्र, त्रिशष्टि शलाका पुरुष चरित्र नामक ग्रन्थ रचे। इनके अतिरिक्त द्वयाश्रय, छंदोनुशासन, अलंकार, नाम संग्रह, आदि महत्वपूर्ण ग्रन्थ भी निर्मित किये। श्री हेमचन्द्राचार्य्य के जीवन को जगत में शाश्वत प्रकाशित रखने वाला उनका अगाध ज्ञान और उनके अलौकिक ग्रन्थ हैं। उन जैसे सकलशास्त्रों में पारंगत विद्वान जगत के इतिहास में बहुत ही कम मिलेंगे। अपने अपरिमित ज्ञानही के कारण वे कलिकाल सर्वज्ञ कहलाये। सुप्रख्यात् पाश्चात्य विद्वान पिटर्सन ने उन्हें ज्ञान का सागर (Ocean of knowledge) कहा है। कहा जाता है कि उन्होंने ३॥ करोड़ श्लोकों की रचना की।

यद्यपि अभी तक आचार्य्य हेमचन्द्र का इतना साहित्य उपलब्ध नहीं है, पर जो कुछ भी उपलब्ध है वह इतना विशाल है कि जिसे देखकर आचार्य्य श्री की अगाध विद्वत्ता का पता मिलता है।

हेमचन्द्राचार्य्य की साहित्य सेवा

श्री हेमचन्द्राचार्य्य की साहित्य सेवा का थोड़ा सा परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। आचार्य्य श्री के व्याकरण के सम्बन्ध में यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त है कि उक्त व्याकरण अति प्रामाणिक सुबोध, सरल और विश्वसनीय है। पूर्व समय के आपिशली, यास्क, शाकटायन, गार्ग्य, वेद मित्रशाकल, चन्द्रगोमी, शेषभट्टारक, पतंजली, पाणिनि, देवनंदी, जयादित्य, विश्रांत, विद्याधर, विश्रान्तन्यासकार, जैन शाकटायन, दुर्गसिंह, श्रुतपाल, क्षीर स्वामी, भोज, नारायण कंठी, द्रमिल, शिक्षाकार, उत्पल, न्यासकार, पारायण कार, आदि अनेक प्रसिद्ध पूर्वगामी व्याकरणों का उल्लेख आपके व्याकरण में मिलता है। आपने अपने व्याकरण में इन सब वैयाकरणों के मतों का बड़े ही विवेक के साथ उपयोग किया है और कहीं २ उनकी समालोचना भी की है। इससे आपका व्याकरण भारतीय साहित्य के इतिहास में एक अलौकिक वस्तु हो गया है।

श्री हेमचन्द्राचार्य ने कई काव्य ग्रन्थ भी लिखे हैं। आपका द्वाश्रय महाकाव्य अति महत्व का ऐतिहासिक ग्रन्थ है। उसमें विशेष कर चालुक्य वंश तथा सिद्धराज जयसिंह का दिग्विजय वर्णन है। आपका दूसरा काव्य कुमारपाल चरित्र है, वह भी काव्य चमत्कृति का एक नमूना है। आपका योग शास्त्र भी अपने विषय का अपूर्व ग्रन्थ है। इस विषय को आपने बड़ी ही सरलता के साथ समझाया है और विविध योग क्रियाओं का अनुभवपूर्ण वर्णन किया है। इसी प्रकार दर्शन शास्त्रों पर भी आपने बहुत कुछ लिखा है। आपका काव्यानुशासन ग्रन्थ साहित्यशास्त्र का एक अमूल्य रत्न है। इसी प्रकार आपका छंदानुशासन ग्रन्थ काव्य-शास्त्र में अपना उच्च स्थान रखता है। आपने ४ कोष ग्रन्थ भी लिखे हैं जो भारतीय साहित्य के बहुमूल्य रत्न हैं। इस प्रकार सैकड़ों ग्रन्थ लिख कर आपने साहित्य संसार में अमर कीर्ति पाई है।

सुप्रख्यात् विद्वान् आचार्य आनन्दशंकर ध्रुव का कथन है कि "ईसवी सन् १०८९ से लगाकर ११७२ तक का समय कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य्य के तेज से देदीप्यमान हो रहा था।" इन प्रतिभाशाली आचार्य्य देव का स्वर्गवास सं० १२२९ में हुआ।

रामचन्द्रसूरि

आप श्री हेमचन्द्राचार्य्य के पट्टधर शिष्य थे। सिद्धराज जयसिंह ने आपको "कवि कटारमल" नामक उपाधि प्रदान की थी। आपने अपने रघुविलास, कौमुदी, आदि ग्रंथों में अपने आपको अचुम्बित काव्यतंद्र, विपोर्ण काव्य निर्माण तन्द्र, आदि विशेषणों से युक्त किया है। आपमें समस्या पूर्ति करने की अद्भुत् शक्ति थी। शब्द शास्त्र, काव्य शास्त्र तथा न्यायशास्त्र के आप बड़े पण्डित थे। यह बात आपने अपने नाट्य दर्पण विवृत्ति नामक ग्रंथ में भी प्रगट की है। महाकवि श्रीपाल कृत, "सहस्र लिंग सरोवर" की प्रशस्ति में काव्य दृष्टि से आपने कई दोष निकाल कर सिद्धराज को बतलाये थे। जिसका उल्लेख प्रबन्ध चिंतामणि नामक ग्रन्थ में किया गया है। जयसिंह कृत कुमारपाल चरित्र में लिखा है कि जब १२२९ में श्री हेमचन्द्राचार्य्य का स्वर्गवास हुआ और कुमारपाल को महाशोक हुआ तब रामचन्द्रसूरि ने अपने शांतिमय उपदेशामृत से उक्त राजा को बड़ी सान्त्वना दी थी।

रामचन्द्र सूरि ने स्वोपज्ञ वृत्ति सहित द्रव्यालंकार और विवृत्ति सहित नाट्य दर्पण नामक ग्रन्थों की रचना की। पहला ग्रन्थ जैन दर्शन से सम्बन्ध रखता है और उसमें जीव-द्रव्य, पद्गल द्रव्य, धर्म, अधर्म, आकाश, आदि का बहुत ही सूक्ष्म विवेचन किया है। दूसरा ग्रन्थ नाट्य शास्त्र सम्बन्धी है, इसमें नाटक, नाटिका, प्रकरण, प्रकरणी, व्यायोग, समवकार, भाण, प्रहसन डिम, अक, आदि १२ रूपक का

* प्रभावक चरित्र श्लोक १२६ से १३७ तक।

स्वरूप दिखलाया गया है और उसके निरूपण में लगभग ५५ नाटकादि निबन्धों के उदाहरण दिये गये हैं।

प्रबन्ध चिंतामणि नामक ग्रन्थ में रामचन्द्रसूरि को प्रबन्धशतकर्त्ता के नाम से सम्बोधित किया गया है। इससे कितने ही विद्वानों ने यह अनुमान किया है कि उन्होंने सब मिला कर सौ ग्रन्थों की रचना की होगी। पर फिल हाल उनके इतने ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। फिलहाल उनके जो जो ग्रन्थ उपलब्ध हैं, वे निम्न लिखित हैं। सत्य हरिश्चन्द्र नाटक, कौमुदी मित्रानंद, निर्भय भीम व्यायोग, राघवाभ्युदय, यादवाभ्युदय, यदुविलास, रघुविलास, नवविलास नाटक, मल्लिका मकरन्द प्रकरण, रोहिणी मृगाँक प्रकरण, वनमाला नाटिका, कुमार विहारशतक, सुधाकलश, हैम बृहद वृत्ति न्यास, युगादिदेव द्वात्रिंशिका, प्रसाद द्वात्रिंशिका आदिदेवस्तव, मुनिसुव्रतस्तव, नेमिस्तव, सोलाजिनस्तव, तथा जिन शास्त्र। इन तमाम ग्रन्थों की रचना मौलिक है और उसमें लेखक के महान् व्यक्तित्व की छाप जगह २ पर प्रकट होती है।

महेन्द्रसूरि

रामचन्द्र सूरि के अतिरिक्त हेमचन्द्राचार्य्य के गुणचन्द्र, महेन्द्रसूरि, वर्द्धमानसूरि, सोमप्रभसूरि आदि कई शिष्य थे। गुणचन्द्रसूरि ने, रामचन्द्रसूरि के साथ मिल कर कुछ ग्रंथों की रचना की थी। महेन्द्रसूरि ने संवत् १२४१ में श्री हेमचन्द्राचार्य्य कृत कैरवा कर कोमुदी नामक ग्रन्थ की टीका की। श्री वर्द्धमान गणि ने कुमार विहार प्रशस्ति काव्य नामक ग्रन्थ की रचना की। उक्त तीनों मुनी राजों का प्रतिबोधक व्याख्यान राजा कुमारपाल ने सुनाया। हेमचन्द्र के एक दूसरे शिष्य देवचन्द्र ने एक 'चन्द्रलेखा विजय' नामक ग्रन्थ रचा। कहने का अर्थ यह है कि श्री हेमचन्द्राचार्य्य के बाद भी उनके शिष्यों का गुजरात के तत्कालीन नरेशों पर अच्छा प्रभाव था।

यह कहने में तनिक भी अतिशयोक्ति न होगी कि हेमचन्द्राचार्य्य अपने युग से प्रवर्तक थे। जैन साहित्य के इतिहास में वह युग "हेमयुग" के नाम से प्रसिद्ध है। जैन शासन और साहित्य के लिये यह युग वैभव, प्रताप तथा विजय से दैदीप्यमान युग था। उसका प्रभाव सारे गुजरात पर पड़ा और आज भी उस युग को लोग हेम-मय, स्वर्णमय युग कहकर स्मरण करते हैं।

मल्लवादी आचार्य्य

आप भी जैन साहित्य के अच्छे विद्वान् थे। आपने धर्मोतर टिप्पणक नामक प्राकृत भाषा का एक ग्रन्थ ताड़ पत्र पर लिखा, जिसकी मूल कापी अब भी पाटन के भण्डार में मौजूद है।

रत्नप्रभसूरि

आप महान आचार्य्य श्री वादिदेवसूरिजी के शिष्य थे। संवत् १२३३ में आप विद्यमान थे। आपने प्राकृत भाषा में नेमिनाथ चरित्र नामक ग्रन्थ रचा। संवत् १२३८ में आपने भड़ोंच नगर में श्री धर्मदासकृत उपदेशमाला पर टीका की। इसके अतिरिक्त आपने श्री वादीदेवसूरि रचित "स्याद्वाद रत्नाकर" की अत्यन्त गहन रत्नाकर अवतारिका नामक टीका की। इसके अलावा आपका इस समय कोई ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हो रहा है।

महेश्वरसूरि

आप भी वादिदेव सूरि के शिष्य थे। आपने पाक्षिक सप्तति नामक ग्रन्थ पर सुख प्रबोधिनी नामक टीका रची, जिसमें आपको वज्रसेन गणि से भी बहुत मदद मिली थी।

आसड़

आप जैन साहित्य के महान् कवि और श्रावक थे। आप श्रीमाल वंश के कटुक राजा के पुत्र थे। उक्त राजा की जैन दर्शन में पूर्ण श्रद्धा थी। आपने जैन सिद्धान्त का बहुत गम्भीर अध्ययन किया था। आप "कवि सभा शृंगार" नामक उपाधि से विभूषित थे। इसके अतिरिक्त आपने कालिदास, मेघदूत पर और अनेक जैन स्तोत्रों पर टीकाएं रचीं। आपने उपदेश कंदली नामक एक ग्रंथ भी बनाया। आपका "बाल सरस्वती" नामक प्रख्याति पाये हुये विद्वान पुत्र का तरुणावस्था में देहान्त हो गया था। इससे आप पर शोक का बहुत जोरों का प्रादुर्भाव हुआ। ऐसे समय में श्री अभयदेव सूरि ने आपको धर्मोपदेश देकर सान्त्वना दी। उन्हीं उपदेशों को ग्रंथित करके आपने विवेक मंजरी नामक ग्रंथ प्रकाशित किया।

बालचन्द्रसूरि

आप संस्कृत साहित्य के महान् कवि थे। आपने वसन्त विलास नामक एक बड़ा ही मधुर काव्य रचा। इस काव्य का रचना काल संवत् १२७७ से ८७ के मध्य तक अनुमान किया जाता है। इसके पहिले आपने आदि जिनेश्वर नामक स्तोत्र भी रचा था।

अमरचन्द्रसूरि

आप संस्कृत साहित्य के बड़े ही नामांकित विद्वान् थे। आप के ग्रंथों की कीर्ति न केवल जैन समाज में वरन् ब्राह्मण समाज में भी फैली हुई थी। ब्राह्मणों में उनके बालभारत और कवि कल्पलता ग्रंथ विशेष प्रख्यात् हैं। आप ने कवि कल्प लता पर "कवि शिक्षा" नाम की टीका भी रची। इसके अतिरिक्त आपने छंदो रत्नावली, काव्य कल्प लता परिवल, अलंकार प्रबोध, स्याद्वाद् समुच्चय, पद्मानंद काव्य आदि अनेक महत्वपूर्ण ग्रंथ रचे। आप के पद्मानंद काव्य में २४ तीर्थङ्करों का चरित्र अंकित किया गया है। इसी से उसका दूसरा नाम जिनचरित्र भी है।

अमरचन्द्रसूरि बड़े मेधावी और प्रतिभावान कवि थे। वस्तुपाल जैसे महान् पुरुष उनके पैरों में सिर झुकाते थे। राजा विसलदेव भी उन्हें बहुत मानते थे।

जयसिंहसूरि

आप वीरसूरि के शिष्य और भडोंच के मुनि सुव्रत स्वामी के मन्दिर के आचार्य थे। एक समय मंत्री तेजपाल यात्रा करते हुए उक्त मन्दिर में पहुँचे। तब उक्त सूरिजी ने एक काव्य के द्वारा आप की स्तुति की और उक्त मंत्री महोदय से सोने का ध्वजा दंड चढ़ाने का आग्रह किया। मंत्री तेजपाल ने सूरिजी के इस आग्रह को स्वीकार किया और उन्होंने मन्दिर पर सोने का ध्वजा डंड चढ़ा दिया। इस पर सूरिजी ने वस्तुपाल तेजपाल नामक दोनों भाइयों की प्रशंसा में एक सुंदर प्रशस्ति काव्य रचा, और उसे उक्त मन्दिर की भींत में खुदवा दिया। इस काव्य में मूलराज से वीरधवल राजा तक की वंशावली तक का ऐतिहासिक वर्णन दिया गया है। इसके सिवाय आपने हम्मीरमद मर्दन काव्य नामक एक नाटक ग्रंथ रचा। यह एक ऐतिहासिक नाटक है और इसमें वस्तुपाल तेजपाल द्वारा मुसलमानों के आक्रमणों को विफल किये जाने का मधुर वर्णन है। इस नाटक की ताड़पत्र पर लिखी हुई संवत् १२८६ की एक प्रति मिली है।

उदयप्रभुसूरि

आप वस्तुपाल के गुरू तथा विजयसेनसूरि के शिष्य थे। आप को वस्तुपाल ने सूरिपद से अलंकृत किया था। आपने सुकृति कल्लोलिनी नामक प्रशस्ति काव्य की रचना की, जिस में वस्तुपाल तेजपाल के धार्मिक कार्यों और यश का गुणानुवाद किया गया है। संवत् १२७८ में जब वस्तुपाल ने शत्रुंजय की

यात्रा की थी उस समय यह काव्य रचा गया था। वस्तुपाल ने अपने बनाये इन्द्र मण्डप के एक पत्थर पर इस काव्य को खुदवाया था। इसमें काव्यत्व के ऊँचे गुणों के साथ २ बहुत महत्वपूर्ण ऐतिहासिक ज्ञान भी भरा हुआ था। इसमें वस्तुपाल की वंशावली के साथ २ चालुक्य वंश के राजाओं का वर्णन भी दिया गया है। इसके अतिरिक्त उक्त सूरिजी ने और भी बड़े २ ग्रंथ रचे हैं। आपने धर्म शर्म्मा अभ्युदय और संघाधिपति चरित्र नामक महाकाव्य रचे। आरंभ सिद्धि नामक आपने ज्योतिष शास्त्र का भी एक ग्रंथ बनाया। इसके अतिरिक संस्कृत नेमिनाथ चरित्र भी आप की कृति का फल है।

प्रभाचन्द्रसूरि

आप विक्रम संवत् १३३४ में विद्यमान थे। आपने प्रभाविक चरित्र नाम का एक अत्युत्तम ऐतिहासिक ग्रंथ लिखा है।

वज्रसेनसूरि

आप तपगच्छ की नागपूरिय शाखा के श्री हेमतिलक सूरि के शिष्य थे। आपने महेश्वर सूरिजी को मुनिचन्द्र सूरिजी कृत, "आवश्यक सप्तती" की टीका रचाने में बड़ी मदद की थी। आपने सोहड़ नामक एक जैन मंत्री के द्वारा बादशाह अलाउद्दीन से मुलाक़ात की थी और उस पर प्रभाव डाल कर जैन शासन के अधिकार के लिए आपने बहुत से फरमान लिये थे।

जिनप्रभुसूरि

आप खरतरगच्छ के स्थापक श्री जिनसिंहसूरिजी के शिष्य थे। आपने संवत् १३६५ में अयोध्या में भयहर स्तोत्र और नंदी शेण कृत "अजित शांति स्तव" पर टीका रची। इसके अतिरिक्त आप ने सूरिमंत्र प्रदेश विवरण, तीर्थ कल्प, पंच परमेष्टिस्तव, सिद्धान्तागमस्तव, द्वया श्रेय महाकाव्य आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की। उनका यह नियम था कि जब तक वे एक नवीन स्तोत्र नहीं बना लेते थे तब तक आहार पाणी नहीं करते थे। उनकी कवित्व शक्ति तथा विद्वता अद्‌भुत थी। यह बात उनके ग्रंथों के अवलोकन से स्पष्टतया प्रकट होती है। इसके अतिरिक्त आप ने श्री मल्लिसेणसूरिजी को श्री हेमचन्द्राचार्य्य कृत, "अन्य योग व्यवच्छेदिका" नामक ग्रंथ पर टीका रचने में बड़ी मदद की थी।

देवसुन्दरसूरि

आप बड़े योगाभ्यासी और मंत्र तंत्रों के ज्ञाता थे। निमित्त शास्त्र के भी आप पारगामी विद्वान थे। कुछ राजाओं पर भी आपका प्रभाव था। संवत् १४२० में आप को सूरिपद प्राप्त हुआ। आप के चार शिष्य थे।

सोमसुन्दरसूरि

आप उपरोक्त देवसुन्दरसूरि के शिष्य थे। आप के कोई ढाईसौ शिष्य थे। कहा जाता है कि एक समय किसी द्वेषी मनुष्य ने आप का वध करने के लिये कुछ आदमियों को लालच देकर के भेजा। जब वे लोग आप को मारने के उद्देश्य से आप के पास पहुँचे तब आप की परम शांतिमय मुद्रा को देख कर बहुत विस्मित हुए और मन में विचार करने लगे कि अहिंसा और शांति के परमाणु बरसाने वाले इस परम योगिराज को मार कर हम किस भव में छूटेंगे। यह विचार कर वे आचार्य्य श्री के पैरों पड़ कर क्षमा-प्रार्थना करने लगे। श्री सोमसुन्दरजी महाराज बहुत प्रभावशाली साधु थे। आप संवत् १४५० में विद्यमान थे।

मुनिसुन्दरसूरि

आप श्री सोमसुन्दरसूरि के पाट पर विराजमान हुए। आप महान् विद्वान् थे। संवत् १४७८ में आप को आचार्य्य की पदवी मिली। उपदेश रत्नाकर, अध्यात्म कल्पद्रुम आदि कई ग्रंथ आप की अगाध विद्वता के परिचायक हैं। आप सरस्वती की उपाधि से भी विभुषित थे। गुजरात का सुलतान मुजफ्फरखान आपको बहुत मानता था। उसने भी आप को कई सम्मानपूर्वक उपाधियाँ प्रदान की थी। आप के लिये यह कहा जाता है कि आप नित्य प्रति १००० श्लोक कंठस्थ कर लेते थे। आपके उपदेश से कई राजाओं ने अहिंसा धर्म को स्वीकार किया था। बड़नगर के देवराजशाह नामक श्रावक ने कोई ३२०००) खर्च करके आप को सूरिपद प्राप्त होने के उपलक्ष में महोत्सव किया था।

रत्नशेखरसूरि

आप मुनि सुन्दरसूरि के शिष्य थे। आप भी महान् विद्वान और प्रतिभाशाली साधु थे। आप ने श्राद्धप्रतिक्रमण वृत्ति, श्राद्धविधि सूत्र वृत्ति लघुक्षेत्र समास तथा आचार प्रदीप आदि कई ग्रंथ रचे थे।

आपकी विद्वता देख कर खम्भात के तत्कालीन राजा ने आप को 'बाल सरस्वती' की उपाधि प्रदान की थी। आपके समय में वि० संवत् १५०८ में स्थानकवासी मत की उत्पत्ति हुई जिसका वर्णन हम अगले किसी अध्याय में करेंगे।

हेमविमलसूरि

आप भी बड़े विद्वान जैनी साधु थे। आपके समय में जैन साधुओं का आचार शिथिल हो गया था। पर आप के उपदेश से बहुत से साधुओं ने शुद्ध मुनि व्रत को फिर से स्वीकार किया।

आनन्दविमलसूरि

आप श्री हेम विमलसूरि के शिष्य थे। आप ने स्थान २ पर उपदेश देकर शुद्ध जैन धर्म का प्रचार किया। आप ने तूणीसिंह नामक एक महान् धनवान को जैन धर्म में दीक्षित किया। सोमप्रभु सूरिजी ने जल की तंगी के कारण जैसलमेर आदि स्थानों में साधुओं का विहार करना बन्द कर दिया था। आपने उसे फिर शुरू करवा दिया। आप के बाद महोपाध्याय श्री विद्यासागरगणी आदि जैन मुनि हुए जिनके समय में कोई विशेष घटना न हुई।

हरिविजयसूरि

मध्ययुग के जैनाचार्यों में श्री हीरविजयसूरि का आसन अत्यन्त ऊँचा है। आप असाधारण प्रतिभाशाली, अपूर्व विद्वान और अपने समय के अद्वितीय कवि थे। अपने समय में आप की कीर्ति सारे भारतवर्ष में फैल रही थी। आप के अलौकिक तेज और अगाध पाण्डित्य का प्रभाव न केवल जैनों पर वरन् मुगल सम्राट तक पर पड़ा था। आपकी तेजस्विता से तत्कालीन मुगल सम्राट चकाचौंध हो गये थे।

इस अलौकिक महापुरुष का जन्म पालणपुर के कुँरा नामक ओसवाल के यहाँ पर संवत् १५८३ में हुआ था। आपकी माता का नाम नाथीबाई था। जब आप तेरह वर्ष के थे तब आप के माता पिता का देहान्त हो गया था। * एक समय आप पट्टन में अपनी बहन के यहाँ गये हुए थे कि तपगच्छ के मुनि विजयदानसूरि के उपदेश से आपने संसार त्यागने का निश्चय किया। इस पर आपकी बहन ने आप

* जगद्गुरु काव्य में लिखा है कि इनके माता पिता इनके दीक्षा लेने तक विद्यमान थे। दीक्षा के समय आप सकुटुम्ब पाटण में थे। आपने अपने माता पिता की आज्ञा से दीक्षा ली।

को बहुत समझाया और आप से संसार में रहते हुए धर्म पालन का अनुरोध किया। पर आप अपने निश्चय से तिल भर भी न डिगे और आपने संवत् १५९६ में उक्त सूरिजी के पास से दीक्षा ली। मुनि हरिहर्षजी से आपने समग्र साहित्य का अध्ययन किया। इसके बाद आप गुरु की आज्ञा लेकर धर्मसागर नामक एक मुनि के साथ दक्षिण के देवगिरी नामक एक स्थान में नैयायिक ब्राह्मण के पास न्याय शास्त्र का अध्ययन करने के लिये गये। वहाँ पर आपने तर्क परिभाषा, मितभाषिणी, शषधर, मणिकण्ठ, प्रशस्तपद भाष्य, वर्द्धमान, वर्द्धमानेन्दु, किरणावली आदि अनेक ग्रंथों का गंभीरता से अध्ययन किया। अध्ययन करने के बाद आपने अपने पंडितजी को अच्छा पारितोषिक दिलवाया। इसके बाद आपने व्याकरण, ज्योतिष, सामुद्रिक और रघुवंशी आदि काव्यों में पारदर्शिता प्राप्त की। आप के सारे अध्ययन का खर्च जैन संघ तथा सेठ देवसी और उनकी पत्नी देती थी। जब आप विद्याध्ययन कर सं० १६०७ में अपने गुरु के पास नडूलाई (नारदपुर) नामक स्थान पर पहुँचे तब आपको उन्होंने पंडित की पदवी प्रदान की। इसके एक वर्ष बाद संवत् १६०८ में आप के गुरू ने आप को उपाध्याय नामक पद से विभूषित किया। इसके दो वर्ष बाद अर्थात् संवत् १६१० में आप आचार्य्य की उच्च उपाधि से विभूषित किए गये। इस समय दूधाराज के जैन मंत्री चांगा सिंघी ने बड़ा भारी उत्सव किया। यह चांगा राणपुर के सुप्रसिद्ध मन्दिर बनवाने वाले सिंघवी धरनाक का वंशज था। इस समय सिरोही के तत्कालीन नरेश ने अपने राज्य में हिंसा बन्द करदी।

इसके बाद दोनों आचार्य्य देव पाटण गये और वहाँ के सूबेदार शेरखाँ के सचिव समर्थ भंडसाली ने आपके सन्मान में गच्छानुज्ञा महोत्सव किया। यहाँ से आप सूरत और वहाँ से वरड़ी नामक गाँव में गये। इस ग्राम में संवत् १६२१ में श्री विजयदानसूरि का स्वर्गवास हो गया। इससे हीरविजयसूरि तपेगच्छ नायक हो गये। संवत् १६२८ में आप विहार करते हुए अहमदाबाद पधारे और वहाँ आपने विजयसेन मुनि को आचार्य्य पद प्रदान किया। यहीं लूंका गच्छ के मेगजी कवि ने मूर्त्तिनिषेधक गच्छ त्याग कर अपने तीस साधुओं सहित हीर विजयसूरि का शिष्यत्व ग्रहण किया और उन्होंने अपना नाम उद्योतविजय रक्खा। इस बात का उत्सव सम्राट अकबर के राजमान्य स्थानसिंह नामक ओसवाल सज्जन ने किया। ये स्थानसिंह इस समय सम्राट अकबर के साथ आगरे से गुजरात आये थे।

धीरे २ हीरविजयसूरि के अलौकिक तेज की बात सारे देश में फैल गई। उनकी कीर्ति की गाथा तत्कालीन सम्राट अकबर के कानों तक पहुँची। कहने की आवश्यकता नहीं कि सम्राट अकबर ने इस महा अलौकिक पुरुष के दर्शन करने का निश्चय किया। सम्राट ने अपने गुजरात के सूबे साहिब खान को फरमान भेजा कि वे बड़ी नम्रता और अदब के साथ श्री हीरविजयसूरिजी से यह प्रार्थना करें कि

थे सम्राट के निकट पधार कर उन्हें दर्शन दें। इस पर गुजरात के सूबे साहिबखान ने अहमदाबाद के खास खास श्रावकों को बुलवाया और उनसे सम्राट अकबर के फरमान की बात कही। इस पर उक्त श्रावक-गण आचार्य्यजी के पास उपस्थित हुए और बड़े विनीतभाव से सम्राट के निवेदन की बात उनसे निवेदन की।

आचार्य्य हीरविजयसूरि बड़े दूरदर्शी थे। उन्होंने सम्राट् अकबर जैसे महान् पुरुष को उपदेश देने में जैन धर्म का गौरव समझा और वे सम्राट् से मिलने के लिये रवाना हो गये।

आचार्य्यवर विहार करते हुए मही नदी उतर कर अहमदाबाद पहुँचे। सितावखान ने आपको अत्यन्त आदर के साथ बुलाया और अकबर के फर्मान का आपके सन्मुख जिक्र किया। उसने यह भी कहा कि द्रव्य, रथ, हाथी, अश्व, पालकी आदि सब आपके लिये तैयार हैं। जो आप आज्ञा करें वह मैं करने के लिये प्रस्तुत हूँ। इस पर आचार्य्य देव ने जवाब दिया कि जैन साधु का आदर्श संसार की तमाम वस्तुओं से मोह हटा कर वीतराग होकर आत्मकल्याण करना है। उन्हें सांसारिक वैभव से कोई सरोकार नहीं। इस बात का उक्त सूबेदार पर बहुत असर पड़ा। इसके बाद सूरीश्वर श्री हीरविजयजी अकबर के पास जाने के लिए फतहपुर सीकरी को रवाना हो गये। क्योंकि इस समय अकबर का मुकाम यहीं पर था। इस विहार में आपके साथ बादशाह के कुछ दूत भी थे। वीसलपुर, महिसाणा, पाटन, बरड़ी, सिद्धपुर आदि कई स्थानों में विहार करते हुए आप सरोतरा नामक गाँव में आये। वहाँ भीलों के मुखिया सरदार अर्जुन ने आपसे उपदेश ग्रहण किया और उसने अपने सब भील साथियों में अहिंसा धर्म का प्रचार किया। इस स्थान में पर्युषण करने के बाद आप आबू पर वहाँ के सुप्रसिद्ध मन्दिर के दर्शन करने के लिये पधारे। वहाँ से आप शिवपुरी (सिरोही) आये। आइने अकबरी के प्रथम भाग में लिखा है कि वहां के राजा सुरभाग ने आपका बड़े धूमधाम के साथ स्वागत किया। जगद्गुरु काव्य भी इस बात की पुष्टि करता है। वहाँ से आप सादड़ी पधारे और राणकपुर की यात्रा कर मेड़ता चले आये। मेड़ता पर उस समय मुसलमानों का अधिकार था। वहाँ के सादिल सुलतान ने आपका बड़ा आदरातिथ्य किया। इसके बाद आप फलौदी पार्श्वनाथ के दर्शन करने के लिये गये। इस स्थान पर आपको विमलहर्ष उपाध्याय नामक सज्जन मिले जिन्हें आपके पास सम्राट् अकबर ने भेजा था।

विमलहर्ष ने लौट कर बादशाह अकबर से सूरिजी के प्रयाण का समाचार निवेदन किया। इस पर बादशाह की आज्ञा से स्थानसिंह आदि सज्जनों ने बड़े समारोह के साथ सूरिजी का स्वागत किया और ठाठ बाठ के साथ उन्हें फतेहपुर सीकरी ले गये। आचार्य्य श्री संवत् १६३९ के जेठ वदी १२ को

फतहपुरसीकरी में जगनमल कछुआ के महल में ठहराये गये। जगनमल कछुआ तत्कालीन जयपुर नरेश भारमल के छोटे भाई थे।

इस अलौकिक महापुरुष के तेज से सम्राट् अकबर बहुत ही प्रभावान्वित हुए। आचार्य्यवर ने अपने आत्मिक प्रकाश से सम्राट् अकबर के हृदय को प्रकाशित कर दिया। शत्रुंजय के आदिनाथ मंदिर पर लगी हुई संवत् १६५० की प्रशस्ति में लिखा है कि आचार्य्यवर के संसर्ग से सम्राट् का अंतःकरण निर्मल हो गया और उन्होंने लोक प्रीति संपादित करने के लिये बहुत से प्रजा के कर माफ कर दिये और बहुत से पक्षियों तथा कैदियों को बन्दीखाने से मुक्त किया। इन्होंने सरस्वती के गृह के समान एक महान् पुस्तकालय का उद्‌घाटन कया। इस प्रकार अकबर ने और भी कई परोपकारी कार्य किये।

सम्राट् अकबर के दरबार में बड़े २ उत्कृष्ट विद्वान् रहते थे। शेख अबुलफजल सरीखे अपूर्व विद्वान् उनके दरबार की शोभा को बढ़ाते थे। कहना न होगा कि अबुलफजल और सूरिजी के बीच में बड़ी ही मधुर धार्मिक चर्चा हुई और अबुलफजल आपके अगाध ज्ञान से बड़े प्रभावित हुए। इसके बाद अकबर ने अपने शाही दरबार में सूरिजी को निमन्त्रित किया। जब सूरिजी दरबार में पहुँचे तब सम्राट् ने अपने दरबारियों सहित खड़े होकर उनका आदरातिथ्य किया। जब सम्राट् अकबर को यह मालूम हुआ कि सूरीश्वर गंधार से ठेठ सीकरी तक पैदल आये हैं, और जैन मुनि अपने आचार के लिये पैदल ही विहार करते हैं, तथा शुद्धाहार और विहार द्वारा अपनी आत्मा को पवित्र रखते हैं और तपस्या के द्वारा रागद्वेष को जीत कर सकल विश्व के सभी जीवों के प्रति विशुद्ध प्रेम की वर्षा करते हैं, तब उनके आश्चर्य्य का पार न रहा। इसके बाद आचार्य्य देव ने उक्त दरबार में संसार और लक्ष्मी की अस्थिरता, देव गुरु धर्म का स्वरूप, मुनिजनों के अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य्य और अपरिगृह आदि पाँच व्रतों का बहुत ही प्रभावशाली ढंग से विवेचन किया। अकबर और उसके विद्वान् दरबारी लोग सूरिजी के व्याख्यान से अत्यन्त ही विस्मित हुए। तदनंतर अकबर ने उन्हें अपने जन्मग्रह का फल बतलाने के लिये कहा पर सूरिजी ने झट से जवाब दिया कि मोक्ष पंथ के अनुयायी इन बातों की ओर ध्यान भी नहीं देते।

इसके बाद श्री हीरविजयसूरिजी नाव द्वारा यमुना पार कर आगरे के पास के शौरीपुर के तीर्थ स्थान में गये और वहाँ दो प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा कर आगरे चले आये। आगरे में आपने श्री चिंतामणि पार्श्वनाथ की प्रतिष्ठा की। तदनन्तर शेख अबुलफजल के निमन्त्रण पर आप फतहपुर सीकरी के लिये प्रस्थान कर गये।

फतहपुरसीकरी पहुँचने पर सम्राट अकबर ने आपका बड़ा भारी स्वागत किया। सम्राट् ने आपसे हाथी, घोड़े आदि की भेंट स्वीकार करने की प्रार्थना की। पर आपने सम्राट् को साफ शब्दों में

उत्तर दिया कि जैन मुनि निस्पृह होते हैं। वे संसार के वड़े से वड़े वैभव की तनिक भी परवाह नहीं करते। इस पर फिर सम्राट् ने निवेदन किया कि आप कुछ भेंट तो स्वीकार कीजिये। तव आचार्य्य देव ने कहा कि आप कैदियों को वन्धन मुक्त कीजिये और पींजरे के पक्षियों को छोड़ दीजिये। इसके अतिरिक्त पर्युषण के आठ दिनों में अपने साम्राज्य में हिंसा वन्द कर दीजिये। कहने की आवश्यकता नहीं कि सम्राट ने कैदियों को मुक्त किया, पींजरे से पक्षी छोड़े गये और कई तालावों में, सरोवरों में मच्छी न मारने के आदेश किये गये। इसी समय अर्थात् संवत् १६४० में आचार्य्यवर श्री हीरविजयसूरि जगद्गुरु की उच्च उपाधि से विभूषित किये गये।

इसके वाद थानसिंह ने आप के द्वारा कई जैन विम्बों की प्रतिष्ठा करवाई। इसी समय आप ने अपने शिष्य शांतिचन्द्र को उपाध्याय का पद प्रदान किया। जौहरी दुर्जनमल ओसवाल ने आचार्य्य श्री से कई जैन विम्बों की प्रतिष्ठा करवाई। इस प्रकार वहुत से धार्मिक कार्य्यों के कारण संवत् १६४० में आप को फतहपुर सीकरी ही में चातुर्मास करना पड़ा। इस चातुर्मास के वाद आप वावन गज ऋषभनाथजी की यात्रा के लिये पधारे। संवत् १६४२ में आप ने आगरा में चातुर्मास किया। इसके वाद गुजरात से विजयसेनसूरि आदि मुनि संघ का आप को निमंत्रण मिला। आप सम्राट के पास अपने शिष्य शांतिचन्द्र उपाध्याय को छोड़ कर गुजरात के लिए रवाना हुए। शांतिचन्द्रजी ने भी वादशाह पर वहुत अच्छा धार्मिक प्रभाव डाला और कई मद्य माँस के भक्षकों के बुरे खान पान को भी छुड़वाया।

आचार्य्य श्री हीरविजयसूरि विहार करते हुए नागौर पहुँचे। यहाँ पर संमत् १६४३ में आप ने चातुर्मास किया। वहाँ के तत्कालीन राजा जगमाल के वणिक मन्त्री मेहाजल ने आप की वड़ी सेवा की। इस समय अनेक देशों से अनेक धार्मिक संघ आचार्य्य श्री के दर्शनों के लिये आये। जयपुर राज्य के वैराट नगर से वहाँ के अधिकारी इन्द्रराज का आप को निमन्त्रण मिला जहाँ आप ने अपने शिष्य उपाध्याय कल्याणविजयजी को प्रतिष्ठा करवाने के लिये भेजा। इसके वाद आप आवू यात्रा के लिये गये। वहाँ तत्कालीन सिरोही नरेश ने सिरोही में चातुर्मास करने का आप से वड़ा आग्रह किया। उक्त राजा ने यह भी प्रार्थना की कि अगर आचार्य्य श्री मेरे राज्य में चातुर्मास करेंगे तो मैं प्रजा के वहुत से टैक्स माफ कर प्रजा के कष्टों का निवारण करूँगा और सारे राज्य में जीव हिंसा न करने का आदेश निकालूँगा। इस पर संवत् १६४४ में हीरविजयसूरि ने वहाँ पर चौमासा किया। श्री वृषभदास कृत 'हीरविजयसूरिदास, नामक ग्रन्थ से पता लगता है कि उक्त राजा ने अपने वचन का वरावर पालन किया।

हीरविजयसूरि विहार करते २ गुजरात के पाटन नगर में पहुँचे और संवत् १६४५ में आप ने वहाँ पर चातुर्मास किया। जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि हीरविजयसूरि अपने शिष्य शांतिचन्द्र

उपाध्याय को बादशाह के पास छोड़ आये थे। वहाँ आप बादशाह को 'कृपा रस कोष' नामक काव्य सुनाते थे। शान्तिचन्द्रजी को आचार्य्य देव से मिलने की इच्छा हुई और उन्होंने भानुचन्द्रविबुद्ध नामक एक सज्जन को बादशाह के पास रख कर बादशाह से आचार्य्य श्री के पास जाने की अनुमति मांगी। बादशाह ने सूरि के पास भेंट के रूप में स्वमुद्रांकित एक फर्मान भेजा जिसमें गुजरात में हिन्दुओं पर लगने वाले जजिया नामक कर की माफी का आदेश था। इसके अतिरिक्त पर्युषण आदि बहुत से बड़े दिनों में हिंसा न करने का भी उसमें आदेश था। हीरविजयसूरि के आग्रह से साल भर में कई पवित्र दिनों के उपलक्ष में बादशाह ने जीव हिंसा को बिलकुल बन्द कर दिया था। सुप्रख्यात इतिहास वेत्ता बदौनी लिखता है:—

"In these days (991-1583 A. D.) new orders were given. The killing of animals on certain days was forbidden, as on sundays because this day is sacred to the sun during the first 18 days of the month of Farwardin, the whole month of abein (the month in which His majesty was born) and several other days to please the Hindoos. This order was extended over the whole realm and capital punishment was inflicted on every one who acted against the command."

कहने का अर्थ यह है कि आचार्य्य हीरविजयसूरि ने सम्राट् अकबर पर अपने अलौकिक आत्मतेज का इतना दिव्य प्रकाश डाला था कि सम्राट् अकबर ने मुसलमान होते हुए भी जीव हिंसा-निषेध के लिये कई आदेश प्रसारित किये थे *।

श्री हीरविजयसूरि पाटन में चातुर्मास कर पालीताना के लिये रवाना हुए और आप यथा समय वहाँ पर पहुँचे। वहाँ पाटन, अहमदाबाद, खम्भात, मालवा, लाहौर, मारवाड़, सूरत, बीजापुर आदि अनेक स्थानों से लगभग दोसौ संघ आये जिनमें लाखों यात्री थे। संवत् १६५० की चैत्र सुदी पूर्णिमा को वहाँ बड़ा भारी उत्सव हुआ। सेठ मूलाशाह, सेठ तेजपाल और सेठ रामजी तथा सेठ जस्सु ठक्कर आदि धनिकों द्वारा बनाये गये उन्नत जैन मन्दिरों की आपने बड़े समारोह के साथ प्रतिष्ठा की। वहाँ से आप ऊना नामक स्थान में पधारे और वहाँ पर चातुर्मास किया। यहाँ तत्कालीन गुजरात का सूबा आजमखाँ, आचार्य्य देव की सेवा में उपस्थित हुआ और उसने आपको १००० स्वर्ण मुद्राएँ (सोने की मुहरें) भेंट की। इन

* इस सम्बन्ध की अधिक जानकारी के लिये हम सुप्रख्यात मुनि विद्याविजयजी कृत 'सूरीश्वर अने सम्राट्' नामक ग्रंथ पढ़ने के लिए अपने पाठकों से अनुरोध करते हैं। इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद भी हो गया है जिसका नाम सूरीश्वर और सम्राट् है।

स्वर्ण मुद्राओं को आचार्य्य श्री ने अस्वीकार कर दिया। इसी समय जामनगर के तत्कालीन जाम साहब के साथ उनके मन्त्री अब्जी भंसाली ऊना पहुँचे और उन्होंने आचार्य्य देव की अंग पूजा ढाई सेर स्वर्ण मुद्रा से की। इसी समय आचार्य्य देव ने ऊना के अधिकारी खानमहम्मद से हिंसा छुड़ाई। संवत् १६५२ के वैसाख मास में आपने ऊना में एक मन्दिर की प्रतिष्ठा की और इसी साल के भादवा सुदी ११ गुरुवार के दिन आपका स्वर्गवास हो गया।

आचार्य्य वर हीरविजयसूरि का संक्षिप्त परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। जैन इतिहास के पृष्ठ आपके महान् कार्य्यों का उल्लेख बड़े अभिमान और गौरव के साथ करेंगे। आपने भगवान महावीर स्वामी के अहिंसा सिद्धान्त की सारे हिन्दुस्थान में दुन्दुभी बजाई। तत्कालीन मुगल सम्राट् अकबर तथा भारत के कई राजा महाराजा और दिग्गज विद्वान आपके अलौकिक तेज के आगे सिर झुकाते थे। आप एक अलौकिक विभूति थे और उस समय आपने अपने आत्मिक प्रकाश से सारे भारतवर्ष को आलोकित किया था। अबुलफ़ज़ल आदि कई मुसलमान लेखकों ने भी आपकी अपने ग्रन्थों में बड़ी प्रशंसा की है।

जिनचन्द्रसूरि

आप भी जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय के एक बड़े प्रख्यात आचार्य्य हो गये हैं। आप जैन शास्त्रों के बड़े प्रकाण्ड पंडित थे। एक समय सम्राट अकबर ने मेहता करमचन्द से पूछा कि इस समय जैन शास्त्र का सबसे बड़ा पण्डित कौन है। तब करमचन्दजी ने आचार्य्य जिनचन्द्रसूरि का नाम बतलाया था। इस समय उक्त सूरिजी गुजरात के खम्भात नगर में थे। उन्हें सम्राट की ओर से निमंत्रित किया गया। इस पर आप बादशाह की मुलाकात के लिये रवाना हो गये। अहमदाबाद, सिरोही होते हुए आप जालौर पहुँचे और वहाँ पर आप ने चातुर्मास किया। वहाँ से मगसर मास में विहार कर मेड़ता, नागौर, बीकानेर, राजलदेसर, मालसर, रिणपुर, सरसा आदि स्थानों में होते हुए फाल्गुन सुदी १२ को आप लाहौर पहुँचे। उस समय सम्राट अकबर लाहौर में थे और उन्होंने आचार्य्य श्री का बड़ा सन्मान किया। सम्राट के आग्रह से आप ने लाहौर में चातुर्मास किया। इस वक्त जयसोम, रत्ननिधान, गुणविनय और समयसुन्दर आदि जैन मुनि आप के साथ थे।

कहने की आवश्यकता नहीं कि जिनचन्द्रसूरि ने बादशाह अकबर पर बड़ा ही अच्छा प्रभाव डाला। सूरिजी ने सम्राट से कहा कि द्वारिका में जैन और जैनेतर मंदिरों को नौरंगखाँ ने नष्ट कर दिया है, आप उनकी रक्षा कीजिये। इस पर सम्राट अकबर ने जवाब दिया कि "शत्रुंजय आदि सब जैनतीर्थ मैं मंत्री करमचन्द के सुपुर्द कर दूँगा तथा मैं तत्संबंधी फर्मान अपनी निजी मुद्रा से गुजरात के हाकिम

नरंगौखाँ के पास भेज देता हूँ। आप निश्चिन्त रहिये, अब शत्रुंजय की भली प्रकार रक्षा हो जायगी।"

जब सम्राट् अकबर काश्मीर जाने की तयारी करने लगे तब आप ने करमचन्द मंत्री द्वारा जिनचन्द्रसूरिजी को अपने पास बुलवाया और उन से "धर्मलाभ" लिया। इसी समय उक्त सूरिजी को प्रसन्न करने के लिये सम्राट् ने अपने सारे साम्राज्य में सात दिन तक जीव हिंसा न करने के फरमान जारी किये। इन फरमानों की नकलें हिन्दी की सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका सरस्वती के १९१२ के जून मास के अंक में प्रकाशित हुई हैं। उक्त फरमान देशी राज्यों में भी भेजे गये जहाँ पर उनका भली प्रकार अमल दरामद हुआ।

कहने का अर्थ यह है कि जिनचन्द्रसूरि ने भी अपनी प्रखर प्रतिभा का प्रकाश सम्राट अकबर पर डाला था। सम्राट अकबर ने आप को "युग प्रधान" की पदवी से विभूषित किया और उनके शिष्य मानसिंह को आचार्य्य पद प्रदान किया। इसी समय फिर मंत्री करमचन्द की विनती से सम्राट् ने कुछ दिनों तक जीव हिंसा न करने की सारे साम्राज्य में घोषणा की। इसके अतिरिक्त सम्राट ने खम्भात के समुद्र में एक वर्ष तक हिंसा न करने का फरमान भेजा।

संवत् १६६९ में सम्राट जहाँगीर ने यह हुक्म दिया कि सब धर्मों के साधुओं को देश निकाला दे दिया जाय। इससे जैन मुनि मण्डल में बड़ा भय छा गया। यह बात सुन कर जिनचन्द्रसूरिजी पाटन से आगरा आये और उन्होंने बादशाह को समझा कर उक्त हुकुम रद्द करवा दिया।

मुनि शान्तिचन्द्र

आप हरिविजयसूरि के शिष्य थे। आपने सम्राट् अकबर की प्रशंसा में कृपा रस कोष नाम का काव्य रचा। आपका भी बादशाह अकबर पर अच्छा प्रभाव था। आपने उनके द्वारा जीव दया, जजिया कर की माफी आदि अनेक सत्कृत्य करवाये। यह बात शान्तिचन्द्रजी के शिष्य लालचन्द्रजी की प्रशस्ति में स्पष्टतः लिखी हुई है।

मुनि शान्तिचन्द्रजी बड़े विद्वान और शास्त्रार्थ कुशल थे। संवत् १६३२ में ईडरगढ़ के महाराज श्री नारायण की सभा में आपने वहाँ के दिगम्बर भट्टारक वादिभूषण से शास्त्रार्थ कर उन्हें परास्त किया था। वागड़ देश के घारशील नगर में वहाँ के राजा के सामने आपने गुणचन्द्र नामक दिगम्बराचार्य्य को शास्त्रार्थ में पराजय किया था। आप शतावधानी भी थे। इससे सम्राट् और राजा महाराजाओं पर आप का बड़ा प्रभाव था।

मुनि भानुचन्द्र

आपका भी सम्राट् अकबर पर बड़ा प्रभाव था। आप उन्हें हर रविवार को 'सूर्य्य-सहस्र-नाम' सुनाते थे। सुप्रख्यात इतिहास वेत्ता बदौनी लिखता है कि ब्राह्मणों की तरह सम्राट् अकबर प्रातः काल में पूर्व दिशा की तरफ मुख करके खड़ा रह कर सूर्य्य की आराधना करता था और वह संस्कृत ही में सूर्य्य-सहस्र-नाम भी सुना करता था।

मुनि सिद्धचन्द्र

आप मुनि भानुचन्द्रजी के शिष्य थे। आपसे भी सम्राट् अकबर बड़े प्रसन्न थे। शत्रुंजय तीर्थ में नये मन्दिर बनवाने की बादशाह की ओर से जो निषेधाज्ञा थी उसे आपने मंसूख करवाया। सिद्धिचन्द्रजी फारसी भाषा के भी बड़े विद्वान थे। सम्राट ने आप को 'खुश फहेम' की पदवी प्रदान की थी। एक समय अकबर ने बड़े स्नेह से आपका हाथ पकड़ कर कहा कि मैं आपको ५००० घोड़े का मन्सब और जागीर देता हूँ, इसे आप स्वीकार कर साधुवेष का परित्याग कीजिये। पर यह बात सिद्धिचन्द्रजी ने स्वीकार न की। इससे बादशाह और भी अधिक प्रभावित हुए। इस वृतान्त को स्वयं सिद्धिचन्द्रजी ने अपनी कादम्बरी की टीका में लिखा है।

विजयसेन

आप भी बड़े प्रभावशाली जैन मुनि थे। विजय प्रशस्ति नामक ग्रन्थ में लिखा है कि आपने सूरत में चिंतामणि मिश्र आदि पंडितों की सभा के समक्ष भूषण नामक दिगम्बराचार्य्य को शास्त्रार्थ में निरूत्तर किया था। अहमदाबाद के तत्कालीन सूबे खानखाने को अपने उपदेशामृत से बहुत प्रसन्न किया था। आप बड़े विद्वान थे और आप की विद्वता का एक प्रमाण यह है कि आपने योग शास्त्र के प्रथम श्लोक के कोई ७०० अर्थ किये थे। विजय प्रशस्ति काव्य में लिखा है कि श्री विजयसेनजी ने कावी, गंधार, अहमदाबाद, खम्भात, पाटन आदि स्थानों में लगभग चार लाख जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा की। इस के अतिरिक्त आप के उपदेश से तारंगा, शंखेश्वर, सिद्धाचल, पंचासर, राणपुर, आरासण और बीजापुर आदि स्थानों के मंदिरों के पुनरुद्धार किये गये।

विजयदेवसूरि

आप उपरोक्त विजयसेनसूरि के पट्टधर शिष्य थे। संवत् १६७४ में सम्राट जहाँगीर ने मॉडव-गढ़ स्थान में आपकी तपश्चर्य्या से मुग्ध हो कर आपको 'जहाँगिरी महातपा' नामक उपाधि से विभूषित किया। आप बड़े तेजस्वी और तपस्वी थे।

आनन्दघनजी

जैन साहित्य के इतिहास में आनन्दघनजी का नाम प्रखर सूर्य्य की तरह प्रकाशमान हो रहा है। आप अध्यात्म शास्त्र के पारगामी और अनुभवी विद्वान थे। आत्मा के गूढ़ से गूढ़ प्रदेशों में आप रमण करते थे। श्वेताम्बर जैन समाज के अत्यन्त प्रभावशाली साधुओं में से आप थे। आप के बनाये हुए पद अध्यात्म शास्त्र के गूढ़ रहस्यों को प्रकट करते हैं। भव्य जनों के लिये मोक्ष का मार्ग आपने रेखांकित किया है। आपके दो ग्रंथ बहुत मशहूर हैं जिन के नाम आनन्दघनचौवीसी और आनन्दघन बहोत्तरी है। ये ग्रन्थ मिश्र हिन्दी गुजराती में हैं। ये मार्मिक शास्त्रदृष्टि और अनुभव योग से भरे हैं। इनमें अध्यात्मिक रूपक, अन्तर्ज्योति का आविर्भाव, प्रेरणामय भावना और भक्ति का उल्लास आदि अध्यात्मिक विषयों का बहुत ही मार्मिकता से विवेचन किया है।

यशोविजयजी

आप हेमचन्द्राचार्य्य के बाद बड़े ही प्रतिभावान और कीर्तिवान आचार्य्य हो गये हैं। आप बड़े नैयायिक, तर्क शिरोमणि, महान् शास्त्रज्ञ, जबरदस्त साहित्यक श्रष्टा, प्रतिभावान समन्वयकार, प्रचण्ड सुधारक तथा बड़े दूरदर्शी आचार्य्य थे। श्री हेमचन्द्राचार्य्य के पीछे आप जैसा सर्व शास्त्र पारंगत, सूक्ष्म द्रष्टा और बुद्धिनिधान आचार्य्य जैन श्वेताम्बर समाज में दूसरा न हुआ। आपका संक्षिप्त जीवन आप के समकालीन साधु कांतिविजयजी ने 'सुजश वेली' नामक गुजराती काव्य कृति में दिया है जिसकी खास २ बातें हम नीचे देते हैं।

आप तपेगच्छ के साधु थे। आप सुप्रख्यात आचार्य्य हीरविजयसूरि के शिष्य तर्क विद्या विशारद उपाध्याय कल्याणविजयजी के शिष्य सकल शब्दानुशासन निष्णांत लाभविजयजी के शिष्य नयविजयजी के शिष्य थे। आपका जन्म संवत् १६८० के लगभग हुआ। आपने अपने गुरू नयविजयजी के पास ग्यारह वर्ष तक अध्ययन किया। आपने काशी आगरा आदि शहरों में भी विभिन्न शास्त्रों का अध्ययन किया। आपने न्याय, योग, अध्यात्म, दर्शन, धर्मनीति, धर्मसिद्धान्त, कथाचरित्र आदि अनेक विषयों पर कई ग्रन्थ लिखे। आपके ग्रंथों में अध्यात्म सार, देव धर्म परीक्षा, अध्यात्मोपनिषद्, अध्यात्मिक मत-खण्डन सटीक, यतिलक्षण समुच्चय, नयरहस्य, नय प्रदीप, नयोपदेश, जैन तर्क परिभाषा और दस ज्ञान बिंदु, द्वात्रिंशत द्वात्रिंशिका सटीक, ज्ञानसार, अस्पृशद गतिवाद, गरु तत्व विनिश्चय, सामाचारी प्रकरण, आराधक विराधक चतुर्भंगी प्रकरण, प्रतिमाशतक,

पातंजल योग के चौथे मोक्ष पद पर वृत्ति, योग विंशिका, हरिभद्रसूरि कृत शास्त्र वार्ता समुच्चय पर स्यादवाद कल्पलता नामक टीका, हरिभद्रसूरि कृत शोड़शक पर योगदीपिका नामक वृत्ति, उपदेश रहस्य सवृत्ति, न्यायालोक, महावीर स्तवन सटीक, ऊपरनाय न्याय खण्डन पद्य प्रकरण, भाषा रहस्य सटीक, तत्वार्थवृत्ति प्रथमाध्याय विवरण, वैराग्य कल्पलता, धर्मपरीक्षा सवृत्ति, चतुर्विशति जिन, धर्म परीक्षा सवृत्ति, परम ज्योति पंच विंशतिका, प्रतिमा स्थापन न्याय, प्रतिमा शतक पर स्वोपज्ञ, मार्ग परिशुद्धि अनेकांत मत व्यवस्था, समंतभद्र कृत व्यास परीक्षा पर टीका, स्याद्वाद् मंजूसा, आकर, मंगलवाद, विधि-वाद, वादमाला, त्रिसूत्र्यालोक, द्रव्यालोक, प्रमारहस्य, स्याद्वाद् रहस्य, वाद रहस्य, ज्ञानार्णव, कूप दृष्टांत विशदी करण, अलंकार चूड़ामणि की टीका, छंद चूड़ामणि की टीका, काव्य प्रकाश की टीका, अध्यात्म बिंदु, तत्वालोक विवरण, वेदांत निर्णय, वैराग्य रति, सिद्धान्त तर्क परिष्कार, सिद्धांत मंजरी टीका आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

उपरोक्त सूची के देखने से पाठकों को आचार्य्य श्री यशोविजयजी की अगाध विद्वत्ता का अनुमान हो जायगा। आपकी विद्वत्ता की छाप न केवल जैन समाज ही पर वरन् अन्य समाजों पर भी बहुत कुछ अंकित थी। काशी विद्वानों ने आपको 'न्याय विशारद' के पद से विभूषित किया था। उस समय आपकी कीर्ति सारे साक्षर भारत में फैली हुई थी। इस समय में भी काशी में श्री यशोविजय जैन विद्यालय आपके स्मारक रूप में बना हुआ है।

समयसुन्दरजी

आप साकलचन्दजी गणी के शिष्य थे और १६८६ में विद्यमान थे। इन्होंने "राजा नो ददत सौख्यं" इस वाक्य के ८ लाख जुदा २ अर्थ करके ८० हजार श्लोकों का एक प्रामाणिक ग्रंथ रचा था। इसके अलावा इन्होंने गाथा सहस्री विषयवाद शतक, तथा दश वैकालिक सूत्रम् आदि टीकाएँ रची थीं।

विजय सेन सूरि

आप हीरविजयसूरि के पट्ट शिष्य थे और बहुत प्रभावशाली मुनि थे। आपके शिष्य वेखहर्ष और परमानन्द ने जहाँगीर बादशाह को जैन धर्म का महत्व बतलाकर धार्मिक लाभ के लिये कई परवाने हासिल किये थे। इसी प्रकार धर्म की और भी तरक्की इनके हाथों से हुई।

पद्मसुन्दरगणी

आप तपगच्छ की नागपुरीय शाखा के पद्म मेस के शिष्य थे। इन्होंने रायमल्लाभ्युदय महा काव्य, धातु पाठ पार्श्वनाथ काव्य, जम्बू स्वामी कथानक वगैरा ग्रन्थों की रचना की थी। इन्होंने अकबर के दरबार में धर्म विवाद में एक महा पंडित को पराजित किया था, जिससे प्रसन्न होकर बादशाह ने हार, एक गाय व सुखासन वगैरा वस्तुएँ आपको भेंट दी थीं। ये १६६० में विद्यमान थे।

जिनसिंहसूरि

आप आचार्य्य जिनराजसूरिजी के शिष्य थे। इनका जन्म १६१५ में, दीक्षा १६२३ में, सूरिपद १६७० में तथा स्वर्गवास संवत् १६१४ में हुआ। इनको संवत् १६४९ में देहली के बादशाह की ओर से बहुत सम्मान मिला। जोधपुर दरबार महाराजा सूरसिंहजी और उनके प्रधान कर्मचन्द्रजी इन्हें बहुत चाहते थे।

जिनराजसूरि

आप खरतरगच्छ में हुए हैं और बहुत प्रतिभाशाली माने जाते थे। इन्होंने शत्रुंजयतीर्थ में ५०१ प्रतिमाएं स्थापित कीं॥ इसके अलावा आपने नैषधीय चरित्र पर "जिनराजी" नामक टीका रची संवत् १६९९ में पाटन में आपका स्वर्गवास हुआ।

आनन्दघनजी महाराज

ये प्रख्यात अध्यात्म ज्ञानी महाराज लगभग संवत् १६७५ में विद्यमान थे। वैराग्य तथा अध्यात्म विषय पर इन्होंने गहन पदों की रचना की थी।

कल्याणसागरसूरि

आप अचलगच्छ के आचार्य्य धर्ममूर्ति सूरि के शिष्य थे। इन्होंने संवत् १७१६ में जामनगर के प्रमुख धनाढ्य वर्द्धमानशाह द्वारा बनवाये हुए जिनालय में जिन बिंब प्रतिष्ठित किये थे। उक्त जिनालय के शिलालेख से ज्ञात होता है कि यह जिनालय सूरिजी के उपदेश से ही बनाया गया था।

विनय विजय उपाध्याय

ये श्री यशोविजय के समकालीन और उनके बड़े विश्वास पात्र थे। अपने समय के ये बड़े प्रतिभाशाली और नामाङ्कित विद्वान थे। हीरविजयसूरि के शिष्य कीर्तिविजयसूरि इनके गुरु थे। इन्होंने कल्पसूत्र पर ६५८० श्लोक की कल्प सुबोधिका नामक टीका रची। इसी प्रकार नयकर्णिका और लोक प्रकाश नामक २० हजार श्लोक की एक विशाल पद्यबद्ध ग्रन्थ की रचना की। इसी प्रकार आपने और भी कई बहुमूल्य ग्रन्थों की रचना की।

श्री मेघविजय उपाध्याय

ये भी श्री हीरविजयसूरि की परम्परा में यशोविजय के समकालीन थे। न्याय, व्याकरण, साहित्य, ज्योतिष और अध्यात्म विषय के ये प्रकाण्ड पण्डित थे। इन्होंने संवत् १७२७ में देवानन्दाभ्युदय नामक काव्य सादड़ी में रचकर तैयार किया। इसका प्रत्येक श्लोक महाकवि माघ रचित माघ काव्य के प्रति श्लोक का अन्तिम चरण लेकर प्रारम्भ किया गया है और बाद की तीन २ लाइनें उन्होंने अपनी ओर से सजाई हैं। इस ग्रंथ में सात सर्ग हैं। इसी प्रकार मेघदूत समस्या नामक एक १३० श्लोक का काव्य भी इन्होंने बनाया है इसमें भी मेघदूत काव्य के प्रत्येक श्लोक का अन्तिम चरण कायम रखकर इन्होंने उसे पूरा किया है। इसी प्रकार श्री विजय प्रभसूरि के जीवनचरित्र को प्रकाशित करने वाला एक दिग्विजय महाकाव्य भी रचा है जिसमें आचार्य्य श्री के पूर्वाचार्य्य का संक्षिप्त वर्णन और तपागच्छ की पट्टावलि दी है। इसी प्रकार इन्होंने अपने शान्तिनाथ चरित्र में भी अपनी काव्य प्रतिभा का पूरा चमत्कार बतलाया है। इसमें महाकवि हर्ष रचित नैषधीय महाकाव्य के श्लोक का एक २ चरण लेकर उसे अपने तीन चरणों के साथ सुशोभित किया है। मगर इनकी काव्य प्रतिभा का सबसे अधिक चमत्कार इनके "सप्त संधान" नामक ग्रन्थ में दिखलाई देता है। यह काव्य नवसर्गों में विभक्त है। उसमें प्रत्येक श्लोक ऋषभदेव, शान्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर ये पाँच तीर्थङ्कर तथा रामचन्द्र और कृष्ण वासुदेव इन सात महा पुरुषों के सम्बन्ध में है। इसमें का प्रत्येक श्लोक इन सातों महापुरुषों के सम्बन्ध में एक ही प्रकार के शब्दों से भिन्न २ घटनाओं का उल्लेख करता है। इस काव्य पर इन्होंने स्वयं ही टीका भी रची है।

इसी प्रकार आपकी पंच तीर्थ स्तुति, पंचाख्यान (पंचतंत्र) लघुत्रिष्ठ चरित्र नामक कथा (त्रिषष्ठि शलाका पुरुष) चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी नामक व्याकरण, उदयदीपिका, वर्ष प्रबोध, मेघ महोदय, रमलशास्त्र इत्यादि ज्योतिष ग्रन्थ और मातृ का प्रसाद, तत्वगीता, ब्रह्मबोध नामक आध्यात्मिक ग्रंथों की रचना की। प्राकृत भाषा में आपने युक्ति प्रबोध नामक ४२०० श्लोक के एक विशाल नाटक की रचना की। मतलब यह कि आपकी प्रतिभा सर्वतो मुखी थी।

श्री जैन मूर्ति पूजक आचार्य्य

श्री आचार्य्य विजयानन्द सूरिजी (प्रसिद्ध नाम श्री आत्मारामजी महाराज)—आप उन्नीसवीं सदी के अत्यन्त प्रख्यात् जैनाचार्य्य थे। आप उन महात्माओं की श्रेणी में हैं, जिन्होंने जैनागम की कठिन समस्याओं पर प्रकाश डालकर अपने योग बल के प्रभाव से भारत भूमि में आत्मज्ञान की पीयूषधारा को प्रवाहित किया है। आप वेद वेदांग और दर्शनादि शास्त्रों में पूर्ण पारंगत थे। आपने अनेकों ग्रन्थों की रचनाएँ कीं। पंजाब देश में आपने अत्यधिक विचरण एवं उपकार किया। आपके स्मारक में पंजाब प्रान्त में अनेकों मंदिर, भवन, सभाएँ, पाठशालाएँ एवं पुस्तकालय स्थापित हैं। सिद्धाचल तथा होशियारपुर में आपकी भव्य प्रतिमाएँ स्थापित हैं। विक्रमी संवत् १८९३ की चैत सुदी १ को आपका जन्म हुआ। बाल्य काल में पिताजी के स्वर्गवासी हो जाने से १४ साल की आयु में आप जीरा चले आये। यहाँ आने पर बीस वर्ष की आयु तक आपने स्थानक मत के तमाम स्तोस्त्रों को कंठस्थ कर लिया। इसके पश्चात् आपने व्याकरण और साहित्य का अध्ययन कर न्याय, सांख्य, वेदान्त और दर्शन ग्रंथ पढ़े। धीरे २ आपके मन में मूर्ति पूजा के विचार दृढ़ होते गये, और आपने संवत् १९३२ में अपने १५ साथियों सहित मुनिराज बुद्धिविजयजी से मंदिर सम्प्रदाय की दीक्षा गृहण की। तब आपका नाम "आनन्द विजय" रक्खा गया। लेकिन आप "आत्माराम" के नाम से ही प्रसिद्ध रहे। गुजरात से आप पंजाब पधारे। पंजाब प्रान्त में आपके प्रखर भाषणों ने नवजीवन फूँका। संवत् १९४३ में आपके पालीताना के चातुर्मास में भारत के विभिन्न प्रान्तों की ३५ हजार जैन जनता ने आपको "सूरिधर" और "जैनाचार्य्य" की पदवी से विभूषित किया। केवल भारत में ही नहीं, विदेशों में भी आपकी प्रखर बुद्धि की गूँज हो गई थी। कई बार आपके पास विदेशों से भी निमंत्रण आये। आपने जीवन के अंतिम ३ वर्ष पंजाब प्रान्त में भ्रमण करते हुए व्यतीत किये। आप संवत् १९५३ की ज्येष्ठ सुदी अष्ठमी की रात्रि में अपनी कीर्ति कौमुदी को इस असार संसार में छोड़ कर स्वर्गवासी हुए। आपके गुरु भाई प्रवर्तक कान्तिविजयजी महाराज वृद्ध एवं विद्वान महात्मा हैं। आपकी वय ८२ साल की है तथा आप पाटण गुजरात में बिराजते हैं। आचार्य्य विजयवल्लभसूरिजी आपको बड़ी पूज्य दृष्टि से देखते हैं। आपकी सेवा में मुनि पुण्य विजयजी रहते हैं।

श्री आचार्य्य विजय नेमिसूरिजी—आपका जन्म माहुवा (मधुमती नगरी) में संवत् १९२९ की काती सुदी १ को सेठ लक्ष्मीचन्द भाई के गृह में हुआ। संवत् १९४५ की जेठ सुदी ७ को आपने गुरू वृद्धिचन्दजी महाराज से दीक्षा गृहण की। संवत् १९६० की कार्तिक वदी ७ को आपको "गणीपद" एवं मगसर सुदी ३ को आपको "पन्यास पद" प्राप्त हुआ। इसी प्रकार संवत् १९६४ की जेठसुदी ५ के दिन भावनगर में आप "आचार्य्य" पद से विभूषित किये गये। आपने जैसलमेर, गिरनार, आबू, सिद्धश्रेय आदि के संघ निकलवाये, कापरड़ा आदि कई जैन तीर्थों के जीर्णोद्धार में आपका बहुत भाग रहा है। आपने कई तीर्थों एवं मदिरों की प्रतिष्ठाएँ करवाई। आप न्याय, व्याकरण एवं धर्मशास्त्र के प्रखर ज्ञाता हैं। आपने अहमदाबाद में "जैन सहायक फंड" की स्थापना करवाई। आप ही के पुनीत प्रयास से अ० भा० श्वेताम्बर मूर्तिपूजक साधु सम्मेलन का अधिवेशन अहमदाबाद में सफल हुआ। आप धर्म-शास्त्र, न्याय व व्याकरण के उच्च-कोटि के विद्वान तथा तेजस्वी और प्रभावशाली साधु हैं। आपने अनेकों ग्रन्थ की रचनाएँ कीं। आप

उच्च वक्ता हैं। आपकी युक्तियाँ अकाट्य रहती हैं। ज्योतिष, वैद्यक आदि विषयों के भी आप ज्ञाता हैं। आपके पाटवी शिष्य आचार्य उदयसूरिजी एवं आचार्य्य विजयदर्शनसूरिजी धर्मशास्त्र, व्याकरण, दर्शन न्याय के प्रखर विद्वान हैं। आप महानुभावों ने भी अनेकों ग्रन्थों की रचनाएँ की हैं। आचार्य्य उदयसूरिजी के शिष्य आचार्य्यविजयनंदन सूरिजी भी प्रखर विद्वान हैं। आपने भी अनेकों ग्रन्थों की रचनाएँ की हैं।

श्री आचार्य्य विजयशान्ति सूरिश्वरजी—अपने प्रखर तेज, योगाभ्यास एवं अपूर्व शांति के कारण आप वर्तमान समय में न केवल भारत के जैन समाज में प्रत्युत ईसाई, वैष्णव आदि अन्य धर्माव-लम्बियों में परम पूजनीय आचार्य्य माने जाते हैं। आपका जन्म मणादर गांव में संवत् १९४५ की माघ सुदी ५ को हुआ। आपने मुनि धर्मविजयजी तथा तीर्थविजयजी से शिक्षा गृहण कर संवत् १९६१ की माघ सुदी २ को मुनि तीर्थविजयजी से दीक्षा ग्रहण की। सोलह वर्षों तक मालवा आदि प्रान्तों में भ्रमण कर संवत् १९७७ में आप आबू पधारे। संवत् १९९० की वैशाख वदी ११ पर बामनवाड़जी में पोरवाल सम्मेलन के समय १५ हजार जैन जनता ने आपको "जीवदया प्रतिपाल योग लब्धि सम्पन्न राजराजेश्वर" पदवी अर्पण कर अपनी भक्ति प्रगट की। यह पद अत्यंत कठिनता पूर्वक जनता के सत्यागृह करने पर आपने स्वीकार किया। इसके कुछ ही समय बाद "वीर-वाटिका" में आपको जैन जनता ने "जगत-गुरु" पद से अलंकृत किया। इसी साल मगसर महीने में आप "आचार्य्य सूरि सम्राट" बनाये गये। हालाँ कि उपरोक्त सब पदविएँ आपके तेज व प्रताप के सम्मुख नगण्य हैं, लेकिन श्रद्धालु जनता के पास इससे बढ़कर और कोई वस्तु नहीं थी, जो आपके सम्मान स्वरूप अर्पित की जाती। आपने लाखों मनुष्यों को अहिंसा का उपदेश देकर माँस व शराब का त्याग करवाया। आबू में पशुओं के लिए "शान्ति पशु औषधालय" की स्थापना कराई। यह औषधालय लींबड़ी नरेश तथा मिसेज ओगिल्वी की संरक्षता में चलता रहा है। अभी कुछ ही दिन पूर्व आपको उदयपुर में नेपाल राजवंशीय डेपुटेशन ने अपनी गवर्नमेंट की ओर से "नेपाल राज गुरु" की पदवी से अलंकृत किया। कई उच्च अंग्रेज व भारत के अनेकों राजा महाराजा आपके अनन्य भक्त हैं। आपके प्रभाव से लगभग सौ राजाओं और जागीरदारों ने अपने राज्य में पशु बलिदान की क्रूर प्रथा बन्द की है। आप अधिकतर आबू पर विराजते हैं।

श्री आचार्य विजयवल्लभसूरिजी—आपका शुभ जन्म विक्रमी संवत् १९२७ की कार्तिक सुदी २ को वीशा श्रीमाली जाति में बड़ोदा निवासी शाह दीपचंद भाई के गृह में हुआ, एवं आपका जन्म नाम छगनलाल रक्खा गया। बाल्यकाल से आप बड़ी प्रखर बुद्धि के थे। आपने संवत् १९४३ में श्रीमान आत्मा-रामजी महाराज से राधनपुर में दीक्षा ग्रहण की और श्री हर्षविजयजी के आप शिष्य बनाये गये, तथा आपका नाम मुनि श्री विजयवल्लभजी रक्खा गया। आपने संस्कृत, प्राकृत, मागधी का ज्ञान प्राप्त कर न्याय ज्योतिष, दर्शन और आगम शास्त्रों का अध्ययन किया। आपकी प्रखर बुद्धि एवं गंभीर विचारशक्ति पर आत्मारामजी जैसे प्रकांड विद्वान भी मोहित थे। अनेकों स्थानों में आपने शास्त्रार्थ करके विजय प्राप्त की है। सम्वत् १९८१ में लाहौर में भारत के जैन संघ ने आपको मगसर सुदी ५ के दिन "आचार्य" पद से सुशोभित किया। आपने अपने प्रभावशाली उपदेशों से कई गुरुकुल एवं जैन शिक्षा संस्थाएँ, लायब्रेरियाँ, ज्ञान भण्डार वगैरा स्थापित करवाये, जिनमें श्री आत्मानंद जैन गुरुकुल गुजरानवाला, श्री आत्मानन्द जैन

हाईस्कूल अम्बाला, श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय वरकाणा और उम्मेदपुर, श्री आत्मानंद विद्यालय सादड़ी, श्री पालनपुर जैन बोर्डिंग, आत्मवल्लभ केलवणी फण्ड पालनपुर, महावीर जैन विद्यालय बम्बई आदि २ मुख्य हैं। इतना ही नहीं आपने अनेकों संघ निकलवाये, प्रतिष्ठाएँ, अंजनशलाकायें कराई। आप बड़े शान्त, तेजस्वी एवं प्रतिभा सम्पन्न आचार्य्य हैं। इस समय आप जैन कॉलेज और युनिवर्सिटी खोलने का सतत उद्योग कर रहे हैं। आपके उपदेश से पाटन में ज्ञान मन्दिर तयार हो रहा है। आपके शिष्य पन्यास ललितविजयजी शान्त एवं विद्वान जैन मुनि हैं।

श्री आचार्य्य विजयदान सूरिश्वरजी—आपका जन्म विक्रमी संवत् १९१४ की कार्तिक सुदी १४ के दिन झींझुवाड़ा नामक स्थान में दस्सा श्रीमाली जातीय जुठाभाई नामक गृहस्थ के गृह में हुआ, और आपका नाम दीपचन्द भाई रक्खा गया। संवत् १९४६ की मगसर सुदी ५ के दिन गोधा मुकाम पर आत्मारामजी महाराज के शिष्य वीरविजयजी महाराज से आपने दीक्षा गृहण की, एवं आपका नाम दानविजयजी रक्खा गया। आपके जैनागम तथा जैन सिद्धान्त की अपूर्व जानकारी की महिमा सुनकर बड़ोदा नरेश ने सम्मान पूर्वक आपको अपने नगर में आमंत्रित किया। संवत् १९६२ की मगसर सुदी ११ तथा पौर्णिमा के दिन आपको क्रमशः गणीपद तथा पन्यास पद प्राप्त हुआ, और संवत् १९८१ की मगसर सुदी ५ के दिन श्रीमान् विजय कमलसूरिजी ने आपको छाणी गाँव में आचार्य्य पद प्रदान किया, और तब से आप "विजयदान सूरिश्वर महाराज" के नाम से विख्यात् हैं। नेत्रों के तेज की न्यूनता होने पर भी आप अनेकों ग्रन्थों के पठन पठनादि कार्यों में हमेशा संलग्न रहते हैं। आपके शिष्य सिद्धान्त महोदधि महा महोपाध्याय प्रेमविजयजी एवं व्याख्यान वाचस्पति पन्यास रामविजयजी महाराज भी उच्च विद्वान हैं। रामविजयजी महाराज प्रखर वक्ता हैं। आपकी विषय प्रतिपादन शक्ति उच्चकोटि की है।

श्री आचार्य्य विजयधर्मसूरिजी—आप अन्तराष्ट्रीय कीर्ति के आचार्य्य थे। आपका जन्म संवत् १९२४ में बीसा श्रीमाली जाति के श्रीमंत सेठ रामचन्द भाई के यहाँ हुआ था। उस समय आपका नाम मूलचन्द भाई रक्खा गया था। बाल्यकाल में आप पढ़ने लिखने से बड़े घबराते थे। अतः आपके पिताजी ने आपको अपने साथ दुकान पर बैठाना शुरू किया। यहाँ आप सट्टा और जुगार में लीन हो गये। जब इन विषयों से आपका मन फिरा तो आपने सम्वत् १९४३ की वैशाख वदी ५ को मुनि वृद्धिचन्दजी महाराज से दीक्षा गृहण की, और आपका नाम धर्मविजयजी रक्खा गया। धीरे २ आपने अपने गुरू से अनेकों शास्त्रों का अध्ययन किया। आपने संस्कृत का उच्च ज्ञान देने के हेतु बनारस में "यशो विजय जैन पाठशाला" और "हेमचन्द्राचार्य्य जैन पुस्तकालय" की स्थापना की। आपने बिहार, बनारस, इलाहाबाद, कलकत्ता, तथा बंगाल, गुजरात, गोडवाड़ आदि अनेकों प्रान्तों में चातुर्मास कर अपने निष्पक्षपात तथा प्रखर व्याख्यानों द्वारा जैन धर्म की बड़ी प्रभावना की। आपके कलकत्ता के चातुर्मास में जैन व अजैन श्रीमंत, अनेकों रईस एवं विद्वानों ने आपके उपदेशों से जैन धर्म अंगीकार किया था। इलाहाबाद के कुंभोत्सव के समय जगन्नाथपुरी के श्रीमत् शंकराचार्य्य के सभापतित्व में आपके उदार भावों से परिपूरित प्रखर भाषण ने जनता में एक अपूर्व हलचल पैदा की थी। संवत् १९६३ में आपने गुरुधारी दीक्षा ग्रहण की। संवत् १९६४ की सावण वदी १४ के दिन बनारस में काशी नरेश के सभापतित्व में अनेकों बंगाली तथा गुजराती

एवं स्थानीय विद्वान तथा श्रीमंतों की उपस्थिति में आप "शास्त्र विशारद" तथा जैनाचार्य्य की पदवी से विभूषित किये गये। इस पदवी का समर्थन भारत के अतिरिक्त विदेशीय विद्वान डाक्टर हरमन जेकोबी, प्रोफेसर जहनस हर्टल डॉ॰ब्लेन ने मुक्त कंठ से किया था। आपका कई विदेशी विद्वानों से स्नेह है। आपके शिष्य आचार्य्य श्री इन्द्रविजयजी, न्यायतीर्थ मंगल विजयजी, श्रीमुनि विद्याविजयजी, न्यायतीर्थ न्यायविजयजी, न्यायतीर्थ हेमांशुविजयजी आदि हैं। आप सब प्रखर विद्वान एवं अनेकों ग्रन्थों के रचयिता हैं।

श्री आचार्य्य विजयकेशर सूरिश्वरजी—आपका जन्म सम्वत् १९३३ की पोष सुदी १५ को माधवजी भाई के गृह में पालीताना तीर्थ में हुआ। आपका नाम उस समय केशवजी था। आपको सम्वत् १९५० की मगसर सुदी १० के दिन बड़ौदा में आचार्य्य विजय कमलसूरिश्वरजी ने धूमधाम के साथ दीक्षा दी, तथा आपका नाम केशर विजयजी रक्खा गया। गुरुजी के पास से आपने अनेकों शास्त्रों का अध्ययन किया। आपने अनेको तीर्थों के संघ निकलवाये। सम्वत् १९६३ की कार्तिक वदी ६ को आप 'गणी' पद एवं सम्वत् १९६४ की मगसर सुदी १० के दिन पन्यास पदवी से विभूषित किये गये। आपने हुन्नरशाला, योगाश्रम एवं पाठशालाएं स्थापित करवाईं। सम्वत् १९८३ की काती बदी ६ को आप आचार्य्य पद से विभूषित किये गये, तथा सम्वत् १९८५ की श्रावण वदी ५ को आप स्वर्गवासी हुए।

मुनि वर्य्य श्री कर्पूर विजयजी—आपका जन्म भावनगर निवासी अमीचन्द भाई नामक ओसवाल गृहस्थ के गृह में संवत् १९२५ की पोष सुदी ३ के दिन हुआ। सम्वत् १९४७ की वैशाख सुदी ६ के दिन आपने वरदीचन्दजी महाराज से दीक्षा गृहण की। आपने मेट्रिक तक अध्ययन किया। आपने जैन समाज में धार्मिक ज्ञान के प्रसार में विशेष भाग लिया। आप बड़े गम्भीर, गुणज्ञ तथा त्यागी साधु हैं।

श्री आचार्य्य जिन कृपाचन्द्र सूरीश्वरजी—आपका जन्म चांमू (जोधपुर) निवासी मेघरथजी बापना के गृह में संवत् १९१३ में हुआ। संवत् १९३६ में अमृतमुनिजी ने आपको यति सम्प्रदाय में दीक्षा दी। आपने खेरवाड़े के जिन मन्दिर की प्रतिष्ठा करवाई। आपने मालवा, मारवाड़, गुजरात, काठियावाड़, बम्बई में कई चातुर्मास कर जनता को सदुपदेश दिया। आप सम्वत् १९७२ में बम्बई में "आचार्य्य" पद से विभूषित किये गये। आपने कई पाठशालाएं, कन्याशालाएं एवं लायब्रेरियाँ खुलवाईं। आप न्याय, धर्मशास्त्र एवं व्याकरण के अच्छे ज्ञाता हैं, तथा खरतर गच्छ के आचार्य्य हैं।

श्री आचार्य्य सागरानन्द सूरिजी—आपका जन्म कपड़भन्ज निवासी प्रसिद्ध धार्मिक श्रीमंत सेठ मगनलाल गाँधी के गृह में सम्वत् १९३१ में हुआ। आपके बड़े भ्राता मणिलाल गाँधी के साथ आपने धार्मिक शिक्षा प्राप्त की। प्रथम आप के भ्राता ने दीक्षा गृहण की एवं उनका मणिविजय नाम रक्खा गया। आपके दीक्षागृहण करने के विरोध में आपके श्वसुर ने कोर्ट से रोक की। लेकिन आपने परवाह न कर सं० १९४७ में जवेर सागरजी से दीक्षा गृहण की, और आपका नाम आनन्दसागर जी रक्खा गया। सम्वत् १९६० में आपको "पन्यास" एवं "गणीपद" प्राप्त हुआ। आपके विद्वत्ता पूर्ण एवं सारगर्भित भाषणों ने जैन जनता को प्रभावित किया। आपने एक लाख रुपयों की लागत से सूरत में सेठ देवचन्द लालभाई जैन पुस्तकोद्धार फन्ड कायम कराया। बम्बई में जैन जनता को संगठित करने के समय आप "सागरानन्द" के नाम से मशहूर हुए। सम्वत् १९७४ में आपको आचार्य्य विजयकमलसूरिजी ने

आचार्य्य पद प्रदान किया। आपका स्थापित किया हुआ सूरत का 'श्री जैन आनन्द पुस्तकालय' बम्बई प्रान्त में प्रथम नम्बर का पुस्तकालय है। इसी तरह आगम ग्रन्थों के उद्धार के लिए आपने सूरत, रतलाम, कलकत्ता, अजीमगञ्ज, उदयपुर आदि स्थानों में लगभग १५ संस्थाएं स्थापित कीं। इन्हीं गुणों के कारण आप "आगमोद्धारक" के पद से विभूषित किये गये। इस समय आप सूर्य्यपुरी में निवास करते हैं। आपने बाल दीक्षा के लिए बड़ोदा सरकार से बहुत वादविवाद चलाया था।

श्री जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी आचार्य्य

इस सम्प्रदाय के प्रधान प्रचारक श्री लोंकाशाहजी एक मशहूर साहूकार थे। आप सोलहवीं शताब्दी के अन्तर्गत अहमदाबाद नगर के एक प्रतिष्ठित तथा धनिक सज्जन थे। प्रारम्भ से ही आप तीक्ष्ण बुद्धि वाले, बुद्धिमान तथा धर्म प्रेमी महानुभाव थे। आपके अक्षर बड़े ही सुन्दर थे। उस समय छापेखानों आदि का आविष्कार न हो पाया था। अतः जैन धर्म के कई शास्त्रों को आपने स्वयं अपने हाथ से लिखा जिससे आपको जैन शास्त्रों के अध्ययन का शौक क्रमशः लग गया और कालान्तर से आप एक बड़े विद्वान तथा जैन तत्वों के पंडित होगये। तदनन्तर आपने अपनी सम्पत्ति का सदुपयोग कर जैन शास्त्रों को लिखवाना आरम्भ करा दिया। इस प्रकार जैन साहित्य को संग्रहित करने के विशाल कार्य्य द्वारा आपको जैन धर्म के तत्वों का विशेष ज्ञान होगया और उसी समय से आपने जैन जनता को जैन तत्वों का उपदेश देना प्रारम्भ कर दिया। धीरे २ आपका नाम जैन समाज में फैल गया और दूर २ से सैकड़ों हजारों व्यक्तियों के झुण्ड के झुण्ड आपके व्याख्यान को सुनने के लिये आने लगे और आपके प्रभावशाली व्याख्यान को सुन कर हजारों की संख्या में आपके अनुयायी होगये। सर्व प्रथम आपने संवत् १५३१ में ४५ साधुओं को दीक्षा ग्रहण करने की आज्ञा दी। इसके पश्चात् इस सम्प्रदाय का प्रचार बड़ी तेजी से होने लगा और थोड़े ही समय में हजारों श्रावकों ने इस धर्म को अंगीकार किया और बहुत से गृहस्थों ने सांसारिक सुखों को छोड़ छोड़कर इस सम्प्रदाय में दीक्षा ग्रहण की।

लोंकाशाहजी के पश्चात् ऋषिश्री भाणजी, श्री भीदाजी, श्री यूनाजी, श्री भीमाजी, श्री गजमल जी, श्री सखाजी, श्री रूप ऋषिजी, श्री जीवाजी नामक आचार्य्य धर्म प्रचारक श्री लोंकाशाहजी के पाट पर क्रमशः विराजे। आप सब आचार्य्यों ने जैन सिद्धान्तों का सर्वत्र प्रचार किया और लाखों की संख्या में अपने अनुयायिओं को बनाया। इसी समय तत्कालीन आचार्य्यों में मतभेद होजाने के कारण इस सम्प्रदाय की तीन शाखाएं होगईं—(१) गुजराती लोंकागच्छ (२) नागोरी लोंकागच्छ तथा (३) उत्तरार्ध लोंकागच्छ। लोंकागच्छ के आचार्य्य श्री जीवाजी ऋषि के तीन मुख्य शिष्य थे श्री कुँवरजी, श्री वरसिंहजी तथा श्री श्रीमलजी। इनमें से श्री कुँवरजी, और उनके पश्चात् श्री श्रीमलजी उक्त पाट पर बैठे। आपके पश्चात् श्री रत्नसिंहजी, श्री केशवजी, श्री शिवजी, श्री संघराजजी, श्री सुखमलजी, श्री भागचन्दजी, श्री बालचन्दजी, श्री माणकचन्दजी, श्री मूलचन्दजी, श्री जगतसिंहजी तथा श्री रतनचन्द

जी उक्त पाट पर विराजे। श्री रतनचन्दजी के शिष्य श्री नृपचन्दजी वर्त्तमान में इस पाट पर विराजमान हैं।*

इसी तरह गुजराती लोंकागच्छ के आचार्य्य जीवाजी के दूसरे शिष्य श्री वरसिंहजी के पश्चात् आपके पाट पर श्री छोटेसिंहजी, श्री यशवंतसिंहजी, श्री रूपसिंहजी, श्री दामोदरजी, श्री केशवजी, श्री तेजसिंहजी, श्री कहानजी श्री तुलसीदासजी, श्री जगरूपजी, श्री जगजीवनजी, श्री मेघराजजी, श्री शोभाचन्दजी, श्री हर्षचन्दजी, श्री जयचन्दजी, तथा श्री कल्याणचन्दजी नामक आचार्य्य विराजे। श्री कल्याणचन्दजी के शिष्य श्री खूबचन्दजी वर्त्तमान में इस पाट पर विराजमान हैं।

गुजरात लोंकागच्छ में से श्री कुँवरजी पक्ष के आचार्य्य श्री नृपचन्दजी की गद्दी जामनगर में, वरसिंहजी के शिष्यों में प्रसिद्ध आचार्य्य श्री केशवजी पक्ष के शिष्य आचार्य्य श्री खूबचन्दजी की गद्दी बड़ौदा में तथा धनराजजी पक्ष के श्री विजयराजजी की गद्दी जैतारण (मारवाड़) में विद्यमान हैं।

धर्म सुधारक श्री धर्मसिंहजी—आप नयानगर निवासी दस्सा श्रीमाली वैश्य श्री जिनदासजी के पुत्र थे। आपकी माता का नाम शिवा था। आप बड़े तीक्ष्ण बुद्धिवाले तथा धार्मिक सज्जन थे। छोटी उमर से ही आप जैनाचार्य्यों के व्याख्यान बड़े ध्यान से सुनते थे। आपने १५ वर्ष की आयु में आचार्य्य श्री रत्नसिंहजी के शिष्य श्री देवजी से नयानगर में ही यति वर्ग की दीक्षा ग्रहण की। तदनन्तर आपने जैन शास्त्रों तथा सूत्रों का अध्ययन कर उनका अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया और अपने श्रावकों को जैन तत्वों का उपदेश देने लगे। आप बड़े त्यागी, साहसी, निडर तथा साधु के संयम आदि नियमों को पूर्णरीति से पालते थे। आपने उस समय के साधुओं की आचार शिथिलता से उन्हें सावधान किया तथा पुनः लोंकाशाहजी के सिद्धान्तों का प्रचार कर जैन जगत में नवीन स्फूर्ति पैदा करदी। आपके व्याख्यानों का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। आपके अनुयायी दरयापुरी के नाम से प्रसिद्ध हैं। आपने कई ग्रन्थ लिखे थे। आप संवत् १७२८ में स्वर्गवासी हुए।

धर्म सुधारक श्री ऋषि लवजी—आप सूरत निवासी एक धनाढ्य श्री माली वैश्य श्री वीरजी बोहरा के पुत्र थे। आपने संवत् १६९२ में खम्भात में जैन धर्म के साधु की दीक्षा ग्रहण की। आप जैन शास्त्रों के व सूत्रों के ज्ञाता तथा साधु के आचार विचार के नियमों को अक्षरशः पालन करने वाले आचार्य्य थे। आपका त्याग व आपकी क्षमता बहुत बढ़ी चढ़ी थी। आपने जैन धर्म के सिद्धान्तों का प्रचार करने में सैकड़ों आपत्तियों का बड़े धीरज के साथ सामना किया था। आपके पश्चात् क्रमशः आचार्य्य श्री सोमजी तथा कहानजी का नामोल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। वर्त्तमान में आपके सम्प्रदाय के शिष्य श्री अमोलख ऋषिजी महाराज विद्यमान हैं। आपका परिचय आगे दिया जायगा।

धर्म सुधारक श्री धर्मदासजी—आप अहमदाबाद ज़िले के सरखेच नामक गांव के निवासी जीवण कालिदासजी भावसार के पुत्र थे। आपने संवत् १७१६ में अहमदाबाद के बाहर बादशाह की बाड़ी में दीक्षा ली थी। प्रारम्भ से ही आपकी एकलपात्री साधुपर श्रद्धा थी। आप धर्म सुधारक श्री धर्मसिंह

---

* उक्त आचार्य्यों के विशेष परिचय के लिये वाडीलाल मोतीलाल शाह लिखित "ऐतिहासिक नोंध" नामक पुस्तक को पढ़िये।

जी तथा लवजी ऋषि के सम्प्रदायों से पूर्ण संतुष्ट न हुए और अपना एक अलग सम्प्रदाय स्थापित किया। आपने स्थानकवासी सम्प्रदाय के विषम व्रत आदि को उचित नीति व ढंग से लिखा जिनमें से प्रायः बहुत से आज तक पूर्ववत् ही पाले जाते हैं। आपके कुल ९९ शिष्य हुए जिनसे आगे जाकर मारवाड़, मेवाड़, पंजाब, लींबड़ी, बोटाद, सायला, ध्रागध्रो, चुडाकच्छ, गोंडल आदि संघ बने। इनके अतिरिक्त आपके शिष्य श्री रघुनाथजी के शिष्य श्री भिक्खनजी ने वर्त्तमान भारत प्रसिद्ध श्री तेरापन्थी धर्म की भी स्थापना की जिसका पूर्ण इतिहास अन्यत्र दिया जा रहा है। श्री धर्मदासजी के प्रधान शिष्य मूलचंदजी जो गुजरात में ही रहे, के श्री गुलाबचन्दजी, पचाणजी, बनाजी, इन्दरजी, बनारसीजी तथा इच्छाजी नामक शिष्यों से निम्न लिखित संघ स्थापित हुए।

श्री पचाणजी के शिष्य श्रीरतनजी तथा श्री डूंगरसीजी स्वामी गोंडल गये तब से आपका गोंडल संघ स्थापित हुआ। आपके अनुयायी गोंडल संघाड़ा के नाम से प्रसिद्ध हैं। श्री बनाजी के शिष्य श्री कहानजी स्वामी बरवाले गये तब से आपके संघ का नाम बरवाल संघ पड़ा। श्री इन्दरजी के शिष्य श्रीकृष्णस्वामी ने कच्छ में आठ कोठी समुदाय का प्रचार किया अतः आपके संघ वाले कच्छ आठ कोठी समुदाय वाले प्रसिद्ध हैं। श्री बनारसीजी के शिष्य श्री जयसिंहजी तथा श्री उदयसिंहजी स्वामी चुड़ा गये तब से आपका समुदाय चुडा समुदाय के नाम से प्रसिद्ध है। इसी प्रकार श्री इच्छाजी स्वामी ने संवत् १८४५ में लीम्बड़ी में लीम्बड़ी समुदाय की गद्दी स्थापित की। तब से आपका समुदाय लीम्बड़ी समुदाय के नाम से मशहूर है। आपके शिष्य श्री रामजी ऋषि लीम्बड़ी से उदयपुर आये और आपने उदयपुर में उदयपुर समुदाय स्थापित किया।

आचार्य्य श्री अजरामरजी—श्री मूलचन्दजी के ज्येष्ठ शिष्य श्री गुलाबचन्दजी के क्रमशः श्रीबालजी, श्री हीराजी स्वामी तथा श्री कहानजी नामक शिष्य हुए। इन कहानजी के शिष्य श्री अजरामरजी हुए। आपका जन्म संवत् १८०९ में हुआ था। आप जामनगर जिले के पडाणा नामक गाँव के बीसा ओसवाल सज्जन थे। आप बड़े विद्वान तथा जैन सूत्रों के ज्ञाता थे। आपने संवत् १८१९ में जैन धर्म में दीक्षा ग्रहण की और संवत् १८४५ में आचार्य्य पदवी से विभूषित किये गये। आपने लीम्बड़ी समुदाय को खूब प्रसिद्ध किया। आपका स्वर्गवास सम्वत् १८७० में हुआ। आपके पश्चात् आपके शिष्य देवराजजी ने सम्वत् १८४७ में कच्छ में विहार किया तथा वहाँ पर छः कोठी के समुदाय का प्रचार किया। आप विद्वान थे। अतः आपके इस समुदाय का बहुत प्रचार हुआ। आप सम्वत् १८७९ में स्वर्गवासी हुए। आपके पश्चात् श्री भाणस्वामी गद्दी पर विराजे। आपने सम्वत् १८५५ में दीक्षा ली तथा सम्वत् १८८३ में निर्वाण पद को प्राप्त हुए। फिर देवजी स्वामी गद्दी पर विराजे। आपने सं० १८६० में दीक्षा ग्रहण की व सम्वत् १८८६ में गद्दी पर विराजे। श्री दीपचन्दजी बड़े विद्वान और शांत-स्वभावी हो गये हैं। आपने सम्वत् १९०१ में लीम्बड़ी सम्प्रदाय में दीक्षा ली तथा संवत् १९३७ में आचार्य्य पद पाया। आप भी जैन धर्म की सेवा कर स्वर्गवासी हो गये।

आचार्य्य श्री अमरसिंहजी—श्रीलोंकाशाहजी द्वारा जिन सज्जनों को साधु होने की आज्ञा दी गई थी उन व्यक्तियों में से श्रीभानुलुणाजी की २५वीं पीढ़ी में श्री अमरसिंहजी पंजाबी हुए। आप अमृतसर निवासी

ओसवाल जाति के तांतेड़ गौत्रीय श्री बुद्धसिंहजी के पुत्र थे। आपका जन्म सम्वत् १८६२ में हुआ था। आप बड़े कान्तिवान और तेज पुञ्ज थे। आपने सम्वत् १८९८ में देहली में श्री रामलालजी के पास पांच महाव्रतों की दीक्षा ली थी तथा सम्वत् १९१३ में आप आचार्य्य पदवी से विभूषित किये गये। आपने ३२ साधु एवं १३ साध्वियों को दीक्षित किया। आप बड़े विद्वान तथा जैन धर्म के ज्ञाता थे। आपने पंजाब की जैन समाज में एक नवीन धार्मिक संगठन कर तथा उन्हें अपने अमूल्य व्याख्यानादि सुना कर उनमें एक नवीन स्फूर्ति पैदा कर दी थी। आप सम्वत् १९३६ में अमृतसर में ही निर्वाण पद को प्राप्त हुए। आपके पश्चात् अलवर के ओसवाल जातीय लोढ़ा गौत्र के सज्जन श्री रामबगसजी उक्त गद्दी पर विराजे 'आपका जन्म सं० १८८३ में हुआ था। आपने सम्वत् १९०८ में जयपुर में दीक्षा ली और ११ मास तक आचार्य्य रह कर सम्वत् १९३९ में स्वर्गवासी हुए। आपके पश्चात् लुधियाना जिले के बहलोलपुर निवासी मुसद्दीलालजी खत्री के पुत्र श्री मोतीरामजी उक्त गद्दी पर विराजे। आपका जन्म सम्वत् १८८० में हुआ था। सम्वत १९१० में आपने पाँच महाव्रत धारण किये थे। आप को सम्वत १९३९ में आचार्य्य पदवी मिली थी। आप सम्वत १९५८ में स्वर्गवासी हुए।

पूज्य जवाहरलालजी—आप सुप्रख्यात आचार्य्य श्री श्रीलालजी महाराज के प्रधान शिष्य हैं। जैन साधुओं में आप अत्यंत प्रभावशाली, प्रतिभा सम्पन्न एवं विद्वान आचार्य्य हैं। देश की सामयिक, आवश्यकता की ओर आपका पूर्ण ध्यान है। जहाँ आप आपने अपूर्व उपदेशों के द्वारा हजारों लाखों लोगों के हृदयों को धर्म की दिव्य भावनाओं से परिप्लुत करते हैं वहाँ आप देश भक्ति और समाज सुधार के मार्ग से भी जनता को प्रगति शील बनाते हैं। आपके व्याख्यान बड़े ही स्फूर्तिदायक होते हैं और उनमें जीवन के भाव कूट २ कर भरे रहते हैं। पतितोद्धारक के लिए भी आप अपने व्याख्यानों में बड़ी जोरदार अपील करते हैं और जनता के हृदय को हिला देते हैं। विश्व बन्धुत्व का आदर्श रखते हुए इस दीनहीन भारत के लिए आपके हृदय में बड़ी लगन है और इसके धार्मिक, सामाजिक उत्थान के लिए आप अपने ढंग से प्रयत्न करते हैं। आपके उपदेशों से न केवल जैन जनता ही लाभ उठाती है वरन् सभी लोग आपके अपूर्व व्याख्यानामृत को पानकर बहुत शांति लाभ करते हैं।

पूज्य श्री मन्नालालजी—आपका जन्म संवत् १९२६ में हुआ। आपके पिता का नाम श्री अमरचन्दजी एवं माताजी का नाम श्रीमती नादीबाई था। आप ओसवाल जाति के सज्जन थे। आपने अपने पिताजी के साथ संवत् १९३८ में श्री रतनचन्दजी ऋषि से दीक्षा गृहण की। आप आरम्भ से ही द्वेष रहित, प्रखर बुद्धिवाले एवं बड़े सुशील थे। आप संवत् १९७५ में आचार्य्य पद पर आरूढ़ किये गये तथा उसी समय आपको शास्त्र विशारद की उपाधि भी दी गई। आप शास्त्रों के बड़े विद्वान, अच्छे वक्ता एवं सच्चरित्र सज्जन थे। आपका त्याग भी प्रशंसनीय था।*

श्री अमोलक ऋषि जी†—आप मेड़ते निवासी श्री केवलचन्दजी कांसटिया के पुत्र थे। आपने

* आपके विशेष परिचय के लिए आदर्श मुनि नामक ग्रंथ देखिये।

† आपके विस्तृत परिचय के लिए आप ही द्वारा लिखित जैन तत्व प्रकाश में श्री कल्याणमलजी चोरड़िया लिखित आपकी जीवनी देखिये।

संवत् १७४४ में १० वर्ष की आयु में श्री मुनि चैनऋपिजी से दीक्षा ली। यहाँ पर यह कह देना आवश्यक है कि आपके पिता एवं पितामह भी जैन धर्म में दीक्षित हो गये थे। श्री अमोलक ऋपिजी पर इसका बड़ा प्रभाव पड़ा था। आपने जैन धर्म में दीक्षित होने के पश्चात् अपने ज्ञान को बढ़ाया तथा अनेक जैन शास्त्रों का अध्ययन कर कई ग्रंथों की रचना की। आप बड़े विद्वान, वक्ता एवं जैन शास्त्रों एवं तत्वों के अच्छे ज्ञाता हैं। आपकी लिखी हुई कई पुस्तकें एवं बड़े-बड़ेग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं जैसेः—जैन तत्व प्रकाश आदि २।

श्री सोहनलालजी—पंजाब के आचार्य्य श्री मोतीरामजी के पश्चात् आप ही उक्त गद्दी पर बिराजे। आप सियालकोट जिले के सम्बड़याल गाँव वासी ओसवाल जातीय मथुरादासजी गधैया के पुत्र हैं। आपकी माताजी का नाम श्री लक्ष्मी देवी था। आपका जन्म संवत् १९०६ में हुआ। आपने अमृतसर नगर में संवत् १९३६ में दीक्षा ग्रहण की थी। आपके गुरु श्री धर्मचन्दजी आपके साहस, परिश्रम, ज्ञान तथा तर्क से बड़े प्रसन्न थे। आप संवत् १९५१ में युवाचार्य्य तथा सम्वत् १९५८ में आचार्य्य पदवी से विभूषित किये गये हैं। आप बड़े तेजस्वी, गम्भीर एवं बाल ब्रह्मचारी हैं। युवावस्था में आपकी आवाज बड़ी बुलंद थी। आपको जैन शास्त्रों में जो ज्योतिष का वर्णन आया है, उसका बहुत अच्छा ज्ञान है। आप इस समय ८३ वर्ष के हैं। आप ४० वर्षों से निरंतर एकांतर वास कर रहे हैं तथा इस समय स्वाध्याय एवं पठन पाठन में अपना सारा समय व्यतीत करते हैं। जैन शास्त्रों के ज्योतिष में आपका बहुत विश्वास है। आपके सम्प्रदाय में इस समय कुल ७३ मुनि एवं ६० आर्य्याजी विद्यमान हैं। पूज्य श्री सोहनलालजी वृद्धावस्था होने के कारण अमृतसर में ही स्थायी रूप से निवासकरते हैं। संवत् १९६९ में आपने अपने शिष्य श्री काशीरामजी को युवाचार्य्य के पद से विभूषित किया। युवाचार्य्य श्री काशीरामजी का जन्म संवत् १९५० में पसरूर (पंजाब) में हुआ है। आप दूगड़ गौत्रीय ओसवाल सज्जन हैं। आप बड़े साहसी तथा योग्य साधु हैं। पंजाब की स्थानकवासी जैन जनता को आप से बहुत बड़ी आशा है।

शतावधानी पं० मुनि श्री रत्नचन्द्रजी—आपका जन्म संवत् १९३६ में कच्छ मुन्द्रा के भारोरा नामक गाँव निवासी वीरपाल भाई ओसवाल के यहाँ हुआ। आप की माता का नाम श्री लक्ष्मीबाई है। आपका नाम उस समय रायसी भाई था। आप बड़े तीक्ष्ण बुद्धिवाले, कार्य्य शील एवं धार्मिक सज्जन थे। आपने अपनी नवपत्नी के स्वर्गवास के वियोग में १८ वर्ष की आयु में दीक्षा ग्रहण करली। वर्त्तमान में आप जैनों के अग्रगण्य विद्वानों में गिने जाते हैं तथा आप अवधान निपुण होने के अतिरिक्त संस्कृत, प्राकृत एवं गुजराती भाषाओं के लेखक, कवि तथा अच्छे वक्ता हैं। आपने अनेक ग्रन्थों की रचना की है। *

---

* आपके विशेष परिचय के लिए 'अवधान प्रयोग' नामक पुस्तिका में 'अवधान कर्त्ता का जीवन परिचय' नामक शीर्षक में देखिये।

तेरापन्थी संप्रदाय

तेरापन्थी संप्रदाय की स्थापना—इस पंथ के प्रवर्तक स्वामी भिक्खनजी महाराज थे। ऐसा कहा जाता है कि आप पहले स्थानकवासी संप्रदाय के अनुयायी थे, मगर जब आपने उस संप्रदाय के आचार्य्यों के क्रिया-कर्म में कुछ फर्क देखा तब आपने नवीन विचारों के अनुसार कुछ अपने अलग अनुयायी बनाए। एक वार आपके १३ अनुयायी आपके सिद्धान्तानुसार एक पड़त दुकान में पोषध कर रहे थे, ठीक उसी समय जोधपुर के तत्कालीन दीवान सिंघवी फतेचंदजी उधर निकले। श्रावकों को स्थानक में पोषध न करने का कारण पूछने पर उन्हें मालूम हुआ कि कुछ धार्मिक सिद्धान्तों का मत भेद हो जाने के कारण वे लोग अपने सिद्धान्तानुसार यहां पोषध कर रहे हैं। इसी समय स्वामी भिक्खनजी महाराज अपने १३ साधु अनुयायियों को साथ लेकर उक्त स्थान पर पधारे। उस समय उन्होंने अपने नवीन सिद्धान्त दीवानजी के सामने रखे, जिससे दीवान साहब बहुत प्रसन्न हुए। इसी समय पास में खड़े हुए एक सेवक ने तेरह साधु और तेरह ही श्रावकों को देखकर निम्न लिखित पद कह सुनाया, तभी से इस संप्रदाय का नाम तेरा पंथी संप्रदाय हुआ।

"आप आपको गिल्लोकर, ते आप आप को मंत।
देखो रे शहर के लोगां—"तेरापंथी तन्त॥"

जब उपरोक्त बात स्वामी जी को विदित हुई तो उन्होंने भी इस नामको सफल करने के उद्देश्य से अपने संप्रदाय के अनुयायियों के लिए पांच महाव्रत, पांच समिति और तीन गुप्ति का मन बचन से पालन करने का सिद्धान्त बनाया। जो कोई साधु और श्रावक इसका पालन करे वह तेरापंथी साधु और तेरापंथी श्रावक कहलावे। इस प्रकार इन तेरह सिद्धान्तों से तेरापंथी मत की स्थापना हुई। आगे चलकर इस संप्रदाय में कई साधु एवम् साध्वियाँ दीक्षित हुईं। वर्तमान समय तक इसमें ८ आचार्य्य पाटधर हुए। आगे हम इन्हीं आठों आचार्य्यों था संक्षिप्त जीवन चरित्र लिख रहे हैं।

संप्रदाय के स्थापक श्री स्वामी भिक्खनजी महाराज—आपका जन्म संवत् १७८३ के आषाढ़ शुक्ला १३ को मारवाड़ राज्यांतर्गत कंटालिया नामक ग्राम में हुआ था। आपके पिता शाह बल्लूजी सखलेचा वीसा ओसवाल जाति के सज्जन थे। आपकी माता का नाम श्रीमती दीपाबाई था। स्वामीजी को बचपन से ही साधु सेवाओं से बड़ा प्रेम था। अतएव आप साधुओं के पास जाया आया करते थे। प्रारम्भ में आपने गच्छ वासी संप्रदाय के व्याख्यान सुने, पश्चात् पोतिया बंध संप्रदाय ने आपका ध्यान आकर्षित किया। जब यहाँ भी आपको सच्ची शांति का अनुभव न हुआ तब आपने बाईस संप्रदाय की एक शाखा के आचार्य्य श्री रघुनाथजी महाराज के पास जाना प्रारंभ किया। आपके उपदेशों से प्रभावित होकर स्वामी भिक्खनजी का मन जैन धर्म के साधु बनने के लिये उतावला हो उठा। भाग्यवशात् इन्हीं दिनों आपकी धर्म पत्नी का भी स्वर्गवास हो गया। आपके पिताजी का स्वर्गवास पहले ही हो चुका था। अतएव माताजी की आज्ञा लेकर आपने साधु होना निश्चित किया। कहना न होगा कि अपने जीवन सर्वस्व एक मात्र आधार पुत्र को साधु होने की आज्ञा प्रदान करना माता के लिये कितना कष्ट साध्य है, मगर फिर भी तेजस्वी माता ने जगत के

कल्याण के लिये अपने पुत्र को जैनधर्म के बाईस संप्रदाय में दीक्षित होने की सम्मति प्रदान कर दी। इस आज्ञानुसार संवत् १८०८ में आप महाराजा रघुनाथजी द्वारा जैन साधु दीक्षित किये गये। इसके पश्चात् आठ बरस तक लगातार गुरु की सेवा में रहते हुए आपको अनुभव हुआ कि जिस मार्ग का अवलम्बन कर गुरुदेव कालयापन कर रहे हैं यह ठीक नहीं। अतएव इसी समय से आपने अपने नवीन सिद्धान्तों द्वारा एक अलग संप्रदाय की नींव डाली। यह समय सम्वत् १८१७ की आषाढ़ सुदी १५ का था। आपका स्वर्गवास सम्वत् १८६० की भाद्रपद शुक्ला १३ को ७७ वर्ष की अवस्था में मारवाड़ राज्य के सिरियारी नामक ग्राम में हुआ। आपने अपने समय में ४९ साधु और ५६ साध्वियों को अपने धर्म में दीक्षित किया था। इस समय आपके कई ग्रहस्थ लोग भी अनुयायी हो गये थे। आप इस संप्रदाय के एक विशेष आचार्य थे।

श्री स्वामी भारीमलजी—स्वामी भिक्खनजी के स्वर्गारोहण हो जाने के पश्चात् आप पाटधारी आचार्य्य हुए। मेवाड़ राज्य के केलवा नामक स्थान पर आपका दीक्षा संस्कार हुआ। आपके पिताजी का नाम श्रीकृष्णामलजी लोढ़ा था। सिरियारी नामक ग्राम में आपका पाट महोत्सव हुआ। आपने अपने समय में ३८ साधु और ४४ साध्वियों को दीक्षित किया। आपकी प्राकृति गम्भीर और शान्त थी। आपका स्वर्गवास संवत् १८७८ की माघ कृष्णा ६ को मेवाड़ के राजनगर नामक ग्राम में ७५ वर्ष की आयु में हुआ।

श्री स्वामी रायचन्दजी—तीसरे आचार्य्य स्वामी रायचन्दजी हुए। आपका जन्म रावलिया (मेवाड़) में हुआ। आपके पिता चतुर्भुजजी बम्ब थे। रावलिया ही में आपका दीक्षा संस्कार हुआ, एवम् राजनगर में आपका पाट महोत्सव हुआ। आपने अपने समय में ७७ साधु और १६८ साध्वियों को दीक्षित किया था। आपके जन्म स्थान ही में सम्वत् १९०८ की माघ कृष्णा १४ को ६२ वर्ष की आयु में आपका स्वर्गवास हुआ।

श्री स्वामी जीतमलजी—चौथे आचार्य्य स्वामी जीतमलजी का जन्म सम्वत् १८६० को रोहत (मारवाड़) नामक स्थान में हुआ। आपके पिताजी का नाम श्री आईदानजी गोलेछा था। आपका दीक्षा संस्कार जयपुर में तथा पाट महोत्सव बीदासर में हुआ। आप अच्छे विद्वान तथा प्रतिभाशाली आचार्य्य थे। आपने 'शुभ विध्वंसनम्' आदि बहुत से ग्रंथों की रचना की। आपने अपने जीवन में १०५ साधु और २२४ साध्वियाँ बनाईं। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९३८ के भादवा कृष्ण १२ को जयपुर में ७८ वर्ष की आयु में हो गया है।

स्वामी मघराजजी—आप इस संप्रदाय के पाँचवे आचार्य थे। आपका जन्म चैत्र शुक्ला ११ सम्वत् १८९७ में बीदासर (बीकानेर) में हुआ। आपके पिता श्री पूरनमलजी बैंगानी थे। आपकी दीक्षा लाडनू में हुई थी एवम् जयपुर में आप आचार्य्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। आपने अपने समय में ३६ साधु और ८३ साध्वियों को दीक्षित किया। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९४९ की चैत्र कृष्णा ५ को ५३ वर्ष की आयु में सरदारशहर में हुआ।

श्री स्वामी मानिकलालजी—स्वामी मानिकलालजी महाराज का जन्म श्री हुकुमचन्दजी खारड़ (श्रीमाल) के यहाँ जयपुर में सम्वत् १९१२ की भाद्रपद कृष्णा ४ को हुआ। लाडनू में आप दीक्षित हुए, एवम् सरदारशहर में आप आचार्य्य बनाए गये। आपने १६ साधु और २३ साध्वियों को

दीक्षित किया। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९५४ की कार्तिक कृष्णा ३ को सुजानगढ़ में ४३ वर्ष की अवस्था में हो गया है।

श्री स्वामी डालचन्दजी—स्वामी डालचन्दजी महाराज का जन्म उज्जैन में कनीरामजी पिपाड़ा के यहाँ संवत् १९०९ की आषाढ़ शुक्ला ४ को हुआ। इन्दौर में आप दीक्षित हुए, एवम् लाडनूं में आपको आचार्य्य पद प्राप्त हुआ। आपने अपने समय में ३६ साधु और १२९ साध्वियों को दीक्षित किया। ५७ वर्ष की आयु में लाडनूं नामक स्थान में संवत् १९६६ की भाद्रपद शुक्ला १२ को आपका स्वर्गवास हो गया।

वर्तमान आचार्य श्री कालूरामजी—आपका जन्म सम्वत् १९३३ की फाल्गुन शुक्ला २ को छापर में हुआ। सम्वत् १९४४ में आचार्य मघराजजी द्वारा आप बीदासर में दीक्षित किये गये। सम्वत् १९६६ के भाद्रपद में आप आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। आपने अभी तक १२८ साधु और १९९ साध्वियों को अपने धर्म में दीक्षित किये हैं। इस समय सब मिलाकर १३१ साधु और २९४ साध्वियाँ आपके अधिकार में हैं। आप प्रारम्भ से ही बड़े प्रतिभासम्पन्न और उग्र तपस्वी रहे हैं। ब्रह्मचर्य्य का अपूर्व तेज आपके मुँह पर दैदीप्यमान हो रहा है। आपकी प्रकृति बड़ी सौम्य, गम्भीर और शीतल है। आप जैन शास्त्रों, दर्शनों और जैन सूत्रों के अच्छे जानकार हैं। संस्कृत साहित्य के भी आप अच्छे विद्वान हैं। इस सम्प्रदाय के संस्कृत साहित्य में आपने बहुत तरक्की की है। इस समय इस सम्प्रदाय के बहुत से साधु संस्कृत के और जैन सूत्रों के अच्छे विद्वान हैं। आपकी सङ्गठन और व्यवस्थापिका शक्ति बड़ी ही अद्भुत है। आपने अपने सम्प्रदाय का सङ्गठन बहुत ही मजबूत और सुन्दर ढंग से कर रक्खा है। और २ सम्प्रदायों के साधुओं में जो आपसी झगड़े खड़े हो जाते हैं वे इस सम्प्रदाय में क़तई नहीं होते। यह सब श्रेय आपकी संगठन शक्ति को है। सम्प्रदाय के सब साधु और साध्वियाँ एक स्वर से आपकी आज्ञा का पालन करते हैं। कहा जाता है कि इस समय सारे भारतवर्ष में इस सम्प्रदाय के करीब २ लाख अनुयायी हैं। आपने सङ्गठन को सुचारु रूप से चलाने के लिये इस सम्प्रदाय में हर साल माघ शुक्ला ७ को मर्यादा महोत्सव के नाम से एक उत्सव चलाया है, जिसमें प्रायः सभी साधु सम्मिलित होते हैं। साथ ही श्रावक वर्ग भी आप लोगों के दर्शनार्थ उपस्थित होते हैं। इस अवसर पर इस प्रकार एक सम्मेलन सा हो जाता है एवम् आपसे विचार विनिमय का अच्छा मौका मिलता है। इसका श्रेय भी आपकी व्यवस्थापिका शक्ति को है।

इस सम्प्रदाय के साधु और साध्वियों की तपस्या भी बड़ी कठोर होती है। राजलदेसर की महासती श्री मुखाँजी ने २७७ दिन तक केवल आछ के सहारे तपस्या की थी। इसी प्रकार और भी कई साधुओं ने लगातार छः २ सात २ माह तक की उग्र तपस्या की है।

ओसवाल जाति के प्रसिद्ध घराने

Leading Families Of Oswals

गैलड़ा गौत्र
जगत सेठ का इतिहास

अब हम पाठकों के आगे ऐसे खानदान का परिचय उपस्थित करते हैं जो सारी ओसवाल जाति के इतिहास में सितारे की तरह नहीं प्रत्युत सूर्य्य के प्रकाश की तरह जगमगा रहा है। जगत सेठ का खानदान उन खानदानों में सबसे पहला है जिन्होंने अपनी अपूर्व प्रतिभा और साहस के बल पर सारी जाति का मुख उज्ज्वल किया है। राजनैतिक, व्यापारिक और धार्मिक सभी क्षेत्रों में इस खानदान के दिग्गज पुरुषों ने ऐसे विचित्र खेल खेले हैं जो किसी भी जाति के इतिहास को महानता की श्रेणी में लेजा कर रख देने के लिये पर्य्याप्त हैं।

जगत सेठ के पूर्वज ओसवाल जाति के गैलड़ा * गौत्रीय सज्जन थे। इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान नागोर (मारवाड़) का था। पहले इस खानदान की आर्थिक स्थिति बहुत गिरी हुई और अत्यंत शोचनीय थी। यहाँ तक कि इनके पूर्वज सेठ हीरानन्दजी को आर्थिक कठिनाई के मारे देश छोड़ कर बाहर जाने की जरूरत पड़ी। यह किम्वदन्ति मशहूर है कि वे अपने जीवन में हमेशा एक जैन यति की सेवा किया करते थे। इन जैन यति की इन पर बड़ी कृपा थी। जब ये देश छोड़ने के लिये तैयार हुए तब मूहूर्त निकलवाने के लिये उन यतीजी के पास गये और उनसे प्रार्थना की कि महाराज कोई ऐसा मुहूर्त निकालिये जिसमें मेरे सब मनोरथ सिद्ध हो जायँ। तब यती ने देख सुन कर उन्हें योग्य मुहूर्त बतला दिया। उसके अनुसार दूसरे रोज प्रातःकाल वे यात्रा के लिये रवाना हुए मगर थोड़ी ही दूर जाने पर उन्होंने देखा कि एक भयंकर काला नाग उनके सामने से हो कर जा रहा है। इस अपशकुन से डर कर वे वापिस लौट गये और यति के पास आकर सारा समाचार कह सुनाया तब यति ने नाराज होकर कहा कि सेठजी, आपने बड़ी गलती की जो इतने प्रभावशाली शकुन को छोड़ कर वापिस चले आये। अगर उस शकुन से चले जाते तो अवश्य कहीं न कहीं के छत्रपति होते, मगर खैर अब भी तुम इसी वक्त चले जाओ। छत्रपति नहीं तो पत्रपति (अरब पति) तो अवश्य हो जाओगे। कहना न होगा कि सेठ हीरानन्दजी उसी समय अपनी अभीष्ट सिद्धि के लिये विदेश को चल पड़े।

---

* दंत कथाओं से मालूम होता है कि संवत् १५५२ मे गैलड़ा गौत्र की उत्पत्ति खीची गहलोत राजपूत शाखा से हुई। ऐसा कहा जाता है कि इस वंश के गिरधरसिंह नामक व्यक्ति को श्री जिनहंससूरिजी ने जैन धर्म का प्रबोध देकर जैनी बनाया। गिरधरसिंह के पुत्र गेलाजी हुए। इनके ही नामसे आगे की संतान गेलड़ा गौत्र के नाम से मशहूर हुई।

वहाँ से चल कर आप विहार होते हुए बंगाल को आये। आपके छः पुत्र और एक पुत्री हुई। इनमें से आपके चौथे पुत्र सेठ माणिकचन्दजी से हमारे जगत सेठ के खानदान का प्रारम्भ होता है। नागौर से निस्सहाय निकले हुए हीरानन्द का यह पुत्र बंगाल और देहली राजतंत्र में एक तेजस्वी नक्षत्र की भांति प्रकाशमान रहा। वड़े २ नवाब, दीवान, सरदार और अंग्रेज कम्पनी के आगेवान उसकी सलाह और कृपा के लिये हमेशा लालायित रहते थे। ये दो हजार सेना हर समय अपनी रक्षा और सम्मान के लिए निजी खर्च से अपने पास रखते थे। अठारहवीं सदी के बंगाल के इतिहास में जगत सेठ की जोड़ी का कोई भी दूसरा पुरुष दिखलाई नहीं देता। गरीब पिता का यह कुबेर तुल्य पुत्र अप्रत्यक्ष रूप से बङ्गाल, विहार और उड़ीसा का भाग्यविधाता बना हुआ था।

नवाब मुर्शिदकुलीखाँ और सेठ माणिकचन्द

उस समय बङ्गाल की राजधानी ढाका के अन्तर्गत थी। जिस समय सेठ माणिकचन्दजी ने अपनी कोठी को ढाके के अन्तर्गत स्थापित किया उस समय भारत के सारे राजनैतिक जगत में भूकम्प की एक प्रचण्ड लहर पैदा हो रही थी। मुगल साम्राज्य के अन्तिम प्रभावशाली बादशाह औरङ्गजेब का प्रताप धीरे धीरे २ क्षीण होता जा रहा था और स्थान २ के सरदार अपनी २ ताकत के अनुसार विद्रोहाग्नि को प्रज्वलित कर रहे थे। उस समय बङ्गाल का नवाब अजीमुश्शान था जिसकी राजधानी ढाका में थी। उसके दीवान की जगह पर औरंगजेब ने मुर्शिदकुलीखाँ को भेजा था। इस मुर्शिदकुलीखाँ और सेठ माणिकचन्द के बीच में भाइयों से भी अधिक प्रेम था। ये दोनों बड़े कर्मवीर और साहसी थे। सेठ माणिकचन्द का दिमाग और मुर्शिदकुलीखाँ के साहस ने मिलकर एक बड़ी शक्ति प्राप्त करली थी।

मुर्शिदकुलीखाँ की प्रबल इच्छा थी कि वह बङ्गाल की नवाबी को प्राप्त करे। सेठ माणिकचन्दजी ने उसकी इस इच्छा को सफल करने में बहुत सहायता दी। उन्होंने उससे कहा कि यदि तुम अपनी उन्नति चाहते हो तो ढाके की इस पाप भूमि को छोड़ दो और अपने नाम से मुर्शिदाबाद नामक एक नवीन शहर की स्थापना करो। फिर देखो कि माणिकचन्द की शक्ति क्या खेल करके दिखाती है। यह मुर्शिदाबाद एक रोज बंगाल की राजधानी बनेगा; गंगा के तट पर एक टकसाल स्थापित होगी; अंग्रेज, फ्रेञ्च और डच लोग तुम्हारे पैरों के पास खड़े होकर कॉर्निस करेंगे और दिल्ली का बादशाह तो रुपये का भूखा है। जहाँ इस समय महसूल के एक करोड़ तीस लाख रुपया भेजा जा रहा है वहाँ हम लोग उसको दो करोड़ भेजेंगे और बतलायँगे कि मुर्शिदकुलीखाँ के ही प्रताप से बङ्गाल की समृद्धि दिन पर दिन बढ़ती जा रही है।

इस प्रकार माणिकचन्द सेठ ने नवाब मुर्शिदकुलीखाँ को उत्साहित करके अपने अतुल वैभव

और गंगा के समान धन के प्रवाह की ताक़त से देखते ही देखते भागीरथी के किनारे मुर्शिदाबाद नामक विशाल नगर की स्थापना की। कुछ ही समय में उनकी योजना सफल हो गई और बङ्गाल की राजधानी ढाके से उठ कर मुर्शिदाबाद को आगई। अजीमुश्शान केवल नाम मात्र का नबाब रह गया। मुर्शिदकुलीखाँ और माणिकचन्द को बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा की प्रजाने विना अभिषेक के अपने सर्वोपरि सत्ताधिकारी स्वीकृत किये। इनकी सत्ता में किसानों पर होने वाले जागीरदारों के अत्याचार बहुत कम हुए। पैसे की वजह से गरीब प्रजा पर जो अत्याचार होते थे माणिकचन्द सेठ ने स्वयं उनको दूर किये। बङ्गाल की प्रजा में एक बार फिर सुख और शान्ति की लहर दौड़ गई। आगरा और दिल्ली में जिस समय पुर जोश से राज्य क्रान्ति मचरही थी उस समय मुर्शिदकुलीखाँ और जगत सेठ की क्षमता और प्रताप से बङ्गाल उस क्रांति की चिनगारियों से बचा हुआ था। अंग्रेज व्यापारी उस समय अपनी कुटिल-नीति का उपयोग कर कर्नाटक, मद्रास और सूरत में अपनी कोठियाँ स्थापित कर भूमि पर कब्जा कर रहे थे। मगर मुर्शिदकुलीखाँ के तेज और बाहुबल की वजह से वे भी अपने कदम बंगाल में न रोप सके।

मगर यह शान्तिपूर्ण अवस्था अधिक समय तक जीवित न रह सकी। भारतवर्ष के राजनैतिक बातावरण में एक बड़ा प्रबल झोंका आया और दिल्ली का तख्त अकस्मात् फरुर्खसियर के हाथ में चला गया। गद्दी के सच्चे वारिस जहाँदरशाह का खून हो गया। बादशाह फरुर्खसियर का मुगल सल्तनत के इतिहास में क्या स्थान है यह इतिहास के पाठकों से छिपा नहीं है। इस बादशाह ने मुगल साम्राज्य के वैभव की गिरती हुई इमारत को और एक जोर की लात मारी और उसको रसातल की ओर लेजाने में बड़ी मदद दी।

बादशाह फरुर्खसियर एक राजपूत कन्या से विवाह करना चाहता था मगर दैवयोग से उसी समय वह बीमार हो गया। किसी भी वैद्य और हकीम के इलाज ने उसकी इस बीमारी पर कोई असर न किया। इसी समय दैवयोग से अंग्रेज़ कम्पनी का डाक्टर हेमिल्टन बादशाह से मिला और उसने उसको तन्दुरुस्त कर दिया। उसने अपने इस परिश्रम के बदले में बंगाल के अन्तर्गत नदी के किनारे कुछ गाँव इनाम में माँगे। मूर्ख फरुर्खसियर इतना बेभान हो रहा था कि वह कोरे कागज के ऊपर सही करने को तयार हो गया और गंगा किनारे के करीब चालीस परगने अंग्रेजों को सुपुर्द करने का फर्मान नवाब मुर्शिदकुलीखाँ को लिख दिया। जब यह फर्मान मुर्शिदकुलीखां के और जगतसेठ के सन्मुख पहुँचा तो उन्हें अंग्रेज व्यापारियों की चालाकी, बादशाह की मूर्खता और बंगाल के अंधकारमय भविष्य के दर्शन एक साथ होने लगे। उसने बादशाह के उस फर्मान को साहसपूर्वक वापिस कर दिया और बादशाह को

लिख दिया कि बंगाल का दीवान बंगाल की भूमि का एक कण-मात्र भी विदेशी व्यापारियों को सौंपने में असहमत है। उसने बंगाल के जमीदारों को भी सूचना कर दी कि बादशाह का फर्मान आने पर भी अंग्रेज व्यापारियों को कोई जमीन का एक इंच टुकड़ा भी न दे।

यहां यह बात स्मरण रखना चाहिये कि इस फर्मान से यद्यपि जगतसेठ का अन्तःकरण से विरोध था मगर उस क्षण २ में डगमगाती हुई राजनैतिक परिस्थिति में वे अंग्रेजों से खुली शत्रुता मोल लेने के पक्षपाती न थे। इसलिये जब अंग्रेज व्यापारी उनके पास गये और उनसे शाहंशाह के फर्मान को मान्य रखने का आग्रह किया तो उन्होंने मिठास के साथ उनके आँसू पोंछ दिये और इस विषय में बनती कोशिश प्रयत्न करने का आश्वासन दिया।

यह बात जब बादशाह फर्रुखसियर के पास पहुँची तब वह क्रोध से उन्मत्त हो गया और उसने तत्काल दूसरा फर्मान छोड़ा जिसमें मुर्शिदकुलीखां को दीवान पद से अलग करके उसके स्थान पर सेठ माणिकचंदजी को दीवान बनाने की स्पष्ट घोषणा थी और उसके साथ ही सेठ माणिकचंद और उनके वंशजों को जगतसेठ की पदवी से विभूषित करने की इच्छा भी प्रदर्शित की गई थी।

माणिकचंद सेठ को जब यह फर्मान प्राप्त हुआ तो उनके आश्चर्य का पार न रहा। जिस समय में हिन्दुओं के जीवन, धन, माल और इज्जत नष्ट करने में ही मुसलमान अमलदार इसलाम के आदेश का सच्चा पालन समझते थे उस विकट समय में दिल्ली का शाहंशाह एक जैन धर्मावलम्बी को बंगाल का दीवान अथवा सूबा बना रहे थे यह एक अद्भुत घटना थी। जब यह फर्मान मुर्शिदकुलीखां के पास पहुँचा तो उसे इस सारे षड्यन्त्र में माणिकचंद सेठ का हाथ कार्य्य करता हुआ दिखाई दिया। वह सोचने लगा कि जो माणिकचंद मुर्शिदाबाद को बसाने में उसका सबसे मुख्य प्रेरक था, बंगाल की जमाबंदी को व्यवस्थित करने में तथा प्रजा की शांति के लिये मुर्शिदकुलीखां के साथ बैठकर सब व्यवस्था में अग्रगण्य रहता था वही माणिकचंद आज पाप के प्रलोभन में पड़ गया। मगर जब सेठ माणिकचंद मुर्शिदकुलीखां से मिले और उन्होंने उनको सलाम किया तब मुर्शिदकुलीखां ने ताना मारते हुए कहा कि आज तो आप मुझे सलाम कर रहे हो पर कल ही मेरे जैसे सैकड़ों अधिकारी आपके चरणों में सिर नवायँगे। कल ही आप बंगाल के शासक बनोगे ऐसा बादशाह फर्रुखसियर का फर्मान है। माणकचंद ने अत्यन्त शांति के साथ कहा, "कल न था, आज नहीं हूँ और आने वाले कल में मैं फर्रुखसियर के फर्मान से बंगाल का शासक बनूँगा ऐसा कौन कहता है। मुर्शिदकुलीखां और माणकचंद के बीच में भेद कहाँ है। जब-जब मैंने मुर्शिदकुलीखां को सलाम किया है तब-तब मुझे यही मालूम हुआ है कि मैं अपने आप को सलाम कर रहा हूँ फिर मेरे लिए बंगाल की सूबेगिरी में आकर्षण ही क्या है। इस सारी मुगल सल्तनत में ऐसी चीज ही क्या है जो

सोना, मोहर और रुपये से न खरीदी जा सके। गंगा के किनारे पर जहां तक मेरा महिमापुर बसा हुआ है और महिमापुर के अन्दर मेरी टकसाल चालू है वहां तक मेरे वैभव, मेरी सत्ता और व्यापार के सन्मुख कौन उँगली ऊँची उठा सकता है। फरुखसियर स्वयं एक दिन याचक की तरह रुपये की भीख मांगता हुआ इसी सेठ के आँगन में उपस्थित हुआ था। आज वह बादशाह बना हुआ है पर मेरा विश्वास है कि हमारे धन से ही यह राजमुकुट खरीदा गया है तथा जिस दिन हम लोग रुपया देना बन्द कर देंगे उसी दिन वह मुकुट उनके सिर से गिर पड़ेगा। राजकाज में नीति और अनीति के विचार भले ही न हों पर हमारा व्यापार और व्यवहार तो इसी पर अवलम्बित है।" सेठ माणिकचंद ने फिर कहा "सारे काण्ड का मुख्य उद्देश्य यही है कि अंग्रेजों की लड़ाकू कौम से जहाँ तक बने वहां तक दुश्मनी बाँधना ठीक नहीं और इसीलिये मैंने इन सब बातों का खुल्लमखुल्ला विरोध नहीं किया। मैं बादशाह को लिख देता हूँ कि मैं आपके हुक्म को सिर चढ़ाता हूँ और मुझे मिली हुई बंगाल की सूबेगिरी को पुनः मुर्शिदकुलीखां के सिपुर्द करता हूँ। क्योंकि मैं उनको अपने से अधिक योग्य मानता हूँ। मुझे विश्वास है कि बादशाह मेरे इस कथन को सहर्ष स्वीकार करेंगे।"

मुर्शिदकुलीखां ने पूछा कि अंग्रेज व्यापारियों को जो परगने सौंपने का फरमान बादशाह की ओर से भेजा गया है उसका क्या होगा? जगतसेठ ने कहा कि इस विषय में जरा बुद्धिमानी से काम लेना होगा। अंग्रेज लोग व्यापारी हैं; कूटनीतिज्ञ हैं; लड़ाकू हैं वे जब चाहें तब बादशाह की आँखों पर पट्टी बांध सकते हैं। साथ ही समय पड़ने पर अपने मित्रों को सहायता भी कर सकते हैं। इसलिए उनके साथ किसी भी प्रकार का उच्छृङ्खल व्यवहार करने का परिणाम अच्छा न होगा। इन परगनों की मालिकी तो नहीं दी जा सकती मगर यह व्यवस्था करना होगी कि इस भाग में अंग्रेज व्यापारी बिना कस्टम टैक्स के व्यापार कर सकें।

ऊपर के सारे अवतरण से इस बात का पता चल जाता है कि बंगाल के तत्कालीन राजनैतिक वातावरण में जगतसेठ का कितना जबरदस्त प्रभाव था। समस्त बंगाल, बिहार और उड़ीसे का महसूल सेठ माणिकचंद के यहां इकट्ठा होता था और इन तीनों प्रदेशों में जगतसेठ की टकसाल के बने हुए रुपये ही उपयोग में आते थे। तत्कालीन मुसलमान लेखकों ने लिखा है कि जगतसेठ के यहां इतना सोना-चांदी था कि अगर वह चाहता तो गंगाजी का प्रवाह रोकने के लिये सोने और चांदी का पुल बना सकता था। बंगाल के अन्दर जमा हुई महसूल की रकम दिल्ली के खजाने में भरने के लिये जगतसेठ के हाथ की एक हुण्डी पर्याप्त थी। "मुतखरीन" नामक ग्रन्थ का लेखक लिखता है कि उस जमाने में सारे हिन्दुस्थान में जगत सेठ की बराबरी का कोई दूसरा व्यापारी या सेठ न था। कितनी ही दफे जगतसेठ के भण्डार लूटे

गये, एक बार तो मरहठों ने उसकी कोठी को निर्दयतापूर्वक लूट ली फिर भी उसकी समृद्धि अचल और अखण्ड बनी रही।

सेठ माणकचंद के दो स्त्रियाँ थीं। पहली माणिकदेवी और दूसरी सोहागदेवी। मगर दोनों से ही उनको कोई सन्तान न हुई। माणिकदेवी उम्र में बड़ी थी। वह परमभद्र, धार्मिक और श्रद्धा-सम्पन्न महिला थी। इन्होंने सेठ माणकचंद के सन्मुख एक भव्य और अत्यन्त सुन्दर जैन-मंदिर बनवाने की इच्छा प्रगट की। सेठ माणकचंद को पैसे की कमी तो थी ही नहीं, उसी समय बंगाल के कुशल से कुशल शिल्पियों को निमन्त्रित करके मंदिर की योजना तैयार की गई। भागीरथी के तीर पर बहुमूल्य कसौटी पत्थर का सारा मंदिर बनवाया गया। ऐसा कहा जाता है कि इस कसौटी पत्थर के संग्रह करने में उनको इतना मूल्य खर्च करना पड़ा कि जितने में शायद सोने और चांदी का मन्दिर तयार हो सकता था।

गंगा के विशाल प्रवाह में वह मन्दिर यद्यपि बहगया है फिर भी उसका भग्नावशेष जो फिर से जोड़ जाड़ कर ठीक कर लिया गया है आज भी जगत सेठ की अमर कीर्त्ति को घोषित कर रहा है।

बादशाह फर्रुखसियर के पश्चात दिल्ली के रङ्ग मंच पर बादशाह महम्मदशाह अवतीर्ण हुआ। उसने माणिकचन्द सेठ को जगत सेठ के नाम से दूसरी बार सम्बोधित कर सम्मानित किया। इतिहास लेखक इस बात को मानते हैं कि मुगल दरबार ने सबसे पहले जगत सेठ को ही इस तरह की बादशाही पदवी से सम्मानित किया। इसके अतिरिक्त उनको नवाब की गादी पर बाईं ओर बैठने का हक भी मिला। उस जमाने के रिवाज के अनुसार मोती के कुण्डल, हाथी, और पालकी भी सल्तनत की ओर से उन्हें बक्षी गई। बङ्गाल के नवाबों को सम्राट की ओर से इस बात की खास सूचना रहती थी कि जगतसेठ की अनुमति के बिना राज्यशासन का कोई भी महत्वपूर्ण काम न होना चाहिए। इस प्रकार गौरव मय जीवन बिताते हुऐ सेठ माणिकचन्द का स्वर्गवास हुआ और उनके स्थान पर उनके भाणेज सेठ फतेचन्द उनकी गादी पर आये।

इधर बंगाल की नवाबी के अधिकार पर मुर्शिदकुलीखाँ के पश्चात् उनके जमाई शुजाउद्दीन और शुजाउद्दीन के पश्चात् उनका पुत्र सरफखाँ बैठे।

सरफखां और जगतसेठ फतेचन्द

मुर्शिदकुलीखाँ ने जिस शान्ति और सुव्यवस्था की जड़ बङ्गाल में जमाई तथा उसके दामाद शुजाउद्दीन ने अपनी योग्यता और साहस के बल पर जिसे नष्ट होने से बचा लिया। सरफखाँ ने बङ्गाल के रङ्ग मंच पर आते ही अपनी बेवकूफी, उतावलेपन और विषयान्धता की प्रवृत्तियों से उस सुव्यवस्था की जड़ पर कुल्हाड़ा चलाना प्रारम्भ किया। दिल्ली की डूबती हुई बादशाहत ने भी बंगाल की शांति और सुव्यवस्था

को नष्ट करने में बहुत बड़ी सहायता दी। इतिहास लेखक सरफखां की उच्छृंखल प्रवृत्तियों का वर्णन करते हुए बतलाते हैं कि जगत सेठ के साथ वैर बांधकर सरफ़खां ने बंगाल के सुख और शांति को नष्ट करने में कितनी मदद की। यही वह समय था जब सुप्रसिद्ध कातिल नादिरशाह की लूटमार से भारतवर्ष के अन्दर त्राहि २ मची हुई थी। इस बात की बड़ी जबरदस्त सम्भावना की जाती थी कि बंगाल का सरसब्ज मुल्क उसके कातिल हाथों से नहीं बचाया जा सकता। नवाब सरफखां उसका मुकाबिला करने में असमर्थ था। बंगाल के दूसरे ज़मीदार और शासक छोटे २ अनेक टुकड़ों में विभक्त हो रहे थे और उनकी शक्तियां इतनी तहस नहस हो रही थीं कि वे किसी भी प्रकार उस काली घड़ी से देश को बचाने में असमर्थ थे। सारे प्रान्त में आतँक छाया हुआ था और शाम को आनंदपूर्वक सोने वाले लोग सोते समय ईश्वर से इस बात की प्रार्थना करते थे कि किसी तरह उनका सवेरा सुखपूर्वक उदय हो। ऐसे आतंक के समय में सारे प्रान्त की निगाह जगत सेठ की ओर लगी हुई थी। जगत सेठ का सुप्रसिद्ध मकान, जो आज गंगा के गर्भ में विलीन होगया है, उस समय प्रांत के तमाम जमीदारों और जिम्मेदार आदमियों का मंत्रणागृह बना हुआ था। वर्द्धमान के महाराज तिलोकचन्द, ढाका के नबाब राजवल्लभ, राय आलमचन्द तथा हाजी अहमद भी इस मंत्रणा में शामिल रहते थे। ऐसा कहा जाता है कि इस भयंकर समस्या का निपटारा भी जगतसेठ के कुशल मस्तिष्क ने आसानी के साथ कर दिया। कहा जाता है कि जगतसेठ की टकसाल में एक लाख सोने के सिक्के नादिरशाह के नाम के ढलवा कर उसको भेंट में भेजे गये जिससे वह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने बंगाल लूटने का विचार बन्द कर दिया। इस प्रकार जगत सेठ की राजनीति कुशलता से इस महान् विपत्ति का अंत हुआ।

हम ऊपर कह आये हैं कि सरफराज की विषयांधता ने उस प्रांत में एक बड़ा असंतोष मचा रक्खा था। दैवयोग से उसकी इस प्रवृत्ति के कारण एक ऐसी घटना घटी कि जिसने जगत सेठ की दृष्टि में उसको बुरी तरह से गिरा दिया और संभवतः इसी कारण उसे नबाबी से भी हाथ धोना पड़ा। बात यह हुई कि जगतसेठ के महिमापुर के एक मुहल्ले में एक बड़ी सुन्दर कन्या रहती थी जिसका सम्बन्ध शायद जगतसेठ के पुत्र से होने वाला था। सरफखां की विषय लोलुप दृष्टि उस पर पड़ी और विषयोन्मत्त होकर उसने उसके सतीत्व को नष्ट करना चाहा। जगतसेठ को यह बात मालूम पड़ी और उन्होंने ठीक मौके पर पहुँच कर उस दुष्ट से उस निर्बोध बालिका की रक्षा की और उसी समय उन्होंने उसको पद भ्रष्ट करने का निश्चय कर लिया। उन्होंने बंगाल के लोकमत को जो कि सरफखां के प्रति पहले ही विद्रोही हो रहा था प्रज्ज्वलित कर दिया जिसके परिणाम स्वरूप बहुत ही शीघ्र सरफखां का पतन हुआ और उसके स्थान पर नवाब अलीवर्दीखां नवाब की पदवी पर अधिष्ठित हुआ।

नवाब अलीवर्दीखां और जगतसेठ

जगतसेठ का हाथ पकड़ कर अलीवर्दीखां बंगाल की मसनद पर आया। इतिहास बतलाता है कि उसके (अलीवर्दीखां) धार्मिक जीवन के प्रभाव से मुर्शिदाबाद का राजमहल पवित्र तपोवन के सदृश्य हो गया था और बंगाल के वातावरण में शांति और पवित्रता की एक हलकीसी लहर फिर से दौड़ गई थी। मगर बंगाल का प्रचण्ड दुर्भाग्य, जो कि सर्वनाश का विकट अट्टहास कर रहा था, अलीवर्दीखां के रोके न रुका। अलीवर्दीखां को अपने शासनकाल में राज्य व्यवस्था पर शांतिपूर्वक विचार करने के लिये एक क्षण का समय भी न मिला। उसके राज्यकाल का एक २ क्षण बाहरी आततायियों से बंगाल की रक्षा करने में ही खर्च हुआ। बंगाल की गद्दी पर उसके पैर रखते ही मरहठों की फौज ने बंगाल को लूटने के इरादे से आक्रमण करना शुरू किये। एक तरफ से बालाजी और दूसरी तरफ से राघोजी बंगाल को तबाह करने के इरादे से आकर उपस्थित हो गये। बंगाल के इतिहास में "बरगी का तूफान" एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटना समझी जाती है। बादशाह औरंगजेब पहाड़ी चूहा कह कर जिन मरहठों का अपमान करता था समय पाकर उन्हीं मरहठों ने दिल्ली की बादशाहत को जड़ से हिला दिया। इन्हीं मरहठों ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा को भी अपना शिकार बना लिया।

जब नवाब अलीवर्दीखां को इस आक्रमण की बात मालूम हुई तो उसने जगत्‌सेठ को गोदा गाड़ी नामक सुरक्षित स्थान पर चले जाने की सलाह दी और मुर्शिदाबाद की रक्षा का भार अपने पर लिया। उसने मीर हवीब नामक एक विश्वसनीय सेनाध्यक्ष को जगतसेठ की कोठी और मुर्शिदाबाद की रक्षा का भार सौंप कर स्वयं मराठों की फौज पर आक्रमण कर दिया। मगर ठीक अवसर आने पर मीरहवीब बदल गया और उसने मरहठों को जगत् सेठ की कोठी लूटने का अवसर दे दिया। इसी समय जगत् सेठ की कोठी की इतिहास-प्रसिद्ध लूट हुई, जिसमें मरहठों ने सारी कोठी को तहस नहस कर दिया और करीब दो करोड़ की सामग्री को लूट लेगये। अलीवर्दीखां के हृदय पर इस घटना का बहुत ही बुरा असर पड़ा और उसने मन ही मन मराठों से इस घटना का बदला लेने का संकल्प किया।

इस घटना को एक वर्ष भी न बीता होगा कि इतने ही में बालाजी और भास्कर पंडित इन दो मरहठे सरदारों ने फिर से बंगाल पर चढ़ाई करदी। इनमें से बालाजी को तो दस लाख रुपया देकर किसी प्रकार वहाँ से विदा किया गया और भास्कर पण्डित को समझाने का भार जगतसेठ पर आ पड़ा। मानकरा के मैदान में जहाँ भास्कर पण्डित की सेना पड़ी हुई थी, जगत् सेठ उससे समझौता करने को, गये। वहाँ उन्होंने समझौते की बात चीत की। इस बात चीत का निर्णय दूसरे दिन नवाब अली-

वर्दीखां के सम्मुख होना निश्चित हुआ। दूसरे दिन जगत्सेठ नवाब अलीवर्दीखां को लेकर भास्कर पण्डित के पास गये, बात चीत का सिलसिला आरम्भ हुआ, ऐसा कहा जाता है कि उसी समय अवसर पाकर नवाब अलीवर्दी ने अचानक मियान में से तलवार निकाल कर बिजली-वेग से भास्कर पण्डित का सिर उतार लिया। यह कार्य्य इतनी शीघ्रता से हुआ कि बाहर के लोगों की कौन कहे, मगर पास बैठे हुए जगत् सेठ तक को एक क्षण पश्चात् सब घटना समझ में आई, वे किंकर्त्तव्यमूढ़ हो गये, वे अकस्मात् बोले "अलीवर्दीखां यह भयङ्कर विश्वासघात" ? अलीवर्दीखां ने नीची गर्दन करके उत्तर दिया "मुर्शिदाबाद की लूट का बदला"। जगत् सेठ ने अत्यन्त दुःखित होकर कहा "बंगाल के सर्वनाश का प्रारम्भ !" दोनों व्यक्ति अत्यन्त दुःखी होकर चुपचाप घर चले आये।

इस घटना के पश्चात् जगतसेठ का दिल राजनैतिक चालों और दाव पेंचों से बहुत अधिक फट गया। उन्होंने इस सम्बन्ध में मौन रहना ही उचित समझा। कुछ ही समय पश्चात् उनका और नवाब अलीवर्दीखां का स्वर्गवास हो गया और इनके पश्चात् ही बङ्गाल की पतन लीला जोर शोर से प्रारम्भ हो गई।

नवाब सिराजुद्दौला और जगत् सेठ महताबचन्द

अलीवर्दीखां के पश्चात् उसका दौहित्र सिराजुद्दौला बङ्गाल की नवाबी मसनद पर आया और इधर जगत् सेठ फ़तेहचन्द के पश्चात् उनके पौत्र महताबचन्द जगत् सेठ की गद्दी पर आये। उस समय दिल्ली की डूबती हुई शाहनशाहत की कब्र पर अहमदशाह और आदिलशाह जुगनूं की तरह चमक रहे थे। इस अहमदशाह ने भी महताबचन्द को जगत् सेठ की पदवी से और उनके भाई सरूपचन्द को "महाराजा" की पदवी से सम्मानित किया। इसके अतिरिक्त बङ्गाल के सुप्रसिद्ध जैनतीर्थ "पारसनाथ टेकरी" का सम्पूर्ण स्वामित्व भी शाही फ़रमान के द्वारा इन दोनों भाइयों को दिया। जगत् सेठ महताबचन्द ने उत्तरी भारत ही की तरह दक्षिणी भारत में भी बहुत बड़ी व्यापारिक प्रतिष्ठा प्राप्त की।

नवाब सिराजुद्दौला के सम्बन्ध में इतिहासकारों के अन्तर्गत बहुत गहरा मतभेद पाया जाता है। कुछ इतिहासकार उसे अत्यन्त कुशल और राजनीतिज्ञ व्यक्ति होने का सम्मान प्रदान करते हैं। कोई कहते हैं कि सिराजुद्दौला अंग्रेज़ों का विरोधी था इससे अङ्गरेजों ने उसे एक भयङ्कर मनुष्य की तरह चित्रित किया है। कुछ लोगों का यह विश्वास है कि जगत सेठ और इसके जमींदारों के स्वार्थ सिराजुद्दौला के द्वारा सिद्ध न होने से इन लोगों ने उसे बदनाम करने की कोशिश की। इसके विपरीत कई इतिहासकारों ने उसे अत्यन्त क्रूर, नराधम, विषयान्ध और पाशविकवृत्ति वाला भी चित्रित किया है।

कुछ भी हो, मगर इस बात के लिए बहुत से इतिहासकार प्रायः एकमत हैं कि वह

उतावले स्वभाव का, स्वच्छन्दी और विलास प्रिय पुरुष था। एक ओर उसकी मौसियों के पुत्र, उसके अधिकारी और अलीवर्दीखां के दूसरे रिश्तेदार उसे हटाकर किसी दूसरे को नवाब बनाने की चिन्ता में थे दूसरी ओर जगत् सेठ, जमीदार और व्यापारियों के दिल भिन्न-भिन्न कारणों की वजह से बेचैन हो रहे थे। इसी बीच में सिराजुद्दौला ने एक दिन, दिनदहाड़े मुर्शिदाबाद के बाजार में हुसैनकुलीखां नामक एक सरदार का खून करवा डाला। जानकीराम नामक अपने एक प्रतिनिधि का खुले आम अपमान किया, मोहनलाल नामक एक गृहस्थ की बहन को—जो कि उस समय सारे बंगाल में सबसे अधिक सुन्दरी मानी जाती थी—अपने अन्तःपुर में दाखिल कर लिया और मोहनलाल को रुपयों के जोर से ठण्डा कर दिया। इतिहास प्रसिद्ध रानी भवानी की विधवा पुत्री तारा को शय्यासहचरी बनाने के लिए भयङ्कर जाल रचा, जिसके परिणाम-स्वरूप उस निर्दोष बालिका को जीते जी चिता में भस्म होजाना पड़ा। इन सब घटनाओं से सारे बंगाल की प्रजा में वह बहुत अप्रिय हो गया था, और इधर अंग्रेज—कम्पनी के साथ भी उसकी शत्रुता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जारही थी।

इसी समय में बंगाल के राजनैतिक वातावरण में दो प्रभावशाली पुरुष और दृष्टिगोचर होते हैं। एक उमाचरण जो इतिहास के पृष्ठों पर अमीचन्द के नाम से प्रसिद्ध है। जो वास्तव में पंजाब का रहने वाला था और व्यापार के लिए कलकत्ते में आकर बस गया था। कितने ही व्यक्ति इसी अमीचन्द को जगत् सेठ मानकर, जगत सेठ फतेचन्द और महतावचन्द के निर्मल जीवन पर देश के प्रति विश्वासघात करने की कलङ्क कालिमा लगाने का प्रयत्न करते हैं, और कितने ही अमीचन्द के मित्र "माणिकचन्द" को जगत् सेठ मानकर जैन जाति के सेठ माणिकचन्द के सम्बन्ध में निराधार अपवाद फैलाते हैं। यह माणिकचन्द जगत् सेठ माणिकचन्द नहीं प्रत्युत अलीनगर का एक फौजदार था जो पीछे से अंग्रेजों के पक्ष में जा मिला था। यह माणिकचन्द प्राचीन ग्रन्थों में "महाराज" माणिकचन्द के नाम से प्रसिद्ध था।

उमाचरण अथवा अमीचन्द के सम्बन्ध में जो प्रमाणभूत बातें मिलती हैं उनसे पता चलता है कि यह कोई मामूली या राह चलता व्यापारी न था। फ्रेंच मुसाफिर ओर्म लिखता है कि "उसका विशाल मकान एक राजमहल की तरह था जिसमें सैंकड़ों कमरे थे, उसके पुष्पोद्यान में कई प्रकार के फूलों के वृक्ष खिले हुए थे, उसके मकान के आस-पास दिन-रात हथियारबन्द प्रहरी पहरा देते रहते थे, प्रारम्भ में अंग्रेजों ने भी उसे एक महाराज की ही तरह माना था, मगर बाद में यह अंग्रेजों के आश्रित हो गया।"

यह अमीचन्द जगत् सेठ महतावचन्द से भी इस उद्देश्य से मिला था कि वह सिराजुद्दौला को अंग्रेजों के पक्ष में करदे। कहा जाता है इसी बात की खबर सिराजुद्दौला को मिल जाने से, उसने जगत् सेठ को अंग्रेजों का पक्षपाती समझ एक बार कैद कर दिया। मगर मीरजाफ़र के ज़बर्दस्त विरोध करने

पर उसने उनको फिर छोड़ दिया। इन सब घटनाओं का परिणाम धीरे-धीरे बढ़ते-बढ़ते पलासी के युद्ध में परिणित हुआ, जिसमें मीरजाफ़र के घोर विश्वासघात से सिराजुद्दौला की भयङ्कर पराजय हुई और उसके जीवन का नाटक अत्यन्त दुःखान्त रूप से समाप्त हुआ।

मीरजाफ़र और जगत् सेठ

पलासी के इतिहास प्रसिद्ध युद्ध के पश्चात् नये नवाब का चुनाव करने के निमित्त जगत् सेठ के मकान पर लगातार तीन दिन तक मंत्रणा चलती रही। लोगों का खयाल था कि जगत् सेठ अवश्य मीरजाफ़र को नबाब चुनने के लिए अपना मत देंगे क्योंकि उसने उन्हें सिराजुद्दौला की क़ैद से छुड़ाया था। मगर लोगों का खयाल ग़लत निकला। जगत् सेठ ने स्पष्ट कह दिया कि जिस राजनीति के साथ असंख्य लोगों के हिताहित का सम्बन्ध है उसमें व्यक्तिगत सम्बन्ध को महत्व नहीं दिया जा सकता। वे अपनी तटस्थवृत्ति से रत्ती भर भी टस से मस न हुए। इस अवसर पर राजशाही की महारानी भवानी की तरफ़ से—जोकि सारे प्रान्त में अर्द्ध बङ्गेश्वरी की तरह पूजनीय मानी जाती थी—जो सन्देश आया था वह आज भी इतिहास के पृष्ठों पर कुन्दन की तरह चमक रहा है—

"बङ्गाल का भाग्य विदेशी व्यापारियों के हाथ में देने की जो सलाह दे, उसे इस पत्र के साथ भेजी हुई सिन्दूर, चुंदड़ी और बंगड़ी (चूड़ी) मेरी तरफ से भेंट में देना।"

अस्तु, मंत्रणा के ये तीन दिन तीन वर्षों के समान बीते और अन्त में कई अन्तरङ्ग प्रभावों के कारण मीरजाफ़र ही बङ्गाल का नवाब चुना गया।

मीरजाफर के बङ्गाल की मसनदपर आते ही बङ्गाल का भरा पूरा खजाना खाली होना प्रारम्भ हुआ। ऐसा कहा जाता है करीब छः करोड़ रुपये का चूरा हो गया। जिसमें से अधिकांश विदेशी व्यापारियों की जेब में चला गया। अभागे अमीचन्द को सम्भवतः कुछ भी न मिला और वह अन्त समय में पागल होकर मरा।

इसके कुछ समय पश्चात् ही मीरजाफर ने अंग्रेज व्यापारियों को टकसाल खोलने का भी हुक्म देदिया जिसका भाव इस प्रकार था।

"कलकत्ते में एक टकसाल खोलने की और उसमें सोने चांदी के सिक्के ढालने की परवानगी आज से अंग्रेज कम्पनी को दी जाती है। अंग्रेज कम्पनी मुर्शिदाबाद की टकसाल के बराबर वजन के सिक्के कलकत्ते की छाप से ढाल सकेगी। बंगाल, बिहार और उड़ीसे में उनका चलन होगा, खजाने में भी उनका भरना हो सकेगा। इन सिक्कों के लिए जो कोई बट्टा व कसर लेगा वह सजा का पात्र होगा"।

कहना न होगा कि इस आर्डर का सारा भीषण असर जगत सेठ की कोठी पर पड़ा। उसी दिन

से जगत सेठ का वैभव सूर्य्य अस्ताचल-गामी होने लग गया। इन्हीं दिनों एक बार हालवेल नामक एक मुख्य अंग्रेज कर्मचारी ने जगतसेठ से कुछ रकम मांगी। जिसको देने से जगतसेठ ने इन्कार कर दिया, इस पर भयंकर रूप से क्रुद्ध होकर उसने जगतसेठ के सर्वनाश की प्रतिज्ञा की। उसने तारीख ८ मई सन् १७६० को वारन हेस्टिंग्ज को एक पत्र लिखा जिसमें जगतसेठ के लिये निम्नाङ्कित शब्द थेः—

A time may come when they stand in need of the company's protection, in which case they may be assured, they shall be left to satan to be buffeted.

अर्थात्—ऐसा भी समय आवेगा जब जगतसेठ को कम्पनी का आश्रय लेना पड़ेगा। उस समय उसे शैतान के हाथ में पड़कर भारी पीड़ा भोगना पड़ेगी।

चारों ओर ऐसी भयंकर परिस्थितियों को देखकर जगतसेठ का मन बहुत उचट गया और चित्त को शान्त करने के लिए अपनी दो हजार सेना सहित, वे सम्मेदशिखर की यात्रा को निकल गये।

मीरकासिम और जगतसेठ

मीरजाफ़र का प्रताप भी बहुत कम समय तक टिका, उसकी बेवकूफी ने उसे बहुत ही शीघ्र शासन के अयोग्य सिद्ध कर दिया और शीघ्र ही उसके स्थान पर उसका दामाद मीरकासिम बङ्गाल की मसनद पर आया। मीरकासिम बड़ा साहसी, बुद्धिमान और राजनीतिज्ञ व्यक्ति था। मगर उसकी किस्मत और उसकी परिस्थिति उसके बिलकुल खिलाफ थी। उसकी प्रकृति इतनी शङ्कालु थी कि अपने अत्यन्त विश्वासपात्र व्यक्ति को भी वह हमेशा सन्देह की दृष्टि से देखता था। उसने जगत्सेठ महतावचंद और महाराजा सरूपचंद को भी इसी शङ्कालु प्रकृति की वजह से मुंगेर में बुलाकर नजरबन्द कर दिया, और जब वह "उधूयानाला" के इतिहास प्रसिद्ध युद्ध में बुरी तरह से हार गया तब केवल इसी प्रतिहिंसा के मारे कि कहीं जगत्सेठ अंग्रेजों से मिलकर अपना काम न जमा लें उसने जगतसेठ और महाराजा सरूपचंद को गंगा के गर्भ में डूब जाने का आदेश किया। उसी दिन ये दोनों प्रतापी पुरुष राजकारणों की बलिवेदी पर गंगा के गर्भ में समा गये और इस प्रकार इस खानदान के एक अत्यंत प्रतापी पुरुष का ऐसा दुःखान्त हुआ।

जगतसेठ खुशालचंद

जिस दुःखान्त नाटक का प्रारम्भ जगतसेठ महतावचंद के समय में हुआ और जिसकी करुणापूर्ण मृत्यु के साथ इसका अन्त हुआ उसका उपसंहार जगतसेठ खुशालचंद के समय में पूरी तौर से हुआ। महतावचंद के साथ ही जगतसेठ के खानदान की आत्मा प्रयाण कर गई। केवल उसका तेजोहीन अस्थि-



स्व० जगत-सेठ गुलाबचंदजी गेलड़ा, महिमागंज (मुर्शिदाबाद)



जगत-सेठ फतेचंदजी गेलड़ा, महिमागंज (मुर्शिदाबाद)

पंजर शेष बचा रहा। उनके पुत्र जगतसेठ खुशालचंद को भी बादशाह शाहआलम ने जगतसेठ की पदवी प्रदान की थी तथा लार्ड क्लाइव ने भी उनको कम्पनी का बैंकर बनाया था। मगर एक तो खुशालचंद की उम्र कम होने से और दूसरे द्रव्य की कमी आजाने से वे जैसी चाहिये वैसी व्यवस्था नहीं कर सकते थे। इन सब कठिनाइयों को दूर करने के लिये उन्होंने लार्डक्लाइव को एक निवेदन पत्र लिखा था जिसका उत्तर क्लाइव ने जिस कठोरता के साथ दिया उसका भाव नीचे दिया जाता है।

"तुम्हारे पिता के साथ मैं कितनी मेहरबानी रखता था और उनको कितनी सहायता पहुँचाता था यह तुम भली प्रकार जानते हो। तुम्हारे और तुम्हारे परिवार के साथ मैं वैसा ही आंतरिक सम्बन्ध रखता हूँ, पर खेद की बात है कि तुम अपनी प्रतिष्ठा और जबाबदारी का कुछ भी खयाल नहीं रखते। हमारे बीच में यह समझौता हो चुका है कि तिजोरी की तीन चाबिएँ भिन्न २ स्थानों पर रहेंगी। पर उसके बदले तुम सब पैसे अपने पास ही रख लेते हो। इजारे भी तुम बहुत कम दरों में दे देते हो; राज्य का कर्जा पहले वसूल करने के बदले तुम अपने व्यक्तिगत कर्जे को जमींदारों से पहले वसूल करते हो। तुम्हारे इस व्यवहार का किसी भी रीति से समर्थन नहीं हो सकता। आज भी तुम पहले ही के समान पैसे वाले हो, अधिक लोभ की वजह से तुम्हें असंतोष रहता होगा पर तुम अपनी जबाबदारियों से नीचे पड़ते जा रहे हो और तुम्हारे पर से हमारा विश्वास दिन २ उठता जा रहा है।"*

इसके कुछ समय पश्चात् क्लाइव ने जगतसेठ से कहलाया कि यदि प्रतिवर्ष तीन लाख रुपये लेकर के तुम स्वतंत्र होना चाहते हो तो हम प्रतिवर्ष इतना रुपया देने के लिये तैयार हैं। मगर खुशालचन्द ने उत्तर दिया कि यदि मैं अपने खरच को अधिक से अधिक घटाऊँ तो भी तीन लाख रुपये में मेरा पूरा नहीं पड़ सकता।

इसके पश्चात् वारेन हैस्टिंग्ज के जमाने में जगतसेठ की स्थिति और भी बिगड़ी और उन्होंने हेस्टिंग्ज को भी एक पत्र लिखा। उस समय हेस्टिंग्ज राजधानी से बहुत दूर था। उसने कलकत्ता वापिस लौटकर इस विषय का संतोषजनक जबाब देने का आश्वासन दिया मगर दुर्भाग्य से उसके कलकत्ता वापिस लौटने के पहिले ही खुशालचन्दजी का स्वर्गवास हो गया।

जगतसेठ खुशालचन्द बड़े धार्मिक पुरुष थे। तीर्थराज सम्मेदशिखर पर इन्होंने कितने ही जैनमन्दिर भी बनवाये। वहाँ के शिला लेखों में कई स्थानों पर खुशालचन्द का नामोल्लेख मिलता है। ऐसा कहा जाता है कि जिस जगतसेठ ने लगभग १०८ तालाब बनवाये थे वे ये खुशालचन्द ही थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने मकान के पास खुशाल बाग नाम का एक बगीचा निर्म्माण किया था। खुशालचन्दजी के कोई संतान न होने से उनके भतीजे हरकचंदजी उनके यहाँ पर दत्तक आये। इनके समय में इस खानदान की दशा और भी अधिक बिगड़ गई। इन्हीं के समय में इस खानदान का धर्म भी जैन से बदल कर वैष्णव हो गया। ऐसा कहा जाता है कि हरकचंदजी के कोई संतान न होने से एक वैष्णव सन्यासी ने इन्हें संतान का लालच देकर वैष्णव धर्म में दीक्षित किया। इन्होंने अपने मकान के पास एक वैष्णव मंदिर का निर्माण भी करवाया।

* Hunter's statistical account of Murshidabad page 263.

हरकचंदजी के पश्चात उनके पुत्र इन्द्रचन्द्रजी हुए और उनके पश्चात् उनके पुत्र गोविन्दचन्द्र जी जगतसेठ की गादी पर आये। ये इतने उड़ाऊ थे कि इन्होंने अपने घर के गहने और कपड़ों तक को वेच डाला। अंत में जब आजीविका का सवाल उपस्थित हुआ तब उन्होंने अंग्रेज सरकार की शरण ली। बहुत मिहनत के पश्चात् सरकार ने इनको १२००) मासिक जीवन भर देने का निश्चय किया। इनके यहाँ सेठ गुलाबचन्दजी दत्तक आये जिनके पुत्र फतेचन्दजी इस समय विद्यमान हैं।

इस प्रकार जिस स्थान पर एक दिन वैभव और अधिकार का प्रखर सूर्य्य अपनी हजारों गौरवमय किरणों से देदीप्यमान हो रहा था, परिवर्तन के प्रबलचक्र में पड़ कर वहाँ साधारण दीपक का प्रकाश भी कठिनता से दृष्टिगोचर होता है। इतना होने पर भी जगतसेठ के नाम के साथ जिस अतीत गौरव और भव्यता की कड़ियें बँधी हुई है, करालकाल उनको नष्ट नहीं कर सका। व्यक्ति क्षुद्र है पर उसका गौरव, उसकी कीर्ति और उसका बल महान् है, चिराराध्य है, अजर अमर है।

सेठ पूनमचन्द ताराचन्द गेलड़ा, मद्रास

इस खानदान के पूर्व पुरुष नागौर में निवास करते थे। ऐसा कहा जाता है कि करीब तीन चार सौ वर्ष पूर्व यह खानदान नागोर से उठकर कुचेरा चला गया। आप लोग ओसवाल गेलड़ा गौत्र के स्थानकवासी सज्जन हैं। इस खानदान में श्रीयुत् कालूरामजी हुए। आपके चार पुत्र हुए जिनका नाम क्रम से मुल्तानमलजी, शम्भूमलजी, अमरचन्दजी और छगनमलजी था। इनमें से श्रीयुत् अमरचन्दजी सर्व प्रथम करीब १२५ वर्ष पहले पैदल रास्ते कुचेरा से चलकर जालना होते हुए मद्रास आये। आप बड़े कर्मवीर और साहसी पुरुष थे। आपने यहाँ पर आकर पहले पहल कुछ समय तक सर्विस की। मगर कुछ समय पश्चात् यहां के अंग्रेज अफ़सरों के उत्साहित करने पर आपने रेजिमेण्टल बैंकर्स का काम प्रारम्भ किया। इसमें आपको खूब सफलता मिली। संवत् १९५२ में आपका स्वर्गवास हो गया। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रम से पूनमचन्दजी, हीराचन्दजी और रामबक्षजी था। पूनमचन्दजी का जन्म संवत् १९२१ में हुआ। आप अपने पिता के बड़े योग्य पुत्र थे। आपने अपनी सहृदयता और मिलनसारी से बहुत नामवरी और यश प्राप्त किया। जब तक आप जीवित रहे तब तक सब भाई और कुटुम्ब शामिल ही काम करते रहे। आपका स्वर्गवास ४२ वर्ष की उम्र में संवत् १९६३ में हो गया। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रम से श्रीताराचन्दजी, किशनलालजी और इन्द्रचन्द्रजी था। इनमें से इन्द्रचन्द्रजी अमोलकचन्दजी के यहाँ दत्तक चले गये।

श्रीयुत् ताराचन्दजी का जन्म संवत् १९४० का है आप बड़े योग्य, सज्जन और धर्मप्रेमी पुरुष हैं। आपके तीन पुत्र हैं। श्रीयुत भागचन्दजी, नेमीचन्दजी और खुशालचन्दजी। श्री भागचन्दजी बड़े शिक्षित और स्वदेश-प्रेमी सज्जन हैं। आपके श्री अबीरचन्दजी नामक एक पुत्र हैं।

व्यावर गुरुकुल, मद्रास महावीर औषधालय, व्यावर जैनपाठशाला, जैनज्ञान पाठशाला उदयपुर, हुक्मीचन्द मण्डल रतलाम इत्यादि संस्थाओं में आप काफी सहायता पहुँचाते रहते हैं। मतलब यह कि ओसवाल समाज में यह खानदान बहुत अग्रगण्य है।

वक्तव्य

बारहवीं शताब्दी की बात है कि जिस समय सिरोही और जालोर के देवड़ा वंश का सगर नामक एक वीर और प्रतापशाली व्यक्ति देलवाड़ा* नामक स्थान पर शासन करता था। इसके पराक्रम की चारों ओर धूम मची हुई थी। इसी समय चित्तौड़ाधिपति महाराणा रतनसी पर मालवे के अधिपति महमूद ने चढ़ाई की। इस विपत्ति के समय में महाराणा ने सगर के गुणों से परिचित हो कर उन्हें अपनी सहायतार्थ युद्ध का निमन्त्रण दिया। सगर अपनी चतुरङ्गिणी सेना लेकर राणा की सहायतार्थ आ पहुँचे। सगर की वीरता के आगे बादशाह को हार खानी पड़ी। वह पराजित होकर भाग खड़ा हुआ। सगर ने उसका पीछा किया फलस्वरूप मालवे पर सगर का अधिकार हो गया।

कुछ समय पश्चात् गुजरात के मालिक वहिलीम जातअहमद बादशाह ने राना सगर से कहला भेजा कि तुम मुझे सलामी दो और हमारी नौकरी मंजूर करो, नहीं तो मालवा प्रांत तुम से छीन लिया जायगा।

उपरोक्त बात स्वीकार न करने पर सगर और गुजरात के स्वामी दोनों के बीच भयंकर युद्ध हुआ। अंत में सगर अपना अपूर्व वीरत्व प्रदर्शित करते हुए विजयी हुए। बादशाह हारकर भाग गया। इस प्रकार गुजरात पर भी सगर का अधिकार हो गया। कुछ समय के पश्चात् फिर गौरी बादशाह ने राणा रतनसी पर आक्रमण किया। (सम्वत् १२०३) इस बार भी महाराणा ने सगर को याद किया। सगर आज्ञा पाते ही राणाजी की सहायतार्थ आ पहुँचे। इस बार सगर ने राणाजी तथा बादशाह को समझा

---

*देलवाड़ा नाम के दो स्थान हैं—पहला गुजरात में और दूसरा मेवाड़ में। हमारा खयाल है कि सम्भवतः यह स्थान मेवाड़ वाला ही हो। इसके दो-तीन प्रमाण हैं। पहला यह कि उदयपुर के मुख्य द्वार का जिसे आजकल देवारी कहते हैं, वास्तविक नाम देवड़ा बारी है। यहाँ पर आज भी देवड़ा वंशीय राजपूत लोगों की चौकी है। संभव है इसी स्थान पर या आस पास के स्थानों पर देवड़ा वंशियों का राज्य रहा हो कि जिससे इसका नाम देवलवाड़ा पड़ा हो। **दूसरा** यहाँ बहुत से जैन मन्दिर हैं, इसलिए इसका नाम देवलवाड़ा या देवल पट्टम पड़ा हो, और देवड़ा वंशियों का राज्य रहा हो कि जिस वंश के राना सगर महाराणा की सहायतार्थ युद्ध में गये हों। **तीसरा** यह भी प्रसिद्ध है कि महाराणा उदयसिंहजी का विवाह देवड़ा वंशीय राजपूतों के यहाँ हुआ था, जिनसे कुछ जमीन लेकर वहाँ एक तालाब बनवाया जो वर्तमान समय में उदयसागर नाम से प्रसिद्ध है। उपरोक्त प्रमाणों से यही सिद्ध होता है कि देवड़ा राजपूतों का स्थान यही देलवाड़ा है।

इनका चित्तौड़ के तत्कालीन महाराणाजी ने बहुत सम्मान किया। तथा उनसे वहीं रहने का आग्रह किया।

कुछ समय व्यतीत होने के पश्चात् मांडवगढ़ (मालवा) का सुलतान किसी कारण वश अपनी सेना लेकर चित्तौड़ पर चढ़ आया। यह जानकर राणाजी ने कडुवाजी से कहा कि पहले भी आपके पूर्वजों ने हमारी बहुत सी उत्तम २ सेवाएँ की हैं, अतएव इस बार भी आप हमें हमारे कार्य में सहायता दीजिये। कडुवाजी ने महाराणा की बात स्वीकार की। अन्त में इन्होंने (कडुवाजी) अपनी बुद्धिमानी एवम् चातुर्य्य से बादशाह को समझा बुझा कर उसकी सेना को वापस लौटा दिया। जिससे सब लोग इनसे प्रसन्न हुए। महाराणाजी ने प्रसन्न होकर बहुत से घोड़े आदि प्रदान कर इन्हें अपना प्रधान मन्त्री बनाया। इनके मंत्रित्व काल में इन्होंने अपने गौत्री भाइयों का कर छुड़वाया। अपने सद्व्यर्ताव से इन्होंने वहां उत्तम यश उपार्जन किया, पश्चात् राणाजी से आज्ञा लेकर ये वापस गुजरात प्रांत के अनहिल पट्टण नामक स्थान में आये। वहां के राजा ने भी इनका बड़ा सम्मान किया और इनके गुणों से प्रसन्न हो कर पाटन इनके अधिकार में करदी।

कडुवाजी ने बहुत सा रुपया धार्मिक कार्यों में खर्च किया। गुजरात देश में जीव हिंसा को बन्द करवाया। संवत् १४३२ के फाल्गुन माह में खरतरगच्छाचार्य्य श्री जिनराजसूरि महाराज का पाट महोत्सव करवाया। इसमें करीब १½ लाख रुपया खर्च हुआ। इसके अतिरिक्त इन्होंने भी अपने पूर्वजों की तरह श्री शत्रुंजय तीर्थ का संघ निकाला तथा वही मोहर, थाल और पाँच सेर का लड्डू लहान में बांटा। इस प्रकार अतुल सम्पत्ति खर्च करते हुए आप स्वर्गवासी हुए।

कडुवाजी के पुत्र का नाम मेराजी था, आपकी धर्मपत्नी का नाम हर्षनदेवी था। मेराजी ने जैन तीर्थों के करों को माफ करवाया। इनके मांडणजी नामक पुत्र हुए, जिनकी भार्य्या का नाम महिमादेवी था। मांडणजी अपने परिवार सहित गुजरात की भूमि को छोड़ कर काठियावाड़ के वीरमपुर नामक ग्राम में चले गये। वहां इनके उदाजी नामक एक पुत्र हुए। उदाजी की भार्य्या का नाम उछरंगदेवी था। इनके दो पुत्र हुए, जिनके नाम क्रम से नरपाल और नागदेव था। इनमें से नागदेव के अपनी पत्नी नारङ्गदे से दो पुत्र रत्न पैदा हुए। जिनका नाम क्रमशः जैसलजी और वीरमजी था। जैसलजी की भार्य्या का नाम जसमादेवी था।

जैसलजी के तीन पुत्र हुए। जिनके नाम क्रमशः वछराजजी, देवराजजी और हंसराजजी था। इनमें से ज्येष्ठ पुत्र वछराजजी अपने भाइयों को साथ लेकर मंडोवर नगर में राव श्रीरणमलजी के पास जा रहे। राव रणमलजी ने वछराजजी की बुद्धि के अद्भुत चमत्कार को देखकर उन्हें अपना मन्त्री नियुक्त किया।

कुछ समय पश्चात् चित्तौड़ के राणा कुम्भाजी और राव रणमलजी के पुत्र जोधाजी में किसी कारण वश अनबन पैदा हो गयी। इसी अवसर के लगभग राव रणमलजी और मन्त्री बछराजजी राणा कुम्भाजी से मिलने के लिए चित्तौड़ गये। प्रारंभ में तो राणाजी ने आपका अच्छा सम्मान किया, परन्तु कहा जाता है कि पीछे उन्होंने धोखे से राव रणमलजी को मरवा डाला। इस अवसर पर मन्त्री बछराजजी अपनी चतुराई से निकल कर वापस मंडोवर आगये।

राव रणमलजी के स्वर्गवासी होजाने पर उनके पुत्र जोधाजी पाट नशीन हुए। उन्होंने भी बछराजजी को सम्मान देकर पहले की तरह उन्हें अपना मन्त्री बनाया। जोधाजी ने अपनी वीरता से राणा के देश को उजाड़ कर दिया और अंत में राणाजी को भी अपने वश में कर लिया। राव जोधाजी के दो रानियां थीं। पहली का नाम नवरंगदे था जो कि जंगलू देश के सांखलों की पुत्री थी और दूसरी का नाम जसमादे था जोकि हाड़ा वंश की थी। नवरंगदे की रत्नगर्भा कोख से बीकाजी और बींदाजी नामक दो पुत्र रत्न पैदा हुए तथा जसमादे से नींबाजी, सुजाजी, और सातलजी नामक तीन पुत्र पैदा हुए।

बीकाजी छोटी अवस्था ही में बड़े चंचल और बुद्धिमान थे। उनके पराक्रम, तेज और बुद्धि को देखकर हाड़ी रानी को कुछ द्वेष पैदा हुआ। उसने मनमें विचार किया कि बीका की विद्यमानता में मेरे पुत्र को राज्य मिलना बड़ा कठिन है। यह सोचकर उसने कई युक्तियों से राव जोधाजी को अपने वश में कर उनके कान भर दिये। राव जोधाजी भी सब बातों को समझ गये।

एक दिन दरबार में जबकि सब भाई बेटे बैठे हुए थे कुँवर बीकाजी भी अपने चाचा कांधलजी के पास बैठे थे। ऐसे ही अवसर को उपयुक्त जान राव जोधाजी ने कहा कि जो अपनी भुजा के बलपर पृथ्वी को लेकर उसका भोग करता है वही सुपुत्र कहलाता है। पिता के राज्य को पाकर उसका भोग करनेवाले पुत्र की संसार में कीर्ति नहीं होती। यह बात कुंवर बीकाजी को चुभ गई। वे उसी समय अपने काका कांधलजी, रूपाजी, मांडणजी, मण्डलाजी, नाथूजी, भाई जोगायतजी, बींदाजी, सांखला नापाजी, पड़िहार बेलाजी, बेदलाला लाखनजी, कोठारी चौथमलजी, पुरोहित विकमसी, साहुकार राठी सालाजी, मंत्री बछराजजी आदि कतिपय स्नेही जनों को साथ लेकर जोधपुर से रवाना हो गये।

जोधपुर से रवाना होकर ये लोग शाम को मंडोवर पहुँचे। वहां गोरे भेरूजी का दर्शन कर बीकाजी ने प्रार्थना की कि महाराज आपका दर्शन अब आपके हुक्म से होगा, हम तो अब बाहर जा रहे हैं। इस प्रकार के भावों की प्रार्थना कर वे रातभर मंडोवर ही में रहे। ज्योंही प्रातःकाल वे उठे त्योंही उन्हें भैरवजी की मूर्त्ति बहेली में मिली। इसे शुभ शकुन समझ बीकाजी उस भैरवजी की मूर्ति को लेकर शीघ्र ही वहां से रवाना हो गये। वहां से वे काऊनी नामक स्थान पर गये। वहां के भूमियों को वश

में कर उन्होंने वहां अपनी दुहाई फेर दी। वहीं तालाव के किनारे उत्तम जगह को देखकर गोरेजी की मूर्ति को स्थापित किया तथा वहीं रहने लगे। आगे चलकर इसी स्थान का नाम कोड़मदेसर प्रसिद्ध हुआ। यह स्थान अभी भी वहां वर्तमान है और बीकानेर के राजकुमारों का मुंडन संस्कार यहीं होता है। यहां पर राजमहल भी बने हुए हैं। संवत् १५४१ में राव बीकाजी ने रातीघाटी नामक पहाड़ पर एक किला बनवाकर नगर बसाया जो वर्तमान में बीकानेर के नाम से प्रसिद्ध है। मंत्री बछराजजी ने भी बीकानेर के पास अपने नाम से बच्छासर नामक एक गांव बसाया।

बच्छावत गौत्र की स्थापना

कुछ समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् बछराजजी ने शत्रुञ्जय और गिरनार की तीर्थयात्रा करने के हेतु एक बड़ा संघ निकाला। मार्ग में सब साधर्मी भाइयों को वरपति एक मुहर एक थाल और एक लड्डू की लहान बांटी तथा संघपति की पदवी को प्राप्त की। इसके बाद आप श्री जिनकुशल सूरि महाराज के साथ देवराज नगर (जो वर्तमान में मुल्तान के पास है) में यात्रा करने के लिये गए। आपके वंशज इसी समय से आपके नाम से बच्छावत कहलाने लगे। राव बीकाजी ने आपकी कार्यक्षमता से प्रसन्न होकर आपको 'परभूमि पंचानन' के खिताब से सुशोभित किया।

एक समय की बात है जब कि बछराजजी राव बीकाजी के कोठारी थे उसी समय एक दिन भोजन में खीर बनी थी। उस दिन ब्राह्मण खीर में शक्कर डालना भूल गया। इससे रावजी ने एक डावड़ी (नौकरानी) को बछराजजी के पास भेज कर शक्कर मँगवाई। बछराजजी ने भूल से शक्कर के बदले नमक भेज दिया। नमक डालने से खीर खारी हो गई जिससे रावजी उसे न खा सके। इससे नाराज़ होकर उन्होंने कोठारी बछराजजी को बुलवाया तथा नमक भेजने के लिये भला बुरा कहा। इस पर बछराजजी ने अपनी भूल को छिपा कर बड़ी बुद्धिमानी से उत्तर दिया कि महाराज हमेशा जो डावड़ी सामान लेने के लिए आती है कल वह नहीं आई थी। उसके स्थान पर दूसरी डावड़ी को देखकर मैंने जानबूझ कर नमक भेजा था। इसका कारण यह था कि संभव है वह शक्कर में कुछ मिला कर आपको देदे। नमक भेजने से मैंने यह सोचा था कि जिसमें आप नमक डालेंगे वह वस्तु खारी हो जायगी और आप न खा सकेंगे, जिससे यदि उसमें कोई वस्तु भी मिला दी जायगी तो अमंगल नहीं होगा। यदि आप हमेशा आने वाली डावड़ी को भेजते तो मैं नमक न भेजता।" बछराजजी का यह उत्तर सुनकर राव बीकाजी बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने बछराजजी की और भी तरक्की की तथा उन्हें और भी ज्यादा विश्वासपात्र समझने लगे।

राव बीकाजी के रंगादेवी नामक स्त्री थी। जिसकी कोख से लूनकरनजी, नरसीजी, राजसीजी,

वरसीजी, और वसीलजी वगैरह पुत्र उत्पन्न हुए। आगे चलकर इनमें से लूनकरनजी बड़े पुत्र होने के कारण बीकानेर की गद्दी पर बैठे।

मंत्री बछराजजी के करमसीजी, वरसिंहजी, रतनसिंहजी और नाहरसिंहजी नामक चार पुत्र हुए। बछराजजी के छोटे भाई देवराजजी के दस्सुजी, तेजाजी और भूंणजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से दस्सुजी के वंशज दस्साणी कहलाये।

राव बीकाजी के स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् उनके पाट पर राव लूनकरनजी बैठे। आपने बच्छावत करमसीजी को अपना मन्त्री बनाया। करमसीजी ने अपने नाम से करमसीसर नामक एक गांव बसाया। आपने राव लूनकरनजी की शादी चित्तौड़ के महाराणा की पुत्री से करवाने का प्रयत्न किया। इसके अतिरिक्त आपने बहुत से स्थानों के लोगों को बुलवाकर उनका एक संघ निकाला तथा बहुतसा रुपया खर्च कर श्री जिनहंससूरि महाराज का पाट महोत्सव किया। संवत् १५७० में बीकानेर नगर में आपने श्री नेमीनाथ स्वामी का एक बड़ा मन्दिर बनवाया जोकि इस समय में भी विद्यमान है। इसके अतिरिक्त आपने शत्रुंजय, गिरनार और आबू नामक तीर्थों की यात्रा के लिए एक बड़ा संघ निकाला तथा अपने पूर्वजों की तरह मार्ग में अपने साधर्मी भाइयों को एक मुहर, एक थाल और एक मोदक लहाण में बांटा। आप नारनोल (नन्दिगोकल-जैसलमीर) के लोदी हाजीखां के साथ युद्ध कर उसी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हुए।

राव लूनकरनजी के पश्चात् उनके पुत्र राव जेतसीजी बीकानेर की गद्दी पर बैठे। आपकी धर्मपत्नी का नाम काश्मीरदेवी था। आपने बच्छावत करमसी के छोटे भाई बच्छावत वरसिंहजी को अपना मंत्री बनाया। वरसिंहजी के मेघराजजी, नगराजजी, अमरसीजी, भोजराजजी, डूंगरसीजी और हरराजजी नामक छः पुत्र हुए। इनमें से डूंगरसीजी के वंशज डूंगराणी कहलाये। वरसिंहजी के द्वितीय पुत्र नगराजजी के संग्रामसिंहजी* नामक पुत्र हुए। संग्रामसिंहजी के पुत्र का नाम कर्मचन्दजी था।

वरसिंहजी भी शत्रुंजय आदि तीर्थों की यात्रा करने के लिए गये। जहां ये चांपानेर के बादशाह मुजफ्फर के पास भी गये। बादशाह ने इनका अच्छा स्वागत किया तथा छः माह तक उन्हें वहीं रक्खा। और वहाँ का आपको किलेदार बनाया। आपने गिरनार आबू आदि तीर्थों का संघ निकाला तथा रास्ते के यात्राकरों को छुड़वाया। आपने एक धर्मशाला भी बनवाई।

वरसिंहजी के पश्चात् इनके दूसरे पुत्र नगराजजी मंत्री हुए। इसी समय जोधपुर के राजा मालदेव ने जांगलू देश को अपने अधिकार में करने की इच्छा की। यह जानकर राव जैतसीजी ने नगराजजी को कहा कि मालदेव से विजय प्राप्त करना कठिन है। जब तक मालदेव यहां चढ़ न आवे तब

* कुछ लोग संग्रामसिंहजी को अमरसीजी का पुत्र होना बतलाते हैं।

तक सब प्रबन्ध कर लेना ठीक है। तब मन्त्री नगराजजी ने शेरशाह बादशाह के पास जाकर उससे सहायता मांगी। सहायता मिलने के पहले ही मालदेव ने जांगलू पर चढ़ाई कर दी। इस युद्ध में जैतसीजी काम आये और मालदेव का जांगलू पर अधिकार हो गया, पर नगराजजी ने शेरशाह की सहायता से मालदेव को परास्त कर जांगलू का राज्य वापस जैतसीजी के पुत्र राव कल्याणसिंहजी को दिलवाया और उन्हें सारस्वत नगर से लाकर राज्य गद्दी पर बिठाया। नगराजजी ने धार्मिक कार्यों में भी बहुत रुपया खर्च किया। आपने भी यात्राओं का संघ निकाला। आपकी पत्नी का नाम नवलदेवी था। आपने अपने नाम से नागासर नामक एक गांव बसाया था जो वर्तमान में भी विद्यमान है।

राव जैतसीजी के युद्ध में काम आजाने के पश्चात् उनके पुत्र राव कल्याणसिंहजी बीकानेर की गद्दी पर विराजे। उन्होंने मन्त्री नगराज जी के पुत्र संग्रामसिंहजी को अपना मन्त्री बनाया। आप बड़े वीर पराक्रमी और बुद्धिमान थे। आपने भी श्रीजिनमाणिक्यसूरिजी को साथ लेकर शत्रुंजय आदि तीर्थों की यात्राओं का एक संघ निकाला था। जिसमें प्रत्येक साधर्मी भाई को एक रुपया, एक थाल और एक लड्डू लहान में बांटा था। मार्ग में आप चित्तौड़पति उदयसिंहजी की सेवा में उपस्थित हुए थे उस समय महाराणा ने आपका बहुत सम्मान किया था।

बच्छावत करमचन्दजी

आप बीकानेर के प्रधान मेहता संग्रामसिंहजी के पुत्र थे। आप बड़े प्रतिभाशाली, बुद्धिमान एवं परम राजनीतिज्ञ थे। आप अपने समय के महापुरुष और प्रसिद्ध मुत्सद्दी थे। आपकी अपूर्व प्रतिभा और कार्य्य कुशलता से प्रसन्न होकर बीकानेर के तत्कालीन महाराजा कल्याणसिंहजी ने आपको अपना प्रधान मन्त्री नियुक्त किया था। जिस समय की यह बात है, उस समय सम्राट् अकबर भारत के राज्य सिंहासन पर विराजमान थे। कहना न होगा कि कर्मचन्दजी ने न केवल बीकानेर के राजनैतिक क्षेत्र में, न केवल राजस्थान के राजनैतिक मैदान में वरन् ठेठ शाही दरबार में अपने महान् व्यक्तित्व और अपूर्व राजनैतिक योग्यता की छाप डाली थी। सम्राट् अकबर पर आपका बड़ा प्रभाव था और वह कभी कभी भारतीय राजनीति के गूढ़तम प्रश्नों कि सुलझाने में और अपनी शासन नीति के निर्माण में, आपकी सलाह लिया करते थे। फारसी के तत्कालीन ग्रन्थों में तथा जयसोम कृत "कर्मचन्द्र प्रबन्ध" में मन्त्री कर्मचन्दजी के महान जीवन के विविध पहलुओं पर और उनके तत्कालीन प्रभाव पर बहुत ही अच्छा प्रकाश डाला गया है।

एक इतिहासज्ञ का कथन है कि कभी कभी छोटी छोटी घटनाएँ भी महान् ऐतिहासिक घटनाओं को जन्म देती हैं। मन्त्री कर्मचन्दजी का एक मामूली-सी घटना ने सम्राट् पर प्रभाव डाल दिया।

बात यह हुई कि बीकानेर के तत्कालीन राव कल्याणसिंहजी ने एक समय मन्त्री कर्मचन्दजी के सामने यह इच्छा प्रकट की कि मैं किसी तरह जोधपुर के गोखड़े पर बैठ जाऊँ। इस इच्छा की पूर्ति के लिये कर्मचन्दजी सम्राट् अकबर की सेवा में भेजे गये। जिस समय आप दिल्ली पहुँचे, उस समय सम्राट् अकबर शतरंज खेल रहे थे। उनकी शतरंज की चाल रुकी हुई थी। जो चाल वे चलते थे, उसी में हारते थे। कहा जाता है कि कर्मचन्दजी ने बादशाह को शतरञ्ज की ऐसी चाल बताई कि जिससे वे विजयी हो गये। इस पर बादशाह बहुत खुश हुआ। बादशाह की इस प्रसन्नता का कर्मचंदजी ने अपने स्वामी के लिए फ़ायदा उठा लिया। उन्होंने बादशाह से अपने स्वामी के लिये जोधपुर के गोखड़े पर कुछ समय के लिये बैठने का परवाना ले लिया।

इस सेवा से प्रसन्न होकर रावजी ने आपकी मांगी हुई नीचे लिखी बातों को स्वीकार कर स्वयं अपनी ओर से ४ गांव का मुहरदार पट्टा प्रदान किया।

(१) चार माह चौमासे में कुम्हार, तेली, तम्बोली वगैरह अगता पालें।

(२) वैश्यों से माल का कर न लिया जाय।

(३) भेड़ के व्यापार में माल का जो चौथाई कर लिया जा रहा है, वह न लिया जाय।

राव कल्याणसिंहजी के पश्चात् राव रायसिंहजी बीकानेर के स्वामी हुए। आपने भी अपने मंत्री के पद पर कर्मचन्दजी को ही रक्खा। कहना न होगा कि कर्मचन्दजी ने अपने नरेश की बड़ी-बड़ी सेवाएँ कीं, इनके उद्योग से सम्राट् अकबर की ओर से रायसिंहजी को राजा का खिताब मिला। कर्मचन्दजी ने मुगल सम्राट् की भी बहुत सेवाएँ की थीं। आपने कुँवर रामसिंहजी के साथ दिल्ली पर आक्रमण करनेवाले मिर्जा इब्राहिम से युद्ध कर उसे हराया। सम्राट् की मदद के लिये गुजरात पर चढ़ाई की तथा मिर्जा महमद हुसैन को हरा कर उस पर विजय प्राप्त की। इन सेवाओं से प्रसन्न होकर सम्राट् अकबर ने मंत्री कर्मचन्दजी की स्त्रियों को सोने के नुपूर पहनने का अधिकार दिया और आपका बड़ा सत्कार किया। (उस समय ओसवाल जाति में हिरन गौत्रीय स्त्रियों के अतिरिक्त अन्य स्त्रियों को पैरों में सोना पहनने का अधिकार न था।)

मंत्री कर्मचन्दजी ने सोजत को बीकानेर राज्य के आधीन किया, जालोर के अधिकारी को परास्त किया तथा तुरमखां नामक व्यक्ति को मुहरें देकर उसके द्वारा कैद किये कुछ महाजनों को मुक्त करवाया, सिंध देश को बीकानेर में मिलाया तथा वहाँ की नदियों में मच्छी मारना बंद करवाया। हरफ़ा नामक स्थान में बिलूचियों को परास्त किया। इस प्रकार आपने कई समय अपनी वीरता एवम् प्रतिभा का परिचय दिया था।

आपकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी। आपने न केवल राजनैतिक क्षेत्र में ही वरन् सामाजिक एवम् धार्मिक क्षेत्र में भी बहुत कार्य किये थे। आपने सम्राट् अकबर को जैनधर्म के तत्वों को समझाने के लिए जैनाचार्य श्रीजिनचन्द्रसूरिजी को खम्भात से बुला कर सम्राट् से उनका परिचय कराया और उनका महत्वपूर्ण व्याख्यान करवाया। अकबर पर उनका अच्छा प्रभाव पड़ा तथा अकबर ने उनके आदेशानुसार अहिंसा के तत्व को समझ कर कई पर्व के पवित्र दिनों में हिंसा न करने के आदेश सारे साम्राज्य में भेजे।

काश्मीर के युद्ध में सम्राट् अकबर अपनी धर्म जिज्ञासा के लिये महाराज के शिष्य मानसिंहजी को साथ ले गया था। अकबर का जैनधर्म पर बहुत प्रेम हो गया था। कर्मचन्दजी की दान वीरता भी बहुत बढ़ी-चढ़ी थी आपने एक समय श्रीजिनचन्द्रसूरि महाराज के आगमन की बधाई सुनाने वाले याचकों को बहुत द्रव्य प्रदान किया था इसका वर्णन करते हुए मल्ल नामक कवि ने इस प्रकार लिखा है:—

नव हाथी दीने नरेश, मद सों मतवाले।
नवे गाँव बगसीस, लोक आवें हित हाले॥
परा की सौ पांच सुतो, जग सगलो जाणे।
सवा करोड़ को दान, मल्ल कवि सत्य बखाने॥
कोई रावत राणा न करि सके, संग्राम नंदन तें किया।
श्री युगप्रधान के नाम सुंज, कर्मचंद इतना दिया॥

इसके अतिरिक्त जब सम्राट् ने कर्मचन्दजी के कहने से जिनसिंहसूरि को आचार्य्य की पदवी प्रदान की तब इसके महोत्सव में कर्मचन्दजी ने सवा करोड़ रुपये खर्च किये थे।

(प्राचीन जैन लेख संग्रह पृष्ठ ३५)

मंत्री कर्मचन्दजी ने सामाजिक क्षेत्र में भी बहुत काम किया था। आपने पुराने कायदों का संशोधन किया तथा जाति की उन्नति के लिये कई नये कानून बनाए। वर्तमान समय में जो ४ टके की लाहण बांटी जाती है वह उन्हीं के द्वारा प्रचारित की गई थी। संवत् १६२५ के दुर्भिक्ष में आपने हजारों लोगों का प्रतिपालन किया तथा अपने साधर्मी भाइयों को १२ माह तक अन्न-वस्त्रादि प्रदान किया था तथा वर्षा होने पर सबको मार्ग व्यय एवम् खेती आदि करने के लिये कुछ द्रव्य देकर अपने २ स्थान पर पहुचा दिया था। तुरंमखां को सिरोही की लूट में भिन्न २ धातुओं की जो एक हजार प्रतिमाएँ मिली थीं, उससे उन्हें छीनकर आपने श्रीचिंतामणि स्वामी के मंदिर के तलघर में रखवा दी जो अब तक मौजूद हैं।

कर्मचन्दजी के बनवाये हुए एक विशाल उपाश्रय में एक बार महाराज जिनचन्द्रसूरि ने अपना



श्री कर्मचन्दजी बच्छावत प्रधान, बीकानेर.



श्री मेहता अगरचन्दजी प्रधान, उदयपुर.



श्री मेहता देवीचन्दजी प्रधान, उदयपुर.



श्री मेहता शेरसिंहजी प्रधान, उदयपुर.

चातुर्मास किया था। यह उपाश्रय आज भी बीकानेर के रांगणी के चौक में विद्यमान है। इसमें देखने योग्य एक प्राचीन पुस्तकालय है जिसमें कर्मचन्दजी का चित्र भी लगा हुआ है।

मंत्री कर्मचन्दजी के दो पुत्र थे—भाग्यचन्द्रजी और लखमीचन्दजी। राजा रायसिंहजी के भी दो पुत्र थे—भूपतसिंहजी तथा दलपतिसिंहजी। ऐसा कहा जाता है कि राजा रायसिंहजी निम्न लिखित कारणों से कर्मचन्दजी पर नाराज हो गये थे, अतएव कर्मचन्दजी अपने पुत्र परिवार को लेकर मेड़ता चले गये थे।

(१) रायसिंहजी के छोटे पुत्र दलपतिसिंहजी को राजा बनाने की चेष्टा करना।

(२) कर्नल पावलेट ने बीकानेर–गजेटियर में लिखा है कि, "जिस समय बादशाह कर्मचन्दजी से शतरञ्ज खेलते थे उस समय कर्मचन्दजी तो बैठे रहते थे लेकिन बीकानेर नरेश खड़े रहते थे।" यह भी उनकी नाराजी का एक कारण था।

कर्मचन्दजी मेड़ता जाकर अपना धार्मिक जीवन बिताने लगे। इसी समय बादशाह ने बीकानेर नरेश द्वारा इन्हें बुलवाया था। इसके बाद कर्मचन्दजी बादशाह से अजमेर मिलने गये और वे देहली जाकर रहने लगे। वहां बादशाह ने आपका यथोचित सत्कार कियो तथा एक सोने के जेवर सहित शिक्षित घोड़ा प्रदान किया। बादशाह के पुत्र जहांगीर के मूल नक्षत्र में पैदा होने पर बादशाह ने सब धर्मों में गृहों की शान्ति करवाई। उसी सिलसिले में जैन धर्म की रीत्यानुसार शान्ति करवाने का भार कर्मचन्दजी पर छोड़ा था जिसे उन्होंने पूरा किया।

कर्मचन्दजी जब देहली में बीमार पड़ गये उस समय राजा रायसिंहजी उन्हें सांत्वना देने के लिये पधारे थे। वहां जाकर उन्होंने बहुत खेद प्रगट किया और आंखो में आंसू भरलाये। रायसिंहजी के चले जाने पर कर्मचन्दजी ने अपने पुत्रों को कहा कि महाराज की आँखों में आंसू आने का कारण मेरी बीमारी नहीं है किन्तु इसका वास्तविक कारण यह है कि वे मुझे सजा नहीं दे सके। इसलिये तुम बीकानेर कभी मत जाना।

कर्मचन्दजी की मृत्यु होजाने के पश्चात् राजा रायसिंहजी ने बुरहानपुर में अपनी रुग्णावस्था में अपने पुत्रों से कहा कि " कर्मचन्द तो मरगया अब तुम उनके पुत्रों को मारना। मुझे मारने के षड्यंत्र में जो २ लोग शामिल थे उन्हें भी दण्ड देना। सूरसिंहजी ने इस बात को स्वीकार किया।

रायसिंहजी की मृत्यु के पश्चात् बादशाह जहांगीर ने दलपत को बीकानेर का स्वामी बनाया। परंतु पीछे संवत् १६७० में बादशाह उनसे नाराज होगये और उन्होंने सूरसिंहजी को बीकानेर का स्वामी घोषित किया। सूरसिंहजी बादशाह से दिल्ली मिलने गये और आते समय कर्मचन्दजी के पुत्रों को तसल्ली देकर सपरिवार अपने साथ लिवा लाये। आपने कर्मचन्दजी के इन दोनों पुत्रों को मंत्री पद पर

नियुक्त किया। करीब छः मास तक उनपर ऐसी कृपा बतलाई कि मानो वे पुरानी सभी बातों को भूलगये हों। एक समय स्वयं राजा साहब इनकी हवेली पर भी पधारे जहाँ पर इन दोनों ने एक लाख रुपये का चौंतरा बनवा कर उनको बिठाया। इस प्रकार छः मास के बाद एक समय राजाजी ने बहुत से वीर राजपूतों को इन दोनों के मारने के लिये भेजा। ये दोनों भी बड़े वीर थे। आपने अपने परिवार के सभी व्यक्तियों को मार कर अपने ५०० वीरों सहित लड़कर शत्रुओं का सामना किया और अंत में वीर गति को प्राप्त हुए।

इसी अवसर पर रघुनाथ नामक एक सेवक इनके कुटुम्ब की एक गर्भवती स्त्री को लेकर करणी माता के मंदिर में शरण चला गया। उस समय के करणीमाता के मन्दिर के नियमानुसार ये लोग बच गये तथा आगे चलकर इन्हीं के पुत्र भाण हुए जिनसे आगे का वंश चला। उस सेवक के वंशज आज भी बच्छावतों के सेवक हैं उसके वंश में हाल ही में गंगाराम और गिरधारी हुए हैं जिन्हें राज्य से सम्मान प्राप्त था। इनका पुत्र पृथ्वीराज अब भी मौजूद है।

भाण के पुत्र जीवराजजी हुए। उनके पुत्र लालचंदजी और उनके प्रपौत्र पृथ्वीराजजी हुए। आप लोग पहले बीकानेर से अजमेर और फिर घासा ग्राम (मेवाड़) में आरहे। घासा ग्राम में आकर पहले पहल ये देवारी दरवाजे के मोसल मुकर्रर हुए और फिर जनानी ड्योढ़ी पर मोसल हुए। पश्चात दरबार के खास रसोड़े के आफिसर बने। इस प्रकार धीरे २ इनकी राणा जी तक पहुँच हो गई। इनके २ पुत्र हुए—अगरचन्दजी और हंसराजजी।

मेहता अगरचंदजी

मेहता अगरचंदजी और उनके भाई हंसराजजी दोनों ही राज्य में ऊँचे पदों पर रहे। महाराणा अरिसिंहजी ने अगरचन्दजी को मांडलगढ़ की किलेदारी पर तथा उक्त जिले की हुकुमत पर नियुक्त किया। तभी से मांडलगढ़ के किले की किलेदारी इस वंश के हाथ में चली आरही है। ये पहले महाराणा के सलाहकार और फिर दीवान बनाये गये। महाराणा अरिसिंहजी द्वितीय की माधवराव सिंधिया के साथ होनेवाली उज्जैन की लड़ाई में मेहता अगरचन्दजी भी लड़े थे। जब माधवराव सिंधिया ने दूसरी बार घेरा डाला उस समय के युद्ध में भी महाराणा ने इनको अपने साथ रक्खा। महापुरुषों के साथ होनेवाली टोपल मगरी और गंगार की लड़ाइयों में भी ये महाराणा के साथ रहकर लड़े थे।

महाराणा हमीरसिंहजी (दूसरे) के समय में मेवाड़ की विकट स्थिति सम्हालने में आप बड़वे अमरचन्दजी के बड़े सहायक रहे। जब शक्तावतों और चूँडावतों के झगड़ों के पश्चात् आंबाजी

नोट—ओझाजी भाण को भामाशाह की पुत्री का लड़का होना लिखते हैं। मगर मेहताओं की तवारीख में भाण को मोनराज का पुत्र होना लिखा है।

इंगलिया की आज्ञानुसार उनके नायक गणेशपंत ने शक्तावतों का पक्ष करना छोड़ दिया तथा प्रधान सतीदास और सोमचन्द गांधी के पुत्र जयचन्द उनके द्वारा कैद किये गये उस समय महाराणा भीमसिंहजी ने फिर अगरचन्दजी मेहता को अपना प्रधान बनाया। जब सेंधिया के सैनिक लकवादादा और आंबाजी इंगलिया के प्रतिनिधि गणेशपंत के बीच मेवाड़ में लड़ाइयाँ हुई और गणेशपंत ने भागकर हमीरगढ़ में शरण ली तो लकवा उसका पीछा करता हुआ वहाँ पर भी आपहुँचा। लकवा की सहायता के लिये महाराणा ने कई सरदारों को भेजा जिनके साथ अगरचन्दजी भी थे।

संवत् १८१८ से लगाकर संवत् १८५६ तक ये अपने स्वामी के खैरख्वाह रहे। ये कभी भी अपने मालिक के नुकसान में शरीक न हुए। ये अपने चारों पुत्रों को हमेशा यह उपदेश करते थे कि "मैं खैरख्वाही के कारण छोटे दरजे से बड़े दरजे पर पहुँचा हूँ। इसलिये तुम लोगों को भी चाहिये कि चाहे जैसी भयंकर तकलीफें क्यों न उठानी पड़े, हमेशा अपने मालिक के खैरख्वाह बने रहना। इसी में हमारी नेक नामी और इज्जत है।" अगरचन्दजी ने बड़ी २ तकलीफें उठाकर मांडलगढ़के किले को गनीमों के हाथ से बचाया। आप समय २ पर उस परगने के राजपूत और मीणा-लोगों की बड़ी२ जमायतें लेकर महाराणा की खिदमत में हाजिर होते रहे। ये स्वामी भक्त मुसाहिब प्रधान का ओहदा मिलने व इससे अलग किये जाने पर अर्थात् दोनों अवस्थाओं में, अपने मालिक के पूरे खैरख्वाह बने रहे। महाराणा ने भी इनके खानदान की इज्जत बढ़ाने तथा बक्शीश देने में किसी बात की कमी न की आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा साहब ने आपको कई रुक्के बक्षे जो हम ओसवालों के राजनैतिक महत्व नामक अध्याय में दे चुके हैं। आपका स्वर्गवास संवत् १८५७ में मांडलगढ़ में हुआ।

मेहता देवीचन्दजी

अगरचन्दजी के पीछे उनके ज्येष्ठ पुत्र देवीचन्दजी मंत्री बने और जहाजपुर का किला इनके अधिकार में रक्खा गया। इस किले का प्रबंध इनके हाथों में रहने से मेवाड़ को बहुत लाभ हुआ। कारण इस खैरख्वाह वंश के वंशज देवीचन्दजी ने बड़ी बुद्धिमानी से इसकी रक्षा कर शत्रुओं का पूर्णदमन किया और इस सरहद्दी किले को सुरक्षित रक्खा। उन दिनों आँबाजी इंगलिया के भाई बालेराव ने शक्तावतों तथा सतीदास प्रधान से मिलकर महाराणा के भूतपूर्व मंत्री देवीचन्दजी को चूँडावतों का तरफदार समझ कर कैद कर लिया। परंतु महाराणा ने उन्हें थोड़े ही दिनों में छुड़वा लिया। झाला जालिमसिंह ने बालेराव आदि को महाराणा की कैद से छुड़वाने के लिये मेवाड़ पर चढ़ाई की जिसके खर्च के लिये उसने जहाजपुर का परगना अधिकार में कर लिया। इसके अतिरिक्त वह माँडलगढ़ का किला

भी अपने अधिकार में करना चाहता था। महाराणा भीमसिंहजी ने उसके दबाव में आकर माँडलगढ़ का किला उसे लिख तो दिया लेकिन तुरंत एक आदमी के हाथ में ढाल और तलवार देकर उसे माँडलगढ़ में देवीचन्दजी के पास भेज दिया। देवीचन्दजी ने इस बात से यह अनुमान किया कि महाराणा ने मुझे जालिमसिंह से लड़ने का आदेश किया है। इस पर उन्होंने किले का प्रबंध करवाया और वे अपने सामन्तों सहित लड़ने को तयार होगये। इससे जालिमसिंह की मनोकामनाएँ पूरी न होसकीं। जिस समय कर्नलटॉड ने उदयपुर की राज्यव्यवस्था ठीक की उस समय संवत् १८७५ के भाद्रपद शुक्ला पंचमी को पुनः मेहता देवीचन्दजी को प्रधान का खिलअत दिया गया। यद्यपि ये प्रधान बनने से इन्कार करते रहे तिसपर भी महाराणा ने इनकी विद्यमानता में दूसरे को प्रधान बनाना उचित न समझ इन्हें ही इस पद पर रक्खा। इस समय प्रधान तो येही थे लेकिन कुल काम इनके भतीजे शेरसिंहजी देखते थे। आपकी दो शादियाँ हुई थी, जिनमें से दूसरी शादी मेहता रामसिंहजी की बहन से हुई थी। इनके साले मेहता रामसिंहजी बड़े होशियार और महाराणा के सलाहकारों में से थे। उस समय कुँअर अमरसिंहजी के साह शिवलालजी विश्वसनीय नौकर होने के कारण अपना ढंग अलग ही जमाने लगे उस समय इस अफ़रा तफ़री को देखकर मेहता देवीचन्दजी ने यह प्रधान का पद अपने साले रामसिंहजी को दिलवा दिया।

मेहता शेरसिंहजी

अगरचन्दजी के तीसरे पुत्र सीतारामजी के बेटे शेरसिंहजी हुए। महाराणा जवानसिंहजी के समय अंग्रेज़ी सरकार के खिराज के ७ लाख रुपये चढ़ गये जिससे महाराणा ने मेहता रामसिंह के स्थान पर शेरसिंहजी को प्रधान बनाया। मगर कप्तान काफ साहब के द्वारा रामसिंहजी की सिफारिश आने से एक ही वर्ष के पश्चात् उन्हें अलगकर रामसिंहजी को पुनः प्रधान बनाया। वि० सं० १८८८ (ई० सन् १८३१) में शेरसिंहजी को फिर दुबारा प्रधान बनाया। महाराणा सरदारसिंहजी ने गद्दी पर बैठते ही मेहता शेरसिंहजी को कैद कर मेहता रामसिंहजी को प्रधान बनाया। शेरसिंहजी पर यह दोषारोपण किया गया था कि महाराणा जवानसिंहजी के पीछे वे महाराणा सरदारसिंहजी के छोटे भाई शेरसिंहजी के पुत्र शार्दूलसिंहजी को गद्दी पर बैठाना चाहते थे। यद्यपि शेरसिंहजी अपने पूर्वजों की तरह राज्य के खैरख्वाह थे पर कैद की हालत में शेरसिंहजी पर सख्ती होने लगी तब पोलिटिकल एजण्ट ने महाराणा से उनकी सिफारिश की। किन्तु उनके विरोधियों ने महाराणा को फिर भड़काया कि अंग्रेज़ी सरकार की हिमायत से वह आपको डराना चाहता है। अंत में दस लाख रुपये देने का वायदा कर शेरसिंहजी कैद से मुक्त हुए। परन्तु उनके शत्रु उनको मरवा डालने के उद्योग में लगे जिससे अपने प्राणों का भय जानकर वे मारवाड़ की ओर अपने परिवार

सहित चले गये। मेहता शेरसिंहजी के भाई मोतीरामजी जो पहले जहाजपुर के हाकिम और मेहता शेरसिंहजी के प्रधानत्व में शामिल थे, शेरसिंहजी के साथ ही रसोड़े में कैद किये गये थे, कुछ दिनों बाद कर्ण विलास महल के कई मंजिल ऊपर से गिरजाने के कारण उनका प्राणांत हो गया। यह वह जमाना था जब मेवाड़ में धींगाधींगी मच रही थी और रियासत के कुल सरदार महाराणा के खिलाफ हो रहे थे।

जब महाराणा सरूपसिंहजी का राज्य की आमद और खर्च उचित प्रबन्ध करने का विचार हुआ और मंत्री रामसिंहजी पर अविश्वास हुआ तब उन्होंने मेहता शेरसिंहजी को मारवाड़ से बुलवा कर फिर से अपना प्रधान बनाया। इसके कुछ समय पश्चात् ही मेहता रामसिंहजी का एक इकरार नामा आया। इस इकरार-नामे के आने के बाद ही अंग्रेजी सरकार की खिराज के रुपये बाकी रह जाने के कारण मेहता शेरसिंहजी की भी शिकायतें हुई। लेकिन महाराणा के दिल पर इनका कुछ भी असर न पड़ा। इसका कारण यह था कि वे पहले भी अजमेर के जलसे, और तीर्थों की सफर में होनेवाले लाखों रुपये के खर्च का हिसाब जो मेहता शेरसिंहजी के पास था देख चुके थे। वह मेहताजी की इमानदारी का काफी सबूत था। दूसरी बात यह थी कि शेरसिंहजी बहुत मुलायम दिल एवम् मित्रता के बड़े पक्के थे। यही कारण था कि इनके खिलाफ बहुत लोग न थे। तीसरी बात यह थी कि ये खैरख्वाह अगरचन्दजी के वंशज थे।

महाराणा ने अपने सरदारों की छटून्द चाकरी का मामला तय कराने के लिए मेवाड़ के पोलिटिकल एजण्ट कर्नल राबिन्सन से सं० १९०१ में एक नया कौल-नामा तैयार करवाया, जिसपर शेरसिंहजी सहित कई उमरावों के हस्ताक्षर थे।। शेरसिंहजी ने प्रधान बनकर महाराणा की इच्छानुसार व्यवस्था की और कर्जदारों का फैसला भी योग्य रीति से करवाया।

लावे (सरदारगढ़) का दुर्ग महाराणा भीमसिंहजी के समय में शक्तावतों ने डोडियों से छीन कर अपने अधिकार में करालिया था। महाराणा सरूपसिंहजी के समय वहाँ के शक्तावत रावत चतरसिंह के काका सालमसिंह ने राठोड़ मानसिंह को मार डाला तब उक्त महाराणा ने उनका कुंडेई गाँव जप्त कर लिया और चतरसिंह को आज्ञा दी कि वह उसे गिरफ्तार कर ले। चतरसिंह ने महाराणा के हुकम की तामील न कर सालमसिंह को पनाह दी। इस पर महाराणा ने वि० सं० १९०४ (ई० सन् १८४७) में शेरसिंहजी के दूसरे पुत्र जालिमसिंहजी * को ससैन्य लावे पर अधिकार करने के लिये भेजा। उन्होंने

* जालिमसिंहजी मेहता अगरचन्दजी के दूसरे पुत्र उदयरामजी के गोद रहे, परन्तु उनके भी कोई पुत्र न था इसलिये उन्होंने मेहता पन्नालालजी के तीसरे भाई तख्तसिंहजी को गोद लिया। तख्तसिंहजी गिरवा व कपासन के प्रान्तों पर हाकिम रहे तथा महकमा देवस्थान का भी प्रबन्ध कई वर्षों तक इनके सुपुर्द रहा। महाराणा सज्जनसिंहजी ने इन्हें इजलास खास और महद्राज सभा का सदस्य बनाया। ये सरल प्रकृति के कार्य कुशल व्यक्ति थे।

गढ़ पर हमला किया परन्तु अपने ५०, ६० आदमियों के मारे जाने पर भी गढ़ को कुछ भी नुकसान नहीं पहुँचा सके। तब महाराणा ने प्रधान शेरसिंहजी को वहां पर भेजा। उन्होंने वहाँ जाकर लावे पर अधिकार कर लिया और चतुरसिंह को महाराणा के सामने हाजिर किया। महाराणा ने इनकी इस सेवा से प्रसन्न होकर इन्हें कीमती खिलअत, सीख के समय बीड़ा तथा ताजीम की इज्जत प्रदान करना चाहा। शेरसिंहजी ने खिलअत और बीड़ा तो स्वीकार कर लिया परन्तु ताजीम लेने से इन्कार किया।

जब महाराणा सरूपसिंहजी ने सरूपशाही रुपया बनवाने का विचार किया उस समय शेरसिंहजी ने कर्नल राबिन्सन से लिखा पढ़ी कर इसकी परवानगी मँगा ली थी। जिससे सरूपशाही रुपया बनने लगा।

वि० सं० १९०७ में (ई० सन् १८५०), वितख आदि पालों की भील जाति तथा वि० सं० १९१२ (ई० सन् १८५५) में पश्चिमी प्रान्त के कालीवास आदि स्थानों भील जाति को सजा देने के लिये शेरसिंहजी के ज्येष्ठ पुत्र सवाईसिंहजी भेजे गये, जिन्होंने इन्हें सख्त सजा देकर सीधा किया।

वि० सं० १९०८ में लुहारी के मीनों ने सरकारी डाक लूट ली जिसकी गवर्नमेंट की तरफ से शिकायत होने पर महाराणा की आज्ञा से शेरसिंहजी के पौत्र (सवाईसिंहजी के पुत्र) अजितसिंहजी को, जो उस समय जहाजपुर के हाकिम थे, भेजा। जालंधरी के सरदार अमरसिंह शक्तावत के साथ इन्होंने इस मीना जाति का दमन किया और बड़ी बहादुरी के साथ लड़कर छोटी बड़ी लुहारी पर अपना अधिकार कर लिया। मीने भागकर मनोहर गढ़ तथा देवका खेड़ा में जा छिपे किन्तु इन्होंने वहाँ भी उनका पीछा किया। इतने में मीनों के कई सहायक जयपुर, टोंक और बूँदी इलाकों से आ पहुँचे। दोनों में घमासान युद्ध हुआ, जिसमें अजितसिंहजी के बहुत से सैनिक खेत रहे, तथा बहुत से घायल हुए। इस पर महाराणा की आज्ञा से शेरसिंहजी ने आकर मीनों का दमन किया। वि० सं० १९१२ में (१८५६) महाराणा ने मेहता शेरसिंहजी के स्थान पर उनके भतीजे गोकुलचन्द्रजी को प्रधान नियुक्त किया। सिपाही विद्रोह के समय नीमच की सरकारी सेना ने भी बागी होकर छावनी जला दी और खजाना लूट लिया। डाक्टर मरे आदि कई अंग्रेज़ वहाँ से भागकर मेवाड़ के केसूंदा गाँव में पहुँचे। वहाँ भी बागियों ने उनका पीछा किया। कप्तान शावर्स ने यह खबर पाते ही महाराणा की सेना सहित नीमच की तरफ प्रस्थान किया। महाराणा ने अपने कई सरदारों को भी उक्त कप्तान के साथ कर दिया। इतना ही नहीं किन्तु ऐसे नाजुक समय में कार्य कुशल मंत्री का साथ रहना उचित समझ कर महाराणा ने शेरसिंहजी को प्रधान की हैसियत से उक्त पोलिटिकल एजण्ट के साथ कर दिये और विद्रोह के शान्त होने तक शेरसिंहजी भी बराबर सहायता करते रहे।

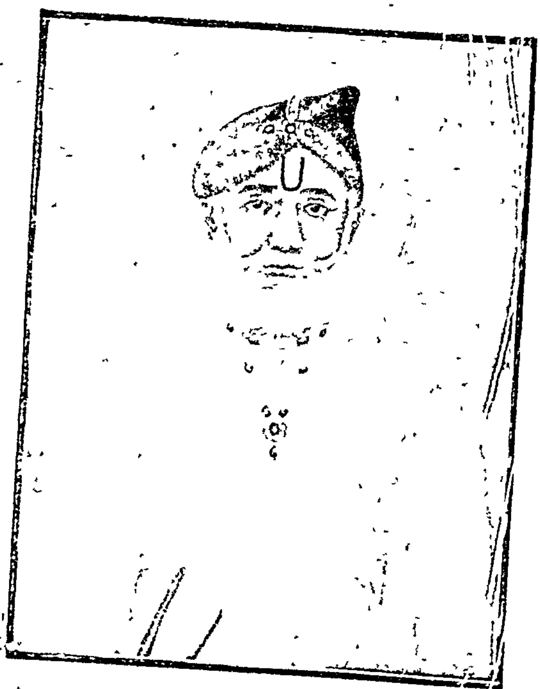
निम्बाहेड़े के मुसलमान अफसर के बागियों से मिलजाने की खबर सुनकर कप्तान शावर्स ने



श्री मेहता प्रतापसिंहजी वच्छावत, उदयपुर.



श्री मेहता लक्ष्मीलालजी वच्छावत, उदयपुर.



श्री मेहता गोकुलचन्दजी प्रधान, उदयपुर.



श्री मेहता मोतीरामजी वच्छावत, उदयपुर.

मेवाड़ी सेना के साथ वहाँ पर चढ़ाई की। इसमें मेहता शेरसिंहजी अपने पुत्र सवाई सिंहजी सहित शामिल थे। जब निम्बाहेड़े पर कप्तान शावर्स ने अधिकार कर लिया तब शेरसिंहजी सरदारों की जमियत सहित वहाँ के प्रबन्ध के लिये नियत किये गये।

महाराणा ने शेरसिंहजी को अलग तो कर ही दिया था अब उनसे भारी दण्ड भी लेना चाहा। इसकी सूचना पाने पर राजपूताने का एज्जट गवर्नर जनरल जार्ज लारेन्स वि० सं० १९१७ (ई० सन् १८६०) की १ दिसम्बर को उदयपुर पहुँचा और शेरसिंहजी के घर जाकर उसने उनको तसल्ली दी। महाराणा ने जब पोलिटिकल एजण्ट के सम्मुख शेरसिंहजी की चर्चा की तब पोलीटिकल एजण्ट ने उनके दण्ड लेने का विरोध किया। इसी प्रकार मेजर टेलर ने भी इस बात का विरोध किया जिससे महाराणा और पोलिटिकल एजण्ट के बीच मन मुटाव हो गया जो उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। महाराणा ने शेरसिंहजी की जागीर भी जब्त करली परन्तु फिर महाराणा शम्भुसिंहजी के समय में पोलिटिकल ऑफ़िसर की सलाह से उन्हें वह वापिस लौटा दी गई।

महाराणा सरूपसिंहजी के पीछे महाराणा शंभुसिंह के नाबालिग होने के कारण राज्य प्रबन्ध के लिये मेवाड़ के पोलिटिकल एजण्ट मेजर टेलर की अध्यक्षता में रीजेंसी कौंसिल स्थापित हुई जिसके शेर-सिंहजी भी एक सदस्य थे। महाराणा सरूपसिंहजी के समय शेरसिंहजी से जो तीन लाख रुपये दण्ड के लिए गये थे वे रुपये इस कौंसिल द्वारा, शेरसिंहजी की इच्छा के विरुद्ध, उनके पुत्र सवाईसिंहजी को वापिस दिये गये। इसके कुछ ही वर्ष बाद शेरसिंहजी के जिम्मे चित्तौर जिले की सरकारी रकम बाकी रह जाने की शिकायत हुई। वे सरकारी तोजी जमा नहीं करा सके और जब ज़्यादा तकाजा हुआ तो सलूम्बर के रावत की हवेली में जा बैठे। यहीं पर इनकी मृत्यु हुई। राज्य की रकम वसूल करने के लिए उनकी जागीर राज्य के अधिकार में करली गई। शेरसिंहजी के ज्येष्ठ पुत्र सवाईसिंहजी उनकी विद्यमानता में ही मर गये थे अतएव अजितसिंहजी इनकी गोद गये पर ये भी निःसंतान रहे तब माँडलगढ़ के चतरसिंहजी उनके गोद गये जो कई वर्षों तक माँडलगढ़, राशमी, कपासन और कुम्भालगढ़ आदि जिलों के हाकिम रहे। उनके पुत्र संग्राम-सिंहजी इस समय महद्राज सभा के असिस्टेंट सेक्रेटरी हैं। आपने बी० ए० की परीक्षा पास की है। आप बड़े मिलनसार और योग्य व्यक्ति हैं।

मेहता गोकुलचन्दजी

हम यह प्रथम लिख ही चुके हैं कि मेहता गोकुलचन्दजी महाराणा सरूपसिंहजी द्वारा प्रधान बनाये गये थे। फिर वि० सं० १९१६ (ई० सन् १८५९) में महाराणा ने उनके स्थान पर कोठारी केसरीसिंहजी को नियत किया। महाराणा शम्भूसिंहजी के समय वि० सं० १९२० (ई० सन् १८६३)

में मेवाड़ के पोलिटिकल एजण्ट ने सरकारी आज्ञा के अनुसार रीजेंसी कौंसिल को तोड़ कर उसके स्थान में "अहलियान श्री दरबार राज्य मेवाड़" नामक कचहरी स्थापित की तथा उसमें मेहता गोकुलचन्दजी और पण्डित लक्ष्मणरावजी को नियत किया। वि० सं० १९२२ में महाराणा शम्भूसिंहजी को राज्याधिकार मिला और इसके एक वर्ष बाद ही उक्त कचहरी तोड़ दी गई, तथा उसके स्थान पर खास कचहरी स्थापित की। उस समय मेहता गोकुलचन्दजी मांडलगढ़ चले गये। वि० सं० १९२६ (ई० सन् १८६९) में कोठारी केशरीसिंहजी ने प्रधान पद से इस्तीफा दे दिया तो महाराणा ने वह कार्य फिर मेहता गोकुलचन्दजी तथा पण्डित लक्ष्मणराव को सौंपा। बड़ी रूपाहेली और लांबा वालों के बीच कुछ ज़मीन के बाबत झगड़ा होकर लड़ाई हुई जिसमें लांबा वालों के भाई आदि मारे गये। इसके बदले में रूपाहेली का तसवारिया गांव लांबा वालों को दिलाने की इच्छा से रूपाहेली वालों को लिखा गया; पर रूपाहेली वालों के न मानने पर गोकुलचन्दजी की अध्यक्षता में मेवाड़ की सेना ने रूपाहेली पर आक्रमण कर दिया। वि० सं० १९३१ (ई० सन् १८७४) में मेहता पन्नालालजी के कैद किये जाने पर महकमा खास के काम पर मेहता गोकुलचन्दजी तथा सही वाला अर्जुनसिंहजी की नियुक्ति हुई। इस कार्य को मेहता गोकुलचन्दजी कुछ समय तक करते रहे। यहीं पर संवत् १९३५ में आपका स्वर्गवास हुआ।

मेहता पन्नालालजी

मेहता पन्नालालजी, मेहता अगरचन्दजी के छोटे भाई हंसराजजी के वंश में बच्छावत मुरलीधरजी के पुत्र थे। आप बड़े राजनीतिज्ञ, समझदार तथा योग्य व्यक्ति थे। आप भी अपने पूर्वजों की तरह बड़े यशस्वी रहे। आप वि० सं० १९२६ (ई० सन् १८६९) में महाराणा शम्भुसिंहजी द्वारा महकमा खास के सेक्रेटरी बनाये गये। इसके पूर्व खास कचहरी में आप असिस्टेण्ट सेक्रेटरी का काम कर चुके थे। महकमा खास के स्थापित होने के थोड़े समय पश्चात् से ही प्रधान का पद तोड़ कर सब काम महकमा खास के सुपुर्द किया।

पन्नालालजी ने महकमा खास में अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय देते हुए इसकी व्यवस्था अच्छी तरह से की तथा आपकी वजह से प्रति दिन इसकी उन्नति होने लगी। महाराणा की इच्छानुसार मालगुजारी में अनाज बांटने के काम को बंद कर ठेकेबंदी द्वारा नगद रुपये लिये जाने के लिये इन्होंने कोठारी केशरीसिंहजी की सलाह से दस साल पीछे की आमदनी का औसत निकाल कर बड़ी बुद्धिमानी से सारे मेवाड़ में ठेका बाँध दिया। कोठारी केसरीसिंहजी के पश्चात् माल महकमा के ऑफिसर कोठारी छगनलालजी तथा मेहता पन्नालालजी रहे।

महाराणा ने पोलिटिकल एजेन्ट की सलाह से उदयपुर में कांटा कायम कर मेवाड़ की बेतरतीब

व पुराने ढंग से बाहिर जानेवाली अफीम को रोक दिया, जिससे सारी अफीम उदयपुर होकर अहमदाबाद जाने लगी। इस काम में पन्नालालजी ने बहुत हाथ बटाया। इससे राज्य की आमदनी भी खूब बढ़ी। आपकी इन सेवाओं से प्रसन्न होकर आपको पहिले की जागीर के अतिरिक्त तीन गाँव अच्छी आमदनी के और प्रदान किये और 'शम्भुनिवास' में इन्हें सोने का लंगर पहनने का सत्कार प्रदान किया। इनकी इस प्रकार बढ़ती हुई हालत को देखकर इनके बहुत से विरोधियों ने महाराणा को इनके खिलाफ सिखाया और इन बड़े २ ऑफिसरों से यात्रा के रुपये माँगने को कहा। इसी सिलसिले में इनसे १२००००) एक लाख बीस हजार रुपयों का रुक्का भी लिखवा लिया था। परंतु पीछे से महाराणा ने ४००००) चालीस हजार रुपयों के अलावा सब छोड़ दिये।

मेहता पन्नालालजी ने अपनी परिश्रम शीलता, प्रबंध कुशलता एवम् योग्यता से महाराणा साहब को समय २ पर हानि लाभों को बतलाते हुए राज्य की नीव बहुत मजबूत करदी। ऐसा करने में लोगों के स्वार्थों पर आघात पहुँचा और उन्होंने फिर इनके विरुद्ध शिकायतें शुरू करदीं। उन्होंने महाराणा को रुग्णावस्था में यह कह कर बहकाया कि ये तो रिश्वत खाते हैं और आप पर जादू कर रक्खा है। इन बातों में आकर महाराणा ने इन्हें वि० सं० १९३१ भाद्रपद वदी १४ को कर्णविलास में कैद किया। तहकीकात करने पर ये उक्त दोनों बातों से निर्दोष ठहरे लेकिन इनके इतने शत्रु हो गये थे जो प्राण लेने तक को तयार थे। ऐसी परिस्थिति में पोलिटिकल एजंट की सलाह से आप कुछ समय के लिये अजमेर जाकर रहने लगे।

मेहता पन्नालालजी के कैद हो जाने पर महकमा खास का काम राय सोहनलाल कायस्थ के सुपुर्द हुआ। परन्तु उनसे काम न होता देख यह काम मेहता गोकुलचन्दजी और सही वाले अर्जुनसिंहजी को दिया। मेहता पन्नालालजी के अजमेर चले जाने के पश्चात् से महकमा खास का काम ठीक तरह से न चलता देख कर महाराणा सज्जनसिंहजी के समय पोलिटिकल एजंट कर्नल हर्बर्ट ने वि० सं० १९३२ में उन्हें अजमेर से बुलवा कर फिर महकमा खास का काम सुपुर्द किया।

आपने महकमा खास के भार को सम्हालकर कई नवीन काम किये। आपने संवत् १९३५ में पहले पहल स्टेट में सेटलमेंट जारी किया तथा इससे अप्रसन्न जाट-बलाइयों को बड़ी बुद्धिमानी एवम् होशियारी से इसके हानि-लाभ समझा बुझाकर शांत किया। साथ ही सेटलमेंट को पूर्ववत् ही जारी रक्खा। आपने शिक्षा विभाग में भी सुधार किया। यहाँ के हॉयस्कूल युनिवर्सिटी से सम्बन्धित किये गये और महाराणा की मृत्यु पर बाँटे जाने वाले १०) प्रति ब्राह्मण की पद्धति को कम कर १) प्रति ब्राह्मण कर बहुत बड़ी रकम स्कूल, अस्पताल आदि अच्छे कामों में खर्च करने के लिए बचाली। जिलों में स्कूल और

हास्पिटल खोले। इनके खर्च के लिये वहाँ के किसानों पर पाव आने से लेकर एक आना प्रति रुपया के हिसाब से कुल आमदनी पर कर बैठाया। इस प्रकार के आपने कई काम किये।

यद्यपि मेहता गोकुलचन्दजी के बाद प्रधान का पद किसी को नहीं मिला परन्तु पन्नालालजी को महाराणा की ओर से प्रधान के समान ही इज्जत प्रदान की गई थी। भारत गवर्नमेंट ने आपको 'राय' की पदवी दी। वि० सं० १९३७ में आप नवीन स्थापित महद्राज सभा के सदस्य बनाये गये। इसी समय आपको भारत सरकार की ओर से C. I. E. की पदवी प्रदान की गई। आपके कार्यों से क्या पोलिटिकल एजंट, क्या वाइसराय, क्या ए० जी० जी० सभी प्रसन्न रहा करते थे। तथा समय समय पर उक्त उच्च पदाधिकारियों ने कई सर्टिफिकेट आपको दिये हैं। इन में से हम कुछ यहाँ पर पाठकों की जानकारी के लिये देते हैं।

पोलिटिकल एजंट ने १७ दिसम्बर सन् १८८७ के टाइम्स ऑफ इन्डिया में इस प्रकार लिखा है:—

"Rai Pannalal is an intelligent, energetic and hard working officer and has rendered great assistance to the Political Agent in the administration of the State during the minority. He is the only person capable of holding the high post, he now occupies in the State."

१—एक और सम्माननीय ऊँचे अफसर आपके विषय में लिखते हैं:—

"He has fully justified the high opinion thus expressed of him; he is undoubtedly very able. He is thoroughly acquainted with the people of the Country; aud they in return have considerable confidence in him."

इसी प्रकार कर्नल हचिसन अडल की होटल से सन् १८७३ की ता० २२ मई को लिखते हैं:—

"I must send you a line before I leave India to tell you that in my opinion, you discharged the wonderous and important duties, entrustd to you by His Highness the Maharana, faithfully and well. I trust you wlil continue the merit and the confidence of His Highness and that you will remember that your acts are watched by both friends and enemies; any failing, therefore, will pain the one and give the other the opportunity which they will not be slow to use against you. I also hope that you will endeavour to bring the measures introduced during my incumbencey the



स्व० मेहता मुरलीधरजी बच्छावत, उदयपुर.



स्व० राय पन्नालालजी मेहता सी. आई. ई., उदयपुर.



मेहता फतेलालजी, उदयपुर.



कुँ० देवीचंदजी मेहता, उदयपुर.

perfection and let them not become merely nominal. Remember that the great aim of life is to succeed, not to commence a good work and leave it unfinished."

With best wishes and kind regards.

इसी प्रकार मि॰ जी॰ एच॰ ट्रेव्हर ए॰ जी॰ जी॰ राजपूताना ने लिखा है:—

"Rai Pannalal Mehta C. I. E. has been the chief official of the Odeypore Darbar for, I believe, about twenty five years and, has been highly praised for 'his abilities by successive Residents. He now retires from the office having been held in High Estimation by the Government and the regret of many friends in Mewar.

My best wishes attends. I trust he will find pease and repose after his long distinguished career.

जब महाराणा सज्जनसिंहजी का स्वर्गवास हुआ तबतक उन्होंने किसी को भी अपना उत्तराधिकारी बनाने की इच्छा प्रगट नहीं की। मेवाड़ में ऐसा नियम चला आता है कि गद्दी खाली न रहे। वह समय जरा कठिनाई का था लेकिन पन्नालालजी की कार्य दक्षता के कारण महाराणा फतेसिंहजी उसी रोज राजगद्दी पर विराज गये। इस बात की प्रशंसा गवर्नर जनरल ने भी की थी।

श्रीयुत पन्नालालजी ने अपने पिताजी की यादगार में नाथ द्वारा में एक सदाव्रत खोला। जिससे गरीब लोगों को सीधा (पेत्या) दिया जाता है। आपने वाड़ी के नाम से उदयपुर में एक मशहूर बगीचा बनाया; एक बावड़ी और धर्मशाला भी बनवाई। वहाँ के शिला लेख से प्रतीत होता है कि आपने उदयपुर नगर की वाड़ी नाथ द्वारा के मन्दिर को भेंट की है। आपका धार्मिक कार्यों पर भी पूरा लक्ष्य था। आपने चारों धामों की यात्रा की थी। आप पूरे पितृभक्त थे। आपके पुत्र फतेलालजी तथा भतीजे जोधसिंहजी के विवाहों पर महाराणा साहब स्वयं जनाने सहित आपकी हवेली पर पधारे थे और दोनों ही समय आपके पुत्र तथा भतीजे को पैरों में पहनने को स्वर्ण देकर सम्मानित किया था।

ऐसे बहुत कम अवसर आते हैं कि एक व्यक्ति अपने ही समय में चार पुश्तों को देख सके। मगर यह सौभाग्य भी आपको प्राप्त था। आपके समय में आपके प्रपौत्र भी मौजूद थे। जिस समय आपके प्रपौत्र हुए उस समय आप सोने की निसरनी पर चढ़े और उस निसरनी के टुकड़े कर वितरण करवा दिये थे। इसी समय उदयपुर की समग्र ओसवाल जाति में भी पीलिये ओढ़ने बटवाये थे।

हंसराजजी के दूसरे पुत्र भेरूदासजी और तीसरे पुत्र भवानीदासजी हुए। आप लोग चित्तौड़गढ़ के पाटवण पोल नामक स्थान पर मोसल नियुक्त हुए। वहाँ आप लोग आजन्म तक यह काम करते रहे। इस वंश में भाणजी हुए उनके पुत्र शंकरदासजी के वंशज इस समय उदयपुर में विद्यमान हैं। जिनमें से मेहता भोपालसिंहजी को राज से जागीर दी गई है।

मेहता फतेलालजी

मेहता फतेलालजी अपने योग्य पिता के योग्य पुत्र हैं। आपके जीवन के अंतर्गत कई ऐसी विशेषताएँ हैं जो प्रत्येक नवयुवक के लिये उत्साह वर्द्धक हैं। आप बाल्यकाल से ही बड़े प्रतिभा सम्पन्न रहे हैं। आपका जन्म संवत् १९२४ की फाल्गुन शुक्ला चतुर्थी को हुआ था। केवल १२ वर्ष की उम्र में आपकी अंग्रेजी योग्यता को देखकर मेवाड़ के तत्कालीन सेटलमेंट अफसर मि० ए० विंगेट साहब मुग्ध हो गये थे और उन्होंने आपको एक अच्छा सर्टिफिकेट दिया था। आपका प्राथमिक शिक्षण बनारस के पं० जगन्नाथजी झाड़खण्डी के संरक्षण में हुआ था। केवल १३ वर्ष की उम्र में महाराणा साहब ने आपको पैरों में सोना वख्शा।

आपका साहित्यिक जीवन भी बड़ा उज्वल रहा है। केवल तेरह वर्ष की आयु में आपने उदयपुर में बुद्धि प्रकाशिनी सभा की स्थापना की। जब भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र उदयपुर पधारे थे, उस समय आप ने उनके स्मारक में हरिश्चन्द्र आर्य्य विद्यालय की स्थापना की जो अभी तक अच्छी तरह चल रहा है। आपने हिंदी और अंग्रेजी में कुछ पुस्तकें भी लिखी हैं जिनमें सज्जन जीवन चरित्र और Hand Book of Mewar उल्लेखनीय हैं। Hand Book of Mewar के विषय में बहुत से अंग्रेज और देशी विद्वानों ने यहाँ तक कि ड्यूक ऑफ केनॉट, लार्ड डफरन, लार्ड लेन्स डाउन, भारतवर्ष के सेनापति लार्ड रावर्ट्स, बम्बई के गवर्नर लार्ड रे आदि सज्जनों ने सर्टिफिकिट प्रदान किये हैं। विलायत के कई समाचार पत्रों में इसकी आलोचना भी छपी है। श्रीमान ड्यूक ऑफ केनॉट जब उदयपुर पधारे तब आपकी सेवाओं से वे बड़े प्रसन्न हुए और उसके लिये उन्होंने आपको एक रत्नजटित लॉकेट उपहार में दिया।

सन् १८९४ के दिसम्बर मास में आप जब बनारस गये तब काशी नागरी प्रचारिणी के एक विशेष अधिवेशन में आप सभापति बनाये गये। इस सम्मान को आपने बड़ी योग्यता से निभाया।

जब उदयपुर में वॉल्टर हास्पीटल का बुनियादी पत्थर रखने के लिये लार्ड डफरिन और लेडी डफरिन आये तब आपने महाराणा की तरफ से वाइसराय महोदय को अंग्रेजी में भाषण दिया। यहाँ पर यह बतलाना जरूरी है कि यह पहला ही समय था जब मेवाड़ के एक नागरिक ने ऐसे बड़े मौके पर अंग्रेजी



मेहता तख़्तसिंहजी बच्छावत, उदयपुर.



मेहता नवलसिंहजी बच्छावत, उदयपुर.



मेहता उदयलालजी बच्छावत, उदयपुर.



मेहता जोधसिंहजी बच्छावत, उदयपुर.

में भाषण दिया हो। इसके बाद भी आपने कई अवसरों पर अत्यन्त सफलता के साथ महाराणा साहब की तरफ से भाषण दिये।

आपके साहित्यक जीवन का एक नमूना आपकी बृहद् लायब्ररी व आपकी चित्र शाला है। इस पुस्तकालय में आपने कई हस्तलिखित प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों का तथा कई नवीन और प्राचीन अंग्रेजी, हिन्दी और उर्दू की ऐतिहासिक, धार्मिक, राजनैतिक इत्यादि सभी विषय की पुस्तकों का संग्रह किया है। जिसके लिये आपको बहुत धन और श्रम खर्च करना पड़ा। इसी प्रकार आपकी चित्रशाला में मेवाड़ के महाराणा सांगा से लेकर अब तक के करीब २ सभी महाराणाओं के तथा आपके पूर्वजों में करमचन्दजी बच्छावत से लेकर अभी तक के बहुत से चित्र आइल पेंट किये हुए टंग रहे हैं।

साहित्यिक जीवन की तरह आपका धार्मिक जीवन भी बड़ा अच्छा रहा है। आप श्री वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। मगर फिर भी आप को किसी दूसरे धर्म से रागद्वेष नहीं है। योगाभ्यास के विषय में भी आपकी अच्छी जानकारी है। आप के योगाभ्यास को देख कर आर्क्यालॉजिकल डिपार्टमेंट के डायरेक्टर जनरल बहुत मुग्ध हुए थे।

आपका राजनैतिक जीवन भी उदयपुर के इतिहास में बहुत महत्वपूर्ण है। उदयपुर के राजकीय वातावरण में आपकी बड़ी इज्जत और प्रतिष्ठा है। सब से पहले आप गिरवा जिले के हाकिम बनाये गये। उसके पश्चात् आप क्रमशः महकमा देवस्थान और महकमा माल के अफसर रहे। फिर महद्राज सभा के मेम्बर हुए; जो अभी तक हैं। दिल्ली के अन्दर देशी रियासतों का प्रश्न हल करने के लिये बटलर कमेटी के सम्बन्ध में चेम्बर ऑफ प्रिन्सेस की ओर से जो स्पेशल ऑर्गेनिझेशन् हुआ था, उसमें मेवाड़ राज्य की तरफ से जो कागजात भेजे गये थे, उनको महाराणा की आज्ञानुसार आप ही ने तयार किये थे। इन कागजों को लेकर आपही रियासत की तरफ से देहली गये थे। महाराणा साहब ने आपको दोनों पैरों में सोना, कई खिलअतें व पोशाकें, दो सुनहली मूठ की तलवारें, एक सोने की छड़ी, पगड़ी में बाँधने को मांझे की इज्जत, बैठक की प्रतिष्ठा, बलेणा घोड़ा इत्यादि कई सम्मानों से सम्मानित किया।

आपका विवाह संवत् १९२७ में शाहपुरा में हुआ। इस विवाह से आपको दो पुत्र हुए जिन के नाव कुँवर देवीलालजी और कुँवर उदयलालजी हैं। देवीलालजी ने बी० ए० पास किया है! आप महकमा देवस्थान के हाकिम रहे। उदयलालजी ने एफ० ए० पास किया और उसके पश्चात मेवाड़ के भिन्न २ जिलों के हाकिम रहे। देवीलालजी के कन्हैयालालजी और गोकुलदासजी दो पुत्र हैं। कन्हैयालालजी बी० ए० पास करके बैरिस्टरी पास करने विलायत गये हैं। कुँवर गोकुलदासजी एफ० ए० में पढ़ रहे हैं। आप दोनों भाइयों को भी दरबार ने बैठक की इज्जत बख्शी है।

ऊपर मेहता फतेलालजी का परिचय बहुत ही संक्षिप्त में लिखा गया है। आपका साहित्य प्रेम इतना बढ़ा हुआ है कि उसका पूरा वर्णन किया जाय तो एक बड़ी पुस्तक तयार हो सकती है। देशी और विलायती भाषा के कई पत्रों में कई अवसरों पर आपके जीवन पर नोट निकले हैं। एक रूसी और इटली भाषा की पुस्तक में भी आपके जीवन पर टिप्पणी निकली हुई है। जब हम लोग आपके कुटुम्ब का इतिहास लिखने को आपके पास गये तो आपने पुराने कागज पत्रों के दफ्तर खोल दिये, जिन्हें देख कर हम चकित हो गये। इतनी बड़ी खोजपूर्ण सामग्री सिवाय बाबू पूरणचन्द्रजी नाहर के हमें और कहीं भी देखने

को नहीं मिली। इस प्रकार आपका जीवन क्या साहित्यिक, क्या धार्मिक और क्या राजनैतिक सभी दृष्टियों से बड़ा महत्व पूर्ण रहा है।

सेठ हीरालालजी पन्नालालजी वच्छावत, कुन्नूर (नीलगिरी)

इस परिवार का निवास फलोदी (मारवाड़) है। आप जैन मंदिर मार्गीय आम्नाय के मानने-वाले हैं। इस परिवार के सेठ धीरजमलजी और उनके पुत्र दुलीचन्दजी फलोदी में ही रहते रहे। दुलीचंदजी के पुत्र सेठ खींवराजजी मारवाड़ से व्यापार के निमित्त संवत् १९६५ में एक लोटा डोर लेकर कमाने के लिए बाहर निकल पड़े, और साहस तथा परिश्रम पूर्वक हज़ारों मील का रास्ता तय करके आप मैसूर प्रान्त की ओर आये, और वहाँ व्यापार में अच्छी सम्पत्ति उपार्जित की। वैद्यक का भी आप अच्छा ज्ञान रखते थे। संवत् १८७५ में आप स्वर्गवासी हुए।

सेठ खींवराजी वच्छावत के पुत्र मुलतानचन्दजी का जन्म संवत् १८६७ में हुआ। आप रीयाँवाले सेठ चन्दनमल धनरूपमल की इन्दौर तथा उज्जैन दुकानों पर मुनीमात करते थे। शरीर विज्ञान और वैद्यक का आपको ऊँचा ज्ञान था। संवत् १९६५ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके चुन्नीलालजी मोती-लालजी, तेजकरणजी, चौथमलजी, हीरालालजी और सुगनचन्दजी नामक ६ पुत्र हुए। इन बन्धुओं में से मोतीलालजी ने उज्जैन में, चौथमलजी ने खामगाँव में तथा सुगनचंदजी ने अमरावती में दुकानें खोलीं और तेजकरणजी रीयाँवालों की दुकानों पर मुनीमात करते रहे।

सेठ मोतीलालजी बच्छावत के छोगमलजी, माणिकलालजी और दीपचंदजी नामक पुत्र हुए, इनमें छोगमलजी, चुन्नीलालजी के नाम पर दत्तक गये। इस समय आप बन्धुओं के यहाँ मोतीलाल माणकलाल के नाम से उज्जैन में व्यापार होता है। छोगमलजी के पुत्र फूलचन्दजी लालचन्दजी, राजमलजी हैं, इनमें राजमलजी कोयम्बटूर में कपड़े का व्यापार करते हैं।

सेठ चौथमलजी वच्छावत खामगाँव के माहेश्वरी, अग्रवाल और ओसवाल समाज में वज़नदार पुरुष हुए, आपके छोटे भ्राता हीरालालजी के पन्नालालजी तथा चाँदमलजी नामक २ पुत्र हुए, इनमें पन्ना-लालजी, चौथमलजी के नाम पर दत्तक गये। पन्नालालजी का जन्म संवत् १९४७ में हुआ।

सेठ चौथमलजी के गुजर जाने बाद सेठ पन्नालालजी ने खामगाँव से दुकान उठाकर सेठ कैशो-रामजी पोद्दार कलकत्ते वालों के यहाँ ६ सालों तक श्यूगर विभाग में नौकरी की। पश्चात् सन् १९११ में फलोदी निवासी सेठ मिश्रीमलजी वेद, जेठमलजी श्रावक तथा आपने मिलकर मेसर्स लालचन्द शंकरलाल एण्ड कंपनी के नाम से कुन्नूर (उटकमंड) में बेङ्किग कार-बार खोला, और इस फर्म ने अपने मालिकों की होशियारी तथा व्यापार चतुराई के बल पर अच्छी उन्नति प्राप्त की, इस समय नीलगिरी प्रांत के व्यापारियों में यह नामाङ्कित फर्म मानी जाती है। इस फर्म का बिजिनेस अंग्रेज़ी ढंग के बेङ्किग सिस्टम से होता है। कुन्नूर तथा ऊटकमंड के बड़े २ प्लांटर्स, एंजिनियर्स एवं अंग्रेज़ आफीसरों से इस फर्म का लेन-देन रहता है। सेठ पन्नालालजी वच्छावत व्यापार चतुर और हियाववाले व्यक्ति हैं, आपने अपने छोटे भ्राता चाँदमलजी के पुत्र बालचंदजी को दत्तक लिया है। आपकी वय २७ साल की है। श्रीबालचन्दजी शिक्षित तथा योग्य व्यक्ति हैं, आप कुन्नूर म्यूनिसिपेलिटी के मेम्बर हैं। आपके पुत्र निहालचंदजी होनहार बालक हैं।

बोथरा

हम ऊपर बच्छावतों के इतिहास के बोथरा गौत्र की उत्पत्ति का विवरण प्रकाशित कर चुके हैं। इसी बोथरा गौत्र में से बच्छावत गौत्र की उत्पत्ति हुई है। यहाँ हम पाठकों की जानकारी के लिए बोथरा गौत्र पर ऐतिहासिक प्रकाश डालने वाली कुछ सामग्री याने उनके कुछ शिलालेख प्रकाशित करते हैं।

पहला शिलालेख नागौर के दफ्तरियों के मोहल्ले में श्री आदिनाथजी के मन्दिर में लगा है।

दूसर शिलालेख बीकानेर के आसानियों के मोहल्ले में बांठियों के उपासरे के पास पंच तीर्थियों पर श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथजी के मन्दिर में है। जिसकी नकल निम्न प्रकार है।

(१) संवत् १५३४ वर्षे आषाढ़ सुदि २ दिने उपकेशवंशे बोथरा गौत्रे शा० जेसा पु० थाहा सुश्रावकेण भा० सुहागदे पुत्र देल्हा मानी वाकि युतेन माता लखी पुण्यार्थं श्री श्रेयांस बिम्ब करिते प्रतिष्ठितं श्री खरतरगच्छे श्री जिनचन्द्रसूरि पट्टे श्री० जिनचन्द्रसूरि भिः

(२) संवत् १५३६ वर्षे फा० सु० ३ दिने उकेश''''''रा गौत्रे सा दूल्हा पुण्यार्थं पुत्र सा० अभयराज तद् मातृ ली''''''पुतेन श्री नेमीनाथ बिम्बं का० प्र० श्री खरतरगच्छ श्री जिनभद्रसूरि पट्टे श्री जिनचन्द्र सूरि भिः— ॥श्री॥

उपरोक्त लेखों से पाठकों को उस समय के आचार्य और बोथरा वंश के पुरुषों के नाम का पता चल जाता है। इसी प्रकार और भी कई शिलालेख इस वंश के मिलते हैं जो स्थानाभाव से यहाँ नहीं दिये गये। अब हम इस वंश के वर्तमान समय के प्रसिद्ध परिवारों का परिचय दे रहे हैं।

श्रीलालचंद अमानमल बोथरा गोगोलाव

करीब २५० वर्ष पूर्व इस परिवार के पुरुष बीकानेर आये। वहां वे ५० वर्ष तक रहे। पश्चात् फिर वहां से भग्गू में, जिसे बड़ागांव भी कहते हैं, आये। इसके ७५ वर्ष बाद याने आज से करीब १२५ वर्ष पूर्व गोगोलाव नामक स्थान में आकर बसे, तबसे आप लोग वहीं रह रहे हैं। इस वंश वालों ने भग्गू में एक कुवा बनवाया था, जो आज भी बोथरा कुआ कहलाता है। खेमराजजी

भग्गू में रहे, इनके पुत्र भीमराजजी वहाँ से गोगोलाव आये। भीमराजजी के पुत्र मोतीचन्दजी के चार पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः सेठ लालचन्दजी, गुलाबचन्दजी, पीरचन्दजी, और पनराजजी थे। वर्तमान परिचय लालचन्दजी के परिवार का है।

सेठ लालचन्दजी का जन्म संवत १८८१ का था। जब आप २५ वर्ष के थे, उस समय व्यापार के लिये बंगाल प्रान्त के चीलमारी नामक स्थान पर गये। वहाँ जाकर टोडरमलजी बागचा लूनसरा के साझे में लालचन्द टोडरमल के नाम से साधारण फर्म स्थापित की। यह फर्म ६ वर्ष तक कपड़े का व्यापार करती रही। पश्चात् आप दोनों ही भागीदार अलग अलग हो गये। सेठ लालचन्दजी ने अलग होते ही अपने पुत्र अमानमलजी के नाम से संवत् १९२१ में लालचन्द अमानमल के नाम से अपनी स्वतन्त्र फर्म खोली। इस बार इस फर्म में बहुत लाभ रहा। अतएव उत्साहित होकर संवत् १९४८ में चीलमारी ही में एक ब्रांच और मेघराज दुलीचन्द के नाम से स्थापित की और उस पर कपड़े का व्यापार प्रारम्भ किया। इसके पश्चात् संवत् १९५३ में आपने अपने व्यापार को विशेष उत्तेजन प्रदान किया, एवम् कलकत्ते में लालचन्द अमानमल के नाम से अपनी एक फर्म और खोली। इस फर्म पर चलानी का काम प्रारम्भ किया गया। लिखने का मतलब यह कि आपने व्यापार में बहुत सफलता प्राप्त की। हजारों लाखों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। यही नहीं बल्कि उसका सदुपयोग भी अच्छा किया। आपने संवत् १९३६ में श्री सम्मेद शिखरजी का एक संघ निकाला था। आपका स्वर्गवास संवत् १९५४ में हो गया। आपके सेठ अमानमलजी और मेघराजजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ अमानमलजी और मेघराजजी दोनों भाई भी अपने पिताजी की भाँति योग्य और होशियार रहे। आप लोगों के समय में भी फर्म की बहुत उन्नति हुई। आप लोगों ने संवत् १९५७ में माणक्याचर नामक स्थान पर उपरोक्त नाम से अपनी फर्म की एक शाखा खोल कर जूट कपड़ा एवम् व्याज का काम प्रारम्भ किया। इसी प्रकार संवत् १९६१ में भी सुनामगंज में इसी नाम से फर्म खोल कर उपरोक्त व्यापार प्रारम्भ किया। इसी प्रकार संवत् १९७१ में राम इमरतगंज (मैमनसिंह) में संवत् १९८० में बक्षीगंज (रंगपुर) में, संवत् १९८१ में कालीबाजार (रंगपुर) में अपनी फर्म की ब्रांचें खोली और इन सब पर जूट व्याज और गिरवी का काम प्रारम्भ किया। जो इस समय भी हो रहा है। सेठ अमानमलजी का स्वर्गवास संवत् १९८४ में हो गया। सेठ मेघराजजी इस समय विद्यमान हैं।

सेठ अमानमलजी बड़े कुशल व्यापारी और प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। जोधपुर स्टेट एवम् वहाँ की प्रजा में आपका बहुत सम्मान था। एक बार का प्रसंग है कि गोगोलाव के जाटों का मामला जोधपुर कोर्ट तक हो आया मगर उसका कोई संतोषजनक फैसला नहीं हुआ। इस मामले को आपने पंचायत के

द्वारा बड़ी बुद्धिमानी और होशियारी से निपटा दिया। एक बार बंगाल सरकार ने भी आपके कार्यों की प्रशंसा में प्रमाण पत्र दिया था। आपके स्मारक स्वरूप इस कुटुम्ब ने पावांपुरी, चम्पापुरी एवम् चांदा नामक तीर्थ स्थानों पर कोठड़ियाँ बनवाई हैं। सेठ भमानमलजी के दुलिचन्दजी, छोगमलजी, भैरोंदानजी, मुकुनमलजी, रिखबचन्दजी और हीराचन्दजी नामक छ, पुत्र हैं। सेठ मेघराजजी के सुगनमलजी, रूपचन्दजी और अमरचन्दजी नामक तीन पुत्र हैं। आप सब लोग सज्जन और व्यापार कार्यकर्ता हैं। आप लोगों की ओर से गोगोलाव में सार्वजनिक कार्यों की ओर अच्छी सहायता प्रदान की जाती रहती है। इस कुटुम्ब के व्यापार का हेड आफिस चीलमारी में है। इसके अतिरिक्त कलकत्ता, चीलमारी ब्रांच, माणक्याचर, सुनामगंज, बक्षीगंज, दांताभांगा, काली बाजार, उलीपुर, रामइमरतगंज इत्यादि स्थानों पर भिन्न भिन्न नामों से फर्में खुली हुई हैं। इन सब पर बैंकिंग जूट, कपड़ा, ब्याज, गिरवी और जमींदारी का काम होता है। कलकत्ता का तार का पता Gogolawbasi है।

सेठ रावतमल मुलतानमल बोथरा नागोर

बोथरा सवाई रामजी के पूर्वज बड़लू (मारवाड़) में रहते थे, वहाँ से यह कुटुम्ब अलाय (नागौर के समीप) आया और वहाँ से बोथरा सवाईरामजी के पुत्र रावतमलजी तथा मुलतानमलजी संवत् १९६१ में नागोर आये।

बोथरा सवाई रामजी के रावतमलजी, मुलतानमलजी, जवाहरमलजी, परतापमलजी तथा मोतीचन्दजी नामक ५ पुत्र हुए। इन बन्धुओं में से ५०।६० साल पहिले सेठ जवाहरमलजी चीलमारी (बंगाल) और रावतमलजी रंगपुर (बङ्गाल) गये, तथा वहाँ पाट का व्यापार शुरू किया। धीरे २ संवत् १९६६ में आपकी कलकत्ता तथा बंगाल में कई स्थानों पर दुकानें खुलीं। इन बन्धुओं के स्वर्गवासी होने पर बोथरा सुगनमलजी ने इस कुटुम्ब के व्यापार को अच्छी तरह संभाला। सेठ रावतमलजी का स्वर्ग १९६४ में, मुलतानमलजी का १९८६ की कार्तिक सुदी ४ को, जवाहरमलजी का १९७६ में, मोतीचन्दजी का १९६९ में तथा परतापमलजी का १९५२ में हुआ। सेठ मुलतानमलजी नागौर में धर्मध्यान में तथा परोपकार में जीवन बिताते रहे, आप यहाँ के इज्जतदार व प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। बोथरा रावतमलजी ने रंगपुर में व्यापार के साथ २ सरकारी आफिसरों में इज्जत व नाम पाया, आप ओसवाल भाइयों पर विशेष प्रेम रखते थे।

वर्तमान में इस परिवार में रावतमलजी के पुत्र गोपालमलजी तथा सुगनमलजी, मुलतानमलजी के पुत्र मुकुन्दमलजी, उदयचन्दजी, चन्दनमलजी और लक्ष्मीचन्दजी, बोथरा जवाहरमलजी के पुत्र अमोलख-

चन्दजी, मोतीचन्दजी के पौत्र (विजयमलजी के दत्तक पुत्र) हस्तीमलजी और परतापमलजी के पुत्र मगराजजी हैं। विजयमलजी का १९७५ में केवल १९ साल की वयमें शरीरान्त हुआ इनके नाम पर हस्तीमलजी को दत्तक लिया है। यह कुटुम्ब सम्मिलित रूप में कार्य्य करता है।

बोथरा गोपालमलजी का जन्म १९४४ की फागुन सुदी ४ को सुगनमलजी का १९५० में मुकुन्दमलजी का १९४९ की भादवा वदी १० उदयचन्दजी का १९५४ माघ वदी ९ चन्दनमलजी का १९५८ लक्ष्मीचन्दजी का १९६१, अमोलकचन्दजी का १९५२ पौष वदी ७, और मगराजजी का १९५२ में हुआ। यह परिवार नागोर के ओसवाल समाज में मुख्य धनिक कुटुम्ब है। आपकी यहाँ कई बड़ी २ हवेलियाँ बनी हुई हैं, बंगाल प्रान्त में आपकी दुकानें तथा स्थाई सम्पत्ति है। आप लोग हरेक धार्मिक व अच्छे कार्मों में सहायताएँ पहुँचाते रहते हैं। नागोर की श्वेताम्बर जैन पाठशाला में इस परिवार की विशेष सहायता रहती है श्री चन्दनमलजी शिक्षित व्यक्ति हैं।

गोपालमलजी के पुत्र जसवन्तमलजी मुकुन्दमलजी के पुत्र बस्तीमलजी, लाभचन्दजी व धनराजजी हैं। इसी तरह इस परिवार के लड़कों में केवलचन्दजी हीराचन्दजी हुलाशचन्दजी और रेखचंद हैं।

सेठ लक्ष्मणराजजी बोथरा-बाड़मेर

इस परिवार के मालिकों का मूल निवास स्थान बीकानेर का है। इस परिवार में देदाजी हुए। आपके सेठ नरसिंहजी, जोराजी तथा शिवदानजी नामक पुत्र हुए। सेठ देदाजी और नरसिंहजी फौज की आगमन के समय मोदी खाने का काम करते थे। सेठ नरसिंहजी के सरदारमलजी, मदूमलजी तथा बसकमाजी नामक पुत्र हुए। जोराजी के रूपाजी नामक पुत्र हुए।

सेठ सरदारमलजी के परसुरामजी तथा सागरमलजी नामक पुत्र हुए। इन दोनों भाइयों ने अपना व्यापार अलग २ कर लिया। परसरामजी के पुत्र जुहारमलजी अपना स्वतन्त्र कारवार करते हैं। सेठ सागरमलजी के लक्ष्मणराजजी, जेकचन्दजी तथा हीरालालजी नामक पुत्र हुए। इनमें हीरालालजी जोधाजी के नाम पर दत्तक गये।

सेठ लक्ष्मणराजजी ने सन् १९१७ से २३ तक जोधपुर में वकालत की। वर्त्तमान में आप बाड़मेर में प्रेक्टिस कर रहे हैं। यहाँ पर आप प्रतिष्ठित सज्जन माने जाते हैं।

सेठ मदूलाल भजलाल बोथरा बाड़मेर

इस परिवार के लोगों का मूल निवास स्थान बीकानेर था। कालांतर से यह कुटुम्ब बाड़मेर में

आकर बस गया। इस परिवार में सेठ मदूमलजी हुए। आपकी आरंभिक स्थिति साधारण थी। आप ने अपनी योग्यता से पैसा कमाया और समाज में अपनी प्रतिष्ठा भी स्थापित की। आपका संवत् १९६७ में अंतकाल हुआ। आपके सेठ ब्रजलालजी नामक पुत्र हुए।

सेठ ब्रजलालजी का जन्म संवत् १९५६ में हुआ। आप बाड़मेर के व्यापारिक समाज में मातवर व्यक्ति हैं। आपकी यहाँ पर तीन चार दुकाने हैं और मालानी के जागीरदारों के साथ आपका लेन देन का सम्बन्ध है। आपके पुत्र भगवानदासजी व्यापारिक कामों में भाग लेते रहते हैं।

इस परिवार की तरफ से बाड़मेर में एक धर्मशाला भी बनी हुई है।

मेहता गोपालसिंहजी का खानदान, उदयपुर

मेहता भगवंतसिंहजी के पिता किशनगढ़ नामक स्थान पर निवास करते थे। वहीं से आप यहाँ उदयपुर आये। यहाँ आकर आपने सरकार में सर्विस की। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर महाराणा साहब ने आपको मगरा जिले में 'ढाकल्डा' नामक एक ग्राम जागीर स्वरूप बक्षा। आप यहाँ पर न्याय के कारखाने (सिविलकोर्ट) के हाकिम रहे। आपके बलवन्तसिंहजी नामक एक पुत्र हुए। आप भी प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। आप मगरा जिला और खेरवाड़ा आदि स्थानों पर हाकिम रहे। आपके मेहता मनोहरसिंहजी नामक एक पुत्र हुए। आपका जन्म संवत १९१९ में हुआ। बचपन से ही आप बड़े बुद्धिमान और प्रतिभाशाली व्यक्ति थे। एक बार का प्रसंग है जब कि आप स्कूल में विद्याध्ययन करते थे, महाराणा सज्जनसिंहजी स्कूल का निरीक्षण करने के लिये पधारे। आपका ध्यान तुरंत मेहता साहब की ओर आकृष्ट हो गया। और आपने उसी दिन से मेहताजी को सेटलमेंट आफिसर के पास काम सीखने के लिये भेज दिया। जब आप केवल १६ वर्ष के थे आपको राजनगर की हुकुमत बक्षी गई थी। तब से आप बराबर राजनगर, सादड़ी, जहाजपुर, चित्तौड़ और गिरवा में हाकिम के पद पर रहे। गिरवा में हाकिमी के साथ साथ आपको वहाँ के खजाने का भी काम मिला। इसके पश्चात् आप स्पेशल ड्यूटी में बेगूँ भेजे गये। वहाँ जाकर आपने बागी रिआया को शांत किया। इसी प्रकार बसीसी में भी आपने जाकर शांति स्थापित की। आप इतने लोक-प्रिय होगये थे कि जब शाहपुरा-स्टेट के काछोला नामक परगने में प्रजा बागी होगई थी उस समय शाहपुरा दरबार ने ए० जी० जी के मार्फत आपको वहाँ शांति स्थापनार्थ मांगा था, वहाँ भी आपने शांति स्थापित की।

मेहता मनोहरसिंहजी के कोई पुत्र न होने से पहले तो किशनगढ़ के मेहता चन्द्रसिंहजी के पुत्र सोहनसिंहजी दत्तक लिये गये, मगर आपका स्वर्गवास चार पाँच वर्षों ही में, जब कि आप बी० ए० में पढ़

रहे थे, हो गया। अतएव आपने फिर संवत् १९७५ में जयपुर के मेहता मंगलचन्दजी थाउण्डरी सुपरिं-टेण्डेण्ट के सबसे बड़े पुत्र मेहता गोपालसिंहजी को सोहनसिंहजी के नाम पर दत्तक लिया। मेहता मोहन-सिंहजी का स्वर्गवास सन् १९२३ में जब कि आप बेगूं के प्रजा आन्दोलन को दबाने के लिये भेजे गये थे। वहीं हार्टफेल के कारण हो गया। उदयपुर में यह कायदा है कि जो भी मुत्सुद्दी जागीरदार अपने यहाँ किसी को दत्तक रखे तो पहले उन्हें दरबार में महाराणा को नजराना कर आज्ञा प्राप्त करना पड़ती है, ऐसा नहीं करने से वह जागीर के स्वत्वों से वंचित रहता है। पहले तो यहाँ भी यही हुआ। इसका कारण यह था कि आपकी माताजी के और आपके बीच में झगड़ा चल गया था। करीब ७ साल के पश्चात् महा-राणा फतेसिंहजी के स्वर्गवास हो जाने पर वर्तमान महाराणा साहब श्री भोपालसिंहजी के खाविंदी फरमाकर आपका अंगपत्र मंजूर कर लिया और आपकी प्रायवेट सम्पत्ति पर से कुड़की हटाली।

वर्तमान में इस परिवार में गोपालसिंहजी ही प्रधान हैं। आपका विद्याभ्यास एफ० ए० तक ही हुआ। प्रारम्भ में आप महाराज कुँवार की ओर से पानरवा (भोमर) ठिकाने के मैनेजर नियुक्त हुए। इस बाद आप सादड़ी नामक स्थान पर मैनेजर बनाए गए। इसके पश्चात् भोमर परगने के सबसे बड़े ठिकाने जवास के रावजी के मेयोकालेज में गार्जियन बनाए गये। यहाँ आपने जुडिशियल लाइन की शिक्षा भी प्राप्त करली। जब जवास रावजी को अधिकार मिल गया, तब आप वहाँ के एडवाइज़र नियुक्त हुए। इस समय भी आप उसी काम पर हैं। आप बुद्धिमान, और समाजसुधारक विचारों के सज्जन हैं। आपने अपने पिताजी का मोसर न करके—लोगों के विरोध की कुछ भी पर्वाह न करते हुए—उनके स्मारक में ७०००) उदयपुरी लगा कर स्थानीय विद्याभवन में एक हाल बनवाया है। आपने अपनी दूसरी शादी के समय में किसी प्रकार के पुराने रिवाजों का पालन व जलसे आदि नहीं किये। यहाँ तक कि जिस दिन शादी करने जा रहे थे उस दिन भी आपको देखकर कोई नहीं कह सकता था कि आप शादी करने जा रहे हैं। लिखने का मतलब यह है कि आप सुधार-प्रिय सज्जन हैं।

आपके प्रथम विवाह से दो पुत्र हैं जिनका नाम क्रमशः कुँवर जसवन्तसिंहजी और दलपतसिंहजी हैं।

साह मेघराजजी खजांची का परिवार बीकानेर

इस परिवार का इतिहास सवाईरामजी से शुरू होता है। आप बीकानेर स्टेट में मुकीमात का काम याने स्टेट में तमाखू वगैरह सप्लाय करने का काम करते थे। अतएव इस परिवार वाले मुकीम बोथरा कहलाये! सेठ सवाईरामजी बड़े प्रतिभा सम्पन्न और कारगुजार व्यक्ति थे। आपका स्टेट में

अच्छा सम्मान था। आपको तत्कालीन बीकानेर नरेश ने प्रसन्न होकर एक गाँव जागीर में बक्षा था। आप के जैतमालजी नामक एक पुत्र हुए। आपभी मुकीमात का काम करते रहे। कुछ समय पश्चात् आप को दरबार ने खजाने का काम सौंपा। तब से खजाने का काम आप ही के वंशजों के हाथ में हैं। खजाने ही का काम करने के कारण आपके परिवारवाले खजांची कहलाते हैं।

सेठ जैतमालजी के तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः भोमजी, चतुर्भुजजी और शेरजी था। वर्तमान परिचय सेठ भोमजी के परिवार का है। शेष भाइयों के परिवार के लोग अलग २ रूप से अपना काम काज करते हैं। सेठ भोमजी के छोगजी और मानमलजी नामक दो पुत्र हुए। दूसरे पुत्र मानमल जी दत्तक चले गये। छोगजी के बागजी नामक एक पुत्र हुए। आप दोनों ही पिता-पुत्र अपने पूर्वजों के खजाने के काम को करते रहे। बागजी के संतान न होने से मेघराजजी दत्तक लिये गये।

सेठ मेघराजजी का जन्म संवत् १९१५ में हुआ। जब आप केवल १० वर्ष के थे तब से ही खजाने के काम का संचालन कर रहे हैं। इस समय आपकी आयु ७६ वर्ष की है। इतने वृद्ध होने पर वर्तमान महाराजा साहब बीकानेर आपको अलग नहीं करते हैं। आपके कार्य्यों से दरबार बड़े प्रसन्न हैं। आपको दरबार की ओर से साह की सम्मान सूचक पदवी प्राप्त है। साथ ही गाँव की जागीर के अलावा आपको अलांउस तथा घोड़े की सवारी का खर्च मिलता है। आप समझदार और प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः पूनमचंदजी, अभयराजजी, मुन्नीलालजी और धनराजजी हैं। इन में से पूनमचंदजी और मुन्नीलालजी का स्वर्गवास हो गया है। आप दोनों ही क्रमशः अपने पिताजी के साथ खजाने का तथा कलकत्ते की फर्म का संचालन करते रहे हैं। यह फर्म संवत् १९६४ में कलकत्ते में स्थापित हुई थी। इसका नाम मेसर्स मुन्नीलाल धनराज है। पता ११२ क्रास स्ट्रीट है। यहाँ कपड़े का व्यापार होता है। इस समय इसका संचालन अभयराजजी कर रहे हैं और धनराजजी स्टेट बैंक के ट्रेझरर हैं।

बा० पूनमचन्दजी के माणकचंदजी तथा धनराजजी के शिखरचन्दजी नामक एक २ पुत्र हैं। माणकचन्दजी अपने दादाजी के साथ खजाने का काम करते हैं।

इस परिवार की बीकानेर में अच्छी प्रतिष्ठा है। इस समय चूरू परगने का 'बूंटिया' नामक एक गाँव इस परिवार की जागीर में है।

सेठ कोड़ामल नथमल बोथरा, लूनकरणसर (बीकानेर)

इस परिवार के पुरुष करीब ४०० वर्ष पूर्व मारवाड़ से चलकर लूनकरणसर नामक स्थान पर आकर बसे। इसी परिवार में सेठ मोतीचन्दजी हुए। मोतीचन्दजी के पुत्र आसकरनजी भी वहीं देश में रहकर व्यापार करते रहे। सेठ आसकरनजी के हरकचन्दजी और कोड़ामलजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ हरकचन्दजी और कोड़ामलजी दोनों ही भाई सम्वत् १९३२ के साल बंगाल में गये। वहाँ जाकर वे प्रथम नौकरी करते रहे। इसके पश्चात् सम्वत् १९४५ में आप लोगों ने कालिमपोंग में अपनी एक फर्म मेसर्स हरकचन्द कोढ़ामल के नाम से स्थापित की और इस पर किराने का व्यापार प्रारम्भ किया। आप दोनों ही भाई व्यापार-कुशल और मेधावी सज्जन थे। आपकी व्यापार-कुशलता से फर्म की बहुत तरक्की हुई। आप लोगों का व्यापार भूटानी, तिव्वती, नेपाली और साहब लोगों से होता है। आप दोनों भाइयों का स्वर्गवास हो गया। हरकचन्दजी के कोई पुत्र न हुआ। कोड़ामलजी के तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः जेठमलजी, ठाकरसीदासजी और नथमलजी हैं। इनमें से तीसरे पुत्र नथमलजी अपने चाचा सेठ हरकचन्दजी के नाम पर दत्तक रहे।

वर्तमान में आप तीनों ही भाई फर्म का संचालन कर रहे हैं। आप तीनों ही बड़े योग्य और व्यापार कुशल हैं। आप लोगों ने भी फर्म की अच्छी उन्नति की। आपके समय में ही इस फर्म की एक शाखा कलकत्ता नगर में भी खुली। इस फर्म पर कोड़ामल नथमल के नाम से कपड़े का इम्पोर्ट तथा विक्री का काम होता है। कालिमपोंग में आजकल कोड़ामल जेठमल के नाम से कस्तूरी, ऊनी कपड़ा, ऊन और गल्ले का व्यापार होता है।

इस समय सेठ जेठमलजी के दो पुत्र हैं जिनके नाम गुमानमलजी और सोहनलालजी हैं। ठाकरसीदासजी के पुत्रों का नाम नारायणचन्द्रजी और पूनमचन्दजी हैं। सेठ नथमलजी के पुत्रों के नाम मालचन्दजी, दुलिचन्दजी, धर्मचन्दजी और सम्पतरामजी हैं। अभी ये सब लोग बालक हैं।

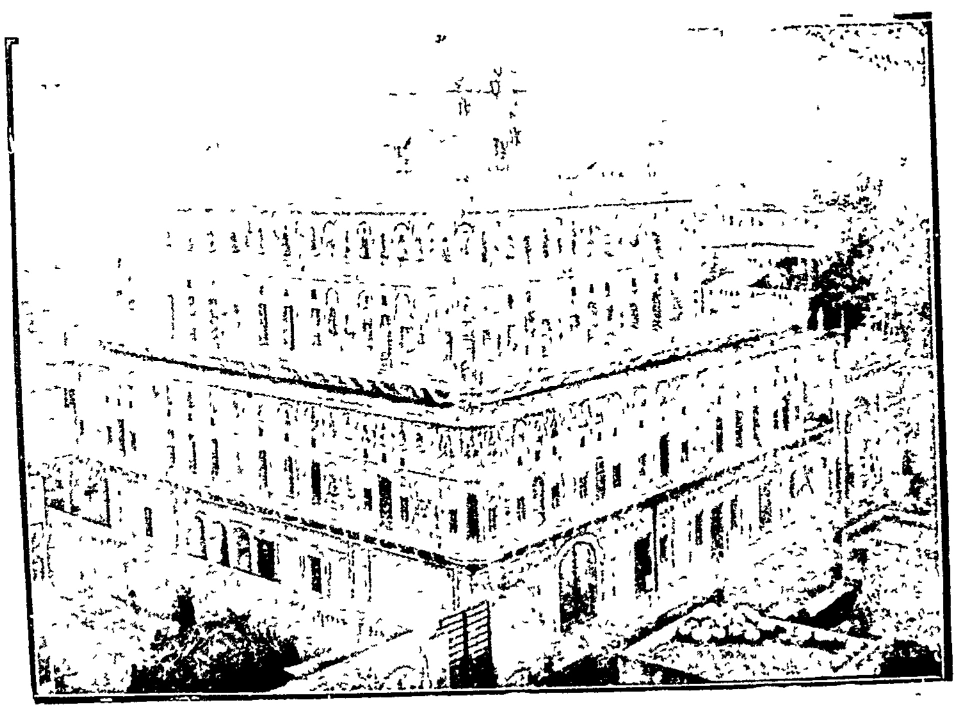
इस परिवार के सज्जन श्री० जैन तेरापंथी श्वेताम्बर धर्मावलम्बीय सज्जन हैं। आप लोगों ने अपने पिताजी, माताजी, दादाजी और दादीजी के नाम पर लूनकरनसर में शहर सारणी की थी, जिसमें आपने बहुत रुपया खर्च किया। लूनकरनसर में इस परिवार की अच्छी प्रतिष्ठा है। वहाँ तथा सरदार शहर में आपकी सुन्दर हवेलियां बनी हुई हैं।



सेठ प्रतापमलजी बोथरा, राजलदेसर.



बाबू सम्पतमलजी बोथरा, राजलदेसर.



हवेली (रुक्मानंद सागरमल बोथरा) चूरू.

सेठ फतेचन्द, चौथमल, करमचन्द बोथरा, राजलदेसर (बीकानेर)

करीब १५० वर्ष पूर्व इस परिवार के पुरुष राजलदेसर में १० मील की दूरी वाले ग्राम छोटड़िया से आये। राजलदेसर में सर्व प्रथम आने वाले व्यक्ति गिरधारीमलजी के पुत्र सेठ फतेचन्दजी थे। संवत् १८६७ में आप व्यापार के निमित्त बंगाल प्रांत के रंगपुर नामक स्थान पर गये। वहाँ जाकर आपने फतेचन्द पनेचन्द के नाम से एक फर्म स्थापित की। जिस समय आपने फर्म स्थापित की उस समय आज कल जैसा सुगम मार्ग नहीं था, अतएव बड़े कठिन परिश्रम से आप करीब ६ माह में राजलदेसर से बंगाल में पहुँचे थे। वहाँ जाकर आपने अपनी एक फर्म स्थापित की। आप व्यापार-चतुर पुरुष थे। आपने व्यापार में अच्छी सफलता प्राप्त की। आप के चार पुत्र हुए, जिनके नाम क्रमशः बालचन्दजी, पनेचन्दजी, चौथमलजी, और हीरालालजी हैं। आप चारों ही भाई पहले तो शामलात में व्यापार करते रहे, मगर फिर अलग अलग हो गये। बालचन्दजी का व्यापार इसी फर्म की सिराजगंज वाली ब्रांच पर रहा। शेष भाइयों का व्यापार रंगपुर ही में रहा।

सेठ बालचन्दजी के हजारीमलजी, पृथ्वीराजजी और भैरोंदानजी नामक तीन पुत्र हुए। आप लोगों का स्वर्गवास हो गया। हजारीमलजी के दो पुत्र हुए जिनके नाम अमोलकचन्दजी और हरकचन्दजी थे। पृथ्वीराजजी के पुत्र मालचन्दजी हुए जो सेठ भैरोंदानजी के यहाँ दत्तक रहे। अमोलकचन्दजी के चार पुत्र दीपचन्दजी, चम्पालालजी, रायचन्दजी और शोभाचन्दजी इस समय विद्यमान हैं। हरकचन्दजी के इस समय हुलासमलजी और आसकरनजी नामक दो पुत्र हैं। इसी प्रकार मालचन्दजी के भी सात पुत्र हैं, जिनके नाम क्रमशः हुलासमलजी, धरमचन्दजी, छगनमलजी, जवरीमलजी, इन्द्रचन्दजी, नेमीचन्दजी और भूरामलजी हैं।

सेठ पनेचन्दजी के पुत्र कालूरामजी का स्वर्गवास हो गया। आपके चन्दूलालजी नामक पुत्र राजलदेसर ही में रहते हैं। आपके भीखमचन्दजी और मोहनलालजी नामक दो पुत्र हैं।

सेठ चौथमलजी इस परिवार में प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए। आपने व्यापार में अच्छी सफलता प्राप्त की। आपके प्रतापमलजी नामक पुत्र हुए। आप मिलनसार हैं। आपके धार्मिक विचार तेरापंथी जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय के हैं। प्रायः आपने सभी हरी छोड़ रखी है। आजकल आप व्यापार के निमित्त कलकत्ता बहुत कम आते जाते हैं। आपके सम्पतमलजी नामक एक पुत्र हैं। आप ही अपने व्यापार का संचालन करते हैं। आपके भँवरीलालजी और कन्हैयालालजी नामक दो पुत्र हैं। सेठ प्रतापमलजी की दो पुत्रियों ने जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय में दीक्षा ले रखी है। आपका व्यापार इस समय कलकत्ता में सम्पतमल भँवरीलाल के नाम से १५ नारयल लोहिया लेन में जूट और हुंडी चिट्ठी का होता है।

इसी फर्म की एक ब्रॉंच यहाँ मूंगापट्टी में और है जहाँ प्रतापमल बोथरा के नाम से बर्तनों का व्यापार होता है। इसी प्रकार रंगपुर—माहीगञ्ज—में फतेचन्द प्रतापमल और नबावगंज में सम्पतमल बोथरा के नाम से बर्तन, जूट, और जमींदारी का व्यापार होता है। मेमनसिंह में आपके मकानात बने हैं।

सेठ हीरालालजी भी पहले तो अपने भाई के साथ व्यापार करते रहे, मगर फिर नहीं बनी, अतः अलग-अलग हो गये। आपके कर्मचन्दजी और मगराजजी नामक दो पुत्र हुए। आप लोग भी फर्म का संचालन करते रहे। सेठ कर्मचन्दजी के मिर्जामलजी और सोहनलालजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ मिर्जामलजी सम्वत् १९९० के साल अलग हो गये और गायबंधा में जूट का व्यापार करते हैं। आपके चन्दनमलजी और जयचन्दलालजी नामक दो पुत्र हैं। सेठ मगराजजी के पुत्र हंसराजजी आजकल पाटकी दलाली का काम करते हैं। इस परिवार के लोग तेरापंथी श्वेताम्बर जैन धर्मानुयायी हैं।

सेठ रुक्मानन्द सागरमल, चूरू (बीकानेर)

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवासस्थान जालोर (मारवाड़) का है। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय के तेरापंथी आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार वाले जालोर से मंडोवर कोड्मदेसर, बीकानेर आदि स्थानों में होते हुए रिणी में आकर बसे। इस परिवार में यहाँ पर पनराजजी हुए। सेठ पनराजजी के सुलतानचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। आप दोनों भाई संवत् १८८० में चूरू चले गये और वहीं अपनी हवेलियाँ वगैरह बनवाईं।

सेठ सुलतानचन्दजी के गणेशदासजी और गणेशदासजी के मिलापचन्दजी नामक पुत्र हुए। आप लोग भोपाल नामक स्थान पर सराफी का कारबार करते रहे। आप सब लोगों का स्वर्गवास हो गया है। सेठ मिलापचन्दजी के सेठ रुक्मानन्दजी एवं सागरमलजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ रुक्मानन्दजी का जन्म संवत् १९३२ में और सागरमलजी का संवत् १९३५ में हुआ। आप ही दोनों भाइयों ने अपने हाथों से हजारों रुपये कमाये हैं। प्रारम्भ में आपकी स्थिति साधारण थी। आप दोनों भाई क्रमशः संवत् १९४९ तथा संवत् १९५१ में कलकत्ता व्यापार निमित्त गये। यहाँ पर आपने पहले पहल गुमास्तागिरी और फिर कपड़े की दलाली का काम किया। इन कार्यों में आप लोगों को काफी सफलता मिली और सं० १९६५ में आपने कलकत्ता में 'रुक्मानन्द सागरमल' के नाम से कपड़े की दुकान स्थापित की। संवत् १९७० में इस फर्म पर 'मेसर्स सदासुख गंभीरचन्द' के साझे में जापान और इंग्लैण्ड से कपड़े का डायरेक्ट इम्पोर्ट करना प्रारम्भ किया। तदन्तर संवत् १९८२ से आप लोगों ने



सेठ रुक्मानंदजी बोथरा (रुक्मानंद सागरमल) कलकत्ता



सेठ सागरमलजी बोथरा (रुक्मानंद सागरमल) कलकत्ता



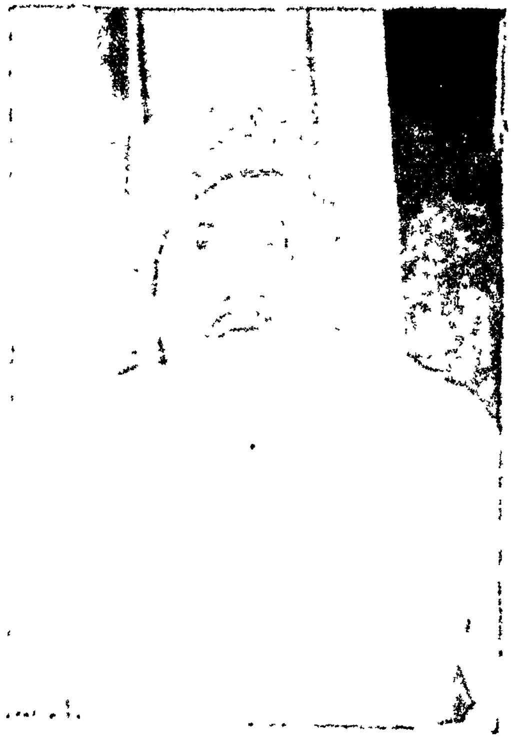
कुं० जयचंदलालजी बोथरा (रुक्मानंद सागरमल) कलकत्ता



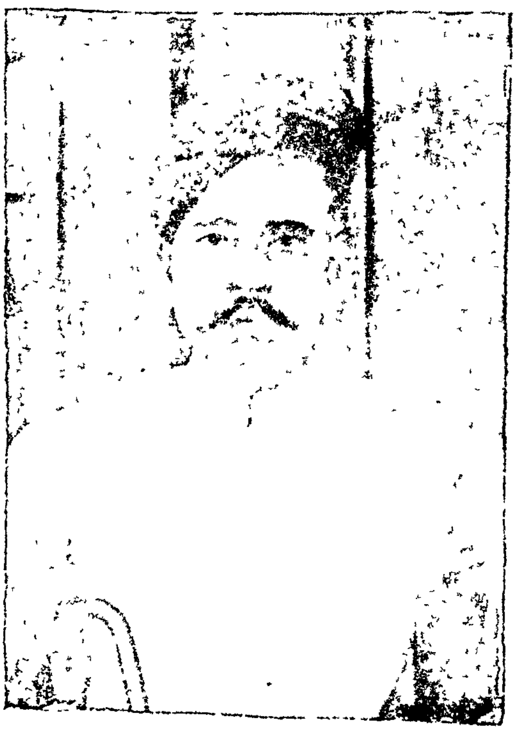
कुँ० हुलासचंदजी बोथरा (रुक्मानंद सागरमल) कलकत्ता



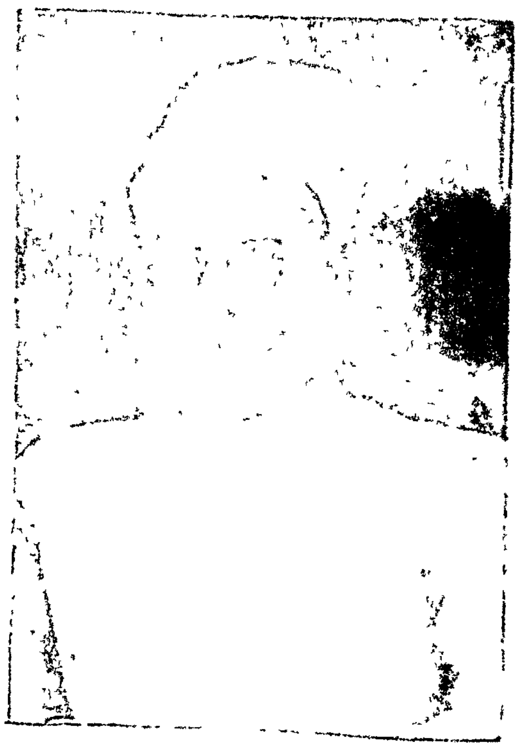
सेठ ताराचन्दजी गेलड़ा (पूनमचंद ताराचंद) मद्रास.



सेठ आसकरणजी बोथरा (चुन्नीलाल प्रेमचंद) सरदारशहर.



सेठ जेठमलजी बोथरा (चुन्नीलाल प्रेमचंद) सरदारशहर.



सेठ बुधमलजी बोथरा (चुन्नीलाल प्रेमचंद) सरदारशहर.

अपने नाम से इम्पोर्ट करना शुरू कर दिया। कपड़े के इस इम्पोर्ट व्यवसाय में आपको बहुत सफलता प्राप्त हुई। स्वदेशी वस्त्रान्दोलन के समय से आप लोगों ने कपड़े का इम्पोर्ट बिजिनेस बन्द कर दिया है। इस समय आपकी फर्म पर सराफी जूट और जमींदारी का काम होता है।

सेठ रुक्मानन्दजी के जयचंदलालजी नामक एक पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९४९ में हुआ। आप इस समय फर्म के व्यापार कार्य्य में भाग लेते हैं। आपके बालचन्दजी, शुभकरणजी, बच्छराजजी और कन्हैयालालजी नामक चार पुत्र हैं।

सेठ सागरमलजी के हुलासचन्दजी, मदनचन्दजी, पूनमचन्दजी एवं इन्द्रचन्द्रजी नामक चार पुत्र हुए हैं। बाबू हुलासचन्दजी बड़े उत्साही तथा फर्म के काम में सहयोग लेते हैं। आपके हेमराजजी एवं ताराचन्दजी नामक दो पुत्र हैं।

इस परिवार की ओर से चूरु (बीकानेर-स्टेट) में मुसाफिरों के आराम के लिये स्टेशन के पास एक नोहरा बनवाया गया है जिसमें करीब बीस हजार रुपया लगा होगा। आप लोग इस प्रकार के अन्य कार्य्यों में भी भाग लेते रहते हैं। आपका व्यापार इस समय कलकत्ता में 'रुक्मानन्द सागरमल' के नाम से २०१ हरिसन रोड में ब्याज, जूट और बैङ्किंग का होता है। आपके तार का पता 'Bitrag' और टेलीफोन नं० 4165 B. B. है। इसके अतिरिक्ति 'जयचंदलाल हुलासचंद' के नाम से दीनाजपुर (पुलहाट) में एक चाँवल का मिल है और डाबवाली मंडी (हिसार) में मे० बालचन्दजी बोथरा के नाम से किराने व आढ़त का काम काज होता है। कलकत्ता में आप लोगों के तीन मकानात हैं जिनसे किराये की आमदनी होती है तथा देश में भी आपकी सुन्दर हवेलियाँ बनी हुई हैं।

सेठ चुन्नीलाल प्रेमचन्द बोथरा सरदारशहर

इस परिवार वालों का मूल निवास राजपुरा (बीकानेर) का है। करीब ४५ वर्ष पूर्व इस परिवार के सेठ उमचंदजी बहुत साधारण स्थिति में यहाँ आये। आपके सेठ चुन्नीलालजी और सेठ प्रेमचन्दजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ चुन्नीलालजी का जन्म संवत् १९०९ में हुआ। आपका विवाह मलानिया निवासी सेठ प्रेमचंदजी सेठी की सुपुत्री तुलसी बाई के साथ हुआ जिनका स्वर्गवास संवत् १९८७ में हो गया। सेठ चुन्नीलालजी बड़े प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। आपने पहले पहल कलकत्ता जाकर सदाराम पूरनचन्द भैरोंदान भंसाली के यहाँ नौकरी की। पश्चात् संवत् १९६० में आपने अपने हाथों से अपनी निज की

एक फर्म स्थापित की तथा इसे बहुत उन्नति पर पहुँचाया। साथ ही भैरोंदानजी वाली फर्म पर जब आप उसमें मुनीमात का काम करते थे सारी उन्नति आप ही के द्वारा हुई। आपका स्वर्गवास संवत् १९८३ में हो गया। आपके तीन पुत्र हुए। जिनके नाम क्रमशः बा० जसकरनजी, जेठमलजी और बुधमलजी हैं। आप तीनों ही भाई समझदार एवम् सज्जन व्यक्ति हैं। आप लोगों का व्यापार सामलात में कलकत्ता में १९ सेनागोग स्ट्रीट में जूट तथा आढ़त का होता है। तार का पता "Free holder" है।

सेठ प्रेमचंदजी भी पहले अपने भाई के साथ व्यापार करते रहे मगर आपके स्वर्गवास होजाने पर आपके पुत्र फर्म से अलग हो गये एवम् अपना स्वतंत्र व्यापार करने लगे। आपके पुत्रों का नाम सेठ भैरोंदानजी एवम् सेठ हीरालालजी हैं। आप भी मिनलसार व्यक्ति हैं। सेठ भैरोंदानजी के गुलाबचन्दजी झूमरमलजी, विरदीचन्दजी और कन्हैयालालजी नामक चार पुत्र हैं। आप लोगों का व्यापार बिहारीगंज (भागलपुर) बरेड़ा (पूर्णियाँ) में जूट का होता है।

यह परिवार जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय का मानने वाला है।

श्री नथमलजी बोथरा इन्दौर

श्रीयुत नथमलजी का संवत् १९४२ में जन्म हुआ। आप इन्दौर के सुप्रसिद्ध स्व० कोठारी गुलाबचंदजी के भानेज हैं। उक्त कोठारीजी ने ही बाल्यावस्था से आपका लालन पालन किया और उन्होंने स्थावर, जङ्गम जायदाद का आपको स्वामी बनाया।

श्रीयुत गुलाबचंदजी कोठारी का आप पर बड़ा प्रेम था और आप ही ने आपको हिन्दी, मराठी और अंग्रेजी की शिक्षा दिलवाई। उक्त कोठारी साहब उस समय इन्दौर राज्य के खजांची थे। आपने अपने भाणेज श्री बोथराजी को अपने पास रख कर उन्हें आफीस के काम में होशियार कर दिया। कार्य्य का अनुभव प्राप्त करने के कुछ वर्ष बाद श्रीयुत बोथराजी इन्दौर राज्य के डेप्यूटी खजांची नियुक्त हुए। इस कार्य्य को आपने बड़े ही उत्तमता के साथ किया जिसकी प्रशंसा उच्च अफसरों ने की। कई वर्ष तक इस पद पर काम करने के बाद आप इंदौर राज्य के डेप्यूटी अकाउन्टेन्ट जनरल हुए। वहाँ भी आपने अपनी अच्छी कार्य्य कुशलता दिखलाई। इसके बाद लगभग ईसवी सन् १९२७ में आप २५०) मासिक वेतन पर मिलिटिरी सेक्रेटरी हुए। इन्दौर राज्य के फौजी विभाग को आपने इतनी उत्तमता के साथ संगठित किया कि जिसकी प्रशंसा तत्कालीन कमान्डर-इन-चीफ तथा अन्य उच्च अफसरों ने की। आपने फौजी विभाग में नवीन जीवन सा डाल दिया। ईसवी सन् १९३३ में आपने अपने पद से अवसर ग्रहण किया।

आपको इस समय इन्दौर राज्य से पूरी पेंशन मिलती है। इस समय आप कोयले के व्यवसाय (Coal Business) में लगे हुए हैं।

सेठ कालूराम अमरचंद बोथरा, नवापारा (राजिम)

इस कुटुम्ब का खास निवास समराऊ (जिला जोधपुर) में है। संवत् १९२४ में बोथरा अमरचंदजी देश से ऊँटों के द्वारा राजनाँद गाँव होते हुए ३॥ मास में राजिम आये तथा यहाँ उन्होंने रघुनाथदास बालचन्द चौपड़ा लोहावट वालों की दुकान पर मुनीमात की। संवत् १९३८ में आपने अपना घरू काम-काज शुरू किया। तथा व्यापार में सम्पत्ति उपार्जित कर अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाई। आप रायपुर डिस्ट्रिक्ट कौंसिल और लोकल बोर्ड के २० सालों तक मेम्बर रहे। नागपुर के चीफ़कमिश्नर ने १९१६ में आपको एक सार्टिफिकेट दिया। रायपुर प्रांत के आप गण्यमान्य व्यक्ति थे। आपके पुत्र भीकचन्दजी, हस्तीमलजी तथा ताराचन्दजी का जन्म क्रमशः १९५०,५३ तथा ६२ में हुआ।

बोथरा अमरचन्दजी राजिम के प्रतिष्ठित व्यापारी हैं। आप बन्धुओं ने, अपनी बहिन के स्वर्गवासी होने के बाद उनकी रकम ओशियाँ जैन बोर्डिंग को दी। समराऊ गाँव तथा स्टेशन के मध्य में एक कुआ बनवाया, इसी तरह धार्मिक कामों में सहयोग लिया। आपके यहाँ उपरोक्त नाम से माल गुजारी तथा व्यापार होता है।

बोथरा अमरचन्दजी के छोटे भ्राता अलसीदासजी के पुत्र जीवनदासजी बोथरा उत्साही युवक हैं। आप राष्ट्रीय कार्य करने के उपलक्ष में १९३० तथा ३२ में छह-छह मास के लिये २ बार जेल यात्रा कर चुके हैं।

सेठ मोतीचन्द मनोहरमल बोथरा, इगतपुरी (नाशिक)

इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवासस्थान तापू (ओशियाँ के समीप-मारवाड़) का है। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी आम्नाय को माननेवाले हैं। इस परिवार में सेठ थानमलजी हुए। आपके साहबचन्दजी तथा साहबचन्दजी के आसकरणजी, मोतीचन्दजी और मनोहरमलजी नामक पुत्र हुए। इनमें से सेठ मोतीचन्दजी और मनोहरमलजी संवत् १९२४ में व्यापार निमित्त इगतपुरी आये। आप दोनों भाइयों ने अपनी व्यापार-चातुरी से एक फर्म स्थापित की और उसकी बहुत उन्नति की। सेठ

आसकरणजी का स्वर्गवास सं० १९८५ में, सेठ मोतीचन्दजी का संवत् १९७५ में तथा सेठ मनोहरमलजी का संवत् १९५९ में हुआ।

सेठ आसकरणजी के दौलतरामजी तथा दौलतरामजी के बस्तीमलजी नामक पुत्र हुए। सेठ दौलतरामजी का संवत् १९६३ में स्वर्गवास हो गया है। सेठ मोतीचन्दजी के लादूरामजी एवं मूलचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से लादूरामजी अपने काका मनोहरमलजी के यहाँ पर गोद गये।

सेठ लादूरामजी का जन्म संवत् १९४५ में हुआ। आप समझदार और प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपकी नाशिक व खानदेश की ओसवाल समाज में अच्छी प्रतिष्ठा है। आपके चम्पालालजी तथा वंशीलालजी नामक दो पुत्र हैं। चम्पालालजी दुकान के काम को संभालते हैं। सेठ मूलचन्दजी का जन्म संवत् १९५४ में हुआ। आप भी प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। सेठ बस्तीमलजी के गणेशमलजी नामक पुत्र हैं। आप लोगों का मेसर्स मोतीचंद मनोहरमल के नाम से लेन-देन का काम काज होता है।

लाला शिब्बूमलजी जैन-चोथरा का खानदान, फरीदकोट

यह खानदान करीब २०० वर्ष पहले से ईसेखां के कोट (फरीदकोट) से फरीदकोट में आकर निवास करने लगा। इस खानदान में लाला मयमलजी हुए। आप फरीदकोट स्टेट के खजांची रहे। आपके लाला शिब्बूमलजी और नंदूमलजी नामक दो पुत्र हुए।

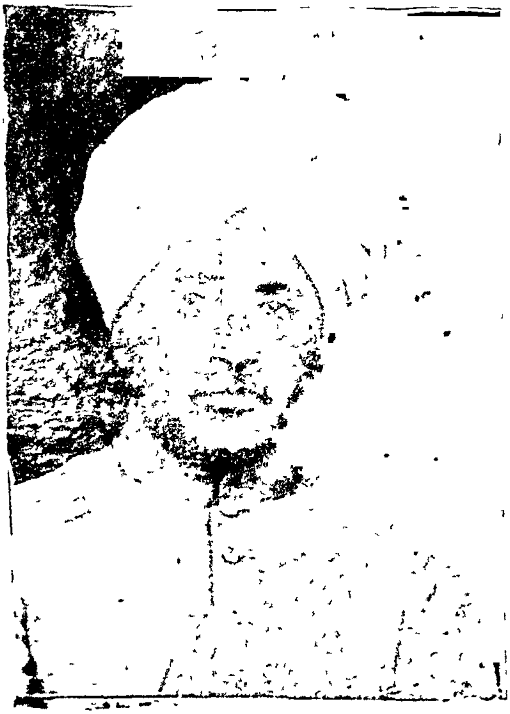
लाला शिब्बूमलजी बड़े लोकप्रिय सज्जन थे। आप यहाँ की स्टेट के ट्रेझरर भी रहे हैं। आप पर यहाँ के तत्कालीन महाराजा विक्रमसिंहजी की बड़ी कृपा रहा करती थी। आपके स्वर्गवासी होजाने के समय संवत् १९६१ में आपका शव किले के दरवाजे के अंदर लाया गया, और उस समय आपके मृतदेह का वहाँ के महाराजा ने खुद आकर फोटो लिवाया। आपके लिये, ऑइनाए ब्रॉड वंश फरीदकोट स्टेट हिस्ट्री पृष्ट ६९७ में लिखा है कि "क़दीमों की क़दर आफजाई में यहाँ तक बदिले इल्तफात फरमाया कि अगर उनमें से कोई आलिमे जावदानी को चल बसा तो उनके जनाजे की वो इज्जत की जिसकी तमन्ना ज़िंदे हजार जान से करे"। लाला शिब्बूमलजी के लाला देवीदासजी नामक पुत्र हुए। आप भी फरीदकोट स्टेट के तोशे खाने का काम संवत् १९७० तक करते रहे। आपका संवत् १९८९ में स्वर्गवास हुआ। इस समय आपके पुत्र लाला बालगोपालजी, कृष्णगोपालजी, विष्णुगोपालजी उर्फ प्यारेलालजी विद्यमान हैं। लाला कृष्णगोपालजी फरीदकोट स्टेट में मुलाजिम हैं। आप होशियार तथा मिलनसार सज्जन हैं।



रा० ब० सेठ लखमीचंदजी बोथरा, कटंगी.



स्व० सेठ अमरचन्दजी बोथरा, नवापाड़ा, राजिम.



लाला रूपलालजी जैन बोथरा, फरीदकोट.



बा० किशोरीलालजी जैन, B. A. LL. B., फरीदकोट.

लाला रूपलालजी जैन, फरीदकोट

इस खानदान के पूर्वज लम्बे समय से फरीदकोट में ही निवास करते हैं। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर समाज के स्थानकवासी आम्नाय को मानने वाले हैं। इस परिवार में लाला मोतीरामजी हुए। लाला मोतीरामजी के लाला सोभागमलजी नामक पुत्र हुए। आप लोग फरीदकोट में ही व्यापार करते रहे। सोभागमलजी के लाला रूपलालजी नामक पुत्र हुए।

लाला रूपलालजी का जन्म संवत् १९३९ में हुआ। आपने सन् १९०० में फरीदकोट में अंग्रेजी का इम्तहान दिया और फिर नौकरी करने लगे। आप वर्तमान में फरीदकोट नरेश के रीडर (पेशकार) हैं। इसके अतिरिक्त आप स्थानीय जैन सभा के प्रेसिडेन्ड, श्री जैनेन्द्र गुरुकुल पंचकूला की मेनेजिंग कमेटी के प्रेसिडेण्ट, स्थानीय जैन कन्या पाठशाला के मैनेजर, एस० एस० जैन सभा पंजाब के मेम्बर तथा अमृतसर टेंपरंस सोसाइटी के व्हाइस प्रेसिडेण्ट हैं। आपका स्वभाव बड़ाही सरल है।

लाला रूपलालजी के देवराजजी और हंसराजजी नामक दो पुत्र हैं। लाला देवराजजी इस वर्ष बी. ए. एवं हंसराजजी इस समय मेट्रिक की परीक्षा में बैठे हैं। लाला रूपलालजी बारह व्रतधारी श्रावक हैं, एवं चतुर्थ व्रत का आपको नियम है।

बोथरा परिवार फरीदकोट

बोथरा खानदान के व्यक्तियों में बोथरा गुजरातीमलजी संवत् १८४५-४६ में रियासत की ओर से अंग्रेजी सेना को मुदकी की पहली लड़ाई के समय हाथियों पर रसद पहुँचाते थे। उस समय फरीदकोट स्टेट ने बृटिश सेना को इमदाद पहुँचाई थी। इस सम्बन्ध में ऑहनाएब्राड वंश हिस्सा नं० ३ के पृष्ट ५४४ फरीदकोट स्टेट हिस्ट्री में लिखा है कि "इंडेंट के मुताबिक तमाम जिंसें फिलफोर हाथियों और ऊँटों पर लदवा कर गुजरातीमल साहुकार के मार्फत मौका जरूरत पर पहुँचा दी गई।" इसी तरह इस ख्यात के पृष्ट ६४४ में लिखा है कि "अगरचे खजांची भावड़ा*कौम में से इंतखाब करके खजाना और तोसाखाना के तहवील बनाये हुए थे"। इससे मालूम होता है कि यहाँ के बोथरा जैन समाज ने लम्बे समय तक स्टेट के खजाने का काम किया था। इनमें मुख्य लाला मूलामलजी, लाला शिब्बूमलजी, लाला देवीदासजी, लाला गोपीरामजी बोथरा, आदि हैं। इसी प्रकार लाला भीकामलजी गधैयाजी स्टेट खजाने का काम करते रहे।

---

* पंजाब प्रान्त में ओसवाल आदि जैन मतावलम्बियों को "भावड़ा" के नाम से बोलते हैं।

लाला गोकुलमलजी व रघुनाथदासजी फरीदकोट महाराजा बलवीरसिंहजी के प्राइवेट खजांची रहे थे। आप दोनों मौजूद हैं। चौधरी हरभजमलजी स्थानीय म्यु० के वाइसप्रेसिडेंट थे। लाला मुंशीरामजी, चौधरी हैं। इसी तरह लाला परमानंदजी, पालामलजी व उत्तमचन्दजी का स्टेट खजाने से ताल्लुक रहा है।

बाबू किशोरीलालजी जैन, बोथरा—फरीदकोट (पंजाब)

लाला जातीमलजी साहुकारे का काम करते थे। इनके हरभजमलजी वसंतामलजी, सोनामलजी व चांदनरायजी नामक ४ पुत्र हुए। लाला हरभजमलजी फरीदकोट म्यु० के वाइस प्रेसिडेंट तथा शहर के चौधरी थे। उमर भर आप सरकारी कामों में सहयोग देते रहे। १९१४ के युद्ध में रिक्रूट भरती कराने में आपने इमदाद दी। १९८२ में आप गुजरे। आपके भाई धन्धा करते रहे।

लाला सोनामलजी के पुत्र लाला किशोरीमल जी जैन बी० ए० से सन् १९२७ में एल० एल० बी० की डिगरी हासिल की। आप गुरुकुल पंच कूला में १॥ साल तक अधिष्ठाता रहे। तथा १९२३ से ६ सालों तक आफ़ताव जैन के सहायक सम्पादक तथा सम्पादक रहे।

सेठ नथमल जीवराज बोथरा, मद्रास

इस परिवार के पूर्व पुरुष पहले पहल खेजडले में रहते थे। वहाँ से आप लोग सरियारी और फिर आउआ ठाकुर के प्रयत्न से चकपटिया (सोजत) में लाये गये। वहाँ पर आप लोगों को नगर सेठ की पदवी देकर उक्त ठाकुर साहब ने सम्मानित किया। आप श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय को मानने वाले हैं।

इस खानदान में सेठ आकाजी हुए। आपके मुकनाजी और मुकनाजी के नथमलजी नामक पुत्र हुए। आप लोग वहाँ के ठिकाने के कामदारी का काम करते रहे। सेठ नथमलजी के पुत्र जीवराजजी हुए।

सेठ जीवराजजी का जन्म संवत् १९२६ में हुआ था। आप संवत् १९५८ में मद्रास आये और यहाँ आकर पट्टालमसूला गेन्सरोड में अपनी फर्म स्थापित की। आप संवत् १९६३ में मारवाड़ में स्वर्गवासी हुए। आपके केशरीमलजी, बख्तावरमलजी तथा पन्नालालजी नामक तीन पुत्र हैं। आप तीनों भाइयों का जन्म क्रमशः संवत् १९४४, १९४८ और १९५१ का है। आप तीनों इस समय सम्मिलित रूप से ही व्यापार करते हैं। आप लोगों ने अपनी फर्म की ठीक उन्नति की है।

सेठ बख्तावरमलजी के बीसूलालजी नामक एक पुत्र हैं। आप की फर्म पर मेसर्स जीवराज केशरीमल नाम पड़ता है।

रायबहादुर सेठ लखमीचंदजी बोथरा, कटंगी (सी. पी.)

इस दूकान का स्थापन संवत् १८९५ में सेठ गोकुलचन्दजी बोथरा ने अपने निवास स्थान माताजी की देशनोक (बीकानेर-स्टेट) से आकर कटंगी में किया। आप कपड़े का कामकाज करते हुए संवत् १९४२ की पोष सुदी १४ को स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र लखमीचन्दजी हैं।

बोथरा लखमीचन्दजी बालाघाट डिस्ट्रिक्ट के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आप बालाघाट डिस्ट्रिक्ट बोर्ड तथा लोकल बोर्ड के ४० साल तक मेम्बर रहे, ४० सालों तक कटंगी सेनीटेशन कमेटी के प्रेसिडेण्ट रहे। सन् १९०३ से आप कटंगी-बेंच के सैकण्ड क्लास ऑनरेरी मजिस्ट्रेट हैं। आप के मकान पर ही कोर्ट भरती है, तथा आपके सिवाय कटंगी में दूसरे मजिस्ट्रेट नहीं है। आपने यहाँ एक जैन मन्दिर बनवाया है। सन् १९०० में आप से प्रसन्न होकर भारत सरकार ने आपको रायबहादुर का सम्मान बख्शा है आपके यहाँ काश्तकारी तथा मालगुजारी का काम होता है। आपके एक पुत्र हैं जिनका नाम श्रीयुत देवीचंदजी हैं।

सेठ नथमल जुगराज, बोथरा दुर्ग (सी. पी.)

इस दुकान के मालिक तींवरी (मारवाड़) के निवासी हैं। लगभग १८ साल पहिले सेठ नथमलजी बोथरा ने इस दुकान का स्थापन किया, तथा व्यापार को आपके ही हाथों उन्नति प्राप्त हुई। आपने परिश्रम करके दुर्ग में मारवाड़ी हिन्दी स्कूल बनवाया और अपनी ओर से भी काफी इमदाद पहुँचाई आप समझदार पुरुष थे। संवत् १९९० के ज्येष्ठ मास में आपका शरीरावसान हुआ।

वर्तमान समय में इस दूकान के मालिक सेठ नथमलजी के पुत्र जुगराजजी तथा हणुतमलजी हैं। आपके यहाँ कपड़ा, चांदी, सोना और साहूकारी व्यवहार होता है।

दस्साणी

इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवास स्थान मंडोवर का था। वहाँ से आप लोग कोड़मदेसर आकर बसे। उस समय इस परिवार में सेठ नागरपालजी के पुत्र नागदेवजी थे। आपको राव बीकाजी कोड़मदेसर से बीकानेर ले गये। सेठ नागदेवजी के बच्छराजजी, पासूजी, जूणोजी, कल्याणजी, रतनसीजी, डूंगरसीजी, चौवसीजी, दासुसाजी, और अजबोजी नामक नौ पुत्र हुए। इनमें से यह परिवार दासुसाजी के वंशज होने से दस्साणी के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

बीकानेर का दस्साणी परिवार

सेठ दासुजी के खेतसीजी, चांदमलजी, पदमसीजी, और मांढणजी नामक चार पुत्र हुए। यह परिवार पदमसीजी से सम्बन्ध रखता है। पदमसीजी के नेणदासजी और अगरसेनजी नामक दो पुत्र-हुए। नेणदासजी के बाद क्रमशः तिलोकचन्दजी, सांवन्तरामजी व हंसराजजी हुए। हंसराजजी के सूरज मल व जेठमलजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ सूरजमलजी के संतोपचन्दजी, रामसिंहजी, फूंदराजजी, ज्ञान-मलजी और सवाईसिंहजी नामक पाँच पुत्र हुए।

सेठ ज्ञानमलजी का परिवार

आपके जीवनदासजी तथा अवीरचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। आप दोनों भाइयों का जन्म क्रमशः सं० १८६१ व १८६४ का था। आप लोग व्यापार कुशल व्यक्ति थे। आप लोग व्यापार निमित्त बिदनूर, वेतूल आदि स्थानों को गये। वहाँ पर आपने पहले पहल सर्विस की और फिर अपनी स्वतन्त्र फर्मे मेसर्स जीवनदास लखमीचन्द तथा अवीरचन्द बीजराज के नाम से स्थापित की। इन फर्मों के व्यव-साय में आप लोगों के हाथों से खूब वृद्धि हुई। सेठ जीवनदासजी संवत् १९४० के श्रावण में तथा सेठ अवीरचन्दजी संवत् १९४० के कार्तिक में स्वर्गवासी हुए। सेठ जीवनदासजी के पन्नालालजी, लखमीचन्दजी एवं मुन्नीलालजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से आपके प्रथम दो पुत्रों का स्वर्गवास संवत् १९५२ तथा १९७२ में होगया। सेठ लखमीचन्दजी के फतेचन्दजी नामक पुत्र हुए।

वर्त्तमान में इस परिवार में सेठ मुन्नीलालजी प्रधान व्यक्ति हैं। आप व्यापार कुशल एवं मिलन-सार सज्जन हैं। आपके नथमलजी नामक पुत्र हैं जो अवीरचन्दजी के परिवार में दत्तक गये हैं। सेठ फतेचन्दजी के अभयराजजी तथा सोभाचन्दजी नामक दो पुत्र हैं।

सेठ अबीरचन्दजी के बीजराजजी तथा चांदमलजी नामक दो पुत्र हुए। आप लोग भी व्यापार कुशल सज्जन थे। आपका स्वर्गवास क्रमशः संवत् १९५३ व १९७५ में हुआ। सेठ चांदमलजी के दीप-चन्दजी नामक एक पुत्र हुए। आप बाल्यावस्था में ही स्वर्गवासी हुए। आपकी धर्मपत्नी श्री इन्द्रकुँवर ने जैन स्थानकवासी सम्प्रदाय में सं० १९६७ में दीक्षा ग्रहण की।

सेठ चांदमलजी के कोई पुत्र न होने से आपने अपने भाई मुन्नीलालजी के पुत्र नथमलजी को दत्तक लिया। आप नवयुवक विचारों के पढ़े लिखे सज्जन हैं। आप बड़े सरल स्वभाव वाले तथा मिलनसार हैं। आपके भँवरलालजी नामक एक पुत्र है।

आपकी फर्म पर आठनूर (बदनूर–वेतूल) में बीजराज चांदमल के नाम से जमींदारी, हुंडी चिट्ठी, बेंकिंग, सोना चांदी का तथा कलकत्ते में चांदमल नथमल के नाम से ५९ सूता पट्टी में विलायती धोती का व्यापार होता है।

फूँदराजजी का परिवार

सेठ फूंदराजजी के शुभकरनजी, (कोड़ामलजी) जोरावरमलजी और मदनचन्दजी नामक तीन पुत्र हुये। सेठ मदनचन्दजी के हीरालालजी, माणकचन्दजी, हरकचन्दजी, सुगनचन्दजी, मूलचन्दजी, केवलचन्दजी तथा सर्वसुखजी नामक सात पुत्र हुए। सेठ केवलचन्दजी का परिवार गरोठ (इन्दौर स्टेट) में तथा अन्य सभी भाइयों का परिवार बीकानेर में ही निवास करता है।

सेठ कोड़ामलजी का परिवार रायपुर (सी० पी०) में है। सेठ जोरावरमलजी ने मदनचन्दजी के दूसरे पुत्र माणकचन्दजी को दत्तक लिया। आपके नथमलजी, बागमलजी और मेघराजजी नामक पुत्र हैं। इनमें बागमलजी का स्वर्गवास होगया है। आपके पुत्र दुलीचन्दजी नथमलजी के यहाँ गोद गये हैं। मेघराजजी के जोगीलालजी तथा डूँगरमलजी नामक पुत्र हैं।

सेठ हरकचन्दजी के मुन्नीलालजी व भेरोंदानजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से प्रथम दत्तक चले गये। आपके रतनलालजी नामक पुत्र हैं। भेरोंदानजी के जेठमलजी, पूनमचन्दजी, भँवरलालजी एवं सम्पतलालजी नामक पुत्र हैं। सेठ सुगनचन्दजी के परिवार में इस समय कोई नहीं है। सेठ मूल-चन्दजी के बुलाखीचन्दजी नामक पुत्र हैं। आप धार्मिक प्रकृति के पुरुष हैं। आप अपने कलकत्ते के व्यवसाय को वयोवृद्ध होने के कारण समेट कर बीकानेर में शांति लाभ कर रहे हैं। आपके सोहनलाल जी नामक एक पुत्र हुए, जिनका स्वर्गवास हो गया है।

मुहणोत

मुहणोत गौत्र की उत्पत्ति—मुहणोतों की उत्पत्ति राठौड़ वंश से हुई है। मुहणोतों की ख्यातों में लिखा है कि जोधपुर के राव रायपालजी के तेरह पुत्र थे। इनमें बड़े पुत्र कन्हपालजी तो राज्याधिकारी हुए और चतुर्थ पुत्र मोहनजी मुहणोत या मोहनोतकुल के आदि पुरुष हुए। भाटों की ख्यातों में लिखा है कि एक समय मोहनजी शिकार खेलने गये थे। आपकी गोली से एक गर्भवती हिरनी मर गई। इसी बीच में उसके गर्भ से बच्चा हुआ और वह अपनी मरी हुई माता का स्तन पीने लगा। यह करुणापूर्ण दृश्य देख कर मोहनजी का कोमल हृदय पसीज गया। उन्हें अपने इस हिंसाकाण्ड से बड़ी घृणा हुई। उनके सामने उक्त हरिनी और उसके बच्चे का करुणापूर्ण दृश्य नाचने लगा। वे बड़े गम्भीर विचार में पड़ गये और खेड़ ग्राम की एक बावड़ी के पास बैठ गये। इतने ही में जैनाचार्य यति शिवसेनजी ऋषिश्वर उधर से निकले और आपने मोहनजी से जल छानकर पिलाने को कहा। इस पर मोहनजी आनन्द से गद् गद् हो गये। उन्होंने ऋषिश्वर को जल पिला कर अपने आपको धन्य समझा। इसके बाद मोहनजी ने बड़ी दीनता के साथ उक्त यतिजी से निवेदन किया कि अगर आपकी मुझ पर कुछ भी दया है तो इस हिरनी को जीवदान दीजिये। इस पर ऋषिश्वर ने उक्त हरिनी पर अपने हाथ की लकड़ी फेरी जिससे वह जीवित हो उठी। यह देखकर मोहनजी बड़े ही प्रसन्न हुए उनकी आत्मा को बड़ी शांति मिली। उन्होंने ऋषिश्वर शिवसेन जी को अपना गुरु स्वीकार कर सम्वत् १३५१ की कार्तिक सुदी १३ को खेड़ नगर में जैनधर्म का अवलम्बन लिया।

उपरोक्त घटना-वर्णन में कुछ अतिशयोक्ति हो सकती है, पर यह निश्चय है कि किसी करुणोत्पादक घटना से प्रभावित होकर मुहनोतवंश के जनक मोहनजी ने यति श्री शिवसेन ऋषिश्वर से जैन धर्म स्वीकार किया और तब से ओसवाल जाति में उनकी गणना होने लगी।

सपटसेनजी

आप मोहनजी के पुत्र थे। आपका दूसरा नाम सुभटसेनजी भी था। भाटों की ख्यात में लिखा है कि आप जोधपुर नरेश राव कन्हपालजी के समय में प्रधानगी के पद पर रहे। सम्वत् १३७१ में आप मौजूद थे। आपके पीछे आपकी पत्नी श्रीमती जीवादेवी सती हुई। आपके दो पुत्र थे—(१) महेश

जी और (२) भोजराजजी । महेशजी के देवीचन्द्र और लालचन्द नामक दो पुत्र थे । देवीचन्द्रजी के बाद क्रम से शार्दूलसिंहजी और देवीदासजी हुए, जिनके समय में कोई महत्व-पूर्ण घटना नहीं हुई ।

खेतसिंहजी

आप संवत् १४५४ में राव चुन्डाजी के राज्यकाल में मारवाड़ की पुरानी राजधानी मण्डोवर आये । ख्यातों में लिखा है कि आपने मारवाड़ राज्य की स्थापना तथा विस्तार में राव चुण्डाजी का बहुत साथ दिया था ।

मेहराजजी

आप राव जोधाजी के समय में मण्डोवर से जोधपुर आकर बसे । ख्यातों में लिखा है कि आप जोधाजी के समय में प्रधान के पद पर रहे । सम्वत् १५२६ में आपने किले के पास हवेली बनवाई । आपके बाद श्रीचन्द्रजी, भोजराजजी, कालुजी, बस्तोजी, मोहनजी (द्वितीय) सामन्तजी, नगाजी, और सूजाजी हुए जिनका विशेष वृतान्त नहीं मिलता है ।

अचलाजी

आप सूजाजी के पुत्र थे । जब राव चन्द्रसेनजी ने विपत्तिग्रस्त होकर जोधपुर छोड़ दिया था और सम्वत् १६२७ में मारवाड़ के सीवाणे के जंगल में रहे थे, तब अचलाजी भी आपके साथ थे । इसके बाद सम्वत १६३१ में जब चन्द्रसेनजी मेवाड़ परगने के मुराड़ा * गाँव में जाकर रहे थे, तब भी अचलाजी आप के साथ थे । वहाँ से रावजी सिरोही इलाके के कोरंटे ग्राम में डेढ़ वर्ष तक रहे । वहाँ भी अचला जी आपकी सेवा में बराबर रहे । इसके पश्चात् रावचन्द्रसेनजी डूँगरपुर के राजा के पास गये । वहाँ उन्होंने आपको गलियाकोट नामक ग्राम दिया जहाँ रावजी लगभग २ वर्ष तक रहे । यहाँ भी राजभक्त अचलाजी ने आपके साथ विपत्ति के दिन बिताए । इसके पश्चात् रावजी के पास मारवाड़ के सरदारों का सन्देश आया कि मारवाड़ का राज्य खाली है । आप तुरन्त पधारिये । तब रावजी मारवाड़ के सोजत नगर की ओर गये । कहना न होगा कि अचलाजी भी आपके साथ आये । इसी समय फिर बादशाह अकबर ने चन्द्रसेन पर फौज भेजी । सम्वत् १६३५ के श्रावणब्द ११ को सोजत परगने के सवराड़ गाँव

* यह ग्राम इस वक्त मारवाड़ के बाली परगने में है । यह गाँव राव चन्द्रसेनजी की राणी को उदयपुर राणाजी की ओर से दायजे मे मिला था ।

में उक्त फौज से रावजी का युद्ध हुआ। वहाँ अन्य वीरों के साथ अचलाजी भी वीरगति को प्राप्त हुए। इनके स्मारक में उक्त ग्राम में एक छत्री बनवाई गई जो अब तक विद्यमान है।

जयमलजी

मुहणोत वंश में आप बड़े प्रतापशाली पुरुष हुए। आपका जन्म सम्वत् १६३८ की माघसुदी ९ बुधवार को हुआ। आपका पहला विवाह वैद मुहता लालचन्दजी की पुत्री स्वरूपादे से हुआ, जिनसे नैणसीजी, सुन्दरसीजी, और आसकर्णजी हुए। दूसरा विवाह सिंहवी विड्दसिंहजी की पुत्री सुहागदे से हुआ, जिनसे नृसिंहदासजी हुए।

जयमलजी बड़े वीर और दूरदर्शी मुत्सद्दी थे। महाराजा सूरसिंहजी ने आपको बड़नगर (गुजरात) का सूबा बना कर भेजा था। इसके बाद जब सम्वत् १६७२ में फलौदी पर महाराजा सूरसिंहजी का अधिकार हुआ तब मुहणोत जयमलजी वहाँ के शासक बनाकर भेजे गये। महाराजा सूरसिंहजी के बाद महाराजा गजसिंहजी जोधपुर के सिंहासन पर विराजे। सम्वत् १६७७ के बैसाख मास में गजसिंहजी को जालोर का परगना मिला। उस समय जयमलजी वहाँ के भी शासक बनाये गये। महाराजा गजसिंहजीने आपको हवेली, बाग, नौहरा और दो खेत इनायत किये। जब सम्वत् १६७६ में शाहजादा कुर्रम ने महाराजा गजसिंहजी को सांचोर का परगना प्रदान किया, तब जयमलजी अन्य परगनों के साथ साथ सांचोर के शासक भी नियुक्त किये गये।

सम्वत् १६८४ में जयमलजी ने बाड़मेर कायम कर सूराचन्द्, पोहकरण, राऊदड़ा और मेवारा के बागी सरदारों से पेशकशी कर उन्हें दण्डित किया।

विक्रम सम्वत १६८३ में महाराजा गजसिंहजी के बड़े कुँवर अमरसिंहजी को नागोर मिला। इस वक्त जयमलजी नागोर के शासक बनाये गये।

जयमलजी की वीरता—हम ऊपर कह चुके हैं कि मुहणोत जयमलजी बड़े वीर पुरुष थे। सम्वत १६७१ में जब महाराजा गजसिंहजी को सांचोर का परगना जागीर में मिला तब कोई ५००० काछी सांचोर पर चढ़ आये। उस समय जयमलजी वहाँ के हाकिम थे। इन्होंने काछियों के साथ वीरतापूर्वक युद्ध किया और उन्हें मार भगाया। इसी प्रकार आपने जालोर में विहारियों से लड़ कर वहां के गढ़ पर अधिकार कर लिया था। सम्वत १६८६ में आपको दीवानगी का प्रतिष्ठित पद प्राप्त हुआ।

जयमलजी के धार्मिक कार्य—जयमलजी मूर्तिपूजक जैनश्वेताम्बर पंथ के थे। आपने कई

स्थानों में जैनमन्दिर और उपाश्रय बनवाये। उन सब का हाल उपलब्ध नहीं है। पर जिन जिन का पता लगा है उन पर थोड़ा सा प्रकाश डालना आवश्यक प्रतीत होता है।

(१) जालोर मारवाड़ का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है। जयमलजी यहां के शासक रह चुके थे। इस किले पर जो जैन मन्दिर हैं, उनका जीर्णोद्धार जयमलजी ने करवाया और उनमें प्रतिमाएं प्रतिष्ठित करवाई। इसके सिवा आपने उक्त नगर में तपागच्छ का उपाश्रय भी बनवाया।

इसके अतिरिक्त यहीं आपने चौमुखजी के मन्दिर की प्रतिष्ठा करवाई थी, जिसका सविस्तार वर्णन हम जालौर के मन्दिरों के प्रकरण में कर चुके हैं।

इनके अतिरिक्त सम्वत् १६८३ में आपने शत्रुंजयजी में एक जैन मन्दिर बनवाया। आपने मेड़ता, सीवाणा, फलौदी आदि नगरों में भी जैन मन्दिर और उपाश्राय बनवाये।

सम्वत् १६८३ में आपने शत्रुंजय, आबू और गिरनारजी की यात्राएँ की और बड़े-बड़े संघ निकलवाये। सम्वत् १६८६ में जयमलजी ने जोधपुर में चौमुखजी का मन्दिर बनवाया।

सम्वत् १६८७ में आपने हजारों भूखों और अनाथों को अन्न और वस्त्र दान दिया। एक वर्ष तक बराबर दान देते रहे। आपकी दानवीरता दूर दूर तक प्रसिद्ध थी।

ठाकुर मुहणोत नेणसी—जिन महापुरुषों ने राजस्थान के राजनैतिक, सैनिक और साहित्यिक इतिहास को गौरवान्वित किया है, उनमें मुहणोत नेणसी का आसन बहुत ऊँचा है। आपकी कीर्ति राजस्थान तक ही परिमित नहीं है, पर वह सारे भारतवर्ष के साहित्य संसार में फैली हुई है। आप कलम और तलवार के धनी थे। अर्थात् आप वीर और विद्वान् दोनों ही थे। आपका सारा जीवन राज्य कार्य्य, देश सेवा, विद्यानुराग, और परोपकार वृति में लगा। आपने राजस्थान का एक अमूल्य इतिहास ग्रंथ लिखा, जिससे आज के बड़े २ दिग्गज इतिहासवेत्ता प्रकाश ग्रहण करते हैं। आपने मारवाड़ के ग्रामों की खानाशुमारी की और प्रत्येक गांव की जन संख्या, कुंओं, जमीन और आय आदि का पूरा हाल अपने ग्रंथ में दिया। आपने महाराजा जसवन्तसिंहजी के समय में दीवान पद पर रह कर कई मार्के के बड़े २ काम किये। अब हम आपकी महान् जीवनी पर थोड़ा सा प्रकाश डालना चाहते हैं।

आप, जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं, जयमलजी के पुत्र थे और आपका जन्म जयमलजी की प्रथम पत्नी सरूपदे से हुआ था। आपका पहला विवाह भंडारी नारायणदासजी की पुत्री से और दूसरा विवाह मेहता भीमराजजी की कन्या से हुआ। दूसरी पत्नी से कर्मसीजी, वेरीसीजी और समरसीजी हुए।

नेणसी जी के सैनिक कार्य्य—नेणसीजी बड़े बहादुर सैनिक थे। आपको अपने जीवन में कई

लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। सम्वत् १६८८ में मगरे के मेवों (मीनों) ने बड़ा उत्पात मचाया था। लूटमार से इन्होंने प्रजा को बड़ा तंग कर रखा था। महाराजा गजसिंहजी की आज्ञा से आपने उन पर सैनिक चढ़ाई की और मेवों का (मीनों) दमन कर वहाँ शान्ति स्थापित की।

वि० सं० १७०० में महेचा महेसदास बागी होकर राड़धरे के गाँवों में बिगाड़ करता रहा, जिस पर महाराज जसवन्तसिंह ने नैणसी को राड़धरे भेजा। उसने राड़धरे को विजय कर वहाँ के कोट (शहरपनाह) और मकानों को गिरवा दिया तथा महेचा महेसदास को वहाँ से निकाल कर राड़धड़ा अपनी फौज के मुखिया रावल जगमल भारमलोत (भारमल के पुत्र) को दिया। सं० १७०२ में रावत नराण (नारायण) सोजत की ओर के गाँवों को लूटता था, जिससे महाराज ने मुहणोत नैणसी तथा उसके छोटे भाई सुन्दरदास को उस पर भेजा। उन्होंने कूकड़ा, कोट, कराणा, माँकड आदि गाँवों को नष्ट कर दिया। वि० सं० १७१४ में महाराज जसवन्तसिंह (प्रथम) ने मियाँ फरासत की जगह नैणसी को अपना दीवान बनाया। महाराज जसवन्तसिंह और औरंगजेब के बीच अनबन होने के कारण वि० सं० १७१५ में जैसलमेर के रावल सबलसिंह ने फलोदी और पोकरण जिलों के १० गाँव लूटे, जिस पर महाराज ने अहमदाबाद जाते हुए, मार्ग से ही मुहणोत नैणसी को जैसलमेर पर चढ़ाई करने की आज्ञा दी। इस पर वह जोधपुर आया और वहाँ से सैन्य सहित चढ़कर उसने पोकरण में डेरा किया। इस पर सबलसिंह का पुत्र अमरसिंह, जो पोकरण जिले के गाँवों में था, भागकर जैसलमेर से तीन कोस की दूरी के गाँव वासणपी में जा ठहरा। परन्तु जब रावल क़िला छोड़ कर लड़ने को न आए, तब नैणसी आसणी कोट को लूटकर लौट गये।

नैणसी की मृत्यु—संवत् १७२३ में महाराज जसवन्तसिंह औरंगाबाद में थे उस समय मुहणोत नैणसी तथा उसका भाई सुन्दरदास दोनों उनके साथ थे। किसी कारण वशात् महाराज उनसे अप्रसन्न होरहे थे, जिससे पौष सुदी ९ के दिन उन दोनों को क़ैद कर दिया। महाराज के अप्रसन्न होने का ठीक कारण ज्ञात नहीं हुआ। परन्तु जनश्रुति से पाया जाता है कि नैणसी ने अपने रिश्तेदारों को बड़े बड़े पदों पर नियत कर दिया था और वे लोग अपने स्वार्थ के लिये प्रजा पर अत्याचार किया करते थे। इसी बात के जानने पर महाराज उससे अप्रसन्न हो रहे थे।

वि० सं० १७२५ में महाराज ने एक लाख रुपया दंड लगाकर इन दोनों भाइयों को छोड़ दिया; परन्तु इन्होंने एक पैसा तक देना स्वीकार न किया। इस विषय के नीचे लिखे हुए दोहे राजपूताने में अब तक प्रसिद्ध हैं—

१ मगरा—पहाड़ी प्रदेश, सोजत और जैतारण परगने में अर्वली पहाड़ की श्रेणी को कहते हैं।



स्व० मुहणोत नेणसी दीवान राज्य मारवाड़, जोधपुर.



स्व० मुहणोत सुन्दरसी दीवान, जोधपुर.



श्री वृद्धराजजी मुहणोत, जोधपुर.



स्व० सेठ लछमणदासजी मुहणोत रीयांवाले, कुचामण

लाख लखाराँ नीपजे, बड़ पीपल री साख ।
नाटियो मूँतो नैणसी, ताँबो देण तलाक ॥ १ ॥
लेसो पीपल लाख, लाख लखाराँ लावसो ।
ताँबो देण तलाक, नटिया सुन्दर नैणसी* ॥ २ ॥

नैणसी और सुन्दरदास के दण्ड के रुपये देना अस्वीकार करने पर वि० सं० १७२६ माघ वदी १ को फिर क़ैद कर दिए गए और उन पर रुपयों के लिये सख़्तियाँ होने लगी। फिर क़ैद की हालत में ही इन दोनों को महाराज ने औरंगाबाद से मारवाड़ को भेज दिया। दोनों वीर प्रकृति के पुरुष होने के कारण इन्होंने महाराज के छोटे आदमियों की सख़्तियाँ सहन करने की अपेक्षा वीरता से मारना उचित समझा। वि० सं० १७२७ की भाद्रपद बदी १३ को इन्होंने अपने पेट में कटार मारकर मार्ग में ही शरीरांत कर दिया। इस प्रकार महा पुरुष नैणसी की जीवन लीला का अंत हुआ और महाराज की बहुत कुछ बदनामी हुई।

नैणसीजी की साहित्य सेवा—जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं मुहणोत नैणसी बड़े विद्वान्, साहित्य सेवी और इतिहास-प्रेमी थे। वीर कथाओं से आपका बड़ा अनुराग था। राजस्थान के इतिहास पर आपने एक बड़ा ही प्रमाणिक और महत्पूर्ण ग्रन्थ लिखा जो 'मुहणोत नैणसी की ख्यात' के नाम से प्रसिद्ध है। इस ग्रन्थ-रत्न में राजपूताना, गुजरात, काठियावाड़, कच्छ, बघेलखण्ड, बुन्देलखण्ड और मध्य भारत आदि के इतिहास से सम्बन्ध रखनेवाली बड़ी ही बहुमूल्य सामग्री भरी हुई है। राजपूताने के इतिहास के लिये तो यह ग्रन्थ अमूल्य है।

इस ग्रंथ रत्न की सामग्री इकट्ठा करने में नैणसीजी ने बड़ा परिश्रम किया। जहाँ २ से आपको सामग्री मिली वहाँ से आपने संग्रह की। इससे यह ग्रंथ इतिहास वेत्ताओं के लिये बड़ा ही उपयोगी और मूल्यवान हो गया। वि० सं० १३०० के बाद से नैणसी के समय तक के राजपूतों के इतिहास के लिये तो मुसलमानों की लिखी हुई फ़ारसी तवारीख़ों से भी नैणसी की ख्यात कहीं २ विशेष महत्व की है। राजपूताना के इतिहास में कई जगह जहाँ प्राचीन शोध से प्राप्त सामग्री इतिहास की पूर्ति नहीं कर सकती, वहाँ नैणसी की ख्यात ही कुछ-कुछ सहायता देती है। यह इतिहास का एक अपूर्व संग्रह है। स्वर्गीय मुंशी देवीप्रसादजी तो नैणसी को "राजपूताने का अब्बुलफ़जल" कहा करते थे, जो अयुक्त नहीं हैं। ख्यात की भाषा लगभग २७५ वर्ष पूर्व की मारवाड़ी है, जिसका इस समय ठीक २ समझना भी सुलभ नहीं है। नैणसी ने जगह जगह राजाओं के इतिहास के साथ २ कितने ही लोगों के वर्णन के गीत, दोहे, छप्पय आदि

* राय बहादुर ओझाजी के लेख से।

भी उद्धृत किये हैं, जो डिंगल भाषा में हैं। उनमें से कुछ तो ३०० वर्ष से भी अधिक पुराने हैं। उनका समझना तो कहीं-कहीं और भी कठिन है।

मुहणोत सुन्दरसीजी

आप जयमलजी के तीसरे पुत्र और नैणसीजी के भाई थे। सम्वत् १६६८ की चैत्र सुदी ८ शनिवार को आपका जन्म हुआ। महाराजा यशवन्तसिंहजी ने सं० १७११ में आपको "तन दीवानगी" (Private Secretary) का पद प्रदान किया। सम्वत् १७२३ तक आप इस पद पर रहे।

सम्वत् १७१३ में सिंधलवाग पर महाराजा जसवन्तसिंहजी ने फौज भेजी। उक्त सिंधलवाग अपनी फौज सहित लड़ने को तैयार बैठा था। महाराजा की फौज में ६९१५ पैदल थे, जिनके दो विभाग किये गये। पहले विभाग का सेनानायकत्व राठौड़ लखधीर विट्ठलदासोत को दिया गया। दूसरे विभाग का जिसमें ३३७२ सैनिक थे, सञ्चालन भार मुणोत सुन्दरसी पर रखा गया। सिंधलों और महाराजा की फौजों में लड़ाई हुई, जिसमें महाराजा की फौजों की विजय हुई। संवत् १७२० में महाराजा जसवन्तसिंहजी की सेनाने बादशाह औरङ्गजेब की ओर से प्रातःस्मरणीय छत्रपति शिवाजी पर चढ़ाई की। कुँडाणे के गढ़ पर लड़ाई हुई। इस युद्ध में सेना के आगे रह कर मुहणोत सुन्दरसी बड़ी बहादुरी से लड़े थे। वे इस युद्ध में जखमी हुए। पर इसमें गढ़ पर से महाराजा की फौज पर इतने भयङ्कर गोले बरसे कि उनकी फौजों को पीछे हटना पड़ा।

सम्वत् १७१४ में पांचोंटा और कंवला के सरदारों ने महाराजा के खिलाफ विद्रोह किया, जिसे सुन्दरसीजी ने दवाया।

सम्वत् १७१६ में महाराजा जसवन्तसिंहजी गुजरात के सूबे पर थे। वहाँ से उन्होंने महाराज कुमार श्री पृथ्वीसिंहजी को बादशाह के हुजुर में भेजे। उनके साथ सुन्दरसीजी और राठौड़ भीमसिंहजी गोपालदासोत को भेजे।

महाराजा जसवन्तसिंहजी की कई पासवानें औराङ्गाबाद थीं। उन्हें लेने के लिये महाराजा ने पूने के मुकाम से सम्वत् १७२० की अषाढ़ वदी ५ को सुदरसीजी को भेजा और उनके साथ २१०० सवार दिये। मार्ग में शिवाजी के ५०० सवार इनके साथवाली बैलों की जोड़ियाँ पकड़ ले गये। सुंदरसीजी ने उनका पीछा किया। लड़ाई हुई और सुंदरसीजी ने बैलों की जोड़ियाँ छुड़ाली।

सम्वत् १७२३ की पौष सुदी ९ को महाराजा यशवन्तसिंहजी ने किसी कारणवश नाराज होकर सुंदरसीजी से "तन दीवानगी" का पद लेलिया। सम्वत् १९२७ में आप अपने भाई नैणसीजी के साथ पेट में कटारी खाकर वीरगति को प्राप्त हुए, जिसका उल्लेख नैणसीजी के वृतान्त में दिया गया है।

दीवान कर्मसीजी

आप सुप्रख्यात् दीवान नैणसीजी के प्रथम पुत्र थे। सम्वत् १६९० के वैसाख सुदी २ को आपका जन्म हुआ। आपका शुभ विवाह कोठारी जगन्नाथसिंहजी की पुत्री से हुआ, जिनसे आपको प्रतापसिंहजी और संग्रामसिंहजी नामक दो पुत्र हुए।

सम्वत् १७१४ की भाद्रपद सुदी १० को तत्कालीन मुगल बादशाह शाहजहाँ दिल्ली में बीमार होगया। इससे वह मार्गशीर्ष वदी ५ को आगरे चला आया। बादशाह की बीमारी का समाचार पाकर युवराज दाराशिकोह को छोड़ कर दूसरे सब शाहजादे बादशाहत लेने के लिए अपने अपने सूबों से रवाना हुए। जब यह बात बादशाह को मालूम हुई तब उसने औरङ्गजेब और मुराद को (जो दक्षिण के सूबे पर थे) रोकने के लिए महाराजा यशवन्तसिंहजी को २२ बादशाही उमरावों के साथ रवाना किए। सम्वत् १७१४ की माघवदी ४ को आप लोग उज्जैन पहुँचे। जब महाराजा को उज्जैन में यह सूचना मिली कि शाहजादा मुरादबख्श उज्जैन आ रहे हैं तो आप लोग भी मुकाबले के लिए खाचरोद मुकाम पर पहुँचे। वहाँ से मुराद पीछा फिर गया और वह औरङ्गजेब के शामिल होगया। इस पर महाराजा ने खाचरोद से कूच कर उज्जैन से पाँच कोस के अन्तर पर चोरनराणा (वर्तमान में इसे फतियाबाद कहते हैं) गाँव में मुकाम किया। औरङ्गजेब भी अपनी फौज सहित वहाँ आ पहुँचा। बादशाह के २२ उमरावों में से १५ औरङ्गजेब के साथ मिल गये। इससे महाराजा यशवन्तसिंह की स्थिति बड़ी कमजोर हो गई। फिर भी महाराजा ने औरङ्गजेब से युद्ध किया। इस युद्ध में करमसीजी भी बड़ी बहादुरी से लड़कर घायल हुए थे। आपके अरिरिक्त इस युद्ध में महाराजा के १४२ सरदार, ७०१ राजपूत और २०१ घोड़े मारे गये। बहुत से आदमी घायल भी हुए। इस युद्ध में महाराजा की हार हुई। वे कुछ घायल भी हुए। उन्हें लौट कर जोधपुर आना पड़ा।

संवत् १७१८ में कर्मसीजी महाराजा के साथ गुजरात में थे। जब महाराजा को बादशाही से हाँसी-हिसार के परगने मिले तो अहमदाबाद के मुकाम से उन्होंने इनको संवत् १७१८ के मार्गशीर्ष वदी ८ को वहाँ के शासक नियत कर भेजे। ये परगने (तेरह लाख की आमदनी के) गुजरात के सूबे की एवज़ में मिले थे। कर्मसीजी हाँसी-हिसार में संवत् १७२३ तक रहे। संवत् १७२७ में इनके पिता

कर्मसीजी के अतिरिक्त इस लड़ाई में और भी कई ओसवाल मारे गये तथा घायल हुए जिनमें मुहता कृष्णदास, मुहता नरहरिदास, सुराणा ताराचन्द, भण्डारी ताराचंद नारणोत (दीवान) भण्डारी अभयराज रायमलोत के नाम उल्लेखनीय है।

नणसीजी और काका सुन्दरदासजी की मृत्यु घटना से श्री महाराजा ने इन्हें तथा इनके भ्राता वैरसीजी, समरसीजी, और सुन्दरदासजी के पुत्र तेजमालजी, मोहनदासजी को छोड़ दिए थे, परन्तु उस समय महाराजा के पास इनके शत्रुओं का ज़ोर बहुत होने से इनको यही आशंका बनी रही कि कहीं फिर हम लोगों को भय का सामना करना न पड़े। इसी से करमसीजी नागौर के राजा रायसिंहजी * की सेवा में चले गए। इनको इसी संवत् में राजाजी ने 'दीवानगी' और 'जागीर' इनायत की।

संवत् १७३२ के अषाढ़ वदी १२ को शोलापुर (दक्षिण) में राव रायसिंहजी केवल चार घड़ी बीमार रह कर देवलोक हो गए। सरदार मुत्सुद्दी आदि ने जो इनके साथ थे, वहाँ के वैद्य से उनकी इस अकस्मात मृत्यु का कारण पूछा, तो उसने, अपनी साधारण भाषा में कहा कि "कर्मानो दोष छै" अर्थात् कर्म की गति ऐसी ही थी। परन्तु उन सरदार आदि ने यह समझ लिया कि इस कर्मा अर्थात् करमसी (मोहनोत) ने कुछ ऐसा षड़यंत्र किया कि जिससे इनकी मृत्यु हुई है। उस समय सिंहवी चूहड़मलजी दीवान थे, और उनको करमसीजी का नागोर में (राजाजी के समीप) रहना बहुत अखरता था इन्होंने भी कर्मसीजी के खिलाफ़ बहुत जहर उगला। समय अनुकूल देख कर करमसीजी को तो वहीं (शोलापुर में) भीत में चुनवा कर मरवा दिये और इनके परिवार वालों को भी मरवा देने के लिए नागौर के कुँवर इन्द्रसिंहजी से विनती की। इस पर नागोर में नीचे लिखे इनके कुटुम्बी मरवाये गये।

(२) सुन्दरदासजी के पुत्र मोहनदासजी और तेजमालजी।

(१) करमसीजी के ज्येष्ठ पुत्र प्रतापसिंहजी।

(१) मोहनदासजी के साले हरिदासजी।

(३) मोहनदासजी के पुत्र गोकुलदासजी, जो केवल २४ वर्ष की वय के थे, और दो छोटे बच्चे।

(१) कल्ला का पुत्र नारायणदास, जो करमसीजी के साथ में था, वहीं मारा गया।

८

इस प्रकार निर्दोष हत्याएँ कर राज्य को कलंकित किया गया। किन्तु ईश्वर की लीला अपरम्पार है। इस कहावत के अनुसार कि "जिनको रक्खे साँईया, मार सके नहिं कोय। उस जगदीश्वर को इस कुटुम्ब की जड़ फिर भी हरी रखना स्वीकार थी। करमसीजी के द्वितीय पुत्र संग्रामसिंहजी और नैणसीजी के द्वितीय पुत्र समरसीजी के द्वितीय पुत्र सामन्तसिंहजी को 'फूला' नामक धाय और एक दूसरी 'डावड़ी' (नौकरानी) लेकर नागोर से छिपे तौर से निकल कर कृष्णगढ़ चली आई जहाँ कि समरसीजी

---

* नागोर का राज्य उस समय जोधपुर राज्य से स्वतंत्र था।

और बैरसीजी (नैणसीजी के द्वितीय और तृतीय पुत्र) मालवे की ओर से आकर रहे थे। सिंहवी विट्ठलदासजी ने कुँवरजी से निवेदन कर अपने दौहित्र टोडरमल (सुन्दरदासजी के पौत्र और तेजमालजी के पुत्र) को स्त्रियों और बाल बच्चों सहित मारने से बचाया।

मुहणोत संग्रामसिंहजी

आप करमसीजी के पुत्र और दीवान नैणसी के पौत्र थे। आपका विवाह मुहता कालूरामजी की पुत्री से हुआ जिससे आपको भगवतसिंहजी और सिहोजी नामक पुत्र हुए।

कर्मसीजी के दीवाल में चुनाये जाने का तथा उनके कुटुम्बियों के मारे जाने का हाल हम पहले लिख चुके हैं। ऐसे कठिन समय में नागोर से फूला नामक एक विश्वसनीय धाय बालक संग्रामसिंहजी को लेकर कृष्णगढ़ चली आई। तब से आप वहीं रहने लगे। कृष्णगढ़ महाराजा ने इन पर बड़ी कृपा रखी और इन्हें कुए, खेत आदि प्रदान किये।

कुछ वर्ष व्यतीत होने पर भण्डारी खींवसीजी (प्रधान) और भण्डारी रघुनाथजी (दीवान) ने तत्कालीन जोधपुर नरेश महाराजा अजितसिंहजी से निवेदन किया कि संग्रामसिंहजी और वैरीसिंहजी के पुत्र सामन्तसिंहजी जोधपुर बुला लिये जावें। महाराजा ने यह बात स्वीकार करली। आप लोग जोधपुर बुला लिये गये। इतना ही नहीं संग्रामसिंहजी को सात परगनों की हुकूमत दी गई। आपने बड़े २ सैनिक पदों पर भी कार्य्य किया।

सम्वत १७२६ में जब बाहरी शत्रुओं के घेरे के कारण राज्य परिवार ने जोधपुर किला खाली कर दिया, तब माजी साहबा वाघेलीजी तथा दूसरे जनाना सरदारों ने मुहणोतों की *हवेली में निवास करने की इच्छा प्रकट की। तदनुसार कुछ दिनों तक राज्य कुटुम्ब की महिलाएँ मुहणोतों की हवेली में रहीं।

सम्वत् १७८२ में महाराजा अभयसिंहजी ने संग्रामसिंहजी को मेड़ता में बाग बनवाने के लिये १६० बीघा जमीन इनायत की, जो अभी तक उनके वंशजों के अधिकार में है। यह बाग मुहणोतों के बाग के नाम से मशहूर है।

भगवतसिंहजी

आप संग्रामसिंहजी के पुत्र थे। आपका विवाह मुहता श्रीचन्द्रजी की पुत्री से हुआ। आपके तीन पुत्र थे, जिनका नाम सूरतरामजी, साहिबरामजी और अणदरामजी था। इनमें साहिबरामजी के

* यह हवेली किले के पास ही है।

औलाद नहीं हुई और अणदरामजी की कुछ पीढ़ियों तक वंश चल कर कुछ समय बाद उसका अन्त हो गया।

रावजी सुरतरामजी

आप भगवतसिंहजी के पुत्र थे। मुहणोत खानदान में आप भी बड़े प्रतापी और बहादुर हुए। महाराजा बखतसिंहजी के राज्य काल में सम्वत् १८०८ में आप फौज बख्शी के उच्च सैनिक पद पर नियुक्त किये गये। आपने यह कार्य्य बड़ी ही उत्तमता के साथ किया। महाराजा ने आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर आपको ३००० रेख के लुनावास और पालड़ी नामक दो गाँव जागीर में दिये। आपने कई युद्धों में प्रधान सेनापति की हैसियत से सेना संचालन किया था। दरबार आपकी बहादुरी और कार्य्य कुशलता से बहुत प्रसन्न हुए और आपको दीवानगी तथा १५०००) प्रतिसाल की रेख के गाँव और पालकी तथा बहुमूल्य शिरोपाव देकर आपकी प्रतिष्ठा की।

सम्वत् १८२२ में दक्षिणी खानू मारवाड़ पर चढ़ आया। महाराजा के हुक्म से सुरतरामजी इसके मुकाबले के लिये गये। युद्ध हुआ और इसमें सुरतराम को सफलता मिली। उन्होंने शत्रुओं की सामग्री छीनली। खानू तो अजमेर की ओर तथा उसके सहायक चंपावत सरदार सांभर भाग गये। इस युद्ध को जीत कर वापस आते समय आपने पीह नामक ग्राम में मुकाम किया। वहाँ से पर्बतसर जिले के बसी नामक गाँव में जाकर डेरा डाला। वहाँ के सरदार मोहनसिंहजी ने सामना किया। पर वे हार गये। सुरतरामजी मोहनसिंह से दण्ड वसूल कर जोधपुर लौट आये, जहाँ महाराजा ने आपकी बड़ी इज्जत की। वे आपके साहस पूर्ण कार्य्यों से बड़े प्रसन्न हुए।

इसी अर्से में उदयपुर के महाराणा राजसिंहजी का देहान्त हो गया और उनके स्थान पर महाराणा अरसीजी राज्य सिंहासन पर बैठे। ये बड़ी निर्बल प्रकृति के थे। सरदारों ने इनके खिलाफ़ विद्रोह का झण्डा उठाया। महाराणाजी घबराये और उन्होंने जोधपुर के महाराजा विजयसिंहजी से सहायता माँगी और इसके बदले में गोडवाड़ का परगना देने का वचन दिया। इस पर महाराजा विजयसिंहजी ने महाराणाजी की सहायता के लिये सेना भेजी। राणाजी की मनोकामना सिद्ध हुई और उन्होंने गोडवाड़ का परगना महाराजा विजयसिंहजी को लिख दिया। महाराजा ने सेना भेजकर गोडवाड़ पर अधिकार कर लिया। इस गोडवाड़ के देसूरी नामक कस्बे में जोधपुर दरबार पधारे और महाराणा अरसीजी वहीं आकर महाराजा से मिले। यहाँ यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि गोडवाड़ के मामले को तय करने में सब से प्रधान हाथ मुहणोत सुरतरामजी का था। इस समय महाराणा अरसीजी ने महाराजा विजयसिंहजी

को जो खरीते भेजे उनकी असली नकलें हमारे पास हैं। उनसे मेवाड़ की तत्कालीन निर्बल अवस्था पर बड़ा ही सुन्दर प्रकाश गिरता है।

सम्वत् १८३० की फाल्गुन सुदी ३ को महाराजा ने सुरतरामजी को मुसाहिबी, 'राव' की पदवी और लगभग ३००००) रुपयों की लागत का बहुमूल्य सिरोपाव प्रदान किया। इसके अतिरिक्त आपको आपके कामों की प्रशंसा में कई खास रुक्के प्रदान किये।

सम्वत् १८३१ के द्वितीय वैशाख सुदी ८ को राव सूरतरामजी को कर्णमूल नामक रोग हुआ और उसीसे दो दिन के बाद आपका स्वर्गवास हो गया। आपकी दाह क्रिया नैणसीजी के बाग में हुई। आपके साथ दो सतियाँ हुई। आपकी बैकुण्ठी तेरह खण्डी बनी थी। आपकी स्मशान यात्रा में सब प्रसिद्ध २ सरदार जागीरदार और लगभग ५००० मनुष्य थे।

संवत् १८३१ के ज्येष्ट वदी १४ को राव सूरतरामजी के मकान पर स्वयं जोधपुर नरेश महाराजा विजयसिंहजी पधारे और आपके पुत्र सवाईरामजी और ज्ञानमलजी को बड़ी तसल्ली दी और बहुत शोक प्रकट किया।

मुहणोत खानदान में राव सूरतरामजी बड़े प्रभावशाली, वीर और कार्य्यकुशल मुत्सद्दी हुए। आपने प्रधान सेनापति, दीवान, प्रधान आदि बड़े २ पदों पर बड़ी सफलता के साथ काम किया। जोधपुर महाराजा ने आपको बड़े २ सम्मान प्रदान किये थे। अन्य बड़े २ महाराजा भी आपका बड़ा आदर करते थे। तत्कालीन बून्दी नरेश ने आपको उठकर ताज़ीम देने का, तथा बांह पसार कर मिलने का कुरब प्रदान किया था। कोटा नरेश ने भी आपको इसी प्रकार का उच्च सम्मान प्रदान किया था। बीकानेर दरबार खड़े होकर आपकी नजर लेते थे। जैसलमेर, कृष्णगढ़, इंदौर और गवालियर के नरेश आपको "ठाकुरां दीवान श्रीसूरतरामजी" लिखा करते थे।

मुहणोत ठाकुर सवाईरामजी—मुहणोत सूरतरामजी की मृत्यु के बाद उनके बड़े पुत्र मुहणोत सवाईरामजी विक्रम सम्वत् १८३१ में जोधपुर के मुसाहिब आला (Prime minister) बनाये गये। आपके समय में २०००० रेख की जागीर बराबर चलती रही। सम्वत् १८४९ में बीकानेर नरेश श्री गजराजसिंहजी और उनके कुँवर के बीच झगड़ा हो गया। इस समय जोधपुर दरबार ने एक बड़ी सेना देकर सवाईरामजी को बीकानेर भेजा। आपने वहां पहुँच कर पिता पुत्र के बीच मेल करवा दिया।

दीवान मुहणोत ज्ञानमलजी—मुहणोत वंश में आप बड़े प्रतापी, राज्य कार्य कुशल और वीर मुत्सद्दी हो गये। आपका जन्म सम्वत १८१६ के चैत्र वदी १२ शुक्रवार को हुआ।

जोधपुर नरेश महाराजा विजयसिंहजी ने केकड़ी नरेश राजा अमरसिंहजी को कृष्णगढ़ के पास

का रूपनगर नामक गांव इनायत कर दिया। इस नगर पर अधिकार करने के लिये जोधपुर महाराजा ने जोधपुर से सींघी अक्षयदासजी, भण्डारी गंगारामजी और मुहणोत ज्ञानमलजी को सेना लेकर भेजे। सात मास तक बराबर युद्ध होता रहा। अन्त में रूपनगर पर महाराजा जोधपुर का अधिकार हुआ और किशनगढ़ के महाराजा प्रतापसिंहजी ने हार मानकर तीन लाख रुपया देना स्वीकार किया और जोधपुर आकर वहां के दरबार से मुजरा किया। सम्वत् १८४७ में माधवजी सिन्धिया मारवाड़ पर चढ़ आया। इसके मुकाबिले के लिये मुहणोत ज्ञानमलजी, सिंघवी भीमराजजी, कोचरमुहता सूर्य्यमलजी, लोढ़ा साहसमलजी और भण्डारी गंगारामजी आदि भेजे गये, मेड़ते मुकाम पर सम्बत १८४७ की भाद्र वदी १ को भारी लड़ाई हुई। जोधपुरी सेना ने इस युद्ध में इतनी वीरता का प्रदर्शन किया कि जिसकी प्रशंसा सिन्धिया के सेनापतियों ने अपने पत्रों में और अंग्रेजी और मराठी लेखकों ने अपने ग्रन्थों में की है। दैव राठौड़ों के अनुकूल नहीं था। इससे उनके हाथों से सैनिक दृष्टि से कई भूलें हो गईं। इसके अतिरिक्त मराठी फौजें सुप्रख्यात् फ्रेंञ्च सेनापति डी० बोइने के कुशल सञ्चालन में थीं। वे नवीन अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित थीं। इससे उनकी विजय हुई। पर इस समय जोधपुरी फौजों ने जिस अतुलनीय पराक्रम का परिचय दिया, उसे देख कर महादजी का फ्रेञ्च सेनापति डी० बोयने भी आश्चर्य-चकित होगया। उसने देखा कि जोधपुरी सेना के अधिकांश मनुष्य धराशायी हो गये हैं और उसके मुट्ठी भर वीर केसरिया पहन कर मराठी सेना पर टूट पड़ते हैं और अपनी जानकी कुछ भी पर्वाह न कर शत्रु सेना में हाहाकार मचा देते हैं। मराठी और अंग्रेजी के लेखकों ने जोधपुरी सेना की अपूर्व वीरता की बड़ी प्रशंसा की है। मराठी सेना के एक अफसर ने अपने एक खानगी पत्र में लिखा था "यह वर्णन करने की मेरी लेखनी में शक्ति नहीं है कि केसरिया पोशाक वालों ने अपनी जान हथेली में रख कर क्या क्या बहादुरी दिखलाई। मैंने देखा कि उस समय लैन टूट चुकी थी। पन्द्रह या बीस मनुष्य हजारों मनुष्यों पर टूट पड़े थे। उस असंख्य मराठी सेना के सामने इन्होंने जान झोंक कर युद्ध किया और इतनी अपूर्व वीरता का परिचय दिया कि इतिहास में जिसके उदाहरण मिलना मुश्किल हैं। आखिर ये वीर तोपों से उड़ा दिये गये। इस युद्ध में सूर्य्यमलजी आदि कुछ ओसवाल सेनानायक भी मारे गये। पर इसमें मराठों की विजय हुई। जोधपुर नरेश ने क्षति पूर्ति के लिये साठ लाख रुपया देने का वादा कर अपना पिण्ड छुड़ाया। इन रुपयों में से कुछ तो नक्द, कुछ परगने और कुछ मनुष्यों को ओल में दिये गये। ओल में दिये जाने वाले लोगों में मुहणोत ज्ञानमलजी भी थे।

सम्वत् १८६० में जब महाराजा भीमसिंहजी का देहान्त हुआ, तब आपने महाराजा मानसिंहजी के जोधपुर आने तक, किले का बड़ी योग्यता से प्रबन्ध किया। महाराजा मानसिंह को राज्यगद्दी दिलवाने

में जिन-जिन पुरुषों का हाथ था, उनमें मुहणोत ज्ञानमलजी भी एक प्रधान पुरुष थे। इसके लिये महाराजा मानसिंहजी ने आपको कई खास रुक्के दिये जो अब भी आपके वंशज श्रीयुत वृद्धराजजी और श्री सरदारमलजी मुहणोत के पास हैं। खास रुक्कों के अतिरिक्त आपको मुसाहिब आला का पद और अच्छी जागीर भी दी गई।

सम्वत् १८६१ में जयपुर राज्य के शेखावतों से डिडवाना लूटा और उसपर अपना अधिकार कर लिया। महाराजा ने ज्ञानमलजी को उनके मुकाबले पर सेना देकर भेजा। आपने शेखावतों को वहाँ से निकाल कर न केवल डिडवाना ही पर वरन् उनके शाहपुरा गांव पर भी अधिकार कर लिया। आपके इस विरोचित कार्य्य के लिये श्री दरबार ने एक खास रुक्के में आपकी बड़ी प्रशंसा की है।

सम्वत् १८६२ में मारवाड़ पर चढ़ाई करने के लिये किशनगढ़ राज्य के तिहोद नामक गांव में मुकाम किया। इस चढ़ाई को रोकने लिये ज्ञानमलजी से कहा गया। आपने बड़ी बुद्धिमानी से इस कार्य्य को किया। सम्वत् १८६३ में जब जयपुर की फौजों ने जोधपुर पर घेरा डाला तब ज्ञानमलजी ने अन्य कुछ मुत्सद्दियों के साथ राज्य रक्षा के लिये बड़े-बड़े प्रयत्न किये, जिनकी जोधपुर नरेश ने अपने खास रुक्कों में बड़ी प्रशंसा की है।

नवलमलजी और प्रतापमलजी—आप ज्ञानमलजी के इकलौते पुत्र थे। आपका जन्म सं० १८३६ में हुआ। आप भी अपने पिताजी की तरह वीर और कुशल सेना नायक थे। सम्वत् १८६१ में आपने सिरोही को विजय किया और उस पर मारवाड़ का झण्डा उड़ाया। आपकी सेवाओं की तत्कालीन जोधपुर नरेश ने अपने दो खास रुक्कों में बड़ी प्रशंसा की है। आपके प्रतापमलजी नामक पुत्र थे। महाराजा मानसिंहजी के समय में आपने बड़े-बड़े ओहदों पर काम किया। सम्वत् १९०८ में मारवाड़ के जागीरदारों के आपसी झगड़ों को कुशलता पूर्वक निपटाने के उपलक्ष्य में आपको पाली परगने में उटावन नामक गांव जागीर में मिला। सम्वत् १९२० में आपने महाराजा तखतसिंहजी की आज्ञा से तखतपुरा नामक गांव बसाया। ब्रिटिश सरकार के साथ जोधपुर राज्य की सन्धि करवाने में आपका प्रधान हाथ था। प्रतापमलजी के जोरावरमलजी और गणेशराजजी नामक दो पुत्र हुए। जोरावरमलजी ने जालोर और सोजत की हुकुमतों का काम किया। आपने और भी अनेक पदों पर काम किया। सीमा सम्बन्धी कई झगड़ों का योग्यता पूर्वक फैसला किया। आपके छोटे भाई गणराजजी ने मारवाड़ राज्य के खजांची का काम किया। आपने कई परगनों की सायरों पर काम किया।

जोरावरमलजी के पुत्र धूहड़मलजी हुए। दरबार ने पोशाक प्रदान कर आपका सम्मान किया था। सम्वत् १९४३ में राय मेहता पन्नालालजी के निमन्त्रण से आप उदयपुर गये और

कुम्भलगढ़ के हाकिम बनाये गये। गणराजजी के भीमराजजी, वृन्द्रराजजी और बुधराजजी नामक तीन पुत्र हुए। श्री वृन्द्रराजजी बड़े योग्य और देश भक्त सज्जन हैं। आपने बड़ौदे के कला भवन में कपड़े बुनने का काम सीखा और वहाँ की परीक्षा पास की। इसके बाद आपने मारवाड़ की वकालत परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास की। अब आप चीफकोर्ट में वकालत करते हैं। आपको राज्य में अपने कुटुम्ब के प्राचीन प्रथा के अनुसार मान सम्मान प्राप्त है

धूहड़मलजी के गम्भीरमलजी और गम्भीरमलजा के सरदारमलजी नामक पुत्र हुए। सरदारमलजी को इतिहास का प्रेम है। आपके पास जोधपुर राज्य के इतिहास की अच्छी सामग्री है।

मुहणोंत परिवार, किशनगढ़

हम ऊपर जोधपुर के मुणोंत परिवार में इस वंश के पूर्व पुरुषों का इतिहास लिख चुके हैं। मोणजी की १८ वीं पुस्त में मेहता अर्जुनजी हुए। इनके पुत्र रोहीदासजी किशनगढ़ चले गये। इनके परिवार के लोग आज भी किशनगढ़ में निवास करते हैं। मेहता रोहीदासजी के रायचन्द्रजी नामक पुत्र हुए।

रायचन्द्रजी—जोधपुर के राजा शूरसिंहजी के छोटे भाई का नाम कृष्णसिंहजी था। आपको राज्य से दूदोड़ आदि १३ गाँवों की जागीर का पट्टा मिला था। संवत् १६५४ में आपकी नवाब मुरादअली (जो अजमेर का तत्कालीन सूबेदार था) के द्वारा बादशाह अकबर के दरबार में पहुँच हुई। बादशाह ने आपके व्यवहारों से प्रसन्न होकर संवत् १६५५ में हिन्डोन आदि सात परगने प्रदान किये। इसके तीन साल बाद आपने अपने नाम से एक नया नगर बसाकर उसका नाम कृष्णगढ़ रखा। जो वर्तमान में एक स्टेट है।

जब महाराजा कृष्णसिंहजी ने जोधपुर से प्रयाण किया था उस समय रायचन्द्रजी तथा आपके भाई शंकरमणिजी दोनों साथ थे। कृष्णगढ़ बसाने तक आप दोनों भाइयों ने महाराज की बहुत अच्छी सेवाएँ कीं। जिनसे प्रसन्न होकर महाराज ने रायचन्द्रजी को अपना मुख्य मंत्री नियुक्त किया। तथा आप दोनों भाईयों के रहने के लिये बड़ी २ दो हवेलियाँ बनवाईं। आज वे बड़ी पोल और छोटी पोल के नाम से प्रसिद्ध हैं।

रायचन्द्रजी ने संवत् १७०२ में एक जैन मन्दिर श्री चिन्तामणी पार्श्वनाथजी बनवाकर उसकी प्रतिष्ठा करवाई। यह मंदिर अभी भी किशनगढ़ में मौजूद है।

महाराजा कृष्णसिंहजी के बाद उनके उत्तराधिकारी महाराजा मानसिंहजी हुए। आपने भी

रायचन्दजी का बड़ा सम्मान किया। संवत् १७१६ में महाराजा आपके घर पधारे तथा वहीं भोजन किया। संवत् १७१७ में उक्त महाराजा साहब ने आपको पालड़ी नामक एक गाँव की जागीर प्रदान की। संवत् १७२३ में आपका स्वर्गवास हो गया।

वृद्धभानजी—आप महाराजा मानसिंहजी के तन दीवान थे इस कारण आपको हमेशा उनके साथ ही रहकर सेवा करनी पड़ती थी। संवत् १७६५ में आपका स्वर्गवास हो गया।

कृष्णदासजी—आप महाराजा मानसिंहजी कृष्णगढ़ नरेश के राज्य में मुख्य मंत्री रहे। महाराजा साहब तो विशेष कर बादशाह औरंगज़ेब के पास उसकी सेवा में रहते थे, इस कारण राज्य के सब काम काज आपही के हाथ में थे। संवत् १७५० में महाराज ने आपके कामों से प्रसन्न होकर आपको 'बुहास' नामक जागीर का पट्टा प्रदान किया। वह आपकी विद्यमानता तक बना रहा। संवत् १७५६ में जब अबदुल्लाखाँ अपनी फौज लेकर कृष्णागढ़ में बादशाही थाना जमाने के लिए आया, उस समय आपने उससे युद्ध कर पराजित किया। आपका संवत् १७६३ में स्वर्गवास हो गया।

आसकरणजी—आप महाराज राजसिंहजी के समय में कृष्णगढ़ में संवत् १७६५ में दीवान नियत किये गये। आपने संवत् १८१९ में कृष्णगढ़ के दक्षिण की तरफ एक आस्तिक माता का मन्दिर बनवाया था जो वर्तमान में भी वहाँ मौजूद है। आपके २ पुत्र हुए बड़े देवीचन्दजी तथा छोटे रामचन्द्रजी वर्तमान वंश रामचन्द्रजी का है।

रामचन्द्रजी—आपने संवत् १७८१ के वर्ष से कृष्णगढ़ के महाराज श्री बहादुरसिंहजी के समय में दीवानगी का काम किया। आपके तीन पुत्र हुए। जिनके नाम क्रमशः हठीसिंहजी, सूर्य्यसिंहजी, और बाघसिंहजी था।

हठीसिंहजी—आपको कृष्णगढ़ महाराजा बहादुरसिंहजी साहब ने १८३१ में दीवानगी का काम प्रदान किया था। इसके साथ ही ताज़ीम तथा हाथी और सिरोपाव प्रदान किया। जिसमें तलवार और कटार देने की विशेष कृपा थी। बाघसिंहजी इसी समय में फौज बक्षी का काम करते थे।

सूर्य्यसिंहजी—आप भी उपरोक्त महाराजा साहब के समय में जागीर बक्षी का काम करते रहे। आपके ६ पुत्र हुए। जिनके नाम क्रमशः पृथ्वीसिंहजी, हिन्दूसिंहजी, हमीरसिंहजी उम्मेदसिंहजी, नवलसिंहजी और श्यामसिंहजी थे।

इन बन्धुओं में हिन्दूसिंहजी, हमीरसिंहजी तथा नवलसिंहजी के कोई संतान नहीं रही तथा उम्मेद-सिंहजी और श्यामसिंहजी का परिवार उदयपुर गया, जिनका परिचय नीचे दिया गया है। सबसे बड़े भाई पृथ्वीसिंहजी का परिवार किशनगढ़ में निवास करता रहा, इनके पुत्र भीमसिंहजी हुए।

मुहणोत हठीसिंहजी नामाङ्कित व्यक्ति हो गये हैं, आजकल आपके नाम से किशनगढ़ का

मुहणोत परिवार "हटीसिंहोत" कहलाता है मुणोत हटीसिंहजी के जोगीदासजी शिवदासजी तथा शम्भूदासजी नामक ३ पुत्र हुए। जोगीदासजी ने कृष्णगढ़ महाराजा विरदसिंहजी तथा प्रतापसिंहजी के समय में राज्य की दीवानगी काम किया। तथा किशनगढ़ दरबार प्रतापसिंहजी का जोधपुर महाराजा विजयसिंहजी के साथ मित्रता कराने में आपने एवं आपके चचेरे भाई हमीरसिंहजी ने बहुत श्रम किया, इस कार्य में कृत कार्य्य होने से जोधपुर दरबार ने संवत् १८४९ की द्वितीय वैसाख वदी १० को ताजीम मोती, कड़ा और सोने की जनेऊ प्रदान की। इसी तरह किशनगढ़ दरबार ने भी ताजीम जीकारा और दरबार में सिरे बैठक हाथी सिरोपाव और जागीरी प्रदान की। हिन्दूसिंहजी ने महाराजा बहादुरसिंहजी के राज्य काल में माईदासजी के साथ दीवानगी की।

शिवदासजी – आप भी १८८७ में महाराजा कल्याणसिंहजी के समय दीवान रहे। जयपुर दरबार ने आपको जागीरी के गाँव दिये जो अब तक आपके परिवार के तावे में हैं।

मेहता शंभूदासजी के महेशदासजी तथा शिवदासजी के गंगादासजी और भवानीदासजी नामक पुत्र हुए। महेशदासजी के पुत्र छगनसिंहजी कृष्णगढ़ महाराजा मदनसिंहजी की भगिनी और अवलर नरेश की महाराणी के कामदार थे। आपको अलवर तथा किशनगढ़ दरबारों ने सोना तथा ताजीम इनायत की थी। आपके पुत्र नारायणदासजी बी० ए० आगरे में डिप्टीकलेक्टरी का अध्ययन कर रहे हैं। आपकी वय २७ साल की है। मेहत गंगादासजी, महाराजा मोहकमसिंहजी के समय में राज्य के मुख्य कोषाध्यक्ष रहे। इनके पुत्र गोविंदसिंहजी कई स्थानों के हाकिम रहे और इससमय गोविंददासजी के दत्रक पुत्र सवाईसिंहजी किशनगढ़ स्टेट में हाकिम हैं। भवानीदासजी के पश्चात् क्रमशः भगवानदासजी, रामसिंहजी तथा सोहनसिंहजी हुए। इनके पुत्र सवाईसिंहजी, मेहता गोविंदसिंह, के नाम पर दत्तक गये हैं।

मेहता पृथ्वीसिंहजी किशनगढ़ स्टेट में हाकिम रहे इनके भीमसिंहजी हुए। एवं भीमसिंहजी के पुत्र सोभागसिंहजी, अजीतसिंहजी, जसवन्तसिंहजी और अनोपसिंहजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें सोभागसिंहजी के पुत्र जेतसिंहजी और सालमसिंहजी तथा पौत्र मदनसिंहजी और फूलसिंहजी हुए मदनसिंहजी उदयपुर तथा किशगढ़ स्टेट में हाकिमी करते रहे। अभी मदनसिंहजी के पुत्र वुधसिंहजी और फूलसिंहजी के पुत्र रणजीतसिंहजी मौजूद हैं।

मेहता सूर्य्यसिंहजी के छोटे भाई बाघसिंहजी महाराजा बहादुरसिंहजी के समय फौजबख्शी रहे। इनके प्रतापसिंहजी व धीरजमलजी पुत्र हुए। मेहता प्रतापसिंहजी, महाराजा श्री प्रतापसिंहजी के कृपापात्र थे। धीरजमलजी सरवाड़ के हाकिम रहे। मेहता धीरजसिंहजी के बाद क्रमशः गोवर्द्धनदासजी,



रा० ब० स्वर्गीय मेहता विजयसिंहजी दीवान, जोधपुर



स्वर्गीय श्री मेहता सरदारसिंहजी दीवान, जोधपुर



श्री मेहता कृष्णसिंहजी, जोधपुर



श्री मुणोत सुकनराजजी जोधपुर।

नरसिंहदासजी कृष्णसिंहजी, फोजसिंहजी हुए। नरसिंहजी कारखाने जात का काम करते रहे फोजसिंहजी उदयपुर तथा किशनगढ़ स्टेट के हाकिम रहे। अभी फोजसिंहजी के पुत्र उदयसिंहजी विद्यमान हैं।

राय बहादुर मेहता विजयसिंहजी का खानदान जोधपुर

इस प्रतिष्ठित कुटुम्ब का विस्तृत परिचय ऊपर किशनगढ़ के इतिहास में दे चुके हैं। इसी परिवार के मेहता आसकरणजी के पुत्र मुहणोत देवीचन्दजी रूपनगर महाराजा के दीवान थे। इनके पुत्र चैन-सिंहजी, महाराजा प्रतापसिंहजी किशनगढ़ के दीवान रहे। इनके पुत्र करणसिंहजी संवत् १८६१ से७७ तक किशनगढ़ राज्य के मन्त्री और १८९६ तक दीवान रहे। अपने समय में इन्होंने मरहठा, सिंधिया और अजमेर के इस्तमुरारदारों से कई युद्ध किये। संवत् १८९६ में आपका शरीरान्त हुआ।

मेहता करणसिंहजी के मोखमसिंहजी, विजयसिंहजी तथा छतरसिंहजी नामक ३ पुत्र हुए। मेहता मोखमसिंहजी संवत् १८९६ से १९०८ तक किशनगढ़ स्टेट के दीवान रहे।

मेहता विजयसिंहजी—आपका जन्म संवत् १८६३ की पौष वदी ५ को हुआ। बाल्यावस्था से ही आप बड़े होनहार प्रतीत होते थे। संवत् १८८७ में भीमनाथजी महाराज ने जोधपुर नरेश से इनका परिचय कराया। महाराजा ने इन्हें होनहार जान अपने पास बुला लिया, तब से मेहता विजयसिंहजी जोधपुर रहने लगे।

संवत् १८८८ में बगड़ी ठाकुर जैतसिंहजी व शिवनाथसिंहजी दरबार के विरोधी हो गये, उनको दबाने के लिए फौज के साथ विजयसिंहजी भेजे गये, वहाँ इन्होंने अच्छी बहादुरी दिखाई, इसलिये लौटने पर दरबार ने इन्हें जेतारण परगणे का आरसलाई गाँव इनायत किया।

संवत् १९०२ में मेहता विजयसिंहजी ने कणवाई (डीडवाना) के डाकुओं को तथा धनकोली (डीडवाणा) के विद्रोही ठाकुर को बड़ी बहादुरी से दबाया इसी साल आपने खाटू (नागोर) पर चढ़ाई कर जोधसिंह की जगह भीमसिंह को गद्दी पर बिठाया। कुछ ही दिनों बाद इसी साल शेखावाटी प्रांत के २ बड़े जोरावर लुटेरे डूँगरसिंह और जवाहरसिंह आगरे के किले से भाग गये और नसीराबाद छावनी का खजाना लूट कर मारवाड़ प्रांत में आगये जब ए० जी० जी० ने महाराजा को उन्हें पकड़ने के लिये पत्र भेजा तब महाराजा जोधपुर ने मेहता विजयसिंहजी, सिंघवीकुशलराजजी और किलेदार अनाड़सिंहजी को फौज देकर डाकुओं के पकड़ने के लिये भेजा। थोड़े समय बाद ए० जी० जी० ने अपने नायब ई० एच० मोक्-मेसन और कप्तान हार्ड केसल को मारवाड़ की सेना के साथ भेजा इस फौज के साथ मारवाड़ के और भी

कई ठाकुर और सरदार थे। इस हमले में मेहता विजयसिंहजी ने कप्तान हार्डकैसल के साथ रह कर उक्त डाकू को पकड़ने में सफलता प्राप्त की। इसकी खुशी में दरबार ने उनको एक खास रुक्का दिया और कप्तान ने भी एक पत्र द्वारा आपके चतुराई, दृढ़ता और साहस की प्रशंसा की।

संवत् १९०४ में उक्त डाकुओं के हिमायती सीकर रावराजा के पुत्रों को दबाने के लिये आप एजंट के लेफ्टिनेण्ट के साथ गये, उसमें भी उक्त एजंट ने इनके साहस की बहुत प्रशंसा की। संवत १९०५ में दरबार ने प्रसन्न होकर इन्हें एक मोतियों की कंठी प्रदान की। इसी साल इनको दरबार ने एजंटी का वकील बनाया। इनके लिये जोधपुर का पोलिटिकिल एजंट लिखता है कि "ये एक ऐसे मनुष्य हैं जिनका निर्भय विश्वास किया जा सकता है इनके समान मारवाड़ी अफसरों में बहुत कम आदमी पाये जाते हैं।" उन्हीं दिनों इन्हें दरबार ने दीवानगी के काम पर कई सज्जनों के साथ में नियुक्त किया और एक सहस्र रुपये मासिक वेतन कर दिया। इनकी स्वामिभक्ति, सत्यता, वीरता आदि से दरबार इतने प्रसन्न हुए कि संवत् १९०८ में इन्हें दीवानगी प्रदान की। संवत् १९१३ की पौषसुदी ११ को दरबार ने आपको ३ गाँव प्रदान किये।

संवत् १९१४ में मेहताजी ने अन्य मुत्सुद्दियों के साथ आउवे पर चढ़ाई की। इनकी सहायता के लिये ब्रिटिश सेना भी आई थी। संवत् १९१६ में आसोप-आलणियावास, गूलर और बाजूवास के बागी ठाकुरों पर चढ़ाई कर उन्हें दबाया। संवत् १९२० में जयपुर दरबार ने उन्हें हाथी सिरोपाव और पालकी का सिरोपाव दिया। संवत् १९२१ की माघसुदी ११ के दिन दरबार ने प्रसन्न होकर राजोद (नागोर) नामक गाँव जागीर में दिया।

मेहता विजयसिंहजी दरबार के ही कृपापात्र नहीं थे प्रत्युत पोलिटिकल एजंट और अन्य अंग्रेज आफीसर भी समय २ पर कई सार्टिफिकेट देकर उनकी योग्यता को सराहते रहे हैं। सन् १८६५ की ४ जून को पोलिटिकल एजंट एफ० एफ० निक्सन लिखते हैं, कि "यह एक बुद्धिमान और आदर्श देशी सज्जन हैं, इन्हें मारवाड़ की पूरी जानकारी है, इत्यादि"।

१० सितम्बर १८७१ को भूतपूर्व ऑफिशिटिंग पोलिटिकल एजंट जे० सी० ब्रुक लिखते हैं कि "मैं मेहता विजयसिंहजी को बहुत अरसे से जानता हूँ.................ये एक योग्य तथा फुर्तीले पुरुष हैं, ये उन थोड़े पुरुषों में से एक हैं जो राज्य के कार्य्य करने की योग्यता रखते हैं"।

संवत् १९२८ में द्वितीय महाराजकुमार जोरावरसिंहजी ने खाटू, आगूंता तथा हरसोलाव के ठाकुरों की सलाह से नागोर पर कब्जा कर लिया। इसके लिये युवराज को समझाने के लिये फौज देकर मेहताजी भेजे गये। मेहताजी ने नागोर के किले पर घेरा डाला, इसी अरसे में स्वयं दरबार और पोलिटिकल एजंट भी बहुत सी सेना लेकर पहुँच गये, और एजंट सहित कई मुसाहिबों ने कुमार को समझाया

इस प्रकार जोरावरसिंह को मूंडवें में महाराज के पास हाजिर किया। फ़िरखाट्र पर चढ़ाई करके वहां के ठाकुर को भगा दिया। इससे प्रसन्न हो दरबार ने इनको खास रुक्का दिया। संवत् १९१९ से २१ तक दीवानगी का कार्य फिर मेहताजी के पास रहा।

संवत् १९२९ की माघसुदी १५ को जब महाराजा तख्तसिंहजी स्वर्गवासी हुए और उनके स्थान पर महाराजा यशवन्तसिंहजी गद्दी पर बैठे उन्होंने भी मेहताजी की दीवान पदवी कायम रक्खी और उन्हें सुवर्ण का पाद भूषण और ताजीम दी। संवत् १९३३ की माघ सुदी १५ को दरबार ने मेहताजी को दीवानगी का अधिकार सौंपा जिसे आप आजन्म करते रहे। संवत् १९३४ की चैत वदी १४ को गवर्नमेंट ने प्रसन्न होकर आपको रायबहादुर का सम्मान दिया।

संवत् १९४६ में परगने जोधपुर के बीरड़ाबास और बिरामी नामक गाँव जो संवत् १९३२ में खालसे हो गये थे पुनः इन्हें जागीरी में मिले। इस प्रकार प्रतिष्ठा पूर्वक जीवन बिताते हुए आप संवत् १९४९ की भादवा वदी १२ को स्वर्गवासी हुए। आप अपनी आमदनी का दशांश धर्म कार्य्यों में लगाते थे। दरिद्र तथा बाल विधवाओं को गुप्त सहायता पहुँचाया करते थे। आप विशिष्टाद्वैत वैष्णव सम्प्रदाय के अनुयायी थे। आपने फतेसागर के उत्तरी तट पर श्री रामानुज कोट का मन्दिर बनवाया और वहां कूप तथा कूपिका बनवाई इसके अलावा आपने फतहसागर को गहरा तथा मजबूत करवाकर उसका सम्बन्ध कागड़ी के पहाड़ों से तथा गुलाब सागर में आनेवाले बरसाती पानी से करा दिया। १९४६ में रामानुज कोट में आपने दिव्य देश नामक मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर की सुव्यवस्था के लिये स्थायी प्रबन्ध है जो एक कमेटी द्वारा संचालित होता है।

मेहता सरदारसिंहजी—आपका जन्म संवत् १८७५ की कातीवदी १३ को हुआ। संवत् १९१९ में आपको दरबार ने जालोर की हाकिमी और मोतियों की कंठी तथा कड़ा भेंट किया। संवत् १९२० के फाल्गुन सुदी ४ को आप नागोर के हाकिम बनाये गये। संवत् १९२८ में जब स्वयं महाराजा तथा पोलिटिकल एजेंट फौज लेकर नागौर पर चढ़े थे, उस समय उन्होंने उस परगने की हुकूमत आपको दी थी रायबहादुर मेहता विजयसिंहजी के स्वर्गवासी होजाने पर उनके स्थान पर संवत् १९४९ की भादवासुदी १३ को आप दीवान बनाये गये इस प्रतिष्ठित पद पर आप जीवन भर काम करते रहे। आपका स्वर्गवास आषाढ़सुदी ४ संवत् १९५८ को हुआ। जोधपुर स्टेट के ओसवाल समाज में सबसे अंतिम दीवान आप ही रहे।

सन् १८७८ में जब श्री सिंह सभा की स्थापना हुई उस समय जोधपुर के ओसवाल समाज की ओर से आपको उस सभा के प्रथम सभापति का सम्मान प्राप्त हुआ था आपने उसके लिए २४००) की सहायता भी भेंट की थी।

मेहता कृष्णसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९३४ में हुआ, आप प्रतापगढ़ के मेहता अर्जुनसिंह जी के पुत्र हैं। संवत् १९४५ में रायबहादुर मेहता विजयसिंहजी ने आपको दत्तक लिया। संवत् १९४६ में आपको दरबार से कान के मोती भेंट मिले। संवत् १९४७ में आपको कड़ा, दुपट्टा, मंदील, दुशाला और खीनखाब प्राप्त हुआ। सन् १९२१ में आप होममेम्बर जोधपुर के परसनल असिस्टेंट हुए। उसके बाद आप स्टेट ट्रेझरी के आफिसर रहे। जब ट्रेझरी इम्पीरियल बैंक में रहने लगी तब सन् १९२८ में आप ऑनरेरी मजिस्ट्रेट हुए। रा० ब० मेहता विजयसिंहजी को जो खिरामी और बीढ़ावास नामक गाँव जागीरी में मिले थे उनका आप इस समय भी उपभोग करते हैं। जोधपुर के मुत्सुद्दी समाज में आप एक वजनदार तथा प्रतिष्ठित सज्जन माने जाते हैं। आप भी वैष्णव धर्मानुयायी हैं। आपके पुत्र मेहता गोविन्दसिंहजी तथा गोपालसिंहजी पढ़ते हैं।

मेहता लछमनसिंहजी मुहणोत का परिवार, उदयपुर

हम ऊपर जोधपुर और किशनगढ़ के मुहणोत परिवार का काफ़ी परिचय दे चुके हैं। जिसे पढ़कर पाठकों को भली-भाँति विदित हो गया होगा कि इस परिवार वाले सज्जनों ने दोनों ही रियासतों में किस-किस प्रकार के कार्य्य सम्पन्न कर अपनी प्रतिष्ठा एवम् सम्मान को बढ़ाया और इतिहास में अपना नाम अमर किया। अब हम इसी वंश की किशनगढ़ शाखा से निकले हुए मेहता सूर्य्यसिंहजी के चौथे पुत्र उम्मेदसिंहजी और छोटे पुत्र श्यामसिंहजी के परिवार का परिचय देते हैं। आप लोग किशनगढ़ से चलकर उदयपुर में निवास करने लग गये थे।

मेहता उम्मेदसिंहजी महाराणा भीमसिंहजी के राज्यकाल में याने संवत् १८६३ में उदयपुर आये। यहाँ आकर आप प्रथम कस्टम के काम पर नियुक्त हुए। उस समय आपको सात रुपया रोज़ाना वेतन मिलता था। इससे गुज़ारा न होने के कारण आप महाराणा की ओर से मरहट्टा-शाही में चले गये। कुछ समय पश्चात् किशनगढ़ के तत्कालीन महाराजा मेहता उम्मेदसिंहजी को वापस किशनगढ़ ले गये। लेकिन थोड़े ही समय पश्चात् महाराणा साहब ने इन्हें खास रुक्का भेजकर वापस उदयपुर बुलवाया। अतएव आप संवत् १८८० में वापस उदयपुर आये। इस समय महाराणा ने आपको तनख्वाह के सिवाय दो कुँए जागीर में प्रदान किये। इसी समय से महाराणा साहब ने आपके पुत्र रघुनाथसिंहजी को भी अपनी सेवा में बुलवा लिया।

जब महाराणा जवानसिंहजी गद्दी पर विराजे तो आप भी मेहताजी पर बहुत प्रसन्न रहे। इसी समय आप जहाजपुर में हाकिम बना कर भेजे गये। इसके १½ साल पश्चात् आप वापस उदयपुर बुलवा लिये गए एवम् न्याय के महकमें का काम आपके सिपुर्द किया गया। इसके बाद आप डोली के (माफ़ी के) काम पर नियुक्त हुए। इसी समय आपको सिरोड़ी नामक गांव जागीर में बक्षा गया। इसके पश्चात आप वापस महकमा न्याय में नियुक्त हुए। आपको दरबार में बैठक और जीकारा आदि बक्षे हुए थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९०४ में हो गया। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः रघुनाथसिंहजी, दौलतसिंहजी और मोतीसिंहजी थे। इनमें से मोतीसिंहजी मेहता श्यामसिंहजी के पुत्र रामसिंहजी के नाम पर दत्तक चले गये।

मेहता रघुनाथसिंहजी पर महाराणा स्वरूपसिंहजी की बड़ी कृपा रही। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा साहिब ने आपको गांव प्रदान किया। आप जहाजपुर के पांच परगना—मगरा, खेरवाड़ा आदि जिलों में हाकिम रहे। आपने महाराणा शंभुसिंहजी के समय में अहलियान दरबार (मिनिस्टरशिप) का काम किया। संवत् १९२५ के चैत्र मास में आपने महाराणा साहब की पधरावनी की। इस अवसर पर महाराणा साहब ने प्रसन्न होकर आपको पैरों में पहनने के लिए सोने की कड़ा जोड़ी प्रदान कर सम्मानित किया। दरबार ने आपके पुत्र माधोसिंहजी को कंठी तथा आपके छोटे भाई दौलतसिंहजी और मोतीसिंहजी तथा भतीजे उर्जुनसिंहजी को कंठी और पौंचे बक्षकर सम्मानित किया। मेहता रघुनाथसिंहजी ने सरहद्दी जिलों में रहकर सरहद्द के झगड़ों का निपटारा किया, जिलों की तहसील की आपने वृद्धि की और हर तरह दरबार को प्रसन्न रखा। महाराणा साहब ने भी प्रसन्न होकर समय २ पर कई पट्टे, परवाने, खास रुक्के, जीकरा, आदि बक्ष कर आपका सम्मान बढ़ाया। आपका स्वर्गवास संवत् १९२८ में हो गया। आपके नाम पर बावनी की गई थी उसमें महाराणा साहब ने २५००) प्रदान किये थे।

मेहता माधोसिंहजी भी अपने पिताजी की ही भांति मगरा, खेरवाड़ा, कुम्हलगढ़, खमनोर, सायरा आदि स्थानों पर हाकिम रहे। संवत् १९३१ में आप फौजबक्षी नियुक्त हुए। आपके कामों से प्रसन्न होकर दोनों ही महाराणाओं ने आपको जीकारा, बैठक, मांझा, तथा पैरों में सोना बक्षा। इसी समय आपको पालकाखेड़ा नामक ग्राम जागीर स्वरूप मिला। जिस प्रकार उदयपुर के महाराणा साहब की आप पर बहुत कृपा रही, उसी प्रकार किशनगढ़ नरेश श्री पृथ्वीसिंहजी और शार्दूलसिंहजी की भी आप पर बड़ी कृपा रही। आप लोग भी आप की हवेली पर पधारे थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९४६ में हो गया। आपके कोई पुत्र न होने से किशनगढ़ से मेहता पृथ्वीसिंहजी के पौत्र मेहता बलवन्तसिंहजी को आपने दत्तक लिया।

मेहता बलवन्तसिंहजी पर महाराणा फतेसिंहजी की बड़ी कृपा रही। आपके पिताजी का स्वर्गवास हो जाने पर आपको पुश्तैनी फौजबक्षीगिरी का काम मिला। आपको भी बैठक और जीकारा बक्षा हुआ था। आपका स्वर्गवास बहुत शीघ्र ही हो गया। आपके एकमात्र पुत्र लछमनसिंहजी हैं।

मेहता लछमनसिंहजी उस समय नाबालिग थे जब कि आपके पिताजी का स्वर्गवास हुआ था। अतएव आपकी पुश्तैनी बक्षीगिरी का काम आपके नामसे मेहता दौलतसिंहजी देखते थे। बालिग होने पर संवत् १९६३ में आपको रंग भवन की खिदमत दी गई। संवत् १९७२ में आपको बक्षी-गिरी फिर से दी गई। संवत् १९७९ में आप ट्रेझररी आफ़िसर नियुक्त हुए। महाराणा भोपालसिंहजी की भी आप पर बड़ी कृपा है। दरबार जागीर के अलावा आपके लिए खास तौर पर तनख्वाह भी मुकर्रर फरमाई तथा नाव की बैठक भी बक्षी। आपके केसरीसिंहजी नामक एक पुत्र हैं।

कुँवर केसरीसिंहजी की पढ़ाई एल. एल. बी., तक हुई। आपको वर्तमान महाराणा साहब ने स्वरूपसाही रुपयों तथा पाटों को गलवाकर उनके स्थान पर नये चित्तौड़ी रुपये ढलवाने के लिए कलकत्ता मिंट में भेजा। सन् १९३२ में आप वहाँ से पौने दो करोड़ रुपये ढलवाकर उदयपुर लाये। इस काम को आपने बड़ी होशियारी से किया। इससे प्रसन्न होकर महाराणा साहब ने आपको ७५०) रुपये इनाम स्वरूप प्रदान किये तथा आपके लिये स्थायी वेतन का भी प्रबन्ध कर दिया। आपके खुमानसिंहजी नामक एक पुत्र हैं।

मेहता श्यामसिंहजी के पुत्र रामसिंहजी के कोई पुत्र न होने से मेहता उम्मेदसिंहजी के तीसरे पुत्र कुँवर मोतीसिंहजी दत्तक लिये गये। आप बुद्धिमान और होशियार व्यक्ति थे। आप संवत् १९२० में फौजी के सेनापति रहे। आपने अपने समय में कई कार्य्य किये। इसके अतिरिक्त आपने हुरड़ा जिले में अपने नाम से मोतीपुरा नामक एक ग्राम बसाया। पहाड़ी जिले में, नया शहर जिसे आजकल देवरिया भी कहते हैं, आप ही ने आबाद किया। आप सहाड़ी, हुरड़ा, मांडलगढ़ इत्यादि जिलों में हाकिम रहे। आपके कामों से प्रसन्न होकर तत्कालीन महाराणा शम्भुसिंहजी ने बोरड़ी का खेड़ा उर्फ मोतीपुरा नामक ग्राम आपको जागीर में बक्षा। आपको दरबार में बैठक का सम्मान भी प्राप्त था। आपका स्वर्गवास हो गया। आपके दो पुत्र हुए, जिनके नाम मेहता सोहनसिंहजी और मोहनसिंहजी हैं। सोहनसिंहजी किशनगढ़ में रामसिंहजी मेहता के यहां दत्तक गये।

मेहता मोहनसिंहजी अपने जीवन में बड़े उद्योगी व्यक्ति रहे। आपने कई स्थानों में काम किया। आप हैदराबाद, जोधपुर, भावनगर, अलवर, इन्दौर आदि कई स्थानों पर काम करते रहे।

करीब तीन साल से आप दरबार की ओर से उदयपुर बुलवाये गये। वर्तमान समय में आप यहाँ ओवर सियर के पद पर काम कर रहे हैं।

मेहता सुकनराजजी मुहणोत, जोधपुर

मुहणोत हरीसिंहजी के पुत्र दीपचन्दजी संवत् १८८८ में जोधपुर में हाकिम थे। दीपचन्दजी के जीवराजजी, धनराजजी, शिवराजजी और उदयराजजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें से मुहणोत धनराजजी दौलतपुरा, जालोर, सांचोर तथा भीनमाल के हाकिम रहे। संवत् १९०२ में जोधपुर दरबार ने इन्हें युवराज श्री जसवन्तसिंहजी के अध्यापक बनाकर अहमदनगर भेजा। संवत् १९१६ में आप जालोर के कोतवाल और फिर बाईसाहिबा के इजाफ़े के गाँवों के प्रबन्धक बनाये गये। ये महाराजा श्री तखतसिंहजी की महाराणी राणावतजी के कामदार थे। इनके विजयराजजी, रूपराजजी तथा फोजराजजी नामक ३ पुत्र हुए।

मुहणोत रूपराजजी जयपुर के महाराजा सवाई रामसिंहजी के यहाँ संवत् १९३२ से ४१ तक रसोड़ा तथा ऐन कोठार के दारोगा रहे। पश्चात् जागीर दारों के इंतजामी सीगे में जोधपुर में मुलाजिम हुए और ठिकाना कुड़की तथा पांचोता के पट्टों का काम करते रहे। संवत् १९५४ में इनका शरीरान्त हुआ। इनके छोटे भाई फोजराजी बाई साहिबा के इजाफ़े के गाँवों का काम करते रहे।

मुहणोत रूपराजजी के सोहनराजजी तथा सुकनराजजी नामक दो पुत्र हुए। मुणोत सुकनराजजी का जन्म संवत् १९४१ की पौष वदी ८ को हुआ। आप बड़े योग्य और मिलनसार सज्जन हैं। ओसवाल समाज के हितसम्बन्धी कार्यों में आप बड़ा भाग लेते हैं। आप श्री सिंह सभा की मैंनेजिंग कमेटी के सदस्य तथा फूलचन्द कन्यापाठशाला के सेक्रेटरी हैं। आप राजपूताना इन्शोरेन्स कंपनी के डायरेक्टर हैं आपकी समाज में अच्छी प्रतिष्ठा है। सन् १९०२ से आप पी० डब्ल्यू० डी० और आॅइस फेक्टरी में सर्विस करते रहे। इधर १२ सालों से आप जोधपुर स्टेट इलेक्ट्रिक कारखाने में स्टोर कीपर हैं। आपकी स्टेट में ३१ सालों की सर्विस है। आपके भ्राता सोनराजजी कस्टम इन्स्पेक्टर थे।

इसी प्रकार इस परिवार में विजयराजजी के पुत्र कुशलराजजी ने ३५ सालों तक पुलिस विभाग में सर्विस की। इनके पुत्र विशनराजजी जनानी ड्योढ़ी पर नौकर हैं, मुणोत फोजराजजी के पुत्र गुमानराजजी सायर इंस्पेक्टर हैं। इसी प्रकार मुणोत जीवराजजी के पश्चात् क्रमशः पृथ्वीराजजी और चन्द्राजजी हुए। इस समय चन्द्राजजी के पुत्र हंसराजजी जालोर में वकालत करते हैं। मुणोत उदयराजजी के प्रपौत्र सूरजराजजी पी० डब्ल्यू० डी० वाटर वर्कस में हैं।

रीयांवाले सेठों का खानदान अजमेर

राजा धूहड़जी के पश्चात् क्रमशः रायपालजी, मोहणजी, महेशजी, छेवटजी, पहेलजी, कोजाजी, जयमलजी और ढोलाजी हुए। ढोलाजी की सन्तानें ढोलावत मुणोत कहलाईं। इनके पश्चात् ढोलाजी, तेजसिंहजी, सिंहमलजी और जीवनदासजी हुए।

नगर सेठ जीवनदासजी—मुहणोत जीवनदासजी कई पीढ़ियों से रीयां (पीपाड़ के पास) में निवास करते थे। सेठ जीवनदासजी अथवा इनके पिताजी रीयां से दक्षिण प्रांत में गये और वहां पेशवाओं के खजांची मुकर्रर हुए तथा पूने में इन्होंने दुकान स्थापित कर काफी सम्पत्ति और स्थाई जायदाद उपार्जित की। आपके समय से ही यह खानदान प्रसिद्धि में आया। कहते हैं कि एक बार जोधपुर महाराजा मानसिंहजी से किसी अंग्रेज ने पूछा कि मारवाड़ में कितने घर हैं, तो दरबार ने कहा कि "ढाई घर हैं, एक घर रीयां के सेठों का, दूसरा बीड़लाड़े के दीवानों का और आधे में सारा मारवाड़ है।"

कहने का तात्पर्य यह है कि उस समय यह परिवार ऐसी समृद्धि पूर्ण अवस्था में था। जोधपुर दरबार महाराजा विजयसिंहजी ने संवत् १८२९ में सेठ जीवनदासजी को नगर सेठ की उपाधि तथा १ मास तक क़ैद में रखने का अधिकार बख्शा था। रीयां मे इनकी उत्तम छत्री बनी हुई है। मारवाड़ में यह किम्वदन्ती प्रसिद्ध है, कि एक बार जोधपुर दरबार को द्रव्य की विशेष आवश्यकता हुई और दरबार सांडनी पर सवार होकर रीयां गये, उस समय यहां के सेठों ने एक ही सिक्के के रुपयों के ऊँटो की रीयां से जोधपुर तक कतार लगवा दीं। इससे रीयां गांव, सेठों की रीयां के नाम से विख्यात हुआ। इस प्रकार की कई बातें सेठ जीवनदासजी के सम्बन्ध में प्रचलित हैं। जोधपुर राज्य की ख्याति के अलावा पेशवा राज्य में भी इनका काफी दबदबा था। उस समय ये करोड़पति श्रीमंत माने जाते थे। पूना तथा पेशवाई हद में इनकी कई दुकानें थीं, इसके अलावा अजमेर में भी उन्होंने अपनी एक ब्रांच खोली थी। इनके गोवर्द्धनदासजी रघुनाथदासजी तथा हरजीमलजी नामक तीन पुत्र हुए। मुहणोत गोवर्द्धनदासजी के खींवराजजी तथा हरचन्ददासजी, रघुनाथदासजी के शिवदासजी और हरजीमलजी के लक्ष्मनदासजी नामक पुत्र हुए। इनकी दुकानें दक्षिण तथा राजपूताने के अनेकों स्थानों में थीं। शिवदासजी के पुत्र रामदासजी हुए।

मुहणोत रामदासजी तथा लक्ष्मणदासजी—आप पर जोधपुर महाराजा मानसिंहजी की बड़ी कृपा थी। दरबार ने इन दोनों सज्जनों को समय-समय पर पालकी, सिरोपाव, कड़ा कंठी, कीनखाब, मोती वगैरा इनायत किये थे। महाराज मानसिंहजी और उदयपुर दरबार से इन्हें कई परवाने मिले थे। संवत् १८९९ में मुणोत लछमणदासजी का देहान्त हुआ। इस समय इनका परिवार कुचामण में बसता है। जिसमें पन्नालालजी, तेजमलजी, सुजानमलजी वगैरा इस समय विद्यमान हैं।

सेठ हमीरमलजी—मुहणोत रामदासजी अजमेर में और लछमणदासजी कुचामण में निवास करने लगे। रामदासजी के पुत्र हमीरमलजी हुए। इनकी सिंधिया दरबार में बैठक थी। संवत् १९११ में जोधपुर दरबार ने इन्हें पुनः सेठ की पदवी और पालकी, सिरोपाव, दरबार में बैठने का सम्मान तथा व्यापार के लिए आधे महसूल की माफ़ी का आर्डर और उनके घरू व्यवहार के माल पर पूरी चुङ्गी माफ रहने का हुकुम प्रदान किया। जब सेठ हमीरमलजी अपने पंजाब के खजानों की देख-भाल करने गये, तब फायनेंस कमिश्नर पंजाब और कमिश्नर जालंधर डिविजन ने तहसीलदारों के नामपर सेठ हमीरमलजी की पेशवाई के लिए स्टेशन पर हाजिर रहने के हुक्म जारी किये थे। सेठ हमीरमलजी के धीरजमलजी, चंदनमलजी और चांदमलजी नामक तीन पुत्र हुए, इन तीनों भ्राताओं का कारबार संवत् १९३४—३५ में अलग-अलग होगया। धीरजमलजी के कनकमलजी तथा धनरूपमलजी नामक दो पुत्र हुए, इनमें से धनरूपमलजी, चंदनमलजी के नाम पर दत्तक चले गये। इस समय कनकमलजी के पुत्र सागर में तथा धनरूपमलजी लश्कर में व्यापार करते हैं।

राय साहिब सेठ चांदमलजी—सेठ चांदमलजी का जन्म संवत् १९०५ में हुआ। संवत् १९२१ में जोधपुर ने पुनः इनको "सेठ" की पदवी दी। इनके समय में कोहाट, कुर्रम, मलाकान, पेशावर, जालंधर, हुशियारपुर, भागसू, सागर और मुरार, सांभर, पचपद्रा, डीडवाना के ब्रिटिश खजाने इनकी फ़र्म के अधिकार में थे और बम्बई, जबलपुर, नरसिंहपुर, मिरजापुर, धर्मशाला, पेशावर, गवालियर, जोधपुर, सागर, अजमेर, भेलसा, इन्दौर, झांसी, मेमिन और आज़मगढ़ में दुकानें और यू० पी०, सी० पी० में जमींदारी थी।

रायसाहब सेठ चांदमलजी लोकप्रिय पुरुष थे। संवत् १९२५ तथा ३४ के राजपूताने के घोर दुष्कालों के समय आपने गरीब प्रजा की वहुत सहायता की थी। आप जबान के बड़े पक्के जीवदया और परोपकार के कामों में उदारतापूर्वक सम्पत्ति खर्च करनेवाले व्यक्ति थे। आप स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस के जन्मदाता और जनरल सेक्रेटरी थे तथा उसके मोरवी के प्रथम अधिवेशन का प्रमुख स्थान आपने सुशोभित किया था। इसी तरह उसके अजमेर वाले चौथे अधिवेशन के समय में भी आपने हजारों रुपये व्यय किये थे। सन् १८६८ में आप म्युनिसिपल कमिश्नर और १८७८ में ऑनरेरी मजिस्ट्रेट दर्जा दोयम बनाये गये। सन् १८७७ के देहली दरबार में आप निमंत्रित किये गये, उस समय लार्ड लिटन ने आपको राय साहिब का खिताब, स्वर्णपदक तथा सार्टिफिकेट दिया था। सन् १८७८—७९ में जब काबुल का युद्ध आरम्भ हुआ तब आपने गवर्नमेंट को १ करोड़ रुपये खजाने से दिये थे इससे प्रसन्न होकर पंजाब गवर्नर ने सेठजी के एजंट को ख़िलअत और दुपट्टा इनायत किया था। इस प्रकार प्रतिष्ठापूर्ण जीवन बिताकर १९७१ में आपका देहावसान हुआ। आपके देहावसान के समय एक बड़ी रकम धरमादा खाते निकाली गई थी। आपके घनश्याम-

दासजी, रा० ब० छगनमलजी, मगनमलजी और प्यारेलालजी नामक ४ पुत्र हुए। इन भ्राताओं में से सेठ घनश्यामदासजी का कारबार संवत् १९७३ के श्रावण मास में अलग हो गया। सेठ घनश्यामदासजी को छोड़कर और भ्राताओं के कोई सन्तान नहीं हुई।

सेठ घनश्यामदासजी—आपका जन्म संवत् १९४१ में हुआ। आपका शरीरावसान संवत् १९७५ की फागुन वदी ९ को हुआ। आपके नौरतनमलजी तथा रिखबदासजी नामक २ पुत्र हुए।

राय बहादुर सेठ छगनमलजी का जन्म संवत १९४३ में हुआ। स्था० कान्फ्रेंस की ऑफिस जब अजमेर में थी, तब आप उसके सेक्रेटरी थे। आप अजमेर के म्युनिसिपल कमिश्नर और ऑनरेरी मजिस्ट्रेट शिप के सम्मान से सम्मानित हुए थे। भारत सरकार ने आपके गुणों से प्रसन्न होकर आपको रायबहादुर का खिताब इनायत किया। ७ वर्ष तक आप श्वे० जैन कान्फ्रेंस के ऑनरेरी सेक्रेटरी रहे। आपने अपने व्यय से एक हुन्नरशाला चलाई थी। आपका देहावसान संवत् १९७४ की चैत सुदी ४ (ता० २६ मार्च सन् १९२०) को केवल ३१ साल की वय में हो गया।

सेठ मगनमलजी का जन्म १९४५ में हुआ। आपकी धार्मिक कार्यों में विशेष रुचि थी आप बड़ी शांतवृत्ति के पुरुष थे आपका अंतकाल १९८२ की मगसर सुदी ८ को हुआ। सेठ प्यारेलालजी का जन्म १९५१ की माघ सुदी २ को हुआ। आप इस समय विद्यमान हैं। आप दोनों भ्राताओं ने सार्वजनिक व लोकप्रिय कार्यों में बहुत-सा सहयोग लिया। पुष्कर गौशाला, अहिंसा प्रचारक, बंगलोर गौशाला, घाटकोपर जीवदया मंडल आदि संस्थाओं को आपने बहुतसी सहायतायें दी हैं। आपके विचार सात्विक हैं। आपके बड़े भ्राता मगनमलजी, अजमेर के म्युनिसिपल कमिश्नर और आनरेरी मजिस्ट्रेट थे। आप स्था० कान्फ्रेन्स के जनरल सेक्रेटरी और सुखदेव सहाय जैन प्रेस के ऑनरेरी सेक्रेटरी थे।

सेठ नौरतनमलजी रीयां वाले का जन्म संवत् १९५८ की आसोज सुदी १ को हुआ। आपका कारबार कई स्थानों पर फैला हुआ है, धार्मिक और सामाजिक कार्यों में आप खूब भाग लेते हैं।

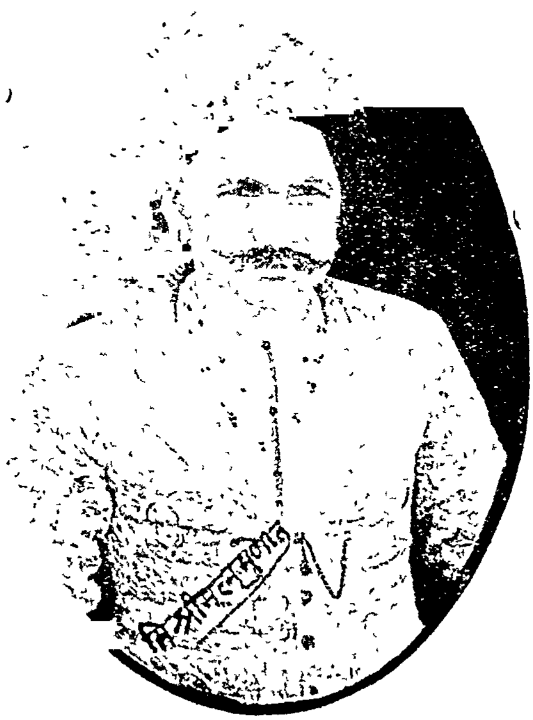
सेठ रिखबदासजी का जन्म संवत् १९६४ के श्रावण पौर्णिमा को हुआ था। ४–५ सालों तक इन्होंने गुरुकुल कांगड़ी में शिक्षा पाई थी, इनका विवाह कोटे में बड़ी धूमधाम से हुआ था। इनका संवत् १९८४ की आसोज वदी ७ को अचानक पति पत्नी का एक साथ अंतकाल हो गया। इस समय आपकी कोई संतान नहीं है।



सेठ नौरतनमलजी रींया वाले, अजमेर.



मेहता सोहनसिंहजी मुणोत, किशनगढ़.



श्री मिश्रीलालजी मुणोत, ब्यावर.



मेहता मोहनसिंहजी मुणोत, उदयपुर.

सेठ लछमणदासजी मुहणोत रीयांवालों का परिवार, कुचामण

इस परिवार का मूल निवास स्थान रीयां है। रीयाँ के नगरसेठ जीवनदासजी अपने समय के नामी गरामी श्रीमंत थे। आपका विस्तृत परिचय ऊपर दिया जा चुका है। सेठ जीवनदासजी के गोवर्द्धनदासजी, रघुनाथदासजी तथा हरजीमलजी नामक तीन पुत्र हुए। संवत् १८६९ में सेठ हरजीमलजी के पुत्र मुहणोत लछमणदासजी रीयाँ से देवगढ़, किशनगढ़ आदि स्थानों में होते हुए कुचामण आये और यहीं आपने अपना निवास बनाया।

मुहणोत रघुनाथदासजी के पौत्र रामदासजी तथा लछमणदासजी पर जोधपुर दरबार महाराजा मानसिंहजी बड़ी कृपा रखते थे। राज्य के साथ इनका लेनदेन उस समय बड़े परिमाण में होता था इनकी मातवरी से खुश होकर दरबार ने इन्हें कई खास रुक्के भी इनायत किये थे। जोधपुर दरबार ने पालकी, सिरोपाव, कड़ाकंठी, मोती, दुपट्टा, कीनखाब वगैरा समय-समय पर प्रदान कर इस परिवार की इज्जत की थी। साथ ही इन भ्राताओं के लिये मारवाड़ में बहुत-सी लागें भी बंद कर दी थीं।

इसी प्रकार रामदासजी तथा लछमणदासजी को भी उदयपुर दरबार से व्यापार करने के लिये आधे महसूल की माफी के पत्र मिले थे। इस परिवार ने मेवाड़ प्रान्त में भी अपनी दुकानें स्थापित की थी। संवत् १८७७ की काती वदी १३ को रामदासजी तथा लछमणदासजी का कारबार अलग-अलग हुआ। इस प्रकार प्रतिष्ठामय जीवन बिताते हुए सेठ लछमनदासजी का संवत् १८९९ की जेठ सुदी ४ को स्वर्गवास हुआ। सेठ लछमणदासजी के पुत्र फतेमलजी संवत् १९०९ की आसोज सुदी १० को गुजरे।

सेठ फतेमलजी के नाम पर नींमाली से सेठ धनरूपमलजी मुहणोत दत्तक लाये गये, इनके समय में अजमेर, जयपुर तथा सांभर में दुकानें रहीं। संवत् १९५३ की माघ सुदी १० को इनका शरीरान्त हुआ। इनके सूरजमलजी, पन्नालालजी तथा तेजमलजी नामक तीन पुत्र हुए, इनमें सेठ सूरजमलजी संवत् १९६१ में गुजरे। सेठ पन्नालालजी ने ५ साल पहिले हिंगनघाट में तथा २ साल पहिले बम्बई में दुकानें की। सेठ सूरजमलजी के पुत्र कल्याणमलजी, पन्नालालजी के पुत्र उम्मेदमलजी तथा तेजमलजी के पुत्र कल्याणमलजी, सरदारमलजी और इन्द्रमल हैं। इस कुटुम्ब के लिये कुचामण में कई लागे बन्द हैं तथा यह परिवार यहाँ "सेठ" के नाम से व्यवहृत होता है। आपके यहाँ लेनदेन तथा बोहरगत का व्यवसाय होता है।

सेठ लक्ष्मीचंदजी मुहणोत उज्जैन

इस परिवार का इतिहास रीयां के सेठों से शुरू होता है। उसी खानदान के सेठ गुमानजी के पुत्र प्रतापमलजी करीब १०० वर्ष पूर्व भेलसा नामक स्थान पर व्यापार के निमित्त गये। वहाँ आप साधारण लेनदेन का व्यापार करते रहे। आपके क्रमशः सेठ नवलमलजी और किशनचंदजी नामक दो पुत्र हुए। आप दोनों ही भेलसा से जबलपुर गये और वहाँ राजा गोकुलदासजी के यहाँ काम करने लगे। पश्चात् अपनी होशियारी से नवलमलजी जबलपुर की बंगाल बैंक शाखा के खजांची हो गये। आपने अच्छी सम्पत्ति उपार्जित की। आपके पुत्र न होने से आपके भाई किशनमलजी के दो पुत्रों में से एक लक्ष्मीचंदजी को दत्तक लिया तथा दूसरे पुत्र फूलचंदजी अपने पिताजी के पास ही रहे।

बाबू लखमीचंदजी बड़े योग्य, होशियार और समझदार व्यक्ति हैं। पहले तो आपने राजा गोकुलदासजी के यहाँ काम किया पश्चात् आप उज्जैन के विनोद मिल में एकाउन्टेन्ट हो गये। आज कल आप बीमा की एजंसी का काम करते हैं। आप यहाँ के आनरेरी मजिस्ट्रेट तथा चेम्बर आफ़ कामर्स के सेक्रेटरी हैं। आपके समीरचंदजी नामक एक दत्तक पुत्र हैं। आपने अपने पिताजी के स्मारक स्वरूप अपने भवन का नाम 'कृष्ण निवास' रखा है।

मुहणोत हस्तीमलजी, जोधपुर

मुहणोत सोभागमलजी जालौर में निवास करते थे तथा वहाँ के कोतवाल थे। उनका अंतकाल लगभग संवत् १९५९ में हुआ। इनके पूर्वजों का राजकुमार पाल के समय का बनाया हुआ मन्दिर जालौर के किले में विद्यमान है।

मुहणोत सौभागमलजी के २ पुत्र हुए। मिश्रीमलजी तथा हस्तीमलजी। मिश्रीमलजी का संवत् १९५७ में अन्तकाल हो गया। मुहणोत हस्तीमलजी का जन्म संवत् १९३४ में हुआ। आपने जालौर में हिन्दी तथा उर्दू का ज्ञान प्राप्त किया और संवत् १९५५-५६ से जोधपुर चीफ कोर्ट की वकालत शुरू की। इस समय आप जोधपुर में फर्स्ट क्लास वकील माने जाते हैं।

मुहणोत हस्तीमलजी के मांगीलालजी, मोहनलालजी तथा रङ्गरूपमलजी नामक तीन पुत्र हैं। मांगीलालजी का भादवा सुदी ७ संवत् १९६१ में जन्म हुआ। आपने सन् १९३१ में इलाहाबाद युनिवर्सिटी से बी. ए. एल. एल. बी. पास किया, तथा वर्तमान में आप बालोतरा (जोधपुर-स्टेट) में

वकीली करते हैं। इन्होंने सन् १९२७ में एक साल तक महकमा बन्दोबस्त में माफीयात आफीसर का काम किया था। आपके छोटे भाई पढ़ते हैं।

सेठ मिश्रीमलजी मुहणोत, ब्यावर

यह परिवार सं० १९०१ तक तीन पीढ़ियों से जोधपुर में उदयचन्द बरदीचन्द के नाम से व्यापार करता रहा। वहाँ से इसी साल उम्मेदराजजी मेघराजजी दोनों भ्राता पाली चले गये, तथा वहाँ दलाली करने लगे। इनके पुत्र कुन्दनमलजी तथा जसवन्तरायजी हुए। कुन्दनमलजी का जन्म संवत् १९०१ में हुआ। आप १९२८ में पाली से ब्यावर चले आये। पाली में आपका कपड़े का व्यापार था तथा अभी भी वहाँ इस परिवार के मकान हैं। कुन्दनमलजी का शरीरावसान् १९५३ की अषाढ़ सुदी ११ को और जसवन्तरायजी का वैशाख वदी १४ संवत् १९८० में हुआ।

मुहणोत कुन्दनमलजी के जवानमलजी मिश्रीमलजी तथा केसरीमलजी नामक ३ पुत्र हुए, इनमें मिश्रीमलजी, जसवन्तराजजी के नाम पर दत्तक गये। मुहणोत मिश्रीमलजी का जन्म संवत् १९३६ की मगसर सुदी ३ को हुआ। आपने बहुत सट्टा किया, १९५२ में कपड़े की दुकान की, पर संवत् १९७६ तक आपको विशेष लाभ न हुआ। १९७६ में पन्नालालजी कांकरिया की भागीदारी में १ लाख रुपया सट्टे में कमाया। इस समय भी आपके यहाँ प्रधानतया सट्टे का ही काम होता है।

मुहणोत मिश्रीमलजी की धार्मिक व परोपकारी कामों की ओर अच्छी निगाह है। आप ब्यावर के ओसवाल समाज में अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं। आपके बड़े पुत्र गुलाबचन्दजी २१ साल के हैं। शेष मूलचन्दजी, लखमीचन्द तथा केवलचन्द हैं।

सेठ छोगमल हजारीमल मुहणोत इटारसी

यह परिवार नागोर (जोधपुर स्टेट) का निवासी है। वहाँ से सेठ छोगमलजी मुहणोत संवत् १९४१ में इटारसी आये, तथा अनाज किराना और सराफी कारबार चालू किया। संवत् १९५५ में आपका शरीरान्त हुआ। आपके पुत्र सेठ हजारीमलजी मुहणोत का जन्म संवत् १९१७ में हुआ। सेठ हजारीमलजी मुहणोत ने इस दुकान के व्यापार में तथा खानदान की इज्जत आबरू में तरक्की की। आपके नाम पर सेठ

हेमराजजी मुहणोत नागोर से दत्तक लाये गये। आपके दत्तक आने पर पञ्चों ने फैसला कर सेठ हजारीमलजी मुहणोत की कन्या मैना बाई तथा आपके हिस्से से १० हजार रुपया मन्दिर बनवाने के अर्थ निकाले। फलतः सेठ हेमराजजी मुहणोत ने संवत् १९७८ में एक श्वे० जैन मन्दिर का निर्माण कराया। आपने भी दुकान के व्यापार तथा प्रतिष्ठा को अच्छी उन्नति प्रदान की। संवत् १९८७ में आपने नोपतजी की ओली का उपना तथा साध्वीजी रतनश्रीजी का चतुर्मास कराया। इस समय आपके यहाँ इटारसी में छोगमल हजारीमल मुहणोत के नाम से सराफी तथा बेङ्किग कारबार होता है।

सेठ रतनचन्द छगनमल मुहणोत, अमरावती

लगभग संवत् १९२० में सेठों की रीयां नामक स्थान से व्यापार के निमित्त सेठ हुकमीचन्दजी मुहणोत के पुत्र मानमलजी, गुलाबचन्दजी, तखतमलजी और बख्तावरमलजी ने दक्षिण प्रांत के केलसी (रत्नागिरी) नामक स्थान में जाकर दूकान की। थोड़े समय बाद सेठ मानमलजी और गुलाबचन्दजी दोनों भाइयों ने लछमनदासजी मुहणोत की भागीदारी में अमरावती में दूकान की। सेठ लछमनदासजी मुहणोत संवत् १९२२ में रीयाँ से अमरावती आये।

सेठ मानमलजी के नवलमलजी तथा धनराजजी नामक दो पुत्र हुए, इनमें धनराजजी को गुलाबचन्दजी के नाम पर दत्तक दिया। मुहणोत नवलमलजी ने संवत् १९५१ में बम्बई तथा गुलेजगुड़ में दूकानें कीं। इनके रतनचन्दजी, चांदमलजी तथा सूरजमलजी नामक तीन पुत्र हुए, जिनमें रतनचन्दजी, तखतमलजी के नाम पर दत्तक गये। मुहणोत धनराजजी के पुत्र पनराजजी और मगनमलजी तथा रतनचन्दजी के पुत्र छगनमलजी और फतेचन्दजी हुए। इन भ्राताओं में सेठ मगनमलजी और फतेचन्दजी का व्यापार सम्मिलित है। मुहणोत भीकमचन्दजी ने रीयां में एक धर्मशाला और कबूतरखाना बनवाया है। आप लछमनदासजी के नाम पर दत्तक आये हैं। इस समय सेठ मगनमलजी तथा फतेचन्दजी का व्यापार अमरावती में रतनचन्द छगनमल के नाम से, गुलेजगुड़ में धनराज मगनमल के नाम से, अंजरला (रत्नागिरी) में मानमल गुलाबचन्द के नाम से तथा केलसी (रत्नागिरी) में नवलमल चांदमल के नाम से होता है।

सेठ हणुतमल अमरचन्द मुहणोत रालेगाँव (बरार)

यह परिवार हरसोर (पीथावला—अजमेर के पास) नामक स्थान से लगभग १०० साल पूर्व हिंगनघाट आया। सेठ हणुतमलजी मुहणोत ने हिंगनघाट आकर व्यवसाय शुरू किया, यहाँ से आपने रालेगाँव (हिंगनघाट से १२ कोस पर) नामक गाँव में कृषि का काम बढ़ाया और लगभग ६० साल पूर्व से आप रालेगाँव में ही निवास करने लग गये। आपने मुहणोत अमरचन्दजी को पीपाड़ से दत्तक लिया। सेठ रतनचन्दजी मुहणोत ने बहुत सम्पत्ति उपार्जित की। आपका संवत् १९७७ में स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र रतनचन्दजी का जन्म संवत् १९४० में हुआ। सेठ रतनचन्दजी मुहणोत ने कारबार को और ज्यादा बढ़ाया। आपके यहाँ मालगुजारी, कृषि और साहुकारी लेन-देन का व्यापार होता है। बरार प्रांत के प्रधान लक्षाधीश ओसवाल सज्जनों में आपकी गणना है।

सेठ रतनचन्दजी मुहणोत स्थानकवासी आम्नाय पालते हैं। आपके कोई पुत्र नहीं है। आप को धार्मिक जानकारी अच्छी है।

सेठ केसरचन्द गुलाबचन्द मुहणोत, अहमदनगर

यह कुटम्ब बुजकुला (मेवाड़) का निवासी है। बापूलालजी मुहणोत मेवाड़ से व्यापार के निमित्त अहमदनगर ज़िले के अन्तर्गत नेवाला ग्राम में आये। इनके पुत्र केशरीचन्दजी का जन्म १९२२ में और गुलाबचन्दजी का १९३२ में हुआ। केशरीचन्दजी ने इस दूकान के धन्धे को ज़्यादा बढ़ाया तथा अपनी एक ब्रांच अहमदनगर में खोली। गुलाबचन्दजी का संवत् १९७५ में शरीरावसान हुआ।

सेठ केशरीचन्दजी के पुत्र मोतीलालजी का जन्म १९५० में, चन्दनमलजी का जन्म १९६० में नेमीचन्दजी का १९६४ में तथा चांदमलजी का १९६७ में हुआ। इन बन्धुओं में से दो बड़े बन्धु नेवाला की दूकान का तथा छोटे भाई अहमदनगर की दूकान का काम देखते हैं। सेठ गुलाबचन्दजी के पुत्र माणिकचन्दजी का जन्म संवत् १९५८ में हुआ।

वर्तमान में इस दूकान पर नेवाला में खेती तथा साहुकारी और अहमदनगर में गल्ला, कपास और तेल का व्यापार होता है। मोतीलालजी के कनकमलजी, धनराजजी, पन्नालालजी, प्रेमराजजी तथा सूरजमलजी नामक पाँच पुत्र हैं, जिनमें धनराजजी, माणिकचन्दजी के नाम पर दत्तक गये हैं। नेमीचन्दजी के पुत्र शांतिलालजी हैं।

सिंघवी

ओसवाल जाति के इतिहास में सिंघवी वंश बड़ा प्रतापी और कीर्तिमान हुआ। सिंघवी वंश के नरपुङ्गवों के गौरवशाली कार्य्यों से राजस्थान का इतिहास प्रकाशमान हो रहा है। इन्होंने अपने युग में राजस्थान की महान् सेवाएँ कीं और उन्हें अनेक दुर्भेद्य आपत्तियों से बचाया। राजनीतिज्ञता, रणकुशलता और स्वामिभक्ति के उच्च आदर्श को रखते हुए इन्होंने एक समय में मारवाड़ राज्य का उद्धार किया। अब हम इस गौरवशाली वंश के इतिहास पर थोड़ा सा ऐतिहासिक प्रकाश डालना चाहते हैं।

सिंघवी गौत्र की स्थापना

जिस प्रकार ओसवाल जाति के अन्य गौत्रों का इतिहास अनेक चमत्कारिक दन्त कथाओं से आवृत है, ठीक वही बात सिंघवी गौत्र की उत्पत्ति के इतिहास पर भी लागू होती है। सिंघवियों की ख्यातों में, इस गौत्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उसका आशय यह है—"ननवाणा बोहरा जाति में देवजी नामक एक प्रतापवान पुरुष हुए। उनके पुत्र को सांप ने काटा और एक जैनमुनि ने उसे जीवित कर दिया। इस समय से इनका इष्टदेव पुण्डरिक नागदेव हुआ। लगभग १३ पीढ़ी तक तो वे ननवाणा बोहरा ही रहे। इसके बाद सम्वत् ११२१ में उक्त बोहरा वंशीय आसानन्दजी के पुत्र विजयानन्दजी ने सुप्रख्यात् जैनाचार्य्य श्री जिनवल्लभसूरि के उपदेश से जैन धर्म को स्वीकार किया। इन विजयानन्दजी के कुछ पीढ़ियों के बाद श्रीभरजी हुए। इनके पुत्र सोनपालजी ने सम्वत् १४८४ में शत्रुञ्जय का बड़ा भारी संघ निकाला, जिससे ये सिंघवी कहलाये।"

यह तो हुई सिंघियों की उत्पत्ति की बात। इसके आगे चल कर सोनपालजी के सिहाजी, भगाजी, रागोजी, जसाजी, सदाजी तथा जोगाजी नामक छः पुत्र हुए।

इनमें से सिहाजी जसाजी तथा रागोजी का परिवार जोधपुर में तथा भागोजी, सदाजी, और जोगाजी का परिवार गुजरात में है। उपरोक्त ६ भाइयों में से बड़े भ्राता सिहाजी के चापसीजी, पारसजी, गोपीनाथजी, मोंडणजी तथा पठाणजी नामक ५ पुत्र हुए, इन पाँचों भाइयों से सिंघवियों की नीचे लिखी खापें निकली—

(१) चापसीजी—इनसे भींवराजोत, धनराजोत, गाढ़मलोत, महादसोत शाखाएँ निकलीं इनके घर जोधपुर, चंडावल तथा खेरवामें हैं।

(२) पद्मणजी—इनसे बागमलोत हुए जिनके घर पर्वतसर में हैं।

(३) पारसजी—इनसे सुखमलोत, रायमलोत, रिड़मलोत, परतापमलोत, जोरावरमलोत, हिन्दूमलोत, मूलचंदोत, धनरूपमलोत तथा हरचंदोत हुए। इनके परिवार जोधपुर, सोजत, नागोर, मेड़ता, पीपाड़, रेणा, लाडनूं, डीडवाना, पाली, सिरियारी, घाणोद, काल्रू आदि स्थानों में है।

(४) गोपीनाथजी—इनसे भागमलोत हुए। यह परिवार गुजरात में है।

(५) मोहणजी—इनका परिवार कुचेरा में है।

सिंघवी भींवराजोत

ऊपर हम सिंघवियों की पाँचों खांपों का संक्षिप्त विवेचन कर चुके हैं। वैसे तो जोधपुर के इतिहास में इन पांचों ही शाखाओं के महापुरुषों ने बड़े २ महत्वपूर्ण कार्य्य करके दिखलाये हैं और अपनी जान को हथेली पर रखकर राज्य की रक्षा और उन्नति में सहयोग दिया है फिर भी जोधपुर के राजनैतिक इतिहास में भींवराजोत शाखा का नाम सबसे अधिक प्रखर प्रताप के चमकता हुआ दिखलाई देता है।

इतिहास खुले तौर से इस बात की साक्षी दे रहा है कि महाराज मानसिंहजी के समय में जबकि जोधपुर का राजसिंहासन भयंकर संकट ग्रस्त हो गया था और उसका अस्तित्व तक खतरे में जा गिरा था उस समय जिन वीरों ने अपनी भुजाओं के बल पर उस गिरते हुए वैभव को रोका था उसमें भींवराजोत शाखा के सिंघवी इन्द्रराज सबसे प्रधान थे। जोधपुर के इतिहास में सिंघवी इन्द्रराज का नाम एक तेजपूर्ण नक्षत्र के तुल्य चमक रहा है। स्वयं महाराजा मानसिंहजी ने स्पष्ट शब्दों में सिंघवी इन्द्रराज को लिखा था कि "आजसूं थारो दियोड़ो राज है। म्हारे राठोडां रो वंश रेसी ने ओ राज करसी उओ थारा घर सुं एहसान मन्द रेसी" * इसी प्रकार इनके भाई गुलराजजी इनके पुत्र फतेराजजी आदि व्यक्तियों ने भी जोधपुर के राजनैतिक इतिहास में अपना विशेष स्थान प्राप्त किया था। नीचे हम इसी गौरवशाली वंश का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयत्न करते हैं।

सिंघवी भींवराजजी

इस शाखा का प्रारम्भ सिंघवी भीवराजजी से होता है। सिंघवी भींवराजजी अपने समय के बड़े प्रसिद्ध मुत्सुद्दी थे। जोधपुर पर आने वाली कई राजनैतिक विपत्तियों का मुकाबिला आपने बड़ी बहा-

* पूरे रुक्के की नकल ओसवालों के राजनैतिक महत्व नामक अध्याय में पृष्ठ ६० पर देखिए।

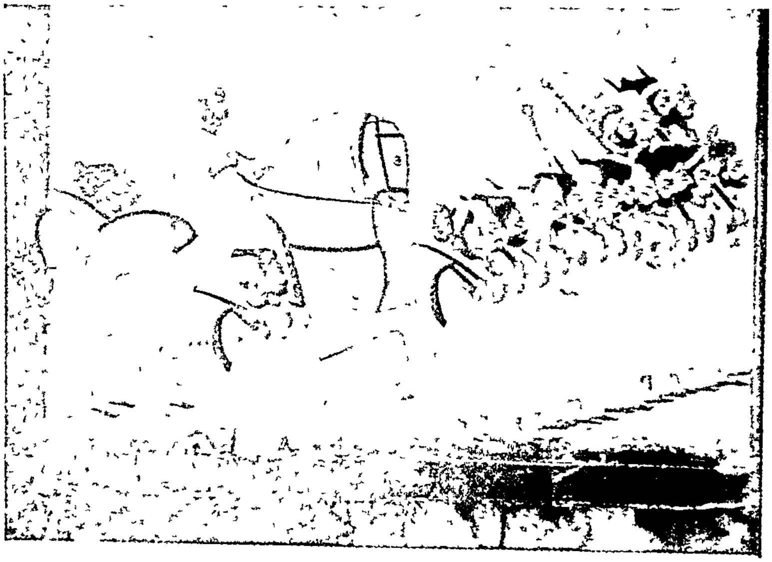
दुरी और साहस से किया था। संवत् १८२१ के आश्विन मास में उज्जैन के सिन्धिया ने मारवाड़ पर आक्रमण करने के इरादे से कूच किया। जब यह समाचार जोधपुर में सिंघवी भींवराजजी को मिला तो उन्होंने तत्काल मन्दसोर आकर सिन्धिया को तीन लाख रुपये देकर युक्ति पूर्वक वापिस लौटा दिया। इसी प्रकार जब दक्षिण के सरदार खानू ने मारवाड़ पर चढ़ाई की, उस समय भी सिंघवी भींमराजजी ने उसका सामना करने के लिए मुहणोत सूरतरामजी तथा दूसरे कई सरदारों के साथ सेना लेकर मारोठ पर डेरा किया। इस लड़ाई में खानू बहुत बुरी तरह पराजित होकर अजमेर भाग गया और उसका सामान सिंघवी भींवराजजी ने लूट लिया। इसके पश्चात् आपने वसी नामक स्थान पर घेरा डाला और वहाँ के ठाकुर मोहनसिंह से १०००० जुर्माना लेकर उसे फौज में शामिल कर लिया।

संवत् १८२४ में उदयपुर के राणा अरिसिंहजी और उनके भतीजे रतनसिंहजी में किसी कारण वश झगड़ा हो गया। उस समय राणा अरिसिंहजी ने महाराजा जोधपुर के पास अपना वकील भेज कर सहायता की याचना की। इस पर महाराज ने सिंघवी इन्द्रराजजी और सिंघवी फतेराजजी (रायमलोत) को सेना देकर उदयपुर भेजा जब रतनसिंहजी को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने इन्हें खर्च देकर वापिस कर दिये। संवत् १८२७ में महाराणा अरिसिंहजी ने जोधपुर दरबार को गोड़वाड़ प्रान्त दे दिया, उस समय सिंघवी भींवराजजी तथा मुहणोत सूरतरामजी ने ही वाली जाकर उस आर्डर पर अमल किया। संवत् १८२९ में जयपुर के महाराजा रामसिंहजी स्वर्गवासी हो गये उस समय सिंघवीजी ने परवतसर के हाकिम मनरूपजी को साम्भर पर अधिकार करने के लिये लिखा और पीछे से फौज लेकर आने का आश्वासन दिया।

संवत् १८२४ की फाल्गुन वदी १० को महाराजा विजयसिंहजी ने सिंघवी भींवराजजी को बख्शीगिरी इनायत की जो संवत् १८३० तक चलती रही। उसके पश्चात् संवत् १८३२ में दरबार ने आपको बुलाकर पुनः बक्षीगिरी का खिताब इनायत किया। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराजा ने छः हजार की आमदनी के चार गाँव आपको जागीर में दिये। आपके भ्राता इतिहास प्रसिद्ध सिंघवी धनराजजी भी अजमेर फतेह करते समय काम आये।

संवत् १८३४ में जब अम्बाजी इंगालिया की फौज ढूंढाड़ (जयपुर स्टेट) को लूट रही थी तब सिंघवी भींवराजजी पन्द्रह हजार फौज लेकर जयपुर की मदद को चढ़ दौड़े। आपकी सहायता के बल से जयपुर की फौज ने मरहट्टों की फौज को मार भगाया। उस समय जयपुर दरबार ने जोधपुर दरबार को पत्र लिखते हुए लिखा था कि "भींवराजजी और राठौड़ वीरहो और हमारी आम्बेर रहे।"

जब बादशाह फौज लेकर रेवाड़ी आया तब जयपुर महाराज प्रतापसिंहजी ४ हजार, नजबकुली



स्व० सिंघवी जोधराजजी दीवान, जोधपुर.



स्व० सिंघवी प्रयागराजजी (भींवराजोत) जोधपुर.



स्व० सिंघवी मोतीचन्दजी (गजराज अनराज) सोजत.



सिंघवी बलवन्तराजजी (भींवराजोत) जोधपुर.

खां १० हजार और भींवराजजी १२ हजार फौज लेकर उससे मिलने गये और एक लाख रुपयों की हुण्डी लिखकर उसको रवाना किया। बादशाह ने प्रसन्न होकर इनको "तखत का पाया" कहकर सम्मानित किया और सिरोपाव, तलवार, तथा मकना हाथी इनायत किये। जयपुर दरबार ने भी इन्हें घोड़ा और सिरोपाव बख्शे।

राजनीति ही की तरह सिंघवी भींवराजजी का धार्मिक जीवन भी बहुत उत्कृष्ट रहा। सोजत में आपका बनाया हुआ भींवसागर नामक कुंआ अभी भी विद्यमान है। इसके अतिरिक्त आपने श्री नरसिंहजी और रघुनाथजी के भव्य मन्दिर भी बनवाये। आपका स्वर्गवास संवत् १८४८ में हुआ।

आपके छः पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः अभयराजजी, अखेराजजी, इन्द्रराजजी, बनराजजी गुलराजजी तथा जीवराजजी था। इनमें से अभयराजजी और जीवराजजी का वंश आगे नहीं चला।

सिंघवी अखैराजजी

सिंघवी अखैराजजी को संवत् १८४७ में बख्शीगिरी का पद मिला। जब किशनगढ़वालों ने आम्बाजी इंगलिया को बहका कर सात हज़ार फ़ौज के साथ मारवाड़ पर चढ़ाई की उस समय सिंघवी भींवराजजी ने भण्डारी गंगारामजी और सिंघवी अखैराजजी को उनका सामना करने को भेजा। इस लड़ाई में मराठों के पैर उखड़ गये, इसपर सिंघवीजी ने बीकानेर से खर्च के लिये तीन लाख रुपये लेकर किशनगढ़ पर चढ़ाई कर दी। संवत् १८५२ में देसूरी के पास लड़ाई करके उन्होंने गोडवाड़ तथा जालौर इत्यादि स्थानों से तहसील वसूल की। संवत् १८५५ में आपने जालौर का घेरा दिया इसी साल आप जालौर में कैद कर लिए गये और फिर मुक्त होकर संवत् १८५६ की चैत वदी ६ को पुनः बख्शीगिरी के पद पर नियुक्त हुए। इस प्रकार आपके जीवन का एक-एक क्षण राजनैतिक घटनाओं और युद्धों में गुंथा हुआ रहा, आपकी बहादुरी और साहस के सबूत कदम-कदम पर मिलते रहे। आपका बनाया हुआ अखैतलाव इस समय भी विद्यमान है। आपका स्वर्गवास संवत् १८५७ में हुआ। आपके कोई सन्तान न होने से आपने अपने भतीजे मेघराजजी को दत्तक लिया।

संवत् १८५७ में अखैराजजी के स्वर्गवासी हो जाने पर सिंघवी मेघराजजी को बख्शीगिरी का पद प्राप्त हुआ। संवत् १८८३ तक वे उस पद पर काम करते रहे। संवत् १९०२ में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पश्चात् इनकी संतानों में क्रमशः शिवराजजी, प्रयागराजजी और उगमराजजी हुए। उगमराजजी के पुत्र बलवन्तराजजी अभी विद्यमान हैं। अपने पूर्वजों की महान सेवाओं के उपलक्ष में इन्हें स्टेट से पेंशन मिलती है। इनके जसवंतराज और दलपतराज नामक दो पुत्र हैं। सिंघवी शिवराजजी संवत्

१९२९ में जोधपुर के हाकिम बनाये गये। इनको दरबार से पैरों में सोना, हाथी और सिरोपाव बख्शा गया था। इनके पुत्र प्रयागराजजी को भी पैरों में सोना बख्शा हुआ है।

सिंघवी इन्द्रराजजी

सिंघवी इन्द्रराजजी उन महापुरुषों में से थे, जो अपने अद्भुत और आश्चर्यजनक कार्यों से सारे खानदान के नाम को चमका देते हैं, और इतिहास के अमर पृष्ठों पर बलात् अपना अधिकार कर लेते हैं।

शुरू-शुरू में सिंघवी इन्द्रराजजी पचभदरा और फलौदी के हाकिम रहे। संवत् १८५९ में जब कई सरदारों ने मिलकर दीवान जोधराजजी का सिर काट लिया, तब महाराजा भीमसिंहजी ने इन्द्रराजजी को फौज देकर उन सरदारों से बदला लेने को भेजा। उन्होंने जाकर उन सब सरदारों को दण्ड दिया और उनसे हजारों रुपये वसूल किये। संवत् १८६० की कार्तिक सुदी ४ को जब महाराज भीमसिंहजी का स्वर्गवास हो गया और राज्य का अधिकारी महाराजा मानसिंहजी के सिवाय दूसरा कोई न रहा उस समय जोधपुर से धाय भाई शम्भूदानजी, मुणोत ज्ञानमलजी तथा भण्डारी शिवचंदजी ने सिंघवी इन्द्रराजजी और उनके मामा भण्डारी गंगारामजी को लिखा कि "महाराजा भीमसिंहजी परम धाम पधार गये हैं और ठाकुर सवाईसिंहजी पोकरन हैं उनके आने पर तुम्हें लिखेंगे तुम अभी घेरा बनाए रखना," पर सब परिस्थितियों पर विचार करके इन्होंने महाराज मानसिंहजी को जोधपुर लेजाना उचित समझा और इसी अभिप्राय से अमरचंदजी ललवानी को मानसिंहजो के पास गढ़ में भेजा और स्वयं भी जाकर निछरावल की और घेरा उठा दिया। संवत् १८६० की मगसर वदी ७ को आपने जोधपुरवालों को लिखा कि राज्य के अधिकारी मानसिंहजी ही हैं। ये बड़े महाराज की तरह सब पर दया रक्खेंगे। मैं इनका रुक्का सबके नाम पर भेजता हूँ। जब महाराजा मानसिंहजी जोधपुर के गढ़ में दाखिल हो गये तब उन्होंने प्रसन्न होकर भण्डारी गंगारामजी को दीवानगी और सिंघवी इन्द्रराजजी को मुसाहिबी इनायत की। इसके सिवाय मेघराजजी को बख्शीगिरी और कुशलराजजी को सोजत की हाकिमी दी। इसी समय महाराजा ने सिंघवी इन्द्रराजजी को एक अत्यन्त महत्वपूर्ण रुक्का इनायत किया जो इस ग्रन्थ के राजनैतिक महत्व नामक अध्याय में हम प्रकाशित कर चुके हैं।

संवत् १८६३ में किसी कारणवश महाराजा मानसिंहजी सिंघवी इन्द्रराजजी और भण्डारी गंगारामजी से नाराज हो गये और इन दोनों को इनके भाई बेटों सहित कैद कर दिया।

संवत् १८६३ के फाल्गुन में जोधपुर के कई सरदार धौंकलसिंहजी को * गद्दी दिलाने के उद्देश्य

* जब महाराणा भीमसिंहजी स्वर्गवासी हुए तब उनकी रानी गर्भवती थी, महाराज की मृत्यु के बाद उनके पुत्र हुआ जिसका नाम धौंकलसिंह रक्खा गया था।

से जयपुर और बीकानेर की एक लाख फौज को चढ़ा लाये। इस विशाल सेना ने जोधपुर पर घेरा डालकर सरदार धौंकलसिंह की दुहाई फेर दी, मानसिंहजी का अधिकार केवल गढ़ ही में रह गया। जोधपुर के इतिहास में यह समय ऐसा विकट था कि यदि पूरी सावधानी के साथ इसका प्रतिकार न किया जाता तो मारवाड़ के इतिहास के पृष्ठ ही आज दूसरी तरह से लिखे जाते। अस्तु, ऐसी भयंकर विपत्ति के समय में महाराज ने सिंघवी इन्द्रराजजी और भण्डारी गंगारामजी को कैद से बुलाकर इस विपत्ति से मारवाड़ की रक्षा करने को कहा। इस स्थान पर इन दोनों मुत्सुद्दियों की उच्च स्वामिभक्ति का आदर्श देखने को मिलता है। जितने कष्ट इन लोगों को मिले थे उन्हें देखते हुए यदि ये लोग ऐसे समय पर उदासीनता भी बतलाते तो इतिहासकार इन्हें बुरा नहीं कहते, मगर इन दोनों खानदानी पुरुषों ने सब बातों को भूलकर, उस विपत्ति के समय में भी सच्चे हृदय से सेवा की। शुरू २ में तो इन्होंने धौंकलसिंह के तरफदार पोकरन ठाकुर सवाईसिंहजी से समझौते की बातचीत की, मगर जब उसमें कामयाबी न हुई तो उन्होंने मीरखाँ पिण्डारी को चार-पाँच लाख रुपये देने का वादा कर अपनी ओर मिला लिया और अपनी तथा उसकी फौज के साथ ढूंढाड़ को लूटते हुए जयपुर की ओर कूँच किया। रास्ते में इन्होंने जयपुर के बख्शी शिवलाल को लूट लिया तथा इस घटना की खबर बारहट सांईदान के साथ महाराजा मानसिंहजी को भेजी, बारहट ने निम्नांकित दोहा महाराजा के पास भेजा थाः—

फागेजुव पाई फते, लूट लियो शिवलाल।
वे कागद में आणिया, मान विजाही मान॥

कहना न होगा कि जयपुर पहुँचकर सिंघवी इन्द्रराजजी और मीरखां ने अपनी लूट शुरू कर दी। यह खबर जब जयपर की फौज को जोधपुर में लगी तो उसने घबरा कर संवत् १८६४ की भादवा सुदी ३ को जोधपुर का घेरा उठा दिया और अपने-अपने राज्यों की ओर प्रस्थान कर दिया।

जब जयपुर की विजय की खबर महाराज मानसिंहजी को मालूम हुई तो वे बड़े खुश हुए, और उन्होंने एक बड़ा महत्वपूर्ण रुक्का सिंघवी इन्द्रराजजी को बख्शा जो इस ग्रन्थ के राजनैतिक महत्व नामक अध्याय में दिया गया है। इसी समय इन्द्रराजजी को प्रधानगी का पद बख्शा गया।

संवत् १८६५ में सिंघवी इन्द्रराजजी और मुहणोत सूरजमलजी ने १० हजार जोधपुर की तथा १० हजार बाहरी फौज लेकर बीकानेर पर आक्रमण किया। उस समय बीकानेर नरेश सूरतसिंहजी ने चार लाख रुपये देने का वादा किया तथा पाँच गाँव देवनाथजी को जागीर में दिये। जिस समय सिंघी इन्द्रराजजी फौज के साथ बीकानेर गये थे उस समय पीछे से महाराजा मानसिंहजी ने मीरखां को उसकी फौज के खर्च के लिये पर्वतसर, मारोठ, डीडवाणा और साम्भर नावां का परगना लिख दिया था।

जब बीकानेर से विजय प्राप्त करके उक्त फौज वापस लौटी तब महाराज मानसिंहजी ने खुश होकर कहा कि जैसी बात बीकानेर में रही ऐसी ही जयपुर में रह जाय तो बड़ा अच्छा है। इस पर इन्द्रराजजी के पुत्र फतेराजजी ने मुहणोत सूरजमलजी और आउवे के ठाकुर के साथ जयपुर पर चढ़ाई की और अपना लूटा हुआ सामान वापस ले आये।

संवत् १८७२ की आसोज सुदी ८ के दिन जब सिंघवी इन्द्रराजजी और महाराज देवनाथजी खावकों के महल में बैठे हुए थे, उसी समय मीरखां के सिपाही आये और उन्होंने सिंघवी इन्द्रराजजी से महाराज मानसिंहजी द्वारा दिये हुए चार परगने और निश्चित् रकम माँगी। इस सम्बन्ध में सिंघवी इन्द्रराजजी और उनके बीच बहुत कहा सुनी हो गई, फलस्वरूप उन सिपाहियों ने सिंघवी इन्द्रराजजी को कत्ल कर डाला। इस घटना से महाराज मानसिंहजी को बहुत भारी रंज हुआ। उन्होंने उनके शव को वही इज्जत बक्षी जो राजघराने के पुरुषों के शवों को दी जाती है। अर्थात् उनकी रथी को सर्वोपोल निकाला और "रोसालई" पर उनका दाहसंस्कार हुआ। वहाँ पर अभी भी उनकी छतरी बनी हुई है। इनकी मृत्यु के रंज पर महाराज ने इनके पुत्र फ़तहराजजी को एक खास रुक्का इनायत किया जो "राजनैतिक महत्व" नामक अध्याय में दिया जा चुका है।

सिंघवी फतेराजजी—सिंघवी इंद्रराजजी के दो पुत्र थे, सिंघवी फतेराजजी और सिंघवी उम्मेदराजजी। सिंघवी इन्द्रराजजी के मारे जाने पर दीवानगी का पद और पच्चीस हजार की जागीरी का पट्टा सिंघवी फ़तेराजजी को मिला। संवत् १८७२ से १८९५ तक आप सात बार दीवान हुए। जब संवत् १८७३ में मुत्सुद्दियों के षड्यंत्र से गुलराजजी का चूक (कत्ल) हुआ तब सिंघवी फतेराजजी अपने कुटुम्ब सहित कुचामन चले गये, पर वहाँ के ठाकुर शिवनाथसिंहजी के कहने से वे संवत् १८७५ में फिर जोधपुर आये, वहाँ महाराज मानसिंहजी ने उनका बड़ा सत्कार किया। संवत् १८७६ के आषाढ़ में आपको फिर दीवानगी बख्शी और साथ ही कड़े, कंठी, पालकी और सिरोपाव की इज्जत भी बख्शी तथा सुरायता गांव जागीर में दिया। संवत् १८८१ में एक षड्यन्त्र के कारण इनको महाराजा ने फिर नज़रबन्द कर दिया और दस लाख रुपये जुर्माना किये। मगर जब इस षड्यंत्र का भण्डाफोड़ हुआ तो महाराज मानसिंहजी ने संवत् १८८५ में इन्हें फिर दीवान बनाया। इसके पश्चात् फिर संवत् १८८७, १८९२ और १८९४ में ये पुनः २ दीवान बनाये गये।

सिंघवी इन्द्रराजजी के छोटे पुत्र सिंघवी उम्मेदराजजी अपने पिता की आकस्मिक मृत्यु के समय केवल चार साल के थे। ये अपने जीवन में हुकुमत का काम करते रहे। संवत् १९२६ में इनका देहान्त

हुआ। इनके तीन पुत्र हुए। हरकराजजी, देवराजजी और मुकुन्ददासजी। इनमें से देवराजजी सिंघवी फौजराजजी के नाम पर दत्तक गये।

सिंघवी फतेराजजी के दो पुत्र हुए, उदयराजजी और प्रेमराजजी। उदयराजजी भिन्न-भिन्न स्थानों की हुकूमत करते रहे। इन्हें अपने पूर्वजों की सेवाओं के उपलक्ष्य में तनख्वाह मिलती रही। संवत् १९२५ में इनका देहान्त हुआ। सिंघी प्रेमराजजी कोठार के आफिसर (हाउस होल्ड आफिसर) रहे। इसके बाद आपने महाराजा तखतसिंहजी को राज्याधिकार दिलाने का उद्योग किया, जिसके उपलक्ष्य में संवत् १९०० की कार्तिक वदी सप्तमी को महाराजा साहब ने आपको एक खास रुक्का बख्शा। आप उक्त महाराजा के राजकुमारों के गार्जियन भी रहे।

सिंघवी प्रेमराजजी के हुकुमराजजी, चन्दनराजजी और सोहनराजजी नामक तीन पुत्र हुए। हुकुमराजजी जोधपुर स्टेट के ट्रेझरी आफिसर तथा नागौर, साम्भर इत्यादि भिन्न-भिन्न स्थानों पर गिराही सुपरिण्टेण्डेण्ट रहे। संवत् १९६५ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके छोटे भाई चन्दनराजजी १९७० में गुजरे। सोहनराजजी इस समय विद्यमान हैं, इन्हें स्टेट से पेन्शन मिलती हैं। इनके पुत्र लक्ष्मणराजजी महकमा खास में क्लर्क हैं। हुकुमराजजी के पुत्र तुलहराजजी तथा उगमराजजी हुए। इनमें उगमराजजी सिंघवी प्रयागराजजी के नाम पर दत्तक गये, तथा दुलहराजजी रूपराजजी के नाम पर दत्तक गये।

सिंघवी उदयराजजी के पुत्र पृथ्वीराजजी हुकुमत इत्यादि का काम करते हुए संवत् १९४८ में स्वर्गवासी हुए। आपके पनराजजी और विशनराजजी नामक दो पुत्र हुए। पनराजजी के पुत्र सिंघवी रंगलालजी तथा खेमराजजी अभी विद्यमान हैं। इन्हें रियासत से पेंशन मिलती है। रंगराजजी के पुत्र विजयराजजी तथा खेमराजजी के पुत्र अजितराजजी हैं।

सिंघवी फतेराजजी के छोटे भाई उम्मैदराजजी के पुत्र हरकराजजी जेतारण के हाकिम रहे। देवराजजी संवत १९११ से १९२८ तक फौजबख्शी रहे। मुकुन्दराजजी जयपुर के वकील बनाए गये। आपने रियासत के सरहद्दी झगड़ों को निपटाने में बड़ा कार्य्य किया। इसके पश्चात् आप वाकयान कमेटी और म्युनिसिपल कमेटी के मेम्बर हुए। संवत् १९५७ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके मदनराजजी, मोहनराजजी तथा मनोहरलालजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से मोहनराजजी देवराजजी के नाम पर दत्तक गये। मदनराजजी संवत् १९५७ से ८५ तक म्यूनिसिपल कमेटी के मेम्बर रहे। आपके चौकड़ी छोटी (बीलाड़ा) नामक गांव जागीर में है। कई रियासतों से आपको पालकी और सिरोपाव मिला है। सिंघवी मोहनराजजी महाराज सुमेरसिंह के युवराजकाल में जनानी ड्योढ़ी पर काम करते थे। संवत् १९७५ में इनका

देहान्त हुआ। इनके पुत्र तखतराजजी ने संवत् १९२३ में इन्टर मीजिएट की परीक्षा दी। इनको अपने पूर्वजों की सेवाओं के उपलक्ष्य में रियासत से तनख्वाह मिलती है।

सिंघवी बनराजजी

सिंघवी बनराजजी सिंघवी भींवराजजी के चौथे पुत्र थे। ये भी बड़े साहसी और बहादुर थे। जब महाराज भीमसिंहजी महाराज विजयसिंहजी के परलोकवासी होने के समाचार सुनकर जैसलमेर से लौटे उस समय मानसिंहजी की पार्टी वाले लोढ़ा शाहमलजी आदि सरदारों ने आसपास के ग्रामों में विद्रोह मचाना शुरू किया। इनको दबाने के लिए महाराज भीमसिंहजी ने सिंघवी बनराजजी को फौज लेकर भेजा। उस समय ये मेड़ते के हाकिम थे। जालोर के पास माण्डोली नामक गाँव के समीप, मानसिंहजी के पक्षपाती सिंघवी शम्भूमलजी ओर सिंघवी बनराजजी की फौज का मुकाबला हुआ। घोर युद्ध के पश्चात् बनराजजी की फौज विजयी हुई। मगर सिंघवी शम्भूमलजी ने तत्काल फिर फौज को इकट्ठा कर, फिर लड़ाई की। इस लड़ाई में बनराजजी के भाला लगा था। संवत् १८५९ में महाराज भीमसिंहजी ने फिर फौज देकर आपको जालौर पर घेरा डालने के लिए भेजा। पीछे से भण्डारी गंगारामजी और सिंघवी इन्द्रराजजी भी इस घेरे में सम्मिलित हुए। संवत् १८६० की सावण सुदी ६ को भयङ्कर लड़ाई हुई, इसमें जालौर तो फतह हो गया मगर बनराजजी गोली लगने से मारे गये। जालौर के दरवाजे के पास उनका दाहसंस्कार हुआ जहाँ उनकी छतरी बनी हुई है। इनकी मृत्यु के समाचार से महाराजा को बड़ा दुःख हुआ, वे उनकी मातमपुर्सी के लिए उनकी हवेली गये और उनके पुत्र कुशलराजजी को जालौर की हुकूमत और सुरायता गांव पट्टे दिया। सिंघवी बनराजजी के पुत्र मेघराजजी, कुशलराजजी एवं सुखराजजी हुए। इनमें से मेघराजजी सिंघवी अखैराजजी के नाम पर दत्तक गये।

सिंघवी कुशलराजजी को दरबार की ओर से कड़े, मोती की कंठी और पालकी तथा सिरोपाव का सम्मान मिला। संवत् १८९० में सिंघवी कुशलराजजी और रायपुर ठाकुर ने फौज लेकर बगड़ी और बूड़सूँ के बागी आदमियों को परास्त किया, इसके नवाजिश में आपको कोसाणा गांव जागीर में दिया। संवत् १९१३ में इन्होंने गूलर ठिकाने पर दरबार का अधिकार कराया। संवत् १९१४ में गदर के टाइम पर आपने ब्रिटिश सेना को बहुत सहायता दी। इसके लिए सी० एम० वाल्टर और एडमण्ड हार्डकाट आदि अंग्रेज अफसरों ने उन्हें कई अच्छे २ सार्टिफिकेट दिये। संवत् १९२० में इनका स्वर्गवास हुआ। इनकी मातमपुर्सी के लिए दरबार इनकी हवेली पधारे।

सिंघवी सुखराजजी बनराजजी के छोटे पुत्र थे। ये सोजत, जोधपुर इत्यादि स्थानों के हाकिम

बनाये गये। सं० १८९८ में इन्हें दीवानगी का पद इनायत हुआ। इन्हें पालकी और सिरोपाव का सम्मान मिला था। संवत् १९०३ में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके समर्थराजजी, सांवतराजजी, मगनराजजी और छगनराजजी चार पुत्र हुए।

सिंघवी कुशलराजजी के पुत्र सिंघवी रतनराजजी परवतसर और मारोठ के हाकिम रहे इनका स्वर्गवास संवत् १९२० की काती वदी ४ को हुआ। इनके पुत्र सिंघवी जसराजजी मेडते के हाकिम थे इनके पैरों में सोना था। इनके यहाँ भभूतराजजी दत्तक आये हैं। सोजत परगने का शेखावास गाँव इनकी जागीर में है।

सिंघवी सुखराजजी के पुत्र सिंघवी समरथराजजी संवत् १८९४ से १९२५ तक हाकिम रहे, बीच में ये जोधपुर के वकील की हैसियत से एजण्ट के पास भी रहे थे। संवत् १९२९ में ये फौजबख्शी हुए। इन्होंने संवत् १९१० में जयपुर में अपने पिता की छतरी की प्रतिष्ठा की। इनके सूरजराजजी और सुलहराजजी नामक दो पुत्र हुए। सोजत जिले का धूँधला गांव इनकी जागीर में था वह अब भी इनके वंशजों के पास है। महाराज तखतसिंहजी ने आपको पैरों में सोना, ताज़ीम और हाथी बख्शा था। इनके पुत्र सूरजराजजी का देहान्त इनकी मौजूदगी में हो गया।

सिंघवी करणराजजी सिंघवी सूरजराजजी के पुत्र थे। संवत् १९३१ में इन्हें बख्शीगिरी इनायत हुई और संवत् १९३४ में इनका स्वर्गवास हो गया। इनको भी महाराज जसवन्तसिंहजी ने सोना, ताजीम और सिरोपाव बख्शा था। इनके गुजरने पर इनके दत्तक पुत्र किशनराजजी को भी वही इज्जत मिली। किशनराजजी को संवत् १९३४ में बख्शीगिरी मिली। बाद में संवत् १९४९ से आप परवतसर और नागौर के हाकिम रहे। नागौर से इनके पुत्र हंसराजजी और परवतसर में इनके भतीजे दौलतराजजी हुकुमत का काम करते थे और आप दोनों स्थानों पर निगरानी रखते थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९७३ में हुआ। आपके पुत्र सिंघवी हंसराजजी हुए जो सिंघवी अमृतराजजी के नाम पर दत्तक गये।

सिंघवी सुखराजजी के दूसरे पुत्र मगनराजजी के नाम पर समरथराजजी के छोटे लड़के सुलहराजजी दत्तक लिये गये। इनका स्वर्गवास संवत् १९६५ की काती सुदी ४ को हुआ। इनके पुत्र रूपराजजी कोलिया और सांचोर के हाकिम थे। इन्हें भी पालकी और सिरोपाव हुआ। संवत् १९८७ में इनका स्वर्गवास हुआ, इनके पुत्र दूलहराजजी अभी विद्यमान हैं।

सिंघवी सुखराजी के तीसरे पुत्र सांवतराजजी का स्वर्गवास संवत् १९२६ में हुआ। इनके सिंघवी बछराजजी और अमृतराजजी दो पुत्र हुए।

सिंघवी बछराजजी—सिंघवी बछराजजी का जन्म संवत् १९०५ में हुआ। आप मुत्सुद्दियों के इस पतनकाल में भी जोधपुर के अन्तर्गत एक तेजपूर्ण नक्षत्र की तरह चमके, आप बड़े बहादुर, साहसी और दिलेर तबियत के मुत्सुद्दी थे। आप जोधपुर में, फौजबख्शी और स्टेट कौंसिल के मेम्बर रहे। आपका परिचय इस ग्रन्थ के राजनैतिक महत्व नामक अध्याय में पृष्ठ ९६ पर दिया गया है। आपका स्वर्गवास संवत् १९७४ की माघ बदी ११ को हुआ।

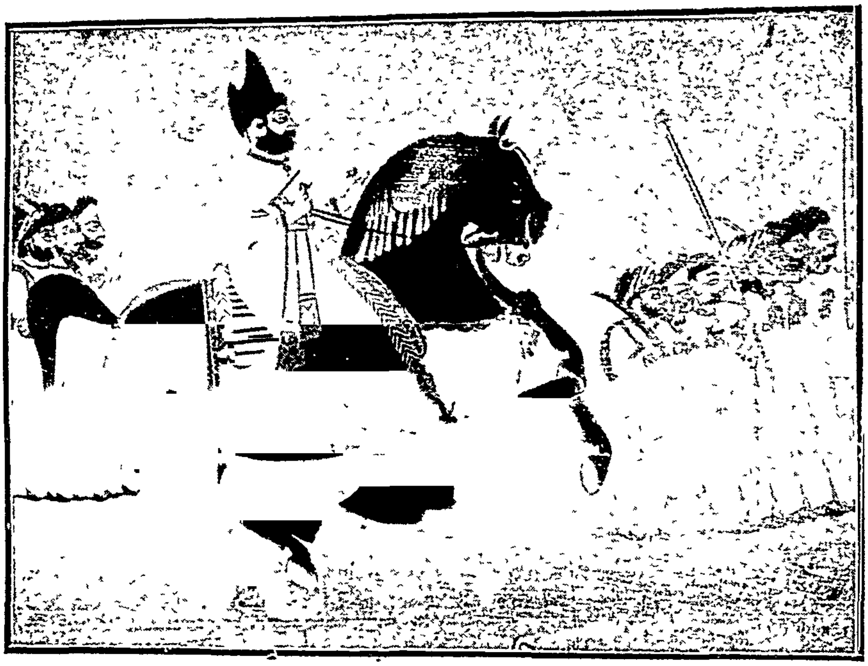
सिंघवी हंसराजजी—सिंघवी बछराजजी के पुत्र सिंघवी हंसराजजी का जन्म संवत् १९४७ में हुआ। शुरू में आप मारोठ और सोजत में हाकिम रहे। फिर जोधपुर के सिटी मजिस्ट्रेट बनाए गये। उसके पश्चात् आप संवत् १९८२ में साम्भर के और संवत् १९८६ में जोधपुर के हाकिम बनाए गये। इस समय आप इसी पद पर काम कर रहे हैं। आपको भी स्टेट से हाथी और सिरोपाव बख्शा हुआ है। आप जोधपुर के मुत्सुद्दियों में अच्छे प्रभावशाली व्यक्ति हैं आपके पुत्र मैट्रिक में हैं।

सिंघवी सुखराजजी के छोटे पुत्र छगनराजजी थे। इनके पुत्र गणेशराजजी १९६२ में गुजरे। गणेशराजजी के पुत्र दौलतराजजी हुए।

सिंघवी गुलराजजी

ये सिंघवी भींवराजजी के पांचवें पुत्र थे। महाराजा भीमसिंहजी के समय में ये हुकुमत का काम करते रहे। महाराजा मानसिंहजी ने गद्दी नशीन होने पर इन्हें फौजबन्दी का सिरोपाव बंधाया। इसी साल चैत महिने में जब होलकर ने मारवाड़ पर चढ़ाई की, तब ये और भण्डारी धीरजमलजी फौज लेकर भेजे गये। इन्होंने तथा शाह कल्याणमलजी लोढा ने होलकर को समझा बुझाकर वापिस कर दिया। संवत् १८७२ में इन्द्रराजजी के मारे जाने पर इन्हें बख्शीगिरी इनायत हुई। जब कई सरदार और मुत्सुद्दियों ने मिलकर महाराज मानसिंहजी के नाबालिग युवराज छत्रसिंह को गद्दी दिलाई उस समय गुलराजजी बड़े प्रभावशाली व्यक्ति थे। महाराजा मानसिंहजी के हित की दृष्टि से ये गद्दी दिलाने के पक्ष में न थे। इसका परिणाम यह हुआ कि कई वज़नदार सरदार इनके विरुद्ध हो गये और संवत् १८७३ की वैशाख सुदी ३ को इन्हें किले में चूक (कत्ल) करवा दिया गया। इनके पुत्र फ़ौजराजजी उस समय बालक थे।

गुलराजजी के पुत्र फौजराजजी को संवत् १८८१ में खास रुक्का भेज कर दरबार ने जोधपुर बुलाया। यहाँ आने पर दरबार ने इन्हे खालसे की दीवानगी का काम सौंपा। उसके पश्चात सम्वत् १८८२ से लेकर १९१२ तक ये फ़ौजबख्शी का काम करते रहे। जब १९१२ में इनका स्वर्गवास होगया तब



स्व० श्री सिंघी सुखराजजी (भींवराजोत) जोधपुर



स्व० श्री सिंघीं बच्छराजजी फोजबख्शी
राज मारवाड़ जोधपुर



श्री सिंघी हंसराजजी (भींवराजोत)
हाकिम, जोधपुर

बख्शीगिरी इन्हीं के नाम पर रही और इनके कामदार मेहता कालूरामजी काम देखते रहे। फिर सम्वत् १९१९ में इनके पुत्र देवराजजी फौजबख्शी बनाए गये। इसके पहले आप शिव के हाकिम थे। आपको भी पैरों में सोना, हाथी और सिरोपाव का सम्मान मिला था। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९६७ में हुआ। आपके नाम पर सिंघवी मोहनराजजी दत्तक आये। परबतसर परगने का रघुनाथपुरा गाँव आपके पट्टे में था। मोहनराजजी का स्वर्गवास सम्वत् १९७५ में हुआ। इनके पुत्र तखतराजजी अभी विद्यमान है। अपने पूर्वजों की सेवाओं के उपलक्ष्य में आपको रियासत से १००) मासिक मिलता है।

सिंघवी रायमलोत परिवार, जोधपुर

हम ऊपर बतला चुके हैं कि सिंघी शोभाचन्दजी के सुखमलजी, रायमलजी, रिढमलजी और प्रतापमलजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें दूसरे पुत्र रायमलजी से रायमलोत नामक खांप निकली। यहाँ इसी रायमलोत शाखा का संक्षिप्त परिचय दिया जाता है।

सिंघी रायमलजी—आप बड़े प्रतापशाली पुरुष हुए। सम्वत् १६६४ में आपको राज्य की महान् सेवाओं के उपलक्ष्य में २०,०००) की रेख के १६ गांव जागीर में मिले। सम्वत् १६८१ में आपने जालोर में बिहारी मुसलमानों से युद्ध किया और उन्हें परास्त कर जालोर को जोधपुर राज्य के आधीन किया। सिंघी रायमलजी महाराजा गजसिंहजी के समय में जोधपुर की दिवानगी के प्रतिष्ठित पद पर थे। आपके पुत्र सिंघवी जीतमलजी हुए।

सिंघवी जीतमलजी—आप बड़े वीर प्रकृति के पुरुष थे। सम्वत् १६८१ में आप जोधपुर राज्य के प्रधान सेनापति बनाये गये और उसके दूसरे ही साल एक युद्ध में वीरता-पूर्वक लड़ते हुए काम आये। आपके एक पुत्र थे, जिनका नाम आनन्दमलजी था। आनन्दमलजी के दो पुत्र थे, जिनका नाम हररूपमलजी, और सरूपमलजी था।

सिंघवी सरूपमलजी—सम्वत् १७८१ में जब महाराजा बखतसिंहजी नागौर के राज्यसिंहासन पर बैठे और उन्होंने राजाधिराज की उपाधि धारण की, उस समय सिंघवी सरूपमलजी वहाँ के दीवान बनाये गये थे। आपके फतहमलजी, सांवतमलजी तथा बुधमलजी नामक तीन पुत्र हुए।

सिंघवी फतहचन्दजी—आप भी अपने पिताजी के पश्चात् सम्वत् १७९३ से १८०७ तक नागौर के दिवान रहे। आपको तत्कालीन नागौर नरेश ने खुश होकर पालकी, सिरोपाव, कड़ा, मोतियों की कंठी आदि प्रदान कर आपका सम्मान किया। आपके छोटे भाई सांवतरामजी भी नागौर के दिवान रहे थे।

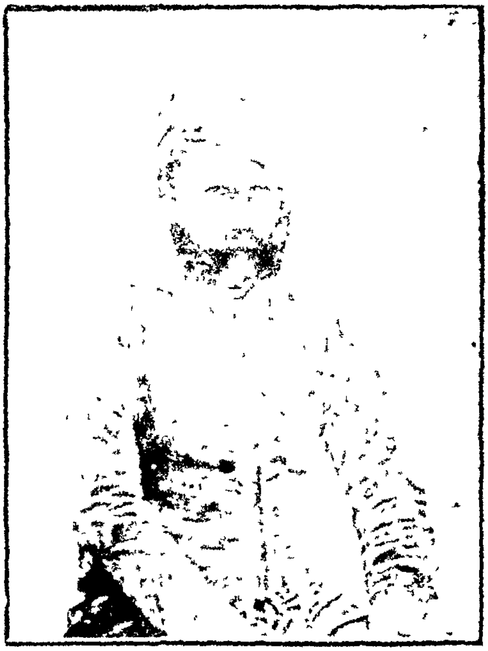
सम्वत् १८०६ में जब महाराजा मानसिंहजी ने मेड़ते पर अपना अधिकार कर लिया। उस समय सिंघवी फतहचन्दजी ने राठौड़ सरदारों पर "पेश कशी" लगाई। आप संवत् १८०७ में मेड़ता के पास लड़ते हुए ज़ख्मी हुए। जब संवत् १८०८ में आषाढ़ सुदी २ को महाराजाधिराज बख्तसिंहजी जोधपुर के स्वामी हुए, उस समय सिंघवी फतेचन्दजी ने राजतिलक किया और महाराजा साहब ने प्रसन्न होकर उन्हें दीवानगिरी का दुपट्टा, सिरोपाव, पालकी आदि सम्मान प्रदान किये। इतना ही नहीं इस समय राज्य की ओर से आपको कई गांव जागीरी में मिले। जिनकी वार्षिक आय हजारों रुपयों की थी। संवत् १८१८ तक आप इस पद पर रहे। सवत् १८१२ में फतहचन्दजी ने महाराज रामसिंहजी से जालौर, सोजत, और मेड़ता ले लिये और उन पर जोधपुर राज्य का अधिकार स्थापित कर दिया। इसी वर्ष आप पुनः महाराज विजयसिंहजी के द्वारा मेड़ते की लड़ाई में भेजे गये। इस लड़ाई में विजय प्राप्त कर आपने अपनी वीरता का परिचय दिया। संवत् १८१४ में आपने मेड़तियों को पूर्णरीति से परास्तकर उनसे जेतारण, सोजत और मेड़ता आदि परगने जीते और उन्हें जोधपुर राज्य में मिला लिये। संवत् १८२३ की आसोज सुदी ५ को सिंघवी फतहचन्दजी पुनः इस राज्य के दीवान बनाये गये, इन्होंने अपनी वीरता एवं युद्ध कौशल से मेड़तियों को परास्त कर मारवाड़ से भगा दिया। संवत् १८२३ में फतहचन्दजी के पुत्र ज्ञानमलजी को जोधपुर की हुकूमत दी गई। संवत १८२३ की चैत्र सुदी ५ को दरबार ने सिंघवी फतेचन्दजी को जीवन पर्यंत के लिये दीवान का पद दिया तथा मोतियों का कंठा, सिरोपाव, कड़ा, पालकी तथा १४०००) वार्षिक की जागीरी प्रदान कर इनकी सेवाओं का सत्कार किया। फतहचन्दजी संवत् १८३७ की आसोज सुदी १० को स्वर्गवासी हुए।

सिंघवी ज्ञानमलजी—फतेहचन्दजी के स्वर्गवासी हो जाने के बाद भी संवत् १८४७ तक आपके पुत्र ज्ञानमलजी इस राज्य के दीवान का काम करते रहे। ज्ञानमलजी तक इस घराने को हजारों रुपये प्रतिवर्ष आय की जागीर थी, जिसकी सनदें आज तक विद्यमान हैं। ज्ञानमलजी के पुत्र बख्तावरमलजी को चैत्र सुदी ११ संवत् १८६६ में खानसमाई का पद मिला, जिसके साथ-साथ एक सिरोपाव भी दिया गया। आपके पुत्र कानमलजी हुए। मेड़ता परगने का गोल नामक गांव आपको जागीर में दिया गया था। आपने जेतारण और नाँवाँ की हुकूमत भी की।

सिंघवी ऋद्धमलजी—सिंघवी कानमलजी के सरदारमलजी तथा शिवरामदासजी नामक दो पुत्र थे। सरदारमलजी के पुत्र पृथ्वीराजजी तथा ऋद्धमलजी थे। इनमें श्री ऋद्धमलजी मेडिकल डिपार्टमेंट में क्लर्क थे। आपको अपने उत्तम कार्यों के लिये कई प्रमाण-पत्र मिले हैं। आपका ईस्वी सन् १९२४



स्व० श्री सूरजमलजी सिंघी कस्टम सुपरिन्टेन्डेन्ट राज मारवाड़, जोधपुर



स्व० श्री किस्तूरमलजी सिंघी हाकिम, जोधपुर



श्री स्व० किशोरमलजी सिंघी (रायमलोत) जोधपुर



श्री रंगरूपमलजी सिंघी
असिस्टेंट कस्टम सुपरिण्टेण्डेण्ट जोधपुर

में देहान्त हुआ। सरदार हाईस्कूल में आपके नाम से "ऋद्धि-प्याऊ" बनाई है। इस समय आपके पुत्र जगरूपमलजी मेडिकल डिपार्टमेंट में एवं रंगरूपमलजी जोधपुर रेल्वे विभाग में सर्विस करते हैं।

पृथ्वीराजजी के पुत्र सजनराजजी एवं सुकनराजजी हुए। सजनराजजी का स्वर्गवास हो गया है। उनके पुत्र हनुतराजजी हैं। सुकनराजजी मेडिकल विभाग में तथा हनुतराजजी रेल्वे विभाग में काम करते हैं।

सिंघवी सावन्तमलजी का परिवार

सिंघवी सावंतमलजी जोधपुर के तन दीवान रहे थे। इनके तीन पुत्र हुए—सगतमलजी, जीवनमलजी और बहादुरमलजी। जीवनमलजी के कार्यों से प्रसन्न होकर इन्हें जोधपुर दरबार ने सं० १८४४ की वैशाख वदी २ को एक हवेली प्रदान की थी। बहादुरमलजी महाराजा मानसिंह के समय में कोतवाल तथा जोधपुर के हाकिम थे। जीवनमलजी के जीतमलजी और शम्भूमलजी नामक २ पुत्र हुए। जीतमलजी महाराज मानसिंहजी के समय में थांवले के हाकिम थे। उनके पुत्र सूरजमलजी का जन्म संवत् १८७९ की मगसर सुदी २ को हुआ।

सिंघवी सूरजमलजी—आप कई स्थानों पर हाकिम रहे। इसके अतिरिक्त आप कस्टम डिपार्टमेंट के आर्गेनाइजर हुए। इसके पूर्व आप एक्साइज सुपरिन्टेन्डेन्ट भी रहे थे। आपकी मृत्यु पर संवत १९५२ में मारवाड़ गजट ने बड़ा शोक प्रकट किया था। कई अंग्रेज अफसरों से आपको अच्छे २ सर्टीफिकेट मिले थे। सिंघवी सूरजमलजी के सोभागमलजी, सुमेरमलजी, रघुनाथमलजी, कस्तूरमलजी, दूलहमलजी तथा मूलचंदजी नामक ६ पुत्र हुए। सोभागमलजी सीवाणा और दौलतपुरे के हाकिम थे।

सिंघवी कस्तूरमलजी—सिंघवी कस्तूरमलजी का जन्म संवत १९१४ की आसोज वदी १४ को हुआ। संवत् १९२९ से ६ सालों तक आप सायर दारोगा जोधपुर रहे। इसके बाद आप सन् १८८९ से ३४ साल तक विभिन्न स्थानों में हाकिम रहे। आपके समय में स्टेट की आमदनी में विशेष उन्नति हुई। ता० ८ मार्च सन् १९२३ को आपका अंतकाल हुआ। आपके अच्छे कार्यों से प्रसन्न होकर महाराजा सरदारसिंहजी बहादुर जोधपुर, सर सुखदेवप्रसादजी मारवाड़, रेजिडेन्ट कर्नलविडहम इत्यादि कई सज्जनों ने सार्टीफिकेट दिये हैं। आप बड़े प्रबन्ध-कुशल सज्जन थे। आपके पुत्र किशोरमलजी एवं कानमलजी हुए। सिंघवी किशोरमलजी ने अपने बैङ्किंग व्यापार को अच्छी तरक्की दी। आपका अंतकाल ता० ३० जून सन् १९२० को ३४ साल की अल्पवय में हो गया। इस समय आपके पुत्र सिंघवी माणिकमलजी हैं। आप

होनहार नवयुवक हैं। इस समय आप एफ० ए० में अध्ययन कर रहे हैं। आप अपने बैंकिंग व्यापार का संचालन करते हैं। सिंघवी कानमलजी भी बैंकिंग का कारोबार करते हैं।

सिंघवी कस्तूरमलजी के बड़े भ्राता सिंघवी सोभागमलजी के पुत्र सिंघवी रंगरूपमलजी एवं सिंघवी जसवंतमलजी हैं। सिंघवी रंगरूपमलजी इस समय असिस्टेन्ट कस्टम सुपरिन्डेन्ट हैं। आपकी सर्विस ४२ साल की है। कई अच्छे २ आफ़िसरों से आपको सार्टीफिकेट मिले हैं। इनके पुत्र सिंघवी दशरथमलजी लखनऊ में एलएल० बी० की शिक्षा पा रहे हैं।

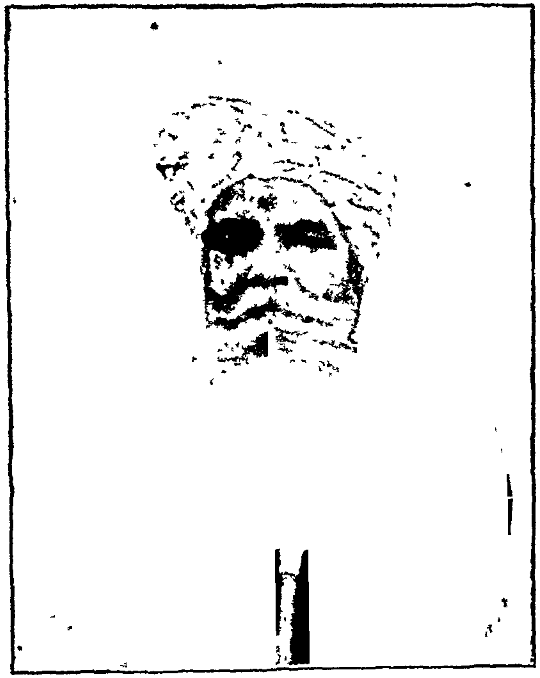
सिंघवी सूरजमलजी जब कस्टम सुपरिन्टेंडेन्ट थे तब उनके पुत्र सुमेरमलजी असिस्टेंट सुपरिन्टेंडेन्ट थे। जब सूरजमलजी गुजर गये तब सुमेरमलजी कस्टम सुपरिन्टेन्डेन्ट हुए।

सिंघवी बहादुरमलजी (सावंतमलजी के पुत्र) के पश्चात् बनेमलजी, इन्द्रचंदजी तथा सुमेरमलजी हुए। वर्तमान में सिंघवी सुमेरमलजी के पुत्र केवलमलजी ऑडिट ऑफिस में तथा पारसमलजी नागौर में सर्विस करते हैं।

श्री जी० रघुनाथमल बैंकर्स हैदराबाद (दक्षिण)

इस खानदान का मूल निवास स्थान सोजत (जोधपुर-स्टेट) है। आप ओसवाल श्वेताम्बर समाज के सिंघवी गौत्रीय सज्जन हैं। जोधपुर के सुप्रसिद्ध सिंघवी रायमलजी के वंश में होने से आपका खानदान "रायमलोत सिंघवी" के नाम से प्रसिद्ध है। इस खानदान में सिंघवी बच्छराजजी बहुत प्रतापी हुए। इनके लड़के कनीरामजी और पोते सदारामजी हुए। आप दोनों सज्जनों के पास मारवाड़ में हुकूमतें रही। श्रीयुत सदारामजी ने दो विवाह किये। प्रथम विवाह आलमचंदजी कंटालियावालों के यहाँ तथा द्वितीय सरूपचन्दजी कोठारी विराठियाँ वालों के यहाँ हुआ। आपके प्रथम विवाह से श्री कालूरामजी तथा द्वितीय से रूपचन्दजी, पूनमचन्दजी, जवाहरमलजी तथा जवानमलजी नामक पुत्र हुए। इनमें से श्रीयुत पूनमचंदजी के पुत्र श्रीयुत गणेशमलजी हुए। आपका जन्म सम्वत् १९३० में हुआ था

श्रीयुत पूनमचन्दजी सोजत से हैदराबाद गये और वहाँ जाकर आपने सबसे पहले नौकरी की। आपने थोड़े ही समय के पश्चात् 'पूनमचन्द गणेशमल' के नाम से दुकान खोली तथा इसके कुछ ही समय बाद गणेशमलजी को ढाई वर्ष की निपट नाबालिग अवस्था में छोड़कर आप स्वर्गवासी हुए। श्रीयुत गणेशमलजी की नाबालिगी में आपकी मातेश्वरीजी ने बहुत होशियारी के साथ दुकान के काम को सम्हाला और व्यवसाय को पूर्ववत तरक्की पर रक्खा। मगर दुर्दैव से आपका भी संवत् १९५३ में स्वर्गवास हो गया।



स्व० सेठ गणेशमलजी सिंघवी (रायमलोत), हैदराबाद.



श्री रघुनाथमलजी सिंघवी (रायमलोत), हैदराबाद.



श्री मोतीलालजी कोठारी (जोरावरमल मोतीलाल) सिकन्दराबाद.

(आपका परिचय कोठारी गोत्र में देखिये)

अपनी मातेश्वरी का स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् श्रीयुत गणेशमलजी ने दुकान के काम को सँभाला। आप बड़े उदार हृदय, दयालु तथा लोकप्रिय पुरुष थे। आपने अपने हाथों से "जीवरक्षा-ज्ञान-प्रचारक मण्डल, स्थापित कर उसके ऑनरेरी सेक्रेटरी का काम बड़ी योग्यता से किया। तदनन्तर आपने "Society for prevention of cruelty to the animals" नामक संस्था स्थापित कर उसे गवर्नमेंट के सुपुर्द कर दिया तथा आप उसके ऑनरेरी सेक्रेटरी का काम सुचारु रूप से संपादित करते रहे। स्वयं निजाम सरकार ने इस संस्था को बहुत बड़ी सहायताएँ प्रदान कर उत्साहित किया जिससे यह संस्था आज भी चल रही है। आपने अछूतों के लिये भी 'आदि हिन्दू सोशल सर्विस लीग' में भाग लेकर बहुत काम किया। जब आप सोजत गये उस समय भंगियों को पानी की सख्त तकलीफ में देखकर आपने उन लोगों के लिए सोजत के बाहर एक कुआ खुदवाया और उसे उन लोगों के सुपुर्द कर दिया यह कुँआ आज तक विद्यमान है। इसके साथ ही साथ आपने सोजत में एक प्याऊ भी स्थापित की जो आज तक चल रही है। आपको गुप्त दान से भी विशेष प्रेम था। आपसे कई विधवाएँ, अनाथ और गरीब विद्यार्थी गुप्त रूप से सहायता पाते थे। इसके अतिरिक्त आपका हृदय अपने भाइयों एवं परिवार के लोगों की तरफ बहुत उदार था। आप हैदराबाद के जिस मुहल्ले में रहते थे उसके "मीर मोहल्ला" भी थे। मतलब यह कि आपका हृदय सभी दृष्टियों से अत्यन्त उच्च और उदार था। यही कारण था कि हैदराबाद और सोजत की जनता—क्या हिन्दू और क्या मुसलमान—सभी आपको हृदय से चाहती थी। जिस समय संवत् १९८८ की फाल्गुन सुदी ४ को आपका स्वर्गवास हुआ, उस समय हैदराबाद की करीब २००० जनता आपके शव के दर्शन के लिये उपस्थित हुई थी। उसी समय आपके शव का फिल्म भी लिया गया था। हैदराबाद की जनता ने आपकी शोक-स्मृति में पुलिस कमिश्नर के सभापतित्व में एक विशाल सभा भी की थी।

आपके श्रीयुत रघुनाथमलजी नामक एक पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९४५ में हुआ था। आपने अपने पूज्य पिताजी साहब के संरक्षण में उनके सभी गुणों को प्राप्त किया। आप बड़े योग्य मनस्वी तथा होनहार सज्जन हैं। आपका हृदय जैसा उदार है वैसी ही आपकी व्यापारिक दूरदर्शिता भी बढ़ी चढ़ी है। आपने हैदराबाद के अन्तर्गत इंगलिश पद्धति से एक बैङ्क स्थापित किया है। भारतवर्ष में शायद यह पहला या दूसरा ही बैङ्क है कि जिसके सोल प्रोप्राइटर एक मारवाड़ी सज्जन हैं। इस बैङ्क के अन्दर इंगलिश-पद्धति के सब तरह के अकाउण्टस्, जैसे दूसरे बड़े बैङ्कों में होते हैं, खुले हुए हैं। हैदराबाद-स्टेट में इस बैंक की बहुत बड़ी प्रतिष्ठा है। तमाम बड़े २ आदमियों, जागीरदारों तथा रॉयल फेमिली के अकाउण्ट भी यहाँ पर रहते हैं। प्रति वर्ष दीपमालिका के अवसर पर स्वयं निजाम महोदय इस पर पधार कर इस बैंक को सम्मानित करते हैं।

व्यापारिक दूरदर्शिता की ही तरह आपकी धार्मिक और परोपकारक वृत्ति भी बहुत बढ़ी हुई है। आपने हैदराबाद तथा सोजत की दादावाड़ियों में बहुतसी बातों की सुविधाएँ करवाई। आपकी ओर से बहुतसे विद्यार्थियों को गुप्त रूप से छात्रवृत्ति दीजाती है। आप शिवपुरी बोर्डिङ्ग हाउस को भी गुप्त रूप से बहुत सहायता प्रदान करते रहते हैं। हैदराबाद के मारवाड़ी सार्वजनिक जीवन में आप बहुत बड़ी दिलचस्पी रखते हैं। आपकी पुरानी फर्म पर "मेसर्स पूनमचन्द गणेशमल" के नाम से गल्ले का व्यापार होता है। आपकी हैदराबाद में बहुत बड़ी २ इमारतें हैं जिनसे काफी आमदनी होती है। आपका हैदराबाद का पता मेसर्स जी० रघुनाथमल बैङ्कर्स रेसिडेन्सी बाजार हैदराबाद है।

सिंघवी कस्तूरमलजी का परिवार, मेड़ता

यह परिवार भी रायमलोत सिंघवियों की एक शाखा से निकला हुआ है। यद्यपि इस परिवार वालों का सिलसिलेवार इतिहास उपलब्ध नहीं होता है फिर भी पुराने कागज-पत्रों से यह बात मालूम होती है कि पहले इस परिवार के लोग राज्य और समाज में बड़े प्रतिष्ठित माने जाते थे। कुछ कागजातों से ऐसा भी मालूम होता है कि किसी समय में इस परिवार वालों के लिये मारवाड़-राज्य से अधकरी महसूल की माफी के आर्डर मिले थे। इस परिवार में बहादरमलजी, नाहरमलजी, कल्याणमलजी और कस्तूरमलजी हुए। श्री कस्तूरमलजी छबड़े (टांक) में लोढ़ों के यहाँ हेड मुनीमी का काम करते रहे। आप मेड़ता और छबड़ा में बड़ी प्रतिष्ठा की निगाह से देखे जाते थे। आपके कोई पुत्र न होने से आपके यहाँ काल से सिंघवी गोवर्द्धनमलजी के पुत्र सिंघवी मिश्रीमलजी दत्तक लिये गये। वर्तमान में आपही इस परिवार में बड़े व्यक्ति हैं। आप मिलनसार, सज्जन और योग्य पुरुष हैं। आपके श्री आनन्दमलजी और कन्हैयालालजी नामक दो पुत्र हुए थे, मगर खेद है कि आप दोनों का कम उम्र में ही स्वर्गवास होगया।

शिवराजजी सिंघवी कोलार गोल्डफील्ड

इस परिवार के मालिकों का मूलनिवास स्थान अनन्तपुर काल (मारवाड़) है। आप ओसवाल समाज के सिंघवी गौत्रीय जैन श्वेताम्बर समाज के मन्दिर आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में श्री बुधमलजी हुए जिनके चार पुत्र हुए। इनमें से सबसे छोटे पुत्र अनोपचन्दजी के दो पुत्र हुए जिनके नाम श्री गम्भीरमलजी तथा श्री सुखराजजी था। श्री सुखराजजी सिंघवी के श्री सिवराजजी नामक पुत्र हुए।

श्री शिवराजजी का जन्म संवत् १९४० का है। सबसे पहिले आप कालू से संवत् १९५९ में बंगलोर आये और वहाँ आकर आपने अपनी एक फर्म स्थापित की। इसके दो वर्ष बाद कोलार गोल्ड फील्ड में आपने अपनी बैंकिंग व लेन देन की एक फर्म स्थापित की जो इस समय तक बड़ी सफलता के साथ चल रही है। आपने अपने भतीजे समरथमलजी सिंघवी के पुत्र अमोलकचन्दजी को अपने नाम पर दत्तक लिया है। श्री अमोलकचन्दजी का जन्म संवत् १९७० का है। आप भी इस समय फर्म के व्यवसाय में सहयोग देते हैं। श्री शिवराजजी बड़े सज्जन पुरुष हैं। आपने अपने व्यापार को अपने ही हाथों से बढ़ाया। आप धार्मिक और परोपकारी कामों में बहुत सहायता देते रहते हैं।

सेठ सुखराजजी जेठमलजी सिंघवी (रायमलोत), दारवा (बरार)

सिंघवी खुशालचन्दजी के पुत्र ताराचन्दजी जोधपुर स्टेट में सर्विस करते थे। आपको जागीर में गाँव और जमीन मिली थी। आप जोधपुर से पीपाड़ चले आये। इनके पुत्र अमीचन्दजी तथा प्रेमचन्दजी और अमीचन्दजी के पुत्र कस्तूरचन्दजी, पीरचन्दजी, मलूकचन्दजी एवं बख्तावरमलजी हुए थे।

सिंघवी पीरचन्दजी के पुत्र सुखराजजी और जुहारमलजी हुए और बख्तावरमलजी के लालचंदजी, हीरालालजी और चंपालालजी हुए। इन बंधुओं में सिंघवी जुहारमलजी संवत् १८९०—९५ में पीपाड़ से व्यापार के निमित्त दारवा (बरार) गये, और आपने वहाँ अपना कारोबार स्थापित किया। सिंघवी जुहारमलजी के नाम पर चम्पालालजी, एवं सुखराजजी के नाम पर जेठमलजी (हीरालालजी के पुत्र) पीपाड़ से दारवा दत्तक आये।

सिंघवी हीरालालजी, सिंघवी हिन्दूमलजी के नाम पर सारथल (झालावाड़ स्टेट) में दत्तक गये थे। हिन्दूमलजी और हीरालालजी सारथल ठिकाने के कामदार रहे। हीरालालजी का शरीरान्त १९४० में हुआ। इनके पुत्र जेठमलजी दारवा में दत्तक गये। इस समय जेठमलजी के यहाँ कृषि तथा व्यापार कार्य्य होता हैं। आपके पुत्र दुलीचन्दजी तथा सुगनचन्दजी हैं।

इसी तरह इस परिवार में पेमचन्दजी के पुत्र गुलाबचन्दजी इन्द्रराजजी तथा अभयराजजी हुए गुलाबचन्दजी के पुत्र केसरीमलजी थे तथा केसरीचन्दजी के फूलचन्दजी तथा मुकुन्दचन्दजी नामक पुत्र हुए। इनमें मुकुन्दचन्दजी विद्यमान हैं।

सिंघवी जोरावरमलोत

सिंघवी सोनपालजी का परिचय ऊपर दिया जा चुका है। इनके ६ पुत्र हुए जिनमें बड़े सिंघाजी थे। सिंघाजी के चापसीजी, पारसजी गोपीनाथजी आदि ५ पुत्र हुए। इनमें पारसजी के राणोजी हंसराजजी हरचन्दजी दुरजानजी तथा सुन्दरदासजी नामक पुत्र हुए। इन भ्राताओं में सुन्दरदास जी के ७ पुत्र हुए जिनमें छठे मूलचन्दजी थे। मूलचन्दजी के परिवार वाले मूलचंदोत सिंघवी कहलाये। सिंघवी मूलचंदजी के अनोपचंदजी खुशालचंदजी वर्द्धमानजी तथा जेठमलजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें जेठमलजी के पुत्र हिन्दूमलजी जोरावरमलजी धनरूपमलजी तथा मानमलजी हुए। जोरावरमलजी का परिवार जोरावरमलोत सिंघवी कहलाया। मूलचंदोत, जेठमलोत और जोरावरमलोत सिंघवी एक ही परिवार की शाखाएँ हैं।

सिंघवी मूलचन्दजी—ये सिंघवी सुन्दरदासजी के पुत्र थे। आप संवत् १७७२ में गुजरात के तोपखाने के अफसर होकर लड़ाई में गये और वहीं कातिक सुदी ११ को काम आये। आपकी छतरी अभी तक अहमदाबाद में मौजूद है।

सिंघवी जेठमलजी—सिंघवी मूलचन्दजी के अनोपचन्दजी, कुशलचन्दजी, विरदभानजी और जेठमलजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें अनोपचन्दजी दौलतपुर के हाकिम थे। महाराजा अभयसिंहजी के ये कृपा पात्र थे। संवत् १८११ में इन्होंने मेड़ते की लड़ाई में मदद की, फिर इन्होंने नहेड़ा तथा कागेपर का मोरचा तोड़ा, इस प्रकार अनेकों लड़ाइयों में आप सम्मिलित हुए। संवत् १८११ की चैत वदी ८ को महाराजा विजयसिंहजी ने एक रुक्का दिया उसमें लिखा था कि "तथा गढ़ ऊपर तुरकियों मिल गयो सूँ चैतवद १ ने यारला हाको कियो सूँ निपट मजबूती राखने मार हटाय दिया, सूँ चाकरी री तारीफ़ कठा तक फरमावां" इत्यादि इस तरह के कई रुक्के मिले। इन्होंने दक्षिणियों से जालोर का क़िला वापिस लिया। विलाड़ा तथा भावी के आप हाकिम बनाये गये।

चांपावत सबलसिंहजी महाराजा विजयसिंहजी से वागी* हो गये थे। उन्हें दबाने के लिये संवत् १८१७ में २७ सरदारों और ४०० घोड़ों के साथ सिंघवी जेठमलजी विलाड़े पर चढ़ आये। सावण सुदी ५ को जेठमलजी शत्रु पर टूट पड़े। विरोधियों की तादाद ज्यादा थी फिर भी सबलसिंहजी और उनके २२ सरदार मारे गये, और जेठमलजी का सिर भी काट डाला गया। कहा जाता है कि फिर भी इनका धड़ लड़ता रहा। इस प्रकार ये वीर झुंझार हुए। इनके झुंझार होने के स्थान याने बिलाड़े के तालाब पर

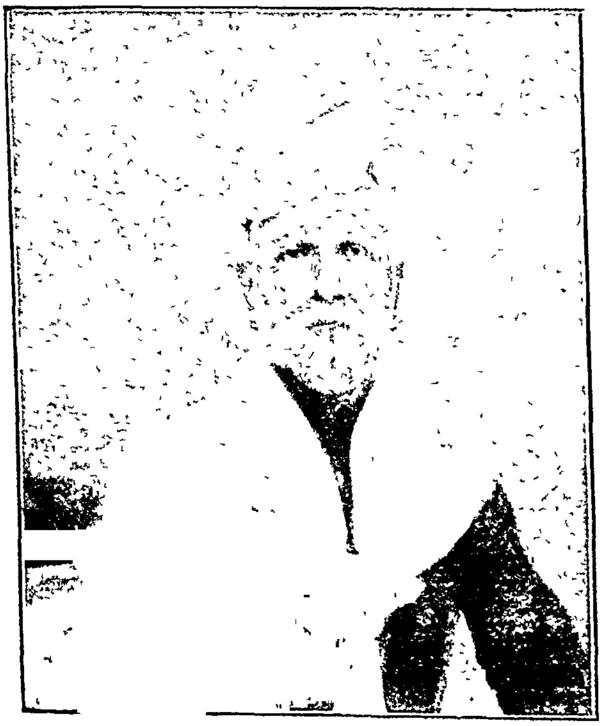
* सरदार लोग महाराजा विजयसिंहजी से नाराज इसलिये होगये थे कि दरबार ने शराब की भट्टी तथा मांस बेचना बंद करवा दिया था।



स्व० सिंघी जेठमलजी दीवान राज मारवाड़, जोधपुर ।



स्व० सिंघी फतमलजी दीवान राज मारवाड़, जोधपुर ।



स्व० सिंघी जसवंतमलजी (जोरावरमलोत) जोधपुर ।



स्व० सिंघी सुकनमलजी (जोरावर-मलोत) जोधपुर ।

इनकी छतरी बनी हुई है, जहाँ झुञ्झारजी की पूजन होती है और प्रत्येक श्रावण सुदी ५ को वहां उत्सव होता है। जेठमलजी के हिन्दूमलजी, जोरावरमलजी, धनरूपमलजो और मानमलजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें सिंघवी हिन्दूमलजी, सिंघवी अनोपचन्दजी के नाम पर दत्तक आये। इन्होंने बख्शीगिरी की।

सिंघवी जोरावरमलजी—इनके पिता की मृत्यु पर दरबार ने एक दिलासा का पत्र दिया कि "........तू किणी वातसूँ उदास हुयजे मती........जेठमल दरबार रे अरथ आयो चाकरी रो ऊंडो सीरछे।"

संवत् १८१९ में सिंघवी जोरावरमलजी ने पाली नगरी आबाद की। इसी से उस समय "पाली जोरा की" इस नाम से सम्बोधित की जाती थी। संवत् १८१९ में जीतमलजी के हाथ से बचे हुए ५ बागी सरदारों को दबाने के लिए ये सोजत के हाकिम बनाकर भेजे गये। वहाँ इन्होंने पाँचों को पकड़ लिया। १८२१ में इनको १३७५) की रेख के दो गाँव इनायत हुए। सम्वत् १८२४ में इन्होंने पटायत जगतसिंह को सर किया। १८२८ में देसूरी के सोलंकी वीरमदे आदि जागीरदारों को दबाकर इन्होंने अपने चचेरे भाई खूबचन्दजी, मानमलजी, शिवचंदजी, बनेचन्दजी और हिन्दूमलजी की मदद से गोडवाड़ का परगना जमाया। १८२९ में घाणेराव चाणोद के मेड़तियों को आधीन किया। इसी साल इन्हें गाँव मोकमपुर इनायत हुआ। दरबार की ओर से इन्हें १८४७ में बैठने का कुरुव और १८४८ में कड़ा पालकी, और सिरोपाव इनायत हुआ। इसी वर्ष फागुन सुदी १४ को आप स्वर्गवासी हुए। आपकी सन्तानें जोरावरमलोत कहलाती हैं।

सिंघवी खूबचन्दजी—सिंघवी जोरावरमलजी के बड़े भाई विरदभानजी के शिवचन्दजी, बनेचंदजी तथा खूबचन्दजी नामक ३ पुत्र हुए। सिंघवी खूबचन्दजी ने बीकानेर के २०० सिपाहियों को बड़ी वीरता और कुशलता के साथ केवल १० घोड़ों से भगा दिया। इसका वर्णन कर्नल टॉड साहब ने अपने इतिहास में किया है। इसके बाद इन्होंने उमरकोट के दंगे को शांत किया तथा उसपर मारवाड़ का झण्डा फहराया। उस स्थान के हाकिम इनके भानेज लोढ़ा शाहमलजी बनाये गये।

सिंघवी खूबचन्दजी बड़े मानी थे। ये मारवाड़ दरबार के सिवाय और किसी को प्रणाम नहीं करते थे। जब माधोजी सिन्धिया ने जयपुर पर चढ़ाई की और जयपुर के महाराजा प्रतापसिंहजी ने जोधपुर से मदद मांगी; उसमें खूबचन्दजी इसीलिए नहीं गये कि जयपुर दरबार को सिर नवाँना पड़ेगा। इसी ऐंठ के कारण पोकरन ठाकुर सवाईसिंहजी ने विजयसिंहजी के पड़दायत गुलाबरायजी को इनके खिलाफ़ बहकाया और संवत १८४८ की श्रावण वदी अमावश्या को इनको षड्यन्त्र से मरवा दिया। इसी तरह

इनके बड़े भाई वनेचन्दजी और बड़े पुत्र हरकचन्दजी भी मरवा दिए गये। बाद भेद खुलने पर पासवान-जी बहुत पछताई।

सिंघवी जीतमलजी और उनके बन्धु—सिंघवी जोरावरमलजी के फतेमलजी, सूरजमलजी, केसरी-मलजी, जीतमलजी, शम्भूमलजी और अणंदमलजी नामक ६ पुत्र हुए। जब कुँवर भीमसिंहजी ने अपने पिता महाराज विजयसिंहजी के जीतेजी ही जोधपुर पर अपना आधिपत्य जमाया, उस समय मारवाड़ के अधिकांश सरदार उमराव, कुँवर भींवसिंहजी की मदद पर थे। जब भींवसिंहजी अपने भाइयों और भतीजों को मरवाने की कोशिश कर रहे थे, उस समय पासवानजी ने कुँवर शेरसिंहजी और महाराज कुमार मानसिंहजी को जालोर लेजाने के लिए सिंघवी जीतमलजी और उनके बन्धुओं से कहा। इसपर जीतमल-जी, फतेमलजी, शिम्भूमलजी और सूरजमलजी कुँवरों को लेकर जालोर दुर्ग चले गये। इसके दो दिन बाद ही भींवसिंहजी ने पासवानजी को मरवा डाला और सिंघवी जीतमलजी की हवेली लुटवा दी। महाराज विजयसिंहजी के विजयी हो जाने पर शेरसिंहजी जालौर से वापस चले आये और मानसिंहजी वहीं रहने लगे। फिर जब महाराजा विजयसिंहजी भी स्वर्गवासी हो गये और भींवसिंहजी ने जोधपुर पर अपना अधिकार जमा लिया, उस समय मानसिंहजी का अधिकार केवल जालोर और उसके समीपवर्ती परगनों पर ही रह गया था। इस समय इनके दीवान सिंघवी जीतमलजी बनाये गये थे। ऐसी स्थिति में भींमसिंहजी ने जालोर के चारों ओर घेरा डलवा दिया जिससे मानसिंहजी बड़ी कठिनाई में पड़ गये। मानसिंहजी की इस विकट स्थिति में सिंघवी शम्भूमलजी इधर उधर से लूट खसोट कर रसद आदि सामान जालोरगढ़ को पहुँचाते रहे। इतना ही नहीं, इधर-उधर से सेना इकट्ठी करने और भींवसिंहजी की फौजों को खदेड़ने का काम भी ये ही सिंघवी बन्धु करते थे। ऐसी विपत्ति के समय में मदद पहुँचानेवाले सिंघवी बंधुओं को मानसिंहजी ने अनेक रुक्के आदि देकर इनकी स्वामि भक्ति की बड़ी प्रशंसा की थी, इन रुक्कों में से कुछ हम नीचे उद्धृत करते हैं।

श्री रामजी

सिंघवी जीतमल सुँ म्हारो जुहार वांचंने थूँ मारेधणी बात छे फौजरा खरच वरच री ने काम काजरी मोकली थारा जीवँने अदाछे पिण करा कऊँ अठे खजानो होवे तो थने फोड़ा पड़न देवां नहीं जोधपुर सूँ ही थूँ लेने आयो छे ने सारो ही कामकाज था सूँ निबियो है ने ह मेही सारो कामकाज थांरे भरोसे छे थारी चाकरी थाने भरेदसां ने था सूँ कदे उसरावण हुसां नहीं श्री जालंधरनाथ सारी बात आछी करसी। फतेमल अणंदमल मारी मरजी माफक बंदगी करे छे। सम्वत १८५० रा जेठ वदी ३

इसी प्रकार दूसरा परवाना इसी आशय का दिया कि—

श्रीरामजी

सिंघवी जीतमल सूँ माहरो जुहार बांचजो तथा मां दीसा थूँ किणी बात रो अविसवास मती राखजे थां सूँ मैं कोई बात छांनी राखसां के मरजी सिवाय जाब करसां तो परमेश्वर सूँ बे मुख हुसां जोधपुर सूँ उणजला मांय सूँ थूँ लेने आया नहीं तो काका बाबा में हुई सूँ मां सूही होती सूँ थां सूँ कीणी वातरो अंतर असल हुसी तो ना राखसी मांसूँ थारा इंसा अवसान है थूँ आदी रोटी खावण नु देवे तोही थांसूँ और तेरें न जाणू सूँ अठे तो सारी बात मौजूद हे काले ही आयोड़ीसी बेमरजादिक बात हुवण में आयगई सूँ रात की इसी उदासी लाग रही है सूँ परमेश्वर जाणे छे एकर सूँ अठे आयने मिल जावे तो ठीक है संवत् १८५४ रा जेठ बद २ वार बुध

सिंघवी शंभूमलजी—ये अपने अन्य बन्धुओं के साथ विखे विपत्ति के समय महाराजा मानसिंहजी की सेवा में तन मन धन से लगे थे। महाराजा मानसिंहजी इन पर बहुत विश्वास करते थे तथा उनसे इनका घरेलू पत्र व्यवहार होता था। मानसिंहजी ने एक बार इनके लिये कहा है "जोरावर सुत पाँच शंभू तामे घणो सपूत।" जब जालोर घेरे में अन्नधन की कमी हुई उस समय शम्भूमलजी खुफ़िया तौर से जालोर के किले में रसद व समाचार भेजते रहे थे। संवत् १८५८ में शम्भूमलजी के भाई जीतमलजी ने हिन्दूमलजी के पुत्र बख्तावरमलजी को जालोरगढ़ में रखा। साथ ही उन्होंने महाराजा भीमसिंहजी की ओर से घेरा देनेवाले सरदार मुत्सुद्दियों को समझाने की कोशिश की।

जब संवत् १८६० में मानसिंहजी जोधपुरकी गद्दी पर बैठे तब जीतमलजी को पाली और नागोर की हाकिमी और फतेहमलजी को घाणेराव-देसूरी और सोजत का हाकिम बनाया। इसी तरह संवत् १८६३ में जब जोधपुर पर बड़ी भारी फौज चढ़ आई थी उस समय भी इन बन्धुओं ने दरबार की अच्छी सेवा बजाई थी जिसके लिये दरबार ने इन्हें रुक्के आदि देकर सम्मानित किया था।

सिंघवी गम्भीरमलजी और इन्द्रमलजी—सिंघवी फतेहमलजी के पुत्र गम्भीरमलजी और जीतमलजी के पुत्र इन्द्रमलजी और नींवमलजी हुए। संवत् १८८८ में सिंघवी गम्भीरमलजी को और १८८२ में इन्द्रमलजी को जोधपुर राज्य के दीवान का सम्माननीय पद दिया गया। इस समय भी इन बन्धुओं ने दरबार की काफी सेवाएं कीं। संवत् १८९२, १८९५ और १९०० में सिंघवी गम्भीरमलजी पुनः २ दीवान बनाये गये जो संवत् १९०३ तक रहे। संवत् १८९७ में इन्द्रमलजी को भी पुनः दीवान का सम्मान प्राप्त हुआ। इन बन्धुओं को महाराजा मानसिंहजी ने ताजीम कुरब कायदा और जागीर देकर सम्मानित किया।

लगभग १० हजार की आय की जागीर आपके पास रही, जिनमें जालौर परगने का साँथू नामक १ ग्राम अब भी इस परिवार के एक सज्जन के अधिकार में है। सिंघवी गंभीरमलजी ने गुलाब सागर पर श्री रघुनाथजी का मन्दिर व महामन्दिर में एक रामद्वारा बनाया।

गम्भीरमलजी के पुत्र हमीरमलजी तथा पौत्र सिरेमलजी हुए। सिरेमलजी के अधिकार में भागासणी व सांथू नामक ग्राम थे। इन्होंने राज्य का कोई ओहदा स्वीकार नहीं किया। इनके बहादुरमलजी व सुकनमलजी नामक २ पुत्र हुए। सिंघवी सुकनमलजी वीर प्रकृति के पुरुष थे। आप संवत् १९७० में अपनी जागिरी के गाँव सांथू के अधिकारों की रक्षा के लिये राजपूत भोमियों से लड़ते हुए काम आये। इनके साथ ही इनके कामदार मेड़तिया लखसिंहजी भी अपनी स्वामिभक्ति का परिचय देते हुए काम आये। इस समय सुकनमलजी के पुत्र मानमलजी सवाईमलजी तथा अचलमलजी मौजूद हैं। मानमलजी अपनी जागीरी के गाँव सांथू की देखरेख व महकमे खास में सर्विस करते हैं। आपके छोटे भ्राता पढ़ते हैं।

सिंघवी हिन्दूमलजी के पुत्र बख्तावरमलजी हवाला सुपरेन्टेण्डेण्ट थे। इस समय उनके प्रपौत्र किशनमलजी जैतारण में रहते हैं।

दीवान सिंघवी इन्द्रमलजी के बाद क्रमशः दूलहमलजी तथा जगरूपमलजी हुए। इस समय जगरूपमलजी के पुत्र सिवदानमलजी तथा शिवसोभागमलजी महकमें खास में सर्विस करते हैं।

सिंघवी नींवमलजी उमरकोट के हाकिम थे। इनके समरथमलजी तथा दूलहमलजी नामक दो पुत्र हुए, जिनमें दूलहमलजी, सिंघवी इन्द्रमलजी के नाम पर दत्तक गये। सिंघवी समरथमलजी हाकिम रहे। सिंघवी समरथमलजी के जसवन्तमलजी कानमलजी तथा केवलमलजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें केवलमलजी मौजूद हैं। जसवन्तमलजी संवत् १९४४ से १९७० तक हाकिम रहे। इनके पुत्र गणेशमलजी भी हाकिम थे। गणेशमलजी के पुत्र शिवनाथमलजी तथा कल्याणमलजी हैं।

सिंघवी कानमलजी के नथमलजी, बुधमलजी और बीसनमलजी नामक पुत्र विद्यमान हैं। सिंघवी नथमलजी समझदार व्यक्ति हैं। आपके पुत्र रणजीतमलजी एवं सरदारमलजी राज्य कर्मचारी हैं तथा गजमलजी बी० कॉम में अध्ययन कर रहे हैं। बुधमलजी के पुत्र गुलाबमलजी, मोतीमलजी, मदनमलजी तथा चाँदमलजी राज्य कर्मचारी हैं। श्रीयुत चाँदमलजी बी० ए० जोधपुर के सिंघवी परिवारों में प्रथम ग्रेज्युएट हैं। आप प्राइवेट सेक्रेटरी आफिस में सर्विस करते हैं।

इसी तरह सिंघवी शंभूमलजी के परिवार में इस समय माधोमलजी तथा सरदारमलजी के कुटुंब में भैरूमलजी तथा रङ्गरूपमलजी हैं।

श्री सुखराज रूपराज सिंघवी (धनराजोत) जालना

यह परिवार जोधपुर के सिंघवी भींवराजजी के छोटे भाई धनराजजी का है। सिंघवी लखमीचन्दजी के सावंतसिंहजी, जीवराजजी, भींवराजजी तथा धनराजजी नामक ४ पुत्र हुए इनमें भींवँराजजी के परिवार का विस्तृत परिचय ऊपर दिया जा चुका है।

सिंघवी धनराजजी—संवत् १८४४ (सन् १७८७) में जोधपुर महाराजा विजयसिंहजी ने मरहठों के हमले से अजमेर को मुक्त किया, तथा यहाँ के शासक सिंघवी धनराजजी को बनाकर भेजा, लेकिन चार साल बाद ही मरहठों ने फिर मारवाड़ पर चढ़ाई की और मेड़ता तथा पाटन की लड़ाइयों में उनकी विजय हुई। उस समय मरहठा सेनापति ने फिर अजमेर पर धावा किया। वीरवर सिंघवी धनराजजी अपने मुट्ठी भर वीरों के साथ किले की रक्षा करते रहे और मरहठों को केवल किले पर घेरा डाले रह कर ही संतोष करना पड़ा।

पाटन की पराजय के बाद महाराजा विजयसिंहजी ने धनराजजी को आज्ञा दी कि 'किला, शत्रुओं के सिपुर्द करके जोधपुर लौट आओ, लेकिन इस प्रकार किला छोड़ कर सिंघवी धनराजजी ने आना उचित नहीं समझा, अतएव स्वामी की आज्ञा पालन करने के लिए इन्होंने हीरे की कणी खाली, उनके अन्तिम शब्द ये थे कि "जाकर महाराज से कहो कि उनकी आज्ञा पालन का मेरे लिए केवल यही एक मार्ग था। मेरे मृत शरीर के ऊपर से ही मरहठे अजमेर में प्रवेश कर सकते हैं" अस्तु।

सिंघवी जोधराजजी—सिंघवी धनराजजी के हंसराजजी, जोधराजजी तथा सावन्तराजजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें सिंघवी जोधराजजी के जिम्मे संवत् १८५८ की आसोज सुदी ३ को जोधपुर महाराजा ने दीवानगी का ओहदा किया, लेकिन कई कारणों से वहाँ के कई सरदार आपके खिलाफ हो गये, अतएव उन्होंने संगठित रूप से आपकी हवेली पर चढ़ाई करके भादवा वदी २ संवत् १८५९ को आपका सिर काट डाला, इससे महाराजा भींवसिंहजी को बड़ा दुःख हुआ और इसका बदला लेने के लिये इनके चचेरे भ्राता सिंघवी इन्द्रराजजी को भेजा। इन्द्रराजजी ने ठाकुरों को दण्ड दिया, तथा उनसे हजारों रुपये वसूल किये।

सिंघवी नवलराजजी—सिंघवी जोधराजजी के नवलराजजी विजैराजजी तथा शिवराजजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें सिंघवी नवलराजजी ने भी जोधपुर में दीवानगी के ओहदे पर कार्य्य किया, आपका बहुत छोटी अवस्था में स्वर्गवास हो गया था। सिंघवी विजैराजजी पर किसी कारणवश जोधपुर दरबार की नाराजी हो गई अतः इस खानदान के लोग चण्डावल, बगड़ी, खेरवा, पाली आदि स्थानों में जाबसे।

सिंघवी विजैराजजी के पुत्र जेतराजजी तथा अमृतराजजी थे इनमें जेतराजजी के खानदान के लोग इस समय परभणी में रहते हैं। सिंघवी अमृतराजजी के पुत्र जसराजजी जालना गये तथा संवत्

१९७४ में स्वर्गवासी हुए। इस समय आपके पुत्र सुखराजजी विद्यमान हैं सिंघवी सुखराजजी का जन्म संवत् १९२९ में हुआ, आपके पुत्र रूपराजजी हैं। इनके यहाँ रुई, गल्ला व आढ़त का कार्य्य होता है।

सिंघवी जेतराजजी के चिमनीरामजी तथा जसराजजी नामक पुत्र थे इनमें जसराजजी, सिंघवी अमृतराजजी के नाम पर दत्तक गये। चिमनीरामजी के पुत्र सोहनराजजी हुए।

सिंघवी गजराजजी अन्नराजजी सोजत

संघपति सोनपालजी के चौथे पुत्र सिंहाजी थे। उनके बाद क्रमशः चापसीजी, हेमराजजी और गणपतजी हुए। सिंघवी गणपतजी के गाढ़मलजी तथा मेसदासजी नामक दो पुत्र थे। सिंघवी मेसदासजी तक यह खानदान सिरोही में रहा। वहाँ से सिंघवी मेसदासजी जब सोजत आये तब अपने साथ सरगरां, बांभी, नाई, सुतार आदि कई जातियों को लाये। इन जातियों के लिये आज भी स्टेट से बेगार माफ़ है। सिंघवी मेसदासजी के लूणाजी, लालाजी तथा पीथाजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से पीथाजी के प्रपौत्र सिंघवी भीमराजजी और उनके पुत्रों ने जोधपुर राज्य में बहुत महत्वपूर्ण कार्य्य किये।

सिंघवी लूणाजी के पश्चात् क्रमशः खेतसीजी, सामीदासजी, दयालदासजी दुरगदासजी और संतोषचन्दजी हुए। सिंघवी संतोषचन्दजी के मोतीचन्दजी तथा माणकचन्दजी नामक २ पुत्र हुए।

सिंघवी मोतीचंदजी बहुत बहादुर तबियत के व्यक्ति थे। छोटी उमर में ही इनकी दिलेरी देख जोधपुर दरबार भीमसिंहजी ने इन्हें एक बड़ी फ़ौज देकर जालोर घेरे में भेजा। साथ ही जागीर और रुतबा भी बख्शा, जालोर घेरे में इन्होंने बहादुरी के साथ लड़ाई की। इसके अलावा सिंघवी मोतीचंदजी के नाम पर कई हुकूमतें भी रहीं। सिंघवी मोतीचन्दजी (मोतीरामजी) के बाद क्रमशः सायबरामजी और कालूरामजी हुए।

सिंघवी कालूरामजी व्यापार के निमित्त सोलापुर (दक्षिण) गये और वहाँ सन् १९२१ में दुकान खोली। इनके जीवराजजी माधोराजजी और हरकराजजी नामक ३ पुत्र हुए। संवत् १९३० के लगभग जीवराजजी ने गुलबर्गा में (निजाम स्टेट) कपड़े का कारबार शुरू किया। संवत् १९५७ में कालूराम जी का, संवत् १९५८ में जीवराजजी का, संवत् १९६८ में माधोराजजी का तथा संवत् १९७५ में हरखराज जी का अंतकाल हुआ। इस समय कालूरामजी के तीनों पुत्रों की गुलबर्गा में अलग २ दुकानें हैं।

वर्तमान में जीवराजजी के पुत्र गजराजजी तथा हरखराजजी के पुत्र अनराजजी तथा सम्पतराज जी विद्यमान हैं। माधौराजजी के पुत्र किशनराजजी का संवत् १९८२ में स्वर्गवास हो गया है।

सिंघवी अनराजजी का शिक्षण केम्ब्रिज सीनियर तक हुआ। अंग्रेजी का आपको अच्छा अभ्यास है। आपने १२ साल पहले सोजत में श्री महावीर वाचनालय की स्थापना की। आपने सर प्रताप हाई स्कूल जोधपुर में शिक्षक तथा जैन श्वेताम्बर विद्यालय में प्रधानाध्यापकी का काम किया। १९३३ में आप मारवाड़ी विद्यालय बम्बई के मंत्री रहे थे। आप शिक्षा प्रेमी तथा उन्नत विचारों के सज्जन हैं। इस कुटुम्ब का इस समय बम्बई बम्बादेवी में अनराज सम्पतराज के नाम से आढ़त का तथा गुलबर्गा में कालूराम जीवराज, आदि भिन्न २ नामों से कपड़े का व्यापार होता है।

सिंघवी दीपराजजी, सोजत

ऊपर के परिचय में बतलाया गया है कि सिंघवी मोतीरामजी के छोटे भ्राता सिंघवी माणकचंदजी थे। इसके बाद क्रमशः छोगमलजी और कस्तूरमलजी हुए। सिंघवी कस्तूरमलजी के फूलचंदजी, हमीरमलजी तथा गंभीरमलजी नामक ३ पुत्र हुए। इन बंधुओं में से सिंघवी फूलचन्दजी ने मारवाड़ स्टेट में सायर दरोगाई का काम बड़ी मुस्तैदी से किया। आपकी होशियारी से प्रसन्न होकर सिरोही दरबार ने अपनी स्टेट में सायरात का प्रबन्ध करने के लिये जोधपुर स्टेट से आपको मांगा। सिरोही में कस्टम का इन्होंने अच्छा इंतजाम किया। इसके लिये सिरोही दरबार ने इन्हें सार्टिफिकेट प्रदान किया। संवत् १९५५ की फाल्गुन सुदी १२ को नागोर में इनका शरीरान्त हुआ।

फूलचंदजी के कार्य्यों से प्रसन्न होकर इनके छोटे भाई हमीरमलजी को भी सिरोही स्टेट ने अपने यहाँ स्थान दिया। आपके पुत्र सिंघवी दीपराजजी इस समय सिरोही स्टेट के आबू रोड नामक स्थान पर नायब तहसीलदार हैं। आपके पुत्र देवराजजी तथा जसवंतराजजी हैं। सिंघवी देवराजजी, Mutual Rajputana & Co. Limited Beawar के मेनेजिंग एजंट हैं और इंटर में पढ़ते हैं। इनके पुत्र रत्नसिंह हैं।

सिंघवी सुकनमलजी (गाढ़मलोत) जोधपुर

सिंघवी सोनपालजी के पौत्र चापसीजी से भींवराजोत, धनराजोत, गाढ़मलोत आदि शाखाएं निकलीं। गाढ़मलोत परिवार के कई व्यक्तियों ने राज्य के काम और हुकूमतें कीं। इनके अच्छे कामों के एवज में जोधपुर दरबारने इन्हें डीडवाना तथा परबतसर परगने में जागीर प्रदान की, जो अभी तक सिंघवी सुकनमलजी के परिवार के तावे में है।

सिंघवी गुलराजजी के रूपराजजी एवं रूपराजजी के हरखमलजी तथा जीवनमलजी नामक २ पुत्र हुए। हरखमलजी के पुत्र सिंघवी गणेशमलजी संवत् १९७६ में गुजरे, इसी तरह जीवनमलजी के पुत्र भेरूमलजी १९७४ में गुजरे।

सिंघवी गणेशमलजी के पुत्र सुकनमलजी का जन्म संवत् १९५९ की काती वदी ११ को हुआ है। आप राज मारवाड़ में पोतदार हैं और इस समय हुकूमत बाड़मेर में काम करते हैं। सिंघवी भेरूमलजी के पुत्र मुकनमलजी और मोहनलालजी जोधपुर में व्यापार करते हैं।

सिंघवी समरथमलजी का खानदान सिरोही

संवत् १६५२ में इस परिवार के पुरुषों ने भाड़वा (जालोर) में महावीर स्वामी का एक मन्दिर बनवाया तथा गिरनार और शत्रुंजय के संघ निकाल कर रूपा का कलश और थाली लाण में बांटी। इसलिये यह परिवार सिंघवी कहलाया। बहुत समय बाद रतनसिंहजी के पुत्र नारायणसिंहजी कोमता (भीनमाल) से सिरोही आये। इनके बाद क्रमशः खेतसीजी पन्नाजी और रूपाजी हुए। रूपाजी कपड़े का व्यापार करते थे। इनके पुत्र कपूरचंदजी, धन्नाजी, केर्टींगजी, लूणाजी, कछुवाजी, मलूकचंदजी हुए। सिंहवी धन्नाजी भी कपड़े का व्यापार करते रहे। इनके समरथमलजी तथा रतनचंदजी नामक दो पुत्र हुए।

सिंघवी समरथमलजी ने सिरोही में अच्छा सम्मान पाया। इनका जन्म संवत् १९१२ की माघ वदी ८ को हुआ। स्वर्गवासी होने से पहिले १५ साल तक ये जेवखास के आफीसर रहे इसके साथ साथ १० सालों तक रेवेन्यू कमिश्नर का कार्य्य भी इनके जिम्मे रहा। आपका प्रभाव दीवान से भी अधिक था। सन् १८९२ की ५ मार्च को सिरोही दरबार महाराव केशरीसिंहजी ने इनको लिखाः—"राज साहबान जगतसिंह जी का रियासत के साथ तनाजा था उसे निपटाने तथा मटाना, मगरीवाड़े के सरहद्दी तनाजे का निपटाने में तथा हजूर साहब जोधपुर गये तब उनकी पेशवाई वगैरा के इन्तजाम में बहुत होशियारी से काम किया।

संवत १९४६—४७ की सिरोही स्टेट की एडमिनिस्ट्रेशन रिपोर्ट में एडमिनिस्ट्रेटर ने इनके लिये लिखा है किः—राज के मुल्की मामलात को तय करने में इन्होंने बहुत मदद दी इसके लिये मैं इनका बहुत आभारी हूं।

इसी तरह रेजिडेंट वेस्टर्न राजपूताना व सिरोही स्टेट के दीवानों ने भी सरहद्दी तनाजों को बुद्धिमत्ता पूर्वक निपटाने के सम्बन्ध में आपको अनेकों सार्टिफिकेट देकर आपकी अक्लमन्दी, कारगुजारी, बफादारी और तनदेही की तारीफ की।

सिंघवी समरथमलजी की चतुरता से प्रसन्न होकर सन् १९०४ में दरबार इनकी हवेली पर पधारे और एक परवाना दिया कि—"थे रियासतरा शुभचिन्तक पणा में रया जणी सुं थाने सोना रो कुरब इनायत करवा मे आयो है सो थांरी हयाती तक पाल्यां जावसी।"

संवत् १९४३ की चेत वदी ३ को दरबार ने इन्हें कुँए के लिये जमीन बख्शी इस प्रकार प्रतिष्ठा पूर्ण जीवन विताते हुए संवत् १९६२ की चेत सुदी ११ को इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पुत्र माणकचंदजी तथा चंदनमलजी विद्यमान हैं। सिंघवी माणकचंदजी का जन्म संवत् १९३३ में हुआ। अपने पिताजी के गुजरने पर ८ सालों तक आप जेबखास के आफिसर रहे आपके पुत्र सरदारमलजी तथा चंदनमलजी हैं।

सिंघवी सुखमलोत परिवार, जोधपुर

सिंघवी सोनपालजी तथा उनके पुत्र सिंहाजी और पौत्र पारसजी का परिचय ऊपर सिंघवी गौत्र की उत्पत्ति में दिया जा चुका है। पारसजी के पुत्र पदमाजी और उनके पुत्र शोभाचन्दजी हुये।

सिंघवी शोभाचन्दजी—इनको सम्वत् १६४७ में महाराजा उदयसिंहजी के समय में दीवानगी का सम्मान मिला। १६६८ में जब मारवाड़ का परगने वार का काम बाँटा गया तब उसमें जोधपुर परगने पर सिंघवी शोभाचन्दजी मुकर्रर किये गये। इन्होंने अपने भाइयों के साथ सिंदियों के मुहल्ले में श्री जागोड़ी पार्श्वनाथजी का मन्दिर बनवाया। ये सम्वत् १६७० में मांडल (मेवाड़) के झगड़े में महाराजा सूरसिंहजी की बख्शीगिरी में उनके साथ गये। तथा वहाँ मारे गये। आपके सुखमलजी, रायमलजी, रिड़मलजी तथा परतापमलजी नामक ४ पुत्र हुए।

सिंघवी सुखमलजी—जब सम्वत् १६७८ में जोधपुर पर शाहजादा खुर्रम चढ़कर आया और शहर में बड़ी गड़बड़ी मची। उस समय दरबार ने राठौड़ खाना खींवावत और सुखमलजी को जोधपुर की रक्षा के लिए रक्खा और भण्डारी लूणाजी को फौज के सामने भेजा। सम्वत् १६९० में महाराजा गजसिंहजी ने इन्हें दीवानगी का सम्मान बख्शा। इस ओहदे पर आपने सम्वत् १६९७ की पौष वदी ५ तक बड़ी योग्यता से कार्य्य किया, आपको दरबार ने बैठने का कुरब और हाँसल की माफी दी इन्होंने सम्वत् १६९२ में मेड़ता के फलोदी-पार्श्वनाथजी के मन्दिर की मरम्मत कराई। तथा कोट, बाग़ और कुँआ ठीक करवाया। इनके पुत्र सिंघवी पृथ्वीमलजी हुए।

सिंघवी पृथ्वीमलजी को अपने पिताजी के सब कुरब प्राप्त थे, महाराजा जसवँतसिंहजी के समय में

इन्होंने बड़े-बड़े ओहदों पर काम किया, पृथ्वीमलजी के विजेमलजी तथा दीपमलजी नामक २ पुत्र हुए। विजेमलजी के वख्तावरमलजी या वखतमलजी, तखतमलजी, जोधमलजी, तथा जीवणमलजी नामक ४ पुत्र हुए, और दीपचन्दजी के मनरूपमलजी, इन्द्रभाणजी, चन्द्रभाणजी, उदयभाणजी तथा राजभाणजी नामक ५ पुत्र हुए।

सिंघवी वख्तावरमलजी और तखतमलजी—विजेमलजी के ४ पुत्रों में से प्रथम २ पुत्र विशेष प्रतापी हुए, जब महाराजा अजितसिंहजी के जमाने में मारवाड़ पर मुसलमानों का अधिकार हो गया। तो इन चारों भाइयों ने मुसलमानों के राज्य में रहना पसन्द नहीं किया और आप जोधपुर छोड़कर बीकानेर चले गये। बीकानेर महाराज श्री अनूपसिंहजी से गढ़ सगर में इनकी भेंट हुई, महाराज ने खास रुक्का देकर इन भाइयों को खातरी दिलाई। एक रुक्के में लिखा था कि—

"सिंघवी वखतमल तखतमल बीकानेर छे सो इज्जत क़ायदो भली-भाँति राखजो सीरोपाव दीजोः सम्वत् १७५२ रा मिती भादवा बदी १२ मुकाम गढ़सगर।"

जब जोधपुर से मुसलमानों का कब्जा हटा, और महाराज अजितसिंहजी गद्दी पर बैठे, उस समय उनको योग्य दीवान की आवश्यकता हुई अतः सिंघवी वखतावरमलजी, तखतमलजी, जोधमलजी और जीवणमलजी को जोधपुर बुलाया और सम्वत् १७६३ में सिंघवी वख्तावरमलजी तथा तखतमलजी को दीवान के ओहदे का सम्मान दिया।

सिंघवी जोधमलजी ने भी कई बड़े-बड़े ओहदों पर काम किया जब सम्वत् १७८७ में महाराजा श्रीअभयसिंहजी के पास गुजरात के सूबे का अधिकार हुआ, उस समय अहमदाबाद के सब से बड़े परगने पेटलाद में सिंघवी जोधमलजी को सूबेदार बनाकर भेजा। आपने उस जिले की तीन साल की आय के ११०५०००) एकत्रित किए।

सिंघवी हिन्दूमलजी—सिंघवी चन्द्रभानजी के पुत्र हिन्दूमलजी थे। आपने सम्वत् १८३० से ३२ तक मारवाड़ राज्य की फौजबख्शी (कमाँडर-इन-चीफ) का काम किया आपके पुत्र उम्मेदमलजी परबतसर व फलोदी के हाकिम रहे। आप बहुत अच्छे फौजी आफिसर थे। सम्वत् १८६६ में आपने सिरोही की लड़ाई में बहुत बहादुरी दिखाई और सिरोही फतहकर वहाँ पर जोधपुर दरबार का शासन कायम किया। इससे महाराजा मानसिंहजी ने आपको प्रसन्न होकर प्रशंसा का रुक्का तथा ३ गाँव जागीर में दिये। जिनमें से रेहतड़ी नामक एक गाँव अब भी इनके परिवार के ताबे में है। राज्य की सेवा करते हुए युद्ध में ही इनका शरीरान्त हुआ।

सिंघवी धीरजमलजी—आप दीवान सिंघवी तखतमलजी के पुत्र थे। इनको बैठने का कुरुब, हाँसल की माफी और सैर की चौहट नामक सम्मान प्राप्त हुए। जेतारण में आपको कुछ जागीर मिली जो अभी तक आपके वंशवालों के अधिकार में है। इन्होंने वहाँ धीरजमल की बावड़ी नामक एक बावड़ी तैयार करवाई। इनके पास खातासणी गाँव पट्टे था। उदयपुर दरबार ने भी समय २ पर इनको खास रुक्के दिये थे। इनके तेजमलजी तथा तिलोकचन्दजी नामक पुत्र हुए।

सिंघवी तेजमलजी तिलोकचन्दजी—तेजमलजी साँचोर नावाँ परबतसर के हाकिम तथा जोधपुर किले पर मुसरफ रहे। आपके खारी (जोधपुर) और डूँगरवास (मेड़ता) नामक गाँव जागीरी में रहे। सिंघवी तिलोकचन्दजी भी १९४० में पाली तथा १९५२ में फलोदी की हुकूमत करते रहे। सिंघवी तिलोकमलजी के सुमेरमलजी, हरखमलजी तथा गिरिधारीमलजी नामक ३ पुत्र हुये। इनमें से सिंघवी सुमेरमलजी महाराज मानसिंहजी के दफ्तर दरोगा और हाकिम रहे। सिंघवी सुमेरमलजी के पुत्र गम्भीरमलजी और उनके पुत्र नथमलजी हुए। नथमलजी के पुत्र भेरूमलजी दौलतपुरे में हाकिम रहे। इनके पुत्र रघुनाथमलजी जोधपुर स्टेट में सर्विस करते हैं। आपके पुत्र अचलमलजी और मोतीमलजी हैं। इसी प्रकार इस खानदान में सिंघवी बखतमलजी के परिवार में छोटमलजी, और गोबिंदमलजी हैं, सिंघवी जोधराजजी के परिवार में बहादुरमलजी वगैरा हैं और सिंघवी उम्मेदमलजी के कुटुम्ब में कल्याणमलजी तथा जसवन्तमलजी हैं।

सिंघवी कल्याणमलजी (सुखमलोत) मेड़ता

सिंघवी सुखमलजी तथा उनके पौत्र बख्तावरमलजी जोधपुर के दीवान रहे, उस समय इस परिवार ने अनेकों बहादुरी के कार्य्य किये, उनके पश्चात् सिंघी सवाईरामजी तक इस परिवार के पास कोई इतिहास उपलब्ध नहीं है।

सिंघवी सामजीदासजी के बाद क्रमशः भगोतीदासजी, मयाचंदजी और सवाईरामजी हुए। सवाईरामजी को जोधपुर दरबार महाराजा बिजयसिंहजी ने संवत् १८२३ की आसोज सुदी ८ के दिन नाज व्यापार करने के लिये सायर के आधे महसूल की माफ़ी के हुक्म दिये। सवाईरामजी के हुकुमचन्दजी, आलमचन्दजी, तथा अमरचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें आलमचन्दजी के सूरजमलजी और करणचंदजी नामक दो पुत्र थे। सिंघी करणमलजी के पुत्र हजारीमलजी, चांदमलजी तथा चंदनमलजी हुए। इनके समय में संवत् १८९९ की मगसर सुदी ७ को पुनः इस परिवार को आधे महसूल की

माफ़ी के हुक्म मिले। इससे ज्ञात होता है कि संवत् १८०० से १९०० तक इस परिवार का व्यापार उन्नति पथ पर था तथा मेड़ते के अच्छे समृद्धिशाली कुटुम्बों में इस परिवार की गणना थी।

सिंघवी चांदमलजी के पुत्र धनरूपमलजी और चंदनमलजी के रिखबदासजी थे। रिखबदासजी, अजमेर वाले भड़गतिया कुटुम्ब के यहाँ मुनीम रहे तथा संवत् १९५९ में गुजरे। इनके मनसुखदासजी तथा कल्याणमलजी नामक दो पुत्र हुए। सिंघवी मनसुखदासजी, जोधपुर में लोढ़ों के यहाँ खजाञ्ची थे, इस समय इनके पुत्र शिखरचंदजी उम्मेदपुर में अध्यापक हैं। सिंघवी कल्याणमलजी का जन्म १९५१ में हुआ, आपके यहाँ इस समय लेन-देन का व्यवसाय होता है।

सिंघवी हीराचन्दजी अनोपचन्दजी (रायमलोत) नागोर

सिंघवी रायमलोत खानदान में सिंघवी साहमलजी हुए, इनको जोधपुर दरबार महाराजा भीमसिंहजी ने चेनार में २ कुवे और १ बावड़ी की आमद बतौर जागीरी के इनायत की। इनके पुत्र शिवदासजी आगरा फौज की ओल में दिये गये और वहीं काम आये। आगरे में काम आने की वजह से जोधपुर दरबार ने इनको ९ खेत जागीरी में दिये, जो अभी तक इनके परिवार के पास है। सिंघवी साहमलजी के प्रपौत्र सिंघवी शिवदानमलजी नागोर के कोतवाल थे।

सिंघवी साहमलजी के बाद क्रमशः श्रीचन्दजी, पेमराजजी, कपूरचंदजी, साहबचंदजी, पूनमचंदजी तथा मेहताबचन्दजी हुए। सिंघवी मेहताबचन्दजी के हीराचन्दजी अनोपचन्दजी केसरीचंदजी तथा कानचंदजी नामक ४ पुत्र हुए। हीराचन्दजी १५ सालों तक नागोर म्यु० के मेम्बर रहे। आप वहोरगत का व्यापार करते हैं। सिंघवी अनोपचन्दजी वकालत करते हैं। सिंघवी केसरीचन्दजी बी० ए०, जोधपुर की तरफ से ए० जी० जी० के यहाँ वकील थे। आप फलोदी, मेड़ता पाली और बाली के हाकिम भी रहे थे। इस समय आपकी विधवा पत्नी को आप के नाम की पेंशन मिलती है। सिंघवी अनोपचन्दजी के पुत्र सजनचन्दजी बी० ए० एल० एल० बी० जोधपुर में वकालत करते हैं।

सिंघवी—बलदौटा

मुर्शिदाबाद का सिंघवी परिवार

मुर्शिदाबाद के ओसवाल परिवारों में यहाँ का सिंघवी परिवार बहुत अग्रगण्य और प्रसिद्ध है। बल्कि यह कहना भी अत्युक्ति न होगी कि भारतवर्ष के चुने हुए ओसवाल परिवारों में यह भी एक है। पाठकों की जानकारी के लिये अब हम इस परिवार का संक्षिप्त विवरण नीचे लिख रहे हैं—

ऐसी किम्वदन्ति है कि संवत् ७०९ में रामसीण नामक नगर में श्री प्रद्योतनसूरि महाराज ने चाहड़देव को जैन धर्म का उपदेश देकर श्रावक बनाया। चाहड़देव के पुत्र बालतदेव से वलदोटा गौत्र की स्थापना हुई। इन्होंने अपने नाम से बलदोटा नामक एक गाँव आवाद किया। इनके पुत्र भीमदेव के अरिसिंह, और अरिसिंह के पुत्र जयसिंह और विमलसिंह हुए। जयसिंह के पुत्र राणासगता इनके पुत्र अलहा, इनके महिधर और महीधर के उदयचन्द नामक पुत्र हुए।

उदयचंद के तीन पुत्र हुए। श्रीखेताजी, नरसिंहजी और महीधरजी। इनमें से प्रथम पुत्र खेताजी ने संवत् १२५१ के साल ५१ मोहता ऊपर प्रधाना किया। दूसरे पुत्र नरसिंहजी वलदौटा ने इसी साल चित्तौड़गढ़ पर एक जैन मन्दिर बनवाया। इसकी प्रतिष्ठा श्री मानसिंहसूरि द्वारा करवाई गई। तीसरे पुत्र महीधरजी के ६ पुत्रों में से चापड़देव एक थे। चापड़देव के पश्चात् इनके वंश में क्रमशः सरस कुँवर, भीमसिंह, जगसिंह, विनयसिंह बालदेव, विशालदेव, संसारदेव, देवराज और आसकरण हुए। आसकरण के पाँच पुत्रों में से भीखोजी एक थे। इनके बाद क्रमशः करमा, अरसिंह, नरा, देवसिंह और अरिसिंह हुए।

अरिसिंह के कोई पुत्र न था। अतएव इन्होंने प्रतिज्ञा की कि यदि मेरे पुत्र हो जाय तो यात्रा का एक संघ निकालूं और उसमें एक लाख बत्तीस हजार रुपया खर्च करूँ। इससे इनके वर्द्धमान नामक एक पुत्र हुआ। प्रतिज्ञानुसार यात्रा की। साथ ही बावनी भी की। इसमें एक पिरोजी (मुहर) एक थाल तथा एक लड्डू लहान स्वरूप बाँटा। बलदौटा सिंघवी देवसिंह के पुत्र काला और गोरा दोनों दुघड़ से चल कर किशनगढ़ आये। सहा गोराजी के पुत्र दीताजी और दीताजी के रूपाजी हुए।

साहा रूपाजी ने शत्रुंजय का एक बहुत बड़ा संघ संवत् १५०९ की बैशाख सुदी २ को निकाला। जब यह संघ यात्रा करता हुआ दान चौकी के पास पहुँचा तो हाजीखाँन के आदमियों ने इसे रोका। यह

देखकर संघ के गण्यमान्य व्यक्ति हाजीखाँन के पास गये। वहाँ हाजीखाँन ने रूपाजी बलदोटा को पहचान लिया। इसका कारण यह था कि एक बार इन्होंने अजमेर में हाजीखाँन को एक बहुत बड़ी विपत्ति से बचाया था। हाजीखाँन ने इन्हें देखते ही पूछा "कहाँ जा रहे हो।" इसके प्रत्युत्तर में रूपाजी ने कहा संघ सहित तीर्थ यात्रा को जारहा हूँ। हाजीखाँने बदले का ठीक उपयुक्त समय समझ कर उनसे कहा यह तीर्थयात्रा मैं अपनी तरफ से करवाऊँगा। इसमें जितने भी रुपये मोहरें खर्च होंगी, सब मैं खर्च करूंगा। बहुत कुछ इनकार करने पर भी रूपाजो को हाजीखाँन की बात मानना पड़ी। हाजीखाँ संघ के साथ में हो लिया। बड़ी धूमधाम से श्री शत्रुंजय तीर्थ की यात्रा की। एक स्वामी वात्सल्य किया गया। साथ ही एक मुहर तथा एक २ लड्डू लहान स्वरूप बाँटा गया। इस संघ में ९९०००) खर्च हुए। इसी समय जाति के लोगों ने आपको संघवी की पदवी प्रदान की।

सहा रूपाजी के पश्चात् क्रमशः भदाजी, इसरजी, कुँवरोजी, बिरधोजी, लूभाजी, हरिजी, मेघराजजी, उत्तमाजी, जीवराजजी, लूणांजी, वेनोजी, किसनोजी, कालूजी, हेमराजजी, राजसिंहजी, कपूरचन्दजी (दत्तक), बोरड़ियाजी और दयालदासजी हुए। दयालदासजी के दो पुत्र हुए। बछराजजी और सवाईसिंहजी।

इस परिवार के पुरुष बाबू सवाईसिंहजी बाबू रायसिंहजी (हरिसिंहजी) और बा० हिम्मतसिंहजी नामक अपने दो पुत्रों को लेकर सम्वत् १८४९ के माघ सुदी ५ को अजीमगंज मुर्शिदाबाद में आकर बसे। आपने अपना व्यापार आसाम प्रांत के अंतर्गत ग्वालपाड़ा नामक स्थान में प्रारंभ किया। आपका स्वर्गवास संवत् १८८३ में हो गया।

बाबू रायसिंहजी—आपका जन्म संवत् १८२९ के चैत्र माह में हुआ। अपने पिताजी की मृत्यु के पश्चात् आपने अपने कारोबार का संचालन किया। आपकी पुत्री श्रीमती गुलाबकुँवरी का विवाह बंगाल के प्रसिद्ध जगत सेठ इन्द्रचन्दजी के साथ हुआ। आपका दूसरा नाम हरिसिंहजी भी था। आपके इसी नाम से कलकत्ते की मशहूर फर्म मेसर्स हरिसिंह निहालचन्द की स्थापना हुई। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९०० में हुआ। आपके हुलासचन्दजी नामक पुत्र हुए।

बाबू हुलासचन्दजी—आपका जन्म संवत् १८५४ के करीब हुआ। मेसर्स हरिसिंह निहालचंद नामक फर्म को आप ही ने स्थापित किया। आप बड़े बुद्धिमान, दूरदर्शी, व्यापारकुशल और धार्मिक प्रकृति के पुरुष थे। श्रावक के १२ व्रतों का आप पूर्ण रूप से पालन करते थे। दिल्ली के तत्कालीन अंतिम मुगल सम्राट् बहादुरशाह के दरबार में भी आपने कुछ समय तक कार्य्य किया था। आपके कार्य्य से प्रसन्न हो कर बादशाह ने आपको खिल्लत तथा राय की पदवी प्रदान की थी। इस खिल्लत के साथ में बादशाह



स्व० बाबू डालचंदजी सिंघी, मुर्शिदाबाद.



बाबू बहादुरसिंहजी सिंघी, कलकत्ता.



कुँवर वीरेन्द्रसिंहजी सिंघी, कलकत्ता.

ने आपको एक पन्ने की अंगूठी भी प्रदान की थी। इस अंगूठी पर आपका खिताब सहित नाम एवम् संवत् खुदा हुआ है। वह अंगूठी अभी भी आपके वंशजों के पास विद्यमान है। आपने पैदल रास्तों से सब तीर्थस्थानों की यात्रा की और इसके स्मारक स्वरूप आपने एक डायरी भी लिखी जो हाल में मौजूद है। आपका स्वर्गवास संवत् १९४७ में हुआ। आपके कोई पुत्र न होने की वजह से आपके नाम पर सरदारशहर से चौरड़िया गौत्र के बाबू निहालचन्दजी दत्तक आये।

बाबू निहालचन्दजी—आपका जन्म संवत् १९०१ में हुआ। आप संवत् १९०५ में अजीमगंज में दत्तक आये। आपका विवाह मुर्शिदाबाद के सेठ मगनीरामजी टाँक की पुत्री से संवत् १९१३ में हुआ। आप फ़ारसी भाषा के विद्वान और शायर थे। संस्कृत का भी आपको अच्छा ज्ञान था। प्रायः अस्वस्थ रहने के कारण आपका समय अधिकतर धर्मध्यान ही में बीता। आपका स्वर्गवास संवत् १९५८ में हुआ। आपके बाबू डालचन्दजी नामक पुत्र हुए।

बाबू डालचन्दजी—आपका जन्म संवत् १९२७ में हुआ तथा आपका विवाह संवत् १९३५ में मुर्शिदाबाद निवासी बा० जयचन्दजी वेद की पुत्री से हुआ। आप जैन समाज में बहुत प्रतिष्ठा सम्पन्न पुरुष हो गये हैं। प्राचीन जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार में, तथा जैन सिद्धान्तों के प्रचार में आपने बहुत धन व्यय किया। आप बड़े स्पष्ट वक्ता और अपने सिद्धान्तों पर अटल रहने वाले सज्जन थे। जिस समय कलकत्ता में जूट बेलर्स असोसिएशन की स्थापना हुई, उस समय सर्व प्रथम आपही उसके सभापति बनाये गये। चित्तरंजन सेवासदन कलकत्ता में भी आपने बहुत सहायता पहुँचाई। आपके द्वारा आपके रिश्तेदारों को भी बहुत सहायताएँ मिलती थीं। मृत्यु के समय आप कई लाख रुपये अपने रिश्तेदारों को वितरण कर गये। आप बड़े दूरदर्शी और व्यापार कुशल पुरुष थे। मेसर्स हरिसिंह निहाल चन्द नामक फर्म को आपने बहुत उन्नति पर पहुँचाया। धार्मिक विषयों के भी आप अच्छे जानकार थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९८४ में होगया। आपके एक पुत्र हैं जिनका नाम बाबू बहादुरसिंहजी हैं।

बाबू बहादुरसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९४२ के असाढ़ बदी १ को हुआ। आपका विवाह संवत् १९५४ में मुर्शिदाबाद के सुप्रसिद्ध राय लखमीपतसिंह बहादुर की पौत्री से हुआ। मगर हालही संवत् १९८७ के भाद्रपद में आपकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास होगया। आपने हिन्दी, अंग्रेजी, बंगला आदि भाषाओं में उच्च श्रेणी की शिक्षा प्राप्त की है। आपका स्वभाव बड़ा सरल और मिलनसार है। आपको पुरानी कारीगरी का बेहद शौक है। पुरानी कारीगरी की कई ऐतिहासिक वस्तुओं का आपने अपने यहाँ बहुमूल्य संग्रह कर रखा है। महाराज छत्रपति शिवाजी जिन राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, सीता, महादेव आदि मूर्तियों की पूजा करते थे, तथा जो बहुमूल्य पन्ने की बनी हुई हैं। उनका आपने अपने यहाँ

संग्रह कर रखा है। अरेबियन और परसियन हस्त लिखित पुस्तकों का भी आपके यहाँ बहुमूल्य संग्रह है। ये ग्रन्थ पहले देहली के बादशाहों के पास थे। इनमें से कई एक पर तो उनके हस्ताक्षर भी हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त प्राचीन हिन्दू, कुशान और गुप्त काल के राजाओं के तथा मुसलमान काल के भी बहुत से सिक्कों का आपके यहाँ संग्रह है।

आपको प्राचीन ऐतिहासिक पुरातत्व ही की तरह सार्वजनिक जीवन में भी बहुत दिलचस्पी है। सन् १९८६ में बम्बई में होने वाली जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स के विशेष अधिवेशन के आप सभापति रहे। पंजाब के गुजरान वाला गुरुकुल के छटवें वार्षिक अधिवेशन के भी आप सभापति रहे। यहाँ आपका बहुत महत्वपूर्ण भाषण भी हुआ था।

इसके अतिरिक्त आपने एक और महत्वपूर्ण कार्य किया। कवि सम्राट रवीन्द्रनाथ के शांति निकेतन बोलपुर में आपने सिंघवी जैन विद्यापीठ की स्थापना की। इस विद्यापीठ में जैन धर्म के सुप्रसिद्ध विद्वान और पुरातत्वज्ञ श्री जिनविजयजी आचार्य्य का काम कर रहे हैं। जिससे इस विद्यापीठ में सोने के साथ सुगन्ध की कहावत चरितार्थ हो रही है। इस विद्यापीठ में जैन आगम ग्रंथ, जैन प्रकरण ग्रंथ, जैन कथा साहित्य, देशी भाषा साहित्य, लिपि विज्ञान, ऐतिहासिक संशोधन पद्धति, स्थापत्य विज्ञान, भाषा विज्ञान, धर्म विज्ञान, प्रकीर्ण जैन वाङ्मय इत्यादि जैन संस्कृति से सम्बन्ध रखने वाले सभी विषयों की शिक्षा देने का प्रबंध किया जा रहा है।

इसी विद्यापीठ के साथ एक विशाल ग्रंथ भण्डार और जैन ग्रन्थों का संग्रह भी बनाया जा रहा है। तथा सिंघवी जैन ग्रन्थमाला के नाम से एक ग्रंथमाला भी निकलती है। जिसमें कई बहुमूल्य ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त और भी प्रायः सभी सार्वजनिक कार्यों में आप बड़े उत्साह के साथ भाग लेते रहते हैं।

आपके तीन पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः बा० राजेन्द्रसिंहजी, बा० नरेन्द्रसिंहजी और बाबू वीरेन्द्रसिंहजी हैं।

बाबू राजेन्द्रसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९६१ में हुआ। आपका अध्ययन बी० ए० क्लास तक हुआ। आप बड़े योग्य, बुद्धिमान और मिलनसार सज्जन है। आप के इस समय दो पुत्र हैं, जिनके नाम बा० राजकुमारसिंहजी और बाबू देवकुमारसिंहजी हैं।

बाबू नरेन्द्रसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९६७ में हुआ। आप कलकत्ता विश्व विद्यालय की बी० एस० सी० की परीक्षा में सन् १९२१ में सर्व प्रथम स्थान में उत्तीर्ण हुए। इस समय आप एम० एस० सी० पास कर लॉ में पढ़ रहे हैं।



बाबू राजेन्द्रसिंहजी सिंघी, कलकत्ता.



बाबू नरेन्द्रसिंहजी सिंघी, कलकत्ता.



बाबू राजकुमारसिंह सिंघी S/o बाबू राजेन्द्रसिंहजी, कलकत्ता.



बाबू देवकुमारसिंह सिंघी S/o बाबू राजेन्द्रसिंहजी, कलकत्ता.

बाबू वीरेन्द्रसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९७१ में हुआ। आप इस समय बी० एस० सी० में विद्याध्यन कर रहे हैं।

इस समय इस परिवार की जमींदारी चौबीस परगना, पूर्णियां, मालदह, मुर्शिदाबाद इत्यादि जिलों में फैली हुई है। इसके अतिरिक्त मेसर्स हरिसिंह निहालचन्द के नाम से कलकत्ता, सिराजगंज, अजीमगंज, फारबीसगंज, सिरसाबाड़ी, भड़ंगामारी इत्यादि स्थानों पर आपका जूट का व्यापार होता है। आपका हेड आफिस कलकत्ता है।

सिंघवी-डीडू

सिंघवी खेमचन्दजी का खानदान, सिरोही

कहा जाता है कि उज्जैन जिले के ढोढर नामक स्थान में परमार वंशीय राजा सोम राज करते थे। उनकी बीसवीं पुश्त में माधवजी नामक व्यक्ति हुए, जिन्होंने जैनाचार्य्य श्री जिनप्रसन्नसूरिजी से संतान प्राप्ति की इच्छा से जैन धर्म अङ्गीकार किया। उस समय से इनका गौत्र डीडू और इनकी कुल देवी चक्रेश्वरी मानी गई। माधवजी की पांचवी पुश्त में समधरजी हुए इनके पुत्र नानकजी ने शत्रुंजय का संघ निकाला तब से ये सिंघवी कहलाये।* इस खानदान में आगे चलकर सिंघवी श्रीवन्तजी हुए जिन्होंने सिरोही स्टेट में दीवानगी की। राजपूताने की सभी रियासतों पर आपका बड़ा व्यापक प्रभाव था। श्रीवन्तजी के पुत्रों में रेखाजी और सोमजी का परिवार चला।

सिंघवी रेखाजी का परिवार—रेखाजी के पौत्र सिंघवी लखमीचन्दजी हुए। इनके तीन पुत्र हुए, जिनके नाम खूबचन्दजी, हुकुमाजी और हीरानन्दजी थे। सिंघवी हीरानन्दजी के चार पुत्र हुए। जिनके नाम अदजी, चैनजी, जोरजी और गुलाबचन्दजी था। इनमें इस समय अदजी के परिवार में सिंघवी अनराजजी, सिंघवी मिलापचन्दजी और सिंघवी टेकचन्दजी हैं। सिंघवी अनराजजी के पुत्र मूलचन्दजी सिरोही में वकील हैं, सिंघवी मिलापचन्दजी जोधपुर ऑडिट ऑफिस में सेक्शन हेड हैं और सिंघवी टेकचन्दजी बी० ए० फेनिक्स मिल बम्बई में सेक्रेटरी हैं। सिंघवी चैनजी के वंश में उनके पौत्र सिंघवी समरथमलजी इस समय सिरोही हिज हाइनेस के असिस्टेण्ट प्रायव्हेट सेक्रेटरी हैं।

---

* यहाँ पर यह बात खयाल में रखना चाहिए कि जोधपुर के नाग पूजक सिंघवियों से ये सिंघवी बिलकुल अलग हैं। उनकी उत्पत्ति ननवाणा बोहरों से है और इनकी परमार राजपूत से। —लेखक

इनके पुत्र श्री देवीचन्दजी जो इनके भाई खेमचन्दजी के नाम पर दत्तक गये हैं इस समय एफ० ए० में पढ़ते हैं। सिंघवी जोरजी सिरोही स्टेट में नामाङ्कित व्यक्ति हुए, आपने सरहदी झगड़ों को निपटाने में बड़ा परिश्रम किया। आप संवत् १९१६ में सिरोही स्टेट के दीवान हुए। इनके खानदान में इस समय नैनमलजी, बाबूमलजी और केसरीमलजी विद्यमान हैं।

सिंघवी सोमजी का परिवार—सिंघवी सोमजी के पुत्र अनोपचन्दजी, सुन्दरसी, और विजयराज जी हुए। इनमें से सिंघवी सुन्दरसीजी ने सिरोही राज्य की दीवानगी की। इनके चौथे पुत्र सिंघवी अमरसिंहजी के चार पुत्र हुए जिनमें सिंघवी दौलतसिंहजी का वंश आगे चला। श्री विजयराजजी के दो पुत्र हुए, जिनके नाम नेमचन्दजी और केसरीमलजी था। सिंघवी दौलतसिंहजी के वीरवजी, लालजी, मालजी व फतेचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। इस सारे परिवार को सिरोही दरबार ने प्रसन्न होकर निम्नलिखित परवाना दिया।

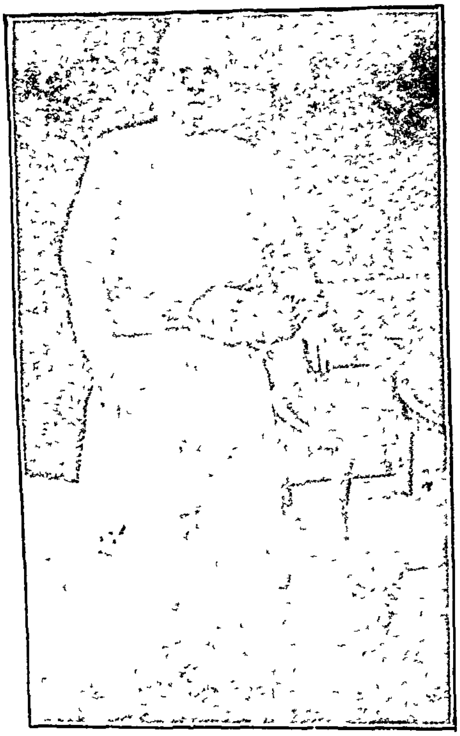
श्री सारणेश्वरजी

महारावजी श्री परतापसिंहजी व कुँवरजी श्री तखतसिंहजी वचनायता—

सिंघवी दौलतसिंह वीरचन्द फतेचन्द माला लाला अमरसिंह सुप्रसाद बांचजो अप्रंच थांरे परदादा श्रीवंतजी श्यामजी व दादा सुन्दरजी अमरसिंहजी वगैरा ने रियासत रा काम में वड़ी मदद व इमानदारी स काम वड़ा महाराजाजी श्री सुलतानसिंहजी व अखेराजजी वेरीसालजी दरजनसिंहजी मानसिंहजी रीवार काम दीवाण गीरी रो कियो व जोधपुर जैपुर री फौज आवती उण मे मदद की फौज पाछी वाली व मुलक आवाद राखियो जिण सुं में थांपर प्रसन्न वे खुशनुदी रो परवाणो कर दियो है और आगने थे इण माफक चालसो जिणरी मनि उमेद है सो थे भी थांरां दादा परदादा माफक चालजो।

सम्वत् १८२५ रा चैत सुद १२ वार सूरज—

सिंघवी लालजी ने ईडर के राज्य में दीवानगी की। इनके तीन पुत्र थे—हेमराजजी, कानजी तथा पोमाजी। इन तीनों ने सिरोही राज्य में दीवानगी की। कानजी तो तीन वार दीवान हुए। पोमाजी ने सिरोही राज्य की बहुत सेवाएँ की। जब मीना भीलों के हमले के कारण व जोधपुर राज्य की लूटों के कारण मुल्क वीरान हो रहा था उस समय पोमाजी ने पोलिटिकल एजण्ट तथा सरदारों से मिलकर शांति स्थापित करने में बड़ी योग्यता से परिश्रम किया। पोमाजी के परिवार में इस समय सिंघवी चुन्नीलालजी और सोहनमलजी हैं।



स्व० सिंघी जवाहरचंदजी दीवान, सिरोही.



स्व० सिंघी कस्तूरचंदजी दीवान, सिरोही.



सिंघी खेमचंदजी एम. ए., सिरोही.



सिंघी हिम्मतमलजी बी. ए., सिरोही.

सिंघवी दौलतसिंहजी के तीसरे पुत्र मालजी के परिवार में सिंघवी कस्तूरचन्दजी ने संवत् १९१९, १९२५, और १९३२ में सिरोही स्टेट की दीवानगी का काम किया। इन्हीं मालजी के दूसरे पुत्र माणकचन्दजी के परिवार में राय बहादुर जवाहरचन्दजी बड़े नामाङ्कित हुए। आप संवत् १९४८,५५ और ५९ में क्रमशः तीनवार सिरोही स्टेट के दीवान रहे। संवत् १९५६ के अकाल में आपने गरीबों की बहुत सेवाएँ की, इसके उपलक्ष्य में गवर्नमेण्ट की ओर से आपको "राय बहादुर" का सम्माननीय खिताब प्राप्त हुआ। आपका स्वर्गवास संवत् १९६० में हुआ। आपके छः पुत्र हुए जिनमें सिंघवी नरसिंहमलजी और हजारीमलजी विद्यमान है। शेष चार पुत्रों के वंशज भी इस समय विद्यमान है।

सिंघवी दौलतसिंहजी के चौथे पुत्र फतेचन्दजी के परिवार में सिंघवी पूनमचन्दजी हुए, आप १४ वर्षों तक सिरोही स्टेट में रेवेन्यू कमिश्नर रहे। गवर्नमेण्ट की ओर से आपको राय साहब का सम्मानीय खिताब प्राप्त हुआ। आपका स्वर्गवास संवत् १९८२ में हुआ। इनके समरथमलजी, भभूतमलजी और दुलिचन्दजी नामक तीन पुत्र हैं। श्री भभूतमलजी (बी० पी० सिंघई) बड़े उत्साही, धार्मिक, शिक्षित और साहित्य-प्रेमी सज्जन हैं। सार्वजनिक कार्य्यों में आप बड़ी दिलचस्पी से भाग लेते हैं। आपके छोटे भाई दुलिचन्दजी एग्रिकल्चर कॉलेज पूना में पढ़ते हैं।

सिंघवी सामजी के तीसरे पुत्र सिंघी विजयराजजी के नेमचन्दजी और केसरीमलजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें नेमचन्दजी का परिवार पाली और घाण में निवास करता है। केसरीमलजी के परिवार में क्रमशः प्रेमचन्दजी, किशनजी, जेठाजी और हिन्दूमलजी हुए। इनमें सिंघवी जेठाजी बड़े धनाढ्य व्यक्ति थे। सिंघवी हिन्दूमलजी के पुत्र रूपचन्दजी, हँसराजजी और ताराचन्दजी थे। सिंघवी रूपचन्दजी पोस्टल विभाग के डेड लेटर आफिस राजपूताना में मैनेजर रहे। सिंघवी हँसराजजी २५ सालों तक पोस्ट मास्टर रहे। सिंघवी रूपचन्दजी के मूलचन्दजी, खेमचन्दजी और हिम्मतमलजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें सिंघवी खेमचन्दजी हंसराजजी के नाम पर और हिम्मतमलजी ताराचन्दजी के नाम पर दत्तक गये।

सिंघवी खेमचन्दजी का जन्म १९४१ में हुआ और सन् १९०८ में आपने एम० ए० की डिग्री हासिल की। सिरोही स्टेट में आप सब से पहले एम० ए० हैं। प्रारम्भ में आप सिरोही सेटलमेण्ट आफिसर मि० कीन० के परसनल असिस्टेण्ट रहे व उसके पश्चात् असिस्टेण्ट सेटलमेण्ट ऑफिसर होकर रेवेन्यू कमिश्नर हुए। आपको महाराव केसरीसिंहजी व कई अंग्रेज असफरों ने अच्छे २ सार्टीफिकेट दिये। वाइसराय के आर्डर से तत्कालीन ए० जी० जी० आरमी डिपार्टमेन्ट ने आपके कार्य्यों की गजट ऑफ़ इण्डिया में बहुत प्रशंसा की सन् १९२४ से १९२९ तक आप जोधपुर स्टेट में लेण्ड और रेव्हेन्यू सुपरिटेण्डेण्ट रहे। इस समय आप आबू, देलवाड़ा जैन टैम्पल और बामनवाड़जी जैन टैम्पल की मैनेजिंग कमेटी के प्रेसिडेण्ट हैं। आपके छोटे

भाई सिंघवी हिम्मतमलजी का जन्म १९४४ में हुआ। सन् १९१३ में आपने एल० एल० बी० की डिग्री प्राप्त की। शुरू २ में आप मारवाड़ के इन्सपेक्टर ऑफ़ स्कूल्स रहे और इस समय आप जोधपुर महकमा खास में ऑफिस सुपरिटेण्डेण्ट के पद पर काम करते हैं। आपके पुत्र राजमलजी, पुखराजजी और खुशालचन्दजी हैं।

यह सिंघवी परिवार सिरोही स्टेट में अग्रगण्य और शिक्षित माना जाता है।

सिंघवी कुशलराजजी, मेड़ता

महाराजा तख्तसिंहजी के राज्यकाल में इस खानदान को नागौर के ताऊसर नामक गाँव में २०० बीघा जमीन मिली जो संवत् १९०४ तक इस कुटुम्ब के अधिकार में रही। सिंघवी छज्जूमलजी और उनके पुत्र गाढ़मलजी तथा पौत्र फौजमलजी नागोर में निवास करते रहे। सिंघवी फौजमलजी के चंदनमलजी समीरमलजी तथा घेवरचन्दजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें सिंघवी चन्दनमलजी संवत् १९१९ में नागोर के हाकिम थे, आप नागौर से मेड़ता आये। आपके फतेराजजी तथा जसराजजी नामक २ पुत्र हुए, इनमें जसराजजी, सिंघवी समीरमलजी के नाम पर दत्तक गये। फतेराजजी का स्वर्गवास संवत् १९६५ में तथा जसराजजी का संवत् १९६० में हुआ। सिंघवी फतेराजजी के धनराजजी तथा कुशलराजजी नामक २ पुत्र हुए। धनराजजी गूलर ठिकाने में काम करते थे, तथा जबलपुर में रीयाँवाले सेठों की दुकान पर मुनीमात करते थे, इनका शरीरावसान संवत् १९८५ में हुआ, इनके पुत्र गणेशराजजी आरायज नवीस हैं।

सिंघवी कुशलराजजी का जन्म संवत् १९२८ की आसोज सुदी में हुआ, आप जोधपुर राज्य और ठिकानों की सर्विस के बाद संवत् १९६५ से मेड़ते में वकालात करते हैं, तथा यहाँ के मोअजिज सज्जन माने जाते हैं। आपके पुत्र नथराजजी तथा मदनराजजी हैं। नथराजजी की वय १९ साल की है, और आप एफ० ए० में पढ़ते हैं।

सेठ छोगमल वरदीचन्द संघी, गुड़ीवाड़ा (मद्रास)

इस परिवार का मूल निवास आहोर है। वहाँ से व्यापार के निमित्त संवत् १९४४ के पहिले संघी ऊमाजी के बड़े पुत्र जसराजजी, मछली पट्टम आये, पीछे से जसराजजी के छोटे भ्राता छोगमलजी तथा वरदीचन्दजी भी वहाँ आ गये। आप लोग १९७० तक मछली पट्टम में कपड़े का धंधा करते रहे, पश्चात् वहाँ



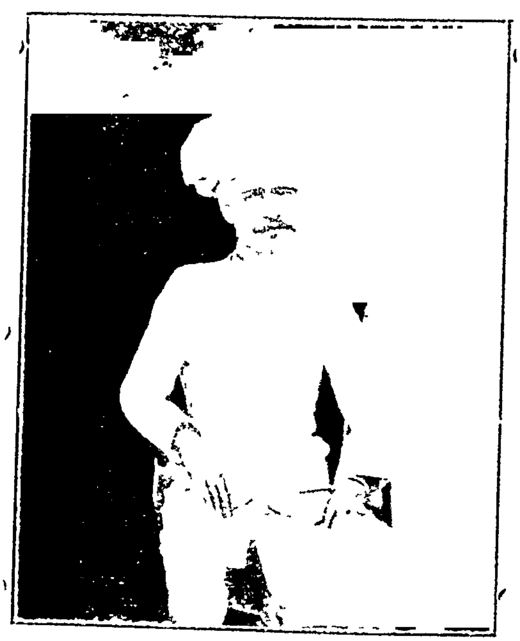
सिंघी दीपराजजी, सोजत.



सिंघी ताराचंदजी कोठारी, आहोर.



सेठ श्रीचंदजी सिंघी (चुन्नीलाल श्रीचंद) लोनार.



सेठ शिवराजजी सिंघी, कोलारगोल्ड फ़ील्ड.

से दुकान गुड़ीवाड़ा (मद्रास) ले आये। गुड़ीवाड़ा आने के बाद इस दुकान पर तांतेड़ ताराचन्दजी के पुत्र मंछालालजी का भाग सम्मिलित हुआ, आप सिरोही के पाड़ीव नामक ग्राम के निवासी हैं। गुड़ीवाड़ा आने के बाद इस दुकान ने अच्छी तरक्की व इज्जत पाई। सेठ मंछालालजी तांतेड़ ने गुड़ीवाड़ा में जैन मंदिर के बनवाने में और अमीजरा पार्श्वनाथजी को प्रतिमा के उद्धार और प्रतिष्ठा में आस पास के जैन संघ की सहायता से बहुत परिश्रम उठाया। मंछालालजी विचारवान व्यक्ति हैं।

सेठ छोगमलजी तथा वरदीचंदजी मौजूद हैं। छोगमलजी के पुत्र जेठमलजी, तथा वरदीचन्दजी के बभूतमलजी बस्तीमलजी, जीवराजजी तथा शांतिलालजी हैं। आप लोगों के यहाँ कपड़े तथा व्याज का काम होता है। इस दुकान के भागीदार सेठ प्रागचंद कपूरजी तथा भूरमल केसरजी हैं।

सेठ मानकचन्द गुलजारीमल सिंघवी देहली

यह खानदान जैन स्थानकवासी आम्नाय का माननेवाला है, और लगभग १०० सालों से देहली में निवास कर रहा है। इस खानदान में लाला बख्तावरमलजी सिंघवी हुए, आपके लाला शादीरामजी, लाला मानिकचन्दजी, लाला मानिकचन्दजी, लाला गुलाबसिंहजी, लाला मुन्नीलालजी और लाला छुट्टनलालजी ५ पुत्र हुए। इनमें इस खानदान में अच्छे प्रतिष्ठित पुरुष हुए। आपका नामक जन्म संवत् १९०२ में तथा स्वर्गवास संवत् १९७३ में हुआ। आपके पुत्र लाला गुलजारीमलजी का जन्म संवत् १९४१ में तथा स्वर्गवास संवत् १९८३ में हुआ। लाला गुलजारीमलजी भी बड़े योग्य पुरुष थे। आपके मनोहरलालजी तथा मदनलालजी नामक २ पुत्र हुए, इनमें मनोहरलालजी का जन्म संवत् १९७२ में हुआ। आप दोनों भ्राता सज्जन व्यक्ति हैं, तथा व्यापार का संचालन करते हैं।

सेठ चुन्नीलाल श्रीचन्द सिंघवी, लोनार (बरार)

इस परिवार का मूल निवास बोरावड़ (मारवाड़) है। वहाँ से लगभग ६० साल पहिले सेठ कालूरामजी सिरोया सिंघवी व्यापार के लिए लोनार आये और यहाँ आकर इन्होंने व्यापार आरम्भ किया, संवत् १९३५ में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके रतनचन्दजी तथा चुन्नीलालजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ चुन्नीलालजी सिंघवी का जन्म सं० १९०५ में हुआ था, आपके हाथों से दुकान को तरक्की मिली। संवत् १९४६ में इनका शरीरावसान हुआ।

सेठ चुन्नीलालजी सिंघवी के बाद उनके पुत्र श्रीचन्दजी सिंघवी ने इस दुकान की सम्पत्ति को विशेष बढ़ाया। आपका जन्म संवत् १९२५ में हुआ। आपके यहाँ रुई के व्यापार का काम और लेनदेन का व्यापार होता है, तथा इस समय आप लोनार के प्रमुख सम्पत्तिशाली समझे जाते हैं। आपके पुत्र सुगनचन्द व मदनलाल हैं।

सिंघवी पातावत

सिंघवी ताराचन्दजी कोठारी, आहोर (मारवाड़)

पातावत सिंघवी खानदान का निवास भी बनवाणा बोहरा जाति से बतलाया जाता है। कहा जाता है कि डीसा से १२ कोस ढीलड़ी गाँव में टेलडिया बोहरा आसधवलजी रहते थे। इनको जैनाचार्य्य श्रीचन्द्र प्रभू सूरिजी ने जैन धर्म अंगीकार कराया। आसधवलजी की पीढ़ी में कुँवरपालजी ने संघ निकाला, अतएव इनका कुटुम्ब सिंघवी कहलाया। इनकी कई पीढ़ियों बाद पाताजी हुए, जिनकी संतानें पातावत सिंघवी कहलाईं। ये भी नागपूजक सिंघवी हैं

पाताजी की कई पीढ़ियों में सिंघवी दीपराजजी हुए थे और इनके पुत्र कल्याणजी भी आहोर ठिकाने में काम करते रहे, ठिकाने का काम करने से ये कोठारी कहलाये। कल्याणजी के डूँगरमलजी तथा लखमीचन्दजी नामक २ पुत्र हुए। लखमीचन्दजी संवत् १८७० में ठाकुर अनाड़सिंहजी के साथ कोटा की ओर गये। इस समय लखमीचन्दजी का कुटुम्ब सारथल (कोटा के पास) रहता है। लखमीचन्दजी के बड़े भाई डूँगरमलजी, ठाकुर अनाड़सिंहजी के बड़े पुत्र शक्तिसिंहजी के यहाँ कार्य्य करने लगे। डूँगरमलजी के पुत्र हरखचन्दजी १९५० में गुजरे इनके पुत्र अखेचन्दजी, रतनचन्दजी तथा ताराचन्दजी हुए। इनमें सिंघवी ताराचन्दजी विद्यमान हैं। सिंघवी ताराचान्दजी का जन्म संवत् १९३५ में हुआ। आपने बहुत समय तक आहोर ठिकाने का काम किया। आप समझदार तथा प्रतिष्ठित सज्जन हैं। कोठारी अखेचन्दजी ने ठाकुर रावतसिंहजी की नाबालगी के समय ठिकाने का कार्य्य सम्भाला था, अभी इनके नाम पर ताराचंदजी के पुत्र नेमचन्दजी दत्तक हैं।

भण्डारी

मारवाड़ के इतिहास के पृष्ठ भण्डारियों के गौरवान्वित कार्यों से प्रकाशमान हो रहे हैं। भण्डारियों की कार्यावली का विवरण राजस्थान के इतिहास में एक अभिमान की वस्तु है। मारवाड़ के इतिहास में भण्डारियों का एक विशेष युग रहा है और उन्होंने अपने समय में न केवल मारवाड़ की राजनीति ही को सञ्चालित किया वरन् उन्होंने तत्कालीन मुगलसाम्राज्य की नीति पर भी अपना विशेष प्रभाव डाला है। दुःख है कि इस गौरवशाली वंश का क्रमबद्ध इतिहास उपलब्ध नहीं है। मारवाड़ की विभिन्न ख्यातों, अंग्रेजी, संस्कृत और फारसी के प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थों में भण्डारियों के इतिहास की सामग्री बिखरी हुई है, उसी के आधार से उनके इतिहास पर कुछ प्रकाश डाला जा रहा है।

भण्डारी वंश की उत्पत्ति—इस वंश की उत्पत्ति नाडौल के चौहान राजवंश से हुई है। विक्रम सम्वत् की ग्यारहवीं सदी में नाडौल में राव लाखणसी नामक एक प्रतापशाली राजा हुआ। यह शाकंमदी (साम्भर) के चौहानवंशी राजा वावपतिराज का पुत्र था। इसका शुद्ध नाम लक्ष्मण था। अचलेश्वर के मन्दिर में लगे हुए सम्वत् १३७७ के लेख से मालूम होता है कि लाखणसी ने अपने बाहुबल से नाडोल के इलाके पर नवीन राज स्थापित किया। इसके समय के विक्रम सम्वत् १०२४ और १०३९ के दो शिलालेख कर्नल टॉड साहब को मिले थे। कर्नल टॉड लिखते हैं:—

"चौहानों की एक वड़ी शाखा नाडोल में आई, जिसका पहिला राजा राव लाखण था। उसने सम्वत् १०३९ में अणहिलवाड़े के राव से यह परगना छीन लिया। गजनी के बादशाह सुबुक्तगीन व उसके पुत्र सूलतान महम्मद ने राव लाखण पर चढ़ाई करके नाडोल को लूटा और वहां के मन्दिर तोड़ डाले। लेकिन चौहानों ने फिर वहाँ पर अपना दखल जमा लिया। यहाँ से कई शाखाएँ निकली, जिन सबका अन्त देहली के बादशाह अल्लाउद्दीनखिलजी के वक्त में हुआ। राव लाखण अनहिलवाड़े तक का दाण (सायर का महसूल) लेता था और मेवाड़ का राजा भी उसे खिराज देता था" * राव

* राव राखण द्वारा मेवाड़ के राजा से खिराज लिये जाने की पुष्टि निम्न लिखित पुराने दोहे से भी होती है।

समय दस से उँचालिश वार एकं ता पाटणा पोला पेप
दाण चौहाण उगालीमेवाड़ धणि दण्ड भरी
विसवार राव लाखण थपी, जो आरम्भा सो करि

बहादुर महामहोपाध्याय पं० गौरीशंकरजी ओझा अपने सिरोही के इतिहास के पृष्ठ १४९ में लिखते हैं:—
"राव लाखणसी बड़ा बहादुर हुआ वर्तमान जोधपुर राज्य का कितना ही हिस्सा इसने अपने आधीन कर लिया था।"

भण्डारियों की ख्यात में राव लाखणजी के बारहवें पुत्र राव दुदाजी से भण्डारियों की उत्पत्ति बतलाई है। उसमें लिखा है कि:—"नाडोल के राव लाखणसी के चौबीस रानियाँ थीं, पर उनमें से किसी के सन्तान नहीं हुई। प्रसंगवश जैनाचार्य्य श्री यशोभद्रसूरि नाडौल पहुँचे। राव लाखणसी ने आपका बड़ा सत्कार किया। राव लाखणजी ने निःसन्तान होने के कारण आपके आगे दुःख प्रकट किया और आचार्य्यवर्य्य को इस सम्बन्ध में शुभाशीष देने के लिये निवेदन किया। इस पर आचार्य्य श्री ने उत्तर दिया कि तुम्हारी प्रत्येक रानी के एक एक पुत्र होगा। तुम अपने चौबीस पुत्रों में से एक पुत्र को हमारे हवाले करना। राव लाखणसी ने यह बात स्वीकार करली। सौभाग्य से रावजी की प्रत्येक रानी को एक एक पुत्र हुआ। इनमें बारहवें पुत्र का नाम दूदाराव था। इन्हें आचार्य्य श्री ने जैनी बनाया। राज्य के खजाने का काम दूदारावजी के सिपुर्द था, इससे ये भण्डारी कहलाये। यह घटना सम्वत १०३९ की है।

उपरोक्त वर्णन में अतिशयोक्ति हो सकती है, पर यह निश्चय है कि भण्डारियों की उत्पत्ति नाडौल के चौहानों से हुई। इसके लिए कई प्रबल प्रमाण हैं। पहले तो यह कि भण्डारियों और चौहानों की कुलदेवी आसापुरीजी है। आसापुरी माता का मन्दिर नाडौल में है, जहाँ भण्डारियों के बच्चों का झडुला उतारा जाता है।

अब हम भण्डारियों के उपलब्ध इतिहास के सम्बन्ध में जो कुछ ऐतिहासिक जानकारी प्राप्त हुई है, उसी के आधार पर नीचे कुछ प्रकाश डालते हैं।

समराजी—भण्डारियों के वंशवृक्ष में सबसे पहला नाम राव समराजी भण्डारी का है। आपने और आपके पुत्र राव नरोजी ने जोधपुर के संस्थापक राव जोधाजी को उनकी अत्यन्त संकटावस्था में किस प्रकार सहायता की और किस प्रकार राव समराजी राव जोधाजी की रक्षा के लिए मेवाड़ की सेना से लड़कर काम आये और उनके पुत्र नरोजी ने अन्त तक अनेक विपत्तियों को सहकर किस प्रकार संकटग्रस्त राव जोधाजी का साथ दिया इसका वर्णन हम "ओसवालों के राजनैतिक महत्व" नामक अध्याय में दे चुके हैं। इससे अधिक आपके सम्बन्ध में कोई ऐतिहासिक तथ्य खोजने पर भी नहीं मिला है। इसलिए यहां हम भण्डारियों की जुदी-जुदी खांपों (शाखाओं) का परिचय देते हैं।

दीपावत भण्डारी

नराजी भण्डारी के राजसीजी, जसाजी, सिहोजी, खरतोजी, तिलोजी, निम्बोजी और नाथोजी नामक सात पुत्र थे। इनमें भण्डारी नराजी के दूसरे पुत्र जसाजी के जयमलजी नामक पुत्र हुए। भण्डारी जयमलजी के पुत्र राजसिंहजी और पौत्र दीपाजी हुए। इन्हीं दीपाजी की सन्तान दीपावत भण्डारी के नाम से मशहूर हुई। भण्डारी दीपाजी के भोजराजजी, खेतसीजी, रामचन्दजी, रायचन्दजी तथा रासाजी नामक पाँच पुत्र हुए।

दीपाजी के सम्बन्ध में बहुत खोज करने पर भी हमें विशेष वृतान्त ज्ञात नहीं हुआ। उनका इतिहास प्रायः अन्धकाराछन्न है। राज्य की ओर से अरठिया नामक गाँव में भण्डारी दीपाजी को जोधपुर दरबार की ओर से पाँच खेत जागीर में मिले थे, वे ही खेत पीछे जाकर उनके पौत्र भोजराजजी को सम्वत् १७७० के प्रथम अषाढ़ सुदी १४ को महाराजा अजितसिंहजी ने बक्षे। इसके लिए जो परवाना दिया गया था उसमें लिखा था—× × × "तथा गांव अरठिया बड़ा में भण्डारी दीपाजी रा खेत छे सो भण्डारी मेघराज (भोजराजोत) ने हुजुर सु इनायत हुआ छे सो प सदानन्द पाया जावसी।"* उक्त लेख से यह अवश्य पाया जाता है कि भण्डारी दीपाजी ने जोधपुर राज्य की कुछ न कुछ सेवाएँ अवश्य की होंगी और उनके लिए उन्हें कुछ जागीरी मिली थी। अब हम दीपाजी के बेटे पोतों का परिचय देते हैं।

भण्डारी भोजराजजी—आप दीपाजी के सबसे बड़े पुत्र थे। आपके पुत्र मेघराजजी हुए। दीपाजी के खानदान में पाटवी होने से महाराजा अजितसिंहजी ने दीपाजी की जागीरी के खेत इन्हें इनायत किये। भण्डारी मेघराजजी भण्डारी रघुनाथसिंहजी की दीवानगी के समय सम्वत् १७७६ में जैतारण के हाकिम रहे। भण्डारी मेघराजजी के आईदानजी, गोवर्द्धनदासजी, कन्हीरामजी तथा देवीचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें गोवर्द्धनदासजी विशेष प्रतापी हुए। जोधपुर की ख्यात में आपके वीरोचित कार्य्यों के प्रशंसनीय उल्लेख हैं। आप भण्डारी रघुनाथसिंहजी के समकालीन थे, यह बात भण्डारी रघुनाथजी के द्वारा आपके नामपर भेजे हुए एक पत्र से प्रकट होती है। भण्डारी गोवर्द्धनदासजी के दुर्गादासजी, मोहकमदासजी तथा मुकुन्ददासजी नामक तीन पुत्र हुए। इन बन्धुओं में दुर्गादासजी के पुत्र भगवानदासजी तथा गुलाबचन्दजी थे। भण्डारी गुलाबचन्दजी का परिवार इस समय उज्जैन में रहता है। भण्डारी भगवानदासजी के मानमलजी, जीतमलजी तथा बख्तावरमलजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें भण्डारी मानमलजी सम्वत् १८५० में जैतारण के हाकिम रहे। आपने सम्वत् १८६५ में बांकड़िया

* यह मूल परवाना जैतारण में भण्डारी अभयराजजी के पास है। इस परिवार में इस वक्त भण्डारी बालचन्दजी, सुकनचन्दजी आदि हैं।

वड़गांव पर फौजी चढ़ाई की और वहां अपना अधिकार किया। इसके लिए महाराजा मानसिंहजी ने आपको जो पत्र दिया था उसमें लिखा था—"× × × श्री जीरा माया प्रताप सु बड़ागांव कायम हुआ सो खुशी हुई निवाजस होसी। अब थाणो बड़ागांव में मजबूत राख कूच आगे करजो। उठी रो बन्दोबस्त तसली आछी रीत करजो। समाचार इन्द्रराज सूरजमलरा कागज सु जाणजो सम्वत १८६५ रा जेठ सुदी १४।"

जिस समय मानमलजी जैतारण के हाकिम थे उस समय सारे मारवाड़ में अशान्ति के बादल घिर रहे थे। चारों ओर की आपत्तियां उसपर आ रही थीं। उस समय में हाकिमी का काम भी आज जैसा सरल नहीं था। उन्हें राज्य-रक्षा के लिए फौजी नाकेबन्दियां करनी पड़ती थीं। सम्वत् १८६४ की भादवा सुदी ३ को जैपुरवाली फौज की नाकाबन्दी करने के लिए सिंघवी इन्द्रराजजी ने इन्हें लिखा था:—"× × × घांटारा जाबता कराय दीजो सो फौज चढ़ सके नहीं। फिर देवगढ़ तथा सोलंकिया सु ने मेरासुप को बन्दोबस्त कर घाटे नहीं चढ़े सो करजो।" इसी तरह भादवा सुदी १३ को आपके नाम जोधपुर से जो रुक्का आया उसमें लिखा था—"जयपुरवाला घाटे हुय उदयपुर जाय सके नहीं। इसो घाटारो बन्दोबस्त करणो।"

भण्डारी मानमलजी का सम्वत् १८८४ की पौष सुदी १२ को जैतारण में देहान्त हुआ आपकी द्वितीय धर्मपत्नी आपके साथ सती हुई। आपके पुत्र प्रतापमलजी मेड़ता और दौलतपुरा के हाकिम रहे। आपने जयपुरी फौज पर गिगौली की घाटी पर हमला किया था। सम्वत् १८७६ की पौष सुदी ३ को हरिद्वार में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके साथ भी आपकी धर्मपत्नी सती हुई जिनकी छत्री बनी हुई है। इनके पश्चात् भण्डारी मानमलजी के कोई सन्तान नहीं रही। अतएव उन्होंने अपने तीसरे भाई बख्तावर-मलजी के मझले पुत्र कस्तूरमलजी को दत्तक लिया। कस्तूरमलजी के पुत्र भण्डारी रत्नमलजी ने दौलतपुरे में हुकूमत की। आपके पुत्र भण्डारी देवराजजी इस समय उदयपुर में विद्यमान हैं और आप देवस्थान महकमें में काम करते हैं। आपके पुत्र उदयराजजी और तेजराजजी हैं, जिनमें उदयराजजी उदयपुर राज्य में पुलिस सब इन्सपेक्टर हैं।

भण्डारी मानमलजी के छोटे भाई जीतमलजी थे। इनके पश्चात् क्रमशः सुलतानमलजी, अमृतमलजी, धनरूपमलजी और रंगराजजी हुए। इस समय इनके परिवार में कोई नहीं है।

भण्डारी मानमलजी के सबसे छोटे भाई बख्तावरमलजी के बदनमलजी, कस्तूरमलजी, चंदनमलजी नामक तीन पुत्र हुए। भण्डारी बदनमलजी कोलिया, जैतारण तथा देसूरी के हाकिम रहे। आपको दरबार से सिरोपाव मिला था। भण्डारी चन्दनमलजी सम्वत् १८९०–९१ में नागौर तथा मेड़ते के हाकिम रहे। सम्वत् १९०२ की श्रावण सुदी १४ को इनका शरीरान्त हुआ। इनके साथ इनकी धर्मपत्नी सती हुई

जिनकी तिबारी जैतारण में बनी है। इनके पुत्र राजमलजी हुए। आप पर्वतसर और मारौठ के हाकिम रहे। सम्वत् १९२८ में इनका स्वर्गवास हुआ। आपके दानमलजी, जीवनमलजी तथा सांवतरामजी नामक तीन पुत्र हुए। इस समय दानमलजी के पुत्र पृथ्वीराजजी और सुकनराजजी मौजूद हैं। भण्डारी सांवतरामजी के अभयराजजी और बच्छराजजी नामक दो पुत्र विद्यमान हैं, इनमें अभयराजजी जीवनमलजी के नामपर दत्तक गये हैं। बच्छराजजी जैतारण में वकालत और अभयराजजी जीनिंग फैक्टरी का काम करते हैं।

रासाजी का परिवार

दीपाजी के सबसे छोटे पुत्र का नाम रासाजी था। आप बड़े वीर थे। आपने छोटी मोटी कई लड़ाइयों में हिस्सा लिया था। सम्वत १७३९ के भादवा बदी ९ को गुजरात का मुसलमान शासक सैय्यद मुहम्मद राणपुर में चढ़ कर आया। इस समय जोधपुर नरेश महाराजा अजितसिंहजी सिरोही राज्य के कालेद्री नामक गाँव में थे। महाराजा की ओर से उनके मुकाबले के लिये जो सेना गई थी उस के प्रधान सेनापति भण्डारी दीपाजी के चौथे पुत्र भण्डारी रायचंद्रजी थे। रायचंद्रजी के बड़े भाई रासाजी भी फौज के एक अफसर थे। आप दोनों भाई बड़ी वीरता से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए।

भण्डारी खींवसीजी

जिन महान् पुरुषों ने मारवाड़ के इतिहास को उज्ज्वल किया है उनमें भण्डारी खींवसीजी का आसन बहुत ऊँचा है। जिस समय इस महान् राजनीतिज्ञ का उदय हो रहा था, वह समय भारत के इतिहास में भयंकर अशान्ति का था। सम्राट औरंगजेब मर चुका था और उसके वंशजों के निर्बल हाथ भारत की शासन नीति को सञ्चालित करने में असमर्थ सिद्ध हो रहे थे। "जिसकी लाठी उसकी भैंस" की कहावत चरितार्थ हो रही थी और चारों ओर नयी नयी शक्तियों का उदय हो रहा था। जबर्दस्त आदमी अपने मजबूत हाथों से बादशाहों को बनाते और बिगाड़ते थे। ऐसे नाजुक समय में तत्कालीन भारतीय साम्राज्य नीति को डगमगाने वाले महाराजा अजितसिंहजी की प्रधानगी के पद को भण्डारी खींवसीजी शोभायमान कर रहे थे।

भण्डारी खींवसीजी का उदय क्रमशः हुआ। पहले सम्वत् १७६५ में वे हाकिम के साधारण पद पर नियुक्त हुए। इसके बाद सम्वत १७६६ में आप दीवान के उच्च पद पर प्रतिष्ठित किये गये तथा

इसी समय आप राय की पदवी तथा हाथी पालकी कड़े मोती के सम्मान से विभूषित किये गये। इसके बाद आप प्रधान के सर्व्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित किये गये। कहने का अर्थ यह है कि आप अपनी प्रतिभा अपनी योग्यता—और कार्य्य कुशलता से मारवाड़ राज्य के सर्वोच्च पद पर अधिष्ठित किये गये। इन सर्व्वोच्च पदों पर रहते हुए आपने मारवाड़ राज्य की जो महान् सेवाएं की हैं, उनका थोड़ा सा उल्लेख यहां किया जाता है।

सम्वत् १७६७ में बादशाह बहादुरशाह दक्षिण से अजमेर आया। इस समय एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य्य के लिये महाराजा ने भण्डारी खींवसीजी को भेजा। वे बादशाह से शाहजाद अजीम के मार्फत मिले बादशाह भण्डारीजी से बड़ा प्रसन्न हुआ और वह उन्हें अपने साथ लाहौर ले गया। कहने की आवश्यकता नहीं उन्होंने महाराजा के मिशन को सफल किया।

सम्वत १७७१ में भण्डारी खींवसीजी के प्रयत्न से महाराजा को फिर से गुजरात का सूबा मिला। इसके लिये तुलराम नामक एक बादशाही अधिकारी के साथ बादशाही फर्मान भी महाराजा के पास भेज दिया गया। इसके बाद महाराजा ने भण्डारी विजयराज को अहमदाबाद भेजे, जहाँ जाकर उन्होंने अपना अधिकार कर लिया। पश्चात् अषाढ मास में कुँवर अभयसिंहजी और भण्डारी खींवसीजी बादशाही दरबार से लौटकर जोधपुर आये और उन्होंने महाराजा से मुजरा किया और गुजरात की सुभायत प्राप्त करने के सारे समाचार कहे। इस पर महाराजा अजितसिंहजी बड़े प्रसन्न हुए। सम्वत् १७७२ में भण्डारी खींवसीजी प्रधानगी के सर्वोच्च पद पर फिर से प्रतिष्ठित किये गये।

इसके एकाध वर्ष बाद गुजरात की सुभायत महाराजा से वापस ले ली गई। इस पर महाराजा ने भण्डारी खीवसीजी को दिल्ली में लिखा कि हम तो द्वारका की यात्रा के लिये जा रहे हैं, तुम जैसे बने वैसे गुजरात का सूबा वापस प्राप्त करना। खींवसीजी ने इसके लिये जोरों से प्रयत्न करना शुरू किया और आपको सफलता होगई। गजरात का सूबा फिर से महाराजा के नाम पर लिख दिया गया। यह कार्य्य कर खींवसीजी जोधपुर आये, जहाँ महाराज ने आपका बड़ा आदरातिथ्य किया।

सम्वत् १७७५ की फाल्गुन सुदी १० को सुप्रसिद्ध नवाब अब्दुल्लाखां और असनअलीखां * ने अजितसिंहजी से बादशाह फर्रुखशियर को तख्त से हटाने के काम में सहयोग देने के लिये कहा। इस सलाह मशविरे में कोटा के तत्कालीन राजा दुर्जनसिंहजी तथा रूपनगर के राजा राजसिंहजी भी शामिल

* ये दोनों भाई सैयद बन्धुओं के नाम से मशहूर थे। समय पाकर इन्होंने बड़ी ताकत प्राप्त करली थी। इतिहास में ये बादशाह को बनाने वाले तथा बिगाड़ने वाले कहे गये हैं। बादशाह फर्रुखशियर को इन्होंने ही तख्त पर बैठाया और बाद में इन्होंने ही उसे तख्त से उतार कर कत्ल करवा दिया।

किये गये। फिर ये सब लोग शामिल होकर बादशाह के हुजूर में लाल किले गये। बाशाह फर्रुखशियर असमय में इन्हें आते हुए देखकर जनानखाने में चला गया। सुप्रख्यात् इतिहास वेत्ता विलियम इर्व्हीन अपने Later Moghuls नामक ग्रन्थ के प्रथम भाग के पृष्ठ ३८२ में इस वृतान्त को इस प्रकार लिखता है:—"फर्रुखशियर अपने जनानखाने में चला गया वहाँ बेगमों और रखेलियों ने उसे घेर लिया। तुर्की युवतियों को महलों की रक्षा का भार दिया गया। सारी रात महलों में करुणा क्रन्दन होता रहा। कुतुलउलमुल्क ने जाफरखाँ को महलों से निकाल दिया और दीवानखाने के पहरे पर अपने सैनिक रखे। इसी समय फर्रुखशियर ने अजितसिंहजी को अपनी ओर मिलाने का विफल प्रयत्न किया। एक खोजे ने पहरेदारों की आंखों से बचकर फर्रुखशियर का पत्र अजितसिंहजी के जेब में डाल दिया उसमें लिखा था—"राजमहल के पूर्वीय भाग पर सख्त पहरा नहीं है। अगर तुम अपने कुछ आदमी वहाँ भेज दो तो मैं निकल जाऊँ। इस पर अजितसिंहजी ने जवाब दिया कि 'अब वक्त चला गया है। मैं क्या कर सकता हूँ। कुछ इतिहासकारों का यह भी मत है कि अजितसिंहजी ने यह पत्र फर्रुख-शियर के पास भेज दिया मारवाड़ की ख्यात में इस घटना को इस तरह लिखा है—"फर्रुखशियर ने जनान-खाने से महाराणा अजितसिंहजी के पास एक पत्र भेजा जिसमें लिखा था—"तुम लोगों के दिल में मेरे लिये झूँठा वहम पैदा कर दिया गया है। मेरी बादशाहत में जो कुछ आप करोगे वही होगा। मैं आप लोगों से कोई फर्क नहीं समझूंगा। मेरे आपके बीच में कुरान है। यह पत्र पढ़ कर महाराजा अजितसिंह जी खींवसीजी को लेकर एकान्त में चले गये और उन्होंने वह पत्र भण्डारी खींवसी को दिया। पत्र पढ़ कर खींवसीजी का हृदय करुणा से पसीज गया। उन्होंने बादशाह की जान बचाने के लिये महाराजा से अनुरोध किया और कहा कि इस मुसीबत में अगर हमने बादशाह की सहायता की तो वह बड़ा कृतज्ञ होगा और साम्राज्य नीति पर अपना जबर्दस्त वर्चस्व हो जायगा इस पर महाराजा अजितसिंहजी ने कहा कि फर्रुखशियर पहले भी मुझ से तीन दफा धोखा कर चुका है। उस वक्त सैय्यद बन्धुओं ने मुझे मदद दी। इसलिये सैयदों ही का साथ देने का मेरा विचार है।' यह सलाह मशविरा हो ही रहा था कि सैयदों के आदमी जनानखाने में गये और उन्होंने फर्रुखशियर को पकड़ा। सारे रनवास में भयङ्कर चीत्कार मच गई! बेगमों ने बादशाह को पकड़ लिया। पर ये वेचारी अबलाएँ कर ही क्या सकती थीं। सैयदों के आदमी बादशाह को पकड़ लाये और उसे कैद कर लिया। इसके थोड़े दिनों बाद अत्यन्त क्रूरता के साथ यह अभागा बादशाह मार डाला गया!!

खींवसीजी द्वारा नये बादशाह का चुनाव—हमने ऊपर दिखलाया है कि खींवसीजी भण्डारी का दिल्ली की साम्राज्य नीति पर भी बड़ा प्रभाव था। वे एक महान् राजनीतिज्ञ और मुत्सद्दी समझे जाते थे।

सम्वत् १७७५ के आसोज मास में भण्डारी खींवसीजी और सैयदों के वज़ीर राजा रत्नचन्द शाहजादों में से नये बादशाह को चुनने के लिए दिल्ली भेजे गये। २२ वर्ष के सुन्दर नवयुवक शाहजादे महम्मदशाह ने इनकी दृष्टि को विशेषरूप से अपनी ओर आकर्षित किया। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन्होंने महम्मदशाह को पसंद कर लिया पर महम्मदशाह की माता मंजूर नहीं हुई। उसने समझा कि बादशाह बनने से जो गति पहिले दो तीन बादशाहों की हुई वही महम्मदशाह की भी होगी। इस पर खींवसीजी ने महम्मदशाह की माता को बहुत समझाया और उसे हर तरह की तसल्ली दी। इतना ही नहीं उन्होंने इष्टदेव की सौगन्ध खाकर महम्मदशाह के जीवन रक्षा की सारी जिम्मेदारी अपने सिर पर ली। इस पर महम्मदशाह की माता राजी हो गई। कहने की आवश्यकता नहीं कि खींवसीजी महम्मदशाह को ले आये और जब वह दिल्ली के तख्त पर बैठा तब उसका एक हाथ महाराजा अजितसिंहजी के हाथ में और दूसरा हाथ नवाब अब्दुल्लाखाँ के हाथ में था। सुप्रसिद्ध इतिहासवेत्ता विलियम इर्विन ने भी भण्डारियों द्वारा बादशाह के चुने जाने की बात का उल्लेख किया है। इस समय महाराजा अजितसिंहजी का बादशाह पर जो अपूर्व प्रभाव पड़ा उसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

इसके बाद खींवसीजी ने प्रयत्न कर अपने स्वामी जोधपुर नरेश के लिए बादशाह से राजराजेश्वर की पदवी प्राप्त की। इसी समय महाराजा ने भण्डारी खींवसीजी को दिल्ली लिखा कि "हिन्दुस्थान की हिन्दू प्रजा पर जिजीया कर लगता है। किसी तरह यत्न कर उसे माफ करवाना। भण्डारी खींवसीजी ने महाराजा की यह इच्छा बादशाह पर प्रकट की। उन्होंने बादशाह को जिजिया कर के भयङ्कर खतरे बतलाये। बादशाह को भण्डारी खींवसीजी की युक्ति जंच गई और उन्होंने जिजिया कर माफ कर दिया। इस प्रकार भण्डारी खींवसीजी ने अपनी कुशल नीति से सारे भारतवर्ष की हिन्दू प्रजा का असीम कल्याण किया।

इन दिनों भण्डारी खींवसी को बादशाह के पास कुछ अधिक दिनों तक रहने का काम पड़ा। बादशाह इनकी राजनीतिज्ञता और कार्य्यकुशलता से बड़ा प्रभावित हुआ। बादशाह महम्मदशाह की ओर से जोधपुर नरेश की तरफ का सिरोपाव भण्डारी खींवसीजी को हुआ। यह बात जयपुर नरेश जयसिंहजी को अच्छी न लगी। इसके बाद जब भण्डारी खींवसीजी ने सीख ली तब फिर उन्हें तथा उनके साथ वाले १९ उमरावों को बादशाह की ओर से कीमती पोशाकें मिलीं। इसके बाद खींवसीजी ने जोधपुर आकर महाराजा अजितसिंहजी से मुजरा किया। महाराजा ने आपका बड़ा सत्कार किया और कहा कि मुत्सद्दी हो तो ऐसा हो जिसने मेरी ऐवजी का काम बादशाह से करवा लिया।

Later Moghuls Vol. 1 Page 388.

संवत् १७७९ में महाराजा ने भण्डारी खींवसीजी को इसलिये दिल्ली भेजा कि वह बादशाह को समझा बुझा कर नवाब हसनअलीखाँ को कैद से छुड़वा देवे। यह हसनअलीखाँ सैयद बन्धुओं में से था जिसने फर्रुखशियर को बादशाह बनाया था और बाद में उसे मरवा भी दिया था। महाराजा अजितसिंहजी इसे अपना मित्र मानते थे। भण्डारी खींवसीजी दिल्ली पहुँचे। वहाँ पहले पहल जयपुर नरेश जयसिंहजी से आपकी मुलाकात हुई। जयसिंहजी ने आपसे कहा कि हसनअलीखाँ का छूटना सब दृष्टियों से हानिकारक है। फिर भण्डारी खींवसीजी नाहरखाँ से मिले और उन्होंने उसके द्वारा महाराजा का संदेश बादशाह के पास पहुँचाया। नाहरखाँ ने बादशाह से आ कर उलटी बात कह दी कि जबतक हसनअलीखाँ जिन्दा हैं तबतक महाराजा अजितसिंहजी दिल्ली नहीं आवेंगे। इस पर हसनअलीखाँ मरवा दिया गया इसके बाद भण्डारी खींवसीजी और नाहरखाँ साम्भर आये जहाँ महाराजा का मुकाम था। महाराजा खींवसीजी पर बहुत नाराज हुए और कहा कि हमने तो तुम्हें हसनअलीखाँ को बचाने के लिये भेजा था, तुमने उल्टा उसे मरवा दिया। इस पर खींवसीजी ने कहा कि मैंने तो आप का सन्देश नाहरखाँ द्वारा बादशाह के पास भेजा था पर नाहरखाँ ने बादशाह से उलटी बात कह दी। इसपर महाराजा ने नाहरखाँ को मरवाने का हुक्म दे दिया। यह बात भण्डारी खींवसीजी को अच्छी न लगी। वे बहाना बना कर जोधपुर चले गये और महाराजा के आदमियों ने नाहरखाँ के डेरे पर हमला कर उसे मारडाला।

जब यह खबर बादशाह महम्मदशाह के पास पहुँची तो वह बड़ा क्रोधित हुआ। उसने गुजरात का सूबा महाराजा से छीन कर हैदरअलीखाँ को और अजमेर का सूबा मुजफ्फरअलीखाँ को दे दिया। पर महाराजा अजितसिंहजी का बड़ा दबदबा था, अतएव मुजफ्फरअलीखाँ की हिम्मत अजमेर आने की न हुई। इसलिये बादशाह ने हैदरअलीखाँ को अजमेर पर जाने की आज्ञा दी और तदनुसार वह अजमेर पर चढ़ आया इसके बाद भण्डारी खींवसी और भण्डारी रघुनाथ के प्रयत्नों से आपस में सन्धि हो गई। कुछ समय पश्चात् भण्डारी खींवसीजी विद्रोही सरदारों को मनाने के लिये मेड़ते भेजे गये। वहीं सम्वत् १७८१ के जेठ वदी ६ को भण्डारी खींवसीजी का स्वर्गवास हुआ।

जब भण्डारी खींवसीजी का देहान्त हुआ तब तत्कालीन जोधपुर नरेश महाराजा बख्तसिंहजी * दिल्ली में थे। आप भण्डारी खींवसीजी की मृत्यु का समाचार सुनकर बड़े दुःखित हुए। आप दिल्ली में भण्डारी खींवसीजी के छोटे पुत्र भण्डारी अमरसीजी के डेरे पर मातमपुरसी के लिये पधारे और

---

* सम्वत् १७८० की अषाढ़ सुदी १३ को महाराजा अजितसिंहजी का स्वर्गवास हो गया था। आपके बाद महाराजा बख्तसिंहजी जोधपुर के राजसिंहासन पर बैठे थे।

उन्हें बड़ी तसल्ली दी। इतना ही नहीं खींवसीजी के शोक में एक दिन तक नौबत बन्द रखी गई। बादशाह ने भी बड़ा दुःख प्रकट किया।

भण्डारी अमरसिंह—भण्डारी खींवसीजी के स्वर्गवास होने के बाद महाराजा बख्तसिंहजी ने उनके पुत्र भण्डारी अमरसिंहजी को दीवानगी का सिरोपाव, बैठने का कुरब, पालकी, हाथी, सरपेंच, मोतियों की कण्ठी और जड़ाऊ कड़ा आदि देकर उन्हें सम्मानित किया। इसी समय महाराजा ने दूसरे दीपावत भण्डारियों को भी विविध पदों से विभूषित किया।

सम्वत् १७८६ के कार्तिक मास में महाराजा जोधपुर गढ़ में दाखिल हुए, उस समय भण्डारी अमरसिंह देहली में थे। इन्होंने वहाँ से १५ लाख रुपया निकलवा कर भेजे, जिससे महाराजा ने अहमदाबाद कूच करने की तैयारी की। अहमदाबाद फतह होने के बाद भण्डारी अमरसिंह सम्वत १७८७ से १७८९ तक गुजरात के नडियाद प्रान्त के शासक रहे।

सं० १७९२ में सूरत का सूबा दस हजार फौज लेकर अहमदाबाद पर चढ़ आया। अमरसिंहजी और रत्नसिंहजी ने उसका मुकाबला किया। सूबा सरायतखाँ इस युद्ध में मारा गया और उसकी फौज भाग गई इस लड़ाई में रत्नसिंहजी के चार घाव लगे।

सम्वत् १७९२ में भण्डारी अमरसिंहजी जब दिल्ली गये तब बादशाह ने आपकी बड़ी खातिर की और आपको सिरोपाव प्रदान किया। सम्वत् १७९३ में महाराजा ने आपको रायांराव की सम्मान्नीय उपाधि से विभूषित किया। सम्वत् १८०१ तक आप दीवान के उच्च पद पर अधिष्ठित रहे। सम्वत् १८०२ में अमरसिंहजी का मारोठ में स्वर्गवास हुआ। इस समय महाराज नागोर में बिराजते थे। उन्हें अमरसिंहजी की मृत्यु से बड़ा दुःख हुआ। उनके शोक में एक वक्त के लिये नौबत का बजना बन्द रखा गया इतना ही नहीं आप अमरसिंहजी के भतीजे दौलतरामजी और चचेरे भाई मनरूपजी डेरे पर मातमपुर्सी के लिये भी पधारे।

थानसिंहजी—आप भण्डारी अमरसिंहजी के भाई थे। आपने भी जोधपुर राज्य में विभिन्न पदों पर काम किया। आपने महाराजा अजितसिंहजी के हुक्म से सांभर में नाहरखाँ के ऊपर हमला कर उसे तलवार के घाट उतारा था। आप अपनी हवेली में एक राजपूत सरदार के द्वारा मारे गये। आपके दौलतरामजी और हिम्मतरामजी नामक दो पुत्र थे।

पोमसिंहजी—आप भण्डारी खींवसीजी के बड़े भ्राता थे। सम्वत् १७६५-६६ में आप जालोर के हाकिम बनाये गये। सम्वत् १७६६ में भण्डारी पोमसिंह ने देवगाँव पर फौजी चढ़ाई की और १५०००) रुपये पेशकशी के लेकर वापस लौट आये। जब मराठों ने मारवाड़ पर चढ़ाई की और उन्होंने जालोर के

किले पर घेरा डाला तब पोमसी अपनी सेना लेकर किले पर पहुँचे और उस पर अपना अधिकार कर लिया। सम्वत् १७६९ में आप मेड़ते के हाकिम हुए। सम्वत् १७७२ की जेठ सुदी १२ को भण्डारी पोमसी और भण्डारी अनोपसिंहजी सेना लेकर नागोर पहुँचे। नागोराधिपति इन्द्रसिंहजी से तीन प्रहर तक इनकी भारी लड़ाई हुई। आखिर इन्द्रसिंह हार गये और नागोर पर इन भण्डारी बन्धुओं ने अधिकार कर लिया। जब यह खबर दरबार के पास अहमदाबाद पहुँची तो उन्होंने पोमसीजी को सोने के मूठ की तलवार भेजी और उन्हें नागौर का हाकिम बनाया और उनके नाम की मेड़ता की हुकूमत भण्डारी खेतसीजो के पोते गिरधरदासजी को दी।

भण्डारी मनरूपजी—आप भण्डारी पोमसीजी के ज्येष्ठ पुत्र थे। सम्वत् १७८२ में आप मेड़ते के हाकिम नियुक्त हुए। सम्वत् १७८२ में जब मराठों ने ५०,००० फ़ौज़ से मेड़ते पर हमला किया, उस समय भण्डारी मनरूपजी और भण्डारी विजयराजजी ने मेड़ता, मारोठ और पर्वतसर की फ़ौज़ों को लेकर मेड़ता के मालकोट नामक किले की किलेबन्दी कर मराठों की फ़ौज़ों से मुक़ाबला किया। बड़ा घमासान युद्ध हुआ। आखिर दरबार ने कई लाख रुपये देकर सन्धि करली।

जब भण्डारी अमरसिंहजी दीवान हुए तब भण्डारी मनरूपजी को एक सूबे का शासक बनाया और उन्हें पालकी, सिरोपाव, कड़ा, मोती और सरपेंच भेंट किये। सम्वत् १८०४ के भाद्रपद मास में आप दीवानगी के पद पर प्रतिष्ठित किये गये और इसी समय आपको दरबार से बैठने का कुरब और हाथी सिरोपाव इनायत हुआ। आप इस पद पर सम्वत् १८०६ के मार्गशीर्ष मास तक रहे।

सम्वत् १८०५ की अषाढ़ सुदी १५ को महाराजा अभयसिंहजी का स्वर्गवास हो गया और महाराजा रामसिंहजी जोधपुर के राज्यसिंहासन पर बैठे। इस समय महाराजा रामसिंहजी ने मनरूपजी के बड़े पुत्र सूरतरामजी को दीवानगी का उच्चपद प्रदान किया और आपने मनरूपजी तथा पुरोहित जगुजी को अजमेर भेजा। इसके बाद महाराजाधिराज बख़्तसिंहजी और रामसिंहजी में बड़ा वैमनस्य हो गया। दोनों के बीच लड़ाइयाँ हुईं। यद्यपि इस परिस्थिति में मनरूपजी ने बड़ी कुशलता से कार्य किया, पर बख़्तसिंहजी यह बात भली प्रकार जान गये कि मनरूप भण्डारी हर तरह से रामसिंहजी की सहायता कर रहे हैं। अतएव उन्होंने इन्हें मरवाने का निश्चय किया।

जब भण्डारी मनरूपजी सम्वत् १८०७ की कार्तिक सुद २ को महाराज रामसिंहजी के मुजरे से लौट कर पालकी से उतर रहे थे, उस समय बख़्तसिंहजी के भेजे हुए पातावत ने उन पर तलवार से हमला किया। मनरूपजी बुरी तरह घायल हुए और उनके १२ टाँके लगे। जब यह समाचार महाराजा रामसिंहजी को मिला तो वे बड़े दुःखित हुए और वे तुरन्त मनरूपजी के डेरेपर कुशल समाचार

पूछने के लिये गये और उन्होंने इनके पुण्य के लिये ४०००) धर्मार्थ में बाँटे। पीछे सम्वत् १८०७ की कार्तिक सुद १४ को मनरूपजी दीपावड़ी नामक गांव में स्वर्गवासी हुए।

भण्डारी सूरतरामजी—आप भण्डारी मनरूपजी के ज्येष्ठ पुत्र थे। सम्वत् १७९९ के कार्तिक मास में दरबार ने इन्हें फ़ौज़ देकर अजमेर की ओर भेजा। आपने अजमेर, राजगढ़, भीनाय, रामसर आदि स्थानों पर अधिकार किया। इन स्थानों पर जयसिंहजी के जो हाकिम थे, वे भाग गये। उनके स्थान पर जोधपुर के हाकिम रखे गये। इसके बाद सम्वत् १८०४ में भण्डारी सूरतरामजी जोधपुर के हाकिम बनाये गये। महाराजा रामसिंहजी सम्वत् १८०६ की श्रावण सुदी १० को जोधपुर के राज्यसिंहासन पर विराजे और उसी दिन आपने भण्डारी सूरतरामजी को दीवानगी के पद पर नियुक्त किया। उक्त पद के कार्य संचालन में भण्डारी थानसिंहजी के पुत्र (खींवसीजी के पौत्र) भण्डारी दौलतरामजी भी सम्मिलित थे। इस पद पर आप लोग सम्वत् १८०७ की आसोज सुदी १० तक रहे। इसी साल के कार्तिक मास में सूरतरामजी और दौलतरामजी आदि को क़ैद हुई और सवा लाख रुपये की कबुलियत करवा कर ये छोड़े गये। जब १८०७ में राजाधिराज बख़्तसिंहजी ने जोधपुर पर अधिकार किया उस समय भण्डारी दौलतरामजी उनके ख़ास मुसाहिबों में से थे।

मनरूपजी के दूसरे पुत्र मलुकचन्दजी के खींवसीजी की हवेली में मारे जाने का हाल हम पहले दे चुके हैं। मनरूपजी के वंश में इस वक्त भण्डारी मकतूलचन्दजी हैं, जो इस वक्त जोधपुर में वकालात करते हैं।

भण्डारी दौलतरामजी—आप भण्डारी थानसिंहजी के पुत्र थे। जब महाराजाधिराज बख़्तसिंहजी सम्वत् १७९० में अहमदाबाद से जोधपुर लौटे तब दरबार ने आपको अपने हाथी के हौदे पर बैठाया और रुपयों की उछाल करवाई। सम्वत् १७९९ में आप जोधपुर के हाकिम हुए। सम्वत् १८०४ के भादवा में मनरूपजी के दीवान होने पर आपको सूबेदारी, बैठने का कुरूब और पालकी, सिरोपाव इनायत हुआ। सम्वत् १८०७ की वैशाख वदी ९ के दिन एक लड़ाई में भण्डारी दौलतरामजी के हाथ पर तीर लगा और उनका घोड़ा मारा गया। सम्वत् १८१२ की ज्येष्ठ सुदी १५ को भण्डारी दौलतरामजी तथा उनके छोटे भ्राता हिम्मतरामजी, भण्डारी अमरसिंहजी के पुत्र भण्डारी जोधसिंहजी और भण्डारी सूरतरामजी को क़ैद से मुक्त किया गया। सम्वत् १८१७ की वैशाख सुदी १२ को भण्डारी दौलतरामजी का स्वर्गवास हुआ। उनकी धर्मपत्नी उनके साथ सती हुई।

भण्डारी भवानीरामजी—आप भण्डारी दौलतरामजी के पुत्र थे। सम्वत् १८१३ की श्रावण बदी १२ को आप जोधपुर राज्य के फौजबख्शी (प्रधान सेनापति) के उच्चपद पर अधिष्ठित किये गये। आपने कई वीरोचित कार्य्य किये।

भण्डारी थानसिंहजी के वंश में इस समय भण्डारी किशोरमलजी, भण्डारी जीवनमलजी, भण्डारी लाभमलजी, भण्डारी मोतीचन्दजी आदि सज्जन हैं। भण्डारी किशोरमलजी कलकत्ते में व्यापार करते हैं। भण्डारी जीवनमलजी कई वर्ष तक रीयां ठिकाने के कामदार रहे और इस वक्त शायद वकालात करते हैं। भण्डारी लाभचंदजी महाराना फतहसिंहजी के पोस कामदार हैं। भण्डारी मोतीचन्दजी सोजत में पुलिस सर्कल इन्सपेक्टर हैं। इस महकमे में आप अच्छे लोकप्रिय रहे। भण्डारी जीवनमलजी के पुत्र नवरत्नमलजी ने गतसाल बी० ए० पास किया है। ये होनहार युवक मालूम होते हैं।

भण्डारी अमरसिंहजी का वंश—भण्डारी अमरसिंहजी के जोधसिंहजी और सावंतसिंहजी नामक दो पुत्र हुए। जोधसिंहजी मेड़ता अजमेर आदि कई स्थानों के हाकिम रहे। आप बड़े पहलवान थे। आपने एक नामी पहलवान को पछाड़ा था। आपका मेड़ते में स्वर्गवास हुआ, जहाँ अभी आपके स्मारक में चौतरा बना हुआ है। इनके छोटे भ्राता सावन्तसिंहजी भी हाकिम रहे। जोधसिंहजी के पाँच पुत्र हुए, जिनमें कल्याणदास और अचलदासजी का परिवार मौजूद है।

भण्डारी हरिदासजी—आप कल्याणदासजी के पौत्र थे। आप नामाङ्कित हुए। आप साम्भर और नावां के हाकिम रहे और सम्वत् १९४३ से १९६० तक जोधपुर के खजांची रहे। आपका स्वर्गवास ६८ वर्ष की आयु में सम्वत् १९६० की माघ सुदी २ को हुआ। आपके दो पुत्र भण्डारी किशनदासजी और भण्डारी विशनदासजी अभी विद्यमान हैं। भंडारी हरिदासजी के गुजरने के बाद किशनदासजी ने सम्वत् १९६० से सम्वत् १९७८ तक खजांची (पोतदारी) का काम किया। भंडारी विशनदासजी ने भी खजाने में सर्विस की। आप सुधारक विचारों के सज्जन हैं। कला से आपको प्रेम है। भंडारी किशनदासजी के दो पुत्र हुए जिनमें माणकराजजी सम्वत् १९७५ में स्वर्गवासी हुए। दूसरे पुत्र मदनराजजी घरू कारोबार करते हैं। माणिकराजजी के पुत्र मोहनराजजी ट्रिब्युट में सर्विस करते हैं। भंडारी विशनदासजी के पुत्र इन्द्रसिंहजी पुलिस विभाग में सर्विस करते हैं और अमरसिंहजी पढ़ते हैं।

भण्डारी करणीदानजी—आप अचलदासजी के पुत्र थे आप मेड़ते के हाकिम रहे। सम्वत् १९२६ की अषाढ़ वदी ७ को आपका देहावसान हुआ। आपके महादानजी, सतीदानजी, आईदानजी, जगजोतदानजी आदि आठ पुत्र हुए। इनमें जगजोतदानजी इस समय विद्यमान हैं। दीपावत भंडारियों में आप सबसे बुजुर्ग सज्जन हैं। आपको अपने पूर्वजों के पर्वानों पर जोधपुर दरबार से गतसाल ४००) का पुरस्कार मिला है। भंडारी खानदान के कई रुक्के आपके पास हैं। आपके पुत्र भगवतीदानजी कलकत्ते में जवाहरात का काम करते हैं और फतहदानजी के पुत्र अम्बादानजी जवाहरात की दलाली करते हैं।

जेठमल लाडमल भंडारी, मद्रास

भंडारी जेठमलजी खींवसीजी के परिवार में हैं। आपका कुटुम्ब सांचोर में रहता है। भंडारी जेठमलजी का स्वर्गवास संवत् १९७४ में हुआ। आपके प्रतापमलजी, लाडमलजी तथा हीरालालजी नामक ३ पुत्र हुए इनमें प्रतापमल जी तथा हीरालालजी सांचोर में ही निवास करते हैं।

भंडारी लाडमलजी का जन्म संवत् १९६५ में हुआ। आपने एफ० ए० तक शिक्षा पाई। आपका विवाह जोधपुर में गणेशमलजी सराफ के यहाँ हुआ है। इस समय आप उनके पुत्र सरदारमलजी सराफ के साथ सरदारमल लाडमल के नाम से मद्रास में कारवार करते हैं।

भण्डारी रायचन्दजी का परिवार

भंडारी रायचन्दजी, भंडारी दीपाजी के चतुर्थ पुत्र थे। आप बड़े वीर और रणकुशल थे। आप जोधपुर राज्य की सेना के प्रधान सेनापति थे और आपने कई छोटी बड़ी लड़ाइयों में भाग लिया था। सम्वत् १७३९ की भादवा वदी ९ को राणापुर में गुजरात के शासक महम्मद के साथ जोधपुरी सेना का युद्ध हुआ था, उसमें भंडारी रायचन्दजी बड़ी वीरता के साथ युद्ध करते हुए काम आये।

भण्डारी रघुनाथसिंहजी—जिन महान् राजनीतिज्ञों एवं वीरों ने राजस्थान के इतिहास के पृष्ठों को उज्ज्वल किया है, उनमें भंडारी रघुनाथसिंहजी का आसन बहुत ऊँचा है। ये अपने समय के महापुरुष थे और मारवाड़ की राजनीति के मैदान में इन्होंने बड़े-बड़े खेल खेले। आज भी मारवाड़ की जनता बड़े गौरव के साथ इनका नाम लेती है। "अजे दिलीरो पातशाह और राजा तू रघुनाथ" की कहावत मारवाड़ के बच्चे-बच्चे के मुँह पर है। यह बात निःसन्देह रूप से कही जा सकती है कि मारवाड़ में जितना प्रकाश इनकी कीर्ति का फैला उतना दो एक मुत्सद्दियों ही का फैला होगा। खींवसीजी ही की तरह इनका प्रभाव भी केवल राजस्थान की सीमा तक ही परिमित नहीं था, वरन उत्तर में ठेठ दिल्ली और दक्षिण पश्चिम में गुजरात तक की राजनीति पर इनका बड़ा प्रभाव था। महाराजा अजितसिंहजी के जमाने में मुत्सद्दियों में दो सबसे अधिक प्रकाशमान तारे थे—एक खींवसीजी और दूसरे रघुनाथसिंहजी। दुःख की बात है कि इनका पूरा इतिहास उपलब्ध नहीं है।

सम्वत् १७६६ में भंडारी रघुनाथजी दीवानगी की प्रतिष्ठित पद पर अधिष्ठित किये गये। इस दीवानगी के काम को आपने बड़ी ही उत्तमता के साथ किया और इसके उपलक्ष्य में महाराजा अजितसिंहजी ने सम्वत् १७६७ में आपको रायरायां की सर्वोच्च उपाधि से विभूषित किया। इसी समय महाराजा ने आपको हाथी, पालकी, सिरोपाव, मोतियों की कंठी आदि देकर सम्मानित किया।

सम्वत् १७७१ में वादशाह फर्रुखसियर किसी कारणवश महाराजा अजितसिंहजी से नाराज हो गया और उसने अपने सेनापति सैयद हुसेनअली बख़शी को वड़ी सेना देकर मारवाड़ पर भेजा। इस समय महाराजा ने अपने राज्य के हित की दृष्टि से बादशाही फौज से लड़ना ठीक नहीं समझा। उन्होंने सैयद हुसेनअली से सन्धि करली। इतना ही नहीं उन्होंने बादशाही दरबार में अपने अनुकूल परिस्थिति पैदा करने के लिए महाराजकुमार अभयसिंहजी और भंडारी रघुनाथसिंहजी को भेजा। बादशाह ने आप लोगों का बड़ा आदर किया। भंडारी रघुनाथसिंहजी ने बादशाह को बड़ी ही कुशलता के साथ समझाया और महाराजा अजितसिंहजी के लिए उसके मनमें सद्भाव उत्पन्न कर दिये। भंडारी रघुनाथसिंहजी ने बादशाह को इतना खुश कर दिया कि उसने महाराजा का मन्सब छः हजारी जात छः हजार सवारों का कर उन्हें गुजरात की सूबेदारी पर नियुक्त किया। सम्वत् १७७२ में जब भंडारी रघुनाथसिंहजी महाराजा कुमार अभयसिंहजी के साथ जोधपुर लौटे तब वहां उनका राज्य की ओर से बड़ा आदरातिथ्य किया गया। दरबार ने उनकी इन महान् सेवाओं की बड़ी प्रशंसा की।

सम्वत् १७७० के चैत्र में भंडारी खींवसीजी क़ैद से मुक्त हुए और दरबार ने आसोप के डेरे में उन्हें प्रधानगी का सर्वोच्च पद प्रदान किया गया। इस समय भंडारी रघुनाथ भंडारी खींवसीजी के साथ प्रधानगी का काम करने लगे। कुछ वर्षों तक आप लोगों ने साथ-साथ काम किया। महाराजा आपके कामों से बड़े प्रसन्न हुए और आप दोनों बन्धुओं को हाथी, पालकी, सिरोपाव, जड़ाऊ कड़ा, मोतियों की कंठी, तलवार और कटारी देकर सम्मानित किया।

सम्वत् १७७९ में महाराजा अजितसिंहजी ने फिर महाराजकुमार अभयसिंहजी के साथ भंडारी रघुनाथसिंहजी को बादशाह के हुजूर में दिल्ली भेजा। इस समय आप कई मास तक दिल्ली रहे। आपकी बादशाह से बड़ी घनिष्टता हो गई। बादशाह आपकी सलाह को बहुत मान देने लगा। इसके बाद जब आप दिल्ली में थे तब संवत् १७८१ की अषाढ़ सुदी १३ को महाराजा अजितसिंहजी उनके पुत्र बख्तसिंहजी द्वारा मार डाले गये।

सरदारों की नाराजी—भंडारी रघुनाथ और भंडारी खींवसी का अपूर्व प्रताप मारवाड़ के सरदारों से देखा न गया। वे उनसे बड़ा विद्वेष करने लगे और किसी न किसी प्रकार उन्हें अपने गौरव से गिराने का यत्न करने लगे। बहुत से सरदारों ने विद्रोह कर दिया। मथुरा मुकाम पर कुछ सरदारों ने तत्कालीन महाराज से कहा कि सब सरदार भंडारियों से नाराज है और जब तक भंडारी कैद न किये जावेंगे वे सन्तुष्ट न होंगे। महाराजा ने अपनी इच्छा के विरुद्ध सरदारों की बात स्वीकार करली। उन्होंने भंडारियों को कैद करने का हुक्म दे दिया। इस समय भंडारी खींवसी के पुत्र

भंडारी थानसिंह और पोमसिंह भंडारी के पुत्र मलूकचंद को देवड़ा रींवा नामक राजपूत सरदार ने मार डाला। यहाँ यह वात ध्यान में रखने योग्य है कि महाराजा की आज्ञा उन्हें मरवाने की न थी, सिर्फ कैद करने की थी। भंडारी खींवसी और भंडारी रघुनाथ भी कैद कर लिये गये। इस समय प्रायः सब के सब नामी भंडारी जेल में डाल दिये गये। कई भंडारी पीछे रुपये देकर छूटे। राजनैतिक परिस्थिति ने महाराजा को भंडारी रघुनाथ को छोड़ने के लिये मज़बूर किया। फिर भंडारी रघुनाथ को राज्य-कार्य्य सौंपा गया।

इसके वाद सम्वत १७८५ में फिर अन्य भंडारियों के साथ राय रघुनाथसिंहजी को भी कैद हुई। पर थोड़े ही दिनों के वाद जयपुर नरेश ने जोधपुर पर चढ़ाई की। जयसिंहजी के पास बड़ी भारी फौज थी और जोधपुर राज्य का अस्तित्व तक खतरे में पड़ गया था। ऐसी कठिन परिस्थिति में निरुपाय होकर दरवार ने फिर भंडारी रघुनाथ को कैद से मुक्त किया और उन्हें बुलाकर कहा कि हालत बड़ी नाजुक है। जयसिंहजी फौज लेकर चढ़ आये हैं और घर का भेद फूटा हुआ है। तुम बड़े फाड़ तोड़ करने वाले आदमी हो। अब ऐसा उपाय करो जिससे जयसिंहजी वापस लौट जावें। अगर तुम यह काम कर सको तो तुम्हारी बड़ी भारी वंदगी समझी जायगी। इस पर भंडारी रघुनाथसिंहजी ने अर्ज की कि खाविंदों की कृपा से सब ठीक हो जायगा। इसके वाद भंडारी रघुनाथजी जयसिंहजी के पास गये। यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि जयसिंहजी पर भंडारी रघुनाथजी का वड़ा भारी प्रभाव था। वे इन्हें राजस्थान के वड़े मुत्सुद्दी मानते थे। ज्योंही भंडारीजी जयसिंहजी के पास पहुँचे त्योंही महाराजा जयसिंहजी ने खड़े होकर आप का स्वागत किया और पीछे मारवाड़ी भाषा में कहा—"भंडारी आवो माको आवणो हुवो जद थाँको छुटको हुवो।"

इसके वाद भंडारी रघुनाथजी ने जयसिंहजी को फौज खर्च के लिये दस लाख रुपये देने का वायदा कर उन्हें वापस लौटा दिया। रुपयों की जमानत के लिये खुद भंडारी रघुनाथ, भंडारी मनरूप, भंडारी अमरदास, भंडारी रत्नसिंह और भंडारी मेघराज आदि मुत्सुद्दियों को ओल में दे दिये गये। हम पहले कह चुके हैं कि भंडारी रघुनाथजी का जयपुर नरेश महाराजा जयसिंहजी पर वड़ा प्रभाव था। ये शीघ्र ही छूट कर जोधपुर आगये और उन्होंने महाराजा से मुजरा किया।

इस प्रकार जोधपुर राज्य की कई महत्वपूर्ण सेवाएं करने के वाद भंडारी रघुनाथ सम्वत १७९८ में मेड़ता मुकाम पर स्वर्गवासी हुए।

भण्डारी अनोपसिंहजी—आप भंडारी रघुनाथसिंहजी के पुत्र थे। आप बड़े बहादुर और

रण कुशल थे। आप जोधपुर के हाकिम थे। आपने नागोर पर चढ़ाई कर वहाँ किस प्रकार अपना अधिकार किया इसका वर्णन हम "ओसवालों के राजनैतिक महत्व" नामक अध्याय में कर चुके हैं।

सम्वत १७१७ में महाराजा अजितसिंहजी ने आपको फौज देकर अहमदाबाद भेजा। वहाँ जाकर आपने उक्त नगर पर अधिकार कर लिया। फिर भंडारी रत्नसिंहजी को वहाँ का शासन भार सौंप कर आप लौट आये।

सम्वत १७८२ के माघ मास में जब महाराजा अभयसिंहजी दिल्ली पधारे तब मारवाड़ का शासन भार राजाधिराज बख्तसिंहजी पर रखा गया और भंडारी अनोपसिंहजी उनके सहायक बनाये गये।

सम्वत १७८५ में आनन्दसिंह रायसिंह ने जालौर के गाँवों पर हमला किया, तब उनके मुकाबिले में भंडारी अनोपसिंह ससैन्य भेजे गये। आपके पहुँचते ही दोनों बागी सरदार भाग खड़े हुए। दरबार के हुक्म से आपने पोकरण पर चढ़ाई कर उस पर अधिकार कर लिया।

भण्डारी केसरीसिंहजी—आप भंडारी अनोपसिंहजी के ज्येष्ठ पुत्र थे। जान पड़ता है कि भंडारी अनोपसिंहजी के और भी पुत्र थे, जिनमें माणिकचंद्रजी का नाम हमने पुष्कर के पँडे की बही में देखा। पर उनके अन्य पुत्रों का हाल उपलब्ध नहीं है।

भंडारी केसरीसिंहजी का समय दीपावत भंडारियों की अवनति का था। इस समय अर्थात् सम्वत १७८० के लगभग भंडारी खींवसीजी के वंशज और केसरीसिंहजी कैद किये हुये थे। भंडारियों की ख्यात में केसरीसिंहजी के कैद होने और उन्हें सरदारों के सिपूर्द होने मात्र का उल्लेख है। जान पड़ता है कि इनके समय में राज्य द्वारा भंडारी रघुनाथजी की हवेली और जायदाद जप्त करली गई और ये बड़ी मुसीबत की हालत में जैतारण चले गये। इनके दो पुत्र थे, जिनमें पहले पुत्र अखेचन्दजी जैतारण रहे और दूसरे मेड़ते तथा बीलाड़े रहे। भंडारी केसरीसिंहजी का सम्वत १८५५ के लगभग जैतारण में देहान्त हुआ। उनकी पत्नी उनके साथ सती हुई जिसका चौंतरा बना हुआ है। भंडारी अखेचन्दजी के फौजराजजी और जवाहरमलजी नामक दो पुत्र हुए। फौजराजजी के मुलतानमलजी और गम्भीरमलजी नामक दो पुत्र थे। मुलतानमलजी बड़ी वीर प्रकृति के थे। सम्वत १९१४ के विद्रोह में आप अंग्रेजी सेना में भर्ती हुए और थोड़े ही दिनों में अंग्रेजी भारतीय फौज में अफसर हो गये। आपको अंग्रेजी सेनापतियों से अच्छे अच्छे प्रशंसापत्र मिले थे। मुलतानमलजी और गम्भीरमलजी निःसन्तान गुजरे।

जवाहरमलजी के शिवनाथचंदजी नामक पुत्र हुए। आप व्यापार करने के लिए केतुली (मालवा) गये थे। वहाँ सम्वत १९२५ में पच्चीस वर्ष की अवस्था में आपका देहान्त हुआ। आपके पुत्र भण्डारी जसराजजी हुए।

भण्डारी जसराजजी—आपका जन्म सम्वत १९११ में हुआ। अपने पिताजी की मृत्यु के समय इनकी अवस्था केवल ९ वर्ष की थी। दस वर्ष की अवस्था में आप कच्ची सड़क से ऊँट की सवारी पर जैतारण (मारवाड़) से भानपुर (इन्दौर राज्य) में आये और अपने नाना जीतमलजी कोठारी के निरीक्षण में दूकान का काम करने लगे। थोड़े ही दिनों में आपने व्यापार में अच्छी पारदर्शिता प्राप्त करली। सम्वत १९४८ में आप वहाँ की सुप्रसिद्ध श्रीकिशन शिवनारायण नामक फर्म पर अपने नाना के स्थान पर मुनीम हो गये। उक्त फर्म के मालिक इन्दौर के सुप्रसिद्ध जागीरदार श्रीमान् सांवतरामजी कोठारी थे। भण्डारीजी ने उक्त फर्म का कार्य्य सुचारू रूप से सञ्चालित किया। इसके बाद सम्वत १९५७ में आपने जसराज सुखसम्पतराज नामक स्वतन्त्र फर्म खोली। भानपुर में इस फर्म की अच्छी प्रतिष्ठा थी। भण्डारी जसराजजी भानपुर परगने में अच्छे लोकप्रिय और प्रतिष्ठित साहूकार समझे जाते थे। आपका देहान्त सम्वत १९८१ में हुआ। आपके सुखसम्पतराज, चन्द्रराज, मोतीलाल और प्रेमराज नामक चार पुत्र हुए।

भण्डारी वन्धु—जसराजजी के वड़े पुत्र सुखसम्पतिरायजी का जन्म सम्वत १९५० की अगहन सुदी १४ को हुआ। ईसवी सन् १९१३ में आप श्रीवेङ्कटेश्वर समाचार और सन् १९१४ में सद्धर्म प्रचारक के संयुक्त सम्पादक हुए। ईसवी सन् १९१५ में इन्होंने पाटलिपुत्र के संयुक्त सम्पादक का कार्य्य किया। इस समय इस पत्र के प्रधान सम्पादक सुप्रख्यात इतिहास वेत्ता श्रीमान् के० पी० जायसवाल बैरिस्टर थे। इसके दूसरे ही साल ये इन्दौर राज्य के "मल्हारि मार्तण्ड" नामक साप्ताहिक पत्र के हिन्दी सम्पादक हुए। ईसवी सन् १९२३ में इन्होंने अजमेर से "नवीन भारत" नामक साप्ताहिक पत्र को सञ्चालित किया। ईसवी सन् १९२६ से आपने इन्दौर दरवार की सहायता से "किसान" नामक मासिक पत्र निकाला जो चार वर्ष तक चलता रहा। इस पत्र की स्वर्गीय लाला लाजपतराय ने अपने (People) नामक सुप्रख्यात पत्र में वड़ी प्रशंसा की और भारतवर्ष के घर-घर में इसके प्रचार की आवश्यकता वतलाई और भी कई देशमान्य नेताओं ने, कृषि विद्या विशारदों ने तथा हिन्दी के प्रायः सब समाचार पत्रों ने "किसान" की वड़ी सराहना की।

कई प्रसिद्ध पत्रों के सम्पादन करने के अतिरिक्त भण्डारी सुखसम्पतिरायजी ने हिन्दी में लगभग वावीस ग्रन्थ लिखे। इनमें "भारतदर्शन" पर स्वर्गीय लाला लाजपतरायजी ने और "तिलक दर्शन" पर माननीय पण्डित मदन मोहन मालवीयजी ने भूमिका लिखी। इनका राजनीति विज्ञान हिंदी साहित्य सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा में राजनीति विषय की पाठ्य पुस्तक मुकर्रर की गई है। "भारत के देशी राज्य" नामक ग्रन्थ पर इन्हें इन्दौर दरवार से १५०००) का वृहत पुरस्कार मिला। राजपूताना सेन्ट्रल इण्डिया के एज्युकेशन वोर्ड ने इस ग्रन्थ को एफ० ए० के लिये रेपिड रीडिंग ग्रन्थ के बतौर स्वीकार किया था।



श्री सुखसम्पत्तिरायजी भण्डारी एम. आर. ए. एस., इन्दौर.



श्री चन्द्रराजजी भण्डारी 'विशारद', भानपुरा (इन्दौर



श्री मोतीलालजी भण्डारी एच. एल. एम. एस., इन्दौर.



श्री प्रेमराजजी भण्डारी बी. ए. सपत्नीक, इन्दौर.

इन्होंने लगभग बीस हजार पृष्ठों का एक विशाल अंग्रेजी हिन्दी कोष लिखा है। डॉक्टर गंगानाथ झा, सर पी० सी० रॉय, डाक्टर राधाकुमुद मुकर्जी, डॉक्टर वुलनर आदि कई अन्तर्राष्ट्रीय कीर्ति के विद्वानों ने इस ग्रन्थ को भारतीय साहित्यका अटल स्मारक कहा है। इसके अतिरिक्त बॉम्बे क्रॉनिकल, पायोनियर, ट्रिब्यून आदि प्रतिष्ठित अंग्रेजी दैनिकों ने इसे भारतीय साहित्य का सबसे बड़ा प्रयत्न कहा है। "प्रताप" "भारत" "स्वतन्त्र" 'भारतमित्र' 'अभ्युदय' आदि बीसों पत्रों ने इस ग्रन्थ के महत्व और उपयोगिता पर लम्बे-लम्बे सम्पादकीय लेख लिखे हैं। इस कोष के काम को श्रीमान् वाइसराय महोदय ने "महान् प्रयत्न" कहा है और उसके लिये हर प्रकार की सहायता का ऑफर दिया है।

ईसवी सन् १९२०—२१ के राजनैतिक आन्दोलन में भी इन्होंने भाग लिया था। इसी साल ये ऑल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के सदस्य चुने गये। यहाँ यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि देशी राज्यों में सबसे पहले ईसवी सन् १९२० में इन्दौर में इन्होंने कांग्रेस कमेटीकी स्थापना की और इसका दफ्तर इनके मकान ही पर रहा। इन्दौर में प्रजा परिषद होने के लिये इन्होंने "मल्लारि मार्तण्ड विजय" में जोरों का आन्दोलन उठाया और वहाँ धूमधाम से परिषद हुई। नागपुर कांग्रेस के समय देशी राज्यों की प्रजा के उत्थानके लिये राजपूताना मध्य भारत सभा की स्थापना हुई जिसके सभापति श्रीयुत राजा गोविंदलालजी पीती, प्रधान मन्त्री श्रीयुत कुँवर चांदकरणजी शारदा तथा संयुक्त मन्त्री श्रीसुखसम्पतिरायजी चुने गये। इस समय आपका विशेष समय साहित्य सेवा ही में जा रहा है।

जसराजजी के दूसरे पुत्र श्री चन्द्रराजजी का जन्म सम्वत १९५९ के कार्तिक सुद १२ को हुआ। सम्वत १९७६ में इन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विशारद परीक्षा पास की। इसके बाद में साहित्य सेवा में लगे। इन्होंने करीब १५ महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं जिनमें भगवान् महावीर और समाज विज्ञान का बड़ा आदर हुआ यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा के पाठ्य क्रम में नियत है और इस पर इन्दौर की होलकर हिन्दी कमेटी ने स्वर्ण पदक प्रदान किया है भगवान महावीर की पं० लालन और लाला हरदयाल सरीखे प्रतिष्ठित विद्वानों ने बड़ी प्रशंसा की। समाज विज्ञान को डा० गंगानाथ झा इत्यादि हिन्दी के कई प्रख्यात विद्वानों ने अपने विषय का अपूर्व ग्रन्थ कहा और हिन्दी के प्रायः सब समाचार पत्रों ने इसकी बड़ी ही अच्छी समालोचना की। कुछ पत्रों में तो इस ग्रन्थके महत्व पर स्वतन्त्र लेख प्रकाशित हुए। 'विशाल भारत' 'माधुरी' 'सुधा' 'चाँद' और "वीणा" नामक मासिक पत्रों में इनके कई विचारपूर्ण लेख प्रकाशित होते रहते हैं। इन्होंने अपने कुछ मित्रों के सहयोग से भारतीय व्यापारियों का इतिहास नामक महाविशाल ग्रन्थ प्रकाशित किया, जो तीन बड़ी-बड़ी जिल्दों में है हाल में इन्होंने "संसार की भावी संस्कृति" नामक ग्रन्थ लिखा है जो शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

जसराजजी के तीसरे पुत्र का नाम श्री मोतीलालजी भंडारी हैं। मैट्रिक तक शिक्षा प्राप्त कर इन्होंने वैद्यक और होमियोपैथी का अध्ययन किया। इन्होंने पटना के होमियोपैथिक कॉलेज से डिग्री प्राप्त की और इस वक्त ये इन्दौर में सफलता पूर्वक होमियोपैथी की प्रेक्टिस करते हैं।

जसराजजी के चौथे पुत्र का नाम प्रेमराजजी भण्डारी है। इन्होंने इसी साल बी० ए० पास किया। ये नवीन विचारों के और समाज सुधारक हैं। इन्होंने पर्दा की हानिकारक प्रथा को अपने घर से उठा दिया। इनकी धर्मपत्नी श्रीमती सी० नजरकला सुशिक्षित महिला है।

भंडारी सुखसम्पतिरायजी के पुत्र प्रसन्नकुमार, वसंतकुमार, चन्द्रराजजी के प्रभात कुमार, और विजय कुमार तथा भंडारी मोतीलालजी के पुत्र नरेन्द्रकुमार हैं। प्रेमराजजी की कन्या का नाम शारदा देवी है। भंडारी सुखसम्पतीरायजी की बड़ी कन्या स्नेहलता कुमारी की वय १४ साल की है। ये विद्याविनोदिनी की प्रथमा परीक्षा पास कर चुकी हैं। गृह कार्य्य व सीनेपिरोने की कला में दक्ष हैं तथा सुधारक विचारों की बालिका हैं।

भण्डारी खेतसीजी का परिवार

भण्डारी खेतसीजी—आप भंडारी दीपाजी के द्वितीय पुत्र थे। आपने जोधपुर राज्य की प्रशंसनीय सेवाएँ कीं। जब महाराजा जसवन्तसिंहजी का सम्वत् १७३५ में पेशावर मुकाम पर स्वर्गवास हो गया, तब वहां से महाराजा की फौज को वापस लानेवाले व्यक्तियों में भंडारी भगवानदासजी, भंडारी खेतसीजी और भंडारी लालचन्दजी आदि थे। आपके उदयकरणजी, विजयराजजी, ठाकुरदासजी और लक्ष्मीचन्दजी नामक चार पुत्र हुए।

भण्डारी विजयराजजी—जिन ओसवाल मुत्सद्दियों ने जोधपुर राज्य के इतिहास को गौरवान्वित किया है उनमें भण्डारी विजयराजजी अपना विशेष स्थान रखते हैं। पहले पहल सम्वत् १७६७ में आप मेड़ते के हाकिम बनाये गये। जब सम्वत् १७६८ में शाहजादा फर्रुखसियर ने ८०००० फौज लेकर दिल्ली पर चढ़ाई की उस समय जोधपुर दरबार की ओर से भण्डारी विजयराजजी तत्कालीन मुगल बादशाह की सहायता के लिये ससैन्य भेजे गये। उस समय महाराजा अजितसिंहजी ने आपको यह संकेत कर दिया था कि दो दलों में जिस दल की विजय हो उसी ओर तुम मिल जाना। भंडारी विजयराजजी ने महाराजा की इस सूचना का भली प्रकार पालन किया। शाहजादा फर्रुखसियर ने विजयी होकर जब दिल्ली के तख्त की ओर प्रयाण किया तो भंडारी विजयराजजी उसकी ओर मिल गये।

सम्वत् १७७१ में भंडारी खींवसीजी ने आपको मारोठ, परवतसर, केकड़ी आदि परगनों पर अधिकार करने के लिये भेजे।

सम्वत् १७६९ में आपने जोधपुर राज्य की ओर से डीडवाणा मुकाम पर मुगलसेना से सामना किया और उसमें विजय प्राप्त की। सम्वत १७७१ के मिगसर मास में आप गुजरात के सूबे पर अमल करने के लिये भेजे गये और उसमें आपको सफलता मिली। सम्वत १७७१ में महाराजा ने बादशाही मुसाहिब नाहरखां को मरवा दिया। इससे बादशाह बड़ा क्रोधित हुआ और उसने हुसेनअलीखां के नेतृत्व में एक बड़ी सेना भेजी। सवाई जयसिंहजी भी अपने बहुत से उमरावों के साथ शाही सेना में मिल गये। भंडारी विजयसिंहजी शाही सेना से मुकाबला करने के लिए प्रस्तुत हो गये। अन्त में सन्धि हो गई और शाही सेना वापस लौट गई।

सम्वत १७८५ में जोधपुर महाराजा को बादशाह से अहमदाबाद का सूबा मिला, लेकिन वहाँ के नवाब ने इनसे कहा कि "सूबा कागजों से नहीं, तलवारों से मिलता है" इस समय महाराजा बहुतसी सेना लेकर अहमदाबाद पर चढ़ दौड़े, उस समय लड़ाई में एक मोर्चे का मुखिया भंडारी विजेराजजी को तथा २ मोर्चों का मुखिया इनके भतीजे भंडारी गिरधरदासजी तथा भंडारी रत्नसिंहजी को बनाया। संवत १७८७ की आसोज सुदी १० को भारी लड़ाई हुई और इसमें दरबार की विजय हुई और इन्होंने शत्रु की बन्दूकें तथा हाथी छीन लिये। संवत् १७८१ में भंडारी विजयराजजी को मारोठ तथा परवतसर का हाकिम बनाया और सिरोपाव प्रदान किया।

संवत् १७८७ के अषाढ़ मास में मराठे २० हजार फौज लेकर चौथ लेने के लिए मारवाड़ पर चढ़ आये, तब मारोठ की फौज लेकर भंडारी विजेराजजी ने उनका सामना किया। इसी प्रकार संवत १७८९ के फाल्गुन में मराठों ने ७० हजार फौज से पुनः चढ़ाई की, उस समय भंडारी विजयराजजी तथा रत्नसिंहजी ने मारोठ और परवतसर की सेना से तथा मनरूपजी ने और मूलाजीवराज ने सोजत की सेना से मुकाबिला किया। थोड़ी लड़ाई के बाद चौथ के २ लाख रुपये लेकर मराठे वापस हो गये। संवत् १७८७ के माघ मास में बाजीराव फौज लेकर अहमदाबाद पर चढ़ आये। उस समय भंडारी विजेराज उनके सामने भेजे गये। सम्वत् १७९२ में भंडारी विजेराजजी सरसा भाटनेर की ओर फौज लेकर गये। इस प्रकार आपने अनेकों फौजों तथा लड़ाइयों में योग दिया। आपके बड़े भ्राता उदयकरणजी के गिरधरदासजी, रतनसिंहजी तथा भीमसिंहजी नामक ३ पुत्र हुए।

भंडारी गिरधरदासजी—आप १७८२ में मेड़ते के हाकिम थे। आप गुजरात और मारवाड़ की कई लड़ाइयों में अपने छोटे बन्धु भंडारी रतनसिंहजी और काका विजेराजजी के साथ युद्धों में भाग लेते

रहे। संवत् १७८१ में आपको जोधपुर की सूबेदारी इनायत हुई। जब रायरायां भंडारी खींवसीजी के पुत्र भंडारी अमरसिंहजी दीवान हुए तब गिरधरदासजी को सिरोपाव, बैठने का कुरुब, पालकी, मोतियों की कंठी और सरपेंच मिला था। सम्वत् १८०१ में आप दीवान के पद से सुशोभित किये गये। इस पद पर आप १८०४ तक रहे।

भंडारी रत्नसिंहजी—भंडारी खींवसीजी और भंडारी रघुनाथजी की तरह भंडारी रत्नसिंहजी भी महान प्रतापी हुए। ये बड़े मुत्सद्दी, शासन कुशल और वीर थे। सम्वत् १७८७ में आपने जोधपुर की ओर से गुजरात पर सैनिक चढ़ाई की और उसमें आपको बड़ी सफलता मिली। इसके बाद गुजरात के सूबे पर महाराजा अभयसिंहजी का अधिकार हो गया और भंडारी रत्नसिंहजी वहाँ के नायब सूबा बनाये गये। वहाँ कुछ वर्षों तक आपने इस प्रतिष्ठित पद पर बड़ी ही सफलता के साथ काम किया। इस वक्त एक प्रकार से आप गुजरात के कर्ता-धर्ता थे। गुजरात के इतिहास में भी आपके गौरव का प्रशंसनीय उल्लेख है। सम्वत् १७७२ में सूरत के सूबा सरबलां ने १० हजार फौज से अहमदाबाद पर आक्रमण किया। भंडारी रत्नसिंहजी ने बड़ी ही वीरता के साथ इससे लोहा लेकर इसे पूर्ण रूप से पराजित किया। इतना ही नहीं रत्नसिंहजी ने ४० मील तक इसका पीछा किया। इस लड़ाई में सरबलां मारा गया और रत्नसिंहजी के चार घाव लगे।

इसके बाद सम्वत् १७९० में आप अजमेर के गवर्नर बनाये गये। चार वर्ष तक आप इस पद पर रहे। इस समय आपको कितने ही युद्ध करने पड़े। सम्वत् १८०३ में आपने बीकानेर पर चढ़ाई की जहाँ बड़ी वीरता से युद्ध करते हुए आप काम आये। जब आपकी मृत्यु का समाचार महाराजा अभयसिंहजी ने पुष्कर में सुना तब आपको हार्दिक दुःख हुआ और आपके शोक में एक वक्त नौबत बन्द रक्खी गई।

भंडारी रत्नसिंहजी के सवाईरामजी तथा जोरावरमलजी नामक दो पुत्र थे। इनमें जोरावरमलजी भंडारी विजयराजजी के नाम पर दत्तक गये। भंडारी सवाईरामजी के बाद क्रमशः तखतमलजी, सुखमलजी, चांदमलजी, नथमलजी और अभयराजजी हुए। इस समय भंडारी अभयराजजी के पुत्र भंडारी सम्पतराजजी विद्यमान हैं। आपने अजमेर के रायबहादुर सेठ नेमीचन्दजी की ओर से भरतपुर, करौली आदि कई रियासतों में खजांची काम किया। इस समय आप कोटे के सेठ दीवानबहादुर केसरीसिंहजी की ओर से आबू में खजांची का काम करते हैं। आपका कई बड़े-बड़े पोलिटिकल ऑफ़िसरों से बड़ा अच्छा सम्बन्ध रहता है और उनकी ओर से आपको कई अच्छे २ प्रशंसा-पत्र मिले हैं। मेड़ते में आपके पूर्वजों की बनाई हुई हवेली है।

भंडारी जोरावरमलजी—आप भंडारी रत्नसिंहजी के द्वितीय पुत्र थे। सम्वत् १७९१ में जोधपुर और जयपुर में जो युद्ध हुआ था उस समय आप जोधपुर दरबार की ओर से कई बड़े-बड़े मुत्सद्दियों के साथ ओल में दिये गये थे। तब से आप वहीं बस गये। संवत् १७२९ की चैत वदी १४ को तत्कालीन जोधपुर नरेश विजयसिंहजी ने जयपुर नरेश महाराजा पृथ्वीराजजी को चिट्ठी लिखकर आपको बुलाया। पर महाराजा पृथ्वीसिंहजी ने आपको भेजना स्वीकार नहीं किया। आप जयपुर द्वारा बक्शी गई हवेली ही में निवास करते थे।

संम्वत् १८५० के लगभग इनको २ हजार रुपया प्रतिवर्ष खजाने से मिलता रहा। २३००) की जागीरी का गाँव भीनापुरा इनके पास रहा। इनके गणेशमलजी शिवदासजी, भवानीदासजी तथा धीरजमलजी नामक ५ पुत्र हुए। इनको संवत् १९१० की अषाढ़ सुदी १५ के दिन २ हजार की जागीरी के बजाय ५००) की रेख का गाँव मौजा राधाकिशन मिला। तब से यह जागीर इन बंधुओं के परिवार में चली आती है।

भंडारी गणेशदासजी के बाद क्रमशः हरकचन्दजी अर्जुनसिंहजी तथा रणजीतसिंहजी हुए। रणजीतसिंहजी ने मेट्रिक तक शिक्षा पाई है। भंडारी शिवदासजी के परिवार में कल्याणमलजी तथा भवानी दासजी के परिवार में पूनमचन्दजी गुलाबचंदजी ताराचंदजी और फतेचंदजी हैं। इनकी रंगून में पूनमचंद ताराचंद के नाम से फर्म है। भंडारी धीरजमलजी के पुत्र रिधकरणजी हुए। इनके पुत्र भंडारी बुधमलजी की वय ६८ साल की है, आपने अपने पुत्रों को शिक्षित करने की ओर उत्तम लक्ष दिया है। आपने १९४० में उमारिया में दुकान की, आप वहाँ के प्रतिष्ठित सज्जन समझे जाते हैं। वहाँ के आप सरपंच (ऑनरेरी मजिस्ट्रेट) रहे थे। आपके बड़े पुत्र धनरूपमलजी भण्डारी खड़गपुर (बंगाल) में धनरूपमल भंडारी एण्ड संस के नाम से बैंकिंग व मोटर का बिजिनेस करते हैं। दूसरे पुत्र भंडारी दौलतमलजी ने लखनऊ से १९२० में एल० एल० बी० तथा १९२१ में एम० ए० पास किया है और इधर १९२० से आप चीफ़ कोर्ट जयपुर में प्रेक्टिस करते हैं। आपके छोटे भाई प्रेमचन्दजी एफ़० ए० फाइनल में पढ़ते हैं भंडारी धनरूपमलजी के ज्ञानचंद गुमानचंद आदि ५ पुत्र हैं। यह परिवार जयपुर में निवास करता है। तथा यहाँ के ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित माना जाता है।

लूणावत भंडारी

हम ऊपर बतला चुके हैं कि नाडोल के चौहान अधिपति राव लाखनसी की १८ वीं पीढ़ी में समराजी हुए, और इनके पुत्र भंडारी नराजी संवत् १४९२ में राव जोधाजी के साथ मारवाड़ (मंडोर में) आये। इन भंडारी नराजी तक उनका परिवार जैनी चौहान राजपूत रहा। संवत् १५१२ में भंडारी नराजी का विवाह मुहणोतों के यहाँ हुआ, तब से ये जैन ओसवाल हुए। कहा जाता है कि भंडारी नराजी की राजपूत पत्नी से राजसीजी, जसाजी, सीहोजी और खरतोजी नामक ४ पुत्र हुए, और मुहणोत पत्नी से तीलोजी नीचोजी और नाथोजी नामक ३ पुत्र हुए।

भंडारी ऊदाजी—भंडारी नराजी के सबसे छोटे पुत्र नाथोजी के चौथे पुत्र भंडारी ऊदोजी थे। भंडारी ऊदाजी को संवत् १५४८ में जोधपुर के तत्कालीन महाराजा ने प्रधानगी का और दीवानगी का सम्मान बख्शा। आपके पुत्र भंडारी वागोजी और पौत्र गोरोजी हुए।

भंडारी गोरोजी—आपने जोधपुर महाराजा राव गांगोजी के समय में प्रधानगी का काम किया। इनके लूणाजी, सादूलजी, सुलतानजी और जेवंतजी नामक ४ पुत्र हुए। इन बंधुओं में लूणाजी की संतानें लूणावत भंडारी कहलाईं।

भंडारी लूणाजी—आप लूणावतों में बहुत प्रतापी पुरुष हुए। आपकी बहादुरी तथा मोतबरी से तत्कालीन जोधपुर दरबार बहुत प्रसन्न थे आप को महाराजा उदयसिंहजी; सूरसिंहजी तथा गजसिंहजी ने ३ बार प्रधानगी का सम्मान दिया। संवत् १६५१ से १६८१ तक आप १५ सालों तक प्रधान रहे। संवत् १६७६ में जब आपको प्रधानगी का सम्मान दिया, उस समय दरबार सूरसिंहजी ने दक्षिण में रवाना होते समय आपको ८० हजार की जागीर के गाँव इनायत किये। जब संवत् १६८० में महाराजा गजसिंहजी को मेड़ता पुनः प्राप्त हुआ तब भंडारी लूणाजी ने मेड़ते जाकर वहाँ दरबार का अधिकार स्थापित किया। इस प्रकार अनेकों कार्य्य आपके हाथों से हुए। संवत् १६८१ के कार्तिक में आप स्वर्गवासी हुए।

भंडारी रायमलजी—आप भंडारी लूणाजी के पुत्र थे। पिताजी के स्वर्गवासी हो जाने पर उनकी जागिरी के गाँव आपको इनायत हुए। संवत् १६९४ में आपको जोधपुर दरबार ने दीवानगी का ओहदा बख्शा, तथा इस पद पर आपने १६९७ की पौष वदी ५ तक कार्य्य किया।

भंडारी भगवानदासजी—आप भंडारी रायमलजी के पुत्र थे। महाराजा जसवंतसिंहजी के साथ आप पेशावर में विद्यमान थे। संवत् १७३६ की सावण वदी ३ को जो फ़ौज जोधपुर से देहली गई उसमें आप गये थे।

भंडारी विट्ठलदासजी—आप भंडारी भगवानदासजी के पुत्र थे। आप महाराजा अजितसिंह के

साथ जालोर में रहे। जब संवत् १७६३ में महाराजा अजितसिंहजी के हाथ में जोधपुर के शासन की बागडोर आई तब उन्होंने भंडारी विट्ठलदासजी को दीवान बनाया और उन्हें २४९२५) की जागीरी के १४ गाँव इनायत किये।

सम्वत् १७६५ की फाल्गुन सुदी १० के दिन महाराजा अजितसिंहजी भंडारी विट्ठलदासजी के घर आरोगने (भोजन के लिये) पधारे उस समय दरबार को विट्ठलदासजी ने ४६ हजार रुपये नजर किये। दरबार ने प्रसन्न होकर इन्हें हाथी सिरोपाव भेंट किया। इसी साल सावण सुदी १२ को आप को फिर से दीवानगी का पद मिला। सम्वत १७६६ की आषाढ़ बदी ६ को आपको प्रधानगी का सम्मान, खासा सिरोपाव और जड़ाऊ कटारी भेंट मिली। आपके भ्राता भंडारी नारायणदासजी सम्वत १७६५ में मेड़ते के हाकिम थे। इसी परिवार में भंडारी माईदास जी हुए।

भंडारी माईदासजी—आप भंडारी देवराजजी के पुत्र थे। सम्वत १७६५—६६ में जब भंडारी खींवसीजी देश दीवान थे उस समय उनके तन दीवान भंडारी माईदासजी बनाये गये। सम्वत् १७६७ में आपको कैद हुई और थोड़े ही समय में आप मुक्त हो गये। इसी समय बणाड़ नाम का गाँव आपको जागिरी में दिया गया। सम्वत १८६९ के फाल्गुन में भंडारी माईदासजी, समदड़िया मूथा—गोकुलदास जी के साथ दीवान बनाये गये।

भंडारी विट्ठलदासजी के पश्चात् इस परिवार का सिलसिलेवार कुर्सीनामा नहीं प्राप्त होता। संभव है भंडारी विट्ठलदासजी के पुत्र या पौत्र भंडारी जसराजजी हों, । इन्हीं जसराजजी भंडारी के पुत्र भंडारी गंगाराजी हुए, जो उन्नीसवी शताब्दि के मध्य में जोधपुर के राजनैतिक गगन में तेजपुन्ज नक्षत्र की तरह प्रकाशमान हुए।

भंडारी गंगारामजी

आप जोधपुर के इतिहास में अपने समय में बड़े प्रतापी पुरुष हुए। जोधपुर महाराजा विजयसिंहजी ने फोज देकर आपको किशनगढ़ तथा उमरकोट की लड़ाइयों में भेजा। सम्वत १८४४ में महाराजा विजयसिंहजी ने आपके वीरोचित कार्यों से प्रसन्न होकर आपको ६ हजार की जागीरी देकर सम्मानित किया। जब संवत् १८४९ में महाराजा बिजेसिंहजी का स्वर्गवास हुआ और उनकी गद्दी पर महाराजा भींवसिंहजी बैठे उस समय भंडारी गंगारामजी और उनके भाणेज सिंघवी इन्द्रराजजी उनके सेना नायक थे। इन्होंने बड़ी बड़ी फोजें लेकर जालोर पर घेरा डाला जहाँ महाराजा मानसिंहजी अपनी थोड़ी सी सेना के साथ किले में घिर कर अपनी रक्षा कर रहे थे। लगातार कई वर्षों तक दोनों पार्टियों

में मोर्चा बंदियाँ और लड़ाइयाँ होती रहीं। जब संवत् १८६० की काती सुदी ४ को जोधपुर में महाराजा भीमसिंहजी का स्वर्गवास हो गया और राज्य का अधिकारी कोई न रहा, ऐसे समय में जोधपुर स्थित प्रधान ओहदेदारों ने भंडारी गंगारामजी तथा सिंघवी इन्द्रराजजी को घेरा बनाये रहने का आदेश किया। लेकिन इन वीरों ने तमाम परिस्थिति को सोचकर और राज्य का हकदार एक मात्र महाराजा मानसिंहजी को ही मानकर मोरचाबंदी तथा घेरा उठा दिया और स्वयं गढ़ में जाकर मानसिंहजी की निछरावलकी, तथा जोधपुर चलकर राज्यासन पर बिराजने के लिये अरज की। इसी तरह जोधपुर के अधिकारियों तथा सरदारों को भी महाराजा मानसिंहजी को ही राज्यासन पर बैठाये जाने की सूचना भेजी और उन्होंने उन्हे विश्वास दिलाया कि मानसिंहजी तुम्हारे पर किसी प्रकार की सख्ती नहीं करेंगे। इस प्रकार आप लोगों ने मानसिंहजी को सम्वत १८६० के मगसर मास में राज्यासन पर अधिष्ठित कराया। इनकी इन बहुमूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर दरबार मानसिंहजी ने इन्हें दीवानगी का सम्मान, सिरोपाव, कुरब और बणाड़ नामक गाँव तथा ख़ास रुक्का इनायत किया, जिसमें महाराजा ने अपने राज्यासीन होने के कार्य्य में भंडारी गंगारामजी ने जो बहुमूल्य सेवाएं की थी उनका कृतज्ञता पूर्वक उल्लेख किया।

सम्वत १८६३ के फाल्गुन मास में जोधपुर के इतिहास में एक नवीन घटना घटी। महाराजा मानसिंहजी को राज्यासन पर बैठे थोड़ा ही समय हुआ था, और वे अपने सरदार मुत्सुद्दियों के बीच का मनोमालिन्य दूर भी नहीं कर पाये थे, कि इसी बीच इन्होंने अपने दीवान भंडारी गंगारामजी और फौज के प्रधान सिंघवी इन्द्रराजजी को उनके पुत्रों सहित गिरफ्तार कर लिया। इस प्रकार के अनेक कारणों से राज्य में बड़ी गड़बड़ी मची हुई थी। इसका परिणाम यह हुआ कि मारवाड़ के सरदारों ने धौंकलसिंहजी को राज्य का स्वामी मान कर उपद्रव उठाया। वे जयपुर और बीकानेर की लगभग १ लाख फौज को जोधपुर पर चढ़ा लाये। जब इस विशाल सेना ने जोधपुर पर घेरा डाला, और राज्य के बचने की किसी तरह उम्मीद न रही, तब ऐसे कठिन समय में महाराजा मानसिंहजी उक्त आपत्ति से अपनी रक्षा करने की चिन्ता में पड़े। ऐसी स्थिति में इन्हें सिवाय भण्डारी गंगारामजी और सिंघवी इन्द्रराजजी के दूसरा अपना कोई सहायक न दिखा। फलतः महाराजा मानसिंहजी ने उनके पुत्रों को क़ैद में रखकर इन दोनों वीरों को बुलाया तथा इस आपत्ति से अपने राज्य की रक्षा करने की अभिलाषा दर्शायी। इस पर इन दोनों मुत्सद्दियों ने दरबार को सब प्रकार से परिस्थिति ठीक कर देने का विश्वास दिलाया तथा उसी समय वे इस प्रयत्न में लग गये। इस जगह इस बात का उल्लेख करना आवश्यकीय होगा कि भंडारी गंगारामजी को अपने एवज़ में अपने पुत्र को गिरफ्तार रखने की महाराज मानसिंहजी की नीति पर

बड़ा खेद हुआ। लेकिन उस समय उनके सामने प्रधान लक्ष्य राज्य की रक्षा करना था, अतः वे क़ैद से रिहा होते ही समझौते के प्रयत्न में लग गये, जिसका विवरण पहले दिया जा चुका है।

इसके थोड़े ही दिनों बाद भण्डारी गंगारामजी ने अपने अन्य सहयोगियों के साथ भारी फौज लेकर बीकानेर पर चढ़ाई की। वहाँ के महाराजा सूरतसिंहजी ने इन्हें साढ़े तीन लाख रुपये देने का वायदा किया, तब ये वहाँ से वापस लौट आये। इसी तरह आपने नवाब मीरखां तथा लोढ़ा शाह कल्याणमलजी के साथ पोकरण पर चढ़ाई की। वहाँ के ठाकुर से एक लाख रुपयों की आपने क़बूलियत लिखवाई।

भंडारी गंगारामजी तथा सिंघवी इन्द्रराजजी का प्रेम—ये दोनों मुत्सुद्दी मामा तथा भानेज थे। भण्डारी गंगारामजी मेधावी, दूरदर्शी और बहादुर प्रकृति के नरवीर थे। इनके विषय में यह कहना अत्युक्ति न होगी कि भण्डारी गंगारामजी का मस्तिष्क और सिंघवी इन्द्रराजजी का साहस इनके कार्य्यों को सफल करने में सार्थक हुआ। इनके विषय में इस प्रकार का पद्य प्रचलित है कि—

इंद[1] को फंद गंग[2] जाणे, ने गंग को गोविंद[3] जाणे।

जयपुर, बीकानेर आदि की विजय के पश्चात् सिंघवी इन्द्रराजजी रियासत के दीवान बनाये गये। उनके सम्मान और अधिकार में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। ऐसे समय में उनको भण्डारी गंगारामजी की जुदाई बहुत ही ज़्यादा अखरी। कहा जाता है कि भण्डारी गंगारामजी को तत्कालीन राजनीति पर बड़ा असंतोष हुआ। अपने बदले में अपने पुत्र को क़ैद में रखे जाने का उन्हें बड़ा सदमा हुआ, और वे अपना अन्तिम समय हरिद्वार में बिताने के लिए रवाना हो गये। इस प्रकार महाराजा विजैसिंहजी, महाराजा भींवसिंहजी तथा महाराजा मानसिंहजी इन तीन नरेशों के राजत्व काल में रियासत की तन मन से सहायता करते हुए इस वीर पुङ्गव ने अपने जीवन के अन्तिम दिन हरिद्वार में ही बिताये तथा धार्मिक जीवन बिताते हुए वहीं आपका स्वर्गवास हुआ।

भंडारी भवानीरामजी—आप भण्डारी गङ्गारामजी के पुत्र थे। संवत् १८६३ में आपको अपने पिताजी के साथ क़ैद हुई तथा जोधपुर के रक्षार्थ उनके छोड़े जाने पर आपको उनके एवज़ में क़ैद रक्खा। जयपुर विजय के बाद आप छोड़े गये तथा उस समय भण्डारी गंगारामजी को जोधपुर परगने का बणाड़ नामक गांव जागीर में दिया गया। यह गांव इनके अधिकार में संवत् १८७९ तक रहा। पीछे उनको परवतसर परगने का बेसरोली गाँव जागीरी में मिला, जो इनके पास संवत् १८८५ तक रहा। ये भी जोधपुर राज्य की सेवाएँ करते रहे।

---

(१) सिंघवी इन्द्रराजजी। (२) भण्डारी गङ्गारामजी। (३) भगवान्, ईश्वर।

भण्डारी भवानीरामजी के पश्चात् उनके परिवार के व्यक्तियों का सिलसिलेवार कुर्सी नामा नहीं प्राप्त होता, पुष्कर में भण्डारियों के पण्डे की वही में देखने से हमें भण्डारी भवानीरामजी के पुत्र भण्डारी आसारामजी के होने का पता चलता है। अस्तु। अनुमान किया जाता है कि सोजत के भण्डारी पृथ्वीराजजी, भण्डारी गंगारामजी के भतीजे थे।

भंडारी पृथ्वीराजजी—भण्डारी अमेमलजी के तीसरे पुत्र भण्डारी पृथ्वीराजजी थे। इन्होंने भी जोधपुर राज्य के लिये कई बहादुरी के कार्य्य किये। इनका निवास सोजत में था। संवत् १८६४ में इनको सोजत का सरवादारा नामक गांव जागीर में मिला। जब जोधपुर पर जयपुर और बीकानेर की फौज़ों ने संवत् १८६४ में चढ़ाई की। उस समय मीरखां को मिलाकर सिंघवी इन्द्रराजजी, कुचामन ठाकुर शिवनाथसिंहजी तथा भण्डारी पृथ्वीराजजी ने जयपुर पर चढ़ाई की थी। जब जयपुर विजय के समाचार जोधपुर पहुँचे थे, उस समय महाराजा मानसिंहजी ने भण्डारी पृथ्वीराजजी के नाम एक रुक्का भेजा था कि :-

> भंडारी पृथ्वाराज दिसे सुप्रसाद बांचजो, तथा श्रीजीरा इकबाल सु बंदगी तू आछी पोंहतो, जस बंदगीरो आयोः हाल सुदी जेपुर वाला अठा सुं कूंच मोरचा उठाय कियोः अबे थारी मारग में हलकारां री सावधानी राख आछी रीत समाधानरी तजवीज करेः
>
> संवत् १८६४ रा भादवा सुदी १४

संवत् १८६५ के फाल्गुन में भण्डारी पृथ्वीराजजी फलोदी खाली कराने के लिये भेजे गये। उमरकोट के युद्ध में सिंघवी गुलराजजी के साथ आप भी भेजे गये थे। संवत् १८७९ में आपको खरवाण (भाद्राजण) नामक गांव जागीरी में मिला। कहा जाता है कि एक समय मीरखां ने सोजत को लूटने के इरादे से हमला कर दिया। कारण कि उस समय सोजत भींवराजोत आदि सिंघवियों का निवास स्थान था। ऐसे समय मीरखां के पगड़ीबंद भाई भण्डारी पृथ्वीराजजी ने मीरखां से कहा कि "खुशी की बात है कि आज तुम सोजत लूटने आये हो। पहिले अपने दलबल समेत चलकर अपने भाई का घर लूटलो तथा फिर सारी सोजत का माल लूटना" मीरखां ने अपने पगड़ी बन्द भाई का घर लूटना उचित न समझा तथा वहाँ से कूँच किया। इस प्रकार सोजत लूटी जाने से बची। सोजत से आगे जाकर उसने सिरिमारी पर धावा मारा, जहाँ मुत्सुद्दियों की बहुत-सी छिपी हुई सम्पत्ति उसके हाथ लगी। संवत् १८८० की जेठ सुदी ९ के दिन भण्डारी पृथ्वीराजजी जालोर के समीप युद्ध करते हुए मारे गये। इनकी धर्मपत्नी इनके साथ सती हुईं। जालोर के हरजी नामक स्थान में और सोजत में इनकी छतरी बनी हुई है। इनके पुत्र फौजमलजी हुए।

भंडारी फौजमलजी—आप संवत् १८७७ में जालौर के हाकिम हुए। पिताजी के गुजरने पर उनके नाम की जागीरी के गांव खारिया, नींवरा तथा चवण्डिया इनके नाम पर हुए। संवत् १८८३ में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पुत्र सुलहराजजी के पास अपने पितामह के नामकी जागीरी के दो गांव रहे। इनको कड़ा, मोती, दुशाला आदि जोधपुर दरबार से इनायत हुआ इनका स्वर्गवास संवत् १८९० के लगभग छोटी वय में ही हो गया। भण्डारी सुलहराजजी के पुत्र जसराजजी ने कोई कार्य्य नहीं किया तथा मौज से अपने पूर्वजों की सम्पत्ति उड़ाई। इनके पुत्र अमृतराजजी ५० सालों तक जोधपुर स्टेट में थानेदार रहे। संवत् १९४८ में इनका शरीरान्त हुआ। आपके रूपराजजी, सोहनराजजी तथा चैनराजजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें बड़े दो भाई निसंतान गुजरे। इस समय भंडारी चैनराजजी की अवस्था ४८ साल की है तथा ये मेसर्स जी. रघुनाथमल बैंकर्स हैदराबाद (दक्षिण) की दुकान पर रहते हैं। इनके भी कोई पुत्र नहीं है।

भण्डारी सम्पतराजजी करणराजजी, सोजत

ऊपर भण्डारी लूणाजी का परिचय दे चुके हैं। इनके परिवार में भंडारी धनराजजी हुए जिनकी संतानें धनराजोत भंडारी कहलाती हैं।

भंडारी धनराजजी महाराजा सूरसिंहजी के समय में राज्य के उच्च पद पर कार्य्य करते थे। ये सोजत में आकर रहने लगे। इनकी सातवी पीढ़ी में दयालदासजी के पुत्र विट्ठलदासजी प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए। भंडारी विट्ठलदासजी ने तोपखाने के प्रमुख नियुक्त होकर गोड़वाड़ प्रान्त के घाणेराव नामक नगर को फतह किया और मारवाड़ राज्य में मिलाया। मेड़ते के पास गींगोली की घाटी की लड़ाई में भी इन्होंने बहादुरी के काम किये। इससे प्रसन्न होकर दरबार ने संवत् १९५२ की वैसाख वदी २ को इन्हें वाली और सोजत में वेरे तथा खेत इनायत किये, ये वेरे ओर खेत अभी भी इनकी संतानों के कबजे में हैं। जिस समय जोधपुर निवासी सेठ राजारामजी गढ़िया ने श्री शत्रुंजयजी का संघ निकाला था, उसमें राज की तरफ से इंतजाम के लिये भण्डारी विट्ठलदासजी भेजे गये थे। उस समय शत्रुंजय तीर्थ पर इन्होंने कोशिश कर एक पेढ़ी कायम करवाई जो दूसरे नाम से इस समय मौजूद है। सम्वत् १८८२ में आप गुजरे।

भण्डारी विट्ठलदासजी के गोविन्ददासजी और गिरधरदासजी नामक २ पुत्र हुए। गोविन्ददासजी तोफखाने के अफसर थे, आपके अमीदासजी और देवीदासजी नामक २ पुत्र हुए। भण्डारी गिरधरदासजी पचपद्रा के हाकिम थे। भण्डारी देवीदासजी का छोटी उम्र में ही अन्तकाल हो गया था। इनके बड़े भ्राता भण्डारी

अमीदासजी ६ साल की उम्र से ही अंधे थे। अंधे होते हुए भी आपकी पहिचान शक्ति तीव्र थी। कई प्रकार के सिक्कों की परीक्षा आप कर लेते थे आपके और आपके पुत्रों के नाम हुकूमतें रहीं। आपका अंत काल संवत् १९२९ में हुआ। भण्डारी अमीदासजी के शंकरदासजी मिश्रीदासजी हरिदासजी और गणेशदासजी नामक ४ पुत्र हुए, इनमें से शंकरदासजी, भण्डारी देवीदासजी के नाम पर दत्तक दिये गये। भण्डारी शंकरदासजी बाली के हाकिम थे। इनके समय तक इस परिवार के पास तोपखाने की आफिसरी का काम रहा। आपकी याददाश्त तेज थी। इनका अंतकाल संवत् १९८२ में हुआ आपके छोटे भाइयों ने राज की नौकरियाँ की। आपके पुत्र भण्डारी जोरावरमलजी का अन्तकाल संवत् १९९० में हुआ। इनके पुत्र सम्पतराजजी का जन्म संवत् १९४५ में हुआ।

भण्डारी सम्पतराजजी आरम्भ में सिरोही स्टेट के फोरस्ट में असिस्टेण्ट इन्स्पेक्टर थे। बाद आपने जोधपुर में वकीली परीक्षा पास कर सोजत में प्रेक्टिस शुरू की तथा इस धन्धे में हजारों रुपये आपने पैदा किये। आपने अपने पिताजी के नाम से जैनशंकर बाग नामक बगीचा बनाया। आपके हंसराजजी और धनपतराजजी नामक २ पुत्र हैं। भण्डारी हंसराजजी ने इन्दौर में बी० ए० तक का अध्ययन किया है तथा इस समय एल० एल० बी का अध्ययन कर रहे हैं।

भंडारी करणराजजी—इसी परिवार में भण्डारी करणराजजी हैं। आपने बहुत छोटी उमर में ही सोजत कोर्ट के वकीलों में अच्छी तरक्की की। सोजत के ओसवाल समाज में जो ६ सालों से धड़े बन्दियाँ थीं, उसे कोशिश करके करणराजजी ने एक करवा दिया। इस सफलता के उपलक्ष्य में ज्युडिशियल सुपरिण्टेण्डेण्ट सोजत ने इन्हें सार्टिफ़िकेट दिया।

फरवरी १९३० में सोजत के अस्पताल में बहुत बीमार एकत्रित हो गये, तब भण्डारी करणराजजी ने उदारता पूर्वक वर्तन आदि के द्वारा उनकी सहायता की। इसके उपलक्ष्य में प्रिन्सिपल मेडिकल ऑफिसर ने खुद भी धन्यवाद दिया तथा जोधपुर दरबार को लिखा, जिससे वाइस प्रेसीडेण्ट कौंसिल ने १४-३-३० के दिन सार्टिफिकेट भेज कर करणराजजी का उत्साह बढ़ाया। आप बड़े मिलनसार तथा उत्साही सज्जन हैं। इस समय आप सोजत कोर्ट में वकील का कार्य्य करते हैं।

श्री दुलीचन्दजी भंडारी, सादड़ी (गोडवाड़)

यह लूणावत भण्डारी परिवार सादड़ी (गोडवाड़) निवासी श्वे० जैन मन्दिरमार्गीय आम्नाय का मानने वाला है। भण्डारी फूलचन्दजी ने सादड़ी में ४० अठाई राणकपुरजी का मेला आदि कई कार्य्य कर धर्मध्यान में नाम पाया। १९६० में आप गुजरे। आपके पुत्र जसराजजी तथा सरदारमलजी आपके



श्री सम्पतराजजी भण्डारी वकील, सोजत.



श्री रूपराजजी भण्डारी वकील, जालोर.



सेठ संतोपचंदजी भण्डारी, कानपुर.



श्री प्रेमराजजी भण्डारी (मूथा) अहमदनगर.

सामने ही गुजर गये। भण्डारी जसराजजी के पुत्र दुलीचन्दजी तथा चन्दनमलजी और सरदारमलजी के पुत्र तेजमलजी हुए। इनमें चन्दनमलजी का स्वर्गवास हो गया है।

भण्डारी दुलीचन्दजी का जन्म संवत् १९२८ में हुआ। आप गोड़वाड़ के ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। सादड़ी की पंचायती में आप आगेवान व्यक्ति हैं। भण्डारी तेजमलजी तथा चंदनमलजी के पुत्र केसरीमलजी और पुखराजजी संवत् १९७८ में कोयम्बटूर गये, और वहाँ भागीदारी में जरी का व्यापार शुरू किया। इधर ६ सालों से आप लोग तेजपाल पुखराज भण्डारी के नाम से कोयम्बटूर में अपना घरू काम करते हैं। दुलीचन्दजी के पुत्र घीसूलालजी हैं।

सेठ गुलाबचन्द मुकनमल भंडारी, चांदूर बाजार

लूणावत भण्डारी तेजमलजी लगभग १०० साल पहिले जोधपुर से चांदूर बाजार (सी० पी०) आये तथा यहाँ व्यापार शुरू किया। इनके पुत्र तखतमलजी का परिवार कलकत्ते में, बख्तावरमलजी का हैदराबाद में तथा गुलाबचन्दजी का यहाँ चान्दूर में है। भण्डारी गुलाबचन्दजी ९५ साल की लम्बी उमर पाकर संवत् १९८०-में गुजरे। आप यहाँ के ओसवाल समाज में अच्छे इज्जतदार व्यक्ति थे। इनके सोनमलजी, कुंदनमलजी, जवाहरमलजी, मुकनमलजी, लखमीचन्दजी तथा पूरनमलजी नामक ६ पुत्र हुए। इनमें मुकनमलजी मौजूद हैं। आप सेठ रामलाल मूलचन्द के यहाँ मुनीमात करते हैं। आपके पुत्र मेघराजजी व केसरीमलजी हैं। इनमें केसरीमलजी, जवाहरमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं। सोनमलजी के पुत्र बस्तीमलजी तथा चाँदमलजी बदनूर में सेठ प्रतापमल लखमीचन्द गोठी के यहाँ सर्विस करते हैं तथा पूरनमलजी के पुत्र छोगामलजी मुगलचावड़ी में रहते हैं।

भंडारी अनोपसिंहोत, मेसदासोत, परतापमलोत और कुशलचंदोत

हम ऊपर लिख चुके हैं कि भण्डारी नराजी की पांचवी पीढ़ी में भण्डारी गोराजी हुए। इनके लूणाजी सादूलजी, सुलतानजी और जेवंतजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें लूणाजी की संतानें लूणावत भण्डारी कहलाई। जिनका परिचय ऊपर दिया जा चुका है। लूणाजी के छोटे भ्राता सादूलजी के बड़े पुत्र भींवराजजी थे। इनके ७ पुत्र हुए जिनमें चौथे पुत्र कल्याणदासजी थे।

भण्डारी कल्याणदासजी के अनोपसीजी, मेसदासजी, सिरदारमलजी, परतापचंदजी तथा कुशलचंदजी हुए। इन बंधुओं ने भी मारवाड़ राज्य की बहुत सी सेवाएँ कीं। इनकी संतानें क्रमशः अनोपसिंहोत, मेसदासोत, परतापमलोत और कुशलचंदोत कहलाई, जिनका परिचय नीचे दिया जा रहा है।

भंडारी उमरावचन्दजी माणकचन्दजी (अनोपसिंहोत) जोधपुर

यह हम पहले लिख ही चुके हैं कि भण्डारी कल्याणदासजी के सब पुत्रों से अलग १ शाखाएँ निकली। यह शाखा भी उनके प्रथम पुत्र अनोपसिंहजी से निकली है। अनोपसिंहजी बड़े वीर पुरुष थे। आपको पैरों में सोना प्राप्त था। आपके पुत्र सरूपचन्दजी मेड़ता के पास होने वाली लड़ाई में काम आये। इनके पुत्र हरकचन्दजी हुकुमत तथा कोतवाली में सर्विस करते रहे। हरकचन्दजी के पश्चात् आपके पुत्र करमचन्दजी और करमचन्दजी के पुत्र धरमचन्दजी हुए आप राणी देवड़ीजी के कामदार रहे। आपका स्वर्गवास हो गया है। आपके रूपचन्दजी, लालचन्दजी, मानचन्दजी और माणिकचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। इनसे से माणकचन्दजी का स्वर्गवास हो गया है।

भंडारी रूपचन्दजी—आप करीब ४० वर्ष तक महकमा हवाले में इन्स्पेक्टर रहे। इस समय आप रिटायर हैं। आपके उमरावचन्दजी, सरदारचन्दजी और सुमेरचन्दजी नामक तीन पुत्र हैं। बड़े पुत्र उमरावचन्दजी ने अपनी कार्य्य तत्परता से अच्छी उन्नति की। आप मेड़ता, जोधपुर, फलोदी, बाड़मेर तथा बिलाड़े के हाकिम रहे। इसके पश्चात् आप सिटी कोतवाल और मालानी डिस्ट्रीक्ट के ज्युडिशियल सुपरे-टेण्डेण्ट बनाए गए। इस पद पर आप वर्तमान में भी कार्य करते हैं। आपको कई प्रशंसा पत्र भी मिले हैं। आपके भाई सरदारचन्दजी बी० ए० हैं। आप प्रारम्भ में रेल्वे में नौकर हुए। पश्चात् पुलिस इंस्पेक्टर बने। फिर कई स्थानों पर हाकिम रहे और आजकल जालौर में हाकिम हैं। आपके भाई सुमेरचन्दजी बी० ए० एल० एल० बी० आजकल जोधपुर में प्रेक्टिस करते हैं।

भंडारी लालचन्दजी—आप करीब ३० तक हवाले में नौकरी करते रहे। आजकल आप रिटायर हैं। आपके भाई मानचन्दजी हवाले में इन्स्पेक्टर रहे। आप दोनों भाइयों के कोई संतान नहीं है।

भंडारी माणकचन्दजी—करीब ३२ साल से जोधपुर में वकालत कर रहे हैं। आप यहाँ के प्रतिष्ठित और फर्स्टक्लास वकील माने जाते हैं। आपके चार पुत्र हैं। बड़े मुकुनचन्दजी सोजत में हवाला दारोगा हैं शेष प्रतापचन्दजी, किशोरचन्दजी और भोपालचन्दजी अभी पढ़ रहे हैं।

भंडारी बादरमलजी किशनमलजी (परतापमलोत) जोधपुर

भण्डारी कल्याणदासजी के चौथे पुत्र परतापमलजी हुए, इनके वंशज प्रतापमलोत भण्डारी कहलाते हैं। इस परिवार में भण्डारी रूघलालजी, सम्वत् १८९२ में फतेपोल के चौकी नवीस थे। संवत् १८९३ में इनको गाँव नीबाड़ी कला जागीरी में मिली जो १९०० में जप्त हो गई, ये हस्तरेखा के बड़े जानकार थे।

भंडारी बहादुरमलजी—आपभण्डारी प्रतापमलजी की पांचवीं पीढ़ी में हुए, अपका जन्म १८७२ में हुआ महाराजा तखतसिंहजी के समय में इनका बड़ा प्रभाव और जोर था, इनके सम्बन्ध में उस समय कहावत थी कि......"बारे नाचे बादरियो-मां, नाचे नाजरियो"। ये सम्वत् १८९६ से १९४२ तक जोधपुर स्टेट में हाकिम सायर, खासा खजाना, हुजूर दफ्तर, अन्न कोठार के दारोगा और साल्ट विभाग के सुपरिंटेण्डेण्ट पद पर रहे। संवत् १९३२ में साल्ट सुपरिंटेन्डेण्ट पद पर सर्विस करते समय ३ हजार की रेख का हरडाणी नामक गाँव आपको जागीरी में मिला। आपको महाराजा तखतसिंह ने प्रसन्नता के कई रुक्के दिये थे। आप कट्टर तेरापंथी आम्नाय के मानने वाले महानुभाव थे। आपको १८८३ में नागोर का गाँव सिलारिया जागीरी में मिला। आपका संवत् १९४२ में स्वर्गवास हुआ।

भंडारी किशनमलजी—आप भण्डारी बादरमलजी के पुत्र थे। आप खजाने वाले भण्डारीजी के नाम से मशहूर थे।आप पहले हाकिम, अन्न कोठार, और बागर आफ़िसर रहे। पश्चात् संवत् १९४२ से १५ सालों तक खासा खजाना के आफ़िसर रहे। आप से जोधपुर दरबार तथा महाराज प्रतापसिंहजी बहुत खुश रहे। इनकी जमाखर्च की जानकारी प्रशंसनीय थी। कविता करने का आपको बड़ा प्रेम था, आपने बहुत रुपया खर्च कर मारवाड़ की पुरानी तवारीख का संग्रह किया तथा गद्य और पद्य में मारवाड़ के ताजिमी सरदारों की तवारीख लिखी। आपको पालकी और सिरोपाव प्राप्त हुआ था। आपका स्वर्गवास संवत् १९६२ में हुआ। आपके पुत्र माधोमलजी का छत से गिर जाने से अन्तकाल हो गया। आपके नाम पर आपके छोटे भ्राता मानमलजी दत्तक लिये गये, इनका भी स्वर्गवास हो गया अतएव इनके नाम पर भण्डारी जोरावरमलजी के पुत्र जबरमलजी दत्तक लिये गये। इस समय भण्डारी जवरमलजी विद्यमान हैं। इनके नाम पर अपने पूर्वजों के गाँव सिलारिया की जागीरी बहाल रही। भण्डारी जवरमलजी ने इस वर्ष बी० ए० एल एल० बी की डिगरी हासिल की। आपको जोधपुर दरबार से "कैफियत और जी कारा" प्राप्त है।

भण्डारी अखेराजजी प्रयागराजजी (मेसदासोत) जोधपुर

मेसदासोत भंडारी भी भंडारियों की एक शाखा है जिसकी उत्पत्ति कल्याणदासजी के दूसरे पुत्र तथा भंडारी कुशलचंदजी के बड़े भ्राता मेसदासजी से हुई है। जब महाराजा अभयसिंहजी ने इनके बड़े भ्राता भण्डारी अनोपसिंहजी को चूक करवाया उस समय ये अपने भाइयों के पुत्रों को लेकर देहली चले गये थे। वहाँ बादशाह ने इन्हें खानसामाई का काम दिया। कुछ समय पश्चात् नागोर के राजा रामसिंहजी ने इन्हें अपने पास बुलवा लिया एवम् संवत् १७७२ में अपना दीवान नियुक्त किया। जब संवत् १८०८ में

महाराजा बखतसिंहजी नागोर से जोधपुर के महाराजा होकर आये तब आप भी साथ थे। यहाँ आप महाराजा के तन दीवान रहे। आपका संवत् १८२६ में स्वर्गवास हो गया। आपके नरसिंहदासजी, मनोहरदासजी, और माधोसिंहजी नामक तीन पुत्र हुए।

भंडारी नरसिंहदासजी—बड़े वीर पुरुष थे। आपको संवत् १८०८ में डीडवाना की लड़ाई में जाना पड़ा। वहाँ जाकर आपने सफलता पूर्वक डीडवाना पर अधिकार कर लिया। इसके बाद आप जसवंतपुरा के हाकिम रहे। इस समय भी यहाँ बहुत सी लड़ाइयाँ हुई। इन्हीं में से एक लड़ाई में इनके छोटे भ्राता मनोहरदासजी काम आये। आगर के पास अभी भी इनकी छत्री बनी हुई है। नरसिंह दासजी के कामों से प्रसन्न होकर महाराजा साहब ने आपको नागोर परगने का सिंगरावत तथा डीडवाने परगने का अमरपुरा नामक गाँव जागीर में बख्शा। आपसंवत् १८१९ में जोधपुर के दीवान रहे। आपने डीडवाने में कालीजी का मन्दिर तथा कुँआ बनवाया। आपके गोकुलदासजी एवम् शिवदासजी नामक दो पुत्र हुए। नरसिंहदासजी के दूसरे भाई माधौसिंहजी अजमेर के सूबे रहे। संवत १८२५ में ये महाराजा की ओर से उदयपुर के तत्कालीन महाराणा अरसीजी की सहायतार्थ और २ मुसुद्दियों के साथ सेना लेकर गये थे। इसी सहायता के उपलक्ष्य में महाराणा ने गौड़वाड़ का परगना महाराजा जोधपुर को दिया था। संवत् १८३९ में ये मेड़ता के पास मराठों के साथ होनेवाले युद्ध में झुंझार हुए। मालकोट के पास इनकी छत्री बनी हुई है।

भण्डारी गोकुलदासजी नागोर, मेड़ता और डीडवाना के हाकिम रहे। आपके कोई संतान न हुई। भण्डारी शिवदासजी बहुत समय तक डीडवाना, सांभर और पचपदरा के हाकिम रहे। नमक के पांच दरीबे आपके आधीन थे। आपका स्वर्गवास हो गया। आपके अचलदासजी तथा इसरदासजी नामक दो पुत्र थे। अचलदासजी अपने पिताजी के पश्चात् नमक दरीबों के हाकिम रहे। इसके पश्चात् ये सांभर, नागोर, मेड़ता, पाली और फलोदी की हुकूमत पर भी रहे। आपका स्वर्गवास संवत् १९२८ में हुआ। आपके गणेशदासजी, सामदासजी और सांवतराजजी नामक तीन पुत्र हुए। अचलदासजी के भाई भण्डारी इसरदासजी भी सांभर पचपदरा, डीडवाना इत्यादि स्थानों पर नमक के दरीबा के हाकिम रहे। आपका स्वर्गवास संवत् १९२९ में हुआ। आपके रामदासजी तथा सिरेराजजी नामक दो पुत्र हुए।

भंडारी अचलदासजी का परिवार—भण्डारी गणेशदासजी जोधपुर से उदयपुर चले गये एवम् वहाँ भीलवाड़ा के गिरोही आफीसर रहे। इसके बाद आप कई स्थानों पर हाकिम रहे। संवत् १९५९ में जोधपुर में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके जसवंतरायजी और फौजराजी नामक दो पुत्र हुए। भण्डारी गणेशदास जी के दोनों भाइयों का निःसंतान ही स्वर्गवास हो गया उनमें से सांवलरामजी फलोदी के हाकिम रहे थे।

भण्डारी गणेशदासजी के पुत्र जसवंतराजजी स्टेट सर्विस में रहे। इसी प्रकार इनके भाई फौजराजजी भी कस्टम दरोगा रहे। आप दोनों का स्वर्गवास होगया है। जसवंतरायजी के फतेचंदजी नामक एक पुत्र हुए। ये हवाले में काम करते रहे। इनके पुत्र हंसराजजी का स्वर्गवास निःसंतानावस्था ही में हो गया।

भंडारी ईसरदासजी का परिवार—भण्डारी ईसरदासजी के बड़े पुत्र रामदासजी थे। ये मेवाड़ के परगनों के हाकिम थे। इनके दौलतरामजी, मुकुन्दरामजी और अभयराजजी नामक तीन पुत्र हुए। आप लोग उदयपुर स्टेट में सर्विस करते रहे। भण्डारी मुकुन्दरामजी वहाँ के कुँभलगढ़, राजनगर, खमनोर, उरड़ा, बागोर आदि जिलों के हाकिम रहे। आप तीनों भाइयों का स्वर्गवास हो गया है। तीसरे भाई अभयराजजी के पुत्र चन्दनमलजी इस समय उदयपुर में सर्विस करते हैं।

रामदासजी के भाई सिरेराजजी भी उदयपुर में हाकिम रहे। इनका स्वर्गवास केसरियाजी में हुआ। आपके अखेराजजी, छगनराजजी और प्रयागराजजी नामक तीन पुत्र हुए। भण्डारी अखेराजजी जोधपुर स्टेट के जालोर नामक स्थान में सायर दरोगा रहे। इस समय आपके कोई संतान नहीं है। आप बड़े सज्जन एवं इतिहास प्रेमी महानुभाव हैं। आपके छोटे भ्राता छगनलालजी पहले पुलिस में रहे। पश्चात् आप क्रमशः पर्बतसर, जोधपुर जसवंतपुरा, और बाड़मेर के हाकिम रहे। इसके बाद आप ज्यूडिशियल सुपरिंटेंडेन्ट भी रहे। आपका निःसंतनावस्था ही में स्वर्गवास हो गया है। आपके छोटे भ्राता भण्डारी प्रयाग-राजजी जोधपुर-चीफ़-कोर्ट में वकालात कर रहे हैं। आप जोधपुर के प्रसिद्ध सार्वजनिक कार्य्यकर्ता हैं। आपके उगमराजजी और कृष्णराजजी नामक दो पुत्र हैं।

भण्डारी हमवंतचंदजी फौजचंदजी का परिवार, जोधपुर

यह परिवार कुशलचन्दोत परिवार की एक शाखा है। कुशलचन्दजी के सात पुत्रों में से बड़े माणकचंदजी थे। इनके रतनचंदजी और रूपचंदजी नामक दो पुत्र हुए। भण्डारी रतनचंदजी का जन्म संवत् १७९६ के लगभग हुआ था। ये बड़े बहादुर और रण-कुशल थे। संवत् १८५० में महाराजा भीमसिंहजी की ओर से डीडवाने पर चढ़ाई कर उस पर अधिकार करने के उपलक्ष्य में इन्हें एक ख़ास रुक्का एवम् दौलतपुरे में २०० बीघा ज़मीन मय कुँए के जागीर में मिली थी। इनका स्वर्गवास संवत् १८६१ में हुआ। आपके लालचंदजी, हीराचंदजी और श्रीचंदजी नामक तीन पुत्र हुए।

भंडारी लालचंदजी—आपवीर प्रकृति के पुरुष थे। महाराजा मानसिंहजी के राजत्वकाल में आपको जालोर से लेकर आबू तक के डाकुओं को सर करने का कार्य मिला। इसे आपने बड़ी उत्तमता से किया।

यहाँ तक कि डाकू लोग आपके नाम से कांपने लगे। आपने पाली, जालोर, भीनमाल आदि परगनों की हुकूमत की। सम्वत् १९०९ में आपका छणेन्द्र (आबू) नामक स्थान पर स्वर्गवास हो गया। आपके छोटे भाई निःसन्तान स्वर्गवासी हुए।

भंडारी श्रीचंदजी—आप राजनीतिज्ञ और कार्य्य-कुशल व्यक्ति थे। महाराजा मानसिंहजी ने पहले आपको नागोर की हुकूमत पर भेजा। इसके पश्चात् आपने क्रमशः आबू वकीली, दीवानी और फौजदारी अदालत की जजी, फौज मुसाहबी आदि कई बड़े पदों पर सफलता पूर्वक कार्य किया। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर महाराजा साहब ने आपको हजार रुपये सालाना की जागीर के गांव, तथा खास रुक्के इनायत किये। इसके अतिरिक्त आपको पालकी, छड़ी और मोहर की इज़्ज़त भी प्राप्त थी। आप मूर्ति पूजक सज्जन थे। आपने जोधपुर से तीन चार मील की दूरी पर अपनी कुलदेवी आसापुरी का, तथा मंडोयर में हनुमानजी का मन्दिर बनवाया था। आपका स्वर्गवास संवत् १९१५ में हो गया। आपके बख्तावरमलजी, सुमेरचन्दजी, हणवंतचंदजी और बलवंतचंदजी नामक चार पुत्र हुए।

भण्डारी बख्तावरमलजी ने अदालत दीवानी का काम किया। आप साधु प्रकृति के सज्जन थे। आपको पालकी, सिरोपाव का सम्मान प्राप्त हुआ था। आपका स्वर्गवास संवत् १९५२ में हो गया। आपके दौलतचंदजी मंगलचंदजी और बिरदीचंदजी नामक तीन पुत्र थे। पहले दौलतचंदजी मारवाड़ के कई जिलों में सायर दरोगा रहे। दूसरे मंगलचंदजी सोजत, परबतसर आदि परगनों पर हाकिम रहे। आप दोनों का स्वर्गवास हो गया।

भण्डारी सुमेरचंदजी गदर के समय में दरबार की ओर से आऊवे ठिकाने पर फौज लेकर गये थे। ये कई स्थानों के हाकिम रहे। आपके पुत्र सरूपचंदजी नावा और पाली के हाकिम रहे। आपका स्वर्गवास हो गया है। आपके पुत्र गौरीचंदजी इस समय घरू व्यापार करते हैं। इनके पुत्र शमशेरचंदजी बी० ए० पास हैं।

भंडारी हणवंतचंदजी—आपका जन्म संवत् १८९२ में हुआ। महाराजा तख़्तसिंहजी की आज्ञानुसार आपकी फारसी की पढ़ाई महाराज कुँमार जसवंतसिंहजी के साथ हुई। सर्व प्रथम संवत् १९११ में आप पाली की हुकूमत पर भेजे गये। गदर के समय में आपने कई युरोपियनों की जानें बचाईं। इसके बाद आपने क्रमशः अदालत दीवानी, नागौर और मारोठ की हुकूमत वकालात रेसीडेंसी, वकालात आबू, अदालत अपील आदि स्थानों पर कार्य किया,। आप बड़े प्रतिभाशील व्यक्ति थे। आप मेम्बर कौंसिल भी रहे। उस समय आपको ४००) मासिक वेतन मिलता था। आपको महाराजा साहब ने पालखी, सिरोपाव, छड़ी और मोहर प्रदान कर सम्मानित किया था। आप निर्भयचित्त और सच्चे व्यक्ति



स्व० हणुंवतचन्दजी भंडारी, जोधपुर.



स्व० किशनचन्दजी भंडारी, जोधपुर.



स्व० फौजचन्दजी भंडारी, जोधपुर.

थे। रियासतों सम्बन्धी पुरानी जानकारी भी आपको अच्छी थी। आप करीब १२ वर्ष तक ओसवाल जाति की संघ सभा के प्रेसीडेण्ट रहे। आपने अपने जीवन में अपने पुत्रों के पौत्रों तक को गोद खिलाया था। आपका स्वर्गवास संवत् १९७१ में हो गया। आपके फौजचंदजी, जोधचंदजी, केवलचंदजी, करन चंदजी और गंगारामजी नामक पाँच पुत्र थे।

भण्डारी फौजचन्दजी—आपका जन्म संवत् १९१२ का था। आप जब २३ साल के थे तब आप पचपदरा के हाकिम बनाये गये। इसके बाद आपने क्रमशः अदालत अपील के जज, आबू वकील, सिविल जज आदि कई ऊँचे २ पदों पर कार्य्य किया। वृद्धावस्था हो जाने के कारण आपने स्टेट सर्विस से अवसर ग्रहण कर लिया था। दरबार साहब ने आपको भी पालकी, सिरोपाव तथा मोहर बक्श कर सम्मानित किया था। आपका स्थानीय ओसवाल समाज में अच्छा प्रभाव था। आप ओसवाल संघ सभा के प्रेसीडेण्ट थे। सरदार स्कूल के खुलवाने में आपने बहुत परिश्रम किया। आप कई वर्ष तक उसकी मैनेजिंग कमेटी के प्रेसीडेण्ट रहे। आपका स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् आपके स्मारक स्वरूप सरदार हाईस्कूल के सेंटर हाल में आपका चित्र लगाया गया है। आपके खेमचंदजी और बजरंगचंदजी नामक दो पुत्र हैं। खेमचंदजी को दरबार की ओर से पालकी, सिरोपाव, तथा मोहर का सम्मान प्राप्त है। आपके पुत्र गोवर्द्धनचंदजी जोधपुर के नायब हाकिम हैं।

भण्डारी केवलचंदजी अपनी २३ वर्ष की उम्र में बतौर हाकिम के पचपदरा भेजे गये। इसके बाद आप नावा के हाकिम रहे। करीब १६ वर्ष तक आपने अपने पिताजी के स्थान पर अपील अदालत का काम किया। आप म्युनिसिपॉलेटी के मेम्बर भी रहे। आपका जाति में अच्छा सम्मान है। आपके भाई करनचंदजी इस समय जवाहरातखाने की कमेटी के मेम्बर हैं।

भंडारी बलवंतचंदजी—आप पहले पहल एरिनपुर के वकील बनाकर भेजे गये। इसके बाद आप हाकिम मोराठ हो गये। संवत् १९४५ में आप रेसिडेन्सी वकील बनाए गये। महाराजा जसवंतसिंहजी आपकी हाजिर जबाबी से खुश थे। आपका स्वर्गवास हो गया है। आपके सालमचंदजी, जसरूपजी, और रघुवीरचंदजी नामक तीन पुत्र हुए। भण्डारी सालमचंदजी ने मारोठ, परबतसर, डीडवाना, जालोर आदि २ परगनों की हुकुमतें कीं। आपका स्वर्गवास संवत् १९८५ में हो गया।

भण्डारी लक्ष्मीचंदजी और केशरीचन्दजी का परिवार (कुशलचन्दोत)

भण्डारी कुशलचन्दजी के तीसरे पुत्र भण्डारी साहबचन्दजी के पौत्र (भण्डारी कस्तूरचन्दजी के पुत्र) भण्डारी लक्ष्मीचन्दजी और केशरीचन्दजी हुए। भण्डारी लक्ष्मीचन्दजी ने जोधपुर दरबार में अच्छा

सम्मान पाया। महाराजा मानसिंहजी ने आपको पहले फौजबख्शी तथा पीछे दीवानगी के महत्व पूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया। आपकी सेवाओं के उपलक्ष्य में आपको दो हजार रुपयों की जागिरी भी प्राप्त हुई। संवत् १८९८ तक आप दीवानगी के पद पर रहे, वहाँ से रिटायर होकर आपने अपना शेष जीवन काशी में बिताया। वहीं आपका देहान्त हुआ। आपके भण्डारी शिवचन्दजी, कानचन्दजी और धरमचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। भण्डारी शिवचन्दजी महाराजा मानसिंहजी के समय में कई महकमों के अफसर रहे। मानसिंहजी के पश्चात् महाराजा तखतसिंहजी ने संवत् १९०२ में आपको दीवानगी का पद और पाँच हजार की जागिर बख्शी। संवत् १९०५ में आपका स्वर्गवास हो गया। इनके दीपचन्दजी और मोकमचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। भण्डारी दीपचन्दजी ने महाराज जसवन्तसिंहजी के समय में कई स्थानों पर हुकूमतें कीं। आप स्टेट की ओर से ए० जी० जी० के आफिस में वकील भी रहे थे। संवत् १९३२ में दरबार ने आपको पैरों में सोना और २५००) की आय का एक गाँव भी जागीर में बख्शा था। संवत् १९३५ में सरदारों के विद्रोह के समय आप महाराजा जसवन्तसिंहजी के साथ थे। आपको कई अंग्रेज अफसरों से अच्छे सर्टिफिकेट प्राप्त हुए थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९५० में हुआ। आपके भण्डारी जीतचन्दजी कल्याणचन्दजी, शिवदानचन्दजी और वल्लभचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। भण्डारी शिवदानचन्दजी का जन्म संवत् १९४५ में हुआ। आप पहले प्रोवेशनरी हाकिम और उसके पश्चात् महकमा खास के कान्फ़ेडेन्शियल महकमें में रहे। उसके पश्चात् आप कई स्थानों पर हाकिम रहे। सन् १९३१ में आप रिटायर कर दिये गये। आपके छोटे भाई वल्लभचन्दजी पाली, सांचोर आदि स्थानों पर हाकिम रहे। सन् १९३० में इनका स्वर्गवास हो गया। शिवदानचन्दजी के पुत्र श्यामचन्दजी और वल्लभचन्दजी के पुत्र सोनचन्दजी इस समय विद्याध्ययन कर रहे हैं।

भण्डारी केशरीचन्दजी का परिवार—दीवान भण्डारी लक्ष्मीचन्दजी के छोटे भाई केशरीचन्दजी के मालमचन्दजी, मिलापचन्दजी नामक पुत्र हुए। मालमचन्दजी जोधपुर स्टेट में हाकिम रहे। इनके परिवार में इस समय इनके पौत्र भण्डारी जगदेवचन्दजी, शिवदेवचन्दजी तथा प्रपौत्र धनरूपचन्दजी विद्यमान हैं।

भण्डारी मिलापचन्दजी तामील व पट्टदर्शन के महकमे में काम करते थे। आपके पुत्र भण्डारी रिधैचन्दजी का जन्म संवत् १८८६ में हुआ। आप स्टेट की ओर से संवत् १९१३ में पूरनपुरा के और १९१४ में उदयपुर वकील बनाकर भेजे गये। आपके कामों की तत्कालीन पोलीटिकल एजण्टों ने बहुत प्रशंसा की। इसके पश्चात् आप मारोठ और पचपदरा के हाकिम नियुक्त हुए। संवत् १९६२ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके दो पुत्र हुए। भण्डारी रघुनाथचन्दजी और भण्डारी अम्बाचन्दजी—भण्डारी रघुनाथचन्दजी १९५५ के फागुन में उदयपुर रेसिडेन्सी के वकील बनाकर भेजे गये। संवत् १९५७ में आपके शरीर का अन्त हुआ।

भण्डारी अम्बाचन्दजी का जन्म संवत् १९४३ में हुआ। आप सन् १९०६ में पचपदरा के हाकिम बनाये गये। इसके पश्चात् आप शेरगढ़, सांचोर, वाली, जेतारण आदि स्थानों पर हाकिम रहे। सन् १९३० में घाणेराव के नाबालिगी ठिकाने के जुडिशियल ऑफिसर और गार्जियन मुकर्रर हुए। सन् १९३२ में आप आफिशिएटेड जूडिशियल सुपरिटेण्डेण्ट, और जोधपुर के सिटी कोतवाल बनाए गये। इस समय आप साम्भर में जुडिशियल सुपरिटेण्डेण्ट का काम कर रहे हैं। आपके पुत्र नारायणचन्दजी और प्रभुचन्दजी पढ़ते हैं।

भण्डारी हेमचन्दजी—भण्डारी केशरीसिंहजी के सबसे छोटे पुत्र हेमचन्दजी थे। स्टेट की ओर से आप १९१३—१४ में उदयपुर में और सन् १९२७ से ३२ तक ए०जी० जी के आफिस में वकील रहे। आपके नाम पर भण्डारी कानचन्दजी के पुत्र मानचन्दजी दत्तक आये। भण्डारी मानचन्दजी रियासत में भिन्न भिन्न स्थानों पर काम करते रहे। आपका स्वर्गवास संवत् १९८२ में हुआ। आपके नाम पर आपके छोटे भाई बलदेवचन्दजी दत्तक आये। भण्डारी बलदेवचंदजी उदयपुर के वकील और राजपूत हितकारिणी सभा के सेक्रेटरी रहे। आपका स्वर्गवास सं० १९७९ में हुआ। आपके नाम पर भण्डारी रंगराजचंदजी दत्तक आये। आपका जन्म १९४९ में हुआ। आप सन् १९२१ में मारवाड़ सोलर्जस बोर्ड के अ० सेक्रेटरी हुए तथा १९२३ से राजपूत हितकारिणी सभा के सेक्रेटरी हैं। आपके रामनाथचन्दजी और जगन्नाथचन्दजी नामक दो पुत्र हैं।

भंडारी मनमोहनचन्दजी मगरूपचन्दजी (कुशलचन्दोत) जोधपुर

भण्डारी कुशलचन्दजी के पाँचवे पुत्र खूबचन्दजी थे। इनके पुत्र मेनचन्दजी व्यवसाय करते थे। इनके भागचंदजी, दईचंदजी और उम्मेदचंदजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें दईचंदजी सम्वत् १९४४ में तथा शेष दो भाई १९४३ में स्वर्गवासी हुए। भंडारी भागचन्दजी के पुत्र सबलचंदजी और मनोहरचंदजी जोधपुर स्टेट में हाकिम रहे। भण्डारी दईचन्दजी के पुत्र बादलचंदजी थे। इनका संवत् १९२७ में स्वर्गवास हुआ। आपके मेघचन्दजी, रणजीतचंदजी, शुभचंदजी, बुधचन्दजी और परमचंदजी नामक ५ पुत्र हुए। इनमें सबलचंदजी के नाम पर रणजीतचंदजी और किशनचंदजी के नाम पर परमचन्दजी दत्तक गये। इन भाइयों में शुभचंदजी सायर थानेदार, बुधचन्दजी हवाला इन्स्पेक्टर और पदमचन्दजी पोलिस इन्सपेक्टर थे।

इस समय इस परिवार में भण्डारी शुभचन्दजी के पुत्र मनमोहनचन्दजी, भण्डारी बुधचन्दजी के पुत्र उगमचंदजी, भण्डारी पदमचन्दजी के पुत्र मगरूपचन्दजी और रणजीतमलजी के पुत्र दिलमोहनचन्दजी

तथा बदनमलजी हैं। भण्डारी मनमोहनचन्दजी का जन्म १९४३ में हुआ आप २८ सालों से जोधपुर रेलवे में सर्विस करते हैं और इस समय बाड़मेर के स्टेशन मास्टर हैं। इनके पुत्र सुजानचन्दजी देहली में डेरी फॉर्मिंग का काम सीखते हैं। भण्डारी उगमचन्दजी २० सालों तक रेलवे में असिस्टेंट केशियर रहे। भण्डारी मगरूपचन्दजी का जन्म १९५७ में हुआ, इन्होंने १९७८ में एल० एल० बी की डिगरी हासिल की। १९८२ आप हाकिम हुए। तथा सोजत विलाड़ा जोधपुर रहते हुए इस समय मेड़ते में हैं। भण्डारी दिलमोहनचन्दजी इस समय पोलिस अकाउंटेंट हैं, तथा बदनचन्दजी बी० ए० जोधपुर म्युनिसिपल इंस्पेक्टर ऑफ सेनिटेशन हैं।

सेठ नंदलालजी भण्डारी का परिवार इन्दौर

इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवास स्थान नाडोल (मारवाड़) का है। सब से प्रथम चौहान वंशीय राजपूत यहीं से जैन बनकर ओसवाल भण्डारी के नाम से प्रसिद्ध हुए थे। आपके पूर्व पुरुष करीब २६० वर्ष पूर्व व्यापार के निमित्त सीतामऊ गये, जहाँ पर यह खान दान करीब ६० वर्ष तक रहे। इसके पश्चात् आप लोग सीतामऊ से होलकर राज्यान्तर्गत रामपुरा नामक नगर में आकर बसे, जहाँ पर आज भी आपकी हवेलियाँ बनी हुई है। इस परिवार में सेठ चरणजी बड़े नामाङ्कित हुए। सेठ चरणजी भण्डारी रामपुरा के प्रमुख व्यापारियों में से थे। उस समय आपका व्यापार खूब चमका हुआ था। परोपकार की तरफ भी आपकी काफ़ी दृष्टि थी। आपने जनता की सुविधा के लिये एक धर्मशाला तथा श्मशान में एक विश्राम गृह भी बनाया था जो आज भी अच्छी स्थिति में विद्यमान है। आपने केदारेश्वर में एक चौंतरा भी बनवाया था। इस प्रकार के कई सार्वजनिक कार्य्यों में आपने हाथ बटाया। आपके पश्चात् सेठ पन्नालालजी तक के वंशजों की स्थिति साधारण रही। सेठ पन्नालालजी ७५ वर्ष पूर्व रामपुरा से इन्दौर जा बसे। आप लोगों का परिवार तभी से इन्दौर में ही निवास कर रहा है।

सेठ पन्नालालजी ने इन्दौर में जाकर अफीम और कपड़े का व्यापार करना आरम्भ किया। इसमें आपको अच्छी सफलता प्राप्त हुई। आपके नंदलालजी नामक एक पुत्र हुए।

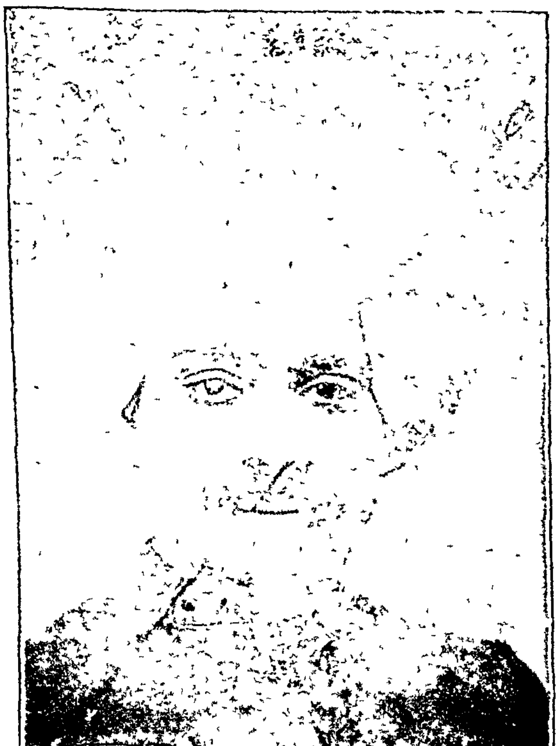
सेठ नंदलालजी हाथों से इस फर्म की बहुत ही उन्नति हुई। आपने अपने जीवन में काफ़ी सम्पत्ति, सम्मान तथा प्रतिष्ठा को प्राप्त किया। आप धीरे २ इन्दौर के धनिक व्यापारियों में गिने जाने लगे। इतना ही नहीं इन्दौर दरबार में भी आपका समुचित सम्मान था। आप कई वर्षों तक इन्दौर-म्युनिसिपैलिटी के कार्पोरेटर तथा ऑनरेरी मजिस्ट्रेट के सम्मान से भी सम्मानित किये गये थे। सारे मध्यभारत के ओसवाल समाज में आपकी बहुत प्रतिष्ठा थी।



स्व० सेठ नन्दलालजी भंडारी, इन्दौर.



सेठ कन्हैयालालजी भंडारी, इन्दौर.



श्रीयुत मोतीलालजी भंडारी, इन्दौर.



श्रीयुत सुगनमलजी भंडारी, इन्दौर.

रामपुरा की जनता भी आपका बहुत आदर करती थी। आप बड़े सज्जन, मिलनसार, दानी तथा परोपकारी सज्जन थे। आपके धार्मिक विचार भी बढ़े चढ़े बढ़े थे। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम श्री कन्हैयालालजी, सुगनमलजी एवं मोतीलालजी हैं। इस प्रकार यशस्वी जीवन बिताते हुए अपने पुत्रों के लिए धन-जन सम्पन्न घर को छोड़ कर आप परलोक सिधारे।

श्री० कन्हैयालालजी भण्डारी

श्री कन्हैयालालजी भण्डारी उन व्यक्तियों में से एक हैं जिन्होंने अपनी बुद्धिमानी, व्यापार—कुशलता और तीव्र व्यवस्थापिका—शक्ति से अपने व्यवसाय को तरक्की पर पहुँचाया। जिन लोगों को आपके संसर्ग में रहने का अवसर प्राप्त हुआ है वे आपकी जबरदस्त व्यवस्थापिका—शक्ति से भली-भाँति परिचित हैं। इन्दौर का भण्डारी मिल आपकी इस शक्ति का बड़ा ही ज्वलन्त उदाहरण है। यह मिल जिस समय स्थापित हुआ था उस समय सभी दूर की व्यापारिक स्थिति बड़ी डावांडोल हो रही थी और लोगों को बिलकुल आशा न थी कि यह इतनी सफलता से आगे जाकर चल निकलेगा। मगर भण्डारी कन्हैयालालजी की कार्य्य-शीलता तथा व्यापारिक विवेक ने इस मिल को इतनी उन्नति पर पहुँचाया कि आज व्यवस्था और सफलता की दृष्टि से यह मिल इन्दौर की सर्वप्रधान मिलों में से एक गिना जाता है और भण्डारी कन्हैयालालजी सारे भारतवर्ष के ओसवाल समाज में पहले या दूसरे नम्बर के इण्डस्ट्रियालिस्ट (Industrialist) माने जाते हैं।

श्री कन्हैयालालजी का जन्म सम्वत् १९४५ में हुआ। आप प्रारम्भ से ही व्यापारिक लाइन में बड़े प्रतिभाशाली रहे। आपने सन् १९१९ में 'स्टेट मिल्स लिमिटेड इन्दौर' को २० वर्ष के लिये ठेके पर लिया। आपने इस मिल की कम-से-कम खर्चे में अच्छी-से-अच्छी व्यवस्था की। साथ ही इस मिल के कपड़े को दूर २ के प्रान्तों में खपाने के लिये कानपुर व अमृतसर में कपड़े की दुकानें भी स्थापित की। आपने करीब छः लाख रुपये की नई मशीनरी खरीद कर इसमें रङ्गाई वगैरह का काम भी शुरू कर एक नया जीवन ला दिया। इस समय भी आप इस मिल की व्यवस्था कर रहे हैं।

सन् १९२२ में आपने अपने पिताजी के नाम से इन्दौर में ही तीस लाख की पूँजी से "नन्दलाल भण्डारी मिल्स लिमिटेड" नामक एक और मिल खोला। जिस समय यह मिल खोला गया था उस समय की भारत की व्यापारिक स्थिति पर हम लोग प्रथम ही लिख चुके हैं। मगर मिल लाइन में तथा मशीनरी के सम्बन्ध में आपकी विशेष योग्यता, व्यवस्थापिका-शक्ति और बुद्धिमानी के परिणाम स्वरूप इसमें आपको बहुत सफलता प्राप्त हुई। फलतः वर्तमान में यह मिल बहुत ही सफलता पूर्वक

चल रहा है। इस मिल के खुलने के ६ वर्ष वाद अर्थात् सन् १६२८ में आपने मूलजी हरिदास मिल्स कल्याण को ७२५०००) में खरीदकर उसकी सारी मशीनरी इस मिल में सम्मिलित कर दी जिससे इस मिल में एक नया जीवन आ गया और तेजी के साथ इस मिल में वहुत अधिक मात्रा में माल निकलने लगा। इस समय यह मिल रात और दिन चौबीसों घंटा चलता रहता है।

इसी प्रकार आपने सन् १९२८ में इन्दौर में, एक वहुत वड़े स्केल पर पीतल का कारखाना भी स्थापित किया। यह कारखाना सन् १९३१ से विजली द्वारा चलाया जाने लगा। वर्तमान में इस पीतल के कारखाने से दूर २ के प्रान्तों में पीतल आदि के वर्तन भेजे जाते हैं। इसी कारखाने में मशीनरी के बहुत से पुरजे भी ढाले जाते हैं।

श्री कन्हैयालालजी की सार्वजनिक सेवा

श्री कन्हैयालालजी एक वड़े योग्य व्यापारी तथा कुशल व्यवस्थापक होने के साथ ही साथ बड़े सुधरे हुए नवीन विचारों के शिक्षित सज्जन हैं। आपने मिलों में काम करने वाले व्यक्तियों तथा साधारण जनता की सुविधा के लिये अनेक उपयोगी संस्थाएँ खोल कर अपनी उदारता का परिचय दिया है। पाठकों की जानकारी के लिये आपकी ओर के वनाई गई कुछ संस्थाओं का हम नीचे उल्लेख करते हैं।

सन् १९२२ में आपने अपने पिताजी के नाम से एक विद्यालय स्थापित किया। इस विद्यालय के लिये आपने २५०००) की लागत का एक मकान वनवा कर इसके सुपुर्द किया। सन् १९३० से आपने खजूरी वाजार में ६००००) की लागत से मकान तैयार करवा कर उसमें नन्दलाल भण्डारी हाईस्कूल की स्थापना की जो आज भी वहुत सफलता पूर्वक चल रहा है। यहाँ पर प्रति वर्ष सैकड़ों विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते हैं। इस हॉयस्कूल को चलाने में आपकी ओर से करीब १८०००) प्रति वर्ष खर्च किया जाता है।

इसी प्रकार मिल में काम करने वालों की सुविधा के लिये आपकी ओर से एक दवाखाना, शुद्धपानी का एक कुंआ, भोजन करने का हाल आदि २ कई मकान वनाये गये हैं जिनसे प्रतिदिन सैकड़ों स्त्री-पुरुष लाभ उठाते हैं।

इसके अतिरिक्त स्नेहलतागंज इन्दौर के अन्तर्गत आपकी ओर से एक विशाल प्रसूतिगृह इसी वर्ष स्थापित किया गया है जिसके भवन २२५००) में मोल लिये गये हैं। इस प्रसूतिगृह के अन्तर्गत मजदूर और सर्व साधारण जनता के लिये सव प्रकार की सुविधाओं की व्यवस्था रक्खी गई है। मई सन् १९३४ से यह प्रसूतिगृह सर्व साधारण की सेवा करने के लिये खुल गया है। इसमें सभी प्रकार के अनुभवी

और योग्य डाक्टर रक्खे गये हैं। यह गृह बहुत विशाल है तथा अत्यन्त सुव्यवस्थित ढंग से चलाया जा रहा है। इसका वार्षिक खर्च १८०००) के करीब पड़ता है जो सब आप ही की तरफ से दिया जाता है।

इसी प्रकार आपकी जन्मभूमि रामपुरा में भी श्री नन्दलाल भण्डारी बोर्डिंग हाउस नामक बोर्डिंग भी आप ही के द्वारा खोला गया जिसमें बहुत से विद्यार्थी रहते तथा विद्याध्ययन करते हैं। इस बोर्डिंग की व्यवस्था के लिये आपकी ओर से ११०) प्रति मास वर्तमान में दिया जा रहा है। आप उक्त बोर्डिंग हाउस के लिये रामपुरा नगर के बड़े बाजार में एक बहुत बड़ा २५०००) की लागत का स्वतन्त्र मकान भी बना रहे हैं जिसका काम बहुत तेजी के साथ चल रहा है। इसके अतिरिक्त महाराजा तुकोजी-राव हॉस्पिटल में अपने पूज्य पिताजी के नाम पर नन्दलाल भण्डारी फेमिली वार्ड, रामपुरा में श्मशान-विश्रान्तिगृह, ओसवाल भवन रामपुरा में एक अखाड़ा आदि २ कई सार्वजनिक भवन व संस्थाएँ आपकी ओर से चल रही हैं। कहने का मतलब यह है कि आपने क्या व्यापार, क्या परोपकार, क्या जाति सेवा तथा क्या समाज सुधार सब में अपनी प्रतिभा का पूर्ण परिचय दिया है। आपकी ओर से कई गरीब विद्यार्थियों को स्कॉलरशिप आदि भी दी जाती है। प्रायः सभी सार्वजनिक और परोपकार के कार्य्यों में हजारों रुपये आपकी ओर से सहायतार्थ दिये जाते हैं।

आपका जाति प्रेम भी अत्यन्त सराहनीय है। ओसवाल जाति के नवयुवकों के प्रति आपके हृदय में बहुत गहरा स्थान है। सैकड़ों ओसवाल नवयुवक आपकी वजह से जीविका उपार्जित कर रहे हैं। जाति सुधार के सम्बन्ध में भी आपके विचार बड़े मँजे हुए हैं। आप सामाजिक सुधारों को व्यवहारिक रूप देने के बहुत ज़बरदस्त हामी हैं। विवाह, शादी, ओसर मोसर इत्यादि सामाजिक कुरीतियों की वेदी पर जो हजारों लाखों रुपया खर्च होता है उसको तोड़ कर आपने उस पैसे को विद्या प्रचार, समाज सुधार इत्यादि उपयोगी कार्य्यों के अन्दर खुले दिल से खर्च किया है। आप कई समाज संस्थाओंके प्रेसिडेण्ट तथा पदाधिकारी रहे हैं। आपके द्वारा स्थापित की हुई सार्वजनिक संस्थाएँ ओसवाल जाति के अन्दर काफी तौर से प्रकाशमान हैं।

आपका ओसवाल जाति के अंतर्गत भी काफी सम्मान है। आप सन् १९३३ के नासिक जिला ओसवाल सम्मेलन के सभापति भी चुने गये थे। इस पद को आपने बड़ी योग्यता से सम्पादित किया।

श्री कन्हैयालालजी भण्डारी इन्दौर नगर के एक अच्छे प्रतिष्ठित सज्जन हैं। आपका यहाँ की जनता में और इन्दौर दरबार में भी काफी सम्मान है। इन्दौर राज्य के शिक्षित प्रमुख धनिक नागरिकों में आपका स्थान ऊँचा है। आपको सन् १९२८ में होलकर सरकार की ओर से इन्दौर म्युनिसिपल कमेटी में नामजद किया गया जिसके तीन वर्ष तक आप कार्पोरेटर रहे। इन तीन वर्षों में आपने अपने

काम को बड़ी योग्यता से सम्हाला। आप इन तीन वर्षों में म्युनिसीपैलिटी की ओर से इन्दौर म्युनिसिपल इम्प्रूव्हमेंट ट्रस्ट वोर्ड के ट्रस्टी भी चुने गये थे। आप सरकार की ओर से सन् १९२८ में तीसरे दर्जे के आनरेरी मजिस्ट्रेट बनाये गये। आपने इस पद पर लगातार चार वर्षों तक काम किया। आपकी कार्य्य-कुशलता और योग्यता से प्रसन्न होकर होलकर गवर्नमेंट ने आपको सन् १९३२ से द्वितीय दर्जे के आनरेरी मजिस्ट्रेट के सम्माननीय पद से विभूषित किया। आज भी आप इस पद पर हैं और बड़ी योग्यता से सब कार्य्य सञ्चालित करते हैं। आप सन् १९३३ में "इन्दौर स्टेट मिनरल सरव्हे" के मेम्बर बनाये गये तथा आज तक उसके मेम्बर हैं।

इसके अतिरिक्त आप कोआपरेटिव्ह सोसाइटी के प्रेसिडेण्ट, राज गुरुकुल की गव्हर्निंग बॉडी के मेम्बर, तथा इसी प्रकार की कई सभाओं के व संस्थाओं के आप सभापति वगैरह हैं। तात्पर्य्य यह है कि आप बहुत बड़े बुद्धिमान, व्यापार कुशल, सुधारक और ओसवाल समाज के चमकते हुए व्यक्ति हैं।

आपके छोटे भ्राता श्री मोतीलालजी एवं सुगनमलजी भी आपके साथ व्यापार, मिल की व्यवस्था तथा अन्य कार्य्यों में सहायता देते हैं। आप दोनों भ्राता भी बड़े मिलनसार सज्जन हैं।

यह परिवार रामपुरा तथा इन्दौर ही नहीं वरन् सारे मध्यभारत की ओसवाल समाज में अग्रगण्य तथा ओसवाल समाज में दिखता हुआ परिवार है।

सेठ बालमुकुन्द चन्दनमल (भंडारी) मूथा, सतारा

इस प्रतिष्ठित परिवार का मूल निवास स्थान पीपाड़ है। जोधपुर स्टेट में ऊँचे ओहदों पर कार्य्य करने से इस कुटुम्ब को मूथा पदवी का सम्मान मिला। पीपाड़ से मूथा गुमानचन्दजी के दूसरे पुत्र मोखमदासजी लगभग १०० साल पूर्व अहमदनगर होते हुए सतारा आए, तथा आपने कपड़े का व्यवसाय आरम्भ किया।

सेठ हजारीमलजी मूथा—आप मूथा मोखमदासजी के पुत्र थे। आपका जन्म सम्वत् १८७४ में हुआ। आपने कपड़ा, सूत और व्याज के व्यवसाय में अच्छी सम्पत्ति कमाई। धार्मिक कामों में भी आपकी रुचि थी। सम्वत् १९४७ की प्रथम भादवा वदी १२ को आपका स्वर्गवास हुआ। आपके बालमुकुन्दजी और चन्दनमलजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ बालमुकुन्दजी मूथा—आपका जन्म संवत् १९१४ की फाल्गुन वदी में हुआ। जैन शास्त्रों में आपकी समझ ऊँची थी। केवल २० साल की अल्पायु में आपकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास हुआ। ऐसी स्थिति में भी आपने द्वितीय विवाह करना अस्वीकार कर अपने दृढ़ मनोबल और उच्च आदर्श का परिचय दिया। आप



स्व० सेठ बालमुकुन्दजी मूथा, सतारा.



सेठ चन्दनमलजी मूथा, सतारा.



रायसाहब सेठ मोतीलालजी मूथा, सतारा.

सतारा म्युनिसिपैलेटी के मेम्बर और महाराष्ट्र प्रान्तीय जैन कान्फ्रेंस के सभापति निर्वाचित हुए थे। भारत के स्थानकवासी जैन समाज ने अखिल भारतीय स्था० जैन कान्फ्रेंस के अजमेर वाले तीसरे अधिवेशन का सभापति चुनकर आपको सम्मानित किया था। कहने का तत्पर्य्य यह कि आप महाराष्ट्र प्रान्त की जनता में तथा भारत के जैन जगत में प्रतिभावान पुरुष थे। छत्रपति शिवाजी के वंशज सतारा महाराज एवं अन्य बड़े २ रईस जागीरदारों से आप मनी लेण्डिङ्ग विजिनेस करते थे। संवत् १९७६ की जेठ वदी ११ को आप स्वर्गवासी हुए। आपके सम्मान स्वरूप सतारा के बाज़ार बंद रखे गये थे।

सेठ चन्दनमलजी मूथा—आपका जन्म संवत् १९२१ की सावण सुदी ५ को हुआ। आप फर्म का काम बड़ी तत्परता से संचालित करते हैं। आप सतारा के व्यापारिक समाज में प्रतिष्ठा सम्पन्न व्यक्ति माने जाते हैं। सन् १९१४ के दुष्काल में सस्ता अनाज वितरित करके आपने गरीब जनता की इमदाद की थी। पूना के स्थानक वासी वोर्डिंग के स्थापन में आपने १० हज़ार रुपयों की सहायता दी थी। धार्मिक कामों की ओर आपका अच्छा लक्ष्य है। इस समय आपके कोई पुत्र नहीं हैं।

राय साहिब सेठ मोतीलालजी मूथा—आपका जन्म संवत् १९४७ के दूसरे भादवा वदी ३ को हुआ। महाराष्ट्र प्रान्त के प्रधान धनिक व्यापारियों में आपकी फर्म की गणना तो थी ही, पर उस सम्मान की सेठ मोतीलालजी मूथा के सार्वजनिक कामों में सहयोग लेने से अत्यधिक वृद्धि हुई। सन् १९१४ में सेठ मोतीलालजी मूथा म्युनिसिपल कौंसिलर चुने गये और लगातार २ चुनाव तक मेम्बर रहे। सन् १९१० से १९२३ तक आप सतारा एडवर्ड पांजरापोल के प्रसिडेंट और चैयरमैन चुने गये। इस समय १५ सालों से सतारा तालुका लोकल बोर्ड के वाइस प्रेसिडेंट रहे एवं वर्त्तमान में प्रेसिडेट हैं। ६ सालों से आप डिस्ट्रिक्ट लोकल बोर्ड के मेम्बर हैं। इसी तरह जेल कमेटीडिस्पेंसरी आदि संस्थाओं में भी आप सहयोग देते हैं।

राय साहेब सेठ मोतीलालजी मूथा अपने पिताजी की तरह ही धार्मिक और सामाजिक क्षेत्र में ख्यातिवान व्यक्ति हैं। आप की गणना सतारा जिले के प्रधान व्यक्तियों में है। जैन जनता में आप आदरणीय व्यक्ति हैं। आप महाराष्ट्र ओसवाल कान्फ्रेंस के अहमदनगर वाले अधिवेशन के सभापति रहे थे। १२ सालों से स्था० कान्फ्रेंस का अधिवेशन बन्द हो गया था, उसे कई सज्जनों के साथ परिश्रम करके आपने पुनः मलकापुर में कराया। उक्त अधिवेशन में आप स्वयंसेवक-दल के सेनापति थे। इस अधिवेशन के समय से आप स्था० जैन कान्फ्रेंस के रेसिडेंटल जनरल सेक्रेटरी हैं। आपके गुणों एवं कार्य्यों से प्रसन्न होकर भारत सरकार ने सन् १९३१ में आपको रायसाहिब की पदवी से सम्मानित किया है। आप कई सालों से सतारा बेंच के ऑनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। हर एक सार्वजनिक व धार्मिक कामों में आप उदारता पूर्वक

सहायताएं देते हैं। आपकी फर्म बम्बई में बालमुकुन्द चन्दनमल मूथा के नाम से आढ़त का और सोला-पुरमें चन्दनमल मोतीलाल मूथा के नाम से कपड़े का व्यापार करती है। सतारा में मोखमदास हजारीमल के नाम से इस फ़र्म पर बैंकिंग एवं मनीलेंडिङ्ग व्यापार होता है। रायसाहेब सेठ मोतीलालजी के पुत्र झंकारमलजी की उम्र ५ साल की है।

भण्डारी रूपराजजी, (निम्बावत) जालोर

भण्डारी नराजी के छठे पुत्र निम्बाजी हुए। इनके वंश में आगे चल कर नथमलजी हुए। इनके पुत्र ईसरदासजी और करमसीजी संवत् १७७४ में जालोर आये। भण्डारी करमसीजी के पुत्र सरदारमलजी (सर्दाणजी) और जोगीदासजी हुए। भण्डारी जोगीदासजी थिरात (पालनपुर) के पास युद्ध करते हुए झुँझार हुए। इनके पुत्र दुरगदासजी के साथ इनकी धर्मपत्नी १७०६ की चेत वदी ९ के दिन सती हुईं, तब से इस परिवार में चेत वदी ९ की पूजा होती है। दुरगादासजी के पुत्र मानमलजी की पत्नी भी उनके साथ सती हुईं।

भण्डारी सरदारमलजी के पौत्र प्रेमचन्दजी संवत् १८६४ में भीनमाल की लड़ाई में झुँझार हुए। वहाँ तालाब पर उनका चौंतरा बना है। झुँझार होने से इनके पुत्रों को संवत् १९४० तक ३००) सालियाना मिलते रहे। भण्डारी प्रेमचन्दजी के किशनचन्दजी, मयाचन्दजी और जालमचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। उनमें किशनचंदजी के परिवार में इस समय चम्पालालजी विजयराजजी और सजनराजजी हैं। भण्डारी जालमचन्दजी के पुत्र ज्ञानमलजी और भभूतमलजी हुए। ये दोनों भ्राता जालोर किले और कोतवाली में मुलाजिम थे। ज्ञानमलजी के पौत्र छगनराजजी हैं। इनके पुत्र सम्पतराजजी ने मेट्रिक तक शिक्षा पाई है। भण्डारी भभूतमलजी संवत् १९५७ में स्वर्गवासी हुए।

भण्डारी भभूतमलजी के पुत्र दौलतमलजी, मुकुन्दचन्दजी तथा रूपचन्दजी विद्यमान हैं। दौलतमलजी ने बहुत समय तक जोधपुर में सर्विस की। भण्डारी रूपराजजी का जन्म संवत् १९५४ में हुआ। आपने सन् १९१९ में वकालात पास की तथा तब से ये जालोर में प्रेक्टिस करते हैं। आप यहाँ के प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपने रादेलाल तालाब में दुरुस्ती कराई, बड़ी पोल के दरवाजे में बारिश में मवेशियों के लिये राह ठीक कराई तथा सरदार हाई स्कूल में कमरा बनवाया। दौलतमलजी के पुत्र निहालचन्दजी जोधपुर में सर्विस करते हैं। निहालचन्दजी ने मेट्रिक तक शिक्षा पाई है और किशोरचन्दजी पढ़ते हैं।

भीनमाल का भण्डारी खानदान (निम्बावत)

भण्डारी दुरगादासजी के पुत्र भण्डारी जेठमलजी, मानमलजी और सरदारमलजी का परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। भण्डारी सरदारमलजी १८८३ में भीनमाल के हाकिम हुए और ४ साल बाद तीनों भाई सांचोर, जालोर, तथा भीनमाल के हाकिम हुए तथा बहुत वर्षों तक इस पद पर काम करते रहे। इन भाइयों को १८९० में दरबारने सिरोपाव मोतियों की कण्ठी, कड़ा, दुशाला, खासा घोड़ा आदि के सन्मान बख्शे। मानमलजी ने सिरोही इलाके के बागी देवड़ा को परास्त कर गिरफ्तार किया। मानमलजी के पुत्र सुल्तानमलजी जालोर के कोतवाल थे। इन्होंने २२ परगनों से रेख की रकम वसूल करने का काम किया। सं० १९१८ में आप नागोर की तरफ के परगनों के बागी आदमियों को दबाने के लिये गये। इस तरह कई ओहदों पर इस परिवार के व्यक्तियों ने काम किया। इस कुटुम्ब में इस समय भण्डारी सलहराजजी, जसवन्तराजजी, नथमलजी तथा दानमलजी विद्यमान हैं। सलहराजजी के पुत्र मनोहरमलजी किशोरमलजी तथा नथमलजी के पुत्र हस्तीमलजी सुकनमलजी जोधपुर तथा सिरोही स्टेट के कस्टम विभाग में सर्विस करते हैं। दानमलजी के पुत्र मुनीलालजी सांवतमलजी तथा पृथ्वीराजजी हैं। सांवतमलजी मिलनसार और सज्जन युवक हैं।

सेठ लालचन्द प्रेमराज (भंडारी) मूथा, अहमदनगर

लगभग ७५ साल पहिले भण्डारी मूथा पूनमचन्दजी पीपाड़ से अहमदनगर आये। आपने यहाँ नौकरी की। आपके पुत्र धनराजजी ने पूनमचन्द धनराज के नाम से कारबार शुरू किया। तथा व्यवसाय जमाकर सम्वत् १९५३ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र लालचन्दजी और आलमचन्दजी हुए। भण्डारी लालचन्दजी के हाथों से इस फ़र्म के व्यापार को अच्छी उन्नति मिली। आप कान्फ्रेंस और जाति के कामों में आगेवान रहते थे और जाति के सर पंच थे आपका अंत सं० १९६४ में हुआ। आपके आठ वर्ष बाद थालचन्दजी और आपके पुत्र प्रेमराजजी अलग २ हो गये। भण्डारी मूथा प्रेमराजजी सार्वजनिक कामों में अच्छा सहयोग लेते हैं। आपके यहाँ लालचन्द प्रेमराज के नाम से कपड़े का व्यापार होता है। आप स्थानकवासी आम्नाय के मानने वाले हैं।

वेद मेहता

वेद मेहता गौत्र की उत्पत्ति

कहा जाता है कि जब अट्ठारह जाति के राजपूत लोग आचार्य्य श्री रत्नप्रभुसूरिजी के उपदेशों से प्रभावित होकर ओसवाल हुए, उस समय उनमें राजा उपलदेव भी एक थे। ये पंवार जाति के राजपूत राजा थे। इन्हीं उपलदेव की संतान आचार्य्य श्री के द्वारा श्रेष्ठी गौत्र में दीक्षित हुई। इनकी कई पुश्तों के पश्चात् इसी वंश में संवत् १२०० के करीब दुल्हा नामक एक प्रसिद्ध व्यक्ति हुए। इनके पितामह वैद्य का काम करते थे। ऐसी किम्वदन्ती है कि एक बार चित्तौड़ के तत्कालीन महाराणा की रानी की आँखें खराब हो गईं। उस समय बहुत से व्यक्ति इलाज करने के लिये आये, मगर सब निष्फल हुए। इसी समय दुल्हाजी भी मुनि श्री जिनदत्तसूरिजी के द्वारा प्राप्त दवाई को लेकर राज महल में गये और अपनी दवाई से महारानी के चक्षु ठीक कर दिये। यह देख महाराणा बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने दुल्हा को वेद की पदवी प्रदान की। इसी समय से इनका श्रेष्ठी गौत्र बदल कर वेद गौत्र हुआ। इसके पश्चात् इस परिवार के लोगों का राज्य में विशेष काम काज रहा। इसीसे इन्हें मेहता पदवी मिली। तभी से ये वेद मेहता कहलाते चले आ रहे हैं।*

वेद मेहता परिवार बीकानेर

कहना न होगा कि इस परिवार का इतिहास बड़ा गौरवमय और कीर्ति शाली रहा है। इस परिवार के महापुरुषों ने क्या राजनीति क्या समाजनीति और क्या युद्धनीति, सभी क्षेत्रों में ऐसे २ आश्चर्य जनक कार्य्य कर दिखाये हैं, जिससे किसी भी जाति का इतिहास उज्वल हो सकता है। इन सब बातों का परिचय पाठकों को समय २ और स्थान २ पर मिलने वाले परिचयों से प्राप्त हो जायगा।

संवत् १४५० के करीब की बात है मंडोवर नगर में राठोड़ वंशीय राव चूंडाजी राज्य करते थे। उस समय इस परिवार के पुरुष मेहता खींवसीजी राव चूंडाजी के दीवान थे। करीब २ इसी समय का जिक्र है कि राव चूंडाजी को मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा कुम्भाजी ने आक्रमण करके मण्डोवर से बेदखली कर दिया था। इसी समय मेहता खींवसीजी ने बड़ी बहादुरी और बुद्धिमानी से युद्ध कर अपनी कारगुजारी एवम् होशियारी के द्वारा फिर से मंडोवर नगर पर अपने स्वामी का अधिकार करवाया था।

* ऐसा भी कहा जाता है कि उपलदेव के पुत्र वेदाजी से वेद गौत्र की उत्पत्ति हुई।

संवत् १५१५ में जब कि राव जोधाजी ने अपने नाम से जोधपुर शहर बसाया था, उस समय भी इस खानदान वाले सज्जनों ने रियासत में दीवानगी जैसी ऊंची २ जगहों पर काम कर अपनी कार्यगुजारी का परिचय दिया था। इसके पश्चात् एक समय का प्रसंग है कि किसी कारणवश राव जोधाजी के बड़े राजकुमार बीकाजी अपने उत्तराधिकार के सारे स्वत्वों को छोड़ कर कतिपय स्नेही जनों को साथ ले, जोधपुर को छोड़कर एक नवीन राज्य की स्थापना करने के उद्देश से चल पड़े। इन स्नेही व्यक्तियों में कई लोगों के साथ इस परिवार के लाला लाखणसी (लालसीजी, लालोजी) भी थे। लाखनसीजी के साथ आपके दो भाई लोणाजी और जैतसीजी भी साथ आये थे, जिनका परिवार इस समय क्रमशः फलौदी और मारवाड़ के अन्य स्थानों में निवास कर रहा है।

वेदलाला लाखनसी—आप दीवान खींवसीजी की पांचवीं पुश्त में हुए। आपने राव बीकाजी को नवीन राज्य स्थापित करने में जो बहुमूल्य मदद पहुँचाई उसका जिक्र बीकानेर के इतिहास में भलीभांति किया गया है। जिस समय बीकानेर बसाया गया उस समय भी आपने इसके बसाने में पूरी २ कोशिश की थी। प्रथम २७ मोहल्लों में से १४ मोहल्ले आपके द्वारा बसाए गये। शेष बच्छराजजी मेहता के द्वारा बसे। उस समय बीकानेर राज्य में आप या मेहता बच्छराजजी दोनों ही व्यक्ति ऐसे थे जो राजा और प्रजा दोनों में बड़े सम्मानित समझे जाते थे। आप दोनों ही के द्वारा अपने २ बसाए ए मुहल्लों में कई नियम प्रचारित किये गये थे, जिनमें से कुछ आज भी सुचारुरूप से चल रहे हैं। मेहता लाखनसीजी के श्रीवन्तजी और श्रीवन्तजी के अमराजी एवम् सूरजमलजी नामक दो पुत्र हुए। अमराजी के पुत्र जीवनदासजी ने बीकानेर स्टेट में जीवनदेसर नामक एक गाँव आबाद किया। जीवनदासजी के पुत्र का नाम मेहता ठाकुरसीजी था।

मेहता ठाकुरसीजी—आप राजा रायसिंहजी के राजत्वकाल में रियासत बीकानेर के दीवान रहे। आपके समय में बहुत सी लड़ाइयाँ हुई। जिस समय राजा रायसिंहजी ने दक्षिण विजय किया उस समय मेहता ठाकुरसीजी उनके साथ थे। इस युद्ध में विजय प्राप्त करने के कारण बादशाह अकबर राजा रायसिंहजी से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने इन्हें ५२ परगने का एक पट्टा इनायत किया। इसी समय आपने मेहताजी की चाकरी पर खाविंदी फरमा कर एक तलवार और भटनेर नामक एक गाँव जागीर स्वरूप प्रदान किया, जिसे आजकल हनुमानगढ़ कहते हैं। साथ ही इस परगने का काम भी आपके सुपुर्द हुआ। आपके सांवलदासजी एवम् राजसीजी नामक दो पुत्र हुए। आप लोगों ने भी राज्य में ऊँचे पदों पर कार्य्य किया। आपके समय में ८, ९ गाँव की जागीर आपके अधिकार में थी।

मेहता सांवलदासजी के पश्चात् क्रमशः आसकरणजी, रामचन्द्रजी, दौलतरामजी, माणकचंदजी और घमंडसीजी हुए।

मेहता घमंडसीजी—आप महाराजा सूरतसिंहजी के राजत्व-काल में हुए। आप बड़े कारखाने एवम् श्रीजी के निज के खर्च के बन्दोबस्त के काम पर नियुक्त किये गये। इस कार्य्य को आपने बड़ी होशियारी और बुद्धिमानी के साथ किया। आपके दो पुत्र हुए जिनके नाम मेहता मूलचन्दजी और मेहता अबीरचन्दजी था।

मेहता मूलचन्दजी—आप मेहता घमंडसीजी के बड़े पुत्र थे। अपने पिताजी के स्वर्गवासी हो जाने पर आप उनके रिक्त स्थान पर नियुक्त हुए। सम्वत् १८७० में आप चूरू के सरदार के साथ होने वाले युद्ध में महाराजा के साथ गये थे। इस युद्ध में आपने अपनी बहादुरी एवम् वीरत्व का खासा परिचय दिया था। यहीं आप बरछी के द्वारा घायल हुए थे। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर तत्कालीन महाराजा साहब ने आपको बड़े कारखाने का काम भी सौंपा। इसी समय नौरङ्गदेसर नामक एक गाँव भी आपके गुजरान के लिये बक्षा गया। आपके स्वर्गवासी हो जाने पर तत्कालीन महाराजा रतनसिंहजी सम्वत् १९०५ में आपके मकान पर पधारे और मातम पुरसी की। आपके चार पुत्र थे, जिनके नाम क्रमशः मेहता अमोलकचन्दजी, मेहता हिन्दूमलजी, मेहता छोगमलजी और मेहता अनारसिंहजी थे।

मेहता अबीरचन्दजी—आप मेहता घमंडसीजी के दूसरे पुत्र थे। आप राज्य में होने वाली डकैतियों की देखभाल के काम पर नियुक्त हुए थे। यह काम उस समय बहुत ज्यादा खतरनाक था। आजकल की भांति व्यवस्था न होने पर भी आपने यह कार्य्य बहुत बुद्धिमानी एवम् होशियारी तथा वीरता से सम्पादित किया। इस काम को करते समय आपको कई बार डाकुओं का सामना करना पड़ा और उनसे युद्ध करना पड़े। इन युद्धों में आपको कई घाव भी लगे। कुछ समय के पश्चात् महाराजा ने आपको इस काम से हटाकर रियासत बीकानेर की ओर से देहली में वकील के स्थान पर भेजे। इस उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य्य को भी आपने बड़ी होशियारी और बुद्धिमानी से संचालित किया। आपके कार्य्यों से महाराजा एवम् रेसिडेण्ट दोनों ही सज्जन बड़े प्रसन्न रहे। संवत् १८८४ में देहली ही में डाकुओं के साथ होनेवाली लड़ाइयों में जो घाव लगे थे, उनके खुल जाने से आपका स्वर्गवास हो गया।

मेहता हिन्दूमलजी—आप मेहता मूलचन्द्रजी के द्वितीय पुत्र थे। इस परिवार में आप बड़े बुद्धिमान प्रतिभा सम्पन्न और मेधावी व्यक्ति हुए। आप सम्वत् १८८४ में रियासत की ओर से देहली वकालत पर भेजे गये। इसके पश्चात् आपके बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य्यों से प्रसन्न हो कर महाराजा साहब ने आपको अपना दीवान बनाया। धीरे २ आपको सिक्केदारी की मुहर भी प्रदान करदी गई याने राज्य का सारा

कार्य आपके सुपुर्द हो गया। संवत् १८८८ में मेहता हिन्दूमलजी बादशाह के पास देहली गये। वहाँ बादशाह को अपने कार्य्यों से खुश कर अपने स्वामी महाराजा रत्नसिंहजी के लिये आप नरेन्द्र शिरोमणि का सम्मानीय खिताब लाये। इससे खुश होकर महाराजा ने आपको 'महाराव' का खिताब प्रदान किया। तथा घर पधार कर मोतियों का हार इनायत किया।

जिस समय वहाँ के रेसिडेण्ट मि० सदरलैण्ड थे, उस समय काबुल और जोधपुर के हमले में महाराव हिन्दूमलजी ने कासीद व रसद भेजने का बहुत अच्छा इन्तजाम किया था। भारत सरकार भी आपका बहुत विश्वास करती थी। यहाँ तक कि जयपुर के तत्कालीन एजेण्ट जब स्वर्गवासी हो गये तब वहाँ का शासन भी आपकी राय से किया गया था। रियासत बीकानेर की ओर से सालाना २२ हजार रुपया भारत सरकार को फौज खर्च के लिबे देना पड़ते थे। आपने सरकार से कह सुन कर इस कर को माफ़ करवाया। आपके उचित प्रबन्ध के कारण सरकार ने बीकानेर में एजेण्ट रखना भी उचित नहीं समझा।

एक बार हनुमानगढ़ और भावलपुर की सरहद् का मामला बढ़ गया यहाँ तक कि काफ़ी तनाजा हो गया, उस समय आपने बड़ी बुद्धिमानी, खूबी एवम् मेहनत से इस मामले को निपटा दिया और जमीन का बटवांरा कर दिया। मौके की जमीन होने से इसमें बहुत से गाँव आबाद हो गये। ऐसा करने से राज्य की आमदनी में बहुत वृद्धि हो गई।

मि० कनिंघम आपके कार्य्यों से बड़े खुश रहा करते थे। एक बार वे आपको शिमला ले गये। वहाँ तत्कालीन वाइसराय मि० हार्डिंज से आपकी मुलाकात करवाई। इस बार शिमला दरबार में भारत सरकार ने आपको खिल्लत प्रदान की। इस समय के पत्र का सारांश नीचे दिया जा रहा है:—

"सन् १८४६ की ३ री मई को राईट आनरेबल गवरनर जनरल लार्ड हार्डिंज शिमला दरबार के वक्त मेहता महाराव हिन्दूमल दीवान बीकानेर से मिले और खिल्लत बक्षी। श्रीमान् ने उनके ओहदे और सचरित्र के मुताबिक इज्जत के साथ बर्ताव किया"।

संवत् १८९७ में जब कि महाराजा रतनसिंहजी और उदयपुर के तत्कालीन महाराणा सरदारसिंहजी श्री लक्ष्मीनाथजी के मन्दिर से दर्शन कर वापस आये तब गोठ अरोगने आपकी हवेली पर पधारे। इस समय दोनों दरबार ने एक २ कण्ठा महाराव हिन्दूमलजी को, मेहता मूलचन्दजी को और मेहता छोगमलजी को पहना कर सम्मानित किया। इसी अवसर पर महाराणा ने महाराजा से कहा कि हमारी उदयपुर रियासत की भी भोलावण महारावजी को दी जावे। यह सुन कर महाराजा साहब ने महाराव हिन्दूमलजी से कहा 'हिन्दूमल सुणे हे। इसके उत्तर में महारावजी ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया

कि "तावेदार जैसो बीकानेर की गद्दी को चाकर हे वैसो ही उदयपुर की गद्दी को भी चाकर है। खावन्द आ बात कांई फुरमाइजे है"।

महाराव हिन्दूमलजी का स्वर्गवास संवत् १९०४ में ४२ वर्ष की अवस्था में हो गया। आपके स्वर्गवास पर महाराजा साहब ने एक खास रुक्का भेज कर आपकी मृत्यु पर अफ़सोस जाहिर किया। साथ ही आपके पुत्रों के प्रति सद्भावना प्रदर्शित की। आपके स्वर्गवास के एक साल के पश्चात् आपके पिता मेहता मूलचन्दजी का भी स्वर्गवास हो गया। महारावजी के स्वर्गवास के पश्चात् उनके क्रियाकर्म एवम् ब्राह्मण भोजन का सारा खर्च महाराजा साहब ने अपने पास से किया। आपके तीन पुत्र थे। जिनके नाम क्रमशः महाराव हरिसिंहजी, राव गुमानसिंहजी और राव जसवन्तसिंहजी थे। महारावजी को सं० १९०२ में नेठराणा नामक एक गाँव जागीर में मिला था। आपको समय २ पर यों तो बहुत से सम्मान मिले ही थे मगर ताज़ीम का सम्मान विशेष रूप से था।

सन् १९२८ में महाराजा गंगासिंहजी बहादुर ने महाराव हिन्दूमलजी के सरहद्दी मामले में विशेष दिलचस्पी लेने एवम उसका निपटारा करने के उपलक्ष्य में उनके नाम को चिरस्थाई करने के हेतुसे हिन्दूमल कोट नामक एक कोट स्थापित किया।

मेहता छोगमलजी

आप महाराव हिन्दूमलजी के छोटे भाई थे। आपका जन्म संवत् १८६९ में हुआ था। आप बड़े बुद्धिमान और अध्यवसायी व्यक्ति थे। आप महाराजा सूरतसिंह जी के समय में कई बरसों तक हाजिर बस्ती रहे। महाराजा सूरतसिंहजी के पश्चात् महाराजा रतनसिंहजी बीकानेर की गद्दी पर बैठे। आपकी भी आप पर बड़ी कृपा रही। मेहता जी ने इसी समय कर्नल सदरलैंड, सर हेनरी लारेंस, सर जार्ज लारेंस आदि कई अंग्रेज रेसिडेण्टों की मातहती में रेसिडेंसी वकालात का काम किया। इन लोगों ने आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर कई सार्टिफिकेट प्रदान किये थे।

संवत् १९०९ में जब कि सरहद् बंदी का काम हुआ उस समय आपने इस काम को बड़ी मिहनत और खूबी के साथ करवाया। साथ ही सरहद् पर होने वाले बहुत से झगड़ों का निपटारा करवाया। इससे कई आबाद शुदा गाँव रियासत बीकानेर में मिला लिये गये। इस काम में आपके बड़े भ्राता महारावजी का भी पूरा २ हाथ था। आपके इस कार्य्य से प्रसन्न होकर महाराजा सरदारसिंहजी ने अपने गले में से कंठा निकाल कर आपको इनायत किया।

संवत् १९१४ में जब कि गदर हुआ था उस समय आप बीकानेर की ओर से गदर में सरकार

अंग्रेज को मदद देने के लिये भेजे गये थे। वहाँ आपने बड़ा अच्छा काम किया। संवत् १९२९ में महाराजा सरदारसिंहजी का स्वर्गवास हो गया। इस अवसर पर राज्य गद्दी की मालिकी के सम्बन्ध में बड़ा विवाद हो गया। इस अवसर पर भी आपने महाराजा डूँगरसिंहजी को हर तरह की कोशिश करके गद्दी पर बिठाने में सहायता पहुँचाई। इस सहायता के उपलक्ष्य में महाराजा साहब ने आपके लिये एक खरीता जनरल जे० सी० ब्रुक एजन्ट टू दी गवरनर जनरल आबू के नाम भेजा था।

संवत् १९३२ में जब कि तत्कालीन प्रिंस ऑफ़ वेल्स भारत में आये थे उस समय तथा संवत् १९३४ में देहली दरबार के समय आप महाराजा की आज्ञा से देहली गये थे। वहाँ आपको खिलत बक्षकर आपका सम्मान बढ़ाया था।

संवत् १९३५ में बेरी और रामपुरे के झगड़ों को निपटाने के लिये आप जयपुर भेजे गये। वहाँ आपने अपने कागजों से सबूत देकर मामले को तय करवा दिया। इसकी तारीफ में कर्नल बेनन महोदय ने, जोकि उस समय जयपुर के पोलिटिकल एजण्ट थे, आपके कार्यों से खुश होकर एक बहुत अच्छा सर्टिफिकेट प्रदान किया था, तथा दरबार को भी आपके कार्यों से वाकिफ किया था।

मेहताजी संवत् १८८८ से संवत् १९१४ तक कई बार वकीली की जगह पर भेजे गये। संवत् १९२६ से संवत् १९४० तक आप आबू वकील रहे। इसके अतिरिक्त भी आपने कई बड़े-बड़े ओहदों पर काम किया। आप मुसाहिब और मेम्बर कौंसिल रहे। आपको तनख्वाह के अतिरिक्त सारा खर्च राज्य की ओर से मिलता था। यही नहीं बल्कि शादी और गमी के समय भी रियासत ही सार खर्च उठाती थी। संवत् १९०२ में महाराजा रतनसिंहजी ने डूँगराणा तथा संवत् १९३९ में महाराजा डूँगरसिंहजी ने सरूपदेसर नामक एक २ गांव जागीर में प्रदान किये। संवत् १९४८ में आपका स्वर्गवास हो गया। इस समय महाराजा गंगासिंहजी मातम-पुरसी के लिये आपके घर पर पधारे और आपका सम्मान बढ़ाया। आपके केसरीसिंहजी और बिशनसिंहजी नामक दो पुत्र थे। इनमें से मेहता केसरीसिंहजी अपने चाचा मेहता अनारसिंहजी के यहाँ दत्तक रहे।

मेहता अनारसिंहजी ने राज्य में कोई काम नहीं किया। उनका ध्यान व्यापार की ओर रहा। जवाहरात का व्यापार करने के लिये वे जयपुर गये वहीं संवत् १९०२ में आपका स्वर्गवास हो गया।

महाराव हरिसिंहजी—आप महाराव हिन्दूमलजी के प्रथम पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १८८३ में हुआ था। आप अपने समय के मुत्सुद्दियों में होशियार व्यक्ति माने जाते थे। राज्य में आपका बहुत प्रभाव था। संवत् १९१४ में जब कि भारतवर्ष के रणांगण में चारों ओर गदर मचा हुआ था, तब आप भी महाराजा की ओर से ब्रिटिश सरकार को मदद पहुँचाने के उद्देश्य से भेजे गये थे। वहाँ और २

लोगों के साथ आपने भी पूर्ण रूप से उसकी सहायता की। इससे प्रसन्न होकर सरकार ने टीबे के परगने महाराजा साहब को दिये। इसके पश्चात् संवत् १९२० में आप मुसाहब आला बनाये गये। इसी अवसर पर आपको मोहर का अधिकार भी बक्षा गया। संवत् १९२९ में गद्दी नशीनी के अवसर पर आपने भी अपने चाचा मेहता छोगमलजी के साथ पूरी २ मदद की। इससे प्रसन्न होकर महाराजा डूँगरसिंहजी ने आपको अमरसर और पलाणा नामक दो गांव जागीर में प्रदान किये। जिस समय आप आबू वकील रहे थे उस समय आपको हाथी, खिल्लत और चंवर का सम्मान प्रदान किया था। आपको पुश्तैनी सारे अधिकारों का उपयोग करने का अधिकार भी मिला था। महाराव की पदवी आप लोगों को पुश्तैनी रूप से मिली हुई है। आपका संवत् १९३९ में स्वर्गवास हो गया। आपके तीन पुत्र थे, जिनके नाम क्रमशः मेहता किशनसिंहजी, महाराव सवाईसिंहजी और मेहता वल्लभसिंहजी थे।

राव गुमानसिंहजी—आप महाराव हरिसिंहजी के छोटे भाई थे। आपका जन्म संवत् १८८८ का था। आपको संवत् १९१० में मुसाहिबी का सम्माननीय ओहदा दिया गया। संवत् १९१४ में आप भी गदर के इन्तिजाम के लिये भेजे गये। आपके कार्यों से प्रसन्न होकर दरबार ने भिन्न-भिन्न समय में आपको कड़ा, मोतियों की कंठी एवम् सिरोपाव प्रदान किये। एक बार महाराजा साहब आपकी हवेली पर गोठ अरोगने पधारे। इस अवसर पर आपको हमेशा के लिये पैरों में सोना पहनने का अधिकार बक्षा। आपका संवत् १९२५ में स्वर्गवास हो गया। आपके जवानसिंहजी और दलपतसिंहजी नामक दो पुत्र थे।

राव जसवंतसिंहजी—आप भी महाराव हरिसिंहजी के छोटे भाई थे। संवत् १८९८ में आपका जन्म हुआ। आप बीकानेर-स्टेट की कौंसिल के मेम्बर रहे। संवत् १९१४ में गदर के समय तथा संवत् १९२९ में महाराजा को गद्दी पर बिठलाते समय आपने बहुत परिश्रम और बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य किये। संवत् १९३० में आप आबू वकील रहे। संवत् १९३३ में महाराजा डूँगरसिंहजी आपकी हवेली पर गोठ अरोगने पधारे। इस अवसर पर आपके द्वारा की गई सेवाओं के उपलक्ष्य में आपको बरसनसर नामक एक गांव जागीर में प्रदान किया गया। साथ ही राव की उपाधि और ताजिम प्रदान कर आपका सम्मान बढ़ाया। आपको हाथी और खिल्लत का भी सम्मान प्राप्त हुआ। आप भी इस परिवार में नामांकित व्यक्ति हुए। आपका स्वर्गवास संवत् १९४० हो गया। आपके छत्रसिंहजी और अभयसिंहजी नामक २ पुत्र थे।

महाराव हरिसिंहजी का परिवार

मेहता किशनसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९१२ में हुआ। आप महाराव हरिसिंहजी के प्रथम पुत्र थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९३६ में केवल २४ वर्ष की आयु में ही हो गया। इसके एक साल पूर्व आप रियासत के दीवान बनाये गये थे। आपके तीन पुत्र, मेहता शेरसिंहजी, मेहता लछमनसिंहजी और मेहता पन्नेसिंहजी थे।

मेहता शेरसिंहजी ने राज्य में कई स्थानों पर कार्य किया। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर महाराजा साहब ने आपको राव की उपाधि प्रदान कर आपका सम्मान बढ़ाया। आपका स्वर्गवास संवत् १९८६ में हो गया। इस समय आपके रघुरावसिंहजी, कल्याणसिंहजी और आनन्दसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं। श्री० आनन्दसिंहजी स्टेट बैंक में काम करते हैं। आपके किशोरसिंहजी नामक एक पुत्र हैं। मेहता लछमनसिंहजी और मेहता पनेसिंहजी का स्वर्गवास हो गया। लछमनसिंहजी के गुलाबसिंहजी नामक एक पुत्र हैं।

महाराव सवाईसिंहजी—आप महाराव हरिसिंहजी के दूसरे पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९१४ का था। प्रारम्भ में आप राजगढ़ की हवलदारी पर भेजे गये। इसके बाद आप वर्तमान महाराजा गंगासिंहजी के मिनिस्टर और वेटिंग रहे। इसके पश्चात् आप क्रमशः बढ़ते ही गये और अंत में मेम्बर कौंसिल नियुक्त हुए। आपने महाराजा डूँगरसिंहजी के समय में फौजदारी दीवानी वगैरह की कुल मुल्की का काम किया था। इन्ही सब कार्यों से प्रसन्न हो कर महाराजा साहब ने आपको पन्ने का कंठा और पैरों में सोने की सांट बक्षी। इसके अतिरिक्त आपको अपनी पुश्तैनी ताज़ीम वगैरह पहलेही से थी। आपका सम्वत् १९७९ में स्वर्गवास हो गया। आपके रामसिंहजी और गोविंदसिंहजी नामक दो पुत्र थे। इनमें रामसिंहजी मेहता जवानसिंहजी के यहाँ दत्तक चले गये। दूसरे गोबिन्दसिंहजी का स्वर्गवास सम्वत् १९६९ में ही हो चुका था। मेहता गोन्विदसिंहजी के सुमानसिंहजी और मोहनसिंहजी नामक दो पुत्र हैं। महाराव सुमानसिंहजी को अपने पुश्तैनी सब सम्मान प्राप्त हैं। आप शिक्षित और मिलनसार व्यक्ति हैं। आपके सुमेरसिंहजी नामक एक पुत्र हैं। श्रीमोहनसिंहजी अपने चाचा मेहता वल्लभसिंहजी के यहाँ दत्तक चले गये। वल्लभसिंहजी स्टेट में हकिम रहे थे। आपका स्वर्गवास हो गया है। मोहनसिंहजी के एक पुत्र सोहनसिंहजी हैं।

राव गुमानसिंहजी का परिवार

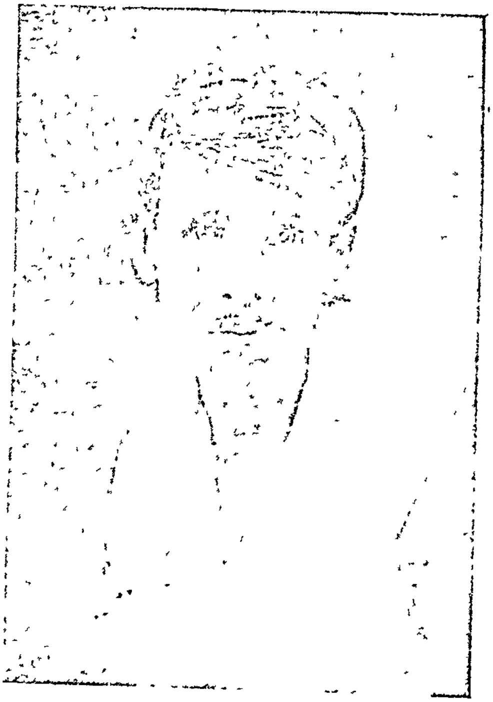
राव जवानसिंहजी—आप राव गुमानसिंहजी के प्रथम पुत्र थे। आपका जन्म सम्वत् १९१२ का था। आप पहले हाकिम नियुक्त हुए। पश्चात् अफसर दिवानी रहे। सम्वत् १९३९ तक फिर आप अफसर फौजदारी रहे। इसके पश्चात् आप अफसर खरीव महकमा रहे। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९४८ में हो गया। आपके कोई पुत्र न होनेसे आपने रामसिंहजी को दत्तक लिया। आपका भी स्वर्गवास हो गया। आपके मेहता धनपतसिंहजी और मेहता दौलतसिंहजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें से दौलतसिंहजी का स्वर्गवास हो गया। मेहता धनपतसिंहजी इस समय नायब तहसीलदार हैं। आपके तेजसिंह, अमरसिंह और जोरावरसिंह नामक तीन पुत्र हैं।

राव जसवन्तसिंहजी का परिवार

राव छत्रसिंहजी—आप जसवन्तसिंहजी के प्रथम पुत्र थे। आपका जन्म सम्वत् १९०८ का था। आप पहले पहल अफसर फौजदारी नियुक्त हुए। सम्वत् १९३९ में आप हनुमानगढ़ के हाकिम हुए। इसके एक साल के पश्चात् ही आप मेम्बर कौंसिल नियुक्त हुए। इसी प्रकार सुजानगढ़, रिणी आदि कई स्थानों पर आप नाजिम रहे। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९६९ में हो गया। आपके भाई मेहता अभयसिंहजी का जन्म सम्वत् १९१० में हुआ था। आप नौहर और हनुमानगढ़ नामक स्थान पर हाकिम रहे। जयपुर और जोधपुर के आप वकील रहे। इसके पश्चात् आप बीकानेर के हाकिम बनाए गए। आप चीफ कोर्ट के थर्ड जज भी रहे। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९८२ में हो गया। आप दोनों ही भाइयों के कोई पुत्र न था अतएव आपके यहाँ मेहता गोपालसिंहजी गोद आये। आपको राव का खिताब तथा ताजिम बक्षी हुई है। इस समय आप आबू में वकील हैं। आपके इस समय गोर्धनसिंह, नारायणसिंह, सम्पतसिंह, रूपसिंह, नरपतसिंह और सूरतसिंह नामक छः पुत्र हैं।

मेहता छोगमलजी का परिवार

मेहता केसरीसिंहजी—आप मेहता छोगमलजी के प्रथम पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९०९ में हुआ। आप पहले तो अपने पिताजी के साथ काम करते रहे। पश्चात् आप स्वयं आबू वकील हो गये। इस समय आपको सब खर्च के अतिरिक्त एक हजार रुपया मासिक वेतन मिलता था। वकालत के काम को आपने बड़ी सफलता और होशियारी से सम्पन्न किया। आपको इस विषय में कई बड़े २ अंग्रेज



स्व० सेठ ताराचंदजी वैद, रतनगढ़.



सेठ रिखबचंदजी वैद, रतनगढ़.



सेठ दौलतरामजी वैद, रतनगढ़.



सेठ सींचियालालजी वैद, रतनगढ़.

आफिसरों से सर्टिफिकेट प्राप्त हुए थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९७८ में हो गया। आपके पाँच पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः फतहसिंहजी, बहादुरसिंहजी, उमरावसिंहजी, अनोपसिंहजी और अर्जुनसिंहजी हैं।

इनमें से मेहता फतेहसिंहजी का स्वर्गवास हो गया। आपके तीन पुत्र हुए जिनका नाम क्रमशः गोपालसिंहजी, मुकुन्सिंहजी और शान्तसिंहजी हैं। इनमें से गोपालसिंहजी दत्तक गये हैं। मेहता बहादुरसिंहजी राज्य में जोधपुर वकालात का काम करते रहे। आपका स्वर्गवास हो गया। मेहता उमराव सिंहजी का ध्यान व्यापार की ओर रहा। आप मिलनसार सज्जन हैं। मेहता अनूपसिंहजी के ५ पुत्र हैं जिनका नाम क्रमशः भगवतसिंहजी, मोहब्बतसिंहजी, जुगलसिंहजी, मोतीसिंहजी और प्रतापसिंहजी हैं। मेहता अर्जुनसिंजी के मेघसिंह नामक एक पुत्र हैं।

मेहता विशनसिंहजी—आप मेहता छोगमलजी के पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९१८ का था। आप संवत् १९३८ में महकमा माल के काम पर नियुक्त हुए। संवत् १९३६ में दिवाली के अवसर पर कपड़े में आग लग जाने से आपका स्वर्गवास हो गया। आपके पुत्र मेहता बुधसिंहजी इस समय विद्यमान हैं। आप पहले जयपुर वकील और फिर आबू वकील रहे। अब आप हाकिम देवस्थान हैं।

इस परिवार में छोटे से छोटे बच्चे तक को पैरों में सोना बक्षा हुआ है। इस समय इस परिवारवालों की जागीर में सात गाँव हैं।

वेद परिवार, रतनगढ़

इस परिवार का इतिहास बड़ा गौरव मय रहा है। बीकानेर के वेद सज्जन इसी वेद गौत्र के हैं। इस परिवार के पुर्व पुरुष गोपाल पुरा नामक स्थान पर बास करते थे। वहाँ से थानसिंहजी लालसर नामक स्थान पर आकर रहने लगे। थानसिंहजी के ५ पुत्रों में से हिम्मतसिंहजी नामक पुत्र रतनगढ़ से तीन मील की दूरी पर पापली नामक स्थान में आकर रहे। आपके ६ पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः जेठमलजी मयाचंदजी, पृथ्वीराजजी, मोकमसिंहजी, मदनसिंहजी, और हरिसिंहजी था। मयाचन्दजी के चार पुत्रों में बाघमलजी, भगवानदासजी, और गजराजजी निःसंतान स्वर्गवासी हो गये। चौथे पुत्र भीमसिंहजी के पाँच पुत्र मानसिंहजी, गंगारामजी, केसरीसिंहजी गुमानसिंहजी और सरदारमलजी थे। सेठ भीमसिंहजी का स्वर्गवास हो जाने पर इनकी धर्मपत्नी अपने पुत्रों को लेकर रतनगढ़ चली आई। इनमें से गुमानसिंहजी और सरदारमलजी निःसंतान स्वर्गवासी हो गये। शेष तीनों में से यह परिवार मानसिंहजी से सम्बन्ध रखता है।

मानसिंहजी के ६ पुत्र थे जिनका नाम हरनाथसिंहजी, धनराजजी, नवलसिंहजी, लच्छीरामजी रतनचन्दजी और चैनरूपजी था। इनमें से हरनाथसिंहजी के दो पुत्र हुए। इनका नाम माणकचन्दजी और बींजराजजी था। सेठ बींजराजजी अपने चाचा सेठ नवलसिंहजी के नाम पर दत्तक गये।

सेठ माणकचन्दजी और सेठ बींजराजजी दोनों भाइयों ने मिलकर पहले पहल कलकत्ता में मेसर्स माणकचंद हुकुमचंद के नाम से फर्म स्थापित की। इनके पूर्व आप लोग राजलदेसर की प्रसिद्ध फर्म मेसर्स खड्गसिंह लच्छीराम वेद के यहाँ साझीदारी में काम करते थे।

सेठ माणकचन्दजी का परिवार

सेठ माणकचन्दजी इस परिवार में प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए। आपके दो पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः सेठ ताराचन्दजी (सोमजी) और सेठ कालूरामजी था। सेठ माणकचन्दजी का स्वर्गवास संवत् १९२९ में हो गया।

सेठ ताराचन्दजी—आपका जन्म संवत् १८९८ का था आप अपने पिताजी के समय में व्यापार करने लग गये थे। संवत् १९२४ में आपकी फर्म मेसर्स खड्गसिंह लच्छीराम से अलग हुई। संवत् १९३४ में आपने हुकमचन्दजी के साथ से भी अपना साझा अलग कर लिया। इस समय से आपकी फर्म का नाम मेसर्स माणकचन्दजी ताराचन्द पड़ने लगा। इस पर प्रारंभ से ही आढ़त और कमीशन का काम होता चला आ रहा है। सेठ ताराचन्दजी इस परिवार में बड़े योग्य, व्यापार-चतुर और कुशल-व्यवसायी व्यक्ति हुए। आपने अपनी फर्म पर डायरेक्ट कपड़े का इम्पोर्ट करना प्रारम्भ किया तथा लाखों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। आपके पास उस समय २० हजार गांठ कपड़े की हर साल आया करती थी। आपका स्वर्गवास संवत् १९१७ में हो गया। आपके दो पुत्र सेठ जयचन्दलालजी और मेघराजजी थे।

सेठ कालूरामजी—आप बड़े धर्म प्रेमी सज्जन थे। आपको जैनधर्म के सूत्रों की अच्छी जानकारी थी। आपके इस समय मोहनलालजी नामक एक पुत्र हैं। आपके कोई संतान न होने से अपने भतीजे पूनमचन्दजी के पुत्र सोभागमलजी को दत्तक लिया। संवत् १९६२ तक आप दोनों भाइयों का कारोबार शामलात में होता रहा। इसके पश्चात् अलग रूप से व्यवसाय हो रहा है।

सेठ जयचन्दलालजी—आपका जन्म संवत् १९१६ में हुआ। तथा स्वर्गवास संवत् १९६२ में आपके पिताजी के सामने ही हो गया था। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः सेठ पूनमचन्दजी, रिखबचन्दजी, दौलतरामजी, और सिचियालालजी हैं। आप सब लोग मिलनसार सज्जन हैं। आप लोगों का व्यापार कलकत्ता में १६ कैनिंग स्ट्रीट में बैंकिंग और कपड़े का होता है।



स्व० सेठ हुकमचंदजी वैद, रतनगढ़.



सेठ जसकरणजी वैद, रतनगढ़.



कुँ० मोतीलालजी S/o जसकरणजी वैद, रतनगढ़.



कुँ० मोहनलालजी S/o स्व० सेठ मालचंदजी वैद, रतनगढ़.

सेठ मेघराजजी—आप भी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। आपका स्वर्गवास हो गया। इस समय आपके पुत्र बा० सूरजमलजी विद्यमान हैं। आप बड़े मिलनसार, शिक्षित और सज्जन पुरुष हैं। आपका व्यापार मेसर्स ताराचन्द मेघराज के नाम से नं० ४ नारायणप्रसाद लेन में होता है। आपके रतनचन्दजी नामक एक पुत्र हैं।

सेठ बींजराजजी का परिवार

यह हम उपर लिख ही चुके हैं कि सेठ बींजराजजी पहले अपने भाई के साथ रहे। पश्चात् संवत् १९३४ में अलग हुए। अलग होने पर आपने मेसर्स बींजराज हुकुमचन्द के नाम से कारोबार प्रारंभ किया। इसमें आपको अच्छी सफलता मिली। आपके हुकमचंदजी नामक एक पुत्र हुए।

सेठ हुकुमचन्दजी—आपका जन्म संवत् १९०७ में हुआ। आपने अपनी व्यापार चातुरी, बुद्धिमानी और होशियारी से फर्म की बहुत तरक्की की। साथ ही आपने फर्म से लाखों रुपया पैदा किया। आपका स्वर्गवास संवत् १९६८ में हो गया। आपके तीन पुत्र हुए। जिनके नाम क्रमशः सेठ जसकरनजी सेठ मालचन्दजी, और सेठ दीपचन्दजी था। इनमें से द्वितीय और तृतीय पुत्र का स्वर्गवास होगया। मालचन्दजी के सोहनलालजी नामक एक पुत्र हैं। आप नवयुवक और मिलनसार हैं। आपके भी भीखमचन्द नामक एक पुत्र है।

सेठ जसकरनजी—आपका जन्म संवत् १९३३ का है। आप बड़े विद्या-प्रेमी सज्जन हैं। आपको जैन धर्म की अच्छी जानकारी है। आपका जीवन बड़ा सादा और मिलनसार है। आप हमेशा सार्वजनिक और सामाजिक कार्यों में अपने समय को व्यय करते रहते हैं। आपने रतनगढ़ में एक वणिक पाठशाला स्थापित कर रखी है। इसमें करीब १७५ विद्यार्थी विद्याध्ययन करते हैं। इसके अतिरिक्त आपने यहाँ एक बाल वाचनालय भी स्थापित कर रखा है। आपके इस समय पांच पुत्र हैं। जिनके नाम बा० डूँगरमलजी, मोतीलालजी, गुलाबचन्दजी, मोहनलालजी और लाभचंदजी हैं। आप सब भाई मिलनसार और व्यापार चतुर हैं। सोहनलालजी बी० ए० में पढ़ रहे हैं।

बाबू डूँगरमलजी के भूरामलजी और नेमचन्दजी, बाबू मोतीलालजी के सुमेरमलजी, दुलिचन्दजी और नेमचन्दजी, बाबू सोहनलालजी के जतनमलजी और लाभचंदजी के तेजकरनजी नामक पुत्र हैं।

कलकत्ता, नाटोर, खानसामा (रंगपुर) माथा भाँगा (कूँच बिहार), दरवानी (रंगपुर) इत्यादि स्थानों पर आपका जूट, जमींदारी और हुँडी चिट्ठी का व्यापार होता है। यह फर्म तमाखू का काम भी करती

हैं। कलकत्ता फर्म पर एक्सपोर्ट इम्पोर्ट व्यापार किया जाता है। वहाँ तार का "Zephyr" है। आफ़िस का पता ३० काटन स्ट्रीट है।

यह परिवार रतनगढ़ ही में नहीं प्रत्युत सारी बीकानेर स्टेट में प्रतिष्ठित माना जाता है। इस परिवार के लोग श्री जैन श्वेताम्बर तेरा पंथी संप्रदाय के मानने वाले हैं।

वेद परिवार, चूरू

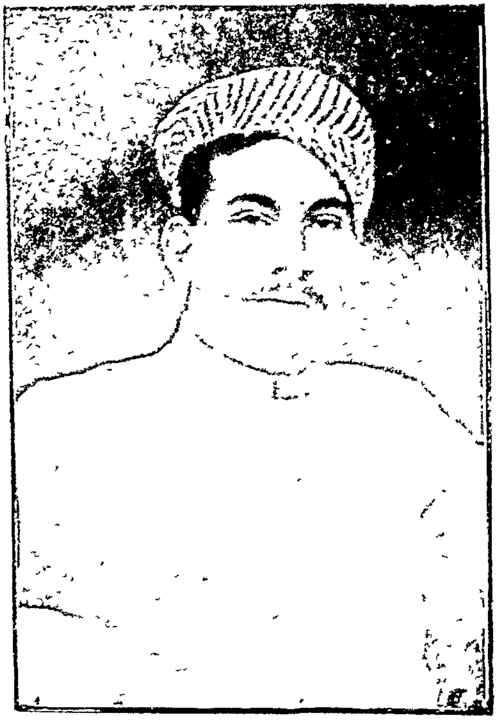
कहा जाता है कि इस परिवार के पूर्व पुरुष जब कि बीकाजी ने बीकानेर बसाया था, उनके साथ थे। यहाँ से वे फतेहपुर के नवाब के यहाँ चले गये। जब वहाँ नवाब से अनबन हो गई तब फतेहपुर को छोड़ कर गोपालपुरा नामक स्थान पर आकर बस गये। उस समय गोपालपुरा पर इनका और वहाँ के ठाकुर का आधा २ कब्जा था। महसूल की रकम आप दोनों ही व्यक्तियों की ओर से इकट्ठी की जाती थी। ऐसा भी कहा जाता है कि आप दोनों ही की ओर से एक २ आदमी बीकानेर दरबार की चाकरी में रहता था। इन्ही के वंशमें मेहता तेजसिंहजी हुए। ये बड़े पराक्रमी पुरुष थे। इन्होंने अपने जीवन में बहुत सी लड़ाइयाँ लड़ीं और उनमें सफलता प्राप्त की। इनकी बहादुरी के लिये थली प्रांत में निम्न कहावत प्रचलित है।

"तपियो मुहतो तेजसिंह और मारिया सत्तरखान"

मेहता तेजसिंहजी के पश्चात् कीरतमलजी हुए। आपने राज्य में काम करना बन्द कर दिया और महाजनी का काम प्रारम्भ किया। इनके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः लखमीचन्दजी, जोधराजजी और उदयचन्दजी था। आप तीनों ही भाइयों ने संवत् १९१४ में कलकत्ते में उदयचन्द पन्नालाल के नाम से अपनी फर्म स्थापित की। इसमें आप लोगों को अच्छी सफलता मिली। सेठ पन्नालालजी जोधराजजी के पुत्र थे। आप लोग गोपालपुरा से रामगढ़ आ गये। उदयचन्दजी के पुत्र हजारीमलजी हुए। आप रामगढ़ रहे और पन्नालालजी चुरू चले गये। जिस समय आप चुरू गये उस समय दरबार ने आपको जगात के महसूल की माफ़ी का परवाना इनायत किया।

उदयचन्दजी के पुत्र हजारीमलजी इस समय विद्यमान हैं। आपके दुलिचन्दजी नामक एक पुत्र है। पन्नालालजी के सागरमलजी और जवरीमलजी नामक दो पुत्र हुए। आप दोनों भाई अलग २ हो गये एवम् स्वतन्त्ररूप से व्यापार करते हैं।

सेठ सागरमलजी के धनराजजी और हनुतमलजी नामक दो पुत्र हैं। आजकल आप दोनों भाई



श्री सूरजमलजी वैद, रतनगढ़.



श्री शोभाचंदजी वैद, रतनगढ़.



श्री रूपचंदजी वैद, रतनगढ़.



दौलतरामजी वैद के दोनों पुत्र, रतनगढ़.

भी अलग २ हो गये हैं और डायरेक्ट कपड़े का इम्पोर्ट करते हैं। आप लोगों की फर्में क्रमशः कैनिंग स्ट्रीट और सूतापट्टी में है। सेठ सागरमलजी चूरू ही में शान्तिलाभ करते हैं।

सेठ जवरीमलजी भी मिलनसार व्यक्ति हैं। बीकानेर स्टेट में आपका अच्छा सम्मान है। आपके गणेशमलजी, रावतमलजी, मोहनलालजी और रामचन्दजी नामक चार पुत्र हैं। सब लोग व्यापार में भाग लेते हैं। इस फर्म का कलकत्ता आफिस ६२ क्रासस्ट्रीट में उदयचन्द पन्नालाल के नाम से है। इस फर्म पर डायरेक्ट कपड़े का इम्पोर्ट होता है।

इस परिवार की चूरू और कलकत्ता में बड़ी २ हवेलियाँ बनी हुई हैं। आप लोग श्वेताम्बर जैन तेरापंथी सम्प्रदाय के मानने वाले हैं।

वेद परिवार राजलदेसर

इस परिवार का प्राचीन इतिहास बड़ा गौरव पूर्ण एवम् कीर्तिशाली रहा है। जिसका जिक्र हम इसी ग्रन्थ में बीकानेर के प्रसिद्ध महाराव वेद परिवार के साथ कर चुके हैं। करीब ५००, ६०० सौ वर्ष पूर्व की बात है—जब कि बीकानेर नहीं बसा था—इस परिवार के प्रथम पुरुष दस्सूजी जोधपुर छोड़ कर यहाँ राजलदेसर से तीन मील की दूरी पर आये। यहाँ आकर आपने अपने नाम से दस्सूसर नामक एक गाँव बसाया जो आज भी विद्यमान है। यह गाँव चारणों को दान स्वरूप देदिया गया। इसी दस्सूसर में आपने यहाँ के निवासियों के आराम के लिये एक कुवा बनवाया था जिस पर आज भी उनका शिला-लेख लगा हुआ है। यहाँ से आप राजलदेसर आ गये और वहीं रहने लगे।

आपकी कुछ पीढ़ियों के पश्चात् इस खानदान में मेहता हरिसिंहजी बड़े नामांकित व्यक्तिहुए। आप तत्कालीन राजलदेसर के राजा रायसिंहजी के दीवान थे। कहा जाता है कि आपके समय में एक बार किसी शत्रु ने राजलदेसर पर चढ़ाई की थी। इस युद्ध में आप राजा रायसिंहजी के पुत्र कुँवर जयमलजी के साथ जूँझार हुए थे। याने अपना सिर कट जाने के पश्चात् भी आप दोनों ही सज्जन तलवार हाथ में लेकर कुछ मिनिट तक शत्रु सेना का मुकाबला करते रहे थे। जिस स्थान पर आपका सिर गिरा था वह स्थान आज भी "जूँझारजी" के नाम से प्रसिद्ध है तथा वहाँ इस वंश वाले अपने यहाँ होने वाले किसी भी शुभ कार्य्य पर कुलदेव स्वरूप पूजा करते हैं, जिस स्थान पर आपका शव गिरा वह स्थान आज भी मुथाथल के नाम से पुकारा जाता है। इसके अतिरिक्त इस खानदान में मेहता सवाईसिंहजी भी जूँझार हुए। जिस स्थान पर आप जूँझार हुए वह स्थान आजकल बीदासर और राजलदेसर के बीच में हैं और वहाँ आज भी निशान स्वरूप एक गिराहुआ चबूतरा बना हुआ है।

आपके कुछ वर्षों के पश्चात् जोधपुर राजवंश के कुमार बीकाजी ने अपने शौर्य्य एवम् पराक्रम से बीकानेर राज्य की नींव डाली तथा बीकानेर शहर बसाया। कहना न होगा कि इस समय राजलदेसर भी बीकानेर स्टेट में आ गया। जब यह बीकानेर में आगया तब भी इस वंश वाले सज्जन स्टेट की ओर से कामदार वगैरह २ स्थानों पर काम करते रहे। इन्हीं में मेहता मनोहरदासजी बड़े प्रसिद्ध व्यक्ति हुए। आप ही के नाम से आपके वंशज आज भी मनोहरदासोत वेद कहलाते हैं। आपके पश्चात् क्रमशः दीपचन्दजी, अचलदासजी एवम् साँवतसिंहजी हुए।

सेठ सांवतसिंहजी के दो पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः उम्मेदमलजी एवम् दानसिंहजी था। उम्मेदमलजी वहीं राजलदेसर तथा आसपास के ग्रामों में अपना लेनदेन का व्यवसाय करते रहे। तथा दानसिंहजी वहाँ से चल कर मुर्शिदाबाद नामक स्थान पर आकर बस गये। तब से आपके वंशज यहीं निवास कर रहे हैं।

सेठ उम्मेदमलजी के तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः सेठ लच्छीरामजी, सेठ जैसराजजी एवम् सेठ मेघराजजी था। सेठ लच्छीरामजी वहीं राजलदेसर निवासी सेठ खड्गसिंहजी के यहाँ दत्तक चले गये तथा मेघराजजी के परिवार वाले अलग हो गये। अतएव दोनों भाइयों का इतिहास नीचे अलग दिया जा रहा है। वर्तमान इतिहास सेठ जैसराजजी के परिवार का है।

सेठ जेसराजजी का परिवार

सेठ जेसराजजी—आपका जन्म संवत् १८८४ में हुआ। आपने अपने चाचा दानसिंहजी के साथ रह कर मुर्शिदाबाद में प्रारम्भिक विद्याध्ययन किया। आपको विद्या से बड़ा प्रेम था। आपने उर्दू, संस्कृत और अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। पढ़ाई खतम करते ही आपने अपने नाम से कलकत्ता में कपड़े का व्यापार प्रारम्भ किया। इन्हीं दिनों आपके भ्राता सेठ लच्छीरामजी भी कलकत्ता आये। संवत् १९०५ में आप तीनों भाइयों के साझे में मेसर्स खड्गसिंह लच्छीराम के नाम से चलानी का काम करने के लिये फर्म स्थापित की। आप तीनों ही भाई बड़े प्रतिभा सम्पन्न एवम् व्यापार चतुर पुरुष थे। आप लोगों ने अपनी व्यापार चातुरी से फर्म की बहुत उन्नति की। यही नहीं बल्कि आपने गया, नाटोर, अडंगाबाद चाँपाई, नवाबगंज आदि स्थानों पर अपनी शाखाएँ स्थापित कीं। सेठ जैसराजजी का स्वर्गवास संवत् १९१७ में गया। आपके जयचन्दलालजी नामक पुत्र हुए।

सेठ जयचन्दलालजी—आपका जन्म संवत् १९१२ में हुआ। छोटी वय से ही आप दुकान का काम करने लग गये थे। संवत् १९३९ तक इस फर्म पर खड्गसिंह लच्छीराम के नाम से व्यापार होता रहा।



स्व० सेठ जयचन्दलालजी वैद, राजलदेसर.



सेठ बीजराजजी वैद, राजलदेसर.



सेठ सिंचियालालजी वैद, राजलदेसर.



सेठ हीरालालजी वैद, राजलदेसर.

इसके पश्चात् आपने अपना व्यवसाय अलग कर अपनी फर्म का नाम मेसर्स जैसराज जैचन्दलाल रखा। इसके पश्चात् माटोर, राजशाही, दिनाजपुर, और कामागढी नामक स्थानों पर भी आपने अपनी शाखाएं खोली।

कलकत्ता फर्म पर भी संवत् १९६५ में आपने जूट की पक्की गांठों के बेलिंग का काम प्रारंभ किया। इस पर आपका मार्का "जयचन्द एम. ग्रूप" हुआ। संवत् १९६७ में आपने जयपुरहाट एवं जमालगंज (बोगड़ा) नामक स्थानों पर भी मेसर्स हीरालाल चांदमल के नाम से जूट एवं धान चावल का व्यवसाय करने के लिये दो शाखाएं खोली।

उपरोक्त प्रायः सभी स्थानों पर आपके बहुत मकान एवं गोदाम वगैरह बने हुए हैं। सोनातोला (बोगड़ा) के पास लाट काबुलपुर के पांच गांव की जमींदारी भी आपकी है। यह सब आप ही के द्वारा खरीदी गई। आप बड़े व्यापार कुशल एवं मेधावी व्यक्ति थे। आपने राजलदेसर से २ मील की दूरी पर राजाणा नामक स्थान पर एक धर्मशाला तथा कुण्ड बनवाया है। राजलदेसर एवं सारे आसपास के ग्रामों के ओसवाल समाज में आपका बहुत बड़ा प्रभाव एवं सम्मान था। बीकानेर दरबार भी आपका अच्छा सत्कार करते थे। आपको आपके दोनों चाचा सेठ लच्छीरामजी एवं सेठ मेघराजजी के साथ संवत् १९२३ की असाड़ सुदी ७ को दरबार की ओर से साहूकारी का पट्टा इनायत किया गया था। इसके अतिरिक्त संवत् १९५६ में बीकानेर दरबार ने आपको आपके कार्यों से प्रसन्न होकर छड़ी चपरास का सम्मान बक्षा। आपका स्वर्गवास संवत् १९६९ में हो गया। आपके दाह संस्कार के स्थान पर आपके स्मारक स्वरूप एक ग्राउण्ड घेर कर सुन्दर छतरी भी बनवाई गई। जिस पर एक मार्बल का शिलालेख स्थापित किया गया। वर्त्तमान में इस फर्म के संचालक आपके सातों पुत्र हैं। जिनके नाम क्रमशः सेठ बींजराजजी सेठ सींचियालालजी, हीरालालजी, चांदमलजी, नगराजजी, इन्द्रराजमलजी तथा चम्पालालजी हैं। आप लोगों का परिवार श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय का अनुयायी है।

इस फर्म का अंग्रेजी फर्मों के साथ विशेष सम्बन्ध है। इस फर्म में संवत् १९७६ से कपड़े का व्यापार प्रारंभ किया तथा संवत् १९८३ से यह फर्म मेसर्स Kettle weel bullen and Co. Ltd. के पीस गुड्स डि. की सोल बेनियन हुई। इसके पश्चात् संवत् १९८६ से मेसर्स बाबरिया कॉटन मिल्स कं० लि., दी डनबार मिल्स लि., और दी न्यू रिंग मिल्स कं. लि. नामक तीनों कॉटन मिलों की सोल बेनियन हुई। इस फर्म के वर्त्तमान संचालकों का परिचय इस प्रकार है।

से० बींजराजजी—आपका जन्म संवत् १९३६ में हुआ। आप बड़े योग्य तथा इस फर्म के प्रधान संचालक हैं। आपका राजलदेसर के नागरिकों में अच्छा सम्मान है। आप वहां की म्युनिसीपालिटी

के प्रारम्भ से ही व्हाइस-चेअरमैन हैं। बीकानेर हाई कोर्ट के आप जूरी भी हैं। आपको सन् १९२१ की सेन्सस के समय मदद करने के उपलक्ष में बंगाल सरकार ने एक सर्टिफिकिट प्रदान कर सम्मानित किया था। आप कलकत्ता श्री जैन श्वेताम्बर तेरा पंथी सभा के कई साल तक उप सभापति तथा जैन श्वेताम्बर ते. स्कूल के सभापति का आसन ग्रहण कर चुके हैं। आपके छः पुत्र हुए जिन के नाम क्रमशः मालचन्दजी, लखमीचंदजी अमोलकचन्दजी, श्रीचन्दजी, फतेहचन्दजी और पूनमचन्दजी हैं। इनमें से लखमीचन्दजी जिन्होंने I. A. की परीक्षा की तयारी की थी परन्तु परीक्षा के पूर्व ही स्वर्गवासी हुए। आपके किशनलालजी नामक एक पुत्र हैं। बाबू अमोलकचन्दजी ने सपत्नीक श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय में संवत् १९८८ के ज्येष्ठ शुक्ला १२ को दीक्षा ग्रहण करली। आपके शेष चार पुत्रों में से तीन व्यापार में सहयोग लेते हैं और एक पढ़ते हैं।

बा० सिंचियालालजी—आपका जन्म संवत् १९४३ का है। आप धार्मिक विचारों के पुरुष हैं। आपके चार पुत्र हुए थे जो छोटी वय में ही स्वर्गवासी हो गये। तथा संवत् १९७६ में जब कि आपकी अवस्था केवल ३२ वर्ष की थी, आपकी धर्मपत्नी का भी स्वर्गवास हो गया। इसके बाद आपने विवाह नहीं किया। आपने आपके छोटे भाई सेठ चांदमलजी के पुत्र बा० बच्छराजजी को दत्तक लिया है। आप I. A. तक विद्याध्ययन कर फर्म के काम में सहयोग लेते हैं।

बा० हीरालालजी—आपका जन्म संवत् १९४४ में हुआ। आप दयालु तथा मिलनसार प्रकृति के पुरुष हैं। आपके एक पुत्र हैं जिनका नाम पन्नालालजी है। आप भी व्यापार में भाग लेते हैं।

बा० चान्दमलजी—आपका जन्म संवत् १९४७ का है। आप कुशल व्यापारी हैं। जैन धर्म की आपको विशेष जानकारी है। आप बड़े सरल एवं योग्य सज्जन हैं। आपके पांच पुत्र हैं जिनके नाम बच्छराजजी जो सींचियालालजी के यहां पर दत्तक गये हैं, खेमकरणजी, लंकापतसिंहजी, शेपकरणजी और अनोपचन्दजी हैं। बा० खेमकरणजी व्यापार में सहयोग लेते हैं। शेष पढ़ते हैं।

बा० नगराजजी—आपका जन्म संवत् १९४८ का है। आप भी इस फर्म के संचालन में भाग लेते हैं। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम बा० कन्हैयालालजी, नेमचन्दजी तथा नन्दलालजी हैं। बा० कन्हैयालालजी और नेमचन्दजी व्यापार में भाग लेते हैं। बा० कन्हैयालालजी के २ पुत्र हैं जिनमें बड़े का नाम भँवरलालजी हैं।

बा० हंसराजजी—आपका जन्म संवत् १९५१ में हुआ। तथा आपका स्वर्गवास संवत् १९८२ की महा सुदी में हो गया। आपके तीन पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः बा० माणकचन्दजी जो मेट्रिक में पढ़ते हैं, रतनलालजी और गोपीलालजी हैं। आप लोग भी पढ़ते हैं।

बा० इन्द्राजमलजी—आपका जन्म संवत् १९५२ का है। आप भी व्यापार में भाग लेते हैं।



सेठ चांदमलजी वैद, राजलदेसर.



सेठ नगराजजी वैद, राजलदेसर.



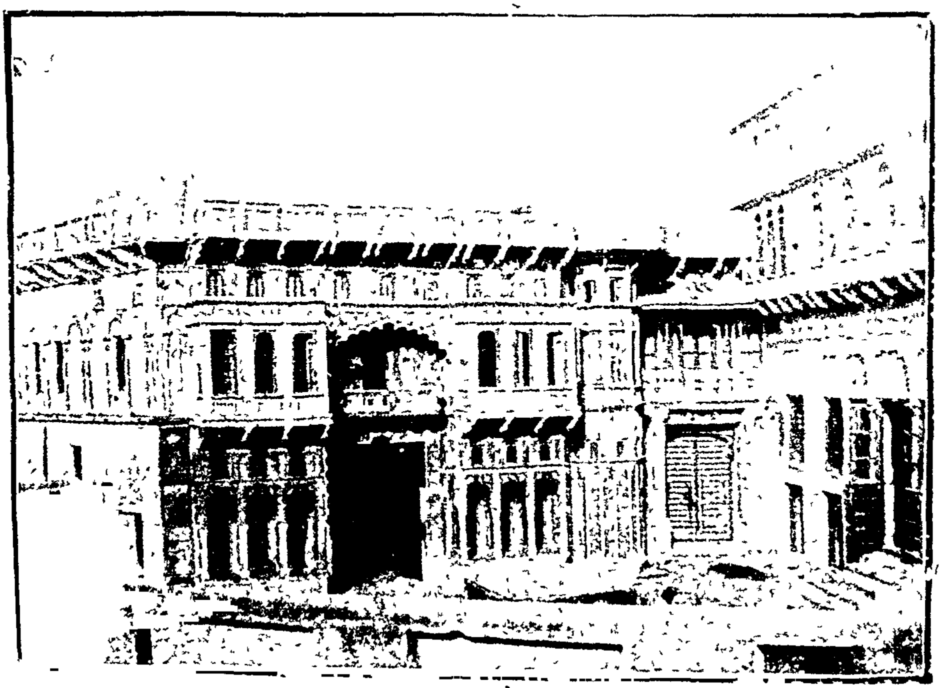
स्व० सेठ हंसराजजी वैद, राजलदेसर.



सेठ इन्द्रराजमलजी वैद, राजलदेसर.



बाबू चम्पालालजी वैद (वैद परिवार) राजलदेसर.



जयचन्द भवन, राजलदेसर.

आपके तीन पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः बा० ऋधकरणजी, सागरमलजी, एवं मांगीलालजी हैं। ऋधकरणजी व्यापार में भाग लेते हैं तथा शेष पढ़ते हैं।

बा० चम्पालालजी—आपका जन्म संवत् १९६१ में हुआ। आप बड़े योग्य, व्यापार कुशल तथा मिलनसार सज्जन हैं। आप ही इस फर्म के कार-भार को बड़ी योग्यता से संचालित कर रहे हैं। आप ही के द्वारा इस फर्म का बहुत सी अंग्रेजी फर्मों के साथ कारबार होता है। आपका बहुत से बड़े २ अंग्रेजों से परिचय है। आप ही के द्वारा इस फर्म के साथ अंग्रेजों का सम्बन्ध स्थापित हुआ है। आपकी बड़े २ गवर्नमेंट अफसरों, गवर्नरों तथा उच्चपदाधिकारियों से पर्सनल मैत्री है।

इस परिवार की ओर से श्री० जैन श्वेताम्बर तेरा पंथी सभा तथा स्कूल और वि० स० विद्यालय और औषधालय आदि संस्थाओं को भी काफी सहायता प्रदान की गई है। हाल ही में राजलदेसर गांव में वेद परिवार का अगुना कुआ नामक एक जीर्ण शीर्ण कुए का आप लोगों ने जीर्णोद्धार करवाया जिसमें आपने हजारों रुपये लगाये।

यह परिवार इस समय सारा समिलित रूप से रहता तथा सम्मिलित रूप से ही व्यवसाय करता है। ऐसे बड़े परिवार वालों का बड़े स्नेह से सम्मिलित रूप से रहना प्रशंसनीय है। इस परिवार की राजलदेसर में बहुत सुन्दर हवेलियां बनी हुई हैं। इसी प्रकार लाडनू नामक स्थान में भी अपकी एक बहुत बड़ी हवेली बनी हुई है।

सेठ मेघराजजी का परिवार

इस परिवार का पूर्व परिचय हम ऊपर लिख ही चुके हैं। सेठ मेघराजजी सेठ उम्मेदमलजी के तीसरे पुत्र थे। आप भी बड़े प्रतिभा सम्पन्न पुरुष थे। आपने हजारों लाखों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। आपका स्वर्गवास हो गया। आपके तीन पुत्र हुए। इनके नाम क्रमशः सेठ छोगमलजी, सेठ उमचन्दजी और सेठ तनसुखरायजी थे। आप तीनों ही भ्राता अलग २ हो गये। इस समय आप तीनों का परिवार अलग २ रूप से व्यापार कर रहा है। जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

सेठ छोगमलजी—आपने अपने भाईयों से अलग होकर फर्म की अच्छी उन्नति की। आपने अजीमगंज (मुर्शिदाबाद) में अपनी फर्म स्थापित की जो आज करीब १०० वर्षों से चल रही है। इस समय वहां जूट, दुकानदारी और जमींदारी का काम हो रहा है। इसके पश्चात् ही आपने कलकत्ता १५ नारमल लोहिया लेन में अपनी फर्म खोली। इस पर इस समय जूट, कमीशन एजेन्सी और बैंकिंग का व्यापार हो रहा है। आपका स्वर्गवास संवत् १९७२ में हो गया। आपके इस समय सेठ मन्नालालजी एवं कालूराम

जी नामक दो पुत्र हैं। आप लोग भी फर्म के कार्य का उत्तमता से संचालन कर रहे हैं। मन्नालालजी के भँवरलालजी एवं पूनमचन्दजी और कालूरामजी के चन्दनमलजी और जँवरीमलजी नामक पुत्र हैं। चन्दनमलजी उत्साही युवक हैं। आप भी फर्म का संचालन करते हैं।

सेठ उमचन्दजी—आपने भी अपनी फर्म की अच्छी उन्नति की। तथा मेघराज ऊमचन्द के नाम से व्यापार करना प्रारम्भ किया। आपका स्वर्गवास हो गया। आपके सात पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः मालचन्दजी, शोभाचन्दजी, हीरालालजी, संतोषचन्दजी, चम्पालालजी, सोहनलालजी और श्रीचन्दजी हैं। आप सब लोग मिलनसार व्यक्ति हैं। आप लोगों का व्यापार शामलात ही में हो रहा है। आपकी फर्म कलकत्ता में २६।१ आर्मिनियन स्ट्रीट में है यहां जूट का काम होता है। इसका तार का पता Sohanmor है। इसके अतिरिक्त भिन्न २ नामों से राजशाही, जमालगंज, और चरकांई (बोगड़ा) नामक स्थानों पर जूट तथा, जमींदारी और गल्ले का व्यापार होता है।

सेठ तनसुखरायजी—आपका जन्म संवत् १९३२ में हुआ। आप बचपन से ही बड़े चंचल और प्रतिभा वाले थे। आपने पहले तो अपने भाई छोगमलजी के साथ व्यापार किया। मगर फिर किसी कारण से आप अलग हो गये। अलग होते ही आपने अपनी बुद्धिमानी एवं होशियारी का परिचय दिया और फर्म की बहुत उन्नति की। आपका स्वर्गवास हो गया। आपके भूरामलजी नामक एक पुत्र थे। आपने भी योग्यतापूर्वक फर्म का संचालन किया। मगर कम वय में ही आपका स्वर्गवास हो गया। इस समय आपके तीन पुत्र हैं। जिनके नाम क्रमशः बाबू संतोषचन्दजी, धर्मचन्दजी और इन्द्रचन्दजी हैं। बाबू संतोषचन्दजी बड़े मिलनसार, शिक्षित और सज्जन प्रकृति के पुरुष हैं। आपके भाई अभी विद्याध्ययन कर रहे हैं। आपकी फर्म इस समय कलकत्ता में मेघराज तनसुखदास के नाम से १९ सैनागो स्ट्रीट में है। जहाँ बैंकिंग जूट एवं कमीशन का काम होता है। इसके अतिरिक्त चंपाई (नवाबगंज) में भी आपकी एक फर्म है। वहाँ जूट का व्यापार होता है। यहाँ आपकी बहुत सी स्थायी सम्पति भी बनी हुई है।

इस परिवार के लोग श्री तेरापंथी सम्प्रदाय के मानने वाले हैं। आप लोगों की ओर से राजलदेसर स्टेशन पर एक धर्मशाला बनी हुई है। जिसमें यात्रियों के ठहरने की अच्छी व्यवस्था है।

सेठ लच्छीरामजी का परिवार :—

हम यह ऊपर लिख ही चुके हैं कि सेठ लच्छीरामजी सेठ उम्मेदमलजी के पुत्र थे। ये राजलदेसर के प्रसिद्ध सेठ खड्गसेनजी के वहाँ दत्तक आये। ये बड़े प्रतिभा सम्पन्न एवं व्यापार कुशल व्यक्ति थे। आपने उस समय में अपनी फर्म कलकत्ता में स्थापित की थी जब कि मारवाड़ियों की इनी गिनी फर्में



स्व० सेठ तनसुखदासजी वैद (वैद-परिवार) राजलदेसर.



बाबू धनराजजी वैद (वैद-परिवार) राजलदेसर.



स्व० सेठ भूरामलजी वैद (वैद-परिवार) राजलदेसर.



कुँवर मोहनलालजी S/o धनराजजी वैद, राजलदेसर.

कलकत्ते में चल रही थीं। आपकी फर्म पर चलानी का काम बहुत बड़े परिमाण में होता था। कुछ समय पश्चात् सब भाई अलग हो गये। सेठ लच्छीरामजी के आसकरनजी नामक एक पुत्र हुए। सेठ आसकरनजी ने भी अपनी फर्म की बहुत उन्नति की। आपने गया जिले में बहुत बड़ी जमींदारी खरीद की तथा वहाँ अपनी एक फर्म स्थापित की। आपका धार्मिकता की ओर भी बहुत ध्यान रहा। आपने अपने पिताजी ही की भांति हजारों लाखों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। आपका बीकानेर दरबार अच्छा सम्मान करते थे। आपको राज्य की ओर से छड़ी चपरास का सम्मान प्रदान किया हुआ था। जिस प्रकार आपको सम्मान प्राप्त था; उसी प्रकार आपके पिताजी को भी था। दरबार की ओर से आपके पिता सेठ लच्छीरामजी को उनके भ्राता सहित साहुकारी का पट्टा इनायत हुआ था। साथ ही एक पट्टा और संवत् १९२३ आसाढ़ सुदी ७ को मिला था। जिसमें इनके सम्मान को बढ़ाने वाली बहुतसी बातें थीं। स्थानाभाव से वह यहां उध्दत नहीं किया जा सका। सेठ आसकरनजी का स्वर्गवास हो गया। आपके ६ पुत्र हुए, जिनके नाम क्रमशः सेठ मोतीलालजी, भीमराजजी धनराजजी, बुधमलजी, गिरधारीमलजी, और सिंचयालालजी हैं। इनमें से प्रथम दो का स्वर्गवास हो गया उनके पुत्र अपना स्वतन्त्र काम करते हैं।

सेठ धनराजजी का जन्म संवत् १९४३ का है। आप बड़े उत्साही, मिलनसार और सज्जन व्यक्ति हैं। आपका व्यापार कलकत्ता में मेसर्स लच्छीराम प्रेमराज के नाम से ५।६ आर्मेनियन स्ट्रीट में जूट और बैंकिंग का होता है। साथ ही आपकी बहुत सी स्थायी सम्पत्ति भी बनी हुई है। आपके मोहनलालजी और बच्छराजजी नामक दो पुत्र हैं।

चौथे पुत्र बुधमलजी बंगाल के चगड़ा बाना (कुचबिहार) नामक स्थान पर रहते हैं और वहीं व्यापार करते हैं। पांचवे गिरधारीमलजी राजलदेसर ही रहते हैं तथा बैंकिंग का व्यापार करते हैं। छटवें पुत्र सिंचयालालजी अभी नाबालिग हैं। आपकी फर्म कलकत्ता में खड़गसिंह लच्छीराम के नाम से ४ दहीहट्टा में हैं। जहां कमीशन का काम होता है। तथा गया वाली फर्म पर कपड़ा, ब्याज और जमींदारी का काम होता है। आपके यहाँ मुनीम लोग फर्म का संचालन कर रहे हैं।

सेठ आसकरन मुक्तानमल वेद, लाडनू

कुछ वर्ष पूर्व इस परिवार की फर्म मेसर्स अमरचन्द आसकरन मुलतानमल के नाम से थी। मगर संवत् १९६१ में यह नाम बदल कर आसकरन मुलतानमल कर दिया गया। इसका आफिस ४२ आर्मेनियन स्ट्रीट कलकत्ता में है। तार का पता Mulchouth है। यहां जूट का व्यापार तथा आढ़त का

काम किया जाता है। इस फर्म के मालिक वर्तमान में सेठ आसकरनजी के पुत्र मुल्तानमलजी, तनसुखलाल जी, जोधराजजी और चौथमलजी हैं। सेठ मुल्तानमलजी का स्वर्गवास हो गया। आप लोगों की ओर से लाडनू में एक पाठशाला चल रही है। आप लोग जैन श्वेताम्बर तेरापंथी संप्रदाय के अनुयायी हैं।

मेहता सौभागमलजी वेद का खानदान, अजमेर

इस प्राचीन परिवार के पूर्वजों का मूल निवास स्थान मेड़ता (मारवाड़) का है। वहाँ से आप लोग किशनगढ़, बीकानेर तथा कुचामण होते हुए अजमेर में आकर बसे और तभी से यह खानदान अजमेर में निवास करता है।

इस परिवार में मेहता खेतसीजी मेड़ते में बड़े नामांकित साहूकार हो गये हैं। आपके पुत्र चूड़मलजी के थिरपालजी तथा बखतावरमलजी नामक दो पुत्र हुए। मेहता थिरपालजी के पुत्र चन्द्रभानजी के हिम्मतरामजी, दौलतरामजी, सूरतरामजी तथा मोतीरामजी नामक चार पुत्र हुए। आप चारों भाई सब से प्रथम करीब १२५ वर्ष पूर्व अजमेर आए। फिर मेहता सूरतरामजी का परिवार तो उदयपुर जा बसा, जिनका परिचय मेहता मनोहरमलजी वेद के शीर्षक में दिया गया है। शेष तीनों भाई अजमेर में ही बस गये। आप लोग बड़े ही व्यापार कुशल तथा धार्मिक सज्जन थे। आपने हजारों लाखों रुपये कमा कर अनेक हवेलियाँ बनवाईं; सिद्धाचल और मेड़ते में सदाव्रत खोले तथा कई धार्मिक कार्य्य किये। मेहता दौलतरामजी के गम्भीरमलजी नामक एक पुत्र हुए।

मेहता गम्भीरमलजी—आप यहाँ के एक प्रसिद्ध बैङ्कर हो गये हैं। आपके लिए "गम्भीरमल मेहता का तोल, और हुंडी सब की लेवे|मोल" नामक कहावत प्रचलित थी। आपने ८००००) की लागत से पुष्कर का घाट, बनाया। इसके अलावा पुष्कर के नाना के मन्दिर का बाहरी हिस्सा, गौघाट पर महादेव का मन्दिर, खोवरिया भेरू की घाटी और अजमेर में डिग्गी का तालाब आदि स्थान बनवाये इसी प्रकार और भी धार्मिक कार्य्यों में सहायता दी। आपके इन कार्य्यों से प्रसन्न होकर लार्ड विलियम बैंटिंग ने आपको एक प्रशंसा पत्र लिखा था। आपके प्रतापमलजी एवं इन्द्रमलजी नामक दो पुत्र हुए।

मेहता प्रतापमलजी—आप भी बड़े नामांकित व्यक्ति हो गये हैं। आप बड़े रईस, व्यापार कुशल तथा बुद्धिमान सज्जन थे। आपका व्यापार बहुत बढ़ा-चढ़ा था। कलकत्ता, हैदराबाद, पूना, जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, इन्दौर, टोंक, उज्जैन आदि स्थानों पर आपकी फर्में थीं। राजपूताने की रियासतों में भी आपका बहुत सम्मान था। जोधपुर-राज्य की ओर से आप ऑनरेरी दीवान के पदपर संवत् १९२३ की कार्तिक

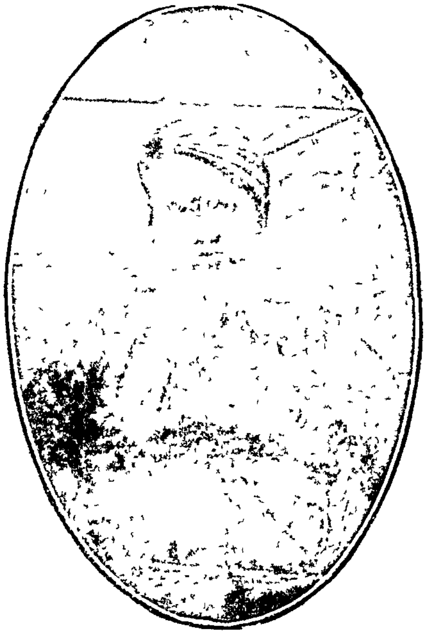
में मेड़ते में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र श्रीचन्दजी तथा उदयचन्दजी किशनगढ़ में निसंतान स्वर्गवासी हुए अतः श्रीचन्दजी के नाम पर मेहता रिद्धकरणजी दत्तक आये। किशनगढ़ में आपका सदावृत जारी था। मेहता लालचन्दजी के पुत्र लूनकरणजी ने व्यापार की बड़ी तरक्की की। आपने रतलाम, जावरा, आस्टा, उदयपुर, अजमेर, चंदेरी, भिंड, अटेर टोंक, कोटा आदि स्थानों में दुकानें खोलीं। आप अपने पुत्र रिधकरणजी तथा सिद्धकरणजी सहित संवत् १८८५ के करीब किशनगढ़ से अजमेर आये। और "लूनकरण रिद्धकरण" के नाम से अपना कारबार चलाया। आपने दूर २ स्थानों पर करीब २५-३० दुकानें खोलीं जिन पर सराफी तथा जमींदारी का धंधा होता था। आपका देहान्त अजमेर में सम्वत् १८८९ में हुआ। जहाँ लूँग्या के खेतरों में आपकी बड़ी बारादरी बनी है।

मेहता रिधकरणजी—आप धर्मनिष्ठ व्यक्ति थे। आपने श्री शत्रुंजय, गिरनार का एक संघ निकाला था। आपका किशनगढ़, जावरा आदि रियासतों से लेन देन का सम्बन्ध था। इन रियासतों ने १८९३ और १९०३ में आपको खास रुक्के भी दिये थे। किशनगढ़ के मोखम विलास नामक महल में आपकी तिवारी बनी हुई है। सं० १८९५ में जोधपुर नरेश की ओर से आपको बैठने का कुरुब प्रदान किया गया था। आपके सहस्रकरणजी, तेजकरणजी, सूरजकरणजी, जेतकरणजी तथा जोधकरणजी नामक पांच पुत्र हुए। मेहता सिद्धकरणजी ने १८९० से उम्मेदचन्द श्रीचन्द के नाम से अलग व्यापार करना शुरू कर दिया। आपकी मृत्यु के पश्चात् आपके नाम पर आपके भतीजे सहस्रकरणजी गोद आये। मेहता सहस्रकरणजी बड़े भाग्यशाली पुरुष थे। आपको सं० १८९५ में जोधपुर राज्य से हाथी पालकी और कंठी का कुरुब प्राप्त हुआ था। अजमेर के अंग्रेज़ आफिसरों में आपका बड़ा सम्मान था। आपके मुनीम जोशी रघुनाथदासजी तक अजमेर के आनरेरी मजिस्ट्रेट थे। आपने अपने भाइयों के साथ अजमेर में गोड़ी पार्श्वनाथजी का मन्दिर बनवाया। आनासागर पर सम्वत् १९०५ में बाग और घाट बनवाया। आप पाँचों भाइयों का कम उम्र में ही स्वर्गवास हो गया था। आप पाँचों भाइयो के बीच मेहता तेजकरणजी के पुत्र बुधकरणजी ही थे।

मेहता बुधकरणजी—आप लालचन्दजी और उम्मेदमलजी दोनों भ्राताओं के उत्तराधिकारी हुए। आपने बहुत पहले एफ० ए० की परीक्षा पास की थी। आप बड़े गम्भीर और बुद्धिमान थे। समाज में आपकी अच्छी प्रतिष्ठा थी। आप संस्कृत और जैन शास्त्रों के अच्छे ज्ञाता तथा कानून की उत्तम जानकारी रखने वाले पुरुष थे। आपके देवकरणजी तथा रूपकरजी नामक दो पुत्र हुए।

मेहता देवकरणजी तथा रूपकरणजी—आपका जन्म क्रमशः १९२५ के भाद्रपद में तथा १९३४ के श्रावण में हुआ। आप दोनों सज्जन अजमेर की ओसवाल समाज में वजनदार तथा समझदार पुरुष हैं। आप लोग बड़े विद्या-प्रेमी भी हैं। मेहता देवकरणजी ओसवाल हाई स्कूल के व्हाइस प्रेसिडेण्ट तथा रूपकरणजी बी० ए० उसके मंत्री हैं। रूपकरणजी के पुत्र अभयकरणजी सज्जन व्यक्ति हैं।

यह खानदान अजमेर मे एक प्राचीन तथा प्रतिष्ठित खानदान माना जाता है। आपके पास कई पुरानी वस्तुओं, हस्तलिखित पुस्तकों तथा चित्रों का अच्छा संग्रह है। आपके गृह देरासर में कई पीढ़ियों से सम्वत् १५२७ की श्री पार्श्वनाथ की मूर्ति एवं सम्वत् १६७७ की एक चन्द्रप्रभु स्वामी की मूर्ति है।



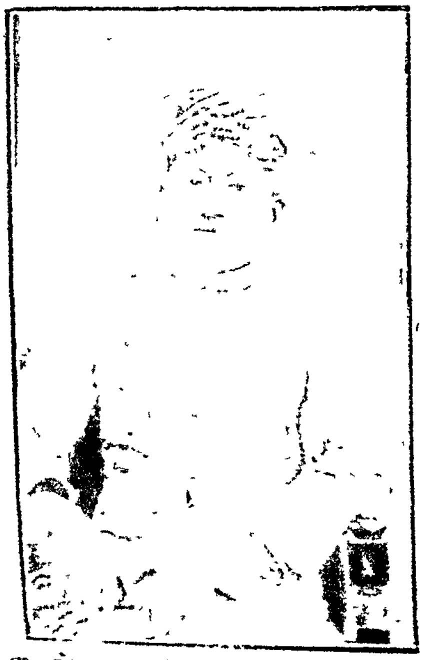
सेठ रामसिंहजी मेहता, उदयपुर.



सेठ मनोहरलालजी मेहता, उदयपुर.



कुँवर डूँगरमलजी
S/o जसकरणजी वैद, रतनगढ.



कु० [illegible]लालजी S/o जसकरणजी वैद, रतनगढ़.



कुँ० लाभचंदजी S/o जसकरणजी वैद, रतनगढ़.

मेहता मनोहरलालजी वेद का खानदान, उदयपुर

इस प्राचीन खानदान के प्रारम्भिक परिचय को हम इसके पूर्व में प्रकाशित कर चुके हैं। इसका इतिहास मेहता थिरपालजी के पौत्र तथा चन्द्रभानजी के तृतीय पुत्र सूरतरामजी से प्रारम्भ होता है। यह हम प्रथम ही लिख आये हैं कि आप अपने भाइयों के साथ अजमेर आये और यहाँ से आप उदयपुर चले गये। उसी समय से आपका परिवार उदयपुर में निवास कर रहा है।

मेहता सूरतरामजी के रायभानजी तथा बदनमलजी नामक दो पुत्र हुए। आप लोगों का व्यवसाय उस समय खूब चमका हुआ था। मेहता बदनमलजी संवत् १८९८ के लगभग उदयपुर आये। आपने आकर अपने व्यवसाय को और भी चमकाया तथा बम्बई, रंगून, हाङ्गकांग, कलकत्ता आदि सुदूर के नगरों में भी अपनी फर्मे स्थापित कीं। उस समय आप राजपूताने के प्रसिद्ध धनिकों में गिने जाते थे। आपकी धार्मिक भावना भी बढ़ी चढ़ी थी। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती चाँदबाई ने उदयपुर में एक धर्मशाला तथा एक मन्दिर भी बनवाया जो आज भी आपके नाम से विख्यात है। आपने मेवाड़ के कई जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार भी करवाये। मेहता बदनमलजी के निःसंतान स्वर्गवासी हो जाने पर आपके यहाँ आपके भतीजे मेहता कनकमलजी दत्तक आये।

मेहता कनकमलजी का राज दरबार में खूब सम्मान था। आपको उदयपुर के महाराणा सरूपसिंहजी ने संवत् १९१४ में सरूपसागर नामक तालाब के पास की २९ बीघा जमीन की एक बाड़ी बक्षी थी। जिसका परवाना आज भी आपके वंशजों के पास मौजूद है। इसके अतिरिक्त आपको राज्य की ओर से बैठक, नाव की बैठक, दरबार में कुर्सी की बैठक, सवारी में घोड़े को आगे रखने की इज्जत, बलेणा घोड़ा आदि २ कई सम्मान प्राप्त थे। आपने सबसे पहले उदयपुर महाराणाजी को बग्घी नजर की थी। आपके जवानमलजी तथा उदयमलजी नामक दो पुत्र हुए। इन दोनों का आपकी विद्यमानता में ही स्वर्गवास हो गया। अतः आप अपने यहाँ बीकानेर से पन्नालालजी को दत्तक लाये। मेहता पन्नालालजी के मनोहरलालजी तथा सुगनमलजी नामक दो पुत्र हुए।

मेहता मनोहरलालजी का जन्म संवत् १९४८ की भादवा वदी अमावस्या को हुआ। आपने बी० ए० की परीक्षा पास कर एक वर्ष तक लॉ में अध्ययन किया। आप नरसिंहगढ़ में सिटी मजिस्ट्रेट, सिविलजज तथा कस्टम्स और एक्साइज ऑफीसर रहे। इसके साथ ही आप वहाँ की म्युनिसीपैलिटी के व्हाइस प्रेसिडेण्ट तथा वहाँ की सुप्रसिद्ध फर्म मगनीराम गणेशीलाल के रिसीव्हर भी रहे। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर रीजेंसी कौंसिल के प्रेसीडेण्ट कर्नल लुआर्ड, नरसिंहगढ़ तथा भोपाल के

तत्कालीन पोलिटिकल एजण्ट खानबहादुर इनायत हुसैन, व्हाइस प्रेसिडेण्ट तथा दीवान आदि सज्जनों ने आपको कई प्रशंसापत्र दिये।

जिस समय आप नरसिंहगढ़ में थे उस समय आपको गवालियर महाराज ने कस्टम सुपरिण्टेण्डेण्ट की जगह के लिये बुलाया था। मगर उदयपुर के महाराणाजी ने आपको उदयपुर बुलाकर १ दिसम्बर सन् १९२३ में असिस्टेण्ट एक्साइज कमिश्नर के पद पर नियुक्त किया। इसके पश्चात् आप सन् १९२५ में असिस्टेण्ट कस्टम सुपरिन्टेंडेण्ट बनाये गये। तदनंतर आप कस्टम सुपरिंटेन्डेण्ट और फिर सन् १९२५ में एक्साइज कमिश्नर बनाये गये। आप आज कल छोटी सादड़ी के हाकिम हैं इसी प्रकार आप अकाउटंट जनरल, तीन साल तक म्यु० मेम्बर और ऑनरेरी मजिस्ट्रेट भी रहे। आपके कार्य्यों से रियासत और दोनों बहुत प्रसन्न रहे।

मेहता सुगनलालजी का संवत् १९५० की फागुन वदी ९ को जन्म हुआ। आप बी० ए० एल० एल बी० पास हैं। वर्तमान में आप रासमी में डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट हैं। आपके दिलीपसिंहजी तथा रणजीतसिंहजी नामक दो पुत्र हैं।

मेहता रामसिंहजी वेद का घराना, उदयपुर

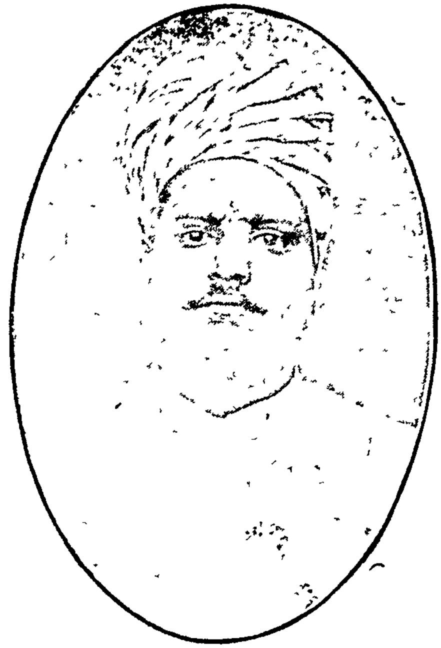
इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवास स्थान मेड़ता (मारवाड़) का है। आप श्री जैन श्वेताम्बर मंदिर आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। मेड़ता से इस परिवार के पूर्व पुरुष मेहता आलमचन्दजी उदयपुर आकर बस गये थे। तभी से यह खानदान यहीं पर निवास करता है। इनके पुत्र उम्मेदमलजी के रिखबदासजी तथा राजमलजी नाम के दो पुत्र हुए।

मेहता राजमलजी के अम्बालालजी और रामसिंहजी नामक दो पुत्र हुए। मेहता अम्बालालजी एक अच्छे मशहूर व्यक्ति हो गये हैं। आप मेवाड़ के नामी वकीलों में गिने जाते थे। मेहता रामसिंहजी का जन्म संवत् १९३५ में हुआ। आप इस समय मेवाड़ राज्य के महकमा खास में हेड क्लर्क हैं। आपने जैन श्वेताम्बर मूर्ति पूजक बोर्डिङ्ग हाउस को स्थापित करने में बड़ी कोशिश की। इसी प्रकार आपने एक चाँदी का हाथी भी बनवाया जो समय २ पर भगवान की रथयात्रा के काम में आता है।

आपके हिम्मतसिंहजी तथा खुमानसिंहजी नामक दो पुत्र हैं। हिम्मतसिंहजी एग्रीकलचर की तालीम पाकर इस समय असिस्टेंट सेटूलमेंट आफीसर के पद पर काम कर रहे हैं। खुमानसिंहजी इस समय पढ़ रहे हैं।



श्री गेंदमलजी वेद (माणकचन्द गेंदमल), मद्रास.



श्री गुलाबचन्दजी वेद (माणकचद गेंदमल), मद्रास.



श्री धनराजजी वेद (माणकचन्द गेंदमल), मद्रास.



कुँ० देवीचन्दजी S/o गुलाबचन्दजी वेद, मद्रास.

सेठ माणिकचंद गेंदमल वेद, मद्रास

इस परिवार का मूल निवास स्थान फलौदी (मारवाड़) का है। आप श्री श्वेताम्बर जैन सम्प्रदाय के मंदिर आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में सेठ मोतीलालजी हुए। आपके मेघराजजी नामक एक पुत्र हुए। आप ही ने सबसे पहले करीब साठ वर्ष पूर्व मद्रास आकर पुरस्वाकम् में बैंकिंग की फर्म स्थापित की। आपके माणकचंदजी, शिवराजजी तथा जोगराजजी नामक तीन पुत्र हुए।

सेठ माणकचंदजी बड़े ही व्यापार-कुशल और समझदार सज्जन थे। आपके द्वारा फर्म के व्यापार में बड़ी तरक्की हुई। आपका संवत् १९८० में स्वर्गवास होगया। आपने अपने भाई के पुत्रों के साथ भी समानता का व्यवहार किया। आपके भनराजजी नामक एक पुत्र हुए। आपका सं० १९७० में जन्म हुआ। आप वर्तमान में बैंकिंग का स्वतन्त्र व्यापार करते हैं।

सेठ शिवराजजी भी बड़े व्यापार में होशियार थे। मगर आपका स्वर्गवास संवत् १९६२ में कम उम्र में ही हो गया। आपके गेंदमलजी नामक एक पुत्र हुए। आपका सं० १९५७ में जन्म हुआ आप बड़े ही साहसी और व्यापारी व्यक्ति हैं। व्यापार में हजारों लाखों की जोखिम में पड़जाना आपका रोजाना का काम है। इस समय आप सोने और गिन्नी का अलग व्यापार करते हैं। मद्रास में सोने के व्यापारियों में आपका प्रथम नम्बर है।

सेठ जोगराजजी छोटी उम्र में ही स्वर्गवासी हुए। आपके गुलाबचन्दजी नामक पुत्र हुए। आपका जन्म संवत् १९६५ में हुआ। आप भी स्वतन्त्ररूप से बैंकिंग का व्यापार करते हैं। आपके देवीचन्दजी नामक एक पुत्र है।

इस खानदान की दान-धर्म और सार्वजनिक कार्य्यों की तरफ रुचि रही है। सम्वत् १९८५ में इस कुटुम्ब के सज्जनों ने ओशियाँ के मन्दिर पर सोने का कलश चढ़ाया तथा मद्रास की दादावाड़ी की छत्री के आसपास एक बराण्डा और हॉल तय्यार करवाया। इस कार्य में आपके करीब ५०००) लगे होंगे। फलौदी में आपने अपनी कुलदेवी के मन्दिर का जीर्णोद्धार भी करवाया। वहाँ आप लोगों की ओर से एक छत्री भी बनवाई गई है।

सेठ रावतमल सूरजमल वेद, मेहता मद्रास

इस परिवार का मूल निवास स्थान नागौर (मारवाड़) का है। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में सेठ तुलसीरामजी हुए। आपके रावत-

मलजी, जेठमलजी तथा अमानमलजी नामक तीन पुत्र हुए। करीब साठ पैंसठ वर्ष पूर्व सेठ रावतमलजी नागौर से पैदल रास्ते द्वारा मद्रास आये और सेंट थामस माउण्ट में अपनी दुकान स्थापित की। आप बड़े धार्मिक और साहसी व्यक्ति थे। आपके हाथों से फर्म की तरक्की हुई। आप संवत् १९७७ में अस्सी वर्ष की आयु में गुजरे। आपके सूरजमलजी नामक एक पुत्र हुए।

सेठ सूरजमलजी का जन्म संवत् १९३४ में हुआ। आप भी व्यापार में बड़े होशियार थे। आपने अपनी फर्म की खूब वृद्धि की। आप संवत् १९७१ में स्वर्गवासी हुए। आपके निःसंतान गुजरने पर आपके नाम पर सेठ अमानमलजी के तीसरे पुत्र सेठ शम्भूमलजी गोद आये।

सेठ शम्भूमलजी का जन्म सम्वत् १९४९ में हुआ। आप शांत प्रकृति के धार्मिक पुरुष हैं। आपकी ओर से गरीबों को सदाव्रत दिया जाता है। आपके मांगीलालजी नामक एक पुत्र है।

सेठ गुलाबचन्दजी वेद, जौहरी जयपुर

उदयपुर स्टेट के खंडेला नामक स्थान से सेठ खुशीलालजी वेद जयपुर आये। आपके पुत्र गुलाबचन्दजी कलकत्ता गये। आप विलायत से पन्ना मंगाकर भारत में बेचते तथा यहाँ से विलायत के लिए जवाहरात भेजते थे। इस व्यापार में आपने अच्छी इज्जत और सम्पत्ति उपार्जित की। तदनंतर आपने कलकत्ते में दो विशाल कोठियाँ खरीदीं। संवत् १९५८ में आप स्वर्गवासी हुए। वेद गुलाबचन्दजी के मिलापचन्दजी तथा पूनमचन्दजी नामक २ पुत्र हुए। जौहरी पूनमचन्दजी ने जयपुर में दो बगीचे बाजार में दुकानें तथा हवेलियाँ खरीद कर अपने कुटुम्ब की स्थाई सम्पत्ति को बढ़ाया। जयपुर महाराजा माधौसिंहजी की इन पर कृपा थी। इन्हें राज्य की ओर से लवाजमा और राज दरबार में जाने के लिये चोवदारों का सम्मान प्राप्त था। मिलापचन्दजी का स्वर्गवास संवत् १९५८ में तथा पूनमचन्दजी का संवत् १९८० में हुआ।

जौहरी पूनमचन्दजी के पुत्र चम्पालालजी का जन्म सम्वत् १९६२ में हुआ। आपके यहाँ जवाहरात का व्यापार और स्थाई सम्पत्ति के किराये का कार्य्य होता है। कलकत्ते में आपकी फर्म पर बैंकिंग तथा किराये का काम होता है। यह परिवार जयपुर की जौहरी समाज में प्रतिष्ठित माना जाता है।

वेद मेहता रामराजजी, मेड़ता

वेद मेहता रामराजजी के पूर्वज मेहता दीपचन्दजी महाराजा बखतसिंहजी की हाजिरी में नागौर में रहते थे। जब महाराजा बखतसिंहजी और उनके भतीजे रामसिंहजी के बीच सोजत के पास लूंडावास नामक स्थान में झगड़ा हुआ, उस लड़ाई में महाराजा बखतसिंहजी की ओर से लड़ते हुए मेहता दीपचन्दजी काम आये थे। अतएव उनके पुत्र भागचन्दजी को सम्वत् १८०८ में मेड़ते परगने का चोलियास नामक ५००) की रेख का गाँव जागीरी में मिला।

सम्वत् १८११ में महाराजा विजयसिंहजी का मेड़ते के पास युद्ध हुआ, उसमें मेहता भागचंदजी दरबार की ओर से लड़ते हुए काम आये। जब सम्वत् १८४७ में मराठों की फौज ने मारवाड़ पर हमला किया, उस समय भागचन्दजी के पौत्र सवाईसिंहजी जोधपुर दरबार की ओर से युद्ध में हाजिर थे। इसी तरह इस परिवार के व्यक्ति महाराजा भानसिंहजी की भी सेवाएँ करते रहे।

मेहता सवाईसिंहजी के बाद क्रमशः हिन्दूसिंहजी, शिवराजजी तथा सुखराजजी हुए। सुखराजजी के धनराजजी, अनराजजी और दीपराजजी नामक ३ पुत्र थे। इनमें दीपराजजी के पुत्र रामराजजी मौजूद हैं। आप धनराजजी के नाम पर दत्तक आये हैं। आपके पुत्र मोहनराजजी तथा सोहनराजजी हैं।

वेद मेहता हेमराजजी चौधरी, मेड़ता

इस परिवार के पूर्वज मेहता साईंदासजी के पुत्र किशनदासजी और मोहकमदासजी को बादशाह आलमगीर के जमाने में कई परवाने मिले। उनसे मालूम होता है कि इनको शाही जमाने से चौधरी का पद मिला। ओसवाल समाज में धड़े बन्दी होने से बहुत से लोग जब मोहकमसिंहजी के पुत्र विजयचन्दजी को चौधरी नहीं मानने लगे, तब सम्वत् १८३६ की पौष सुदी ५ को जोधपुर दरबार ने एक परवाना देकर इन्हें चौधरायत का पुनः अधिकार दिया। चौधरी विजयचन्दजी के बाद क्रमशः मूलचन्दजी, रूपचन्दजी, नगराजजी और धनराजजी हुए। ये सब सज्जन व्यापार के साथ चौधरायत का कार्य भी करते रहे। धनराजजी का स्वर्गवास सम्वत् १९४७ में हुआ। इस समय इनके पुत्र हेमराजजी चौधरी विद्यमान हैं। आप भी मेड़ता की ओसवाल न्यात के चौधरी हैं।

सेठ गुलाबचन्द मुलतानचन्द वेद मेहता, चांदोरी

इस परिवार का मूल निवासस्थान पी (पुष्कर के समीप) है। आप श्वेताम्बर जैन समाज के स्थानकवासी आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में सेठ भींवराजजी हुए। आप ८० साल

पहले मारवाड़ से अंकाई (नाशिक) और फिर वहां से चांदोरी गये। यहाँ पर आपने अपनी एक दुकान स्थापित की। आपके हरकचंदजी तथा नारायणदासजी नामक दो पुत्र हुए। आपने बहुत साधारण हालत से अपनी प्रशंसनीय उन्नति की। आप दोनों भाई अपनी मौजूदगी ही में अलग २ होगये थे। सेठ हरकचंदजी के प्रेमराजजी तथा नारायणदासजी के रतनचंदजी व मुलतानचन्दजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ प्रेमराजजी के पुत्र खुशालचन्दजी वर्तमान में विद्यमान हैं और खुशालचन्द प्रेमराज के नाम से व्यापार करते हैं। सेठ रतनचन्दजी संवत् १९७० में गुजरे। आपके भीकचन्दजी तथा गुलाबचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से गुलाबचंदजी सेठ मुलतानचंदजी के नाम पर दत्तक गये सेठ मुलतानचंदजी सम्वत् १९४० में स्वर्गवासी हुए। वर्तमान में सेठ भीकचंदजी तथा गुलाबचन्दजी विद्यमान हैं। आप लोगों का जन्म क्रमशः सम्वत् १९५६ और १९४८ में हुआ। आप दोनों धार्मिक तथा प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं।

सेठ गुलाबचन्दजी के मिश्रीमलजी, दीपचन्दजी तथा माणकचन्दजी नामक तीन पुत्र हैं। दीपचन्दजी भीकचन्दजी के नाम पर दत्तक गये हैं। सेठ भीकचन्दजी 'भीकचन्द रतनचन्द' के नाम से तथा गुलाबचन्दजी 'गुलाबचन्द मुलतानचन्द' के नाम से व्यापार करते हैं।

सेठ पृथ्वीराज रतनलाल वेद मेहता, आकोला

इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवासस्थान जोधपुर (मारवाड़) का है। वहाँ से यह कुटुम्ब गोविन्दगढ़ (अजमेर जिला) में आकर बसा। तभी से यह परिवार वहीं पर निवास करता है। इस परिवार वाले श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में सेठ पृथ्वीराजजी हुए। आपका जन्म सम्वत १९२१ में हुआ। सबसे प्रथम आप ही ने आकोला जाकर सोना चांदी व आढ़त का काम प्रारंभ किया। इस समय आप विद्यमान हैं और अकोला की ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित माने जाते हैं। आपके नाम पर रासा से रतनलालजी दत्तक आये हैं।

वेद मेहता जीवनमल बहादुरमल का परिवार, छिंदवाड़ा

सम्वत् १९२८ में वेद मेहता जीवनमलजी और उनके पुत्र बहादुरमलजी नागोर से कामठी गये और वहाँ से आप दोनों पिता पुत्र छिंदवाड़ा आये। यहाँ आकर आप लोगों ने कुछ मास तक सेठ रतनचन्द केशरीचन्द छल्लानी के यहाँ सर्विस की और पीछे कपड़ा सोना चांदी आदि का घरू रोजगार शुरू किया। सेठ जीवनमलजी का सम्वत् १९६१ में स्वर्गवास हुआ। आपके ४ पुत्र हुए जिनमें बहादुरमलजी तथा



सेठ मिश्रीलालजी वेद, फलौदी.



सेठ पूनमचंदजी वेद, रतनगढ़.



सेठ पांचूलालजी वेद, फलौदी.



श्री सूरजमलजी नाहटा, इन्दौर (पेज नं ४०४)

समीरमलजी का परिवार चला तथा शेष ठाकुरमलजी और जेठमलजी निसंतान गुजरे। सेठ बहादुरमलजी का सम्वत १९८७ में स्वर्गवास हुआ। आपके नथमलजी, बुधमलजी, गुलाबचन्दजी, चांदमलजी, केशरीचन्दजी, मोतीलालजी और माणकचन्दजी नामक ७ पुत्र हुए, इनमें बुधमलजी, गुलाबचन्दजी, केशरीचन्दजी और मोतीलालजी विद्यमान हैं तथा शेष ३ भ्राता स्वर्गवासी होगये। आप सब भाइयों का व्यापार संवत् १९८७ से अलग अलग होगया है।

वेद मेहता बुधमलजी ने मेट्रिक तक अध्ययन किया है; आपने कपड़े व सराफी के व्यापार में अच्छी उन्नति की। आपके छोटे भाई गुलाबचन्दजी ने सन् १९१९ में बी० ए०, बी० कॉम की परीक्षा पास की। कुछ समय तक हाई स्कूल में सर्विस करने के बाद अब आप कपड़े का व्यापार करते हैं। आपको नागपुर कवि सम्मेलन में तुकबंदी के लिये पुरस्कार मिला था। सन् १९१९ से २४ तक आप मारवाड़ी सेवा संघ के सभापति रहे। सी० पी० बरार की ओसवाल सभा के स्थापकों में भी आपका नाम है। लेख तथा पुस्तिकाएं लिखने की ओर भी आपकी रुचि है।

मेहता समीरमलजी विद्यमान है। आपके पुत्र इन्द्रचन्दजी, ताराचन्दजी, चैनकरणजी, प्रेमकरणजी, पूनमचन्दजी और सूरजमलजी हैं। इनके यहाँ इन्द्रचन्दजी ताराचन्द तथा प्रेमकरण चैनकरण के नाम से कपड़ा, होयजरी और किराने का काम होता है। इन्द्रचन्दजी तथा ताराचन्दजी नवीन विचारों के युवक हैं।

लाला कल्याणदास कपूरचन्द वेद मेहता, आगरा

यह परिवार लगभग १५० साल पूर्व आगरा में आया। इस कुटुम्ब में लाला बसन्तरायजी हुए, आपके पुत्र कल्याणदासजी ने लगभग १०० साल पहिले आगरे में उपरोक्त नाम से फर्म स्थापित की, उस समय से अब तक यह परिवार सम्मिलित रूप से व्यवसाय कर रहा है। लाला कल्याणदासजी के कपूरचन्दजी, कुन्दनमलजी और गदोमलजी नामक पुत्र हुए।

लाला कपूरचन्दजी इस परिवार में नामी व्यक्ति हुए, आपने बहुत सी रियासतों से जवाहरात तथा गोटे का व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किया। आपके पुत्र मोतीलालजी ने व्यवसाय की अच्छी उन्नति की। सम्वत् १९७९ में आप स्वर्गवासी हुए। आपने अपने भतीजे पद्मचन्दजी को दत्तक लिया, आप योग्य व्यक्ति हैं।

लाला कुन्दनमलजी धर्मात्मा व्यक्ति थे, सम्वत् १९८० में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र लाला चुन्नीलालजी का ४१ साल की आयु में सम्वत् १९६७ में स्वर्गवास हुआ। ये दृढ़ चरित्र के व्यक्ति

थे। आपके लखमीचन्दजी, फूलचन्दजी, बाबूलालजी, और पदमचन्दजी नामक ४ पुत्र हुए, इनमें से पदमचन्दजी, लाला मोतीलालजी के नाम पर दत्तक गये। लाला बाबूलालजी विद्यमान हैं। आपके ५ पुत्र तथा पदमचन्दजी के १ पुत्र है। आपके यहाँ आरम्भ से ही बैंकिंग, गोटा तथा जवाहरात का व्यापार होता है।

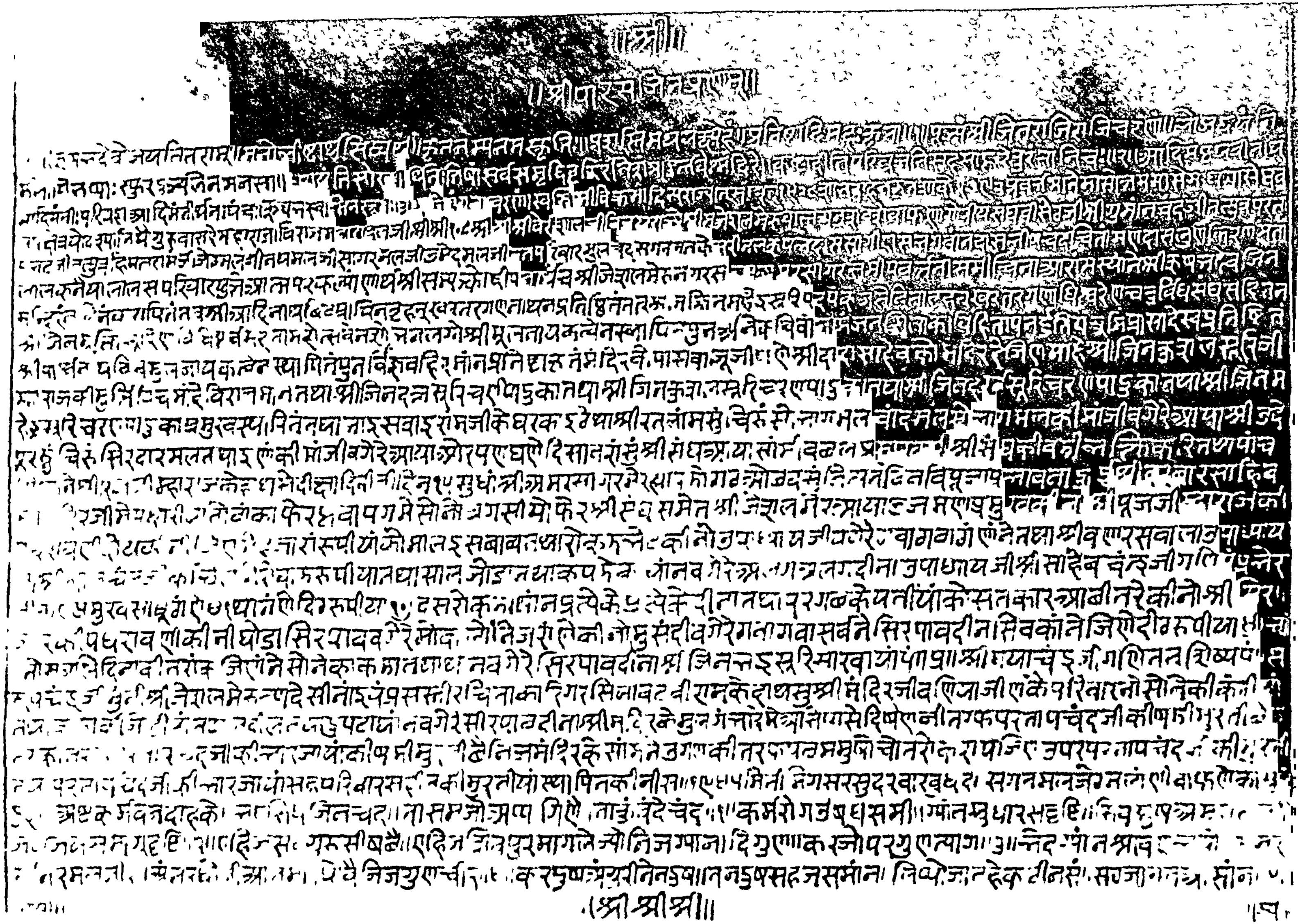
सेठ दीपचन्द पाँचूलाल वेद, फलोदी

वेद मुकुन्दसिंहजी के पुत्र रासाजी सम्वत् १६८१ में फलोदी आये, इनकी ८ वीं पीढ़ी में सेठ पूनमचन्दजी हुए। आपके रेखचन्दजी, जुहारमलजी और दीपचन्दजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें सेठ जुहारमलजी ने सम्बत् १९४३ में धमतरी में रेखचन्द जुहारमल के नाम से दुकान की, तथा सब भाइयों ने मिलकर व्यापार की तरक्की की। रेखचन्दजी के पुत्र लाभचन्दजी विद्यमान हैं। वेद जुहारमलजी के पुत्र सुगनचन्दजी तथा पौत्र राजमलजी चम्पालालजी और पाँचूलालजी हुए। इनमें पाँचूलालजी, दीपचन्दजी के नाम पर दत्तक गये। सम्वत् १९८८ में दीपचन्दजी का स्वर्गवास हुआ। इनकी धर्मपत्नी श्री धूलीबाई ने अपने स्वर्गवासी होने के समय एक संघ निकालने की थी इच्छा प्रगट की अतएव इनके पुत्र पांचूलालजी ने संवत् १९८९ की माघसुदी ९ को फलोदी से जेसलमेर के लिये एक संघ निकाला। इस संघ में १८०० यात्री २१ साधू और ९८ साध्वियां थीं। इसमें सवारी के लिये ५३४ गाड़ियाँ तथा १४७ ऊँट थे। इस इस संघ में लगभग ५० हजार रुपये व्यय हुए।

सेठ सुगनचन्द रतनचन्द वेद, बरोरा

इस परिवार के सेठ पोमचन्दजी वेद सम्वत् १९३५ के पूर्व अपने निवास बीकानेर से हिंगनघाट आये, तथा यहाँ से नागपुर जाकर सेठ अमरचन्द गेंदचन्द गोलेछा के यहाँ मुनीम रहे। इनके पुत्र सुगनचन्दजी वेद सम्वत् १९४४ में बरोरा गये तथा वहाँ सेठ अमरचन्द सिंधकरण गोलेछा की भागीदारी में कारवार शुरू किया। सम्वत् १९७९ तक सम्मिलित कारबार रहा, इस व्यापार को सुगनचन्दजी वेद के हाथों से अच्छी उन्नति मिली। पश्चात् उपरोक्त नाम से आपने अपनी स्वतन्त्र दुकान की। बरोरा तथा भादकजी के तीर्थों के कार्यों में भी आप सहयोग लिया करते थे। सम्बत् १९८९ की काती सुदी ११ को आपका स्वर्गवास हुआ।

इस समय सुगनचन्दजी वेद के पुत्र रतनचन्दजी, सागरमलजी तथा फूलचन्दजी मेसर्स सुगनचन्द रतनचन्द के नाम से गल्ला तथा कमीशन का काम करते हैं। आप मन्दिर मार्गीय आमनाय के मानने वाले हैं।



अमरसागर—बाफणा हिम्मतरामजी के मंदिर की प्रशस्ति जैसलमेर (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

बापना

बापनावंश की उत्पत्ति

जैन सम्प्रदाय शिक्षा नामक ग्रन्थ में बापनावंश की उत्पत्ति का विवेचन करते हुए लिखा है कि "धारा नगरी का राजा पृथ्वीधर पँवार राजपूत था। उनकी सोलहवीं पीढ़ी में जोबन और सच्चू नामक दो पुत्र हुए। ये दोनों भाई किसी कारणवश धारा नगरी से निकल गये और उन्होंने जांगलू पर विजय प्राप्तकर वहीं अपना राज्य स्थापित किया। विक्रम सम्वत् ११७७ में तत्कालीन जैनाचार्य्य श्री जिनदत्तसूरिजी ने इन दोनों भाइयों को जैन धर्म का प्रतिबोध देकर महाजन वंश और बहुफणा गोत्र की स्थापना की।"

उपरोक्त कथन को ऐतिहासिक महत्व किन अंशों में प्राप्त है यह यद्यपि निश्चय पूर्वक नहीं कहा जा सकता, तथापि इसमें सन्देह नहीं कि उक्त प्रान्त में बापना वंश वाले बड़े प्रतापी और प्रसिद्ध रहे हैं। नीचे हम इसी वंश का उपलब्ध क्रमबद्ध इतिहास देने का प्रयत्न करते हैं—

जैसलमेर का बापना (पटवा) खानदान

ओसवाल जाति के जिन गौरवशाली वंशों ने राजस्थान के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है, जिन्होंने राजनैतिक, व्यापारिक और धार्मिक जगत में अपने गौरव और प्रताप का अपूर्व प्रकाश डाला है, उनमें जैसलमेर के बापनावंश का आसन बहुत ऊँचा है। इस वंश में कुछ विभूतिया ऐसी हो गई हैं, जिनके द्वारा निर्माण की हुई निर्मल स्मृतियां आज भी उनके गौरव का गान कर रही हैं।

बापना परिवार का व्यापारिक विकास

इस खानदान का प्राचीन इतिहास यद्यपि इस समय उपलब्ध नहीं है, फिर भी बापना हिम्मत-रामजी द्वारा बनाए हुए अमरसागर की प्रशस्ति में बापना देवराजजी से लेकर आगे की पुश्तों का सिलसिले-वार वर्णन पाया जाता है। उससे मालूम होता है कि सेठ देवराजजी बापना के पुत्र सेठ गुमानचन्दजी बापना हुए। सेठ गुमानचन्दजी के पाँच पुत्र थे (१) सेठ बहादुरमलजी (२) सेठ सवाईरामजी (३) सेठ मगनीरामजी (४) सेठ जोरावरमलजी और (५) सेठ प्रतापचन्दजी। इनमें से सेठ बहादुरमलजी ने कोटा शहर में, सेठ सवाईरामजीने झालरापाटन में, सेठ मगनीरामजी ने रतलाम में, सेठ जोरावरमलजी ने

उदयपुर में और सेठ प्रतापचन्दजी ने जैसलमेर और इन्दौर में अपनी अपनी कोठियाँ स्थापित कीं। उस समय इस परिवार वालों के हाथ में बहुत सी रियासतों का सरकारी खजाना भी था। इसके अतिरिक्त राजस्थान के पचासों व्यापारिक केन्द्रों में इनकी कुल मिलाकर करीब चार सौ दुकानें थीं। इनमें से एक दुकान सुदूरवर्त्ती चायना देश में भी खोली गई थी। इनमें से कई केन्द्रों में आपने कई बहुमूल्य इमारतें भी बनवाईं। जो अब भी पटवों की हवेलियों के नाम से स्थान २ पर प्रसिद्ध हैं।

बापना परिवार के धार्मिक कार्य्य

कहना न होगा कि बापना परिवार ने राजनैतिक और व्यापारिक क्षेत्र में अपनी महान् प्रतिभा का प्रदर्शन किया। उसी प्रकार बल्कि उससे भी किसी अंश में एक पैर आगे उन्होंने धार्मिक क्षेत्र में अपनी महान् कीर्ति स्थापित की। जैसलमेर का सुप्रसिद्ध अमर सागर नामक बाग जो क्या प्राकृतिक सौन्दर्य्य की दृष्टि से, क्या स्थापत्यकला की दृष्टि से, सभी दृष्टियों से अत्यन्त सुन्दर है, इसी बापनावंश के महान् पुरुषों के द्वारा बनाया गया है। इस बाग में दो मन्दिर हैं, जिनमें से एक छोटा सम्वत् १८९७ में सेठ सवाईरामजी ने और दूसरा बड़ा सम्वत् १९२८ में सेठ प्रतापचन्दजी के पुत्र सेठ हिम्मतरामजी ने बनाया। इनमें से बड़ा मन्दिर बहुत ही सुन्दर, दुमंजिला और विशाल बना हुआ है। मन्दिर के सामने ही सुरम्य उद्यान है। इस मन्दिर में संगमरमर की कोराई और शिल्प-कार्य्य का सौन्दर्य्य बहुत ही अच्छा प्रस्फुटित हुआ है। सुदूर मरुभूमि में ऐसा विशाल मूल्यवान भारतीय शिलपकला का नमूना अवश्य ही दर्शनीय है।

इस अमरसागर में एक विशाल प्रशस्ति * लगी हुई है। इस प्रशस्ति से मालूम होता है कि संवत् १८९१ में इन पांचों भाइयों ने मिलकर आबू, तारङ्गा, गिननार और शत्रुंजय की यात्रा के लिए, एक बड़ा भारी संघ निकाला था। इस संघ को निकालने में आप सब भाइयों ने करीब २३ लाख रुपया खर्च किया। इस संघ की रक्षा के लिए उदयपुर, कोटा, बून्दी, जैसलमेर, टोंक, इन्दौर तथा अंग्रेजी सरकार ने सेनाएं भेजीं, जिनमें ४००० पैदल १५०० सवार और चार तोपें थीं। इस संघ के उपलक्ष्य में ओसवाल जाति ने आपको संघाधि पति की पदवी और जैसलमेर के महारावल ने संघवी-सेठ की पदवी और लौद्रवा नामक-ग्राम जागीर में बख्शा, तथा हाथी की बैठक का सम्मान भी दिया।

---

* इस प्रशस्ति का तथा अमर सागर के मन्दिरों का चित्र इसी ग्रन्थ में "धार्मिक महत्व" नामक अध्याय में दिया गया है।



स्व० सेठ बहादुरमलजी बापना, कोटा ।



स्व० सेठ मगनीरामजी बापना, कोटा ।



स्व० सेठ भभूतसिंहजी बापना, रतलाम ।



स्व० सेठ दानमलजी बापना, कोटा ।

इस विशाल संघ ने मार्ग में स्थान २ पर कई क्षेत्रों में बहुत सा धन लगाया, तथा कई स्थानों पर रथयात्रा के महोत्सव करवाये। बड़े बड़े तीर्थों पर मुकुट, कुण्डल, हार, कंठी, भुजबन्द इत्यादि आभूषण और नगदी रुपये चढ़ाये। कई स्थानों पर बड़े बड़े भोज किये और लहाणें बांटी। कई पुराने मन्दिरों के जीर्णोद्धार करवाये। उसके पश्चात् जब बापिस आये तब जैसलमेर के रावलजी जनाने समेत आपकी हवेली पर पधारे। वहां पर आपने रुपयों का-चौंतरा * किया। और सिरपेच, मोतियों की कण्ठी, कड़े, दुशाले, हाथी, घोड़ा और पालकी रावलजी के नजर किये। प्रशस्ति में यह भी उल्लेख है कि आपकी हवेलियों पर उदयपुर के महाराणाजी, कोटा के महारावजी तथा बीकानेर, किशनगढ़, बून्दी और इन्दौर के महाराजा भी पधारे थे।

इसके अतिरिक्त इस प्रशस्ति से यह भी मालूम होता है कि इस परिवार ने भी धूलेवाजी के मन्दिर पर नौबतखाना किया और गहना चढ़ाया, जिसमें करीब एक लाख रुपया लगा। मक्षीजी के मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया, उदयपुर ओर कोटा में मन्दिर, छत्री और धर्मशाला बनवाई। तथा जैसलमेर में अमरसागर का सुरम्य उद्यान बनवाया।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट मालूम होता है कि धार्मिक, व्यापारिक और राजनैतिक क्षेत्रों में इस परिवार के महान् व्यक्तियों ने कितनी महान् कार्य्यशीलता दिखलाई।

सेठ बहादुरमलजी और मगनीरामजी का परिवार

हम ऊपर लिख आये हैं कि सेठ गुमानमलजी बापना के पाँच पुत्रों में सबसे बड़े सेठ बहादुरमलजी थे। इन्होंने अपने व्यापार की प्रधान कोठी कोटा में स्थापित की थी। सेठ बहादुरमलजी बड़े बुद्धिमान और दूरदर्शी व्यक्ति थे। इन्होंने शुरू शुरू में कुनाड़ी ठिकाना, बूंदी राज्य और कोटा में छोटे स्केल पर व्यापार प्रारम्भ कर क्रमशः लाखों रुपये की सम्पत्ति उपार्जित की, और धीरे धीरे आपने तथा आपके भाइयों ने सारे भारत में करीब चारसौ दुकानें स्थापित कीं, जिनका उल्लेख हम ऊपर कर आये हैं। सेठ बहादुरमलजी का कोटा रियासत के राजकीय वातावरण में बहुत अच्छा प्रभाव था। रियासत से आपकी काफी घनिष्टता होगई थी और लेनदेन का व्यापार भी चालू हो गया था। कई बार तो रियासत की तरफ़ आपके

---

* उस समय में राजस्थानी रियासतों में चौंतरे का बहुत रिवाज था। भेंट करने वाले की जितनी हैसियत होती उसके अनुसार रुपयों का चौंतरा बनवा कर वह महाराजा को इस पर बिठाता और फिर वे रुपये नजर कर देता था।

दस दस लाख रुपया बाकी रहते थे। इसके सिवाय बून्दी और टोंक से भी आपका व्यवहार बहुत बढ़ा जिसके परिणाम स्वरूप बून्दी से आपको रायथल और टोंक से खुर्रा गांव जागीर में मिला।

सेठ बहादुरमलजी के समय में अंग्रेज गवर्नमेण्ट और देशी रियासतों के बीच अहदनामे होने में बड़ी झंझटें हो रही थीं। कहना न होगा कि इन समस्याओं को सुलझाने में सेठ बहादुरमलजी और इनके छोटे भाई जोरावरमलजी ने बड़ी सहायता पहुँचाई। इनके इस कार्य्य से प्रसन्न होकर गवर्नमेण्ट ने सेठ बहादुरमलजी को देवली एजेन्सी का खजानची मुकर्रर किया। तथा कोटा रियासत से भी आपको चांदी की छड़ी, अडानी, छत्ते, मियाना, पालकी, ताम जाम, हाथी, घोड़ा मय सोने के साज के और जागीरी तथा कई पट्टे परवाने भी मिले।

सेठ बहादुरमलजी की धार्मिक प्रवृत्ति भी बहुत बढ़ी चढ़ी थी। ऊपर बापना परिवार के जिन धार्मिक कार्य्यों का उल्लेख किया गया है, उनमें तो सेठ बहादुरमलजी सम्मिलित थे ही, उनके अलावा भी इन्होंने व्यक्तिगत रूप से कई कार्य किये, और अन्त में शत्रुंजय का एक बड़ा संघ निकालने का भी विचार किया, मगर उस विचार के पूर्ण होने के पूर्व ही वि० सं० १८८२ में आपका स्वर्गवास होगया।

सेठ दानमलजी—सेठ बहादुरमलजी के कोई पुत्र न होने से आप अपने भ्राता सेठ मगनीरामजी के पुत्र सेठ दानमलजी को अपना उत्तराधिकारी बना गये और उनको अपने धर्म संकल्प अर्थात् शत्रुंजय यात्रा का संघ निकालने का आदेश कर गये। सेठ दानमलजी भी बड़े धर्मनिष्ठ और प्रतापी पुरुष हुए। आपने सेठ बहादुरमलजी के कार्य को बड़ी योग्यता से संचालित किया। इन्हीं के समय में संवत् १९०९ में पाँचों भाइयों का यह सम्मिलित परिवार अलग २ हुआ, जिसके अनुसार कोटे का कारबार सेठ दानमलजी के, झालावाड़ का सेठ सवाईरामजी के, रतलाम का सेठ मगनीरामजी के, उदयपुर का सेठ जोरावरमलजी के और इन्दौर का सेठ परतापचंदजी के जिम्मे हुआ। इस प्रकार कारोबार विभक्त हो जाने पर सेठ दानमलजी स्वतन्त्र रूप से कोटे में अपना व्यापार करने लगे। आपने भी कोटा रियासत में कई प्रकार के सम्मान और जागीरी प्राप्त की। जिसके परवाने अभी भी आपके वंशजों के पास विद्यमान हैं।

सेठ दानमलजी की धर्म पर भी अधिक रुचि थी। उधर आपको अपने पिता की आज्ञा पालन करने का भी पूरा ख्याल था। इसीसे आपने शत्रुञ्जय यात्रा का संघ निकालने का निश्चय करके अपने चारों काकाओं को उदयपुर, झालरापाटन, इन्दौर और रतलाम से बुलवाये और संघ निकालने की पूरी तैयारी की। संघ के कर्ता धर्ता आप ही थे अतएव संघपति की माला आपको ही पहिनाई गई। इस संघ की हिफाजत के लिए अंग्रेज सरकार, उदयपुर, इन्दौर, टोंक, बूँदी, जैसलमेर और कोटा ने अपने अपने खर्चे से फौजें भेजी। इसमें सबसे ज्यादा फौज कोटा राज्य की थी १००० पैदल की पल्टन



स्व० सेठ पूनमचंदजी बापना, कोटा.



स्व० सेठ दीपचंदजी बापना, रतलाम.



स्व० सेठ हमीरमलजी बापना, रतलाम.



स्व० कुँवर राजमलजी बापना, कोटा.

और सौ सवार, ९ ढाले, चार तोपें और नगारा निशान) कोटा की इस विशाल सेना के आमदोरफ्त में करीब एक लाख रुपये के खर्च हुआ, जो सेठ दानमलजी के आग्रह करने पर भी कोटा नरेश ने नहीं लिया। इस संघ में खरतर गच्छ के जैनाचार्य श्री जिन महेन्द्रसूरिजी के साथ और भी साधु साध्वियाँ व यती थे जिनकी संख्या कुल मिलाकर करीब १५०० थी। इसके अतिरिक्त कई अन्य गच्छ के आचार्य्य भी थे। इस संघने आबू, गिरनार, तारंगा, श्री गोडवाड़ की पंच तीर्थी कई एक यात्रायें की। रास्ते में कई स्थानों पर जीर्णोद्धार कराये, कई स्थानों में दादा वाड़ियाँ बनवाई और बड़े बड़े स्वामी वत्सल भी किये। इस संघ में लगभग २३ लाख रुपया खर्च हुआ। इस महान् कार्य के लिए श्री संघ ने तथा जैसलमेर दरबार ने सेठ दानमलजी को संघवी की पदवी प्रदान की। इसके अलावा आपने दो जैन मन्दिर—एक बूँदी रियासत में और दूसरा कोटा राज्यान्तर्गत ठिकाना कुनाड़ी में—बनवाये। कोटा शहर में एक दानबाडी बनवाई जिसका दृश्य देखने दो योग्य है। इसमें श्री पार्श्वनाथजी की मूर्ति स्थापित की है। इस प्रकार आप धर्म-कार्य करते हुये सम्वत् १९२५ में स्वर्गवासी हो गये। आपके कोई पुत्र न होने के कारण आपने अपने भ्राता रतलाम वाले सेठ भभूतसिंहजी के तृतीय पुत्र हमीरमलजी को गोद लिया।

सेठ हमीरमलजी का वृतान्त लिखने के पूर्व हम यहाँ संक्षेप में रतलाम वाले बापनाओं का वृतान्त लिख देना आवश्यक समझते हैं।

सेठ हमीरमलजी के दोनों भाई सेठ पूनमचन्दजी और दीपचन्दजी रतलाम में ही रहे और वहीं पर अपना कारोबार करते रहे। आप रियासत जावरा और अँग्रेज सरकार की नीमच छावनी के खजानची भी थे। इस तरह से आपने भी लाखों रुपये उपार्जन किये। धर्म में भी आपका अत्यन्त प्रेम था। दीपचन्दजी ने रतलाम में अपनी हवेली के सामने एक बगीचा बनवाकर उसमें एक विशाल जैन मन्दिर बनवाया। लेकिन इसकी प्रतिष्ठा आपके हाथ से न हो सकी। सेठ पूनमचंदजी के कोई पुत्र न था। सेठ दीपचन्दजी के दो पुत्र थे, सेठ चाँदमलजी और सेठ सोभागमलजी। सेठ सोभागमलजी को सेठ पूनमचन्दजी के यहाँ दत्तक लाये, मगर आपका भी युवावस्था में ही स्वर्गवास हो गया। तत्पश्चात् सेठ चाँदमलजी ने ही सब कारोबार करना आरम्भ किया। आपने भी अपने पूर्वजों की नीति अनुसार व्यापार द्वारा लाखों रुपये पैदा किये और अपने पिता के संकल्प यानी जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा को पूरा किया। इस प्रतिष्ठा के उत्सव में आपने करीब २ लाख रुपये व्यय किए। इसके अतिरिक्त आपने और भी कई धर्म कार्य में बहुतसा रुपया खर्च किया। आपके कोई पुत्र न होने से सेठ आपने केसरीसिंहजी को ही अपना मालिक बनाकर रतलाम और कोटे को एक कर दिया। अस्तु

कोटे में सेठ हमीरमलजी बड़ी चतुरता से अपना कार्य करते रहे। आपकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास ३५ वर्ष की युवावस्था में ही हो गया। उस समय आपके एक पुत्र सेठ राजमलजी थे। पत्नी का देहान्त हो जाने के पश्चात् आपने अपने कुटुम्बियों के आग्रह करने पर भी दूसरा ब्याह न कर अन्तिम समय तक ब्रह्मचर्य का पालन किया। दुर्भाग्य से आपके पुत्र राजमलजी का देहान्त आपकी मौजूदगी ही में केवल ३५ वर्ष की अल्पायु में हो गया। उस समय राजमलजी के पुत्र सेठ केशरीसिंहजी की उम्र बहुत ही कम थी।

तत्पश्चात् सेठ हमीरमलजी अपने पौत्र सेठ केशरीसिंहजी को धार्मिक और व्यापारिक शिक्षा देते हुए कार्य को सुचारु रूप से चलाते रहे। इनके काल में भी ब्रिटिश गवर्नमेंट तथा देशी राज्यों से बड़ा घरोपा रहा। आपका स्वर्गवास सम्वत् १९५९ में हुआ।

दीवान बहादुर सेठ केशरीसिंहजी

आपके पश्चात् आपके पौत्र दीवान बहादुर सेठ केशरीसिंहजी ने इस खानदान के व्यापार का सूत्र अपने हाथ में लिया। आप भी बड़े व्यापार कुशल और धार्मिक वृत्ति के पुरुष हैं। आपके कुल तीन विवाह हुए, जिसमें आपकी द्वितीय धर्म-पत्नी से आपको कुँवर बुद्धसिंहजी नामक एक पुत्र और एक कन्या हैं। कुँवर बुद्धसिंहजी बड़े होनहार और कुशाग्र बुद्धि के हैं। आपकी तीनों धर्म-पत्नियाँ धार्मिक वृत्ति की महिलायें थीं। इन्होंने वृत उद्यापन इत्यादि धार्मिक कार्य्यों में विपुल द्रव्य खर्च किया। सेठ साहब ने भी करीब चार पाँच दफे सिद्धाचल आदि तीर्थों की यात्रा की जिसमें हजारों रुपये खर्च किये।

दीवान बहादुर केशरीसिंहजी की ब्रिटिश गवर्नमेंट तथा देशी रियासतों में बहुत इज्जत है। सन् १९१२ के देहली दरबार में गवर्नमेण्ट की तरफ से आपको भी निमन्त्रण मिला था, उस समय आपने राजपूताना ब्लॉक में साठ हजार की लागत का अपना निजी कैम्प स्थापित किया था। आपके कार्यों से प्रसन्न होकर ब्रिटिश गवर्नमेण्ट ने आपको सन् १९१२ में रायसाहब, १९१६ में रायबहादुर और १९२५ में दीवान बहादुर की सम्माननीय उपाधियों से विभूषित किया। इसके अतिरिक्त देवली और नीमच के सिवाय आबू, मेवाड़ एजन्सी और मानपुर के खजाने भी आपके सुपुर्द किये। आपको कोटा, बून्दी, जोधपुर, रतलाम, टोंक इत्यादि रियासतों से पैरों में सोना, जागीर व ताजीम मिली हुई है। आपकी मौजूदा सेठानीजी को भी जोधपुर व बून्दी से पैरों में सोना और ताजीम बख्शी हुई है। केवल इतना ही नहीं प्रत्युत आपके पुत्र, पुत्री, भानेज, श्वसुर, फूफा और दो मुनीमों को भी टोंक रियासत ने सोना बख्शा है। जब आप टोंक जाते हैं तो वहाँ के एक उच्चाधिकारी आपकी अगवानी के लिये बहुत दूर तक सामने



श्री स्व० सौभागमलजी बापना, रतलाम.



श्री० स्व० चांदमलजी बापना, रतलाम.



दीवानबहादुर सेठ केशरीसिंहजी बापना, कोटा.



कुँवर बुधसिंहजी S/o केशरीसिंहजी, कोटा.

आते हैं। रतलाम दरबार से भी आपकी बड़ी घनिष्टता है। वहाँ से भी आपको सोना और ताजीम के अतिरिक्त राज्यभूषण की सम्माननीय उपाधि प्राप्त है। इस रियासत के खजांची भी आप ही हैं। इन स्थानों पर आपकी बड़ी २ हवेलियाँ बनी हुई हैं। आपको समय समय पर गवर्नमेंट से कई सर्टिफिकेट भी प्राप्त हुए हैं जिनमें से एक दो की कॉपी हम नीचे दे रहे हैं।

Diwan Bahadur Seth Kesri Singh has been connected with this Agency in his Capacity as Rajputana Agency Treasurer for over 5 years. During this period the work has been performed quite smoothly and to the great satisfaction of all concerned. He is one of the premier Seth of Rajputana and belongs to a very old and highly respectable family, distinguished for its loyal and meritorious services to Governments, the reputation of which the Seth continues to maintain admirably, I am very sorry to bid good bye to him.

Camp Ajmer
The 9th March 1927.

Sd./- S. B. Patterson
Agent, Governor General in Rajputana.

Rai Bahadur Seth Kesri Singh who is a well known Banker of Rajputana belongs to an old respectable family, members of which have rendered loyal service to Government. As Rajputana Agency Treasurer the Seth has been in touch with this Agency during the past three years and the work has been carried on to my entire satisfaction.

Dated, Camp Ajmer;
10th March 1925.

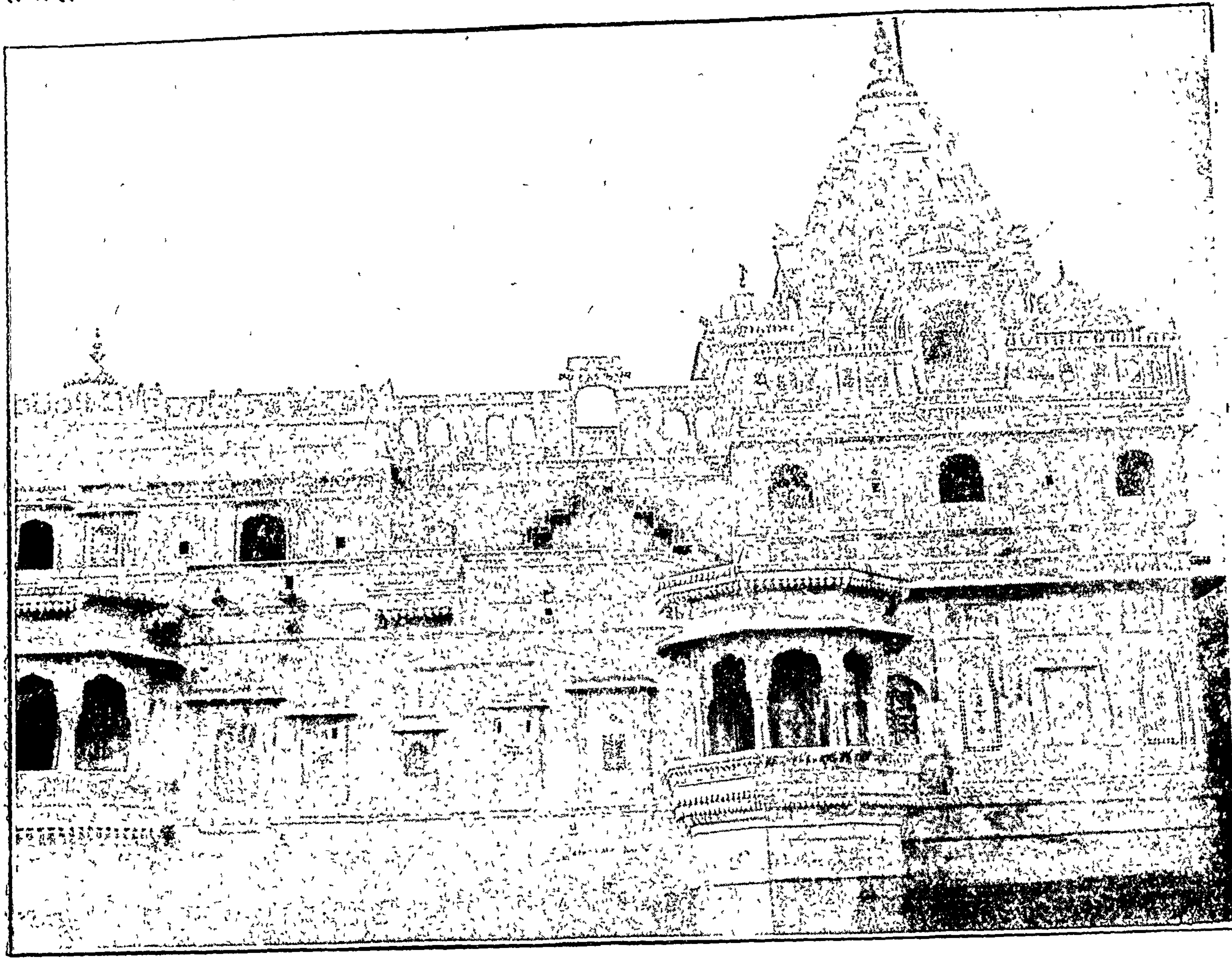
Sd./- R. G. Holland,
Agent to the Governor General
Rajputana.

सेठ जोरावरमलजी का परिवार

सेठ जोरावरमलजी ऐसे समय में अवतीर्ण हुए थे, जब कि भारतवर्ष की राजनैतिक स्थिति बे, तरह डाँवाडोल हो रही थी। एक ओर औरंगजेब की मृत्यु हो जाने से दिल्ली का सिंहासन क्रमशः क्षीण-बल होता चला जा रहा था। दूसरी ओर मुसलमानी शासन की इस कमजोरी से लाभ उठा कर महा-राष्ट्रीय लोग भारत के भिन्न २ प्रांतो में लूट मार और खून खराबी मचा रहे थे, और तीसरी ओर अंग्रेज शक्ति धीरे २ अपना विकास करती जा रही थी। जिस समय अंग्रेज लोग राजस्थान में राजपूत राजाओं के साथ मैत्री स्थापित कर उनके पारस्परिक वैमनस्य को कम करने का प्रयत्न कर रहे थे, उस समय सेठ जोरावरमलजी का बीकानेर, मारवाड़, जैसलमेर, उदयपुर, इन्दौर इत्यादि रियासतो में अच्छा प्रभाव था। इसलिये ब्रिटिश सरकार के साथ इन रजवाड़ों का मेल कराने में इन्होंने बहुत सहायता की। खास कर इन्दौर राज्य के कई महत्वपूर्ण कार्यों में सेठ जोरावरमलजी का बहुत हाथ रहा। सन् १८१८ में ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के बीच अहदनामे करवाये। ब्रिटिश गवर्नमेंट और रियासतों के बीच जो अहदनामें हुए, उनमें कई मुश्किल बातों को हल करने में आपने अपने प्रभाव से बहुत सहायताएँ कीं। आपकी इन सेवाओं से प्रसन्न होकर ब्रिटिश गवर्नमेंट तथा होलकर गवर्मेंट ने आपको परवाने देकर सम्मानित किया।

ईसवी सन् १८१८ में कर्नल टॉड मेवाड़ के पोलिटिकल एजंट होकर उदयपुर गये। उस समय मेवाड़ की आर्थिक दशा बहुत बिगड़ गई थी। ऐसी विकट स्थिति में कर्नल टॉड ने महाराणा भीमसिंहजी को सलाह दी कि सेठ जोरावरमलजी ने इन्दौर की हालत सुधारने में रियासत को बहुत मदद दी है, इसलिये यहाँ पर भी उनको बुलवाया जाये। इस पर महाराणा ने सेठ जोरावरमलजी को इन्दौर से अपने यहाँ निमंत्रित किया, और उन्हें वहाँ बहुत सम्मान पूर्वक रखकर उनसे कहा कि "आप यहाँ पर अपनी कोठी स्थापित करें, और राज्य के कामों में जो खर्च हों वह दें, और उसकी आमदनी को अपने यहाँ जमा करें। महाराणा की इस आज्ञा को मानकर सेठ जोरावरमलजी ने उदयपुर में अपनी कोठी स्थापित की। नये गाँव बसाये, किसानों को सहायताएँ और लुटेरों को दंड दिलवाकर राज्य में शांति स्थापित करवाई। इनकी इन बहु मूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर २६ मई सन् १८२७ को महाराणा ने इन्हें पालकी और छड़ी का सम्मान और "सेठ" की सम्माननीय उपाधि प्रदान की तथा बदनोर परगने का पारसोली गाँव वंश परंपरा के लिये जागीरी में दिया। पोलिटिकल एजंट ने भी आपको अत्यन्त प्रबंध कुशल देख कर अंग्रेजी राज्य के खजाने का प्रबंध भी आपके सुपुर्द कर दिया।

महाराणा सरूपसिंहजी के समय में राज्य पर २०००००० बीस लाख रुपयों का कर्ज हो गया था, जिसमें अधिकांश सेठ जोरावरमलजी बापना का था। महाराणा ने आपके कर्ज का निपटारा करना



अमरसागर—सेठ हिम्मतरामजी बापना का मन्दिर जैसलमेर (श्री बा० पूरणचन्द्रजी नाहर के सौजन्य से)

चाहा। उनकी यह इच्छा देखकर सन् १८४६ की २८ वीं मार्च को सेठ जोरावरमलजी ने महाराणा को अपनी हवेली पर निमंत्रित किया, और जिस प्रकार महाराणा ने चाहा, उसी प्रकार आपने कर्ज का फैसला कर लिया। इस पर प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको कुण्डल गाँव, आपके पुत्र चांदणमलजी को पालकी और आपके पौत्र गंभीरमलजी और इन्द्रमलजी को भूषण और सिरोपाव दिये। इन्हीं के अनुकरण पर दूसरे लेनदारों ने भी महाराणा की इच्छानुसार अपने कर्जे का फैसला कर दिया। इस प्रकार रियासत का भारी कर्ज सहज ही में अदा हो गया और इसका बुद्धिमानी पूर्ण फैसला कर देने में सेठ जोरावरमलजी की बहुत प्रशंसा हुई।

इस प्रकार अपनी बुद्धिमानी, राजनीतिज्ञता और व्यापार-दूरदर्शिता से सारे राजस्थान में लोकप्रियता और नेकनामी प्राप्त कर सन् १८५३ की २६ फरवरी को इन्दौर में सेठ जोरावरमलजी का स्वर्गवास हो गया। यहाँ के तत्कालीन महाराजा ने बड़े समारोह के साथ छत्रीबाग में आपकी दाह क्रिया करवाई।

उपरोक्त अवतरणों से यह बात सहज ही मालूम हो जाती है कि सम्पत्तिशाली होने के साथ ही साथ सेठ जोरावरमलजी बहुत गहरे अग्रसोची, राजनीतिज्ञ और प्रबन्ध कुशल सज्जन थे। यही कारण है कि उदयपुर, जोधपुर, इन्दौर, कोटा, बूँदी, टोंक और जैसलमेर में आपका अत्यंत सम्मान रहा। गंभीर से गंभीर मामलों में भी अंग्रेज सरकार तथा उपरोक्त राणा, महाराजा आपसे सलाह किया करते थे।

केवल राजनैतिक मामलों में ही सेठ जोरावरमलजी ने कीर्त्ति प्राप्त की हो, सो बात नहीं है। धार्मिक और परोपकार वृत्ति की ओर भी आपका बहुत बड़ा लक्ष्य था। सन् १८३२ की २ दिसम्बर को आपने सुप्रसिद्ध ऋषभदेवजी के मंदिर पर ध्वजा दंड चढ़ाया और वहाँ पर नक्कारखाने की स्थापना की।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट मालूम हो जाता है कि सेठ जोरावरमलजी जितने राजनैतिक और व्यापारिक जगत में अग्रगण्य थे, उतने ही वे धार्मिकता और दानवीरता में भी प्रसिद्ध थे। आपके दो पुत्र हुए—पहिले सुलतानमलजी और दूसरे चांदणमलजी। सिपाही-विद्रोह के समय सेठ चाँदणमलजी ने जगह २ अंग्रेज सरकार के पास खजाना पहुँचा कर उसकी अच्छी सेवा की, जिससे सरकार उनसे प्रसन्न हुई।

सेठ सुलतानमलजी के दो पुत्र हुए जिनका नाम क्रमशः सेठ गंभीरमलजी और सेठ इन्द्रमलजी थे। सेठ गंभीरमलजी के सरदारमलजी नामक पुत्र हुए। आपके कोई पुत्र न होने से आपके नाम पर सेठ समीरमलजी दत्तक लिये गये। इसी प्रकार सेठ इन्द्रमलजी के भी कोई पुत्र न हुआ। अतएव आपके नाम पर भी सेठ कुन्दनमलजी दत्तक लिये गये। इनके भी जब कोई संतान नहीं हुई तब आपके यहाँ सेठ संग्रामसिंहजी को दत्तक लिया गया।

सेठ चांदणमलजी के दो पुत्र हुए—सेठ जुहारमलजी और सेठ छोगमलजी। सेठ छोगमलजी के चार पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः श्री छगनमलजी, श्री सिरेमलजी, श्री देवीलालजी और श्री संग्रामसिंहजी हैं। श्री छगनमलजी के धनरूपमलजी और सांवतमलजी नामक दो पुत्र हैं।

श्रीमान रायबहादुर सिरेमलजी बापना सी० आई० ई०

आप उन प्रसिद्ध पुरुषों में से हैं, जिन्होंने अपनी अखण्ड प्रतिभा, बुद्धिमत्ता, योग्यता और चतुराई से क्रमशः उन्नति करते हुए इन्दौर स्टेट के समान महत्वपूर्ण रियासत की प्राइम मिनिस्टरी को प्राप्त किया और उसका इतनी योग्यता से संचालन कर रहे हैं कि जिससे राज्य की प्रजा, महाराज और गवर्नमेण्ट तीनों ही अत्यन्त सन्तुष्ट हैं।

आपका जन्म सन् १८८२ की २४ अप्रैल को हुआ। सन् १९०२ में आपने बी. ए. और बी. एस. सी. की परीक्षाओं में एक साथ सफलता प्राप्त की। इनमें आप विज्ञान विषय में सारी युनिवर्सिटी में सर्व प्रथम आये, जिस पर प्रयाग विश्वविद्यालय ने आपको इलियट छात्रवृत्ति और जुबीली पदक प्रदान किया। सन् १९०४ में एल० एल० बी० की परीक्षा में आप सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुए। उसके पश्चात आपने अजमेर में वकालात आरम्भ की। तत्पश्चात आप इन्दौर राज्य की सेवा में प्रविष्ट हुए। सन् १९०७ में आप महिदपुर में डिस्ट्रिक्ट जज नियुक्त हुए, और दूसरे ही साल आप श्रीमंत एक्स महाराजा तुकोजीराव के कानूनी अध्यापक बनाये गये। सन् १९१० में आप महाराजा के साथ यूरोप भी गये। उसके पश्चात् महाराजा के राज्याधिकार प्राप्त कर लेने पर आप द्वितीय प्राइवेट सेक्रेटरी के पद पर नियुक्त हुए। इसके पश्चात् आप सन् १९१५ में होम मिनिस्टर बने और १९२१ तक इस पद पर रहे। इसी साल जब आपने इस सर्विस का त्याग पत्र दिया, तब राज्य ने आपको खास तौर पर पेंशन दी। इसके बाद आप पटियाला के एक मिनिस्टर हुए। वहाँ आप बहुत लोक-प्रिय रहे। सन् १९२३ में महाराजा होलकर ने आपको पुनः इन्दौर बुलाया और डेप्यूटी प्राइम मिनिस्टर के पद पर नियुक्त किया। सन् १९२६ फरवरी मास में आप एक्स महाराजा तुकोजीराव के द्वारा प्राइम मिनिस्टर के पद पर नियुक्त किये गये और उनके सिंहासन त्याग करने के बाद भी सरकार हिन्द ने आपको उसी पद पर कायम रूप से नियुक्त किया। उसके पश्चात महाराजा श्री यशवंतराव बहादुर ने अधिकार प्राप्ति के पश्चात भी आप को इसी पद पर रक्खा। आपको सन् १९१४ में गवर्नमेण्ट ने "राय बहादुर" की पदवी से विभूषित किया। सन् १९२० में महाराजा तुकोजीराव बहादुर ने एतमाद--वजीर--उद्दौला के पद का सम्मान दिया। सन् १९३० में महाराज यशवन्तराव बहादुर ने वजीर--उद्दौला के पद से विभूषित किया। महाराजा यशवन्त-



श्रीमान् सेठ जोरावरमलजी बापना, (स्वर्गीय)



श्रीमान् एतमाद-वज़ीर-उद्दौला रायबहादुर सिरेमलजी बापना
सी. आई. ई., बी. एस. सी. एल. एल. बी.
प्राइम मिनिस्टर, इंदौर स्टेट.

राव होलकर की नाबालिगी के समय में आपने अत्यन्त सफलता पूर्वक शासन किया, इससे प्रसन्न होकर गवर्नमेण्ट ने सन् १९३१ की जनवरी में आपको सी० आई० ई० की सम्मानीय पदवी प्रदान की।

बापना साहब के शासन की विशेषताएँ

श्री बापना साहब के शासन की तारीफ करते हुए ता० १२ मार्च सन् १९२९ के दिन मध्य भारत के भूतपूर्व ए० जी० जी० सर रेजिनॉल्ड ग्लेन्सी महोदय ने मानिकबाग पैलेस में एक व्याख्यान में निम्नलिखित उद्गार कहे थे :—

> "But I can say you have in Indore an efficient administrative machine, second to none amongst the states, I have seen. You have a Prime Minister and a cabinet genuinely devoted to the good of the states and you have also a number of conscientions officers. I rank the Holkar administration very high amongst the States of India."

अर्थात्—"मैं कह सकता हूँ कि आपकी इन्दौर का शासन यन्त्र बहुत ही सांगोपांग है। जितने राज्य मैंने देखे हैं, उनमें इस राज्य की गणना प्रथम श्रेणी में हो सकती है। आपके प्राइम-मिनिस्टर और आपकी केबिनेट ने राज्य की भलाई के लिए अपने आपको अर्पण कर रखा है। साथ ही आपके यहाँ कई अच्छे २ विवेकी आफिसर भी हैं। मैं भारतवर्ष के देशी राज्यों में होलकर राज्य के शासन की गणना बहुत ही उच्च श्रेणी में करता हूँ।"

श्रीमान बापना साहब का शासन कई विशेषताओं से परिपूर्ण रहा है। आपके समय में शिक्षा की अच्छी उन्नति हुई। जहाँ पहले प्रति वर्ष शिक्षा विभाग में ५ लाख रुपये खर्च होते थे, वहाँ आज सात आठ लाख रुपये खर्च होते हैं। आपके समय में एम० ए० और एल० एल० बी० की नवीन क्लासें खोली गई। रामपुरा और खरगोन में दो हॉय स्कूल खोले गये जो बहुत अच्छी तरह चल रहे हैं। इसके अतिरिक्त आपके समय में एक ऐसी घटना हुई जिसका इन्दौर राज्य के आधुनिक इतिहास में बड़ा महत्व है। वह यह कि इन्दौर की छावनी जो कि ब्रिटिश अधिकार में थी, इन्दौर राज्य में वापिस आ गई और साथ हीमानपुर भी स्टेट में आया। इतना ही नहीं श्रीमान वायसराय महोदय के पास इन्दौर राज्य का एक प्रतिनिधि भी रहने लगा। यह अधिकार इन्दौर राज्य को छोड़कर और किसी स्टेट को नहीं मिला है।

इन्दौर शहर में ड्रेनेज सिस्टिम न होने से शहर के बीच में बहनेवाली नदी में शहर के कुछ

हिस्से की गटरें गिरती हैं, जिससे नदी का पानी बहुत गंदा हो जाता है और शहर की तन्दुरुस्ती में बहुत नुकसान होता है। अब ड्रेनेज सिस्टिम के हो जाने से नदी का पानी बहुत साफ रहेगा।

वापना साहब और वॉटर सप्लाय वर्क्स—पाठक जानते हैं कि गर्मी के दिनों में इन्दौर में पानी की कमी से बहुत बड़ा कष्ट हो जाया करता है। इस कष्ट से लोगों को जो असुविधाएँ होती हैं, उन पर यहाँ प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं। जनता की इस असुविधा को सदा के लिए मिटाने के हेतु स्टेट की ओर से वापना साहिब ने बड़े २ दिग्गज इंजीनियरों की सलाह से गंभीर नदी को रोककर एक बड़ा विशाल जलाशय जिसकी लम्बाई १२ मील और चौड़ाई २ मील होगी, बनवाया है, इस जलाशय का नाम यशवंत सागर रक्खा गया है। इसके द्वारा इन्दौर में जलपूर्ति की व्यवस्था की जावेगी। इस आयोजन के सफलता पूर्वक बन जाने पर यह न केवल इन्दौर की डेढ़ लाख जनता को ही पानी दे सकेगा, वरन् दो लाख जनता हो जाने पर भी यह सफलतापूर्वक सबको पानी सप्लाय करसकेगा। इस जलाशय से सब पानी बिजली के द्वारा लाया जायगा। इस विशाल कार्य में सारा खर्च करीब ७१॥ लाख रुपया होगा। यह एक ऐसा कार्य है, जिसने इन्दौर के इतिहास में वापना साहब का नाम अमर कर दिया है। कहा जाता है कि इसकी पाल में "साइफन स्पिल वे" जो होगा वह दुनियाँ में सबसे बड़ा है।

भारतीय रियासतों के प्रधान सचिवों में श्रीमान वापना साहब का बहुत ऊँचा आसन है। कई प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ, आपके बुद्धि कौशल, आपके विशाल राजनैतिक ज्ञान और उलझनों को सुलझाने वाली आपकी सूक्ष्म दृष्टि की बड़ी प्रशंसा करते हैं। कई बड़े २ ब्रिटिश अधिकारी भी आपकी योग्यता के कायल हैं। इसी से गत राउण्डटेबिल कान्फ्रेन्स के लिये आप महाराजा की जगह चुने गये थे। वहां पर आपने बड़ी योग्यता के साथ कार्य किया।

यह कहने में तनिक भी अत्युक्ति न होगी कि वापना साहब सौजन्य की साक्षात् मूर्त्ति हैं। दया, सहानुभूति, उदारता आदि समुज्ज्वल गुण उनमें कूट २ कर भरे हुए हैं। हमने प्रत्यक्ष देखा है कि किसी दुखी को देख कर उनका अंतःकरण द्रवीभूत हो जाता है। खुद तकलीफ उठाकर भी वे ऐसे मनुष्य की सहायता करने में तत्पर होजाते हैं। आज पचासों विद्यार्थी आपके गुप्तदान से विद्यालाभ कर रहे हैं। कई विधवाएँ आपके आश्रय पर रहती हैं। आपकी दानधारा धारा गंगा की तरह सब को एकसा फायदा पहुँचाती है। आपको जाति पाँति का पक्षपात नहीं है। जो दीन दुखी और दरिद्री हैं या जो सहायता के अधिकारी हैं आपके यहाँ से विमुख नहीं आते।

श्रीमान वापना साहब एक महान् कुल में जन्मे हैं। जैसा उनका घराना है वैसी ही उनके हृदय की विशालता है। संकीर्णता तथा जातीय विद्वेश के क्षुद्रभाव आप तक फटकने तक नहीं पाते। सब

जातियों के लिये आप के हृदय में बराबर स्थान हैं। आपकी सहानुभूति, आपका प्रेम किसी जाति तक परिमित नहीं है। आपकी यह बात आपके जीवन क्रम में हमें प्रति दिन दिखलाई पड़ती है।

श्रीयुत बापना साहब एक अच्छे राजनीतिज्ञ हैं। आपकी राजनीति शुद्ध और सात्विक है। कूटनीति से (Diplomacy) आप दूर रहते हैं। राज्य में होने वाले षड्यन्त्रों और राजनैतिक छल प्रपंचों से आपको बड़ी घृणा है। आप इतने चतुर अवश्य हैं कि दूसरे के षड्यन्त्रों से अपने आप को तथा अपने शासन को बाल बाल बचा लेते हैं। आप कभी अपनी आत्मा को षड्यन्त्रों में फँसा कर गंदी नहीं करते। राजनीति में जो गंदगी रहती है, उससे ये अपने आप को बचाने की पूरी पूरी कोशिश करते हैं। पार्टी बन्दी से इन्हें बड़ी नफरत है। ये बातें आपकी स्वाभाविक प्रकृति के खिलाफ हैं। इसका नैतिक प्रभाव राज्य के वातावरण पर बहुत अच्छा पड़ता है।

संसार में जितने बड़े २ राजनीतिज्ञ हुए हैं उनके स्वभाव में, गंभीरता और प्रकृति में शांति रही है। जिन लोगों को बापना साहब के सानिध्य में आने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, वे आपकी गंभीरता और शान्त स्वभाव से भली भांति परिचित होंगे। कठिन से कठिन अवसरों पर भी आप उत्तेजित होना जानते ही नहीं। हमने देखा है कि जब आप प्रातःकाल बक्षीबाग में घूमने आते हैं, तब कभी २ कुछ लोग उन्हें इतना तंग करते हैं कि साधारण मनुष्य वैसी अवस्था में उत्तेजित हुए बिना नहीं रह सकता। पर उनकी शांति रत्ती भर भी चल विचल नहीं होती। इसके कई उदाहरण हमारे सामने हैं।

इन्हीं सब मानसिक विशेषताओं का प्रताप है कि आप क्रमशः विकास करते १ इन्दौर राज्य के समान महत्वपूर्ण राज्य के प्रधान सचिव के पद पर पहुँच गये तथा वर्तमान में आप बड़ी योग्यता और सफलता के साथ संचालन कर रहे हैं। आपने इन्हीं विशेषताओं से न केवल भारतीय राजनीति में वरन् अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भी अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है। आज सारे ओसवाल समाज को आपका बहुत बड़ा गर्व है। आपका विवाह सम्बन्ध सम्वत् १९५१ में उदयपुर के सुप्रसिद्ध मेहता भूपालसिंहजी की कन्या से हुआ। मेहता भूपालसिंहजी उदयपुर राज्य के दीवान थे तथा आपके पुत्र मेहता जगन्नाथसिंहजी भी उदयपुर के दीवान रहे।

श्रीमान बापना साहब के इस समय दो पुत्र और दो पुत्रियां हैं। बड़े पुत्र का नाम श्री कल्याणमलजी है। आप बी० ए० एल० एल० बी० हैं। इस समय आप इन्दौर राज्य के डिप्टी एक्साइज़ कमिश्नर हैं। आपके इस समय तीन पुत्र और एक पुत्री हैं। दो बड़े पुत्रों के नाम क्रमशः कुँवर यशवन्तसिंहजी और कुँवर अमरसिंहजी हैं। श्रीमान बापना साहब के छोटे पुत्र श्री प्रतापसिंहजी हैं। आप एम० ए० एल० एल० बी० हैं।

बापना परतापचन्दजी का खानदान

सेठ गुमानचन्दजी के पाँचवे पुत्र सेठ परतापचन्दजी बापना थे। आपके परिवार वाले इस समय रामपुरा और सन्धारा में रहते हैं। आपके परिचय और रुक्के परवानों के लिए हम आपके वंशजों के पास रामपुरा गये थे मगर दैवयोग से उस समय उनका मिलना न हो सका। इसलिए इस शाखा का पूरा इतिहास हमें प्राप्त न हो सका।

बापना परतापचन्दजी के पुत्र बापना हिम्मतरामजी बड़े वैभवशाली और प्रतापी पुरुष हुए। जैसलमेर रियासत में आपका बड़ा प्रभाव था। आपके द्वारा किये हुए धार्मिक कार्य्य आज भी आपकी अमर कीर्तिको घोषित कर रहे हैं। आपके द्वारा बनाए हुए अमर सागर वाले मन्दिर का परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। आपको जैसलमेर रियासत से जरवां नामक गांव जागीर में मिला था। जैसलमेर दरबार की आपने अपने यहाँ पधरावणी की थी। सेठ हिम्मतरामजी के जीवनमलजी, अखयदासजी, चिंतामणदासजी, और भगवानदासजी नामक चार पुत्र हुए। सेठ चिंतामणदासजी के पुत्र कन्हैयालालजी और धनपतलालजी इस समय सन्धारा में निवास करते हैं।

बापना हिम्मतरामजी के अतिरिक्त सेठ परतापचन्दजी के जेठमलजी, नथमलजी, सागरमलजी और उम्मेदमलजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें से सेठ नथमलजी के पुत्र सेठ केशरीमलजी हुए। आप रामपुरा में निवास करते थे। आपके लूणकरणजी और खेमकरणजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से खेमकरणजी इस समय विद्यमान हैं। रामपुरे में आपकी हवेली बनी हुई है। सेठ सागरमलजी के बोधमलजी और संगीदासजी नामक दो पुत्र हुए।

राय साहब कृष्णलालजी बापना, बी० ए०—जोधपुर

इस खानदान के पूर्वज लगभग १५०।२०० वर्ष पूर्व बड़लू से जोधपुर आकर आबाद हुए। इस परिवार में मेहता कालूरामजी बापना बड़े प्रतापी व्यक्ति हुए।

मेहता कालूरामजी बापना—आप जोधपुर की जनता में प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। जोधपुर शहर की जनता आपको काका साहब के नाम से व्यवहृत करती थी। जब जोधपुर के फौज बख्शी (कमांडर इन चीफ) सिंघवी फोजराजजी का सम्वत १९१२ की आषाढ़ बदी ३ को स्वर्गवास होगया, और उनका पद उनके पुत्र सिंघवी देवराजजी के नाम पर हुआ, उस समय सिंघवीजी की ओर से मेहता विजयमलजी, मुहणोत तथा

मेहता कालूरामजी बापना संवत् १९१९ की सावण बदी १ तक उपरोक्त कार्य्य सम्हालते रहे। संवत् १९२९ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके रामलालजी, मुकुन्दलालजी और लक्ष्मणजी नामक ३ पुत्र हुए।

मेहता रामलालजी बापना—आप जोधपुर महाराजा मानसिंहजी और महाराजा तखतसिंहजी के समय में जालोर, सांचोर आदि परगनों के हाकिम रहे। आप भी मुत्सुद्दी समाज में प्रतिष्ठित व्यक्ति थे।

मेहता मुकुन्दलालजी बापना—आप पारसी के विद्वान् और कारिंदा पुरुष थे। आप महाराजा किशोरसिंहजी के नायब पद पर कार्य्य करते थे। महाराजा प्रतापसिंहजी आप पर अच्छा स्नेह रखते थे। मारवाड़ के सरहद्दी झगड़ों को निपटाने में कर्नल वॉयली साहब के साथ आपने सहयोग दिया था।

मेहता लक्ष्मणजी बापना—आपभी अपने समय में जोधपुर के प्रतिष्ठित पुरुष थे। जब संवत् १९२९ में सिंघवी देवराजजी के नाम का फौज बख्शी का पद खालसे हो गया। उस समय आप * उक्त पद की देख रेख करते थे। संवत् १९४० में आपका स्वर्गबास हुआ।

राय साहब बापना कृष्णलालजी बी० ए०—आप मेहता लक्ष्मणलालजी बापना के पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९२२ में हुआ। आप जोधपुर राज्य में हाकिम, राज एडवोकेट, और इन्सपेक्टर जनरल पोलीस आदि कई सम्माननीय पदों पर काम कर चुके हैं। आपके सार्वजनिक कामों की एक लम्बी सूची है। सन् १९१४ में जोधपुर से "ओसवाल" नामक जो मासिक पत्र निकलता था, उसके उत्पादक आप ही थे। जोधपुर की मारवाड़ हितकारिणी सभा के स्थापन में भी आपने प्रधान हाथ बटाया था।

राजपूताने की प्रजा परिषद् और अजमेर के आदर्श नगर के स्थापन में भी आपने प्रधान सहयोग दिया है। आपही के परिश्रम और उद्योग से अजमेर में ओसवाल सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन हुआ था। सामाजिक विषय पर आपने कई पुस्तिकाएँ और लेख लिखे हैं। आप वेदान्त मत के अनुयायी और स्वतन्त्र विचारों के पुरुष हैं। अभी आप अजमेर में ही निवास करते हैं। आपके खून में नवयुवकों जैसा उत्साह और जोश है। आपका सम्पर्क कई अंग्रेज आफिसरों से रहा है और समय २ पर उनकी ओर से आपको कई प्रशंसा पत्र प्राप्त हुए हैं। औद्योगिक विषय में आपकी बड़ी अभिरुचि है। आपकी कास्टिक सोडा बनाने की स्कीम को गवर्नमेण्ट ने पसन्द किया है। इसी तरह बेर के झाड़ पर लाख लगाने की आपकी आयोजना को भी गवर्नमेण्ट कॉलेज पूसा ने स्वीकार किया है। आपने जोधपुर के ओसवाल विधवा विवाह सहायक फण्ड को ३ हजार रुपये प्रदान किये। आपके जीवन का प्रधान लक्ष नवीन विचारों का प्रकाश करना और नवीन संस्कारों की लहर पैदा करना है। सन १९१७ में गवर्नमेण्ट ने

---

* जोधपुर के रेकार्ड में इस पद पर इनके बड़े भ्राता मेहता रामलालजी ने काम किया था, ऐसा उल्लेख पाया जाता है। लेखकः—

आपको राय साहब की पदवी से सम्मानित किया है। आपके विष्णुलालजी, अमृतलालजी और कँवरलालजी नामक ३ पुत्र हैं।

विष्णुलालजी बापना जयपुर स्टेट के स्टेशनरी डिपार्टमेण्ट के इंचार्ज हैं। इनके श्यामसुन्दरलालजी, जगदीशलालजी, दामोदरलालजी और त्रिभुवनलालजी नामक ४ पुत्र हैं। अमृतलालजी बापना बम्बई से एम० बी० बी० एस० की परीक्षा पास करते ही जोधपुर राज्य में असिस्टेंट सर्जन हुए। इसके बाद आपने बांसवाड़े में चीफ मेडिकल ऑफिसर के पद पर कार्य्य किया। इस समय आप किशनगढ़ स्टेट में चीफ मेडिकल ऑफिसर तथा सुपरिन्टेन्डेन्ट जेल के पद पर हैं। आप मिलनसार और लोक-प्रिय सज्जन हैं। आपके पुत्र चांदबिहारीलालजी और वृजबिहारीलाल हैं। कँवरलालजी बापना बी० ए० ने सन् १९२१ में एल० एल० बी० की डिगरी हासिल की। बाद आप अजमेर में वकालत करने लगे। इसके बाद आप जयपुर में मुंसिफी तथा जजी के पद पर कार्य्य करते रहे और इस समय सन १९२७ से जयपुर में पब्लिक प्रासिक्यूटर हैं। आप अनाथालय, आर्य्य समाज, विधवा विवाह सहायक सभा, बाय स्काउट समिति आदि संस्थाओं में भाग लेते रहते हैं। आप शेखावाटी बोर्डिंग के सुपरिटेन्डेण्ट भी रहे थे। आपके सामाजिक विचार प्रगति शील हैं। आपके पुत्र श्यामबिहारीलाल हैं।

बापना हुकमीचन्दजी का खानदान, सिरोही

इस परिवार के पूर्वज बापनः कलाजी सिरोही के पास दवानी में रहते थे। वहाँ के तत्कालीन जागीरदार से आपकी अनबन हो गई, अतएव आप अपने पुत्र हीराजी, अजबाजी, फत्ताजी, चतराजी और सूराजी को लेकर सिरोही चले आये। तबसे आपका परिवार सिरोही में निवास करता है, तथा दवानी वालों के नाम से मशहूर हैं।

बापना चिमनमलजी—बापना हीराजी के भूताजी, ऊमाजी, हेमराजजी और खूबाजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें हेमराजजी के पुत्र चिमनमलजी, सिरोही स्टेट में दीवान रहे। इसके सम्मान स्वरूप उन्हें हाउस टैक्स माफ हुआ। वर्तमान में इस परिवार में ऊमाजी के पौत्र कुन्दनमलजी और मिश्रीमलजी, चिमनमलजी के पुत्र ताराचन्दजी और खूबाजी के पुत्र लखमीचन्दजी विद्यमान हैं। बापना कुन्दनमलजी जोधपुर ऑडिट आफिस में सर्विस करते हैं।

बापना जालिमचन्दजी—बापना अजबाजी के पश्चात क्रमशः जोरजी, जेताजी और मूलचन्दजी हुए। बापना मूलचन्दजी के जुहारमलजी, लालचन्दजी, जालिमचन्दजी, नेनमलजी और चन्दनमलजी नामक

५ पुत्र हुए, इनमें जालिमचन्दजी विद्यमान हैं। आप जोधपुर के फर्स्ट क्लास वकील हैं, तथा वहाँ के शिक्षित समाज में प्रतिष्ठित माने जाते हैं।

बापना चेनकरणजी—बापना सूराजी के पुत्र फूलचंदजी और बनेचन्दजी हुए। फूलचन्दजी ने सूराजी फूलचन्द के नाम से दुकान स्थापित की। इनके पुत्र चेनकरणजी सम्वत् १९१७ में सवा साल तक सिरोही स्टेट के दीवान रहे और इसी वर्ष ४० साल की वय में आप स्वर्गवासी हुए। चैनकरणजी के पुत्र बापना मिलापचन्दजी जेबखास महकमे में सर्विस करते थे।

बापना चन्द्रमानजी (नेनमलजी)—आप बापना मिलापचन्दजी के पुत्र थे। अपने पिताजी के गुजरने पर संवत् १९५४ में आप जेबखास महकमें में नौकर हुए। इसके बाद तहसीलदार, दीवान के सरिश्तेदार और अकाउण्टन्ट आफीसर रहे। ये तहरीरी काम में बड़े होशियार थे। संवत् १९७४ की काती वदी १० को आप स्वर्गवासी हुए। सर्विस के साथ २ आप अपनी सूराजी फूलचन्द नामक फर्म का संचालन भी करते थे। यह फर्म कस्टम तथा परगनों के इजारे का काम और जागीरदारों को रकमें देने का व्यापार करती थी। आपके हुकमीचन्दजी तथा अमरचन्दजी नामक दो पुत्र विद्यमान हैं। बापना हुकमीचन्दजी का जन्म संवत् १९६० में हुआ। आप इस समय सिरोही में वकालत करते हैं और साथ ही अपनी "सूराजी फूलचन्द" नामक फर्म का बैंकिंग बिजिनेस सम्हालते हैं। सन् १९२६ से आप सेंट्रल इण्डिया और मेवाड़ के कई हिस्सों के लिए एच० सी० दबानीवाला के नाम से पेट्रोल के एजण्ट हैं। बापना हुकमीचन्दजी प्रतिष्ठित और सभ्य युवक हैं। आपके छोटे भ्राता अमरचन्दजी ने पूना कॉलेज से १९३३ में एल० एल० बी० पास किया है, तथा इस समय बंगलोर में प्रेक्टिस करते हैं।

इसी तरह इस परिवार में बापना पनेचन्दजी के पौत्र रतनचन्दजी सिरोही के शहर कोतवाल रहे। इस समय इनके पुत्र सुशीलालजी तहसीलदार हैं। बापना फत्ताजी के वंश में बापना मुलतानमलजी और जवेरजी हैं।

नगर सेठ प्रेमचन्द धरमचन्द बापना, उदयपुर

इस परिवार का निवास उदयपुर ही है। आप स्थानक वासी आम्नाय के मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में सेठ प्रेमचन्दजी बड़े विख्यात और नामी पुरुष हुए।

नगरसेठ प्रेमचन्दजी बापना—आपको संवत् १९०८ में तत्कालीन महाराणा श्री स्वरूपसिंहजी ने "नगरसेठ" का सम्माननीय खिताब दिया। जब आपके नगरसेठाई का तिलक किया गया था, तब

अक्षत के स्थान में मोती चेपे गये थे। इतना बड़ा सम्मान रियासत में केवल दीवान को ही मिलता है। साथही आपको हाथी और लवाजमा भी बख्शा गया। संवत् १९१७ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र चम्पालालजी बापना भी प्रतिष्ठित महानुभाव थे। आपका संवत् १९४७ में स्वर्गवास हुआ। आपके बाद फर्म के कारबार को आपके ज्येष्ठ पुत्र सेठ कन्हैयालालजी ने सम्हाला। आप संवत् १९६१ में स्वर्गवासी हुए।

नगरसेठ नन्दलालजी बापना—वर्तमान में नगरसेठ कन्हैयालालजी के पुत्र नगरसेठ नन्दलालजी बापना विद्यमान हैं। आपका जन्म संवत् १९३० के अषाढ़ मास में हुआ। उदयपुर की पंचायत में आपका पहला स्थान है। महाराणा की ओर से आपको पूर्ववत् सम्मान प्राप्त हैं। आपके पुत्र कुँवर गणेशीलालजी बी० ए० एल० एल० बी० मेवाड़ में हाकिम हैं, तथा छोटे पुत्र कुँवर मनोहरलालजी तथा बसंतीलालजी भी उच्चशिक्षा प्राप्त सज्जन हैं। इस समय आपके यहाँ जमीदारी गहनावट और जागीरदारों से लेनदेन का काम होता है।

सेठ छोगमल प्रतापचन्द बापना, हरदा

इस परिवार के पूर्वज सेठ अचलदासजी बापना लगभग १०० साल पूर्व अपने निवास स्थान मेड़ता से व्यवसाय के निमित्त हरदा आये। आप बड़े कार्य चतुर और बुद्धिमान पुरुष थे। आपने जंगल में दो-तीन गाँव आबाद किये और वहाँ लोगों को बसाया।

सेठ शोभाचन्दजी बापना—आप अचलदासजी बापना के पुत्र थे। आपने अपने खानदान की जमीदारी सम्पत्ति को बढ़ाने की ओर काफी लक्ष दिया और १५-१६ गाँवों में अपनी मालगुजारी तथा लेनदेन का कारवार बढ़ाया। आप धार्मिक प्रवृत्ति के महानुभाव थे। संवत् १९५२ में आपने हरदा में एक जैन मन्दिर बनवाना आरम्भ किया था। आप हरदा की जनता में प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। सर्व साधारण के लाभार्थ आपने यहाँ एक भारी कुआँ खुदवाया था। संवत् १९६२ में आप स्वर्गवासी हुए।

सेठ छोगमलजी बापना—आप सेठ शोभाचन्दजी बापना के पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९१८ में हुआ। आपने अपने पिताजी द्वारा बनवाये हुए जैन मन्दिर की संवत् १९६७ में प्रतिष्ठा कराई। पिताजी के बाद आपने मालगुजारी के गाँवों में भी उन्नति की, हरदा की जनता में आप सम्माननीय व्यक्ति माने जाते थे। संवत् १९७३ की काती वदी ३ को आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र प्रतापचन्दजी तथा माणकचन्दजी विद्यमान हैं।

बापना प्रतापचन्दजी का जन्म संवत् १९५२ की भादवा सुदी ४ को हुआ। आप सन् १९१५ से



स्वर्गीय मेहता कालूरामजी बापना, जोधपुर
(अपने पुत्र मेहता रामलालजी, मेहता मुकुन्दलालजी तथा मेहता लछमणलालजी सहित).



रायसाहिब कृष्णलालजी बापना, जोधपुर
(अपने पुत्र विष्णुलालजी, श्यामसुन्दरलालजी, कँवरलालजी और पौत्रों सहित).

हरदा के ऑनरेरी मजिस्ट्रेट हैं। हरदा की जनता व आफीसरों में आप सम्माननीय व्यक्ति हैं। आपके छोटे भ्राता माणकचन्दजी का जन्म संवत् १९५७ की वैशाख सुदी ७ को हुआ। इस परिवार के पास इस समय २२ गाँवों की जमीदारी है। हरदा तथा आसपास के नामांकित कुटुम्बों में इस परिवार की गणना है। स्थानीय जैन मन्दिर की व्यवस्था भी आप लोगों के जिम्मे है। माणिकचन्दजी के पुत्र पूर्णचन्दजी बापना ६ साल के हैं।

सेठ हीरालाल रिखबचन्द बापना, कोलारगोल्डफील्ड

इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवास स्थान महतपुर (होलकर स्टेट) का है। आप श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर आम्नाय को मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार में जीवराजजी हुए। आप बड़े धार्मिक पुरुष थे। आपके राजमलजी एवं हीरालालजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से सेठ राजमलजी ने संवत् १९४५-४६ के लगभग पूज्य श्री मोहनलालजी महाराज के सदुदेश से दीक्षा ग्रहण की थी। आप बड़े त्यागी तथा धर्मप्रेमी सज्जन थे।

सेठ हीरालालजी का जन्म संवत् १९१९ में हुआ। आप बड़े योग्य, समझदार तथा धर्म-प्रेमी पुरुष थे। आपका पंच पंचायती में काफी सम्मान था। आपने संवत् १९४७ में बंगलोर में अपनी फर्म स्थापित की थी जिसकी आपके हाथों से बहुत उन्नति हुई। आपके रिखबचंदजी एवं हरकचंदजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ रिखबचंदजी का जन्म सं० १९४० में हुआ। आप भी बड़े समझदार धार्मिक तथा व्यापार कुशल सज्जन हैं। आपने संवत् १९५७ में कोलार गोल्ड फील्ड में अपनी एक स्वतन्त्र फर्म स्थापित की जिसपर बैंकिंग तथा शेअर्स का व्यापार होता है। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम जयचंदजी, पारसमलजी, शांतिलालजी तथा नेमीचंदजी हैं। सेठ हरकचन्दजी का जन्म संवत् १९६० का है। आप इस समय कोलार गोल्ड फील्ड में ही जनरल मर्चेंडाईज़ की अलग दुकान करते हैं।

इस परिवार की ओर से वर्तमान में कोलार गोल्ड फील्ड में एक मंदिर बनवाया जा रहा है। कोलार गोल्ड फील्ड की ओसवाल समाज में यह परिवार प्रतिष्ठित समझा जाता है।

सेठ तेजमल हीराचन्द बापना, सादड़ी

इस खानदान के पूर्वज बापना फत्ताजी के पुत्र गंगारामजी ने संवत् १८५० के लगभग अपनी दुकानें रतलाम और इन्दौर में खोलीं। इनपर अफीम का व्यापार होता था। इस व्यापार में आपने अच्छी सम्पत्ति कमाई थी। आपका स्वर्गवास सम्वत् १८८५ में हुआ। उस समय आपके पुत्र बापना आलमचंदजी नाबालिग थे, अतएव सब दुकानें उठा दी गईं। आलमचंदजी के हंसराजजी, पूनमचन्दजी, हुकमीचन्दजी, निहालचन्दजी, हजारीमलजी तथा तेजमलजी नामक ६ पुत्र हुए। इनमें हंसराजजी के पुत्र बालचन्दजी, बालचंद बख्तावरमल के नाम से मुजफ्फरपुर में व्यापार करते हैं। हुकमीचन्दजी के पुत्र सागरमलजी कलकत्ते में व्यापार करते हैं, इनके पुत्र फूलचन्दजी सादड़ी के पहिले ओसवाल मेट्रिक्यूलेट हैं।

बापना आलमचन्दजी के सबसे छोटे पुत्र तेजमलजी ने संवत् १९५० में भयंदर (बम्बई) में दुकान खोली। आप विद्यमान हैं। आपके हीराचंदजी, चुन्नीलालजी तथा फूटरमलजी नामक तीन पुत्र हैं। बापना हीराचन्दजी का जन्म १९४९ में हुआ। आपने १९६४ में कोयम्बटूर में 'हीराचंद चुन्नीलाल' के नाम से जरी कांठी का व्यापार शुरू किया। संवत् १९८० में बापना हीराचंदजी ने सादड़ी में सर्व प्रथम "वर्द्धमान तप की ओली" की। इसमें आपने लगभग ५० हजार रुपये लगाये। सादड़ी की तमाम धार्मिक संस्थाओं में आपका सहयोग रहता है। आप "धर्मचंद दयाचंद" फर्म, और श्री आत्मानन्द जैन विद्यालय कमेटी के मेम्बर हैं। इसी प्रकार न्यात का नोहरा और पांजरापोल के सेक्रेटरी हैं। आपके छोटे भाई चुन्नीलालजी व्यापार में सहयोग लेते हैं और फूटरमलजी, बापना हिम्मतमलजी के यहाँ दत्तक गये हैं।

सेठ लालचंद जेठमल बापना, अमलनेर

इस परिवार का मूल निवास स्थान खिचंद (मारवाड़) है। आप स्थानकवासी आम्नाय के माननेवाले हैं। इस परिवार के पूर्वज सेठ मगनीरामजी के हीरचंदजी, सुजानमलजी, चांदमलजी, अगरचंदजी तथा माणकचंदजी नामक ५ पुत्र हुए। इन बन्धुओं में से सेठ सुजानमलजी, चांदमलजी अगरचन्दजी तथा माणकचन्दजी संवत् १९३५ में व्यापार के लिये मद्रास गये, तथा वहां गिरवी का व्यापार शुरू किया। सेठ चांदमलजी छोटी वय में ही स्वर्गवासी हो गये। संवत् १९५७ तक इन बन्धुओं का कारबार मद्रास में रहा।

सेठ सुजानमलजी विद्यमान हैं। आपकी वय ७१ साल की है। आपके पुत्र लालचन्दजी, जेठमलजी तथा जसराजजी हैं। इनमें लालचन्दजी, चांदमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं। आपका जन्म

संवत् १९६० में हुआ है। इन तीनों बन्धुओं ने सम्वत् १९८३ से अमलनेर में कपड़ा, गिरवी और अनाज का कारबार शुरू किया। आप लोग यहां के व्यापारिक समाज में अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं, तथा बड़े मिलनसार और सरल स्वभाव के व्यक्ति हैं।

सेठ चुन्नीलाल हीरालाल बापना, भिनासर

इस परिवार वालों का मूल निवास स्थान जैसलमेर था। वहां से वे लोग कोटा होते हुए मालासर (बीकानेर) नामक स्थान पर आकर बसे। यहाँ आनेवाले सेठ ज्ञानमलजी थे। आपके पुत्र दुर्जनदासजी मालासर में ही खेती बाड़ी का काम करते थे। आपके गंगारामजी, छोगमलजी, लच्छीरामजी, जेतरूपजी और लखमीचन्दजी नामक पांच पुत्र थे। आप सब लोग मालासर को छोड़कर भीनासर नामक स्थान में आकर बस गये। इनमें से सेठ गंगारामजी बंगाल प्रान्त में आये। आपने कलकत्ता और गढ़गाँव (आसाम) में अपनी फर्म स्थापित की। कुछ समय पश्चात् उपरोक्त फर्म बन्द कर श्रीमंगल में छोगमल मूलचन्द के नाम से फर्म खोली। आपका स्वर्गवास हो गया। आपके धनराजजी, चुन्नीलालजी और बख्तावरमलजी नामक तीन पुत्र हैं। आप तीनों भाइयों का परिवार इस समय स्वतन्त्र व्यापार करता है।

सेठ धनराजजी आजकल धनराज जुहारमल के नाम से कपड़े का व्यापार करते हैं। आपके जुहारमलजी, सुगनमलजी, दीपचन्दजी, मगनमलजी और छगनमलजी नामक पुत्र हैं। जुहारमलजी अलग अपना व्यवसाय करते हैं। फर्म का संचालन सुगनमलजी करते हैं।

सेठ चुन्नीलालजी व्यापार कुशल व्यक्ति हैं। आपने कलकत्ता, शाईस्तागंज और होबीगंज नामक स्थानों पर अपनी फर्मे खोलीं। इनपर कपड़े, गल्ले, आढ़त और दुकानदारी का काम हो रहा है। शाईस्तागंज में इस परिवार की दो और फर्मे हैं। सेठ चुन्नीलालजी के हमीरमलजी, हीरालालजी, सोहनलालजी और हस्तीमलजी नामक पुत्र हैं। हमीरमलजी अपना स्वतन्त्र व्यापार करते हैं। शेष तीनों भाई शामिल रहते हैं। आप लोग बाईस सम्प्रदाय को मानने वाले हैं।

सेठ छगनमल साहबराम बापना, धूलिया

इस परिवार का मूल निवास स्थान हरसोलाव (मारवाड़) का है। इस परिवार में सेठ सवाईरामजी हुए। आपके पुत्र जेठमलजी करीब ७५ वर्ष पूर्व देश से व्यापार के निमित्त फागणा (धूलिया के समीप)

आये और वहाँ पर अपनी साधारण दुकान स्थापित की। आपका संवत् १९५० में स्वर्गवास हो गया। आपके साहबरामजी, धीरजमलजी, बख्तावरमलजी तथा वनेचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। आप सब भाइयों के हाथों से फर्म की विशेप उन्नति हुई।

सेठ साहबरामजी ने फर्म के व्यापार को विशेप उन्नति पर पहुँचाया। आपका गवर्नमेंट में भी काफी सम्मान था। आप संवत् १९७५ में स्वर्गवासी हुए। आपके स्वर्गवासी होने के बाद आपके सब भाई अलग २ व्यापार करने लगे। सेठ साहबरामजी के छगनमलजी, मूलचंदजी एवं मानकचंदजी नामक तीन पुत्र विद्यमान हैं।

सेठ छगनमलजी का जन्म संवत् १९४६ में हुआ। आपने संवत १९७७ में धूलिया में अपनी स्वतन्त्र फर्म छगनमल साहबराम के नाम से अलग स्थापित की। आप बड़े योग्य, व्यापार कुशल तथा समझदार सज्जन हैं। आपके धार्मिक विचार उदार हैं। आप श्री धूलिया पांजरापोल के तथा प्राणी-रक्षक औपधालय के पाँच सालों तक सभापति रहे हैं। आपकी फर्म पर रुई तथा आढ़त का व्यवसाय होता है। आपके उत्तमचन्दजी, सींचियालालजी, मिश्रीलालजी तथा सुवालालजी नामक चार पुत्र हैं। इनमें से उत्तमचन्दजी व्यापार में भाग लेते हैं। सेठ माणकचन्दजी के मोहनलालजी आदि पाँच पुत्र हैं।

सेठ कुन्दनजी कालूराम बापना, मंदसौर

यह परिवार लगभग २०० वर्ष पूर्व पाली से इधर आया और डेढ़सौ वर्षों से मन्दसोर में निवास कर रहा है। संवत् १९०३-४ में सेठ कुन्दनजी बापना ने इस दुकान का स्थापन किया। आपके बाद कालूरामजी ने कार्य सम्भाला। वर्तमान में सेठ कालूरामजी के पौत्र सेठ ऑकारलालजी बापना इस फर्म के संचालक हैं। आप शिक्षित एवं उन्नत विचारों के सज्जन हैं। आपकी बम्बई में ऑकरलाल मिश्रीलाल के नाम से आढ़त की दुकान है। आपके पुत्र मिश्रीलालजी हैं। यह परिवार मन्दसोर में अच्छा प्रतिष्ठित है। आपके यहाँ हुंडी, चिट्ठी, सराफी और रुई का व्यापार होता है।

कोठारी-चौपड़ा

कोठारी (चौपड़ा) गौत्र की उत्पत्ति

इस गौत्र की उत्पत्ति मण्डोवर के पड़िहार राजपूतों से है। ऐसी किम्वदन्ती है कि संवत् ११५६ में मण्डोवर के तत्कालीन पड़िहार राजा नाहड़राव ने तत्कालीन जैनाचार्य्य श्री जिन वल्लभसूरि की बहुत सेवा भक्ति की और प्रार्थना की कि गुरुदेव मेरे कोई संतान नहीं है और निःसन्तान का जीवन इस संसार में व्यर्थ है, इस पर गुरुदेव ने अपना वासचूर्ण उन दोनों पति पत्नी के सिर पर डाल कर चार पुत्र होने का आशीर्वाद दिया। इसके पश्चात् संवत् ११६९ में आचार्य्य जिनदत्तसूरि ने उन सब को जैन धर्म में दीक्षित कर चौपड़ा, कूकड़ चौपड़ा, गणधर चौपड़ा, चाँपड़गांधी, वेडर सांड आदि गोत्रों की स्थापना की। इसी वंश में आगे चलकर सोनपालजी हुए इनके पौत्र ठाकुरसीजी बड़े प्रतापी और बुद्धिमान हुए। ये राठौर राजा राव चूंडाजी के यहाँ कोठार का काम करते थे इससे कोठारी कहलाये। इसी खानदान में से आगे चलकर कुछ लोग बीकानेर तक चले गये और कुछ नागौर में बसे। नागौर वाले खानदान में क्रम से सांवतरामजी और गंगारामजी नामक दो भाई हुए। इनमें कोठारी सांवतरामजी तो अजमेर में रह कर व्यापार करते थे और कोठारी गंगारामजी युवावस्था ही से सैनिक का काम करते थे। अवसर पाकर यही कोठारी गंगारामजी स्वर्गीय महाराजा प्रथम तुकोजीराव के जमाने में, होलकरों की सेना में भरती हुए। तभी से इस खानदान का पाया इन्दौर स्टेट में जमा।

रामपुरा भानपुरा का कोठारी खानदान

कोठारी सांवतरामजी का परिवार

कोठारी भवानीरामजी—आप कोठारी सांवतरामजी के एकलौते पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १८२९ में हुआ। आप कोठारी गंगारामजी के पास होल्कर दरबार की खिदमत में आये। ईस्वी सन् १८३१ में रामपुरा डिस्ट्रिक्ट का इंतजाम आपके जिम्मे किया गया, उस समय उस जिले में बहुत से ठाकुर बागी हो गये थे और व्यवस्था बहुत बिगड़ रही थी। कोठारी भवानीरामजी ने अपनी हिम्मत और हिकमत से उन लोगों को काबू में करके सारे जिले में अमन अमान कर दिया। इसके उपलक्ष में

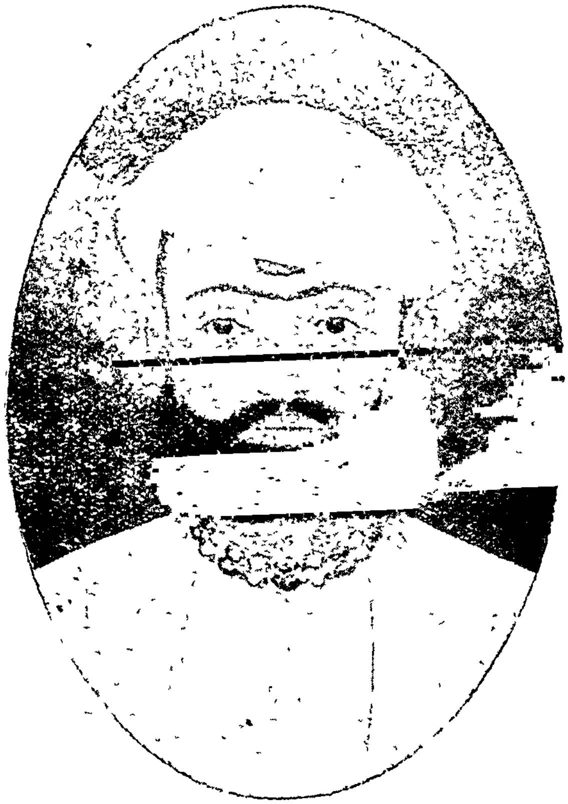
आपको एक पालकी और लवाजमा बख्शा गया, जिसके खर्च के लिये रामपुरा जिले की आमदनी से १२०) की वार्षिक नेमणूक दी गई। उसके पश्चात् १५००) वार्षिक की एक और नेमणूक आपको प्रदान की गई। आपके पास रामपुरा जिले के कई गाँव इजारे में थे और उनकी आमदनी से ये सिपाहियों का एक मजबूत दल रखते थे, जो कि उस कठिन जमाने में शांति बनाये रखने के लिये आवश्यक था। सन् १८३५ में आपका स्वर्गवास हुआ।

कोठारी शिवचन्दजी—कोठारी भवानीरामजी के पुत्र कोठारी शिवचन्दजी का जन्म संवत् १८६५ में हुआ। आपने अपने पिताजी के नाम को केवल कायम ही न रक्खा, बल्कि अपनी बहादुरी, चतुराई और प्रबन्ध कुशलता से बहुत अधिक चमका दिया। आपने रामपुरा भानपुरा जिले की प्रजा में अमन चैन और शांति स्थापित की। ईस्वी सन् १८३५ से १८४३ तक इस जिले का इन्तजाम शिवचन्दजी के पास रहा। इस समय में उस जिले की आमदनी में भी बहुत तरक्की हुई। सरकार ने आपकी इस खिदमत की बहुत कदर की और इसके उपलक्ष में तत्कालीन रेजिडेंट सर रावर्ट हेमिल्टन की शिफारिश पर आपको मोजा सगोरिया और खजूरी रूँडा पुश्तेनी इस्तमुरारी पट्टे पर बख्शा।

ईसवी सन् १८४३ में रामपुरा डिस्ट्रिक्ट इंतजामी सुभीते के लिहाज से २ हिस्सों में बांट दिया गया। कोठारी शिवचन्दजी को उत्तरीय हिस्से का अर्थात् भानपुरा डिस्ट्रिक्ट का काम सौंपा गया और वे जीवन पर्यंत इसी जिले के इंतजाम में रहे। भानपुरे की प्रजा उन्हें अत्यन्त प्रेमकी दृष्टि से देखती थी। आज भी भानपुरे जिले के घर घर २ में उनकी गुण गाथाएँ बड़े आदर और प्रेम से गायी जाती हैं।

ऐसा मालूम होता है कि सन् १८४८ में आप इन्दौर रेसिडेंसी में दरबार की तरफ से वकील मुकर्रर किये गये। कहना न होगा कि इस नाजुक और जिम्मेदारी पूर्ण पद पर आपने बहुत संतोषजनक रूप से काम किया और अच्छी कीर्ति सम्पादन की। आपके कामों से सर हेमिल्टन बड़े प्रसन्न रहते थे। इसी समय में आपने एक प्रख्यात डाकू फकीर महम्मद मकरानी को गिरफ्तार किया, जिसके उपलक्ष में बम्बई गवर्नमेन्ट ने आपको एक बहुमूल्य खिल्लत बख्शी। इस विषय में सर हेमिल्टन ने ता॰ १६ मई सन् १८४९ को एक धन्यवाद पत्र लिखा। इसके सिवाय और भी कई अंगरेज अफसरों से आप को अच्छे २ सर्टिफिकेट मिले हैं।

कुछ समय के पश्चात् गदर के इतिहास प्रसिद्ध दिन आये। उस समय में भानपुरा डिस्ट्रिक्ट, अराजक एवं असंतोषी लोगों का खास निवास स्थान था। बागियों की फोज से सारा जिला बड़े संकट में आ गया था। इस समय कोठारी शिवचन्दजी ने जिस बुद्धिमानी, चतुराई और राजनीतिज्ञता से वहाँ का इन्तजाम किया उससे इनकी योग्यता और प्रबन्ध कुशलता का पता बहुत आसानी से चल जाता



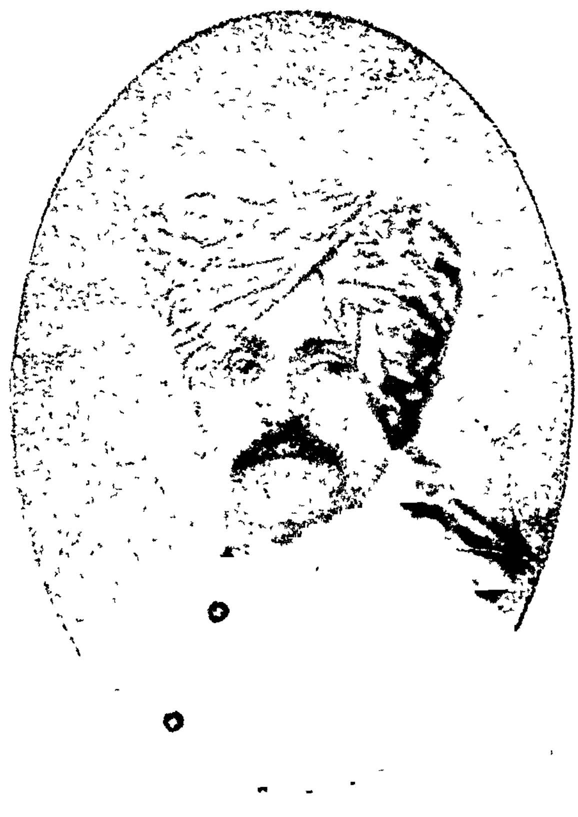
स्व० सरदार शिवचन्दजी कोठारी (प्रथम), भानपुरा.



स्व० सरदार सावन्तरामजी कोठारी, भानपुरा.



रायबहादुर हीराचन्दजी कोठारी, इन्दौर.



सरदार शिवचन्दजी कोठारी (द्वितीय), इन्दौर.

है। उन्होंने एक ओर तो बागी लोगों के पैरों को वहाँ नहीं जमने दिया, दूसरी ओर बागियों का पीछा करने वाली वृटिश फौज को रसद और दूसरा सामान पहुँचाने की उत्तम व्यवस्था की और तीसरी ओर भिन्न भिन्न स्थानों पर पड़ी हुई वृटिश सेना को, बागी लोगों की गति विधि और उनके मुकामों का संवाद पहुँचाने की व्यवस्था भी आपने की। ये सब काम आपने अत्यन्त फुर्ती और सावधानी से किये। इसके उपलक्ष में आपको कमांडिंग आफीसर के द्वारा लिखे हुए कई सार्टिफिकेट् भी प्राप्त हुए। इसी सम्बन्ध में नीमच के बड़े साहब ने कमिश्नर अजमेर के जरिये सन् १८५८ में जो रिपोर्ट की, उसका मतलब इस प्रकार है—

इन्दौर के वकील ने बागी लोगों के पाटन पहुँचते समय प्रगट किया था कि कोठारी शिवचन्दजी ने अपने आदमियों के साथ संधारे पर डेरा किया है। और वहाँ बहुत अच्छा इन्तजाम कर रक्खा है। कोठारी जी इन्दौर रियासत में बहुत मर्द होशियार और कारगुजार व्यक्ति हैं। सर हेमिल्टन भी आपके कामों से बहुत खुश हैं। जिस समय हम सरहद्द के फैसले में गये थे उस समय कोठारीजी से मिलकर हमारी तबियत बहुत प्रसन्न हुई। गदर के समय में इन्दौर, रियासत का अच्छा बंदोबस्त रखते हुए हमको क्षण क्षण में बागियों की खबर देकर बहुत खुश रक्खा। वास्तव में चन्द्रावतों ने रामपुरे में बड़ा सिर उठाया था, मगर कोठारीजी ने अपनी प्रबन्ध कुशलता से रामपुरा को इन्दौर रियासत में बनाए रक्खा। हमने इनको महाराजा व वृटिश गवर्नमेण्ट का खैरख्वाह समझ कर यह रिपोर्ट किया है।*

इस प्रकार प्रशंसापूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए सन् १८५९ ईस्वी में आपका स्वर्गवास हुआ।

कोठारी सांवतरामजी—कोठारी शिवचन्दजी के कोई संतान न होने से आपके नाम पर कोठारी सावंतरामजी को दत्तक लिया गया। आपका जन्म संवत् १९०१ में हुआ। कहना नहीं होगा कि आप भी अपने प्रतापी पिता के प्रतापी पुत्र थे। आपने भी अपने प्रशंसनीय कार्य्यों से इस खानदान की इज्जत और आबरू को बहुत बढ़ाया। आपके जिम्मे भानपुरा डिस्ट्रिक्ट का इन्तजामी चार्ज बना रहा और आप इस जिले के इजारदार भी रहे। इस जिले में सावन्तरामजी का प्रबन्ध अत्यन्त अक्लमन्दी और उदारता से भरा हुआ था। आपके समय में सरकारी आमदनी भी खूब जोरों से बढ़ी। खेती वाड़ी और बागवानी में आप बहुत दिलचस्पी रखते थे। अपराधियों के साथ आपका वर्ताव अत्यन्त उदारता और दया से परिपूर्ण रहता था। इनकी उदारता, महानता और कला प्रेम की गाथा आज भी भानपुरा के

---

* "Kothariji Sahib has kept the district in excellent condition. He is a brave and inteligent ana experienced officer in the Indore State. Infact the Chandrawats had attempted a rise at Rampura but Kothariji managed them excelently (and prevented it) It was owing to his tastful managemant that the Rampura district remaimd in the possession of the Holker Maharaja."

बच्चे २ के मुँह पर है। इतना होते हुए भी उनकी उदारता तथा दया-पूर्ण व्यवहार जिले की अराजकता को दबाने में बाधारूप नहीं हुआ। अराजकों, धाड़ेतियों और लुटेरों को वे कठोर दंड देते थे, जिनकी कहानियाँ भानपुरा के पुराने लोग आजभी बड़ी दिलचस्पी के साथ कहा करते हैं।

इन्दौर दरबार ने आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर मौजे सगोरिया को इस्तमुरारी पट्टे से बदलकर जागीर में बख्शा जो आज भी उनके वंशजों के पास है।

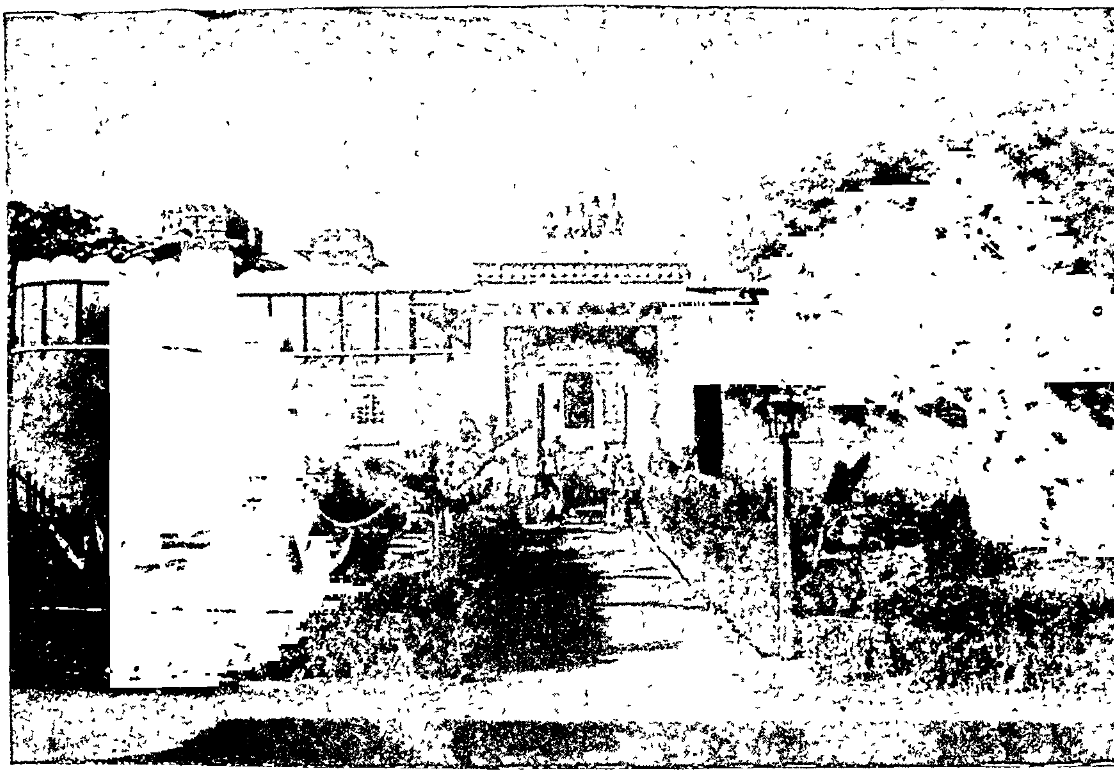
कोठारी सावंतरामजी ने सन् १८६९ में अपने पूज्य पिताजी की स्मृति में उनके दाह संस्कार की जगह गरोठ में एक सुंदर छत्री बनवाई, जिसके खर्च के लिये सरकार की ओर से २५ बीघा इनामी जमीन और १००) सालियाना बख्शा गया। इस रकम के कम पड़ने की वजह से ६ बीघा जमीन और बख्शी गई। अपनी मृत्यु से कुछ समय पहिले आप स्टेट कौंसिल के मेम्बर भी बनाये गये। आपका स्वर्गवास सन् १९०० में हुआ। कोठारीजी की भानपुरा में भी एक सुन्दर छत्री बनी हुई है जिसके साथ एक बगीचा भी है।

कोठारी सावंतरामजी के कोई संतान नहीं हुई अतः आपके नाम पर कोठारी शिवचन्दजी को दत्तक लिये गये। आप इस समय विद्यमान हैं। आप इस खानदान की पुश्तैनी जायदाद और आमदनी के मालिक हैं। आप इन्दौर में ऑनरेरी मजिस्ट्रेट और जवाहरखाना कमेटी के मेम्बर हैं। आपको स्टेट से "सरदार राव" का सम्माननीय खिताब भी प्राप्त है। दरबार में भी आपको बैठक प्राप्त है। आपके इस समय २ पुत्र हैं।

कोठारी गंगारामजी का खानदान

महाराजा होलकर की सेना में दाखिल होने के पश्चात् आपने कई लड़ाइयों में बड़ी वीरता के साथ युद्ध किया और अपनी योग्यता से बढ़ते २ जावरे के गवर्नर के पद तक को आपने प्राप्त किया। महाराजा यशवंतराव होल्कर ने अधिकारारूढ़ होने पर आपको रामपुरा भानपुरा आदि कई स्थानों का गवर्नर नियुक्त किया। * उस समय में आपकी अधीनता में दस हजार सेना और दस तोपें रहती थीं तथा रेव्हेन्यु, दीवानी, फौजदारी इत्यादि सब प्रकार के अधिकार भी आपको दिये गये थे। इन परगनों में आपने शान्ति स्थापन का बहुत प्रयत्न किया और समय २ पर कई लड़ाइयाँ लड़कर अपनी बहादुरी और राजनीति-कुशलता का परिचय दिया। आपकी वीरता और कारगुजारियों का वर्णन इन्दौर राज्य के हुजूर फड़नीसी के रिकार्डों में, सरजान मालकम के मध्य भारत के इतिहास में तथा और भी कई ग्रन्थों में मिलता है।

* देखिये मि० एम्बरे मेक का चीफस आफ सेण्ट्रल इण्डिया पृष्ठ ३०।



कोठारी साहब की छत्री, गरोठ.



श्री कोठारी हरिसिंहजी अपने पुत्र-पौत्र सहित, सैलाना.

आपका विशेष परिचय हम इसी ग्रन्थ के राजनैतिक और सैनिक महत्व नामक अध्याय के पृष्ठ ११४—१५ में दे चुके हैं।

कोठारी गंगारामजी के स्वर्गवासी हो जाने पर उनके पुत्र कोठारी मगनीरामजी अपने पिता के स्थान पर काम करते रहे। आपने अपनी जागीर के गांवों और बगीचे के लिए स्वर्गीय महाराजा मल्हारराव होलकर (द्वितीय) से पुनः सनद प्राप्त की। मगनीरामजी को भी उनके पिता के ही समान इज्जत और हक़ प्राप्त थे।

कोठारी मगनीराम जी के पश्चात् उनके पुत्र कोठारी रतनचन्दजी हुए। इनके समय में रामपुरा जिले का अधिकार इनको और कोठारी भवानीरामजी के पुत्र कोठारी शिवचंदजी को आधा २ बाँट दिया गया। सन् १८४५ तक इस जिले पर इनका अधिकार रहा। आप रामपुरा के कुमेदान के पद पर भी रहे। उस समय आप रामपुरा के एक प्रभावशाली कारगुजार थे। आप बड़े साहसी तथा स्वामि-भक्त सज्जन थे। आपने अपने प्रांत में बदमाशों तथा लुटेरों को उचित दण्ड देकर शांति स्थापित की थी। इसी प्रकार संवत् १९१४ के गदर के समय इन्दौर की बागी फौज को आपने अपने आधीन करने में बड़े साहस के काम किये थे। एक समय की बात है कि इन्दौर की फौज के कुछ लोगों ने फणसे को मारने का प्रयत्न किया, उस समय आपने नंगी तलवार से कुछ समय तक युद्ध कर सारी फौज को भगा दिया था। तत्कालीन पोलिटिकल एजंट सैंडिस तथा नार्थ ब्रुक ने आपको कई महत्व के काम सौंपे थे। सन् १८४४ में मालाहेड़े वाले महाराजा फौजसिंहजी के जागीरी के झगड़े में व रामपुरा तथा संजीव (जावरा-स्टेट) के सरहद्दी के झगड़े में उक्त पोलिटिकल एजण्ट ने आपको भेजा था। आपने इन्हें बड़ी योग्यता से निपटाया। इसके बाद आपके ऊपर सरकारी कर्जा अधिक बढ़ जाने के कारण आपकी जागीरी के दोनों गाँव खालसे कर लिये गये। तब आप सं० १९१८ में मारवाड़ चले गये। वहाँ जोधपुर दरबार की ओर से आपको पालकी, नगारा, निशान छड़ी आदि का सम्मान प्राप्त हुआ। आप संवत् १९२५ में मारवाड़ में ही स्वर्गवासी हुए। आपके उदेचन्दजी, फूलचन्दजी, गुलाबचंदजी तथा मूलचन्दजी नामक चार पुत्र हुए।

कोठारी उदेचन्दजी सर्व प्रथम जावरा के अधिकारी हुए। तदनंतर आप महिदपुर फौज में तथा लड़ाई बन्द होने पर आप इन्दौर मुनाफे के खजाने पर नियुक्त किये गये। आप आजीवन इसी पद पर काम करते रहे। आप और फूलचन्दजी ग्यारह दिन के अन्तर से साथ २ स्वर्गवासी हुए। आप दोनों भाइयों की मृत्यु के पश्चात् आपके शेष दोनों भाई पहले मानकरी और फिर इन्दौर नरेश यशवंतराव होलकर और युवराज शिवाजीराव होलकर के प्राइवेट सेक्रेटरी बनाये गये। तदनंतर कोठारी गुलाबचंदजी क्रमशः मुनाफा खजांची, कारखानेदार, हुजूर खजांची, कौंसिल के मेम्बर आदि २ कामों पर तथा कोठारी

मूलचन्दजी कारखानेदार, मनासा के अमीन आदि २ कार्यों पर नियुक्त किये गये। आप दोनों बन्धुओं ने प्रयत्न करके अपने पूर्वजों के जप्त किये हुए जागीरी के गावों को पुनः प्राप्त करने के लिये प्रयत्न किया। इसके फलस्वरूप उन दोनों गाँवों के बदले में मौजा वासन्दा तथा कुछ जमीन बगीचे के लिये आप लोगों को इनायत की गई। इस प्रकार आप दोनों बन्धु होल्कर सरकार की सेवा करते हुए स्वर्गवासी हुए। इनमें से कोठारी मूलचन्दजी के हीराचन्दजी, दीपचन्दजी और देवीचन्दजी नामक तीन पुत्र विद्यमान हैं।

कोठारी हीराचन्दजी बड़े मुसुद्दी, कार्य्यकुशल तथा योग्य सज्जन हैं। आपने अपनी योग्यता एवं कार्य्य कुशलता से एक साधारण पद से एक बहुत बड़े सम्माननीय पद को प्राप्त किया है। आपने प्रारम्भ में इन्दौर के मुनाफा कारखाना, फड़नीसी दफ्तर, पोलिस विभाग तथा सायर के महकमें में काम कर अपने आपको वृद्धि की ओर अग्रसर किया। आप इसके पश्चात् कोठी कारखानदार और फिर मनासा के अमीन बना कर भेजे गये। उस समय मनासा परगने के आस पास बड़ी दुर्व्यवस्था और गड़बड़ी हो रही थी। इसे आपने मिटा कर वहाँ शांति स्थापित की तथा बड़ी योग्यता और बुद्धिमानी से कई उजड़े हुए गाँवों को बसाया। आपकी इस सुव्यवस्था तथा नवीन बसाहत से राज्य के तत्कालीन उच्च पदाधिकारी बड़े संतुष्ट रहे और उन्होंने समय समय पर आपके कार्य्यों की खूब प्रशंसा की। आपके इन कार्यों के उपलक्ष्य में आपको रामपुरा के नायब सूबा और फिर महत्पुर का सूबा बनाया। तदनन्तर रामपुरा और भानपुरा इन दोनों परगनों को सम्मिलित कर आप उसके सूबा बनाये गये। इसी समय इन्दौर नरेश महाराजा तुकोजीराव होल्कर ने इस जिले का दौरा करते समय आपके कार्यों से बड़ी प्रसन्नता प्रगट की और वहाँ के जागीरदारों और सरदारों से भरे दरबार में आपको १०००) नगद तथा फर्स्ट क्लास सिरोपाव देकर सम्मानित किया।

तदनंतर क्रमशः आप रेव्हेन्यू कमिश्नर, कस्टम कमिश्नर, एक्साइज मिनिस्टर, रेव्हेन्यू मिनिस्टर, नायब दीवान खासगी आदि २ उच्च पदों पर नियुक्त किये गये और फिर कौन्सिल के मेम्बर भी बनाये गये। इसके पश्चात् आप दीवान खासगी मुकर्रर किये गये तथा यहाँ से पेंशन प्राप्त होने पर आप फिर से कौंसिल के मेम्बर बनाये गये। कहने का तात्पर्य यह है कि आपने इस राज्य में बड़े २ उत्तरदायित्वपूर्ण पदों पर रहकर बड़ी योग्यता से व्यवस्था की। जिस समय महाराजा होलकर विलायत गये हुए थे उस समय आप कौंसिल के सभापति भी बनाये गये थे।

आपका इन्दौर राज्य में बहुत सम्मान है। आपको सन् १९१४ में ब्रिटिश गवर्नमेंट ने "राय बहादुर" के सम्माननीय खिताब से विभूषित किया। इसी प्रकार होलकर सरकार ने आपको "मुन्तजिम-ए-खास" की पदवी तथा हुजूर प्रिवी कौंसिल के कौंसिलर बना कर सम्मानित किया। इतना ही नहीं

इन्दौर राज्य की ओर से आपकी धर्मपत्नी को ५०) मासिक का आजीवन के लिये अलाउन्स भी कर दिया था, जो इस समय आपकी पुत्र वधु को मिल रहा है। आपने इन्दौर नरेश यशवंतराव होल्कर के विवाहोत्सव पर अत्यन्त सुचारु रूप से व्यवस्था की, जिससे प्रसन्न होकर होल्कर नरेश ने आपको ७०००) बक्षिस में प्रदान किये थे। आपके संतोषचन्दजी नामक एक पुत्र हुए। आप भी कई स्थानों पर अमीन रह चुके थे। आपका स्वर्गवास हो गया है।

कोठारी हीराचन्दजी के भाई दीपचन्दजी भी कई स्थानों पर अमीन रहे। इस समय आप बड़वाह (नेमाड़) में अमीन हैं। आपके एक पुत्र है। इसी प्रकार कोठारी देवीचन्दजी भी सरकारी सर्विस करते हैं। आपके भी एक पुत्र हैं।

सेठ रामचन्द्र फूलचन्द कोठारी, भोपाल

इस कोठारी परिवार का मूल निवासस्थान बीकानेर है। वहाँ से १०० साल पूर्व कोठारी करमचन्दजी धार गये और वहाँ उन्होंने व्यापार की अच्छी उन्नति कर धार, बदनावर, आष्टा, मागदा आदि स्थानों में १५ दुकानें खोलीं। धार से कोठारी करमचन्दजी के पुत्र रामचन्द्रजी भानपुरा (इन्दौर स्टेट) गये। इनके कनकमलजी, हेमचन्दजी (उर्फ सावंतरामजी), नेमीचन्दजी व किशनचंदजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें से कोठारी नेमीचन्दजी सम्वत् १९३४-३५ में भानपुरा से भोपाल आये तथा कोठारी सावंतमलजी और उनके भ्राता वहीं रहते रहे। कोठारी सावंतरामजी का विस्तृत परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। कोठारी कनकमलजी के पुत्र कानमलजी और पौत्र जवानमलजी व पानमलजी हुए। इनमें से जवानमलजी भोपाल में नेमीचन्दजी के पुत्र मूलचन्दजी के नाम पर दत्तक आये तथा पानमलजी जोधपुर में अजमेर वाले सोनियों की दुकान पर काम करते हैं।

कोठारी नेमीचन्दजी का शरीरान्त संवत् १९४६ में हुआ। आपके पुत्र मूलचन्दजी का जन्म संवत् १९१६ में हुआ। इस समय आप बीकानेर में ही निवास करते हैं। कोठारी जवानमलजी का जन्म सं० १९५७ में हुआ। आपका कुटुम्ब यहाँ की ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित समझा जाता है। आपके यहाँ रामचन्द्र फूलचंद के नाम से सराफी का व्यापार होता है।

कोठारी हाकिम और शाह

कोठारी चौपड़ा गौत्र की उत्पत्ति का वर्णन करते समय हम ऊपर लिख आये हैं कि ठाकुरसीजी के पश्चात् इस खानदान के कुछ लोग बीकानेर की ओर चले गये। उनमें कोठारी चौथमलजी भी थे। आप राव बीकाजी के, जब कि वे नवीन राज्य की स्थापना के लिए जांगलू प्रान्त में गये थे, साथ थे। इनके सूरजमलजी नामक पुत्र हुए। सूरजमलजी के सात पुत्र हुए। जिनमें से पृथ्वीराजजी को तत्कालीन बीकानेर नरेश ने अपने राज्य में हाकिमी का पद प्रदान किया। तबही से पृथ्वीराजजी के वंशज हाकिम कोठारी कहलाते हैं। शेष छहों भाइयों की संतानें साहुकारी का काम करने के कारण शाह कोठारी कहलाती हैं।

सेठ रावतमल भैरोंदान कोठारी (हाकिम) बीकानेर

हाकिम कोठारी पृथ्वीराजजी के जीवनदासजी और जगजीवनदासजी नामक दो पुत्र हुए। आप लोग आजन्म रियासत बीकानेर में हाकिमी का काम करते रहे। इनमें जगजीवनदासजी के करमसिंहजी और खींवसीजी नामक दो पुत्र हुए। आप दोनों भाई भी हाकिमी का काम करते रहे। यह परिवार करमसीजी का है। करमसीजी के पश्चात् उनके पुत्र सुल्तानसिंहजी और सुल्तानसिंहजी के पुत्र मदनसिंहजी हाकिम रहे। मदनसिंहजी के पुत्र रेखचंदजी को सरकारी नौकरी से अरुचि होगई। अतएव आपने सरकारी नौकरी करना छोड़ दिया और सरकार से साहुकारी का पट्टा हासिल किया। इनके अमोलकचन्दजी और रावतमलजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ रावतमलजी ने दोहद नामक स्थान पर साधारण कपड़े का व्यापार प्रारम्भ किया था। आपका स्वर्गवास हो गया है। आपके भैरोंदानजी नामक एक पुत्र हैं।

सेठ भैरोंदानजी का जन्म संवत् १९३८ में दोहद नामक स्थान में हुआ। संवत् १९५५ में आप कलकत्ता गये और वहाँ १०) मासिक पर नौकरी की। आप बड़े प्रतिभा सम्पन्न, और व्यापार चतुर हैं। आपने शीघ्र ही नौकरी को छोड़ दिया और वहीं विलायती कपड़े को बेचने के लिये मेसर्स रावतमल भैरोंदान के नाम से फर्म स्थापित की। जब इसमें आप असफल रहे तब आपने अपनी फर्म पर स्वदेशी कपड़े का व्यापार करना प्रारम्भ किया। इसमें आपके योग्य संचालन से आशातीत सफलता हुई। आपने लाखों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। इतना ही नहीं वरन् उसका सदुपयोग भी किया। आपका ध्यान हमेशा धार्मिक एवं सामाजिक बातों की ओर भी रहता है। आपकी धर्मपत्नी के नवपद ओली के तप के उद्यापन में आपने करीब ५० हजार रुपया खर्च किया। एक सुन्दर चाँदी और सोने का सिंहासन बनाकर

श्री चिन्तामणिजी के मंदिर को भेंट किया। आपने बीकानेर की श्री जैन पाठशाला को ५१००), कलकत्ता श्वेताम्बर मित्र मंडल को ३१००), पूना भंडारकर पुस्तकालय को १०००), इसी प्रकार और भी कई संस्थाओं को सहायता पहुँचाई है। आपका विद्या की ओर भी अच्छा ध्यान है। आपने जैन साहित्य के प्रकाशनार्थ पं० काशीप्रसादजी जैन को ५ हजार रुपया प्रदान किया है। इसी प्रकार आप समय २ पर गुप्तदान भी करते रहते हैं। आपके यहाँ से बहुतसी अनाथ विधवाओं को सहायता पहुँचाई जाती है। लिखने का मतलब यह है कि आप उदार और दानी सज्जन हैं। आपका स्वभाव मिलनसार है। आपको देशी कारीगरी का बेहद शौक है। आपने अपने यहाँ कई चाँदी सोने की कलामय वस्तुओं का बहुमूल्य संग्रह कर रक्खा है। आपका मकान एक दर्शनीय मकान है। आपके यहाँ एक देशी किंवाड़ जोड़ी को करीब २ साल से २ कारीगर बना रहे हैं। इस किंवाड़ जोड़ी की कारीगरी देखते ही बनती है। इसी प्रकार आपके मकान की छतों एवं दीवालों पर का सुनहरी काम तथा चित्रकारी दर्शनीय है। आपका व्यापार कलकत्ता में नं० १०० क्रास स्ट्रीट में होता है।

सेठ जतनमल मानमल कोठारी (शाह) बीकानेर

यह हम ऊपर लिख चुके हैं कि सूरजमलजी कोठारी के ७ पुत्र थे। जिनमें से पृथ्वीराजजी के वंशज हाकिम कोठारी कहलाते हैं और शेष भ्राताओं का परिवार शाह कोठारी कहलाता है। यह परिवार भी शाह कोठारी है। इस परिवार का पुराना इतिहास बड़ा गौरव-पूर्ण है। इस परिवार में ऐसे २ व्यापार कुशल व्यक्ति हो गये हैं, जिन्होंने अपनी अपूर्व व्यापार-चातुरी और अद्भुत प्रतिभा के बलपर तत्कालीन व्यापारिक फर्मों में अपनी फर्म का एक खास स्थान बना रक्खा था। इस परिवार के पुरुषों की फर्मों का हेड आफिस बीकानेर ही था। करीब ३०० वर्ष पूर्व इस परिवार की फर्म आमेर में थी। वहाँ उस समय गुमानसिंह दानसिंह नाम पड़ता था। इसके बाद जबकि जयपुर बसा तब यह फर्म भी वहाँ से जयपुर लाई गई। इसी प्रकार इस परिवार की उस समय इन्दौर, पूना, ग्वालियर, उदयपुर, अमरावती आदि प्रसिद्ध २ व्यापारिक केन्द्रों में फर्मे खुली हुई थीं। जब बम्बई पोर्ट कायम हुआ तब इस परिवार की पूना वाली फर्म बम्बई लाई गई। इन्दौर वाली फर्म से स्टेट को काफी आर्थिक सहायता दी गई थी। इसके प्रमाण स्वरूप इस परिवार वालों के पास खास रुक्के मौजूद हैं। बीकानेर दरबार ने भी समय २ पर इस परिवार वालों को साहुकारी के खास रुक्के प्रदान कर सम्मानित किया है। उदयपुर और गवालियर रियासत से भी कई रुक्के प्राप्त हुए हैं। लिखने का मतलब यह है कि इस परिवार का व्यापारिक इतिहास प्राचीन और गौरव-मय स्थिति में रहा है।

सेठ सुजानमलजी इस परिवार में बड़े प्रालब्धी व्यक्ति माने जाते हैं। उनके समय तक फर्म बहुत अच्छी अवस्था में संचालित होती रही। सेठ सुजानमलजी के चार पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः सेठ बाघमलजी, हजारीमलजी, मोतीलालजी और केसरीचन्दजी था। उपरोक्त फर्म सेठ हजारीमलजी के परिवार की है।

सेठ हजारीमलजी के उदयमलजी नामक एक पुत्र थे। आपके इस समय जतनमलजी नामक एक पुत्र हैं। सेठ जतनमलजी, बड़े होशियार सज्जन और मिलनसार व्यक्ति हैं। आजकल आपका व्यापार विहार प्रान्त में होता है। आपकी फर्म का हेड आफिस खगड़िया (मुंगेर) में है तथा शाखाएँ मोकामा (पटना) और फूलबारिया (मुंगेर) में है। इन फर्मों पर मेसर्स जतनमल मानमल कोठारी के नाम से गल्ला, तिलहन और बैंकिंग का व्यापार होता है। आपका मूल निवास स्थान बीकानेर ही है। आप मंदिर मार्गी सम्प्रदाय के सज्जन हैं। आपका बीकानेर के स्व० सेठ चाँदमलजी ड्ढा पर पूरा २ विश्वास था। आपका उनका पूरा २ दोस्ताना था। इसके पूर्व भी आपके पूर्वजों और उनके पूर्वजों का काफी मेल था। एकबार ज। आप पर आर्थिक संकट आया था और आपकी फर्म खतरे में पड़ गई थी, उस समय सेठ चाँदमलजी ने सहायता कर आपकी फर्म की रक्षा की थी। इसके बदले में आपने भी उनकी वृद्धावस्था में काफी सेवा की, जिसके लिये सेठ चाँदमलजी आपको सुन्दर सार्टीफिकेट प्रदान कर गये हैं। आपके जतनमलजी नामक एक पुत्र हैं। आप भी उत्साही नवयुवक हैं।



सेठ जतनमलजी कोठारी (जतनमल मानमल) बीकानेर.



जालिमसिंहजी कोठारी, अजमेर.



कुँ० मानमलजी S/o जतनमलजी कोठारी.



सेठ नैनमलजी कोठारी, शिवगंज.

कोठारी रणधीरोत

कोठारी रणधीरोत गौत्र की उत्पत्ति

कोठारी रणधीरोत गौत्र की उत्पत्ति के विषय में यह दन्त कथा प्रचलित है कि मथुरा के राजा पांडु सेन--अलैपुरा राठोड़ मेड़त्या—को संवत् १००१ में भट्टारक श्री धनेश्वरसूरिजी ने नेणखेड़ा नामक ग्राम में प्रतिबोध देकर जैनी बनाया और ओसवाल जाति में सम्मिलित किया। इसी नेणखेड़ा गाँव में श्री ऋषभदेवजी का विशाल मन्दिर बनवाने के कारण इनका "ऋषभ" गौत्र हुआ। साथ ही स्थान २ पर श्री ऋषभनाथजी के निमित्त कोठार शुरू करवाने से कोठारी कहलाये। राजा पांडुसेन की चौबीसवीं, पच्चीसवीं पुश्त में रणधीरजी नामक एक प्रतापी पुरुष हुए। इन्हीं रणधीरजी के वंशज रणधीरोत कोठारी कहलाते चले आ रहे हैं।

उदयपुर का कोठारी खानदान

कोठारी रणधीरजी की तेरहवीं पुश्त में कोठारी चोलाजी हुए। इनके पुत्र मांडणजी संवत् १६१३ में राठोड़ कूंपाजी की बेटी के साथ, जो महाराणा उदयसिंहजी के साथ ब्याही गई थी, दहेज में आये। संवत् १६२७ में महाराणा ने इन्हें डहलाणा नामक एक गाँव जागीर स्वरूप प्रदान किया। संवत् १६५२ में महाराणा अमरसिंहजी ने इसे वापस ले लिया, मगर महाराणा जगतसिंहजी ने सिंहासनारूढ़ होते ही इस गाँव के अतिरिक्त आसाहोली नामक एक और गाँव जागीर में प्रदान किया। कोठारी मांडणजी की तीसरी पुश्त में कोठारी खेमराजजी और हेमराजजी हुए। महाराणा ने इन्हें संवत् १७८१ में हाथी का सम्मान प्रदान किया।

कोठारी खेमराजजी के पुत्र भीमजी को महाराणा अमरसिंहजी (दूसरे) ने अपने प्राइवेट काम काज पर रक्खा। इनके पश्चात् महाराणा संग्रामसिंहजी (दूसरे) ने इन्हें फौजबक्षी का काम प्रदान किया। इनके पुत्र चतुर्भुजजी को महाराणा जगतसिंहजी तथा महाराणा राजसिंहजी (दूसरे) ने प्रधान का काम इनायत किया, जिसे आपने बड़ी सफलता से संचालित किया। इसके पश्चात् इनके पुत्र शिवलालजी और शिवलालजी के पुत्र पन्नालालजी हुए। आप दोनों ही पिता पुत्र सरकार में काम काज करते रहे। कोठारी पन्नालालजी के छगनलालजी एवम् केशरीसिंहजी नामक दो पुत्र हुए।

कोठारी छगनलालजी का परिवार

कोठारी छगनलालजी—आप बड़े प्रतिभा सम्पन्न और होशियार व्यक्ति थे । प्रारम्भ में आप खजाने के अफसर नियुक्त हुए। इसके बाद आपको फौजबशी का सम्मान मिला। आप जिला सादड़ी, कणेरा, कुम्भलगढ़, मगरा, खेरवाड़ा, राजनगर इत्यादि कितने ही स्थानों में हाकिम रहे। आपको हाकिम देवस्थान और हाकिम महकमें माल का काम भी मिला था। यही नहीं बल्कि आपने कुछ समय तक महकमा खास का काम भी किया। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर तत्कालीन महाराणा साहब ने आपको मोरजाइ नामक एक गाँव जागीर स्वरूप प्रदान किया था। इस गाँव को बदल कर संवत् १९११ में महारानी की ओर से सेतूरिया नामक गाँव प्रदान किया गया। संवत् १९३२ में भारत सरकार ने आपको 'राय' की सम्मान सूचक उपाधि प्रधान की थी। महाराणा उदयपुर ने समय २ पर आपको सिरोपाव, सोना और बगीचे के लिये जमीन प्रदान कर आपका सम्मान बढ़ाया था। आपका विशेष परिचय "राजनैतिक और सैनिक महत्व" नामक शीर्षक में पृष्ठ ९३ में दिया गया है। आपके कोई पुत्र न था। अतएव बनेड़ा से कोठारी मोतीसिंहजी दत्तक आये ।

कोठारी मोतीसिंहजी—आपको महाराणा सज्जनसिंहजी ने प्रारम्भ में अफसर खजाना, टकसाल और स्टाम्प मुकर्रर किया। कुछ समय तक आप महकमा देवस्थान और जिला गिरवा के हाकिम भी रहे। आपके कामों से प्रसन्न होकर महाराणा साहब ने आपको कण्डी, सिरोपाव, बैठक आदि का सम्मान प्रदान किया। आपके दलपतसिंहजी नामक एक दत्तक पुत्र हैं। आप सिरोही स्टेट में, मजिस्ट्रेट, आबू वकील, असिस्टेंट चीफ मिनिस्टर और कुछ समय के लिए चीफ मिनिस्टर भी रहे। आपको भारत सरकार की ओर से गवर्नमेण्ट फौज में, लेफ्टिनेण्ट का कामीशन इनायत हुआ है। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर कई अंगरेज हाय अफसरों ने बहुत अच्छे २ सार्टिफिकेट दिये हैं। आपको शिकारखेलने का बहुत शौक है। आपने कई बड़े २ शेरों का शिकार किया है। आपके भँवर गणपतसिंह नामक एक पुत्र हैं। आप अभी बालक हैं, मगर अभी से प्रतिभावान हैं। आपको मिलिटरी कवायद करने का अनहद शौक है।

कोठारी मोतीसिंहजी का ध्यान धार्मिकता की ओर भी अच्छा है। आपने स्थानीय शीतल नाथजी के मन्दिर को कुछ कोठरियाँ बनवा कर भेंट की हैं। आपकी ओर से थोबकी बाड़ी नामक स्थान पर एक धर्मशाला बनी हुई है। इसी प्रकार और भी मन्दिरों वगैरह में आप खर्च करते रहते हैं।



स्व० छगनलालजी कोठारी, उदयपुर.



श्री मोतीसिंहजी कोठारी, उदयपुर.



लेफ्टिनेंट कुँवर दलपतसिंहजी कोठारी A.I.R.O., उदयपुर.



भँवर गनपतसिंह S/o कुँ० दलपतसिंहजी कोठारी, उदयपुर.

कोठारी केशरीसिंहजी का खानदान

कोठारी केशरीसिंहजी—आप बड़े स्पष्ट वक्ता, निर्भीक, इमानदार, अनुभवी, स्वामि-भक्त और प्रबन्ध कुशल व्यक्ति थे। आपने अपने जीवन-काल में अनेक राजनैतिक खेल खेले। आप अपनी चतुराई एवम् बुद्धिमानी से क्रमशः बढ़ते २ दीवान के पद तक पहुँचे। आपका विशेष इतिहास इसो ग्रन्थ के 'राजनैतिक और सैनिक महत्व' नामक अध्याय में भलिभाँति दिया जा चुका है। आपके कोई पुत्र न होने से आपने कोठारी बलवन्तसिंहजी को दत्तक लिया।

कोठारी बलवंतसिंहजी—महाराणा सज्जनसिंहजी ने संवत् १९२८ में आपको महकमा देवस्थान का हाकिम नियुक्त किया। इसके पश्चात् जब महाराणा फतेसिंहजी सिंहासनारूढ़ हुए तब आपने कोठारीजी को महद्राज सभा का मेम्बर बनाया। इसी समय महाराणा ने आपको सोने का लंगर प्रदान कर सम्मानित किया। इसके बाद आपको स्टेट बैंक का काम दिया गया। राय मेहता पन्नालालजी के महकमा खास के पद में इस्तीफा देने पर वह काम आपके तथा सही वाले अर्जुनसिंहजी के सिपुर्द हुआ। इसके बाद संवत् १९६२ में आप दोनों सज्जनों का इस्तीफा पेश होने पर इस काम को मेहता भोपालसिंह जी और महासानी हीरालालजी पंचोली के जिम्मे किया गया। इसके बाद फिर ३ वर्ष तक आपने महकमा खास का काम किया। देवस्थान के काम के अलावा टकसाल का काम भी आपके जिम्मे रहा। इस प्रकार कई वर्ष तक इतनी बड़ी सेवा करते हुए भी आपने राज्य से तनखा के स्वरूप कुछ नहीं लिया। आपके गिरधारीसिंहजी नामक एक पुत्र हैं।

गिरधारीसिंहजी सज्जन और मिलनसार व्यक्ति हैं। आप मेवाड़ में सहाड़ी, भीलवाड़ा, गिर्वा, चित्तौड़ आदि कई स्थानों में हाकिम रहे। इसके बाद आप महकमा देवस्थान के हाकिम रहे। आजकल आप कपासन में हाकिम हैं। आपके भँवर तेजसिंहजी नामक एक पुत्र हैं। आप ग्रेज्यूएट हैं।

मसूदे का कोठारी परिवार

इस वंश के पूर्वजों का मूल निवास स्थान कुँभलगढ़ (मेवाड़) था। जब मेवाड़ के महाराणा के भतीजे रतनसिंहजी का विवाह मेड़ते में हुआ, उस समय इस परिवार के पूर्वज कोठारी रणधीरसिंहजी को महाराणा जी ने विवाह का प्रबन्ध करने के लिये मेड़ते भेजा। मेड़ते के तत्कालीन रावजी, रणधीरसिंह जी की व्यवस्थापिका शक्ति एवं कार्य्य चातुरी से बड़े खुश हुए, एवं उन्हें अपने यहाँ रहने देने के लिये महाराणा जी से माँग लिया। इनके पुत्र खींवसीजी और पौत्र घणमलजी मेड़ते रावजी की सेवा में रहे।

कोठारी घणमालजी

आप मेड़ता कुँवर भोपतसिंहजी के साथ यूसुफ जाई के साथ वाली लड़ाई में देहली बादशाह शाह अकबर की मदद के लिये गये थे। जब बादशाह ने कुँवर भोपतसिंहजी को पेशावर के ४ परगने और अजमेर के समीप मसूदे का दो लाख की आय का प्रसिद्ध ठिकाना जागीरी में दिया, उस समय घण माल ने बड़ी बुद्धिमत्ता पूर्वक इन परगनों का प्रबंध किया। आपके बाद, क्रमशः सकटदासजी, केशवदासजी, वनराजजी और नथमलजी भी मसूदे का काम करते रहे।

कोठारी नथमलजी—आप बड़े वीर और व्यवहार कुशल सज्जन थे। जिस समय मसूदे के नाबालिग अधिकारी जैतसिंहजा को इनके काका शेरसिंहजी ने जोधपुर की मदद से निकाल दिया था, उस समय आपने अपनी बुद्धिमानी और चतुराई द्वारा बादशाह फर्रुखशियर की शाही सेना की मदद प्राप्त कर कुँवर जैतसिंहजी को पुनः अपना राज्य दिलवाया। आपके सूरजमलजी और जयकरणजी नामक पुत्र हुए। कोठारी सूरजमलजी मरहठों के साथ की गढ़बीटली की लड़ाई में वीरता से लड़कर मारे गये। कोठारी जयकरणजी के पुत्र बहादुरमलजी हुए।

कोठारी बहादुरमलजी—आप वीर, समझदार तथा इतिहासज्ञ सज्जन थे। आपने जोधपुर का ईडर पर हक साबित करने के लिये एक ख्यात तय्यार की थी। सन १८१७ में कर्नल हॉल के साथ मेरों की बगावत शान्त करने में आपने भी सहयोग लिया था। इसी तरह रायपुर और मगेर के झगड़ों के समय आपको गवर्नमेंट ने पंच मुकर्रर किया था। आपके कार्यों से प्रसन्न होकर अजमेर मेरवाड़ा के अफसर कर्नल डिक्सन ने आपको इस्तमुरारी हकूक पर १ हजार बीघा जमीन मय तालाब और कुओं के इनायत की। संवत् १९१७ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके अमानसिंहजी, छतरसिंहजी, सावंतसिंहजी, बलवंतसिंहजी, सालमसिंहजी, छोटूलालजी और समरथसिंहजी नामक सात पुत्र हुए।

कोठारी अमानसिंहजी—कोठारी अमानसिंहजी ने मसूदे की कामदारी का काम बड़े सुव्यवस्थित ढंग से किया। आपका संवत् १९२६ में स्वर्गवास हुआ। आपके सुजानसिंहजी, सौभागसिंहजी, वल्लभसिंहजी तथा समीरसिंहजी नामक चार पुत्र हुए।

कोठारी सुजानसिंहजी—आपका जन्म सं० १९१० में हुआ। आप बड़े योग्य तथा स्वतन्त्र विचारों के सज्जन थे। आप मसूदे से अजमेर आकर रहने लगे। उस समय आपकी साधारण स्थिति थी। लेकिन अपनी योग्यता और बुद्धिमत्ता द्वारा आपने अपनी स्थाई सम्पत्ति को खूब बढ़ाया। आपने आर्य्य

समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्दजी के साथ रहकर उनकी बहुत सेवा की थी। अजमेर की आर्य्य समाज के प्रथम प्रवर्तकों में आप हैं।

कोठारी मोतीसिंहजी—आप कोठारी सुजानसिंहजी के पुत्र हैं। संवत् १९३१ में आपका जन्म हुआ है। आप फूलिया के तहसीलदार, शाहपुरा के मजिस्ट्रेट और कन्नौद तथा महत्पुर में ए० व्ही० स्कूलों के हेड मास्टर रहे हैं। इस समय आप अजमेर में निवास करते हैं। आपके यहाँ पर कई मकानात हैं जिनसे किराये की आमदनी होती है। आप होमियोपैथिक डाक्टर और आयुर्वेद विशारद हैं।

कोठारी सोभागसिंहजी का जन्म सम्वत १९१२ में हुआ। आप मेवाड़ के नायब हाकिम और आमेर, कोठारिया, तथा भैंसरोड़ ठिकानों के कामदार रहे। आपके जालिमसिंहजी और सुगनसिंहजी नामक दो पुत्र हैं। इनमें सुगनसिंहजी, कोठारी समीरसिंहजी के नाम पर दत्तक गये हैं।

कोठारी जालिमसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९२९ में हुआ। आप बड़े बुद्धिमान, योग्य व्यवस्थापक तथा शिक्षित सज्जन हैं। आपने अपनी योग्यता तथा कार्यकुशलता से कई रियासतों में बड़े २ ऊँचे पदों पर काम किया। सबसे पहले आपने सन् १९०० में बी० ए० पास किया तथा उसके बाद इलाहाबाद हॉय कोर्ट की कानूनी परीक्षा का इम्तहान दिया। तदनंतर आप सर्विस करने लगे। प्रारम्भ में आप बहुत से छोटे २ पदों पर नियुक्त हुए, परन्तु आप अपनी बुद्धिमानी और व्यवस्थापिका शक्ति द्वारा बहुत ऊँचे पदों पर पहुँच गये। आप नागोदा रियासत के कुमार भागवेन्द्रसिंहजी के ट्यूटर रहे। इसके पश्चात् इन्दौर रियासत ने ब्रिटिश गवर्नमेंट से आपकी सर्विस को मांगा। वहाँ पर आप हुजूर आफिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट नियुक्त हुए। उसके बाद क्रमशः स्टेट कौंसिल के सेक्रेटरी तथा कस्टम एण्ड एक्साइज कमिश्नर रहे। तदनंतर आप वहाँ से जोधपुर चले गये और जोधपुर राज्य की ओर से साल्ट और आबकारी डि० के सुपरिन्टेन्डेण्ट बनाये गये। वहाँ से आप उदयपुर गये तथा महद्राज सभा के सेक्रेटरी नियुक्त हुए। इसके बाद आपने एक्साइज कमिश्नर के पद पर काम किया। सन् १९२७ में आप ब्रिटिश सरकार से पेंशन लेकर रिटायर हुए। तदनंतर आप बांसवाड़ा स्टेट के दीवान पद पर अधिष्ठित किये गये। इस समय आप अजमेर में शांति लाभ कर रहे हैं। आप यहाँ की आर्य समाज के प्रेसिडेण्ट तथा राजस्थान व मालवा आर्य्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान हैं। आपके हरदयालसिंहजी, लक्ष्मणसिंहजी, संग्रामसिंहजी तथा सरूपसिंहजी नामक चार पुत्र हैं। इनमें से लक्ष्मणसिंहजी, कोठारी मोतीसिंहजी के नाम पर दत्तक गये हैं। बड़े पुत्र हरदयालसिंहजी एल० ए० जी० इम्पीरियल गवर्नमेंट के शुगर ब्यूरो के १२ वर्षों तक सीनियर असिस्टंट रहे हैं। शेष दोनों भाई पढ़ते हैं।

कोठारी वल्लभसिंहजी तथा समीरसिंहजी का देहान्त क्रमशः संवत १९५८ में तथा १९८० में

हुआ। कोठारी समीरसिंहजी के दत्तक पुत्र सुगनचन्दजी का जन्म संवत १९३१ में हुआ। आप जावद, (गवालियर) आदि जगहों के तहसीलदार रहे। इस समय आप भैंसरोड़ के कामदार हैं। आपके शिवसिंहजी और सरदारसिंहजी नामक दो पुत्र हैं। श्री शिवसिंहजी बी॰ कॉम॰ बिड़ला शुगर फेक्टरी सिहोरा (बिजनौर) के मैनेजर तथा सरदारसिंहजी बी॰ कॉम॰ इसी फेक्टरी के केमिस्ट हैं। कोठारी वल्लभसिंहजी के पुत्र दुलेल-सिंहजी इस समय रेलवे में सर्विस करते हैं।

कोठारी छतरसिंहजी के पाँच पुत्र हुए। इनमें से बड़े पुत्र कल्याणसिंहजी मसूदा और रायपुर (मारवाड़) के कामदार रहे। छतरसिंहजी के परिवार में इस समय किशोरसिंहजी गंगापुर में, माणकचंदजी और सुलतानचन्दजी मसूदे में और भोपालसिंहजी जयपुर में निवास करते हैं। इसी प्रकार कोठारी सावंत-सिंहजी के पौत्र लक्ष्मीसिंहजी लादुवास (मेवाड़) में कामदार हैं।

कोठारी बलवन्तसिंहजी भी मसूदे के कामदार रहे। आपके किशनसिंहजी, बिशनसिंहजी तथा माधौसिंहजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें माधौसिंहजी विद्यमान हैं। किशनसिंहजी के पुत्र शक्तिसिंहजी और नाहरसिंहजी रेलवे में सर्विस करते हैं। कोठारी माधौसिंहजी के दलपतसिंहजी, दरयावसिंहजी, गुलाबसिंहजी तथा केशरीसिंहजी नामक चार पुत्र हैं। इनमें से दलपतसिंहजी उदयपुर में कोठारी मोती-सिंहजी के नाम पर दत्तक गये हैं। दरयावसिंहजी देवगढ़ तथा भींडर में मजिस्ट्रेट तथा शेष पोलिस में सर्विस करते हैं। इसी तरह कोठारी सालमसिंहजी के पौत्र नरपतसिंहजी तथा दौलतसिंहजी अजमेर में ही निवास करते हैं कोठारी भगवंतसिंहजीके पुत्र मोहकमसिंहजी, अभयसिंहजी तथा उगमसिंहजी और पौत्र जैत-सिंहजी, उमरावसिंहजी, भेरुसिंहजी, धनपतिसिंहजी और मोहनसिंहजी विद्यमान हैं। इसी प्रकार कोठारी समरथसिंहजी के पौत्र अनराजजी भीलवाड़े में रहते हैं।

सेठ मूलचन्द जावंतराज खींचिया (कोठरी)

इस रणधीरोत कोठारी परिवार के पूवज उदयपुर में निवास करते थे। यह परिवार उदयपुर से मेड़ता कुंभलगढ़, होता हुआ घाणेराव आया। कोठारी देवीचन्दजी घाणेराव में निवास करते थे, आपके नरसिंहदासजी, अमरदासजी और करमचन्दजी नामक ३ पुत्र हुए, इनमें करमचन्दजी के परिवार में इस समय सेठ नेनमलजी कोठारी, शिवगंज में रहते हैं।

कोठारी नरसिंहजी के समय में इस खानदान का व्यापार पाली में होता था। आप घाणेराव के ओसवाल समाज मे मुख्य व्यक्ति थे। इनके सागरमलजी, निहालचन्दजी तथा सूरजमलजी नामक ३ पुत्र हुए। ये तीनों भ्राता व्यापार के लिये संवत् १९३४ में बम्बई गये, और सागरमल निहालचन्द के नाम

से व्यापार शुरू किया। इन बंधुओं का परिवार घाणेराव में "नगरसेठ" के नाम से बोला जाता है। सेठ सागरमलजी के केसरीमलजी और चुन्नीलालजी सेठ, निहालचन्दजी के नथमलजी, हमीरमलजी, और राजमल जी तथा सेठ सूरजमलजी के मूलचंदजी, जावंतराजजी, मुलतानमलजी और जेठमलजी नामक पुत्र हुए। इनमें केसरीमलजी, हमीरमलजी तथा मूलचन्दजी विद्यमान नहीं हैं। इस परिवार का कारबार संवत् १९५५ में अलग अलग हुआ।

सेठ चुन्नीलालजी घाणेराव के जैन मन्दिरों के प्रबंध में बहुत दिलचस्पी से भाग लेते हैं। आप घाणेराव के प्रतिष्ठित सज्जन हैं तथा श्री पार्श्वनाथ जैन विद्यालय वरकाण की प्रबंध कमेटी के मेम्बर हैं। आपके पुत्र मोतीलालजी २२ साल के हैं।

सेठ सूरजमलजी कोठारी की धर्मध्यान के कामों में बड़ी रुचि थी। आपने पाली में अठाई उत्सव किया, कापरड़ातीर्थ के जीर्णोद्धार में मदद दी। आपने संवत् १९५८ में बम्बई के दागीना बाजार में दुकान की, तथा १९६० में मंगलदास मारकीट में कपड़े का व्यापार शुरू किया। आपका संवत् १९६४ में स्वर्गवास हुआ। आपके बड़े पुत्र मूलचन्दजी संवत् १९८५ में स्वर्गवासी हुए। अभी इनके पुत्र रतनलालजी मौजूद हैं।

सेठ जावंतराजजी का जन्म संवत् १९४४ में हुआ। आप अपने बंधुओं के साथ मूलचन्द जावंतराज के नाम से व्यापार करते हैं। घाणेराव तथा गोड़वाड़ प्रान्त में आप अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं। संवत् १९८७ में आप लोगों ने श्री आदिश्वरजी के मन्दिर घाणेराव में एक देवली बनाई। इसी तरह के धार्मिक कामों में यह कुटुम्ब सहयोग लेता है। आपके यहाँ मूलचन्द जावंतराज के नाम से मंगलदास मारकीट बम्बई में सोलापुरी साड़ी का थोक व्यापार होता है।

सेठ अनोपचन्द हरखचन्द खीचिया, कोठारी (रणधीरोत) शिवगंज

हम उपर लिख चुके हैं कि कोठारी देरीचन्दजी के सबसे छोटे पुत्र करमचंदजी थे। आप घाणेराव में रहते थे। इनके अनोपचंदजी, पूनमचंदजी, फूलचंदजी, हरकचंदजी, मगनीरामजी, उम्मेदमल जी, तेजराजजी और केसरीमलजी नामक ८ पुत्र हुए। इनमें सेठ अनोपचंदजी तथा हरखचंदजी संवत् १९१२ में शिवगंज आये और अनोपचंद हरकचंद के नाम से दुकान की। आपके शेष भ्राता घाणेराव में ही निवास करते रहे। यह कुटुम्ब घाणेराव तथा शिवगंज में खीचिया—कोठारी के नाम से बोला जाता है। इन दोनों भाइयों ने शिवगंज की पंचपंचायती और व्यापारियों में अच्छी इज्जत पाई। सिरोही दरबार महाराव केसरीसिंहजी, कोठारी अनोपचंदजी का अच्छा सम्मान करते थे। संवत् १९५२ की भादवा

सुदी २ को आपका स्वर्गवास हुआ। आपके रूपचन्दजी खींवराजजी और बभूतमलजी नामक ३ पुत्र हुए, इनमें खींवराजजी, हरकचन्दजी के नाम पर दत्तक गये।

संवत् १९३७ में कोठारी हरकचन्दजी तथा रूपचन्दजी मद्रास गये और वहाँ इन्होंने अपने नाम से किराना तथा मनीहारी का थोक व्यवसाय आरंभ किया। हरकचन्दजी संवत् १९६७ में स्वर्गवासी हुए।

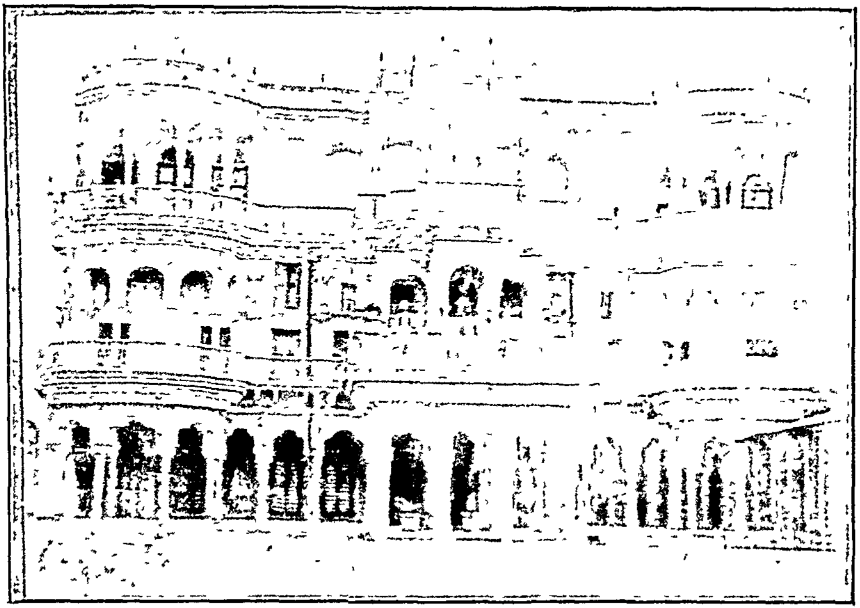
कोठारी रूपचंदजी को सिरोही दरबार महाराव स्वरूपसिंहजी ने संवत् १९८३ में २४ बीघा ६ विस्वा का बगीचा मय कुएं के इनायत किया; तथा "सेठ" की पदवी दी। और दो घोड़ों की बग्घी और मोटर रखने की इज्जत बख्शी। संवत् १९८४ के वैशाख में आप बीमार हुए, तब दरबार इनकी साता पूछने इनकी हवेली पर पधारे। इसी मास की वैशाख वदी ७ को इनका स्वर्गवास हुआ। आपके पुखराजजी, नेनमलजी, जुहारमलजी, और मोतीलालजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें पुखराजजी का स्वर्गवास हो गया है और शेष विद्यमान हैं। कोठारी खींवराजजी के पुत्र कुंदनमलजी मौजूद हैं।

कोठारी नेनमलजी खीचिया का जन्म संवत १९४९ में हुआ। आप शिवगंज और सिरोही स्टेट के प्रसिद्ध धनिक साहुकार हैं। स्टेट से आपको "सेठ" की पदवी प्राप्त है। संवत् १९४९ में आपने बम्बई में जवाहरमल मोतीलाल के नाम से दुकान की है। मद्रास के गोड़वाड़ समाज में आपकी फर्म प्रधान है। शिवगंज, बम्बई, मद्रास आदि में आपकी स्थाई सम्पत्ति है। आपके पुत्र जीवराजजी और भेरूमलजी हैं। इनमें भेरूमलजी, पुखराजजी के नाम पर दत्तक गये हैं। सुकनराजजी के पुत्र अमृतराज जी और बाबूलालजी हैं।

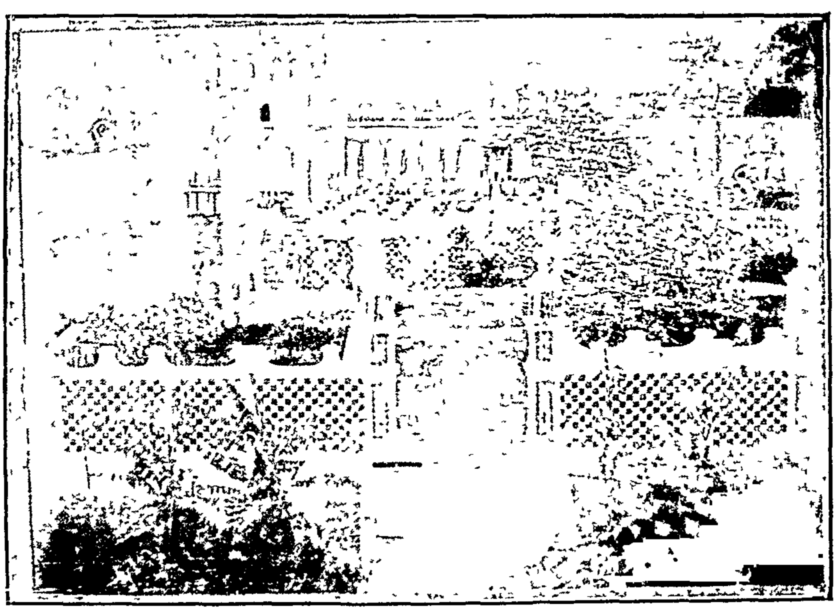
सेठ कुन्दनमलजी और तेजराजजी कोठारी (रणधीरोत) दारव्हा (यवतमाल)

इस परिवार के पूर्वज कोठारी हरीसिंहजी, शेरसिंहजी की रीयाँ (मेड़ते के पास) रहते थे। इन के पुत्र कोठारी निहालचन्दजी संवत् १८९५ के लगभग वराड़ में आये। और इस प्रान्त के सूबेदार बनाये गये। आपका खास निवास अमरावती में रहता था। आपके छोटे भ्राता बहादुरमलजी के गाढ़मलजी, जवाहरमलजी, हिन्दूमलजी तथा सरदारमलजी नामक ४ पुत्र हुए। आप लोग देश में ही रहते थे।

कोठारी सरदारमलजी का परिवार—मारवाड़ से सेठ गाढ़मलजी के पुत्र हजारीमलजी खरवंडी (अहमद नगर) गये और सरदारमलजी के पुत्र बख्तावरमलजी दारव्हा (बरार) आये। यहाँ आकर सेठ बख्तावरमलजी ने महुवे के बड़े २ कंट्राक्ट लिये, और इस धन्धे में अच्छी सम्पत्ति उपार्जित की। दारव्हा तालुके के आप प्रतिष्ठित सज्जन थे। आपको घोड़े, ऊँट, सिपाही, आदि रखने का बहुत शौक था।



कमरा (सेठ मालचंदजी कोठारी) चूरू.



बगीचे का पिछला हिस्सा (मालचंदजी कोठारी) चूरू.

संवत् १९५७ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके नाम पर सेठ हजारीमलजी के पौत्र फूलमलजी खर वंडी से दत्तक आये। इनका संवत् १९७० में शरीरान्त हुआ। आपने दारह्वा में संवत् १९६० में जीनिंग फेक्टरी खोली। इस समय आपके पुत्र कुंदनमलजी विद्यमान हैं, आप भी यहाँ के प्रतिष्ठित सज्जन हैं। आपके यहाँ बख्तावरमल फूलमल के नाम से जमीदारी और जिनिंग फेक्टरी का कार्य्य होता है।

कोठारी जवाहरमलजी का परिवार—कोठारी जवाहरमलजी के जीतमलजी, चांदमलजी तथा सागरमलजी नामक ३ पुत्र हुए। सन् १८५७ के बलवे के समय कोठारी जीतमलजी और सागरमलजी मारवाड़ की ओर से फौज लेकर बागियों को दबाने भेजे गये थे। तत्पश्चात् कोठारी जीतमलजी बहुत समय तक भानपुरा (इन्दौर स्टेट) में व्यापार करते रहे, वहाँ से बीमार होकर आप कुचेरा चले गये। जहाँ संवत् १९४७ में स्वर्गवासी होगये। इनके पुत्र नथमलजी निसंतान स्वर्गवासी हुए।

कोठारी चांदमलजी के राजमलजी तथा दानमलजी नामक २ पुत्र थे। कोठारी राजमलजी संवत् १९४० में अपने बाबा बख्तावरमलजी के बुलाने से कलकत्ता होते हुए दारह्वा आये। संवत् १९८५ में शत्रुंजयजी में आप स्वर्गवासी हुए। वर्तमान में आपके पुत्र तेजराजजी, धनराजजी और देवराजजी सेठ राजमल तेजराज के नाम से जमीदारी और लेने देन का काम काज करते हैं। दानमलजी के पुत्र मुकुन्दमलजी तथा घासीमलजी हैं। इनमें घासीमलजी दत्तक गये हैं।

इसी तरह इस परिवार में शिवदानमलजी के पुत्र भागचन्दजी खरवंडी में और हीराचन्दजी के पुत्र लालचन्दजी, घासीमलजी, नेमीचन्दजी दारह्वा में रहते हैं। नेमीचन्दजी मेट्रिक में पढ़ते हैं।

सेठ अगरचन्द जीवराज कोठारी (रणधीरोत) डिगरस (यवतमाल)

इस परिवार का मूल निवास स्थान समेल (जोधपुर स्टेट) है। वहाँ से लगभग १५० साल पूर्व यह परिवार व्यापार के निमित्त यवतमाल डिस्ट्रिक्ट के डिगरस नामक स्थान में आया। सेठ अगरचन्दजी का लगभग ७० साल पूर्व स्वर्गवास हुआ। इनके पुत्र कोठारी जीवराजजी ने इस दुकान के व्यापार और सम्मान को बहुत बढ़ाया। संवत् १९८० के माघ मास में आप स्वर्गवासी हुए।

वर्तमान में सेठ जीवराजजी कोठारी के पुत्र शिवचन्दजी और लोमचन्दजी कोठारी विद्यमान हैं, आपकी फर्म डिगरस के व्यापारिक समाज में नामांकित मानी जाती है। शिवचन्दजी कोठारी समझदार तथा प्रतिष्ठित सज्जन हैं। आपके छोटे भाई लोमचंदजी नागपूर में इंटर में अध्ययन करते हैं। आपकी दुकान पर चांदी सोना तथा कृषि का काम काज होता है।

कोठारी परिवार चूरू (बीकानेर स्टेट)

इस परिवार के लोग कई वर्षों से यहीं निवास कर रहे हैं। इस खानदान में सेठ हजारीमलजी बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए। आपने अपनी व्यापार कुशलता से बहुत उन्नति की। आपके सेठ गुरुमुखरायजी, सेठ सागरमलजी और सेठ सरदारमलजी नामक तीन पुत्र हुए। सेठ हजारीमलजी का स्वर्गवास संमत १९३५ में होगया। आजकल आपके तीनों पुत्रों का परिवार स्वतन्त्र रूप से व्यापार कर रहा है।

सेठ गुरुमुखरायजी का परिवार—सेठ गुरुमुखरायजी का जन्म संवत् १८९६ में हुआ संवत १९३५ में जबकि आप तीनों भाई अलग २ होगये तबसे आपने अपनी फर्म का नाम मेसर्स हजारीमल गुरुमुखराय रक्खा। इस फर्म में आपने बहुत उन्नति की। आपका ध्यान धार्मिक कार्यों की ओर भी अच्छा रहा। आपका स्वर्गवास संवत् १९५८ में हो गया। आपके तीन पुत्र हुए। जिनके नाम क्रमशः सेठ तोलारामजी, शोभाचन्दजी और जवरीमलजी थे। इनमें से दूसरे एवम् तीसरे पुत्र सेठ सागरमलजी के यहाँ दत्तक गये।

सेठ तोलारामजी का जन्म संवत् १९२५ का है। आप शुरू से ही बड़े मिलनसार, सादे और धार्मिक वृत्ति के सज्जन हैं। आपका विशेष समय धर्म ध्यान ही में व्यतीत होता है। आप तेरापंथी संप्रदाय के अच्छे जानकार हैं। आपका यहाँ की समाज में बहुत नाम एवम् प्रतिष्ठा है। आपके चिरंजीलालजी, सोहनलालजी, माणकचन्दजी, श्रीचन्दजी और हुलासचंदजी नामक पाँच पुत्र हैं। इनमें से बड़े पुत्र चिरंजीलालजी बहुत समय से अलग हो गये हैं। शेष सब लोग शामिल ही व्यापार करते हैं। आपका व्यापार केवल हुंडी, चिट्ठी और व्याज का है।

सेठ सागरमलजी का परिवार—सेठ सागरमलजी का जन्म संवत् १८९८ में हुआ। आप धार्मिक प्रकृति के महानुभाव थे। आप जैन शास्त्रों के अच्छे जानकार कहे जाते थे। आपका संवत् १९६० में स्वर्गवास होगया। आपके कोई पुत्र न होने से सेठ जवरीमलजी दत्तक लिये गये। मगर छोटी अवस्था में ही आपका स्वर्गवास होगया। आपके भी कोई पुत्र न होने के कारण आपके छोटे भाई शोभाचन्दजी दत्तक आये। आप बुद्धिमान और होशियार व्यक्ति थे। आपका भी संवत् १९६२ में स्वर्गवास हो गया। आपके दो पुत्र सेठ सूरजमलजी और सेठ मालचन्दजी हुए। इनमें से सूरजमलजी अपने पिताजी के एक साल पश्चात् ही स्वर्गवासी हो गये। वर्तमान में इस परिवार में सेठ मालचन्दजी हैं।

सेठ मालचन्दजी बड़े सरल, और उदार प्रकृति के व्यक्ति हैं। आपको विद्या से बड़ा प्रेम है। आप बीकानेर स्टेट की असेम्बली के मेम्बर हैं। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर बीकानेर दरबार ने आपको



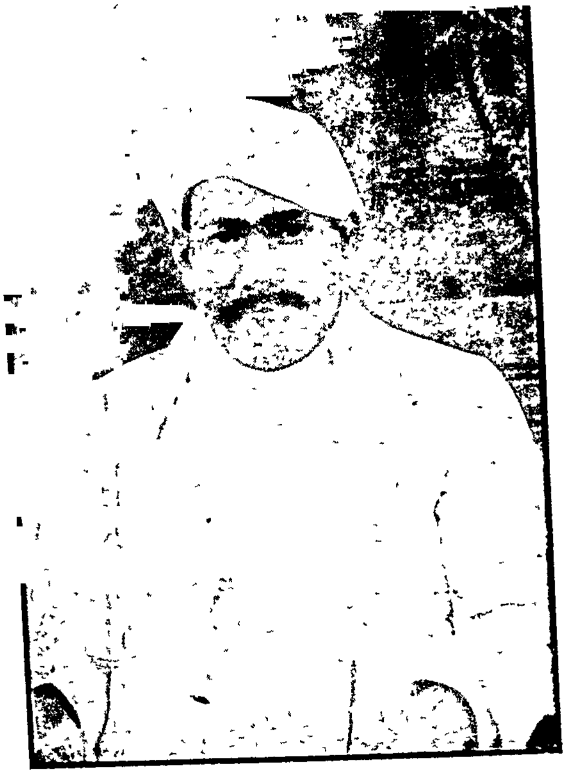
स्व० सेठ सरदारमलजी कोठारी, चूरू.



सेठ तोलारामजी कोठारी, चूरू.



सेठ मूलचंदजी कोठारी, चूरू.



सेठ मदनचंदजी कोठारी, चूरू.



श्री चम्पालालजी कोठारी, चूरू.



सेठ मालचंदजी कोठारी, चूरू.



भँवर फतेचंदजी S/o चम्पालालजी कोठारी, चूरू.



कुँवर धर्मचन्दजी S/o मालचन्दजी कोठारी, चूरू.

कैफ़ियत की इज्जत प्रदान की है। आप यहाँ के आनरेरी मजिस्ट्रेट भी हैं। स्थानीय म्युनिसिपेल्टी के भी आप मेम्बर हैं। आपके इस समय चार पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः बा० धर्मचन्दजी, बिरदीचन्दजी, खूबचन्दजी और जतनमलजी हैं। आप सब लोग अभी बालक हैं। सेठ मालचन्दजी को मकान बनाने का बहुत शौक है। आपके एक मकान का फोटो भी इस ग्रंथ में दिया जा रहा है। आपका व्यापार कलकत्ता में मेसर्स हजारीमल सागरमल के नाम से आर्मेनियम स्ट्रीट में होता है, तथा कोटकपूरा (पंजाब) नामक स्थान पर गल्ले का व्यापार होता है आपकी फर्म चुरू में सम्मानित समझी जाती है।

सेठ सरदारमलजी का परिवार—सेठ सरदारमलजी का जन्म संवत् १९०२ का था। इस परिवार की विशेष तरक्की आपही के द्वारा हुई। आपने लाखों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। संवत् १९७१ में आपने चुरू स्टेशन पर एक धर्मशाला बनवाई। आपका स्वर्गवास संवत् १९७४ में हो गया। इस समय आपके दो पुत्र , जिनके नाम क्रमशः सेठ मूलचन्दजी और सेठ मदनचन्दजी हैं। आप लोग पुराने विचारों के हैं। आपने अपने पिताजी के स्मारक स्वरूप एक सरदार विद्यालय नामक एक स्कूल की स्थापना की है। आपको बीकानेर दरबार से छड़ी, चपरास व खास रुक्के इनायत हुए हैं। सेठ मूलचन्दजी के इस समय चम्पालालजी नामक एक पुत्र हैं। आजकल आप ही अपनी फर्म का संचालन करते हैं। आप उत्साही और मिलनसार व्यक्ति हैं। आपके फतेराजजी नामक एक पुत्र हैं। सेठ मदनचन्दजी के धनपतसिंहजी, गुनचन्दलालजी और भँवरलालजी नामक तीन पुत्र हैं।

इस परिवार का व्यापार जूट, कपड़ा और गल्ले का है। इसकी दो शाखाएँ कलकत्ता में मेसर्स हजारीमल सरदारमल और चम्पालाल कोठारी के नाम से आर्मेनियम स्ट्रीट में है। इनके अतिरिक्त भिन्न २ नामों से मैमनसिंह, बेगुनबाड़ी, बोगरा, सुकानपोकर, बिलासीपाड़ा, कसबा, सिरसा, श्री गंगानगर इत्यादि स्थानों पर भी आपकी शाखायें हैं। यह फर्म यहाँ प्रतिष्ठित और सम्मानित समझी जाती है।

सेठ केशरीचन्द गुलाबचन्द कोठारी, चुरू (बीकानेर)

इस परिवार के सज्जन करीब २५० वर्ष पूर्व बीकानेर से चलकर चुरू नामक स्थान पर आये। जब आप लोगों के पूर्वज सन् १५०० के करीब बीकानेर में रहते थे तब उन लोगों ने राज्य की बहुत सेवा की। उनमें से सेठ टाडमलजी भी एक थे। इनके पश्चात् सेठ कुशलचन्दजी बड़े व्यापार चतुर और साहसी सज्जन हुए। आपने अपने साहस और वीरता से बीकानेर स्टेट मे अच्छे २ कार्य किये। आपके कार्यों से प्रसन्न होकर तत्कालीन बीकानेर दरबार ने आपको नोहर नामक एक गाँव जागीर स्वरूप तथा रहने के लिए एक हवेली प्रदान कर आपको सम्मानित किया था। आपके पश्चात् इस परिवार में

विजयचन्दजी, जयरूपजी, शंकरदासजी, नोवतरायजी आदि २ सज्जन हुए। आप लोगों ने अपनी फर्म की अच्छी उन्नति की। ऐसा कहा जाता है कि यह पहली फर्म बीकानेर स्टेट में ऐसी थी, जिसने सर्व प्रथम ब्रिटिश राज्य में अपनी वैंकिंग फर्म स्थापित की थी। इसका उस समय ईस्ट इंडिया कम्पनी से व्यापारिक सम्बन्ध था। इस विषय में इस परिवार वालों को कई महत्वपूर्ण तसल्लीनामा और परवाने मिले हुए हैं। जो इस समय इस परिवार के पास हैं। आगे चलकर सेठ लाभचन्दजी इस परिवार में प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए आपने गदर के समय कई अंग्रेजों की जान बचाई थी। इसके उपलक्ष में आपको ब्रिटिश सरकार ने एक प्रशंसा सूचक सार्टीफिकेट दिया है। आपका स्वर्गवास हो गया है। आपके केशरीचन्दजी नामक एक पुत्र हैं।

सेठ केसरीचंदजी का जन्म संवत् १९२६ में हुआ। आप बड़े व्यापार कुशल, समाजसेवी और उत्साही सज्जन हैं। आपने अपने प्रभाव से लाखों रुपये एकत्रित कर वारलोन फंड में दिलवाये हैं। इससे प्रसन्न होकर भारत सरकार ने आपको सर्टिफिकेट आफ ऑनर प्रदान किया है। आपका ध्यान सार्वजनिक सेवा की ओर बहुत रहता है। आपने सन् १९१३ में अखिल भारतवर्षीय तेरा पंथी सभा नामक एक संगठित सभा स्थापित करवाने में बहुत कोशिश की है। आप करीब ११ साल तक उसके आनरेरी सेक्रेटरी रहे। आपका तेरा पंथी संप्रदाय में बहुत सम्मान और प्रतिष्ठा है। सन् १९२१ की सेन्सेस के समय आपने बहुत कार्य किया। आपने तेरापंथी संप्रदाय के व्यक्तियों की अलग सेन्सेस की जाय इसकी बहुत कोशिश की। और सारे भारतवर्ष में गणना करने के लिये पृथक प्रवन्ध करवाया। आपने संयुक्त प्रांतीय कौंसिल में पास होने वाले माइनर साधु बिलका घोर विरोध किया और जनमत को अपने पक्ष में करके उसे पास होने से रोक दिया। लिखने का मतलब यह है कि आप प्रतिभा सम्पन्न और कुशल कार्य्यकर्त्ता हैं। झिंद स्टेट में आपका अच्छा सम्मान है। चरखी दादरी नामक स्थान पर आपकी पुरानी जायदाद थी वह नजुल की हुई थी। आपके प्रयत्न से महाराजा साहब ने उसे वापस आपके सुपुर्द कर दिया। आपको स्टेट से कुर्सी का सम्मान तथा सिरोपाव प्रदान किया हुआ है। इसी प्रकार बीकानेर, सिरोही और उदयपुर दरबारों की ओर से आपको समय समय सिरोपाव मिलते रहे हैं। इस समय आपकी वय ६४ वर्ष की है। अतएव आजकल आप चुरू ही में शांति लाभ कर रहे हैं। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः घेवरचन्दजी, मालचन्दजी, गुलाबचन्दजी और डूंगरमलजी हैं। इनमें से प्रथम दो चरखादादरी में स्वतन्त्र व्यापार करते हैं। शेष दो कलकत्ता में नं० १५ शोभाराम वैशाख स्ट्रीट में वैंकिंग का व्यापार करते हैं। बाबू गुलाबचन्दजी मिलनसार और उत्साही सज्जन हैं। आपका वैंकिंग व्यापार केवल अंग्रेजों से होता है।



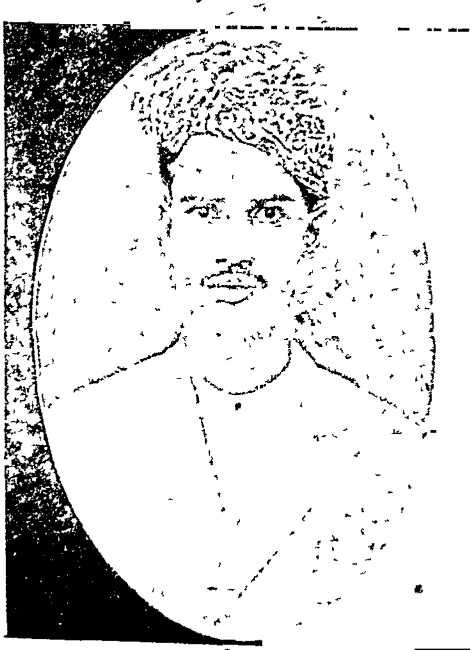
कुँवर विरदीचंदजी
S/o मालचंदजी कोठारी, चूरू.



बाबू जीवनमलजी बच्छावत,
मुनीम सेठ मालचंदजी कोठारी, चूरू.



बाबू खूबचंदजी
S/o सेठ मालचंदजी कोठारी, चूरू.



बाबू जसकरणजी वैद, मुनीम सेठ मालचंदजी कोठारी, चूरू.



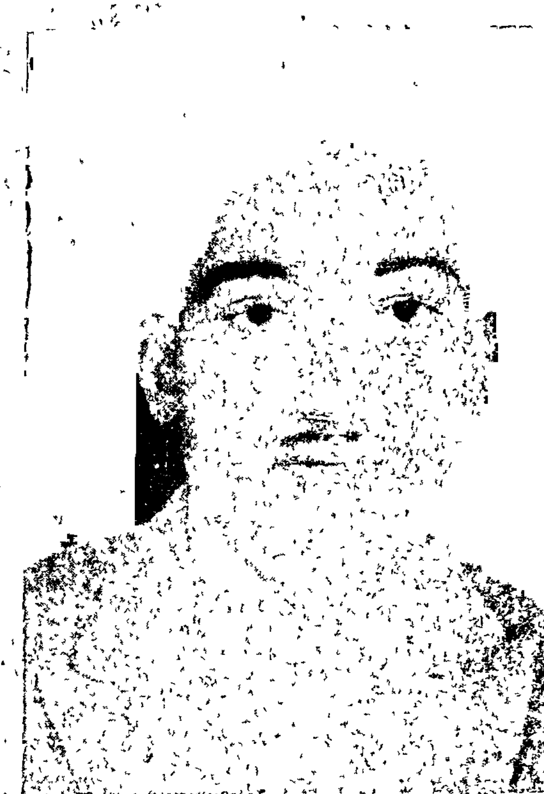
सेठ मालचंदजी कोठारी के सुपुत्र, चूरू.



सेठ केशरीचंदजी कोठारी, चूरू.



बाबू गुलाबचंदजी कोठारी, चूरू.



बाबू फतेचंदजी कोठारी, चूरू.

कोठारी जोरावरमल मोतीलाल का खानदान सिकंदराबाद (दक्षिण)

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान बगड़ी (मारवाड़) का है। बगड़ी से इस परिवार के पूर्व पुरुष सेठ थानमलजी ने व्यापार निमित्त दूर २ के प्रदेशों का भ्रमण कर सबसे पहले अपनी एक फर्म बोलारम में स्थापित की। आपके हाथों से इस फर्म की काफी उन्नति हुई। आपके जोरावरमलजी नामक एक पुत्र हुए। आप बड़े धार्मिक विचारों के सज्जन हैं। आपके मोतीलालजी नामक एक पुत्र हैं।

श्री मोतीलालजी कोठारी—आप शिक्षित तथा उन्नत विचारों के सज्जन हैं। आप बड़े व्यापार कुशल, अच्छे व्यवस्थापक तथा वर्तमान उन्नतिशील युग के सिनेमा व्यवसाय में निपुण हैं। आपने अपनी व्यापार चातुरी तथा दूरदर्शिता से अपनी फर्म की काफी उन्नति की है। तिरमिलगिरी, सिकन्दराबाद तथा हैदराबाद में सब मिलाकर आपके आठ सिनेमा बने हुये हैं। इधर कुछ वर्ष पूर्व ही हैदराबाद के कुछ शिक्षित एवं उत्साही सज्जनों ने दस लाख की पूंजी से 'दी महावीर फोटो प्लेज एण्ड थिएट्रिकल कम्पनी लि०' की स्थापना की है। इस संस्था का उद्देश भारतीय शिक्षाप्रद ड्रामा एवं फिल्म तयार करवाकर सदुपदेशों का प्रचार करते हुए द्रव्योपार्जन करना है। श्री मोतीलालजी की बुद्धिमानी तथा योग्य व्यवस्था से इस संस्था को काफी सफलता प्राप्त हुई हैं। आप ही वर्तमान में इसके मेनेजिंग एजण्ट हैं।

इसके अतिरिक्त आपके यहाँ से "हैदराबाद बुलेटिन" नामक एक अंग्रेजी दैनिक पत्र भी निकलता है। आपका यहाँ की शिक्षित समाज में बहुत सम्मान है। आपके बुलेटिन अखबार को यहाँ पर अच्छी प्रतिष्ठा है।

इसके साथ ही साथ आपका स्वभाव बड़ा सरल, मिलनसार तथा नम्र है। आप बड़े सुधारक विचारों के सज्जन हैं। ओसवाल जाति की उन्नति करने की इच्छा आपको सदैव लगी रहती है। आप यहाँ की ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित सज्जन हैं।

सेठ बरदीचन्दजी कोठारी का खानदान, जयपुर

इस परिवार में सेठ देवीचंदजी कोठारी प्रतिष्ठित पुरुष हुए। आप बीकानेर से इन्दौर आदि स्थानों में होते हुए संवत् १८६० के करीब जयपुर आये। आपकी मालवा, कलकत्ता, बम्बई कानपुर, फरुखाबाद आदि २ स्थानों पर ५४ दुकानें थीं। संवत् १८८२ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपकी जयपुर में छतरी बनी हुई है। आपके पुत्र मूलचन्दजी, कपूरचन्दजी, तिलोकचन्दजी, रायचन्दजी, और सर्वसुखजी ने जयपुर में अपनी अलग २ हवेलियाँ बनवाईं। आप सब बंधु प्रतिष्ठित व्यापारी माने जाते थे।

कोठारी कपूरचन्दजी—आप जयपुर के प्रसिद्ध साहुकार थे । आप स्टेट को लाखों रुपये उधार दिया करते थे । आपको जयपुर स्टेट ने "सेठ" का पद और नाम के बाद "जी" लिखने का सम्मान बख्शा । संवत् १९०४ में आपका स्वर्गवास हुआ । आपके नाम पर आपके छोटे भ्राता तिलोकचन्दजी के पौत्र बरदीचन्दजी दत्तक आये ।

कोठारी बरदीचन्दजी—आपका जन्म संवत् १८९४ में हुआ । आप साहुकारी व्यापार के अलावा स्टेट द्वारा सौंपे हुए फौज के काम को भी देखते थे । आगरे में २४ सालों तक आप बंगाल बैंक के खजानची रहे । इससे बैंक ने आपको एक उत्तम सार्टिफिकेट दिया । संवत् १९५६ के अकाल के समय आप स्टेट द्वारा बनाई गई सहायता कमेटी के मेम्बर और खजांची थे । आपने अपनी बुद्धिमानी और शौकीनी से जनता, राज्य और ओसवाल जाति में अच्छी इज्जत पाई थी । संवत् १९६९ में आपका स्वर्गवास हुआ । आपके केवलचन्दजी, हुकुमचन्दजी और चांदमल नामक ३ पुत्र हुए ।

कोठारी चांदमलजी—आपका जन्म १९२० में हुआ । आपने सन् १८९२ में अजमेर में आइस फेक्टरी खोली, जो सन् १९१५ तक काम करती रही । सन् १९०१ में अजमेर में आयर्न एण्ड ब्रास फाउण्डरी, सन् १९१२ में मंडावर में एक जिनिंग फेक्टरी और सन् १९२७ में जयपुर में एक आइस फेक्टरी खोली । ये सब फेक्टरियां इस समय काम कर रही हैं । आपके सुमेरचन्दजी तथा समीरचन्दजी और आपके बड़े भ्राता हुकुमचन्दजी के उत्तमचन्दजी और संतोषचन्दजी नामक पुत्र हुए । उत्तमचन्दजी शांत स्वभाव के समझदार सज्जन हैं, तथा फर्म और कारखानों का तमाम काम योग्य रीती से चलाते हैं । कोठारी संतोपचन्दजी केवलचन्दजी के नाम पर दत्तक गये हैं । आप साहुकारी व्यापार में भाग लेते हैं । यह परिवार जयपुर की ओसवाल समाज में प्राचीन तथा प्रतिष्ठित माना जाता है ।

इसी प्रकार इस खानदान में कोठारी मूलचन्दजी के परिवार में रिखबचन्दजी, सरूपचन्दजी, रूपचन्दजी और केशरीचन्दजी विद्यमान हैं । केशरीचन्दजी जवाहरात का व्यापार करते हैं । तिलोकचन्दजी के पौत्र प्रेमचन्दजी जयपुर स्टेट के नायब दीवान के पद पर कार्य्य कर चुके हैं । अभी इनके भतीजे भागचंदजी मौजूद हैं । रायचंदजी के परिवार में गोकुलचंदजी और उनके पुत्र जवाहरात का व्यापार करते हैं तथा कोठारी सर्वसुखजी के पौत्र अगरचंदजी, मिलापचंदजी और हीराचंदजी साहुकारी का कार्य्य करते हैं । हीराचंदजी को दरबार में कुर्सी प्राप्त है। आप एफ० ए० में पढ़ रहे हैं ।

सेठ हजारीमल हुलासचन्द कोठारी सुजानगढ़

करीब ७० वर्ष पूर्व सेठ धरमचन्दजी सुजानगढ़ आकर वसे । यहाँ आपके गुलाबचन्दजी नामक पुत्र हुए । आप लोग यहीं साधारण देन लेन का व्यापार करते रहे । सेठ गुलाबचन्दजी के दो पुत्र



स्व० सेठ हजारीमलजी कोठारी, सुजानगढ़.



स्व० सेठ भैरोंदानजी कोठारी, बीकानेर.



सेठ हुलासचन्दजी कोठारी, सुजानगढ़.



कुं० भँवरलालजी S/o हुलासचन्दजी कोठारी, सुजानगढ़.

थे जिनका नाम क्रमशः जीतमलजी और मगनीरामजी था। आप दोनों ही भाइयों ने कलकत्ता जाकर— मेसर्स चौथमल गुलाबचन्द के साथ व्यापार प्रारम्भ किया। इसके पश्चात् आपने सरदारशहर निवासी आसकरण पांचीराम पींचा की फर्म के साझे में काम किया। संचालकों की बुद्धिमानी एवम् होशियारी से फर्म खूब चली। इसके पश्चात् सेठ जीतमलजी का सं० १९२८ में स्वर्गवास होगया। आपके हजारीमलजी एवम् मोतीलालजी नामक दो पुत्र हुए। मगनीरामजी के पुत्र का नाम दुर्गाप्रसादजी है। वर्तमान में तीनों भाइयों का परिवार स्वतंत्ररूप से व्यापार कर रहा है। दुर्गाप्रसादजी के पुत्र पूसराजजी हैं। दोनों ही पिता पुत्र सर्विस करते हैं। मोतीलालजी का स्वर्गवास होगया है। इनके पुत्र धनराजजी, इन्द्रचन्दजी, सूरजमलजी और सोहनलालजी कलकत्ते में अपना स्वतंत्र व्यापार करते हैं।

सेठ हजारीमलजी ने साझे की फर्म से अलग होकर स्वतंत्र फर्म मेसर्स हजारीमल हुलासचन्द के नाम से कलकत्ता ही में खोली। इस समय इस पर चलानी का काम हो रहा हैं। आपने इस व्यवसाय में अच्छी सफलता प्राप्त की और अपनी एक ब्रांच बोगड़ा में भी पाट का व्यवसाय करने के हेतु से स्थापित की। आपका ध्यान सार्वजनिक कार्यों की ओर भी बहुत रहा। आप तेरापंथी संप्रदाय के मानने वाले सज्जन थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९८८ में ७४ वर्ष की आयु में होगया। आपके पुत्र हुलासचंदजी इस समय फर्म के काम का संचालन करते हैं। आपका यहाँ कलकत्ता की चलानी कमेटी में अच्छा प्रभाव है। आप उसके प्रेसिडेण्ट हैं। बाजार में व्यापारियों के आपसी कई झगड़े आप के द्वारा निपटाये जाते हैं। आप से दोनों पार्टियाँ खुश रहती हैं। परोपकार और सेवा की तरफ भी आपका बहुत ध्यान है। आपके भँवरलालजी नामक एक पुत्र हैं। आप शिक्षित सज्जन हैं। आपका रियासत बीकानेर में अच्छा सम्मान है। आपके मोहनलालजी नामक एक पुत्र है। कलकत्ता फर्म का पता १९० सूतापट्टी है।

सेठ कालूराम वच्छराजजी कोठारी, ढानकी (यवतमाल)

इस परिवार का मूल निवासस्थान कुड़की (जोधपुर स्टेट) में है। वहाँ से लगभग ३५ साल पहिले सेठ उदयराजजी कोठारी बराड़ प्रान्त के पूसद तालुके के ढानकी नामक स्थान में व्यवसाय के लिये आये। आपके हाथों से धन्धे को अच्छी उन्नति मिली। संवत् १९८२ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र कालूरामजी तथा वच्छराजजी कोठारी विद्यमान हैं। आप दोनों सज्जनों के हाथों से कृषि और व्यापार के कार्य्य में बहुत उन्नति हुई है। आप ढानकी और आस पास के ओसवाल समाज में उत्तम प्रतिष्ठा रखते हैं।

लोढ़ा

लोढ़ा गौत्र की उत्पत्ति

लोढ़ा गौत्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में महाजनवंशमुक्तावली में इस प्रकार की किम्बदन्ति लिखी हुई है कि पृथ्वीराज चौहान के सूबेदार देवड़ा चौहान वंशीय लाखनसिंह के कोई संतान न होती थी। इससे दुखित होकर उसने जैनाचार्य श्री रवीप्रभुसूरि से संतान के लिये प्रार्थना की, और जैनधर्म अंगीकार किया। इनकी संतानें लोढ़ा कहलाईं। इसी वंश की आगे चलकर ४ शाखायें हो गईं जिनमें टोडरमलजी के वंशज टोडरमलोत छजमलजी के छजमलोत, रतनपालजी के रतनपालोत और भावसिंह के भावसिंहोत कहलाये।*

रावरजा बहादुरशाह माधौसिंहजी लोढ़ा का खानदान, जोधपुर

इस परिवार के पूर्वज शाह सुल्तानमलजी लोढ़ा (टोडरमलोत) नागौर में रहते थे और वहाँ जोधपुर राज्य की सेवा करते थे। इनके पुत्र शाहमलजी हुए।

रावरजा शमशेरबहादुर शाहमलजी लोढ़ा—आप इस खानदान में बहुत प्रतापी पुरुष हुए। संवत् १८४० के लगभग महाराजा विजयसिंहजी के कार्य काल में आप जोधपुर आये। जिस समय आप यहाँ आये थे, उस समय जोधपुर की राजनैतिक स्थिति बड़ी डाँवाडोल हो रही थी। आपको योग्य अनुभवी और बहादुर पुरुष समझकर दरबार ने फौज मुसाहिब का पद दिया। तदनंतर आपने कई युद्धों में सम्मिलित होकर बहादुरी के काम किये। संवत् १८४९ में आप गोडवाड़ प्रान्त के युद्ध में गये और इसी साल महाराणा विजयसिंहजी ने प्रसन्न होकर जेठ सुदी १२ के दिन आपके बड़े भाई के लिए "रावरजा शमशेर बहादुर" की और छोटे भाई के लिए "राव" की पुश्तैनी पदवी प्रदान की। साथ ही दरबार ने आपको २९ हजार की जागीरी और पैरों में सोना पहिनने का अधिकार बख्शा। इसके अलावा आपको घड़ियाल और हाथी सिरोपाव भी इनायत किया गया।। इस प्रकार विविध उच्च सम्मानों से विभूषित होकर संवत् १८५५ में आप स्वर्गवासी हुये। आपके छोटे भ्राता राव मेहकरणजी जालौर के घेरे के समय बिलाड़े में केसरिया करके काम आये। आपके रिधमलजी एवं कल्याणमलजी नामक दो पुत्र हुए।

---

* लोढ़ा गौत्र एक और है। ऐसा कहा जाता है कि चावा नामक एक माहेश्वरी गृहस्थ श्री वर्द्धमानसूरिजी के उपदेश से जैन हुआ। इनकी संतानें लोढ़ा कहलाईं।

रावराजा रिधमलजी—आप बड़े बहादुर और वीर प्रकृति के पुरुष थे। संवत् १८८९ में १५०० सवारों को लेकर आप और मुणोत रामदासजी ब्रिटिश सेना की सहायतार्थ अजमेर गये थे। संवत् १८९२ में महाराजा मानसिंहजी ने आपको ए० जी० जी० के यहाँ अपनी स्टेट का वकील बनाकर भेजा। संवत् १९०० तक आप इस पद पर रहे। संवत् १८९८ में आपको १६ हजार की जागीर बख्शी गई। थोड़े समय बाद महाराजा मानसिंहजी ने आपको अपना मुसाहिब बनाया। दरबार आपका बड़ा सम्मान करते थे। आपने महाराजा से प्रार्थना कर ओसवाल समाज पर लगनेवाले कर को माफ कराया, तथा पुष्कर के कसाईखाने को बन्द कराया। आपने संवत् १८९६ में दरबार और जागीरदारों के बीच सम्बन्ध की शर्तें तय की, जो अब भी स्टेट में १८९६ की कलम के नाम से जोधपुर में व्यवहार की जाती हैं। पुष्कर के कसाईखाने को बन्द करवाने के सम्बन्ध में तत्कालीन कवि ने आपके लिए निम्नलिखित पद्य कहा था कि:—

भला भुलाया भोपती, नवकोटीरे नेत।
रावमिटायो रिधमल, पुष्कर रो प्रायश्चित ॥

आपके कार्यों से प्रसन्न होकर आपको महाराजा मानसिंहजी ने दरबार में प्रथम दर्जे की बैठक, ताजीम, सोना और हाथी सिरोपाव इनायत किया था। महाराजा तखतसिंहजी को जोधपुर की गद्दी पर दत्तक लाने में आपने विशेष परिश्रम किया था। अतः महाराजा तखतसिंहजी ने आपको कई खास रुक्के प्रदान कर प्रसन्नता प्रकट की थी। इन महाराजा के राजत्वकाल में आपने फौज लेकर लाडनू ठाकुर साहिब के साथ उमरकोट पर चढ़ाई की थी। संवत् १९०८ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके रावरजा राजमलजी तथा राव फौजमलजी नामक दो पुत्र हुए। आपके छोटे भ्राता राव कल्याणमलजी ने भी रियासत की बहुतसी सेवाएँ कीं। जालौर घेरे के समय आप महाराजा मानसिंहजी की ओर से आरबों की फौज लेने गये थे। सम्वत् १८६० से ६५ तक आप मुसाहिब रहे। जोधपुरी घेरे के समय आपने दौलतराव सिंधिया को अपनी ओर मिलाने की कोशिश की थी।

रावरजा राजमलजी—आपका जन्म सम्वत् १८७३ में हुआ। संवत् १९०३ से १९०९ तक आप जोधपुर दरबार की ओर से पोलीटिकल एजण्ट के वकील रहे। सम्वत् १९०७ की चैत वदी १० को महाराजा तखतसिंहजी ने आपको दीवानगी का पद प्रदान किया। सन् १८५७ के बलवे के समय आऊवे के ठाकुर ने बागी लोगों को अपने यहाँ टिकाया। उन्हें निकालने के लिये पोलिटिकल एजण्ट ने जोधपुर दरबार को लिखा। फलतः दरबार ने आपको फौज देकर आऊवा भेजा। उक्त स्थान पर युद्ध करते हुए आसोज वदी ६ को आप स्वर्गवासी हुए। आपके अंतकाल होजाने की खबर जब जोधपुर पहुँची, तब दरबार अपने स्वर्गीय मुसाहिब को सम्मान देने के लिए मातमपुरसी के लिये इनकी हवेली पर आये। इनके

समय तक इस परिवार के पास १० हजार रुपयों की जागीर थी। आपके रावरजा सरदारमलजी और जोरावरमलजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें सरदारमलजी, राव फौजमलजी के नाम पर दत्तक गये।

राव फौजमलजी—आप मारवाड़ राज्य में हाकिम और सुपरिंटेन्डेण्ट के पद पर कार्य करते रहे। दरबार ने आपको सोना और पालकी सिरोपाव इनायत किया था। सम्वत् १९०३ में आप स्वर्गवासी हुए।

रावरजा सरदारमलजी—आप सम्वत् १९०५ में फौजमलजी के नाम पर दत्तक गये। दरबार ने आपको बैठने का कुरुब और ताजीम इनायत की। आपने अपने पिता राजमलजी के औसर के उपलक्ष में १२॥ न्यात और राज्य के रिसाले को निमंत्रित किया। उस समय दरबार ने आपको मोतियों की कंठी, कड़ा, सिरपेंच, हाथी सिरोपाव, पालकी और पैर में पहिनने के लिए सांटे इनायत कीं। सम्वत् १९१४ तक आप दीवानी अदालत तथा हुजूरी दफ्तर की दरोगाई (मजिस्ट्रेट शिप) और हाकिमी का कार्य्य करते रहे। इसके बाद आप पोलिटिकल एजेण्ट के वकील और दफ्तर के सुपरिन्टेन्डेन्ट रहे। संवत् १९२२ की भादवा सुदी ८ के दिन महाराजा जसवंतसिंहजी ने आपको दीवानगी का सम्मान बख्शा। संवत् १९४१ में आप ए० जी० जी० के यहाँ मारवाड़ राज्य की तरफ से वकील बनाये गये और मृत्यु समय तक आप यह कार्य करते रहे। आपका स्वर्गवास संवत् १९४५ की काती वदी ८ को हुआ। आपकी हवेली पर महाराजा जसवंतसिंहजी मातमपुर्सी के लिए पधारे। आपके रावरजा माधौसिंहजी और अमरसिंहजी नामक २ पुत्र हुए।

राव जोरावरमलजी—आपका जन्म संवत् १९०७ में हुआ। आप सांचोर और जोधपुर के हाकिम रहे तथा संवत् १९४९ में ए० जी० जी० के यहाँ वकील बनाये गये। संवत् १९५२ की मगसर सुदी ३ को आप स्वर्गवासी हुए। आपके राव बहादुरमलजी तथा राव दानमलजी नामक २ पुत्र हुए।

राव बहादुरमलजी—आप जेतारण और पचपदरा के हाकिम रहे और संवत् १९७० में ए. जी. जी. के वकील बनाये गये। आपको पैरों में सोना पहिनने का अधिकार प्राप्त था। संवत् १९८० में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र सोभागमलजी म्युनिसिपैलिटी में सर्विस करते हैं।

राव बहादुरमलजी के छोटे भ्राता राव दानमलजी दौलतपुरा तथा पचपदरा के हाकिम थे। संवत् १९६५ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र राव बदनमलजी का जन्म संवत् १९४८ की आसोज सुदी ७ को हुआ। आप थोड़े समय के लिये एरनपुरा की छावनी के वकील रहे और इधर सन् १९२३ से देवस्थान धर्मपुरा के सुपरिण्टेण्डेण्ट हैं। आपके मोहवतसिंहजी, फतेसिंहजी तथा उमरावसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं।

रावराजा माधोसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९२४ की पोष बदी ८ को हुआ। आरम्भ में

१० साल तक आप पाली, जोधपुर और जालोर के हाकिम रहे और इधर सन् १९१७ से जनानी ड्योढ़ी के सुपरिण्टेण्डेण्ट के पद पर कार्य्य कर रहे हैं। आप बड़े मिलनसार, सरल चित्त और निराभिमानी सज्जन हैं। जोधपुर की ओसवाल समाज में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा है। राज्य के सरदारों में भी आपका उच्च सम्मान है। आपको दरबार से दोवड़ी ताजीम और पैरों में सोना पहिनने का अधिकार प्राप्त है। आप जोधपुर ओसवाल श्रीसंघ के प्रेसिडेण्ट हैं। आपके सवाईसिंहजी, वल्लभसिंहजी तथा किशोरसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं। कुँवर सवाईसिंहजी इस समय सीवाने के हाकिम हैं और आपको पैरों में सोना पहिनने का अधिकार प्राप्त है। आपके बड़े पुत्र कुँवर वल्लभसिंहजी ने हाल ही में बी० ए० की परीक्षा पास की है। कुँवर सवाईसिंहजी के पुत्र गुलाबसिंहजी इन्दौर में एल० एल० बी० के द्वितीय वर्ष में पढ़ रहे हैं। इनसे छोटे भाई जसवंतसिंहजी मेट्रिक में शिक्षा पा रहे हैं।

राव अमरसिंहजी—आप रावरजा बहादुर माधोसिंहजी के छोटे भ्राता हैं। जोधपुर दरबार से आपको हाथी, सिरोपाव, सोना और ताजीम प्राप्त हैं। इसी प्रकार जयपुर दरबार ने भी आपको हाथी, सिरोपाव देकर सम्मानित किया है। आप रीवाँ महारानी (जोधपुर की महाराज कुमारी) के कामदार हैं। रीवाँ स्टेट ने भी आपको सोना पहिनने का अधिकार बख्शा है। आपके पुत्र सूरतसिंहजी पढ़ते हैं।

इस परिवार को जोधपुर दरबार की ओर से गेगोली और परासली नामक दो गाँव जागीर में प्राप्त हुए थे। वे इस समय इस कुटुम्ब के अधिकार में हैं।

सेठ कमलनयन हमीरसिंह लोढ़ा का खानदान अजमेर

भारतवर्ष की ओसवाल जाति में यह बहुत बड़ा घराना है। इस घराने का सरकार, देशी राज्यों तथा प्रजा में बहुत सम्मान है। इस घराने के पूर्वज सेठ भवानीसिंहजी अलवर राज्य में रहते थे। इनके पांच पुत्रों में से सेठ कमलनयनजी कुछ समय किशनगढ़ राज्य में रहकर संवत् १८६० के पूर्व अजमेर में आये और यहाँ पर "कमलनयन हमीरसिंह" के नाम से दुकान खोली। आपने अपनी कार्य-कुशलता तथा सत्य-प्रियता से धन्धे को भली भांति बढ़ाया। आप ने जयपुर और किशनगढ़ में "कमलनयन हमीरसिंह" के नाम से और जोधपुर में "दौलतराम सूरतराम" के नाम से दूकानें खोलीं। आपके पुत्र सेठ हमीरसिंहजी हुए। आपने फर्रुखाबाद, टोंक व सीतामऊ में दूकानें जारी कीं और जयपुर, जोधपुर के महाराजाओं से लेन-देन प्रारम्भ किया तथा इस घराने की प्रतिष्ठा बढ़ायी। इनके चार पुत्र हुए—सेठ करणमलजी, सेठ सुजानमलजी, रायबहादुर सेठ समीरमलजी और दीवानबहादुर सेठ उम्मेदमलजी। प्रथम पुत्र सेठ करणमलजी का

बाल्यावस्था में ही स्वर्गवास हो गया। दूसरे पुत्र सेठ सुजानमलजी ने सन् १८५७ के विद्रोह के समय अंग्रेज़ सरकार को बहुत सहायता दी। इन्होंने रियासत शाहपुरा में रायबहादुर सेठ मूलचंदजी सोनी के साझे में दूकान खोली, और वहाँ के राज्य से लेन-देन किया। इनके समय साम्भर की हुकूमत इनके घराने में आई और वहाँ का कार्य्य आप अपने प्रतिनिधियों द्वारा करते रहे। इनके स्वर्गवास के पश्चात् इस घराने की बागडोर तीसरे पुत्र रायबहादुर सेठ समीरमलजी के हाथ में आई। अजमेर नगर की म्युनिसिपल कमेटी के आप बहुत वर्षों तक मेम्बर रहे और बहुत समय तक आनरेरी मजिस्ट्रेट भी रहे थे। आप म्यु० कमेटी के ३१ वर्ष तक वाइस चेयरमैन बने रहे। इस पद पर और मजिस्ट्रेटी पर ये मृत्यु दिवस तक अरूढ़ रहे थे। इनकी वाइस चेयरमैनी में अजमेर में सुप्रसिद्ध जल की सुविधा के लिये "फाईसागर" बना, जिससे आज सारे नगर और रेलवे को पानी पहुँचाया जाता है। इनके समय में कलकत्ता, बम्बई, कोटा, अलवर, टोंक, पड़ावा, सिरोंज, छबड़ा, और निम्बाहेड़ा में नयी दूकानें खुलीं। ये अलवर, कोटा और जोधपुर की रेजीडेन्सी के कोषाध्यक्ष नियत हुए। देवली और एरनपुरा की पल्टनों के भी कोषाध्यक्ष का कार्य इनको मिला। रायबहादुर सेठ समीरमलजी को सार्वजनिक कार्य्यों में प्रसन्नता होती थी। संवत् १९४८ के अकाल में अजमेर में आपने एक धान की दुकान खोली। इस दूकान से गरीब मनुष्यों को सस्ते भाव से उदर पूर्ति के हित अनाज मिलता था। इस दुकान का घाटा सब आपने दान किया। इनके समय में यह घराना भारतवर्ष भर में विख्यात हो गया तथा देशी रजवाड़ों से इन्होंने घनिष्ठ मित्रता स्थापित की। उदयपुर, जयपुर, जोधपुर से इनको सोना और ताजिम थी। बृटिश गवर्नमेंट में भी इनका मान बहुत बढ़ा। इनमें यह योग्यता थी कि जिन अफसरों से ये एकबार मिल लेते थे वे सदा इनको आदर की दृष्टि से देखते थे। इनके कार्य्यों से प्रसन्न होकर सरकार ने इनको सन् १८७७ में रायसाहब की पदवी और तत्पश्चात् सन् १८९० में रायबहादुर की पदवी दी। इनकी मृत्यु के पश्चात् सेठ हमीरसिंहजी के चौथे पुत्र दीवान बहादुर सेठ उम्मेदमलजी ने इस घराने के कार्य्य को संचालन किया। वे व्यापार में बड़े कार्य्य दक्ष थे। इनके Entreprise से इस घराने की सम्पत्ति बहुत बढ़ी। सरकार ने इनको सन् १९०१ में रायबहादुर की और सन् १९१५ में दीवान बहादुर की पदवी दी। ये भी मृत्यु दिवस तक अजमेर नगर के प्रसिद्ध आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे थे। रियासतों से इनको भी सोना और ताजिम थी। इन्होंने उद्यम-हीनों को उद्यम से लगाने के हेतु ब्यावर में एडवर्ड मिल खोली, जिसमें बहुत अच्छा कपड़ा बनता है और जो इस समय भारतवर्ष की विख्यात मिलों में एक है। इन्होंने बी० बी० सी० आई० रेलवे के मीटर गेज भाग के धन कोषों का तथा कुल वेतन बाँटने का ठेका लिया और इसका काम भी उत्तमता से चलाया। सेठ उम्मेदमलजी के कोई संतान नहीं हुई। इनके नाम पर सेठ समीरमलजी के दूसरे पुत्र अभयमलजी गोद आये।

सेठ हमीरसिंहजी के चारों पुत्रों में से बड़े पुत्र करणमलजी तो अल्पायु में ही स्वर्गवासी हो चुके थे जैसा कि ऊपर वर्णन हो चुका है। शेष तीन भ्राताओं के पुत्र तथा पुत्रियां हुईं। सेठ सुजानमलजी के दो पुत्र थे; सेठ राजमलजी तथा सेठ चन्दनमलजी। इन दोनों का स्वर्गवास दीवान बहादुर सेठ उम्मेदमलजी की मौजूदगी में ही हो गया। सेठ राजमलजी के एक पुत्र सेठ गुमानमलजी हुए। जो मृत्युपर्यन्त अजमेर म्युनिसिपल कमेटी के मेम्बर और एडवर्ड मिल ब्यावर के चैयरमेन रहे, ये जहाँ रहे वहाँ इन्होंने कई अच्छे-अच्छे कार्य्य किये। इनके पुत्र सेठ जीतमलजी थे। वे भी चन्द वर्ष तक मेम्बर म्युनिसिपल कमेटी रहे। परन्तु उनका अल्पायु में ही स्वर्गवास हो गया। सेठ चन्दामलजी के पुत्र कानमलजी तथा पौत्र पानमलजी हैं। सेठ हमीरसिंहजी के तीसरे पुत्र राय बहादुर सेठ समीरमलजी के चार पुत्र हुए; सेठ सिरहमलजी, सेठ अभयलालजी, सेठ बिरधमलजी तथा सेठ गाढ़मलजी। इनमें से सेठ सिरहमलजी आजीवन म्यूनिसिपल कमेटी के मेम्बर रहे परन्तु इनकी आयु बलवान नहीं हुई और यह २९ वर्ष की अवस्था में ही स्वर्गवासी होगये। जोधपुर राज्य ने इनको भी सोना तथा ताज़ीम प्रदान की थी। सेठ गाढ़मलजी इस कुलकी (Joint Hindu Family) रीति के अनुसार इनके गोद हैं। रायबहादुर सेठ समीरमलजी के दूसरे पुत्र अभयमलजी भी मृत्यु तक ऑनरेरी मजिस्ट्रेट रहे थे। ये बड़े लोकप्रिय तथा कार्यदक्ष थे परन्तु खेद की बात है कि इनका अल्पायु में ही स्वर्गवास होगया। इनके पुत्र सेठ सोभागमलजी हैं।

इन दिनों में इस घराने का सब कार्य्य भार रायबहादुर सेठ बिरधमलजी के हाथ में है जो राय बहादुर सेठ समीरमलजी के तीसरे पुत्र हैं। इनकी अध्यक्षता में इनके छोटे भ्राता सेठ गाढ़मलजी तथा भतीजे सेठ कानमलजी सब कार्य बड़े प्रेम और मनोयोग से करते हैं। सेठ गाढ़मलजी कुछ समय तक म्यूनिसिपल कमेटी के मेम्बर रहे तथा इस समय एडवर्ड मिल ब्यावर के चेयरमैन हैं। इनके पांच पुत्र हैं, जिनमें से बड़े कुँवर उमरावमलजी तो दूकान के काम में सहायता देते हैं और शेष चार अभी बाल्यावस्था में हैं।

रायबहादुर सेठ बिरधमलजी का जन्म संवत् १९२९ में हुआ। आप अपने जेष्ठ भ्राता अभयमलजी की अल्पायु में ही मृत्यु हो जाने के पश्चात् अत्युत्तम रीति से सब काम चला रहे हैं। जनता तथा ब्रिटिश सरकार इनके काम में सदा सन्तुष्ट रहती है आप ऑनरेरी मजिस्ट्रेट भी हैं। सरकार ने सन् १९२६ में इनको रायबहादुर की पदवी से सुशोभित किया। आपने नये विक्टोरिया अस्पताल में एक्सरेज की कल कई हजार रुपया देकर मंगाई है जिसके द्वारा प्रत्येक मनुष्य के अन्दर के रोग का निदान होजाता है। आपकी दूकानें बम्बई, कलकत्ता आदि बीस स्थानों में हैं जहाँ ब्याज का धंधा व सोना

चांदी, तांबा, पीतल, जस्ता, चीनी, कपड़े आदि का व्यापार सीधा विलायत से होता है। रामकृष्टोपुर (कलकत्ता) में आपका चांवल का बड़ा भारी व्यापार होताहै। कई स्थानों पर यह फर्म स्टेट बैंकर है।

लोढ़ा हणुतचंदजी का परिवार, जोधपुर

रावरजा माधोसिंहजी के पूर्वज लोढ़ा सुलतानमलजी से इस खानदान की शाखा अलग हुई। सुलतानमलजी की कुछ पुश्तों के बाद लोढ़ा रामचन्दजी हुए।

रामचन्दजी लोढ़ा—आप फलौदी के हाकिम के पद पर नियुक्त किये गये थे। पर किसी कारणवश आप राज्य द्वारा कैद कर लिए गये। कैद से मुक्त होने पर आपने राज्य की नौकरी न करने का निश्चय किया। इसके बाद आप अजमेर की ओर आ गये। और अपनी कार्य्य कुशलता से अच्छा द्रव्य उपाजन कर लिया। आपकी पीसांगन की हवेलियाँ अब भी लोढ़ों की हवेलियों के नाम से मशहूर हैं। लोढ़ा रामचन्दजी के साहिबचन्दजी, शिवचन्दजी और शोभाचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से प्रत्येक को अपने पिताजी की सम्पत्ति से लगभग तीन-तीन लाख रुपये मिले थे। पर इन्होंने इस द्रव्य को बर्बाद कर डाला और अपने पुत्रों के लिये कुछ नहीं छोड़ा। इससे लोढ़ा शोभाचन्दजी के पुत्र रूपचन्दजी की आर्थिक दृष्टि से बड़ी शोचनीय स्थिति हो गई।

रूपचदजी लोढ़ा—आप बड़े साहसी थे। आप पीसांगन से अजमेर चले आये और सिपाहीगिरी की नौकरी करली। इसी समय आपने फारसी भाषा का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। वहाँ से आप जोधपुर आये, और ३०) मासिक पर ब्रिटिश रेजिमेण्ट में वकील हो गये। बढ़ते-बढ़ते आप १५०) मासिक तक पहुँच गये। इसी समय मारवाड़ के गोड़वाड़ प्रांत में मीणों ने विद्रोह मचा दिया। इस विद्रोह का दमन करने के लिये जोधपुर राज्य की ओर से रूपचन्दजी भेजे गये। इन्होंने इस कार्य्य में बड़ी सफलता प्राप्त की। इसके बाद आप नागोर के कोतवाल तथा सिवाने के हाकिम बनाये गये। सिवाने से आप सांचोर के हाकिम होकर गये। यहाँ से अवसर ग्रहण कर आप जोधपुर रहने लगे। जहाँ आजीवन आपको ६०) मासिक पेन्शन मिलती रही। सम्वत् १९५५ में आपका स्वर्गवास हुआ।

बभूतचन्दजी लोढ़ा—रूपचन्दजी के बड़े पुत्र बभूतचन्दजी सांचोर, शेरगढ़, फलोदी और साम्भर आदि अनेक स्थानों पर हाकिम रहे। फलोदी में आपने बड़ी बहादुरी से डाकुओं का उपद्रव शांत किया और उनके नेता को गिरफ्तार किया, इससे राज्य की ओर से आपको पुरस्कार मिला। ईस्वी सन् १९२७ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र लोढ़ा किशनचन्दजी सेशन कोर्ट में सरिश्तेदार हैं।

हणवतचंदजी लोढ़ा—रूपचन्दजी के दूसरे पुत्र लोढ़ा हणवन्तचन्दजी का जन्म सम्वत् १९२५

में हुआ। सम्वत् १९४६ में आप मैट्रिक पास हुए। बाद आपने ग्रास फार्म महकमा तथा कोठार में नौकरी की। सम्वत् १९५६ में आप स्टेट जवाहरखाने के मेम्बर हुए। सम्वत् १९५८ में आप नौकरी से रिटायर हुए। सन् १९११ में आप जोधपुर राज्य की ओर से किंग जॉर्ज प्रेज़ेंट शो में प्रतिनिधि होकर कलकत्ता गये थे। आपने बम्बई में व्यापार भी अच्छी सफलता के साथ किया था। आप जोधपुर के ओसवाल समाज के विशेप व्यक्तियों में से हैं। आप बड़े मिलनसार और योग्य सज्जन हैं। आपके भोपालचन्दजी और गणेशचन्दजी नामक दो पुत्र हैं। लोढ़ा भोपालचन्दजी का जन्म सम्वत् १९५५ में हुआ। आपने जोधपुर से एफ० ए० तथा बम्बई से बी कॉम की परीक्षा पास की। इसके बाद आप रेल्वे ऑडिट ऑफिस में इन्स्पेक्टर ऑफ् अकाउण्टस् मुकर्रर हुए। और इस पद पर आप इस समय काम करते हैं। लोढ़ा भोपालचन्दजी बड़े योग्य और प्रतिभासम्पन्न सज्जन हैं, जोधपुर सरदार हाईस्कूल के बनवाने में आपने दिन-रात परिश्रम कर देख रेख रक्खी और बड़ी ही किफायतशारी से एक भव्य और सुन्दर इमारत बनवाने में शुभ प्रयास किया। समाजहित के कार्य्यों में आप दिलचस्पी रखते हैं। आपके छोटे भाई गणेशचन्दजी ऑडिट ऑफिस में नौकरी करते हैं।

लोढ़ा सावंतमलजी का खानदान, जोधपुर

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान मेड़ता है। वहाँ से पहाड़मलजी के पुत्र जसवंतमलजी जोधपुर आये, तब से यह परिवार जोधपुर में निवास करता है। जसवंतमलजी का स्वर्गवास संवत् १९४२ में हुआ। इनके कुन्दनमलजी, जीवनमलजी और पारसमलजी नामक तीन पुत्र हुए। कुन्दनमलजी जोधपुर रियासत की ओर से एजण्ट के यहाँ वकील थे। संवत् १९३६ में वकालत छोड़कर आप बोहरागत का काम करने लगे, तथा संवत् १९६५ में स्वर्गवासी हुए। जीवनमलजी भी कुन्दनमलजी के बाद एजण्ट के यहाँ वकील रहे। इनके छोटे भ्राता पारसमलजी फौजदारी कोर्ट में काम करते रहे।

लोढ़ा कुन्दनमलजी के सावंतमलजी, चंदनमलजी और बुधमलजी नामक तीन पुत्र विद्यमान हैं। सावंतमलजी सन् १९०५ से जोधपुर स्टेट के पुलिस विभाग में सर्विस करते हैं और इस समय बाड़मेर में सर्कल इन्स्पेक्टर पोलिस हैं। आपके छोटे भ्राता चंदनमलजी कोर्ट ऑफ वार्डस् के मैनेजर और बुधमलजी शेशन कोर्ट में पोतदार हैं। इसी तरह जीवनमलजी के पौत्र हरखमलजी इनवेटिंग ऑफिस में सर्विस करते हैं और पारसमलजी के पुत्र हिम्मतमलजी, डीडवाणा में वकालात करते हैं।

शाह लच्मीमल प्रसन्नमल लोढ़ा, नागौर

यह परिवार मूल निवासी नागौर का ही है। इस परिवार में छजमलजी बड़े नामांकित तथा बहादुर प्रकृति के पुरुष हुए। आपकी संताने छजमलोत लोढ़ा कहलाई। आपके नामका छजमहल आज

भी नागौर में विद्यमान हैं। आपके पूर्वज सारंगशाहजी को देहली बादशाह ने शाह की पदवी इनायत की थी। सं० १७५६ में महाराजा अजीतसिंहजी ने आपको आधे महसूल की माफी का परवाना देकर सम्मानित किया। आपके सुजानसिंहजी, सबलसिंहजी, भावसिंहजी तथा भगवतसिंहजी नामक चार पुत्र हुए।

भावसिंहजी लोढ़ा—आप बड़े प्रभावशाली साहुकार थे। एक समय आपके नेतृत्व में नागौर के साहूकारोंने राज्य से अप्रसन्न होकर नागौर छोड़ दी तब संवत् १७७४ में जोधपुर नरेश अजितसिंहजी ने आपके नाम पर दिलासा का पत्र भेज कर सब को पुनः वापस बुलाया था। नागौर वापस आने पर आपको जोधपुर दरबार में बैठने का कुरब इनायत किया था। आपका बीकानेर स्टेट में भी अच्छा सम्मान था। आपके हठीमलजी, अभयमलजी तथा हिम्मतमलजी नामक तीन पुत्र हुए। आप सब भाइयों को जोधपुर दरबार की ओर से कई रुक्के परवाने, दुशाले तथा सिरोपाव बक्षे गये थे।

सेठ हठीसिंहजी के पुत्र हिन्दूमलजी को सं० १८३३ में जोधपुर दरबार की ओर से सिरोपाव इनायत किया गया। आपके परथीमलजी, गढ़मलजी, भारमलजी तथा फौजमलजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें गढ़मलजी के गम्भीरमलजी, सिरेमलजी तथा मगनमलजी नामक तीन पुत्र हुए। आप लोगों ने संवत् १९६४ में जोधपुर के घेरे के समय महाराजा मानसिंहजी को अधिक मदद दी थी, जिससे प्रसन्न होकर मानसिंहजी ने आपको एक रुक्का इनायत किया था।

लोढ़ा मगनमलजी के सौभागमलजी, छगनमलजी, मनरूपमलजी, अनोपचन्दजी तथा बहादुरमलजी नामक पाँच पुत्र हुए। आप लोगों को भी जोधपुर स्टेट की ओर से दुशाले, सिरोपाव व खास रुक्के इनायत किये गये थे। इनमें से सेठ सौभागमलजी के जावन्तमलजी, मनरूपमलजी के मनोहरमलजी, कस्तूरचन्दजी तथा जीतमलजी और बहादुरमलजी के जसरूपमलजी नामक पुत्र हुए। इनमें से कस्तूरमलजी अनोपचन्दजी के नाम पर, जसरूपमलजी के ज्येष्ठ पुत्र सुपारसमलजी जावंतमलजी के नाम पर और जीतमलजी के पुत्र घासीलालजी मनोहरमलजी के यहाँ पर दत्तक गये। सेठ फूलमलजी जगरूपमलजी तथा घासीमलजी को जोधपुर स्टेट की ओर से दुशाले इनायत हुए। सेठ घासीमलजी ने १९५६ के अकाल में गरीबों तथा पर्दानशीन औरतों की बड़ी इम्दाद की थी। आपके इस समय लक्ष्मीमलजी, प्रसन्नमलजी तथा भंवरलालजी नामक पुत्र विद्यमान हैं। इनमें से लक्ष्मीमलजी, कस्तूरमलजी के नाम पर तथा प्रसन्नमलजी,जीतमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं।

वर्तमान में इस परिवार के मुख्य व्यक्ति सेठ लक्ष्मीमलजी, प्रसन्नमलजी, भँवरमलजी, कुंदनमलजी (जसरूपमलजी के पुत्र) और गंगामलजी (सुपारसमलजी के पुत्र) विद्यमान हैं।

इस समय सेठ लक्ष्मीमलजी के पुत्र चंचलमलजी, विरदमलजी गुलाबमलजी, वल्लभसिंहजी,

सखतमलजी और मोहनसिंहजी हैं। सेठ प्रसन्नमलजी के पुत्र प्रकाशमलजी, दिलखुशहालजी, गंगामलजी और प्रेमसिंहजी हैं। प्रकाशमलजी ने बी० काम की परीक्षा पास की है। और गंगामलजी सुपारसमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं। सेठ भँवरमलजी के पुत्र मनोहरमलजी व भीमसिंहजी तथा कुंदनमलजी के पुत्र उगममलजी व हणुतमलजी हैं।

नागोर के ओसवाल समाज में यह परिवार अच्छी इज्जत रखता है। जब कभी जोधपुर दरबार नागोर आते हैं, तो अणबीधे मोतियों से तिलक करने का अधिकार लोढ़ा (छजमलोत) परिवार को ही प्राप्त है।

सेठ मूलचन्द मिलापचन्द लोढ़ा, नागोर

यह खानदान नागोर में ही निवास करता है। इस खानदान के पूर्वज शाह टोडरमलजी लोढ़ा की सातवीं पीढ़ी में सेठ मेहताबचन्दजी लोढ़ा हुए। इनके मूलचन्दजी और मिलापचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ मूलचन्दजी लोढ़ा का जन्म संवत् १९२१ में हुआ। आप व्यापार के निमित्त संवत् १९४५ में बम्बई गये, और वहाँ के व्यापारिक समाज में आपने अच्छी इज्जत पाई। संवत् १९६५ में नागोर में आपका स्वर्गवास हुआ।

सेठ मूलचन्दजी के बाद फर्म का व्यापार उनके छोटे भाई मिलापचन्दजी ने सह्माला, आपका जन्म संवत् १९२५ में हुआ। आपने इस फर्म के व्यापार को बहुत उन्नति पर पहुँचाया और इसकी शाखाएं बम्बई के अलावा कलकत्ता, अहमदाबाद तथा सोलापुर में खोलीं। नागोर के ओसवाल समाज में आप अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं। तथा बम्बई वालों के नाम से बोले जाते हैं।

सेठ मूलचन्दजी के पुत्र केवलचन्दजी होशियार व्यक्ति थे। संवत् १९८७ में इनका शरीरान्त हुआ। इनके बड़े पुत्र माधोसिंहजी स्वर्गवासी हो गये हैं और प्रसन्नचन्दजी सुमेरचन्दजी तथा हुकुमचन्दजी नामक ३ पुत्र विद्यमान हैं। प्रसन्नचन्दजी व्यापार में भाग लेते हैं और छोटे भ्राता कालेज में पढ़ते हैं।

सेठ मिलापचन्दजी के पुत्र कानचन्दजी नेमीचन्दजी और मंगलचन्दजी व्यापारिक कारबार सम्हालते हैं। कानचन्दजी के पुत्र सूरजचन्दजी और सरूपचन्दजी हैं। इसी तरह नेमीचन्दजी के पुत्र किशोरचन्द, मंगलचन्दजी के पुत्र भँवरचन्द और प्रसन्नचन्दजी के मनोहरचन्द और अमरचन्द हैं।

नगर सेठ कालूरामजी लोढ़ा का खानदान, शिवगंज

इस परिवार के पूर्वज (टोडरमलोत) लोढ़ा रायचन्दजी के पौत्र लोढ़ा कचरदासजी सं० १८५० में सोजत से पाली आये। यहाँ अफीम के धन्धे में इन्होंने अच्छी तरक्की पाई। इनके चौथमलजी और कालूरामजी नामक २ पुत्र हुए।

नगर सेठ कालूरामजी लोढ़ा—आप पाली की पंचपंचायती में प्रधान व्यक्ति थे। आपको जोधपुर महाराजा मानसिंहजी ने और तखतसिंहजी ने सिरोपाव इनायत कर सम्मानित किया था। संवत् १९११ में पाली पर टैक्स बढ़ाये जाने के कारण आप अपने साथ कई लखपतियों को लेकर सिरोही स्टेट में चले आये, और वहाँ के महाराव शिवसिंहजी के नाम से एरनपुरा के पास शिवगंज नामक बस्ती आबाद की। इसके उपलक्ष में सिरोही दरबार ने आपको "नगर सेठ" की पदवी प्रदान की। आपकी दुकानें उदयपुर, गुजरात और बम्बई में थीं। संवत् १९१६ में आपने ऋषभदेवजी का संघ निकाला। और इसी साल भादवा वदी ७ को भोजन में किसी दुश्मन द्वारा जहर दिये जाने के कारण आप उदयपुर में स्वर्गवासी हुए। सन् १९१४ के गदर में आपने अंग्रेजों की बहुत मदद की थी।

सेठ जुहारमलजी लोढ़ा—आप सेठ कालूरामजी लोढ़ा के पुत्र थे। उदयपुर दरबार ने आपको अपने राज्य में आधे महसूल माफ़ रहने का परवाना दिया था। आपको जोधपुर दरबार के हाकिम मनाकर शिवगंज से २ बार पाली ले गये। संवत् १९२४ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके नाम पर सेठ चौथमलजी के प्रपौत्र वरदीचन्दजी दत्तक आये।

सेठ चौथमलजी लोढ़ा—आपकी दुकान संवत् १९१७ में एरनपुरा कन्टून्मेंट की ट्रेजरर थे, पाली से पुनः शिवगंज आने पर सिरोही दरबार ने आपको २ कुएं तथा कस्टम की आय से ५) सैकड़ा देने का हुकुम दिया। आपकी दरबार और गवर्नमेंट में अच्छी इज्जत थी। संवत् १९६५ में आप स्वर्गवासी हुए। वर्तमान में आपके पुत्र सेठ तखतराजजी विद्यमान हैं।

सेठ तखतराजजी का जन्म संवत् १९५० में हुआ। आपको शिवगंज की कस्टम की आय से ५) सैकड़ा मिलता है। यहाँ की जनता में आप लोकप्रिय तथा प्रतिष्ठित सज्जन हैं। आप स्थानीय गौशाला और वर्द्धमान विद्यपीठ के प्रेसिडेण्ट हैं। आपने परिश्रम करके शिवगंज में पैदा हुई ओसवाल समाज की तड़ को ४ साल पहिले मिटाया है। आपके पुत्र प्रकाशराजजी और बलवन्तसिंहजी हैं।

इसी तरह इस परिवार में सेठ कालूरामजी के बड़े भ्राता चौथमलजी के कुटुम्ब में सेठ घेवरचंदजी सुशीलालजी और बलवन्तसिंहजी हैं।

सेठ नवलमल हीराचन्द लोढ़ा, बगड़ी

इस परिवार का तीन चार सौ वर्ष पूर्व नागौर से बगड़ी में आगमन हुआ। इस परिवार के पूर्वज सेठ दौलतरामजी और उनके पुत्र नवलमलजी ४०-५० साल पहिले व्यापार के लिए बगड़ी से कामठी गये और वहाँ आपने दुकान की। कामठी से आपने रायपुर में दुकान की। सेठ नवलमलजी संवत् १९५२



नगरसेठ तखतराजजी लोढ़ा, शिवगंज.



सेठ केवलचन्दजी लोढ़ा, नागौर.



स्व० सेठ आनन्दमलजी लोढ़ा (आनंदमल किशनमल) सुजानगढ़.



श्री० जसवंतासिंहजी लोढ़ा बी० काम० बनेड़ा.

में स्वर्गवासी हुए। आपके हीराचन्दजी और जसराजजी नामक दो पुत्र हुए। इन बन्धुओं में सेठ हीराचंदजी लोढ़ा संवत् १९६३ में स्वर्गवासी हुए। सेठ जसराजजी लोढ़ा का कारबार बंगलोर में था, आपके पुत्र धनराजजी और पौत्र अबीरचंदजी का २ साल पूर्व छोटी वय में शरीरान्त हो गया।

सेठ हीराचन्दजी लोढ़ा के पुत्र सोभागमलजी और अमोलकचन्दजी विद्यमान हैं। आप बन्धुओं का जन्म क्रमशः संवत् १९५० और १९५८ में हुआ। आपने लगभग २० साल पूर्व मद्रास प्रान्त के मदुरान्तकम् नामक स्थान में बेङ्किग व्यापार आरम्भ किया, और इस दुकान से अच्छी सम्पत्ति उपार्जित की। व्यापारिक कामों के अलावा आप बन्धु सार्वजनिक शिक्षा प्रचार के कामों में प्रशंसनीय भाग लेते रहते हैं। आप जैन गुरुकुल ब्यावर के ट्रस्टी हैं और उसमें १ हजार रुपया प्रतिवर्ष सहायता देते हैं।

सेठ अमोलकचन्दजी लोढ़ा स्था० जैन कान्फ्रेंस की जनरल कमेटी के मेम्बर और बगड़ी की श्री महावीर जैन पाठशाला के सेक्रेटरी हैं। इसी तरह के धार्मिक, व विद्योन्नति के कामों में आप सहयोग लेते रहते हैं। बगड़ी के ओसवाल समाज में आपका परिवार बड़े सम्मान की निगाहों से देखा जाता है।

सेठ सोभागमलजी के पुत्र मिश्रीलालजी, धरमीचन्दजी तथा माणकचन्दजी हैं। मिश्रीलालजी सुशील तथा समझदार युवक हैं। तथा फर्म के व्यवसाय में भाग लेते हैं।

सेठ इन्द्रमलजी लोढ़ा का परिवार, सुजानगढ़

इस परिवार के पूर्वज सेठ बागमलजी लोढ़ा अपने मूल निवास स्थान नागौर में व्यापार करते थे। इनके पुत्र सूरजमलजी तथा चाँदमलजी ने संवत् १९०० में सुजानगढ़ में सूरजमल इन्द्रमल के नाम से दुकान की। सेठ सूरजमलजी ने अपने नाम पर अपने भतीजे इन्द्रमलजी को दत्तक लिया। सेठ इन्द्रमलजी के जीवनमलजी, आनंदमलजी, दौलतमलजी और कानमलजी नामक ४ पुत्र हुए। इन भ्राताओं ने संवत् १९५१ में कलकत्ते में आनंदमल कानमल के नाम से जूट का व्यापार शुरू किया। संवत् १९६० में एक कपड़े की ब्रांच कानमल किशनमल के नाम से और खोली गई। इन चारों भाइयों ने कठिन परिश्रम कर अपने व्यवसाय को उन्नति पर पहुँचाया। संवत् १९७५ में आप लोगों का कारबार अलग २ हुआ।

सेठ जीवनमलजी—आप सुजानगढ़ में ही कारबार करते रहे इनके पुत्र गणेशमलजी ने अपने नाम पर झूमरमलजी को दत्तक लिया। झूमरमलजी के पुत्र जीतमलजी इस समय सुजानगढ़ में ही रहते हैं।

सेठ आनन्दमलजी—आपने पीरगाछा (बंगाल) और रंगपूर में अपनी ब्रांच आनन्दमल किशनमल के नाम से खोली। इस पर जूट का व्यापार आरम्भ किया। आपके हाथों से व्यवसाय को उन्नति

प्राप्त हुई। सुजानगढ़ की पंचपंचायती में व राज में आपका अच्छा सम्मान था। आपका संवत् १९८२ में स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र छगनमलजी, किशनमलजी एवं मानकमलजी इस समय तमाम व्यापार को सम्हालते हैं। सेठ छगनमलजी के पुत्र भँवरमलजी और कुन्दनमलजी व्यापार में भाग लेते हैं तथा नवरतनमलजी, जसवंतमलजी और अमृतमलजी पढ़ते हैं। इसी तरह किशनमलजी के मानमलजी, रणजीतमलजी तथा प्रसन्नमलजी और माणकमलजी के पुत्र मनोहरमलजी हैं। इनमें मानमलजी कारबार में भाग लेते हैं। भँवरमलजी के पुत्र सम्पतलाल और मानमलजी के पुत्र चंचलमल हैं।

सेठ दौलतमलजी—आपके यहाँ जूट और कपड़े का व्यापार होता है। आप संवत् १९८२ में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र सेठ जवरीमलजी, मोहनमलजी, मोतीमलजी एवं सोहनमलजी हैं आप सब सज्जन व्यापार में सहयोग लेते हैं। जवरीमलजी के पुत्र झूमरमलजी, भँवरमलजी, सुपार्श्वमलजी एवं हाथीमलजी हैं। मोहनमलजी के पुत्र शृंगारमलजी, मोतीमलजी के रेवतीमलजी और सोहनमलजी के पुत्र उम्मेदमलजी हैं।

सेठ कानमलजी—आपका व्यापार केसरीमल झूमरमल के नाम से कलकत्ते में था, लेकिन सम्वत् १९७४ में आपके स्वर्गवासी होने के समय आपके पुत्र छोटे थे, अतः वहाँ से व्यापार उठा दिया गया। इस समय आपके पुत्र भोपालमलजी, केसरीमलजी और बहादुरमलजी सुजानगढ़ में रहते हैं।

इस परिवार की ओर से सुजानगढ़ स्टेशन पर एक सुन्दर धर्मशाला बनी हुई है तथा श्मशान भूमि में चारों भाइयों की स्मृति में १ छत्री और मकान बना है।

श्री नैनसुख रामचन्द्र ओसवाल (लोढ़ा) भुसावल

इस परिवार के पूर्वज सेठ दौलतरामजी लोढ़ा, घोड़नदी (पूना) में गल्ले का व्यापार करते थे। इनके पुत्र रामचन्दजी का जन्म संवत् १९२२ में हुआ। आप भी गल्ले की आढ़त का व्यापार और आबकारी तथा सिविल कंट्राक्टिंग का कार्य करते रहे। बहुत पहिले आपने मेट्रिक का इम्तहान पास किया। संवत् १९७० से आप रामचन्द्र दौलतराम के नाम से पूना में व्यापार करते हैं। आपके चुन्नीलालजी, हंसराजजी और नैनसुखजी नामक ३ पुत्र हैं।

श्री चुन्नीलालजी लोढ़ा २२ सालों तक बम्बई प्रेसीडेण्सी में सब रजिस्ट्रार रहे। इधर २ सालों से रिटायर्ड हो कर पूना में रहते हैं। आपके छोटे भाई हंसराजजी ने २॥ सालों तक फ्रांस और मेसोपोटामियाँ में मिलटरी अकाउन्ट डि० में सर्विस की। वहाँ से आप पूना आये और इस समय अपने पिताजी के साथ व्यापार में सहयोग लेते हैं। इनसे छोटे भाई नैनसुखजी ओसवाल ने सन् १९२६ में एल० एल०बी०

की डिगरी हासिल की और उसके दो साल बाद से आप भुसावल में प्रेक्टिस करते हैं। आप शुद्ध खद्दर धारण करते हैं तथा भुसावल के प्रतिष्ठित वकील हैं।

श्री नन्दूबाई ओसवाल—आप श्री नैनसुखजी ओसवाल की धर्मपत्नी एवं सेठ धौंडीरामजी खींवसरा की कन्या रत्न हैं। ओसवाल समाज की इनीगिनी शिक्षित रमणियों में आपका नाम अग्रगण्य है। वैसे तो आपका शिक्षण मराठी चौथी कक्षा तक ही हुआ है, पर आपके पिताजी की स्त्री-शिक्षा की ओर विशेष अभिरुचि होने से आपने पठन पाठन द्वारा अपने अध्ययन को अच्छा बढ़ाया है। आप महाराष्ट्र प्रान्तीय जैन स्त्री परिषद् के मालेगाँव अधिवेशन की सभानेत्री थीं। आपने ओसवाल नवयुवक के मारवाड़ी महिलांक का सम्पादन किया था। आप शुद्ध खद्दर धारण करती हैं तथा परदा के समान जघन्य प्रथा की विरोधी हैं। आपके धार्मिक तथा सामाजिक सुधार विषयक लेख हिन्दी और मराठी के पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं।

सेठ आलमचंद शोभाचंद लोढ़ा, हिंगनघाट

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान नागोर (मारवाड़) का है। सब से प्रथम इस खानदान के पूर्व पुरुष सेठ आलमचन्दजी ने ८० वर्ष पूर्व हिंगनघाट में आकर अपनी फर्म स्थापित की थी। आपके पुत्र शोभाचन्दजी के हाथों से इस फर्म की उन्नति हुई। इनके जेठमलजी तथा हरकचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से सेठ जेठमलजी का सं १९८५ में स्वर्गवास हो गया है। आप बड़े धार्मिक पुरुष थे। स्थानकवासी रत्न चिंतामणि सभा के आप संचालक थे। आपके रिखबदासजी नामक एक पुत्र हैं।

इस समय इस फर्म के संचालक सेठ हरकचन्दजी तथा रखबदासजी हैं। आपकी फ़र्म पर सराफी का व्यापार होता है। आप लोगों ने हिंगनघाट के स्थानक में ३०००) तथा पाथरड़ी जैन पाठशाला में ५००) की सहायता प्रदान की है। इसी प्रकार और भी सार्वजनिक कार्य्यों में देते रहते हैं।

सेठ चुन्नीलाल लूणकरण लोढ़ा चांदा

इस परिवार का निवास तींवरी (जोधपुर स्टेट) है। आप मन्दिर मार्गीय आम्नाय के मानने वाले सज्जन हैं। चाँदा में सेठ लूणकरणजी लोढ़ा ने लगभग ५० साल पहिले इस दुकान का स्थापन किया, आप बात के बड़े पक्के पुरुष थे और यहां के व्यापारिक समाज में अच्छी इज्जत रखते थे। आपका शरीरान्त ता॰ २० मार्च सन् १९३३ को हुआ। आपके पुत्र लोढ़ा सौभागमलजी तथा मोतीलालजी फर्म के व्यापार को भली प्रकार संचालित कर रहे हैं। सौभागमलजी का जन्म संवत् १९५९ में हुआ।

आपके यहाँ चांदा में चुन्नीलाल लूणकरण के नाम से आढ़त, रूई तथा सूती कपड़े का व्यापार होता है तथा वणी, आसिफाबाद (मुगलाई) और कुन्ना पेंठ (निजाम) में सौभागमल मोतीलाल के नामसे कपड़ा चाँदी सोना और किराने का काम काज होता है। यह फर्म यहाँ के व्यापारिक समाज में उत्तम प्रतिष्ठा रखती है।

सेठ मोतीलाल रतनचंद, लोढ़ा, मनमाड

इस परिवार के पूर्वज लोढ़ा छजमलजी लगभग १०० । १२५ वर्ष पूर्व अपने मूल निवास स्थान बड़ी पादू (जोधपुर स्टेट) से व्यापार के निमित्त मनमाड आये। तथा छजमल सखाराम के नाम से दुकान स्थापित की। आपके मगनीरामजी, हीराचन्दजी, भींवराजजी तथा सखारामजी नामक ४ पुत्र हुए। इन बंधुओं का व्यापार लगभग संवत् १९२० में अलग अलग हुआ।

सेठ सखारामजी लोढ़ा ने इस दुकान के व्यापार को बहुत तरक्की दी। आप आस पास के ओसवाल समाज में नामांकित व्यक्ति थे। संवत् १९४७ में सेठ नेनसुखदासजी नीमाणी के प्रयास से जो नाशिक में "ओसवाल हितकारिणी सभा" भरी थी, उसमें आप एक दिन के सभापति बनाये गये थे। आपकी दुकान मनमाड के ओसवाल समाज में नामांकित दुकान थी। संवत् १९५० में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र रतनचंदजी संवत् १९६० में स्वर्गवासी हुए। इस समय इनके पुत्र मोतीरामजी विद्यमान हैं। लोढ़ा मोतीरामजी का जन्म संवत् १९५५ में हुआ। आप भी मनमाड में अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं तथा जातीय सुधार के कामों में भाग लेते रहते हैं। आपके यहां आसामी लेनदेन का काम होता है।

इसी तरह इस परिवार में इस समय मगनीरामजी के पौत्र (मुलतानमलजी के पुत्र) भनराज जी और हीराचन्दजी के पौत्र (बनेचन्दजी के पुत्र) फूलचन्दजी किराने का व्यापार करते हैं।

सेठ मुलतानमल अमोलकचन्द लोढ़ा, कातर्णी (येवला)

इस परिवार का मूल निवास बड़ी पादू (जोधपुर स्टेट) है। देश से सेठ रामसुखजी और अमोलकचन्दजी दोनों भ्राता लगभग ९० साल पूर्व नासिक जिले के कातर्णी नामक स्थान में आये। पीछे से सम्वत् १९३५ में इनके तीसरे भ्राता अमोलकचन्दजी भी कातर्णी आ गये। सेठ अमोलकचन्दजी के चांदमलजी, मुलतानमलजी, हीराचन्दजी तथा रतनचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें चांदमलजी और रतनचन्दजी विद्यमान हैं। सेठ चांदमलजी रामसुखजी के नाम पर दत्तक गये हैं। आपका कारबार सम्वत् १९७८ में अलग हुआ।

सेठ रतनचन्दजी का जन्म संवत् १९४६ में हुआ। आपके बड़े भ्राता मुलतानमलजी ने इस दुकान के व्यापार और सम्मान को विशेष बढ़ाया। आप आस पास की ओसवाल समाज में सम्माननीय व्यक्ति थे। आप संवत् १९८७ में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र मोतीलालजी और गणेशमलजी हैं। हीराचन्दजी के नाम पर ताराचन्दजी दत्तक लिये गये हैं। सेठ रतनचन्दजी आस पास की ओसवाल समाज में अच्छी इज्जत रखते हैं। आपके यहाँ मुलतानचन्द अमोलकचन्द के नाम से लेन देन और कृषि कार्य्य होता है। आप तेरापंथी आम्नाय के मानने वाले सज्जन हैं। आपके पुत्र दीपचन्दजी, मोहनलालजी और सुखलालजी हैं।

इसी तरह चांदमलजी के यहाँ चांदमल रामसुख के नाम से व्यापार होता है। आपके पुत्र देवीचन्दजी, लक्ष्मीचन्दजी, किशनदासजी, चम्पालालजी तथा दुलीचन्दजी हैं।

सेठ जेठमल जोगराज लोढ़ा, त्रिचनापल्ली

इस परिवार का मूल निवास फलोदी (जोधपुर स्टेट) में है। आप मन्दिर मार्गीय आम्नाय के मानने वाले सज्जन हैं। इस परिवार के पूर्वज सेठ अखेचन्दजी के पुत्र प्रेमराजजी थे। इनके मोतीलालजी और देवीचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ देवीचन्दजी लोढ़ा फलोदी में रहते थे। वहीं से कलकत्ते के साथ अफीम की पेटियों के वायदे का धंधा करते थे। संवत् १९६४ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके जेठमलजी, अगरचंदजी और जोगराजजी नामक तीन पुत्र हुए। जेठमलजी का संवत् १९५८ में स्वर्गवास हुआ। आपकी धर्मपत्नी ने दीक्षा ग्रहण की।

देश से व्यापार के लिये सेठ जोगराजजी लोढ़ा सम्वत् १९८० में त्रिचनापल्ली आये और आपने अगरचन्द साहूकार के नाम से गिरवी का व्यापार आरम्भ किया। आप बड़े मिलनसार और सरल स्वभाव के सज्जन हैं। आपकी बड़ी बहन श्री सोनीबाई ने सम्वत् १९५५ में मुनि सुखसागरजी महाराज के समुदाय में दीक्षा ग्रहण की। इनका नाम सौभाग्यश्रीजी था। सम्वत् १९७५ में इनका स्वर्गवास हो गया।

सम्वत् १९८३ में सेठ अगरचन्दजी का स्वर्गवास हो गया। अतः जोगराजजी ने उनका भाग निकालकर अपने नाम से धन्धा चालू किया। जेठमलजी के कोई सन्तान नहीं थी, अतएव उनके उत्तराधिकारी आप ही हुए। आप इस समय त्रिचनापल्ली पांजरापोल के प्रेसिडेण्ट हैं। सेठ अगरचन्दजी के पुत्र उम्मेदमलजी और बालचन्दजी फलोदी में पढ़ते हैं। आपके यहाँ फलोदी में हुंडी चिट्ठी का काम होता है।

राय साहब लाला टेकचंदजी का खानदान, जंडियाला गुरु

इस खानदान के लोग श्री जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी आम्नाय के हैं। आप लोग मूल निवासी अजमेर के हैं। वहाँ से आप लोग पंजाब के कसेल नामक गांव में आकर बस गये। वहाँ पर इस

खानदान की बहुतसी जमीन-जायदाद थी और अब भी इस खानदान के पूर्वजों की "बाबा बैरागी" नामक समाधी बनी हुई है, जहाँ पर आज इस खानदान के बालकों का मुण्डन संस्कार होता है। इस खानदान का कसेल में भावड़यानी नामक विशाल मकान बना हुआ है।

कसेल से करीब १५० वर्ष पहले इस खानदान के पूर्वज लाला नन्हूमलजी जण्डियालागुरु में आकर बसे और तभी से आपका परिवार यहीं पर निवास कर रहा है। यहाँ के गुरुओं ने आदर सहित आपको अपना साहूकार बनाया और बहुत सी जमीन व जायदाद प्रदान की।

लाला नन्हूमलजी के लाला देवीसहायजी नामक एक पुत्र हुए। लाला देवीसहायजी के लाला भवानीदासजी, गुलाबरायजी तथा महताबरायजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से यह परिवार लाला गुलाबरायजी का है। आप बड़े धार्मिक और शांतिप्रिय सज्जन थे। आपके लाला परमानन्दजी नामक पुत्र हुए। आप बड़े धार्मिक सज्जन थे। आपके समय में इस खानदान के सब भाई अलग अलग हो गये। अतः आपको सब कारबार अकेले ही करना पड़ता था। आपका संवत् १९३५ में स्वर्गवास हो गया है। आपके लाला मेहरचन्दजी नामक पुत्र हुए।

लाला मेहरचन्दजी का जन्म संवत् १९०७ में हुआ। आप भी धर्मध्यानी व साधु संतों की सेवा में लगे रहते थे। आपका संवत् १९८५ में स्वर्गवास हुआ। आपके दौगरमलजी, राय साहब लाला टेकचन्दजी, नेतरामजी एवं नन्दलालजी नामक चार पुत्र हुए।

लाला दौगरमलजी का जन्म संवत् १९३० में हुआ। आपने अल्पायु से ही व्यापार में हाथ डाल दिया था। आप बड़े व्यापार कुशल और मशहूर व्यक्ति थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९७९ में घोड़े से गिरने के कारण हो गया। आपके छः पुत्र हैं जिनके नाम मुलखराजजी, हँसराजजी, देशराजजी, बंसीलालजी, रोशनलालजी और माणकचन्दजी हैं।

राय साहब लाला टेकचन्दजी का जन्म संवत् १९३८ में हुआ। आप इस खानदान में बड़े नामी और प्रसिद्ध व्यक्ति हैं। आपकी समाज सेवा सारे पंजाब में प्रसिद्ध है। आपने २१ फरवरी सन् १९०९ में पंजाब की सुप्रसिद्ध स्थानकवासी जैन सभा की स्थापना की और आप ही उसके जनरल सेक्रेटरी हुए। इसका प्रथम अधिवेशन भी जण्डियाले में हुआ। उसी साल जण्डियाले में एक गौशाला की स्थापना हुई, जिसके प्रधान आप ही बनाये गये और करीब २४ वर्ष तक यह संस्था आपके नेतृत्व में चलती रही। सन् १९१० में आप जण्डियाले की म्युनिसीपालिटी के कमिश्नर चुने गये और अभी तक उसी स्थान पर कायम हैं। सन् १९१० में मेम्बर होने के कुछ ही दिनों पश्चात् आप म्यु० पे० के व्हाइस प्रेसिडेण्ट चुने गये। उसके बाद बहुत समय तक आप उसके ऑनरेरी सेक्रेटरी और सन् १९२१ से

१९३१ तक उसके प्रेसिडेण्ट भी रहे। इसके अतिरिक्त आप अमृतसर डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के पहले भी तीन साल तक मेम्बर रहे और अब भी मेम्बर हैं। आप बड़े उत्साही और सार्वजनिक कार्यों में बड़ी दिलचस्पी से भाग लेने वाले सज्जन हैं। स्थानीय म्युनिसीपालिटी में आपकी सेवाएँ बड़ी बहुमूल्य समझी गईं। यहाँ तक कि हिज एक्सलेंसी गवर्नर सर जाफरे डि० माउण्ट मौरोसो ने सन् १९२९ में जण्डियाले में दरबार करके अपने भाषण में पंजाब की म्युनिसीपालिटियों को राय साहब टेकचन्दजी की सेवाओं का अनुकरण करने की सलाह दी थी। इसी सम्बन्ध में आपको दो तीन खिलअतें भी प्राप्त हुईं। सन् १९२७ में गवर्नमेंट ने आपको "राय साहिब" की उपाधि से विभूषित किया।

सन् १९२९ तक आप पंजाब सभा के जनरल सेक्रेटरी रहे और उसके बाद आप उसके सभापति हो गये, जो अब तक हैं। इसके अलावा आप अखिल भारतवर्षीय जैन स्थानकवासी सम्मेलन के प्रांतिक सेक्रेटरी एवं उसकी स्टेंडिंग कमेटी में पंजाब प्रांत की ओर से प्रतिनिधि हैं। आप ही ने पंजाब के स्थानक वासियों के झगड़ों को निपटाने में मुख्य भाग लिया था। साधु-सम्मेलन अजमेर की कार्यवाही में भी आपका प्रमुख भाग था। आप बड़े समाज सुधारक और साहसी व्यक्ति हैं। आपने अनेक विरोधों का सामना करते हुए भी पंजाब प्रान्त में दस्सा और बीसा फिरकों में बेटी व्यवहार चालू होने का रास्ता खुला किया। सारे पंजाब के जैन समाज में आप प्रतिष्ठित व्यक्ति माने जाते हैं। आपके इस समय लाला जगन्नाथजी और लाला अमृतलालजी नामक २ पुत्र हैं। लाला अमृतलालजी ने बी० ए० एल० एल० बी० की सनद हासिल की है। बी० ए० में आपका ब्रिलियंट केरेक्टर रहा। आप लाहौर के अमर जैन होस्टल में असिस्टेंट सुपरिंटेण्डेण्ट और महावीर जैन एसोशिएसन के वाइस प्रेसिडेण्ट रहे। इसी तरह के सार्वजनिक कामों में आप हिस्सा लेते रहते हैं। आपके पुत्र नरेन्द्रकुमार तथा जैनेन्द्रकुमार हैं। लाला अमृतलालजी के छोटे भ्राता जगन्नाथजी अपनी फर्म का चाँदी सोने का व्यापार सम्हालते हैं।

लाला नेतरामजी का जन्म १९४५ में हुआ। आप योग्य पुरुष और डिस्ट्रिक्ट दरबारी हैं। आपके बड़े पुत्र लाला मदनलालजी बड़े उत्साही व्यक्ति हैं। तथा तमाम दुकानों का काम बड़ी होशियारी से चलाते हैं। इनके भाई मूलचन्दजी तथा प्रकाशचन्दजी भी व्यापार में भाग लेते हैं। लाला नन्दलालजी का जन्म सं० १९५२ में हुआ। आप जंडियाला जैन मित्र मंडल के सेक्रेटरी, गौशाला और मर्चेण्ट एसोशियेसन के वाइस प्रेसिडेण्ट हैं। आप चाँदी सोने का व्यापार करते हैं। इनके कपूरचन्दजी सरदारीलालजी और सत्यकुमारजी नामक ३ पुत्र हैं। लाला कपूरचन्दजी ने वीविंग इस्टीट्यूट अमृतसर से डिप्लोमा प्राप्त किया है। आपको वीविंग सम्बन्ध में लन्दन से २ सार्टिफिकेट मिले हैं।

इस समय इस परिवार की जण्डियाले में ५ दुकानें हैं, जिन पर कपड़ा चाँदी सोना मनी लेंडिंग

बर्तन आदि का व्यापार होता है। यहाँ आप लोगों का जैन वीविंग वर्क्स नामक कारखाना है। जिसमें सिल्की कपड़ा तैयार होता है। गर्मियों में आपकी ब्राँच मसूरी में भी रहती है। साधु मुनिराजों की सेवा सत्कार में यह परिवार काफ़ी सहयोग लेता है।

लाला नरातारामा हंसराज लोढ़ा, रायकोट (पंजाब)

यह परिवार कई पुश्तों से रायकोट में निवास करता है। इस खानदान के बुजुर्ग लाला खुशीरामजी साहूकारे का काम करते थे। संवत् १९६० में इनका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र लाला काशीरामजी ने अपनी तिजारत और इज्जत को काफ़ी बढ़ाया। आप २० सालों तक रायकोट म्युनिसिपैलेटी के मेम्बर रहे। सं० १९७९ में ६१ साल की उमर में आप सर्गवासी हुए। आपके तुलसीरामजी, नराताराम्जी, पूरनमलजी और किशोरीलालजी नामक ५ पुत्र विद्यमान हैं। पांचवें पुत्र सोहनलालजी स्वर्गवासी हो गये हैं। संवत् १९६५ में इन सब भाइयों का कारबार अलग २ हुआ।

लाला नराताराममजी के यहाँ नराताराम हँसराज के नाम से बैङ्किंग व साहुकारी व्यापार होता है। आप रायकोट की जैन बिरादरी के चौधरी हैं और यहाँ के व्यापारिक समाज में अच्छी इज्जत रखते हैं। आपने जैन गुरुकुल पंचकूला में एक कमरा बनवाया है और आप उसकी मैनेजिंग कमेटी के मेम्बर हैं। आप गुरुकुल के कामों में इमदाद पहुँचाते रहते हैं। आपके छोटे भ्राता पूरनचन्दजी, रायकोट म्युनिसिपेलिटी के वाइस प्रेसिडेण्ट हैं। लाला नराताराममजी के पुत्र हंसराजजी और चिरंजीलालजी हैं। हंसराजजी उत्साही युवक हैं, इनके हेमचन्दजी, चिमनलालजी और बलवन्तरायजी नामक ३ पुत्र हैं।

लाला तुलसीरामजी के यहाँ तुलसीराम चुन्नीलाल के नाम से कारबार होता है। इनके पुत्र चुन्नीलालजी, मुन्नीलालजी, अमरनाथजी और शांतिनाथजी तथा पूरनचन्दजी के पुत्र रामलालजी, वचनलालजी और किशोरीलालजी के टेकचन्दजी हैं।

लाला चंदनमल रतनचंद का खानदान अम्बाला

इस खानदान के पूर्वज पहले सुनाम (पटियाला) में रहते थे। वहाँ से आप लोग अम्बाला में आये और तभी से वहाँ पर निवास कर रहे हैं। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर मार्गीय हैं। इस खानदान में ला० गुलाबरायजी हुए। इनके पुत्र जमनादासजी के पुन्नौमलजी, कन्हैयालालजी, चढ़ती-मलजी तथा गौनमलजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें से यह खानदान लाला कन्हैयालालजी का है।

लाला कन्हैयालालजी के बसंतामलजी नामक एक पुत्र हुए। आपकी स्मृति में जैन मन्दिर

के पास एक धर्मशाला बनवाई गई तथा आपकी धर्मपत्नी की स्मृति में आत्मानंद जैन कन्या पाठशाला क एक मकान दिया गया। आपके उत्तमचंदजी, चंदनमलजी तथा रतनचंदजी नामक तीन पुत्र हुए। लाला उत्तमचंदजी और चंदनमलजी योग्य तथा धार्मिक व्यक्ति हैं।

लाला रतनचंदजी बड़े समझदार सज्जन हैं। इस समय आप श्री आत्मानंद जैन हॉईस्कूल कमेटी के प्रेसिडेंट, कन्या पाठशाला के प्रेसिडेंट, आत्मानंद जैन महासभा के कोषाध्यक्ष, हस्तिनापुर तीर्थ कमेटी के कोषाध्यक्ष तथा अम्बाला प्रिजनर्स सोसायटी के डायरेक्टर हैं। राज्य में भी आपका काफी सम्मान है। आप यहाँ के डिस्ट्रिक्ट दरबारी हैं। आप प्रायः सभी धार्मिक संस्थाओं में दान देते रहते हैं। आप के यहाँ चांदी, सोना व कमीशन एजेन्सी का काम होता है। यहाँ पर आपकी काफी जायदाद है।

राजसिंहजी लोढ़ा का परिवार, बनेड़ा

इस परिवार का मूल निवास स्थान मॉंडलगढ़ है। वहाँ यह परिवार बड़ा सम्माननीय समझा जाता है। मांडलगढ़ से राजसिंहजी लोढ़ा बनेड़ा आये। यहाँ के अधिपति ने आपको रेवेन्यू डिपार्टमेण्ट की व्यवस्था का कार्य्य सौंपा। आपके पुत्र उम्मेदसिंहजी भी बनेड़ा में सर्विस करते रहे। उदयपुर महाराणा की ओर से इस परिवार को 'नगर सेठ" की पदवी प्राप्त है तथा यह कुटुम्ब बनेड़ा की जनता और वहाँ की ओसवाल जाति में आदरणीय माना जाता है।

उम्मेदसिंहजी लोढ़ा के पुत्र जसवन्तसिंहजी लोढ़ा की आयु इस समय २३ साल की है। आपने उदयपुर हॉई स्कूल से मेट्रिक, सनातन धर्म कॉलेज कानपुर से कामर्स की इन्टरमीजिएट और कलकत्ता यूनिवर्सिटी से बी कॉम की परीक्षाएँ पास कीं। इस वर्ष आप आगरा यूनिवर्सिटी के प्रीवियस एल० एल० बी और बम्बई के जी० डी० ए० इम्तहान में बैठे हैं। आपने अपने पैरों पर खड़े रह कर उच्च शिक्षा प्राप्त की है। इस समय आप भण्डारी विद्यालय इन्दौर में कामर्स के अध्यापक हैं।

डढ्ढा

डढ्ढा गौत्र की उत्पत्ति

दसवीं शताब्दी में सोलंकी वंश में सिद्धराज जयसिंह नामक एक नामी व्यक्ति हुए, जिन्होंने पालनपुर से १९ मील की दूरी पर गुजरात में सिद्धपुरपाटन नामक नगर वसाया था। इनके पुत्र कुमार पाल ने सन् ११६० में जैन धर्म अंगीकार किया। इसके अनंतर इनके पौत्र राजा नरवाण ने पुत्र प्राप्ति की इच्छा से श्री भट्टारक धनेश्वरसूरिजी की खूब आवभगत की तथा अपनी मनोकामना पूर्ण होने पर जैन धर्म स्वीकार करने का वचन दिया। श्री धनेश्वरसूरिजी महाराज ने अम्बादेवी का स्मरण किया और इन्हें आशीर्वाद देकर आश्वासन दिया। ठीक समय में इनके एक पुत्र उत्पन्न हुआ और इन्होंने भी जैन धर्म की दीक्षा ली। तभी से इनकी कुलदेवी अम्बादेवी हुई जो आज तक इस खानदान में मानी जाती हैं। उस समय राजा नरवाण तथा इनके वंशज "श्रीपति" इस गौत्र से पुकारे जाते थे।

इनके वाद तेलपादजी नामक एक राजा हुए, जिन्होंने सोलह गांवों में भगवान महावीर तथा भगवान ऋषभदेव के मन्दिर वनवाये। ऐसा कहा जाता है कि एक समय जब ये मंदिर तयार करवाने जा रहे थे, इन्होंने इनकी नीमों में तेल और घी के सैकड़ों डब्बे कुढ़वाये जिससे इस खानदान का गौत्र "तिलेरा" प्रसिद्ध हुआ। इनकी २९वीं पीढ़ी में सारंगदासजी हुए, जिन्होंने जैसलमेर छोड़कर जोधपुर से ८० मील उत्तर की ओर बसे हुए फलौदी को अपना निवासस्थान बनाया। ये वड़े वहादुर और साहसी थे। इन्होंने भारत के कई स्थानों में व्यापार के लिए यात्रा की तथा इसी सिलसिले में सिंध की ओर भी गये। यहाँ पर सिंध के अमीर ने इनकी कार्य कुशलता तथा वहादुरी से प्रसन्न होकर इनका वहुत सन्मान किया। इनका शरीर वहुत गठीला और मजबूत था। इनकी इस लोहे के समान शरीर की मजबूती को देखकर सिंध के अमीर ने इन्हें "ढढ़"* इस नाम से पुकारा था। इस शब्द का सिंधी भाषा में वहादुर यह अर्थ निकलता है। धीरे २ "ढढ़" यह शब्द अपभ्रंश होते २ डढ्ढा इस रूप में परिणत हो गया और इस वंश वाले इसी नाम से पुकारे जाने लगे। कालांतर से यह नाम गौत्र के रूप में परिणत हो गया। सारंगदासजी ने श्री भागचन्दजी महाराज के उपदेश से संवत् १७१७ में लुँकागच्छ अंगीकार किया था कि जिसे इस वंश वाले आज तक मानते चले आ रहे हैं।

---

* "ढढ़" यह शब्द दृढ़ इस शब्द का अपभ्रंश रूप प्रतीत होता है।

इन्हीं सारंगदासजी के रघुनाथदासजी और नेतसीजी नामक दो पुत्र हुए। रघुनाथदासजी के परिवार वालों ने फलौदी को ही अपना निवासस्थान कायम रक्खा। नेतसीजी के परिवार वाले कुछ बीकानेर, कुछ जयपुर, कुछ जोधपुर और कुछ अजमेर चले गये। तथा कुछ फलौदी ही में रहकर व्यापार करने लगे। कहना न होगा कि डड्ढा परिवार ने जहाँ २ अपने व्यापारिक केन्द्र स्थापित किये, उन सब स्थानों पर उनकी पोजिशन बहुत ऊँचे दरजे की रही। इन लोगों ने अपनी व्यापारिक प्रतिभा से द्रव्य और राज्य सम्मान दोनों चीजों को प्राप्त किया। इन लोगों के पास तत्कालीन समय के जोधपुर, जैसलमेर तथा बीकानेर के महाराजाओं के दिये हुए ऐसे रुक्के मिलते हैं, जिनसे मालूम होता है कि उस समय के राजकीय वातावरण में इनकी बहुत अच्छी व्यापारिक प्रतिष्ठा जमी हुई थी। जोधपुर और जैसलमेर राज्य की ओर से आप लोगों को चौथाई महसूल की माफी दी गई थी। अस्तु, अब हम नीचे रघुनाथसिंहजी और नेतसीजी के परिवार का वर्णन करते हैं।

डड्ढा रघुनाथदासजी का खानदान

(सेठ सुगनमलजी लालचन्दजी डड्ढा, फलौदी)

डड्ढा रघुनाथदासजी के तीन पुत्र हुए जिनमें से तीसरे पुत्र अनोपचन्दजी के वंश में आगे चलकर क्रमशः जीवराजजी, पीरचन्दजी, कपूरचन्दजी, किशनचन्दजी और माणिकचन्दजी हुए। इनमें माणिकचन्दजी के शाह सुगनमलजी, मगनचन्दजी और अगरचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। संवत् १६९५ में इस खानदान वाले जैसलमेर से चलकर फलौदी (मारवाड़) में जा बसे और तभी से इस परिवार वाले फलौदी में ही निवास करते हैं।

शाह सुगनमलजी डड्ढा—आपका जन्म संवत् १९२२ में हुआ। संवत् १९५७ में आपने व्यापार के निमित्त मद्रास प्रान्त की ओर प्रस्थान किया तथा इसी वर्ष मद्रास में बैंकिङ्ग कारबार की फर्म स्थापित की। आपके लक्ष्मीचन्दजी, सौभागमलजी तथा लालचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए।

लक्ष्मीचन्दजी डड्ढा—डड्ढा लक्ष्मीचन्दजी का जन्म संवत् १९२९ में हुआ था। आप बड़े व्यापार कुशल, अनुभवी, योग्य तथा समझदार सज्जन थे। सर्व प्रथम आपने संवत् १९७० में अपने भाइयों के साथ मद्रास में 'केमिस्ट एण्ड ड्रगिस्ट' की एक फर्म स्थापित की। इस फर्म के व्यवसाय को आपने अपनी व्यापार चातुरी तथा बुद्धिमानी से बहुत चमकाया। इस फर्म पर आपकी कार्य कुशलता तथा योग्य संचालन से दवाइयों का काम बड़ी तीव्र गति से बढ़ने लगा और कुछ ही वर्षों बाद यह फर्म इस व्यवसाय को बहुत बड़े स्केल पर करने लगी। इस समय यह फर्म सारे मद्रास में सबसे बड़ी तथा मशहूर

केमिस्ट एण्ड ड्रगिस्ट है और सारे भारत के दवाई के व्यवसाइयों में दूसरा स्थान रखती है। इस फर्म के द्वारा न केवल मद्रास प्रान्त में ही वरन् दूर २ के प्रदेशों में तथा मैसूर, ट्रावनकोर, कोचीन, पदुकोटा आदि देशी रियासतों मे भी बहुत बड़े स्केल पर औषधियाँ सप्लाय की जाती हैं। इस प्रकार व्यापार में अत्यन्त सफलता प्राप्त कर आपका संवत् १९८३ की श्रावण सुदी ४ को स्वर्गवास हुआ।

डड्ढा सौभागमलजी का सम्वत् १९४५ में जन्म हुआ था। आपने अपने ज्येष्ठ भ्राता लक्ष्मीचन्दजी के साथ व्यापार में सहयोग दिया। आप संवत् १९८६ में स्वर्गवासी हुए।

श्री लालचन्दजी डड्ढा—आपका जन्म सम्वत् १९५५ के चैत वदी १ को हुआ। आप बड़े सरल स्वभाव और उदार हृदय के सज्जन हैं तथा इस समय फर्म के तमाम कारबार को बड़ी बुद्धिमानी के साथ संचालित कर रहे हैं। आपके द्वारा हजारों रुपयों की सहायता चन्दे के रूप में कई अच्छी २ संस्थाओं और जैन मन्दिरों आदि को दी गई हैं। आप बड़े कर्मवीर और उद्योगी पुरुष हैं आपके पुत्र मिलापचन्दजी हैं।

यह परिवार फलौदी व जोधपुर स्टेट के प्रधान २ धनिक कुटुम्बों में माना जाता है। फलौदी में इसकी बहुतसी स्थाई सम्पत्ति है।

शाह सुगनमलजी डड्ढा के छोटे भ्राता शाह अगरचन्दजी के तीन पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः श्री अमरचन्दजी, गोपीचन्दजी और कल्याणचन्दजी हैं। आप अपना स्वतंत्र व्यवसाय करते हैं।

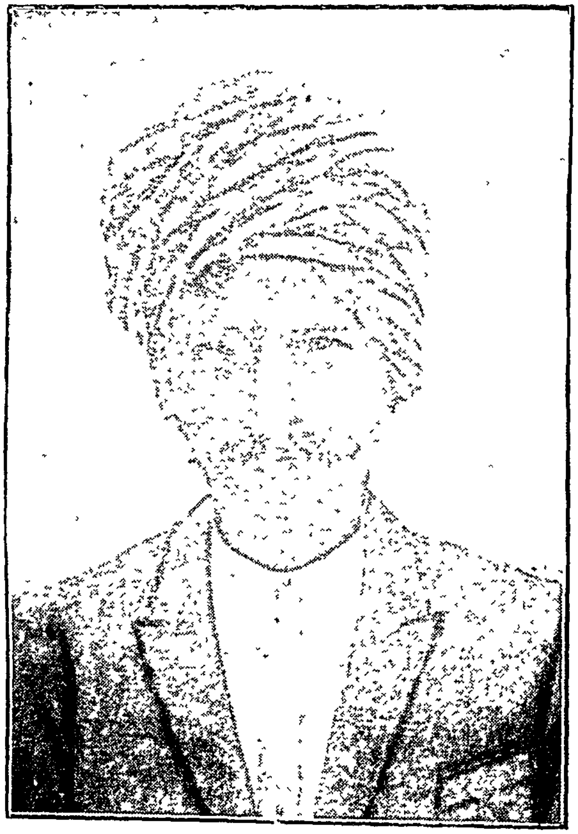
रघुनाथसिंहजी के छोटे भाई नेतसीजी के छः पुत्र हुए जिनके नाम खेतसीजी, वर्द्धमानजी, अभयराजजी, हेमराजजी, खींवराजजी और बच्छराजजी था। इनमें खेतसीजी के रतनसीजी, तिलोकसीजी, विमलसीजी और करमसीजी नामक चार पुत्र हुए।

सेठ तिलोकसीजी बड़े बहादुर और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। रियासत से अनबन हो जाने के कारण आप संवत् १७२४ में फलौदी से बीकानेर चले गये। बीकानेर के तत्कालीन महाराजा ने आपका बड़ा सत्कार किया। बीकानेर में आपने अपने व्यापार को खूब चमकाया, और यातायात के साधनों से रहित उस युग में भी सुदूरवर्त्ती बनारस शहर में तिलोकसी अमरसी नथमल के नाम से अपनी फर्म स्थापित की। आपके चार पुत्र हुए, जिनके नाम क्रमसे पदमसीजी, धरमसीजी, अमरसीजी और टीकमसीजी था।

सेठ पदमसीजी नेनसीजी का खानदान

(सेठ सौभागमल जी डड्ढा अजमेर,)

सेठ तिलोकसीजी के पश्चात् सेठ पदमसीजी ने स्वतन्त्ररूप से अपने कारबार का संचालन किया। आपने इन्दौर में अपनी शाखा स्थापित की। इन्दौर की राज माता अहिल्याबाई की आप पर



स्व० श्री लछमीचन्दजी ढड्ढा, फलौदी.



श्री लालचन्दजी ढड्ढा, फलौदी.



स्व० श्री सौभागमलजी ढड्ढा, फलौदी.



कुं० मिलापचन्दजी S/o लालचंदजी ढड्ढा, फलौदी.

बड़ी कृपा थी। ऐसा कहा जाता है कि आप उनके राखीबन्द भाई थे। उस समय इस फर्म का इन्दौर में बड़ा प्रभाव था। आपका स्वर्गवास संवत् १८७५ में हुआ। आपके शवदाह घाट दरवाजा स्थान पर जयपुर में हुआ वहां आपकी छत्री बनी हुई है।

आपके राजसीजी, प्रतापसीजी और तेजसीजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें सेठ राजसीजी—जिनका दूसरा नाम जेठमलजी भी था—का देहान्त संवत् १८६१ में आपने पिताजी की मौजूदगी में ही हो गया था। आपके दाह स्थान पर भी घाट दरवाजे पर एक चबूतरा बना हुआ है। आपके छोटे भाई तेजसीजी हुए।

सेठ तेजसीजी ने बीकानेर के गोगा दरवाजे के मन्दिर के निकट एक विश्रान्ति गृह बनाया तथा इस मन्दिर पर कलश चढ़या। आपने जयपुर के सांगानेर दरवाजे के पास एक पार्क की नींव डाली जिसमें आगे जाकर आपके पुत्र सदासुखजी ने एक विष्णु का मन्दिर बनवाया। इस पार्क और मन्दिर के बनवाने में करीब ७५०००) खर्च हुआ होगा। आपके नैनसुखजी नामक एक पुत्र हुए।

डड्ढा नैनसीजी एक नामांकित पुरुष हुए। उस समय इस परिवार की "पदमसी नैनसी" के नाम से बड़ी प्रसिद्ध फर्म थी। इस फर्म की कई स्थानों पर शाखाएँ खुली हुई थीं। इस फर्म का व्यापार उस समय बहुत चमका हुआ था और कई रियासतों से इसका लेन देन भी होता था। इस फर्म के नाम से कई रियासतों ने रुक्के प्रदान किये हैं जिनसे मालूम होता है कि यह फर्म उस समय बड़ी प्रतिष्ठित तथा बहुत ऊँची समझी जाती थी। इन्दौर नगर में इस फर्म का बहुत प्रभाव था। यह फर्म यहां के ११ पंचों में सर्वोपरि तथा अत्यन्त प्रतिष्ठित मानी जाती थी। इन्दौर—स्टेट में भी इसका अच्छा सम्मान था। महाराजा काशीराव तथा तुकोजीराव होलकर बहादुर के समय तक इस फर्म का व्यवसाय बहुत चमका हुआ था। इस फर्म के नाम पर उक्त नरेशों ने कई रुक्के प्रदान किये हैं जिनमें व्यवसायिक वार्तों के अतिरिक्त इस फर्म के साथ अपना प्रेमपूर्ण सम्बन्ध होने का जिक्र भी किया है। इस फर्म को उक्त परिवार के सज्जनों ने बड़ी योग्यता एवं व्यापार चातुरी से संचालित किया था।

नैनसीजी के पश्चात् उनके पुत्र उदयमलजी हुए इनके समय में संवत् १९१६ में यह परिवार जयपुर से अजमेर चला आया और तभी से इस परिवार के सज्जन अजमेर में ही निवास करते हैं।

सेठ उदयमलजी के कोई सन्तान न होने से संवत् १९२७ में फलौदी से सेठ चंदनमलजी डड्ढा के पुत्र सौभाग्यमलजी आपके नाम पर दत्तक आये। बीकानेर नरेश को आपने एक कंठी भेंट की। इससे दरबार ने प्रसन्न होकर आपको व्यापार की चीजों पर सायर का आधा महसूल तथा घरू खर्च की

चीजों पर सायर का पूरा महसूल माफ कर सम्मानित किया। इतना ही नहीं आपको अपने नौकरों के लिये दीवानी तथा फौजदारी के अधिकार भी दिये। आप इस परिवार में बड़े नामाङ्कित व्यक्ति हो गये हैं। आपने पुष्कर में एक हवेली तथा पुष्कर के रास्ते में एक सुन्दर बगीचा बनवाया जो आज भी आपकी अमरकीर्ति का द्योतक है आपने इसी प्रकार कई सार्वजनिक कार्यों तथा परोपकारी संस्थाओं को खुले हृदय से दान दिया। यहां के विक्टोरिया हॉस्पिटल को भी आपने अच्छी सहायता प्रदान की। आपके इन कार्यों से प्रसन्न होकर ब्रिटिश गवर्नमेंट ने आप को सन् १८९५ में "रायबहादुर" के सम्माननीय खिताब से विभूषित किया। ब्रिटिश गवर्नमेण्ट और देशी रियासतों पर आपका बहुत अच्छा प्रभाव रहा। आपको गवर्नमेण्ट की ओर से सैकड़ों सार्टीफिकेट प्राप्त हुए, जिनमें आपकी व्यापारिक प्रतिभा और आपके सुन्दर व्यवहार की बहुत प्रशंसा की गई है। उस समय आप कई रियासतों और रेसिडेन्सियों के बैङ्कर थे और कई स्थानों पर आपके शाखाएँ थी। आपके वृद्धावस्था में अधिक बीमार रहने से अपकी फर्म का काम कच्चा रह गया। आपका स्वर्गवास संवत् १९६० में हुआ।

आपके भी कोई संतान न होने से आपने अपने नाम पर कल्याणमलजी ढड्ढा को दत्तक लिया। इस समय इनके खानदान में आप विद्यमान हैं। आपके पुत्र बन्सीलालजी बी० ए० एल० एल० बी० हैं।

सेठ धरमसीजी का खानदान जयपुर *

(सेठ गुलाबचन्दजी ढड्ढा जयपुर)

सेठ पदमसीजी के छोटे भाई सेठ धरमसीजी के चार पुत्र हुए जिनके नाम क्रमसे कस्तूरचन्दजी, कपूरचन्दजी, किशनचन्दजी और रामचन्दजी था। इनमें से रामचन्दजी के क्रमशः रतनचन्दजी, पूनमचंदजी और सागरचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए शाह सागरचन्दजी के लखमीचन्दजी और गुलाबचन्दजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ गुलाबचन्दजी

आप ओसवाल समाज के अत्यन्त प्रतिष्ठित समाज सेवकों में माने जाते हैं। आपने उस समय में एम० ए० पास किया था जिस समय ओसवाल समाज में कोई भी दूसरा एम० ए० नहीं था। सामाजिक गति विधि के सम्बन्ध में आपके विचार बहुत मंजे हुए और अनुभव युक्त हैं। आप ओसवाल

* आपका कौटुम्बिक परिचय बहुत प्रयत्न करने पर भी हम लोगों को प्राप्त न हो सका। इसलिए जितना हमारी स्मृति में था उतना ही प्रकाशित कर सन्तुष्ट होना पड़ा—लेखक।

जाति की कई बड़ी २ सभाओं के सभापति के आसनों पर प्रतिष्ठित रह चुके हैं। इस वृद्धावस्था में भी आप सामाजिक कार्य्यों में बड़े उत्साह से भाग लेते हैं।

श्री सिद्धराजजी डढ्ढा—आप ओसवाल समाज के अत्यन्त उत्साहित विचारों के नवयुवकों में से एक हैं। आपने बी० ए० एल० एल० बी० तक अध्ययन किया है। जाति सेवा के लिए आपके हृदय में भी बड़ी लगन है। आपके विचार समाज सुधार के सम्बन्ध में बहुत गर्म और छलकते हुए हैं। सामाजिक सभा सोसायटियों में आप भी बहुत उत्साह से भाग लेते हैं।

सेठ अमरसी सुजानमल का खानदान, बीकानेर

(सेठ चांदमलजी डढ्ढा सी० आई० ई०)

सेठ अमरसीजी तिलोकसीजी के तीसरे पुत्र थे। आपभी अपने पिता की ही तरह बुद्धिमान और व्यवहार कुशल पुरुष थे। आपने अपने व्यापार की वृद्धि के लिए सुदूर निजाम-हैदराबाद में मेसर्स अमरसी सुजानमल के नाम से अपनी फर्म खोली। यहाँ पर आपकी फर्म क्रमसे बहुत तरक्की को प्राप्त हुई। यहाँ की जनता और राज्य में इनका अच्छा सम्मान था।* हैदराबाद रियासत से आपका लेन देन का काफी व्यवहार था। एक बार एक कीमती हीरा आपके यहाँ रहा था, जिसकी रक्षा के लिए स्टेट की ओर से सौ जवान आपके यहाँ तैनात रहते थे। आपके दावों मुकद्दमों के लिए निजाम सरकार ने एक स्पेशल कोर्ट नियत कर रक्खी थी जिसका नाम "मजलिसे साहुवान" रक्खा गया था। इस कोर्ट में आपके सब दावे बिना स्टाम्प फ़ीस के लिये जाते थे तथा बिना मियाद के सुनवाई होती थी।

शाह अमरसीजी के कोई सन्तान न होने से आपने अपने छोटे भाई टीकमसीजी के पुत्र नथमलजी को दत्तक लिया। सेठ नथमलजी के सेठ जीतमलजी और सुजानमलजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ सुजानमलजी—आप भी बड़े व्यापार कुशल और प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। आपने अपने व्यापार को बड़ी तरक्की दी। आप ही ने मेवाड़ स्टेट में अपनी फर्म को स्थापित कर सुजानमल सिरेमल के नाम से अपना कारबार प्रारम्भ किया। इतना ही नहीं आपने अपने व्यापार को पंजाब तक फैलाया और लाहौर, अमृतसर इत्यादि स्थानों पर भी अपनी शाखाएं स्थापित कीं। आपके पाँच पुत्र हुए जोरावरमलजी, गुहारमलजी, सिरेमलजी, समीरमलजी और उदयमलजी। इनमें से पहले तीन भाई तो निःसन्तान स्वर्गवासी

* आपकी व्यापारिक ताकत के सम्बन्ध मे यह बात प्रसिद्ध है कि एक बार बैङ्क ऑफ बङ्गाल की हैदराबाद शाखा से किसी विषय पर आपकी तनातनी हो गई थी, इससे उत्तेजित हो आपने बैङ्क पर इतनी हुण्डियाँ एक साथ करवा दी कि बैङ्क को भुगतान से इन्कार कर देना पड़ा, इसमें आपको बहुत रुपया खर्च करना पड़ा।

हो गये चौथे सेठ समीरमलजी के भी कोई सन्तान न होने से उन्होंने अपने छोटे भाई उदयमलजी को दत्तक लिया।

सेठ उदयमलजी—आपका जन्म संवत् १८८६ में हुआ। आपने भी अपने पूर्वजों के व्यापार और कीर्ति को अक्षुण्ण रक्खा। राज्य और प्रजा दोनों ही क्षेत्रों में आपका काफ़ी सम्मान था। आपको राज्य की ओर से संवत् १९१६ में एक खास रुक्का इनायत हुआ जो इस प्रकार था—

श्रीरामजी

(सही)

> रुक्को खास मेहता उदयमल दिसी सुप्रसाद बंचे उपरंच तनै वा थोरे भाई ने पहले सुं हाथी वा पालकी वा छड़ी वा चपरास वा गुजरा वा छुट को गुजरा वा सिरे दरवार में बैठक वा पग में सोनो, वा सेठ पदवी रो खिताब वगैरह कुरब इनायत हुवोड़ो छे तेमे वा थाहारी इज्जत आबरू में म्हें वा म्हारो पूत पोतो तेसुं वा थाहारे पूत पोतो सुं कोई बात रो फरक न घालसी श्री लक्ष्मीनारायणजी बीच में छे म्हारो वचन छे और म्हारे पधारने में किताइक दिनरी देरी हुई तेसु रंज दिल माहे मती राखजे तू म्हारे घणी वात छे और कितइक समाचार रामेंने फरमाया छे सुं तने मुख जवानी केसी। संवत् १९१६ मिती पोह वदी ४

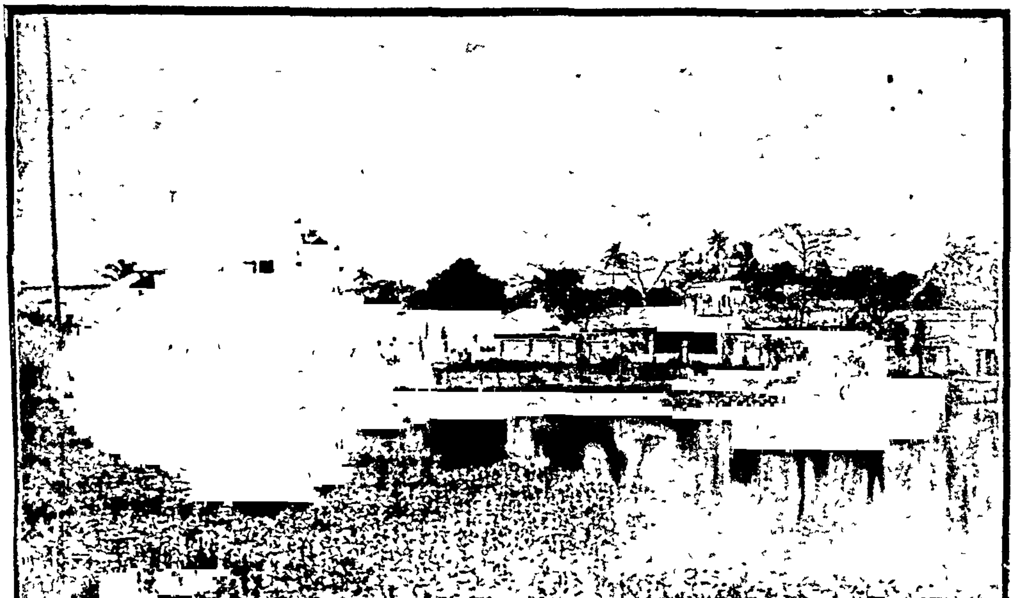
इससे पता चलता है कि राज्य में आपका कितना सम्मान था। आपके एक पुत्र सेठ चाँदमलजी हुए।

सेठ चान्दमलजी सी० आई० ई०

आपका जन्म संवत् १९२६ में हुआ। आप भी इस खानदान में बड़े प्रतिष्ठित व्यक्ति हुए। आपने प्रारम्भ में अपने व्यापार का विस्तार करने के उद्देश्य से मद्रास, कलकत्ता, सिलहट, मौर (पंजाब) इत्यादि स्थानों पर अपनी फर्में स्थापित कीं। इसके अतिरिक्त जावरा स्टेट के आप स्टेट बेङ्कर भी हुए। देशी राजाओं और ब्रिटिश गवर्नमेंट में भी आपकी बड़ी इज्जत थी। भारत सरकार ने आपको सी० आई० ई० की सम्माननीय उपाधि से विभूषित किया था। निजाम स्टेट में भी आपका अच्छा सम्मान था। वहाँ पर आपको दरबार में कुरसी और चार घोड़ों की बग्गी में बैठने का सम्मान प्राप्त था। बीकानेर के देशनोक नामक स्थान पर आपने करणी माता के मन्दिर का प्रथम द्वार बनवाया। इस द्वार की कारीगरी और कोराई दर्शनीय है। इसके बनवाने में करीब ३॥ लाख रुपया खर्च हुआ। लार्ड मिण्टो तथा और कई लोग इस द्वार को देखने के लिए आये थे। संवत् १९५९ में एक दिन दरबार बीकानेर ने आपके यहाँ सेल आरोग



श्रीमान् स्व० सेठ चांदमलजी डड्ढा सी० आई० ई०, बीकानेर.



कलकत्ता सोप वर्क्स (मंगलचन्द आनन्दमल डड्ढा), बीकानेर.

कर आपको अपने परसनल स्टॉफ का मेम्बर बनाया। साहूकारों में यह सम्मान सब से पहले आप ही को मिला। इसके अतिरिक्त और भी कई देशी राज्यों से आपके ताल्लुकात बहुत अच्छे थे। बीकानेर और उदयपुर से आपको कई खास रुक्के भी मिले थे जिनमें एक दो नीचे दिये जाते हैं।

श्री लक्ष्मीनारायणजी सहाय भक्त महाराजाधिराज राज राजेश्वर नरेन्द्र शिरोमणि श्री डूंगरसिंहजी बहादुर कस्य मुद्रिका

श्रीरामजी

रुक्को खास सेठ चांदमल दिसी सुप्रसाद बंचै उपरंच सेठ उदयमल को समा हुओ पछ थारो अठ आव बो हुवो नहीं सो हमें थूं जमा खातर राख अठे आय हाजर होवजा थारो मुलायजो श्री बावेजी साहबां राखा जे मुजब रेसी कोई तरह री हरकत न रेसी दिल जमा राख सताब हाजर होइज जिसुं म्हें घणां खुश हुसां थारे काण मुलाहिजा में फरक न पड़सी म्हारा बंचन छे थारे आवणे में दस पांच दिनरी देरी हुवे तो मगनमल ने पेला मेल दीजे संवत् १९३१ मिती असाढ़ वदी १४

इसी प्रकार के आपको और भी पचीसों रुक्के रियसतों से प्राप्त हुए थे। इनको भी ताजीम, हाथी, सिरोपाव, सिरपेंच, मोती की कण्ठी, बैठक, और किले में सिंहपोल दरवाजे तक चढ़कर आने के सम्मान प्राप्त थे।

कहना न होगा कि सेठ चाँदमलजी अपने उन्नत काल में सारे ओसवाल समाज में प्रथम श्रेणी के रईस और उदार व्यक्ति थे। इनकी तबियत महान् थी और यह महानता उस स्थिति में भी वैसी ही बनी रही जब कि ये अपने अन्तिम कुछ वर्षों में आर्थिक दशा से कमजोर हो गये थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९९० में हुआ।

सेठ टीकमसीजी का परिवार बीकानेर

(सेठ गुनचंद मंगलचंद)

सेठ टीकमसीजी—आप भी अपने बन्धुओं की तरह बहादुर प्रकृति के बुद्धिमान पुरुष थे। आपने भी बीकानेर में अपना कारबार स्थापित किया था। आपका स्वर्गवास फलौदी में ही हुआ, आपके शवदाह स्थान पर आपके पुत्र लालचन्दजी ने एक देवालय बनाया। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम सेठ नथमलजी, माणकचन्दजी और लालचन्दजी थे। इनमें से नथमलजी सेठ अमरसीजी के यहाँ दत्तक चले गये। दूसरे पुत्र माणकचन्दजी का परिचय अन्यत्र दिया जावेगा।

सेठ लालचंदजी—आप बीकानेर में बैङ्किङ्ग का व्यापार करते थे। आपका लेन-देन अकूसर राजा, महाराजा और जागीरदारों के साथ रहता था। ज्योतिष विषय के आप अच्छे जानकार थे। बीकानेर की तरफ से आपको छड़ी तथा चपरास का सम्मान प्राप्त था। आपको समय २ पर कई रुक्के परवाने भी मिले थे। आपके बालचन्दजी और गुनचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। बालचन्दजी के कोई सन्तान न होने से गुनचन्दजी उनके नाम पर दत्तक लिये गये। सेठ गुनचन्दजी भी बड़ी सरल प्रकृति के सज्जन पुरुष थे। दरबार से आपको भी बहुत सम्मान प्राप्त था। आपका स्वर्गवास संवत् १९६३ में हो गया। आपके मंगलचन्दजी और आनन्दमलजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ मंगलचन्दजी—आप इस परिवार में नामांकित व्यक्ति हुए। जब आप केवल १४ वर्ष के थे तभी से आप व्यापार करने लगे। आपने अपने जीवन में भिन्न भिन्न प्रकार के व्यवसायों का संचालन किया। इनमें कपड़ा, मूंगा और साबुन विशेष हैं। आप कपड़े एवम् मूंगे के लिये लन्दन की फर्म मेसर्स "जूलियस कारपलस" के बेनियन थे। व्यापार को विशेष उत्तेजन प्रदान करने के लिये आपने मद्रास वगैरह स्थानों पर अपनी फर्में स्थापित की थीं। रङ्गपुर में जूट और बैंकिंग का काम करने के लिये भी आपने फर्म स्थापित की थी। इसके अतिरिक्त कलकत्ते के मशहूर साबुन के कारखाने कलकत्ता सोप वर्क्स को आपने खरीद किया। इस समय इस कारखाने में वैज्ञानिक ढंग से साबुन बनाया जाता है। इस कारखाने की स्थापना आचार्य्य पी० सी० राय के द्वारा हुई थी। यह कारखाना भारतवर्ष में सब से बड़ा माना जाता है। इसका क्षेत्र फल करीब २० बीघा है। सेठ मंगलचन्दजी का स्वर्गवास संवत् १९८९ में हुआ। इसके पूर्व आपके भाई आनन्दमलजी स्वर्गवासी हो चुके थे। आनन्दमलजी के दो पुत्र हुए। बा० बहादुरसिंहजी और बाबू प्रतापसिंहजी। इनमें से प्रतापसिंहजी सेठ मङ्गलचंदजी के नाम पर दत्तक गये।

इस समय इस परिवार में आप दोनों ही भाई विद्यमान हैं। आप लोग मिलनसार और सज्जन व्यक्ति हैं। सेठ बहादुरसिंहजी बीकानेर स्टेट में आनरेरी मजिस्ट्रेट हैं। साथ ही आप म्युनिसिपल मेम्बर भी हैं। प्रतापचन्दजी सुधरे हुए विचारों के देशभक्त सज्जन हैं। आपके नरपतसिंहजी, धनपतसिंहजी और इन्द्रसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं। कलकत्ता ५० क्लाईव स्ट्रीट में आपका बैंकिंग, जूट, मूंगा और साबुन का व्यापार होता है।

शाह सादूलसिंहजी का परिवार, जोधपुर
(मनोहरमलजी सिरेमलजी, जोधपुर)

शाह खेतसीजी के चौथे पुत्र करमसीजी के सादूलसिंहजी, सांवतसीजी, रायसिंहजी, हीरासिंहजी सुल्तानचन्दजी और मुल्तानचन्दजी नामक छः पुत्र हुए। इनमें शाह सादूलसिंहजी के कमलसीजी और सालमसीजी नामक दो पुत्र हुए। उस समय इस परिवार की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। राज्य से आपका काफी लेन-देन रहता था। जोधपुर और जैसलमेर रियासतों में आपका बड़ा सम्मान था।

शाह कमलसीजी—शाह कमलसीजी के नैनसीजी और ठाकुरसीजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें नैनसीजी के कोई सन्तान न होने से इनके नाम पर डड्ढा जालिमसिंहजी के छोटे पुत्र हरकमलजी दत्तक आये। शाह हरकमलजी ओसवाल समाज में सर्व प्रथम अंग्रेजी के ज्ञाता थे। आप जोधपुर स्टेट में भिन्न २ पदों पर सफलता पूर्वक कार्य्य करते रहे। आपका स्वर्गवास संवत् १९४२ में हुआ। आपके मनोहर लजी, जसराजजी और लाभमलजी नामक तीन पुत्र हुए।

ढड्ढा मनोहरमलजी—आपका जन्म संवत् १९२४ में हुआ। आपका शिक्षण मैट्रिक तक हुआ। आपने मेड़ते में सायर दरोगाई और महकमाखास के हिन्दी विभाग के सुपरिण्टेण्डेण्ट का काम बड़ी योग्यता से किया। सन् १९२७ में आप सर्विस से रिटायर हो गये। इस समय आप जोधपुर में आनरेरी मजिस्ट्रेट हैं। जातीय सेवा से प्रेरित होकर आपने सन् १९३० में ओसवाल कुटुम्ब सहायक द्रव्यनिधि का स्थापन किया। सन् १८९८ में आप श्रीसंघ सभा के सेक्रेटरी बनाए गये। इस सभा के द्वारा आपने काफी समाज सेवा की। जोधपुर की इन्श्युरेन्स कम्पनियों के स्थापन में भी आपका बड़ा हाथ है। आपकी सार्वजनिक स्पिरीट बहुत प्रशंसनीय है। आपके पुत्र माधौसिंहजी इस समय पोलिस में सब-इन्स्पेक्टर हैं। आपके भ्राता डड्ढा जसराजजी का जन्म संवत् १९२३ में हुआ। आप ठाकुरसीजी के पुत्र जीवनसीजी के नाम पर दत्तक गये।

शाह सालमसीजी—शाह सालमसीजी के चार पुत्र हुए, जिनके नाम क्रम से जालिमसिंहजी, बदनमलजी, मुरलीधरजी और कानमलजी थे। संवत् १९०० के करीब शाह जालिमसिंहजी जोधपुर आये। आप बड़ी तीव्र बुद्धि के व्यक्ति थे। संवत् १९१३ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके रतनमलजी और हरकमलजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से हरकमलजी, नैनसीजी के नाम पर दत्तक चले गये। शाह रतनमलजी का संवत् १८९२ में जन्म हुआ। आप बड़े व्यापार कुशल, प्रवीण और साहित्य प्रेमी व्यक्ति थे। रियासत के दीवान, मुत्सुद्दी भी कई गम्भीर मामलों में आपकी सलाह लिया करते थे। संवत् १९३२ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके सिरेमलजी नामक एक पुत्र हुए।

डड्ढा सिरेमलजी

आपका जन्म संवत् १९२४ में हुआ। संवत् १९३९ में आप नागौर के हाकिम हुए। इसके पश्चात् सन् १८८९ से ९२ तक आप कृष्णा मिल ब्यावर के ऑडिटर रहे। इसके पश्चात् आप एक साल तक चुरू के हाकिम रहे। संवत् १९५६ में आप कस्टम सुपरिण्टेण्डेण्ट हुए। महाराजा जालिमसिंहजी आपके कार्यों से बड़े खुश थे। आप दरबार के कुछ समय तक प्राइवेट कामदार रहे थे। इसके पश्चात् कई अच्छे २ स्थानों पर काम करते हुए सन् १९१३ में रेल सुपरिण्टेण्डेण्ट के पद पर नियुक्त हुए। तथा सन् १९२६ में इस पद से ग्रेच्यूटी लेकर रिटायर होगये। आपको अपने उत्तम कार्यों के उपलक्ष में कई अच्छे अच्छे सार्टीफिकेट मिले हैं। रिटायर होने के बाद भी आप रीयां के नाबालिगी ठिकाने की व्यवस्था करने के लिए भेजे गये थे। आप बड़े स्पष्ट वक्ता हैं। इस समय आप सिंहसभा 'कुटुम्ब सहायक फण्ड' की मैनेजिंग कमेटी के मेम्बर तथा इन्स्युरेन्स कार्पोरेशन के डायरेक्टर और ओसवाल कन्या-शाला के सुपरवाइजर हैं। आपके मदनसिंहजी, सुजानसिंहजी और सज्जनसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं। मदनसिंहजी का जन्म संवत् १९४४ में हुआ। एफ़० ए० तक पढ़ाई करके आप फलौदी के हाकिम नियुक्त हुए। आपका कम उम्र में ही स्वर्गवास होगया। दूसरे पुत्र सुजानसिंहजी का जन्म सन् १८९१ में हुआ। आपने मैट्रिक तक अध्ययन किया।

सज्जनसिंहजी डड्ढा—आप ढड्ढा सिरेमलजी के तीसरे पुत्र हैं। आपने बी० ए० एल० एल० बी० तक विद्याध्ययन किया। आपका विवाह इन्दौर के प्राइम मिनिस्टर रायबहादुर सिरेमलजी बापना सी० आई० ई० की पुत्री से हुआ। आप सन् १९१८ में इन्दौर में फर्स्ट क्लॉस मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। इस कार्य को आप अभी बड़ी योग्यता से संचालित कर रहे हैं। आप बड़े सज्जन और इतिहास प्रेमी व्यक्ति हैं।

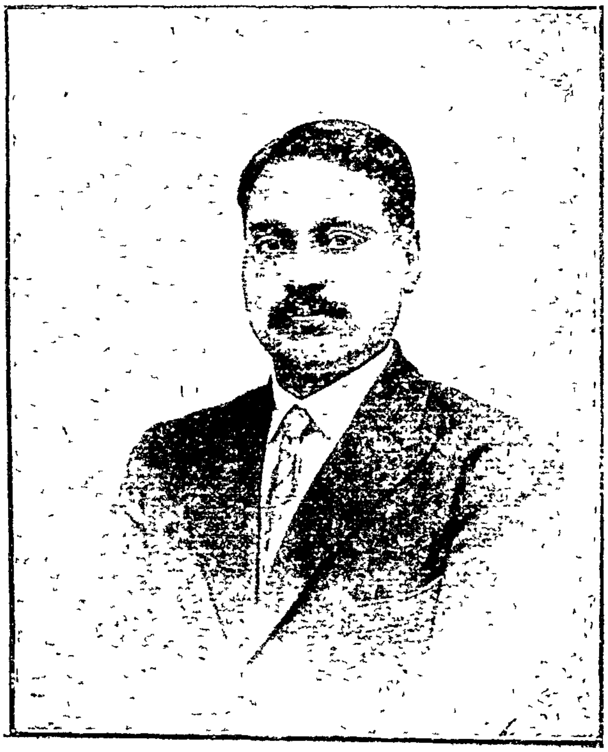
ढड्ढा सालमसिंहजी के छोटे पुत्र बदनमलजी संवत् १९४५ में स्वर्गवासी हुए। इनके कुन्दन-मलजी और सोभागमलजी नामक २ पुत्र हुए। डड्ढा कुन्दनमलजी हैदराबाद में कपड़े का व्यापार करते हैं। संवत् १९६१ में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके दत्तक पुत्र उम्मेदमलजी अजमेर में व्याज का धन्धा करते हैं।



श्री सिरेमलजी ढढ्ढा, भूतपूर्व रेख सुपरिण्टेण्डेण्ट जोधपुर



श्री मनोहरलालजी ढढ्ढा, ऑनरेरी मजिस्ट्रेट जोधपुर



श्री सज्जनसिंहजी ढढ्ढा, एडीशनल डि० मजिस्ट्रेट, इन्दौर।

डड्ढा सुलतानमलजी का परिवार

(सेठ बख्तावरचंदजी फलौदी)

डड्ढा सादूलसिंहजी के छोटे भाई सुलतानचन्दजी थे। उस समय में इस परिवार की दुकानें जोधपुर, फलौदी, पाली, हैदराबाद, जयपुर, बम्बई, शाहजहांपुर इत्यादि स्थानों पर थीं। संवत् १८०० से १९२२ तक इस परिवार की व्यापारिक स्थिति बहुत अच्छी रही। इनकी सबसे बड़ी दुकान हैदराबाद दक्षिण में सुलतानचन्द बहादुरचन्द के नाम से काम करती थी। डड्ढा सुलतानचन्दजी के स्मारक में फलौदी में छत्री बनी हुई हैं।

सुलतानचन्दजी के पश्चात् क्रमशः बहादुरचन्दजी, रेखचन्दजी और शिवचंदजी काम देखते रहे। शिवचन्दजी के पुत्र बख्तावरचन्दजी और लालचन्दजी इस समय विद्यमान हैं। इनमें से लालचन्दजी जमनादासजी के नाम पर दत्तक गये हैं। डड्ढा बख्तावरचन्दजी का जन्म संवत १९२४ में हुआ। संवत् १९६४ तक आपकी दुकान मद्रास में रही। आपने सुलतानचन्दजी के कुटुम्ब की ओर से एक रामद्वारा महेश्वरी समाज को और दो उपाश्रय सम्यगी और बाइस सम्प्रदाय के साधुओं के ठहराने के लिये भेट किये। आप फलौदी म्यूनिसिपैलिटी के मेम्बर रह चुके हैं। आप का परिवार फलौदी में बहुत प्राचीन और प्रतिष्ठित माना जाता है।

डड्ढा अभयमलजी का खानदान

(हेमचंदजी डड्ढा सोलापुर)

डड्ढा सारंगदासजी के पुत्र नेतसीजी के ६ पुत्र हुए, उनमें तीसरे पुत्र अभयमलजी थे। इनके शिवजीरामजी मूलचन्दजी आदि ४ पुत्र हुए। इनमें शिवजीरामजी संवत् १८७०।७५ में जैसलमेर के दीवान हुए। वहाँ से रियासत की नाराजी होजाने से आप फलौदी आगये तथा वहीं आपने अपना स्थाई निवास बनाया। आपके पुत्र अमीचन्दजी ने जावद (मालवा) में बैंकिंग व्यापार चालू किया। आपने गवालियर स्टेट की कौंसिल में भी अच्छा सम्मान पाया था। आपकी दूकान जावद की सरपंच दुकान थी। आपके पुत्र रावतमलजी भी प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति हुए। इनके पुत्र केसरीचन्दजी का अल्पवय में ही स्वर्गवास होगया था। इनकी धर्मपत्नी श्रीमती जुहारबाई ने फलौदी के धार्मिक क्षेत्र में अच्छा नाम पाया। आपने तीर्थयात्रा, स्वामि वत्सल आदि कार्मों में लगभग १॥ लाख रुपया व्यय किया। आपके पुत्र फूलचन्दजी अल्पायु में संवत् १९४३ में स्वर्गवासी होगये। आपके पुत्र नेमीचन्दजी का जन्म संवत् १९३८ में हुआ।

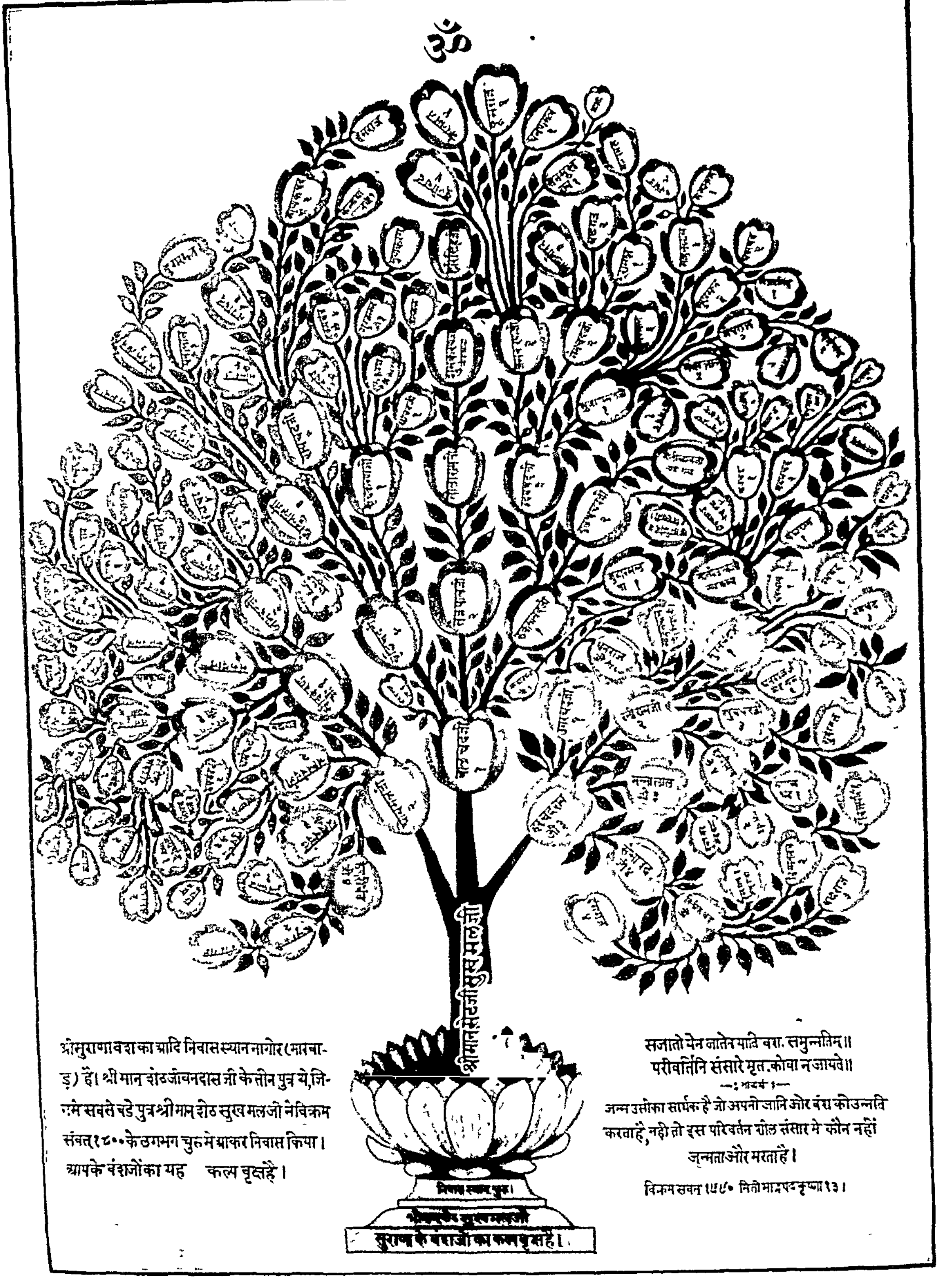
ढड्ढा नेमीचन्दजी विशेषकर ग्वालियर रहे, तथा वहाँ सेठ नथमलजी गोलेछा की दुकानों का काम देखते रहे। आपने फलौदी में म्युनिसिपैलिटी कायम करने में अधिक परिश्रम किया, तथा आजीवन उसके सेक्रेटरी रहे। संवत् १९७५ में आप स्वर्गवासी हुए। आपने संवत् १९६५ में मद्रास में दुकान खोली थी। वह आपके स्वर्गवासी होने के बाद आपके पुत्रों ने उठा दी। सेठ नेमीचंदजी के प्रेमचन्दजी, हेमसिंहजी और ज्ञानचन्दजी नामक तीन पुत्र विद्यमान हैं। प्रेमचंदजी का जन्म संवत् १९५१ में हुआ। आप अपनी जावद दुकान की जमींदारी का काम देखते हैं। लगभग ५ हजार बीघा जमीन आपकी जमींदारी की है। आप जावद में ऑनरेरी मजिस्ट्रेट भी रहे थे। इनके पुत्र मदनसिंहजी तथा प्रभूतसिंहजी हैं।

ढड्ढा हेमसिंहजी का जन्म १९५८ में हुआ। आपने जोधपुर से मेट्रिक पास किया। आरम्भ में आप १९८० तक मद्रास डगिस्ट स्टोअर के नाम से दवाइयों का व्यापार करते थे। वहाँ से आपको आपके श्वसुर फलौदी निवासी सेठ नेमीचंदजी गोलेछा ने अपनी सोलापुर दुकान का काम सम्हालने के लिए बुलाया। इसलिए इस समय आप इस फर्म के भागीदार हैं। आप विचारवान तथा उन्नतिशील युग के सदस्य हैं। आपके पुत्र महावीरसिंहजी हैं। हेमसिंहजी के छोटे भ्राता ज्ञानसिंहजी, ढड्ढा एण्ड कम्पनी मद्रास नामक फर्म पर कार्य करते हैं।

सुराणा

सुराणा गौत्र की उत्पत्ति

सुराना गौत्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह किम्वदन्ति है कि इस गौत्र की उत्पत्ति जगदेव नामक एक सामंत से हुई है। ये तत्कालीन सिद्धपुर पाटन के राजा सिद्धराज जयसिंह के प्रतिहारी थे। ये बड़े वीर और पराक्रमी थे। इनके सात पुत्र हुए, जिनके नाम क्रमशः सूरजी, सांवलजी, सामदेवजी, रामदेवजी, छारड़जी वगैरह थे। ये लोग भी अपने पिता की भांति बड़े वीर और साहसी व्यक्ति थे। यह वह समय था जब महम्मूद गजनवी का कातिल हमला भारत पर होरहा था। वह घूमता हुआ गुजरात की ओर भी आया और उसने सिद्धपुर पाटन पर चढ़ाई की। इस समय जगदेव के प्रथम पुत्र सूरजी सेनापति के पद पर थे। उन्हें राज्य की रक्षा की चिन्ता हुई। इसी समय हेमसूरिजी महाराज वहां पधारे। सूरजी ने महाराज से युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए प्रार्थना की। महाराज ने जैन धर्म स्वीकार करने की प्रतिज्ञा करवा कर विजय पताका यंत्र सूरजी को दिया। भुजा पर यन्त्र को बांधकर सूरजी युद्ध-क्षेत्र में गये। घमासान युद्ध


ॐ
श्रीमान सेठजी सुख मलजी
श्रीसुराणा वंश का आदि निवास स्थान नागोर (मारवाड़) है। श्री मान सेठ जीवनदास जी के तीन पुत्र थे, जिनमें सबसे बडे पुत्र श्री मान सेठ सुख मलजी ने विक्रम संवत् १८०० के लगभग चुरु में आकर निवास किया। आपके वंशजो का यह कल्प वृक्ष है।
सजातो येन जातेन याति वंश: समुन्नतिम्॥
परीवर्तिनि संसारे मृत: कोवा न जायते॥
—: भावार्थ :—
जन्म उसीका सार्थक है जो अपनी जाति और वंश की उन्नति करता है, नहीं तो इस परिवर्तन शील संसार में कौन नहीं जन्मता और मरता है।
विक्रम संवत १९९० मिती भाद्रपद कृष्णा १३।
निवास स्थान चुरु।
श्रीमान्सेठ सुखमलजी
सुराणा के वंशजों का कल्पवृक्ष है।

सुराणा परिवार, चुरु।

होने के पश्चात् अंत में विजयश्री सूरजी को ही मिली। यवन लोग पराजित होकर भाग खड़े हुए। जब सूरजी विजयी होकर दरबार में पहुँचे तब महाराज ने आपके कार्यों की बड़ी प्रशंसा की। और कहा, वास्तव में तुम "सूरराणा" हो। तबसे उनके वंशज सूरराणा से सुराणा कहलाने लगे। इसी प्रकार और २ भाइयों से और २ गोत्रों की उत्पत्ति हुई। जैसे संखजी के साँखला, सांवलजी से सियाल इत्यादि। सांवलजी के बड़े पुत्र हृष्टपुष्ट थे अतएव लोग उन्हें संड मुसंड कहा करते थे अतएव इनकी संताने सांड कहलाई। सांवलजी के दूसरे पुत्र सुक्खा से सुखाणी, तीसरे सालदे से सालेचा और चौथे पुत्र पूनमदे से पूनमियां शाखा प्रकट हुई।

इसी सुराणा परिवार में आगे चलकर कई प्रसिद्ध २ व्यक्ति हुए। उनमें मेहता अमरचन्दजी सुराना भी एक थे। आप तत्कालीन बीकानेर दरबार के दीवान थे। आपने बीकानेर राज्य की ओर से कई युद्ध किये एवम् उनमें सफलता प्राप्त की। आप बड़े राजनीतिज्ञ, वीर और बहादुर व्यक्ति थे। आपका विशेष परिचय इसी ग्रंथ के राजनैतिक और सैनिक महत्व नामक शीर्षक में दिया गया है।

चूरू का सुराणा परिवार

चूरू बीकानेर राज्य में एक छोटासा किन्तु सम्पन्न नगर है। यहाँ सुराणाओं का एक प्रतिष्ठित घराना है। यह वंश अति प्राचीनकाल से सम्पन्न तथा राज्य में बहुत गण्यमान्य रहा है। यह वंश लगभग विक्रमी संवत् १८०० में नागौर से चुरू आकर बसा था। इस वंश वाले श्री श्वेताम्बर तेरापंथी जैनी हैं। इस घराने में बड़े-बड़े वीर हो गये हैं। जिनमें सेठ जीवनदासजी का नाम विशेप रूप से उल्लेखनीय है। प्रसिद्ध है कि उन्होंने सिर कट जाने पर भी चिरकाल तक तलवार चलाई थी जिससे वे जुझार योद्धा प्रसिद्ध हुए। आज तक स्त्रियाँ उनकी वीरता के गीत गाती हैं। जीवनदासजी के चार पुत्र थे, जिनमें सबसे बड़े पुत्र सेठ सुखमलजी चूरू आकर बसे।

कलकत्ते की मेसर्स "तेजपाल वृद्धिचन्द" नाम की प्रसिद्ध फर्म इसी परिवार की है। इस फर्म में कपड़े और बैंकिंग का काम होता है। इसका एक छाते का भी कारखाना है, जिसमें प्रतिदिन ५०० दर्जन छाते तैयार होते हैं। यह कारखाना भारत भर में सबसे बड़ा है। श्री रुकमानंदजी ने विक्रमी संवत् १८९३ में इस फर्म को स्थापित किया था। उस समय कलकत्ता में मारवाड़ियों की सिर्फ पाँच दस दूकानें थी। उन्होंने इसका "रुकमानन्द वृद्धिचंद" नाम रखा। पीछे संवत् १९६२ में जब रुकमाजी के वंशज दो विभागों में बट गये तब से इस फर्म पर "तेजपाल वृद्धिचन्द" नाम पड़ने लगा।

सेठ सुखमलजी के वंशजों ने उस जमाने में जब भारतवर्ष में सर्वत्र रेलवे लाइनें नहीं खुली थीं

अत्यन्त साहस पूर्वक जल और स्थल मार्गों से दूर २ देशों में जाकर अपना व्यापार फैलाया, कलकत्ता प्रभृति नगरों में कई फर्में स्थापित कीं जिनमें विशेष उल्लेखनीय यह हैं:—

कलकत्ता में—(१) रुक्मानन्द वृद्धिचन्द, |(अब) तेजपाल वृद्धिचन्द (२) ऋद्धकरण सुराना (३) रायचन्द शुभकरण (४) श्रीचन्द सोहनलाल (५) मुन्नालाल शोभाचन्द (६) सुजानमल करमचन्द (७) चम्पालाल जीवनमल (८) लाभचन्द मालचन्द (९) तिलोकचन्द जयचन्दलाल (१०) तनसुखदास दुलीचन्द (११) हरचंदराय मुन्नालाल (१२) हरचंदराय सोभाचंद (१३) सुराना ब्रादर्स और (१४) सुराना एण्ड कम्पनी इत्यादि।

बम्बई में—वृद्धिचन्द शुभकरण, रंगून में—तेजपाल वृद्धिचंद, भिवानी में—ऋद्धकरण सुजानमल फर्रुखाबाद में—कालूराम जुहारमल, अहमदाबाद में—थानमल मानमल इत्यादि।

इनमें से कलकत्ता की बहुतसी फर्में अभीतक सुचारु रूप से चलती हैं। अन्य स्थानों में व्यापार की असुविधा के कारण बन्द करदी गई हैं।

स्वर्गीय सेठ रुकमानन्दजी, तेजपालजी और वृद्धिचन्दजी—आप तीनों भाई सेठ बालचन्दजी के पुत्र थे। आप बड़े होशियार व्यापार कुशल और वीर व्यक्ति थे। इन फर्मों की विशेष तरक्की का श्रेय आप ही लोगों को है। आपका राजदरबार में अच्छा सम्मान था। आपके समय में संवत् १९२२ में एक बार जगात का झगड़ा चला था। उसमें आप नाराज होकर बीकानेर स्टेट को छोड़कर सपरिवार रामगढ़ (जयपुर स्टेट) में चले गये थे। फिर महाराजा सरदारसिंहजी ने आपको अपने खास व्यक्ति मेहता मानमलजी रावतमलजी कोचर के साथ जगात महसूल की माफी का परवाना भेजकर आपको सम्मान सहित वापिस बुलाया था। सं० १९२५ में तहसीलदार अबदुलहुसेन के जमाने में चुरू में जब धुवां वगैरः लागें लगाई गई तब आप लोग फिर रुष्ट होकर मेंहडसर (जयपुर स्टेट) में चले गये। फिर महाराजा ने मोहम्मद अब्बास खाँ को खास रुक्के देकर भेजा और बीकानेर बुला कर आप लोगों को पैरों में पहनने के सोने के कड़े, लंगर, छड़ी चपड़ास वगैरह बख्शी। आपके द्वितीय भ्राता सेठ तेजपालजी का स्वर्गवास संवत् १९२४ में होजाने से आप लोग बहुत खिन्न हो गये थे। इसलिये ये सब इज्जतें लेने से अस्वीकार किया। श्रीमान् महाराजा ने प्रसन्न होकर सिरोपाव, मोतियों के कंठे, और चढ़ने को रथ वगैरह देकर आप लोगों को सम्मानित कर वापस चुरू भेजा। तब से आपके परिवार वालों का राज दरबार में विशेषमान है, और वर्तमान महाराजा भी आपके वंशजों पर विशेष कृपा रखते हैं। आप तीनों भाइयों का जन्म क्रमशः संवत् १८७६, १८८५ और १८९१ में, और देहावसान क्रमशः विक्रम संवत् १९४२ संवत् १९५४ और संवत् १९५९ को हो गया, सेठ वृद्धिचन्दजी को लोग कालुरामजी भी कहते थे।



सेठ उदयचंदजी सुराणा, चूरू.



सेठ मोतीलालजी सुराणा, चूरू.



स्व० सेठ तोलारामजी सुराणा, चूरू.



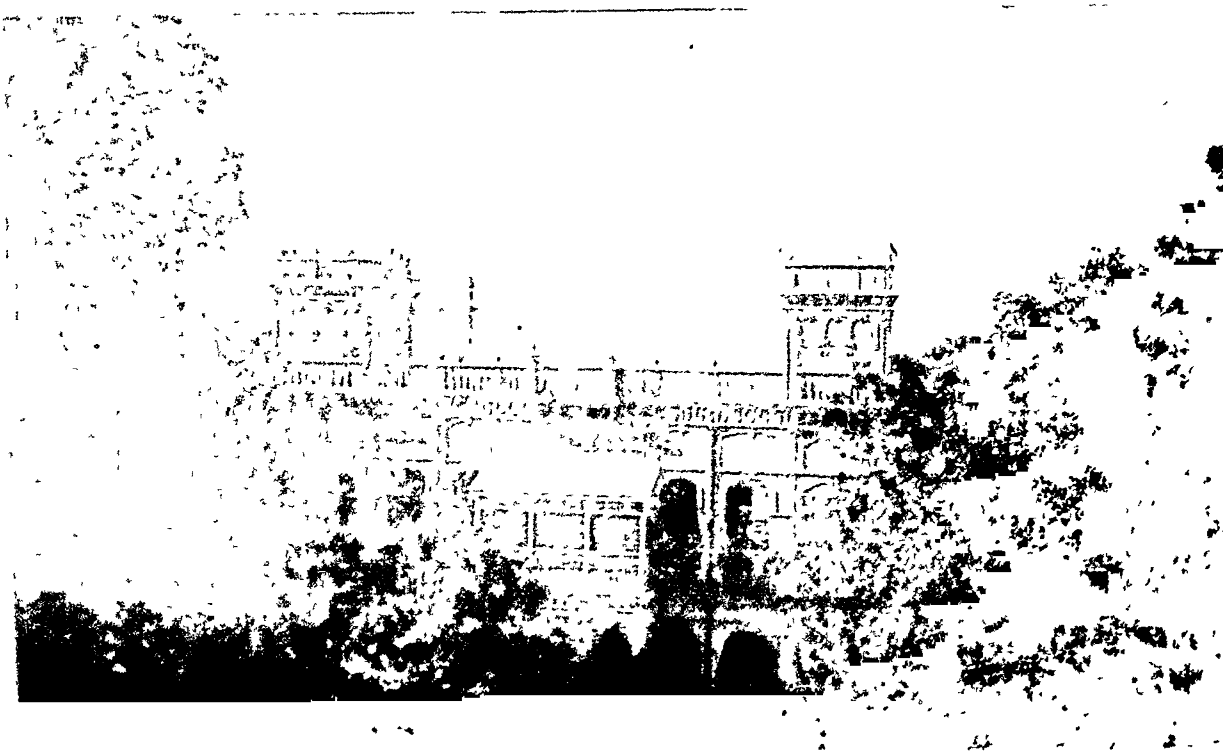
सेठ रायचन्दजी सुराणा, चूरू.



सेठ शिवकरणजी सुराना, चूरू.



कुं० कन्हैयालालजी सुराना, चूरू.



सुराना पुस्तकालय, चूरू.

स्वर्गीय सेठ जुहारमलजी व गुलाबचन्दजी—आप सेठ रुक्मानन्दजी के तीनों पुत्रों में प्रथम व द्वितीय पुत्र थे। आपका जन्म क्रमशः संवत् १९०६ और १९०९ में हुआ था। आप बड़े वीर और तेजस्वी हो गये हैं। आपका स्वर्गवास क्रमशः संवत् १९३२ और १९६२ में हुआ।

सेठ उदयचन्दजी—आप श्री रुक्मानन्दजी के सब से छोटे पुत्र हैं। आप बहुत सरल चित्त और मिलनसार हैं। आपका जन्म संवत् १९११ में हुआ। आपके तीन पुत्र और चार पुत्रियां हुईं, जिनमें से २ पुत्र और १ पुत्री अभी वर्तमान हैं। इस समय आपकी करीब ८० वर्ष की अवस्था है।

स्वर्गीय तोलारामजी—आप सेठ तेजपालजी के एकमात्र पुत्र थे। आप बड़े तेजस्वी, विद्याव्यसनी और कर्म वीर पुरुष थे। आपका ध्यान पुरातत्व सम्बन्धी खोजों की ओर विशेष रहता था। आपने अपने यहाँ "सुराना पुस्तकालय" स्थापित किया, जिसमें इस समय संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, फारसी इत्यादि भाषाओं की हजारों छपी हुई पुस्तकों के अलावा करीब २५०० हस्तलिखित प्राचीन ग्रंथ (पुस्तकें) मौजूद हैं। आपका राज दरबार में भी अच्छा सम्मान था। आप चुरू म्युनिसिपल बोर्ड के आजीवन मेम्बर रहे और सन् १९१३ ई० में जब बीकानेर राज्य में लेजिस्लेटिव एसेम्बली स्थापित हुई तब से आप इसके भी सदस्य रहे। श्री बीकानेर दरबार आपको बहुत मानते थे। एक बार आप ने अपना एसेम्बली का पद एक अन्य सज्जन के लिए खाली कर दिया, तब श्री दरबार ने अपनी ओर से आपको मनोनीत मेम्बर बना लिया। इस प्रकार आप लगातार १५ वर्ष तक एसेम्बली के सदस्य रहकर राजा और प्रजा की सेवा करते रहे। अन्त में जब लकवे से विवश होकर आपने अपने पद त्याग-पत्र दिया, तब महाराजा ने आपके पुत्र श्री शुभकरणजी को उम्मेदवार होने का विशेषाधिकार दिया (क्योंकि यहाँ पिता की मौजूदगी में पुत्र को मेम्बर बनने का अधिकार नहीं है) आपका जन्म संवत् १९१९ में हुआ था। आपके चार पुत्रियें हुईं, पुत्र एक भी नहीं हुआ। तब आपने श्रीऋद्धकरणजी के द्वितीय पुत्र श्री शुभकरणजी को गोद लिया। संवत् १९८५ में आप अपने पुत्र श्री शुभकरणजी और पौत्र श्री हरिसिंहजी को छोड़कर स्वर्गवासी हो गये। आपका उपनाम चतुर्भुजजी था।

स्वर्गीय सेठ ऋद्धकरणजी—सेठ वृद्धिचन्दजी के तीन पुत्रों में आप सब से प्रथम थे। आप बड़े प्रतापी पुरुष हुए। आपका नाम कलकत्ता की मारवाड़ी समाज मेंबहुत अग्रगण्य है। "तेजपाल वृद्धिचन्द" फर्म की विशेष उन्नति आप ही के जमाने में हुई। आप कुशल व्यापारी थे। आपने ही कलकत्ता की मारवाड़ी चेम्बर आफ कामर्स की स्थापना की और आजन्म उसके सभापति बने रहे। अखिल भारतवर्षीय श्वेताम्बर जैन तेरापंथी सम्प्रदाय की सभा की स्थापना भी आपने ही की और आजीवन उसके भी सभापति रहे। आप चिरकाल तक हबड़ा के आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। सं० १९७५ में जब कपड़ा बहुत महँगा

हो गया था तब गवर्नमेंट ने कपड़े के व्यवसाय का कंट्रोल करने के लिये एक काटन अडवाईजरी कमेटी (Cotton Advisory Committee) बनाई थी। जिसमें सात मेम्बर थे उनमें आप भी एक थे। आपका जन्म संवत् १९२१ को हुआ था। आपने दो विवाह किये। प्रथम गृहणी से आपको सिर्फ एक पुत्र हुआ और दूसरी से चार पुत्र और एक कन्या। आपके सिर्फ तीन पुत्र अभी वर्तमान में हैं। आपके कनिष्ट पुत्र कुं० फूलचन्दजी की मृत्यु का आपके जीवन पर बहुत असर पड़ा। इसीसे सम्वत् १९७५ में आपका स्वर्गवास हो गया।

स्व० सेठ रायचंदजी—आप सेठ वृद्धिचन्दजी के द्वितीय पुत्र थे। आपका स्वभाव मिलनसार और सीधा सादा था। आपकी रुचि धार्मिक विषयों में अधिक थी। आप ही के अथक परिश्रम से कलकत्ता में श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी विद्यालय की स्थापना हुई और उसके स्थाई कोष के लिये आपने बहुत धन संग्रह किया। आप उसकी कार्यकारिणी समिति के सभापति भी रहे। आपका जन्म संवत् १९२८ को हुआ था। आपने भी दो विवाह किये। आपको पहली पत्नी से एक पुत्र दो कन्या हुई और दूसरी से ७ पुत्र और एक कन्या, जिनमें से ७ पुत्र और एक कन्या, जिनमें से ४ पुत्र और एक पुत्र अब भी वर्तमान हैं। आपका स्वर्गवास संवत् १९८९ को हुआ। सेठ तोलारामजी, ऋद्धकरणजी और रायचन्दजी तीनों भाई बड़े उदार हो गये हैं जिन्होंने श्री जैन श्वेताम्बर तेरापंथी विद्यालय कलकत्ता को २०००१), श्री मारवाड़ी होस्पिटल कलकत्ता को ५००१), श्री चुरू पींजरा पोल को ५००१) और श्री हिन्दू विश्वविद्यालय काशी को २५०१) इत्यादि अनेक संस्थाओं को हजारों रुपये दान दिये थे।

सेठ छोटुलालजी—आप सेठ वृद्धिचंदजी के कनिष्ट पुत्र हैं। आपका जन्म सम्वत् १९३१ को हुआ। आप हाथ के बड़े दक्ष हैं। बहुतसी चीजें अपने हाथ से ही बना डालते हैं। जो कारीगरों से भी बनना मुश्किल है। आपके तीन पुत्र और दो पुत्री अभी वर्तमान हैं।

सेठ मोतीलालजी—आप सेठ गुलाबचन्दजी के एकमात्र पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९३२ को हुआ। आप बड़े साहसी और व्यापार कुशल हैं। सेठ जुहारमलजी के इकलौते पुत्र सरदारमलजी के स्वर्गवासी होने के बाद सेठ मोतीलालजी, जुहारमलजी के नाम पर दत्तक लिये गये। आपके पाँच पुत्र हैं। जिनमें से चौथे पुत्र श्री कुँवर जीवनमलजी को सेठ गुलाबचंदजी के और कोई पुत्र न होने से गोद दे दिया है, और कनिष्ट पुत्र कुँवर छत्रमलजी ने इस संसार को असार जान गृह त्याग दिया है, और जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय मे साधु हो गये हैं।

कुंवर सुजानमलजी—आप सेठ उदयचन्दजी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। आप बड़े उद्योगी और व्यापार कुशल हैं। आपका जन्म संवत् १९३७ में हुआ था। आपके ६ पुत्र और एक कन्या हुई। जिनमें बड़े पुत्र



दिवंगत् श्रीमान कुंवर हरिसिंहजी सुराणा ।

जन्म् संवत् १९८१ मिति कार्तिक कृष्णा ९] चुरू । [स्वर्गवास संवत् १९८९ मिति श्रावण शुक्ला १२



सेठ श्रीचंदजी सुराणा, चूरू.



सेठ शुभकरणजी सुराणा, चूरू.



सेठ हुकमचंदजी सुराणा, चूरू.



स्व० कुँवर फूलचंदजी सुराणा, चूरू.

कुँवर कर्मचन्दजी का संवत् १९७५ में स्वर्गवास होगया। आपकी एक पुत्री विवाह होने से कुछ समय बाद ही इस संसार को अनित्य जानकर वैराग्य भाव उत्पन्न होने पर अपने पति और परिवारवालों को छोड़कर साध्वी होगई हैं।

सेठ श्रीचन्दजी—आप सेठ ऋद्धकरणजी के ज्येष्ठ पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९३८ में हुआ। आप चुरू म्युनिसिपल बोर्ड के मेम्बर हैं। आप बहुत मिलनसार और उदार हैं। आपके एक पुत्र और एक पुत्री है। आजकल आप "तेजपाल वृद्धिचंद" फर्म के संचालकों में अग्रगण्य हैं।

सेठ शुभकरणजी—आप सेठ तोलारामजी के दत्तक पुत्र हैं। आप शिक्षित एवं सरलचित हैं। आजकल "सुराना पुस्तकालय" का संचालन आप ही करते हैं। आपने इस पुस्तकालय की और भी उन्नति की है। इस पुस्तकालय की बिल्डिङ्ग बहुत सुन्दर बनी हुई है। जिसका चित्र इस ग्रंथ में दिया गया है। आपका राज्य में और यहाँ के समाज में अच्छा सम्मान है। कई वर्षों तक आप म्युनिसिपल बोर्ड चुरू के मेम्बर, अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की प्रबन्ध कारिणी स्कूल कमेटी के मेम्बर, मजहबी खैराती और धर्मादे के एक्ट की प्रबन्ध कारिणी कमेटी के मेम्बर, हाई कोर्ट बीकानेर के जूरर और चुरू के आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। श्री ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम चुरू के प्रधान मन्त्री और श्री सर्व हितकारिणी सभा चुरू के उपसभापति भी रहे। श्री जैनश्वेताम्बर तेरा पंथी सभा कलकत्ता के आप सहकारी मंत्री हैं। और कलकत्ता यूनिवर्सिटी इन्स्टीट्यूट के आप सीनियर मेम्बर हैं। सन् १९२८—२९ ई० में आप बीकानेर लेजिस्लेटिव एसेम्बली के मेम्बर रहे। आपका जन्म विक्रमी संवत् १९५३ मिती श्रावण शुक्ला ५ गुरुवार को चुरू नगर में हुआ। आपका प्रथम विवाह संवत् १९६७ मिती वैशाख शुक्ला ३ को सरदार शहर निवासी सेठ पूर्णचन्दजी भणसाली की पुत्री से हुआ था। आपका विवाह होने से १४ वर्ष के पश्चात् आपके भँवर हरिसिंह नामक एक पुत्र हुए।

स्व० भंवर हरिसिंहजी—भँवर हरिसिंह सेठ शुभकरणजी सुराणा के इकलौते पुत्र थे। इनका जन्म संवत् १९८१ की कार्तिक कृष्ण ९ को हुआ था। चूँकि इस सम्पन्न घर में ६२ वर्ष के पीछे पुत्रोत्पत्ति हुई थी इसलिए इनके जन्मोत्सव के समय बहुत उत्सव किया गया था। बालक हरिसिंह बहुत होनहार और प्रतिभा सम्पन्न थे। लक्षणों से ऐसा मालूम होता था कि अगर यह बालक पूरी आयु को पाता तो इस कुल का दीपक होता। मगर दुर्भाग्यवश माता का दूध न मिलने से या और कारणों से यह आजन्म रुग्णावस्था ही में रहा। ऐसी स्थिति में भी इस प्रतिभापूर्ण बालक में अपने खानदान की वीरता, उदारता और कई ऐसी दिव्य बातें पाई जाती थीं जो इसके उज्ज्वल भविष्य की ओर स्पष्ट रूप से इशारा कर रही थीं। इनमें इस छोटी अवस्था में ही शस्त्रास्त्रों के संग्रह की बहुत बड़ी अभिरुचि पाई जाती थी। हाथी, घोड़ा,

मोटर इत्यादि कई प्रकार की सवारियों में बैठने का इन्हें बड़ा शौक था। केवल इतना ही नहीं छः सात वर्ष की इस छोटी उम्र में ही इस बालक ने वायुयान के समान कठिन आरोहण पर बड़ी खुशी से सवारी की थी।

इतनी छोटी अवस्था में इतना रुग्ण रहने पर भी इस बालक ने बिना किसी खास परिश्रम के हिन्दी लिखने पढ़ने की भी अच्छी योग्यता प्राप्त करली थी। इनके आसपास रहनेवाले लोगों का कथन है कि कभी २ तो यह छोटा बालक ऐसी बुद्धिमानी और गम्भीरतापूर्ण सलाह देता था जिसे सुनकर आसपास के लोग आश्चर्यचकित रह जाते थे। गायन वगैरह का भी इन्हें काफी शौक था। हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने इनका रुग्णावस्था में इलाज किया था, उस समय वे इनके गुणों पर इतने मुग्ध होगये कि उनकी मृत्यु के उपरान्त उन्होंने इनके जीवन चरित्र पर "पुत्र" नामक एक स्वतन्त्र पुस्तक लिखी, इस पुस्तक में इस बालक की आश्चर्यपूर्ण बातों का उल्लेख किया है।

दुर्दैव से आठ वर्ष की अल्पायु में ही विक्रम सम्वत् १९८९ की श्रावण शुक्ला १२ को यह प्रतिभाशाली बालक अपने स्वजनों को शोकसागर में डुबाकर इस संसार से चल बसा। इनके इलाज में इनके पिता श्री शुभकरणजी सुराणा ने कुछ भी उठा न रखा, पानी की तरह रुपया बहाया, मगर काल की गति पर विजय प्राप्त नहीं की जा सकी। उसकी मृत्यु से उनके पिता शुभकरणजी को इतना रंज हुआ कि उन्होंने अपने बड़े २ जिम्मेदारी के पदों से इस्तीफा दे दिया। बीकानेर स्टेट ने इनके कौंसिल की मेम्बरी के पद का इस्तीफा खेद के साथ स्वीकार किया।

सेठ हुकमचन्दजी—आप सेठ ऋद्धकरनजी के तृतीय पुत्र हैं। आप बहुत संयमी सरल चित्त और सुशील हैं। आपकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण है। व्यापारिक बही खातों के काम में आप बहुत निपुण हैं। आपका जन्म संवत् १९५८ में हुआ। आपके तीन पुत्र और तीन पुत्रियें हुई जिनमें से एक पुत्र और दो कन्यायें वर्तमान हैं। आपके दो बड़े पुत्रों के स्वर्गवास हो जाने के बाद आप संसार से उदासीन भाव में रहते हैं। आपका समय प्रायः धर्म ध्यान में ही व्यतीत होता है।

सेठ कन्हैयालालजी—आप सेठ रायचन्दजी के प्रथम पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९५८ में हुआ था। आप बड़े कसरती और पहलवान हैं। तपस्या करने में चुरू भर में अद्वितीय हैं। आपने सिर्फ जल पीकर ३१ दिन २१ दिन १५ दिन ११ दिन और १० दिन इत्यादि अनेक तपस्या की हैं। आपके कोई सन्तान नहीं हैं।

स्वर्गीय कुंवर फूलचन्दजी—आप सेठ ऋद्धकरणजी के सब से छोटे पुत्र थे। आपका जन्म



श्री छोटूलालजी सुराणा, चूरू.



श्री जीतमलजी सुराणा, चूरू.



श्री माणिकचन्दजी सुराणा, चूरू.



श्री लूनकरणजी सुराणा, चूरू.

संवत् १९६१ में हुआ था। आप बहुत होनहार और सुशील थे। आपकी धार्मिक विषय में अच्छी रुचि थी। दुर्भाग्य वश विवाह होने के ठीक १५ दिन बाद संवत् १९७४ में आपका स्वर्गवास हो गया।

सेठ माणकचन्दजी—आप सेठ रायचन्दजी के वर्तमान पुत्रों में द्वितीय हैं। आपका जन्म सम्वत् १९६६ में हुआ था। आप मोटर ड्राइविंग में निपुण हैं। आप मिलनसार और उदार भी हैं। आपके एक पुत्र और दो कन्यायें हैं।

सेठ ताराचन्दजी—आप सेठ रायचन्दजी के तृतीय पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९६९ में हुआ था। आप शिक्षित और होनहार युवक हैं। अंग्रेजी में आप मैट्रिक पास हैं। आजकल व्यापारिक शिक्षा ग्रहण करते हैं। आप अच्छे लेखक हैं। मासिक पत्रिकाओं में आपके लेख अक्सर निकलते रहते हैं। आप से एक छोटे भाई और हैं जिनका नाम श्री भीमचन्दजी हैं। ताराचन्दजी के पुत्र का नाम कुँवर शेषकरणजी हैं।

कुंवर जीतमलजी—आप श्रीचंदजी के इकलौते पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९६० में हुआ। आप बहुत हृष्ट-पुष्ट नवयुवक हैं।

कुंवर लूणकरणजी—आप सेठ हुकमचंजी के पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९८० में हुआ। आप बहुत सुशील और होनहार हैं अभी आप अंग्रेजी और हिन्दी की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

इस परिवार के लोगों पर ब्रिटिश गवर्नमेंट और बीकानेर राज्य की सदैव कृपा रही है और समय-समय पर खास रुक्के और सार्टिफिकेट मिले हैं।

शाह रतनसिंहजी सुराणा का खानदान, उदयपुर

यह प्राचीन गौरवशाली परिवार बहुत वर्षों से उदयपुर में ही निवास करता है। इस खान दान के कई सज्जनों ने समय २ पर कई महत्व के काम किये जिनका उल्लेख हम यथा स्थान करेंगे। इस परिवार में पहले पहल सुराणा ब्रजलालजी बड़े नामांकित व्यक्ति हुए।

सुराणा ब्रजलालजी—आप बड़े वीर, कार्य्यकुशल तथा साहसी व्यक्ति थे। शूरता और योग्य व्यवस्थापिका शक्ति का आप में बड़ा मधुर सम्मेलन हुआ था। आपने उदयपुर राज्य में कई ऊँचे २ पदों पर काम किया तथा कई ठिकानों की योग्य व्यवस्था की। एक समय आप एक बड़ी सेना के साथ महाराणाजी की ओर से धांगड़मऊ के बागी राजपूत जागीरदार को गिरफ्तार करने के हेतु से भेजे गये थे। वहाँ पर कुछ देर तक घमासान लड़ाई होती रही जिसमें आप विजयी हुए और उक्त जागीरदार उमराव सिंहजी युद्ध में मारे गये। उस प्रांत की आपने बड़ी बुद्धिमानी से सुव्यवस्था भी की थी। आपकी

इन सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणाजी ने आपको वलेणा घोड़े का सम्मान तथा भीलखेड़ा और कुछ गांव जागीरी में इनायत किये थे। आपके जोरावरसिंहजी नामक एक पुत्र हुए।

सुराणा जोरावरसिंहजी—आप भी बड़े समझदार, बुद्धिमान तथा कार्य्यकुशल व्यक्ति थे। आप के द्वारा उदयपुर राज्य के कई महत्वपूर्ण कार्य्य हुए हैं। आपने सरदारों और उमरावों को समझाने में तथा महाराणाजी और उमरावों के बीच की संधि के आशय को कर्नल रोबिन को समझाने में अग्र भाग लिया था। इसी प्रकार आप सरूपशाही रुपये के सिक्के के समय नीमच के रेसिडेण्ट को समझाने के लिये भी भेजे गये थे। आपने सं० १९१५ में डाकू मीणों का दमन भी किया था।

आप राजकीय कामों में चतुर होने के साथ ही साथ बड़े प्रवन्ध कुशल सज्जन भी थे। आपने चित्तौड़गढ़ की हाकिमी के पद पर रह कर इसकी इतनी सुन्दर व्यवस्था की कि जिससे उसकी वार्षिक आय ५७०००) से बढ़ कर एक लाख होगई। कहने का तात्पर्य्य यह है कि आप बड़े ही बुद्धिमान, राजनीतिज्ञ प्रबन्ध कुशल तथा कार्य्यकुशल सज्जन थे। आपने उदयपुर राज्य की कई अमूल्य सेवायें कीं जिनसे प्रसन्न होकर महाराणाजी ने छड़ी रखने का हुक्म, वलेणा घोड़ा, दरवार में बैठक की इज्जत, दरबारी पोशाक, जीकारे का सम्मान, नाव की बैठक आदि आदि सम्मान प्रदान किये थे। इतना ही नहीं आपकी सेवाओं के उपलक्ष्य में बांसणी गांव जागीरी में बक्षा जो आज तक इस खानदान के पास है। इसके अतिरिक्त आपको कई रुक्के तथा कई वार इनाम भी बक्षे गये थे।

उदयपुर दरवार के अतिरिक्त आपका इस राज्य के बड़े २ जागीरदारों में भी अच्छा सम्मान था। आपके दौलतसिंहजी नामक एक पुत्र हुए।

सुराणा दौलतसिंहजी—आप भी अपने पिताजी की तरह होशियार तथा प्रवन्ध कुशल सज्जन थे। आप संवत् १९४४ में भींडर के मौत मिन्द मुकर्रर किये गये। इस पद पर आपने बड़ी योग्यता से काम किया। इसी प्रकार कई ठिकानों के मौत मिन्द भी मुकर्रर किये गये। तदनन्तर आपकी कार्य्य कुशलता से प्रसन्न होकर आपको अकाउटंट जनरल मेवाड़ का पद को प्रदान किया गया। इन सब पदों पर जवाबदारी के साथ काम करते हुए आप स्वर्गवासी हुए। आपकी कारगुजारी के उपलक्ष्य में आपके पूर्वजों के सम्मान आपको पुनः इनायत हुए तथा कई खास रुक्के भेजकर आपकी सेवाओं का समुचित आदर किया। आपके रतनसिंहजी जसवन्तसिंहजी तथा जीवनसिंहजी नामक तीन पुत्र हुए।

सुराणा रतनसिंहजी कानोड़ ठिकाने के मोतमिंद, टकसाल के दरोगा आदि स्थानों पर मुकर्रर किये गये। इस परिवार के विवाहोत्सव तथा अन्य इसी प्रकार के उत्सवों पर उदयपुर के महाराणाओं ने कई बार बहुत सी रकमें प्रदान कर इस खानदान के सम्मान में वृद्धि की थी। सुराणा रतनसिंहजी



शाह जोरावरसिंहजी सुराणा, उदयपुर.



सेठ बच्छराजजी सुराणा, बागलकोट.



सेठ खींवकरणजी सुराणा, रीणी.



सेठ कन्हैयालालजी सुराणा, बागलकोट.

का जन्म संवत् १९३९ में हुआ। आप आज भी उदयपुर में सम्मानित किये जाते हैं। आपके भ्राता जसवन्तसिंहजी का संवत् १९४६ में जन्म हुआ। आप बहुत समय तक उदयपुर के महाराणा फतेसिंहजी के पेशी क्लार्क रहे। वर्त्तमान में आप विद्यमान हैं। आपको उदयपुर दरबार की ओर से कई बार रुपये इनायत किये गये हैं। सुराणा जीवनसिंहजी का संवत् १९६१ में जन्म हुआ। आप बड़े उत्साही तथा मैट्रिक तक पढ़े हुए सज्जन हैं। वर्तमान में आप इन्दौर-स्टेट के काटन कंट्राक्ट आफ़िस में काम कर रहे हैं। आप सब भाई बड़े मिलनसार और सज्जन व्यक्ति हैं।

सुराना नरसिंहदासजी का खानदान, झालरापाटन

इस खानदान का मूल निवास स्थान नागोर का है। आप श्वेताम्बर जैन स्थानकवासी आम्नाय के मानने वाले सज्जन हैं।

सेठ कनीरामजी सुराना—सेठ उत्तमचन्दजी के पुत्र सेठ कनीरामजी इस खानदान में बड़े प्रसिद्ध और प्रतिभाशाली व्यक्ति हुए। आप नागोर से कोटा आये और वहाँ के दीवान मदनसिंहजी झाला के पास प्रधान कामदार हो गये। जब संवत् १८९४ में कोटा से झालावाड़ रियासत अलग हुई, उस समय मदनसिंहजी के साथ आप भी झालावाड़ आगये। झालावाड़ का राज्य स्थापित करने में आपका बड़ा हाथ था। आप बड़े बुद्धिमान और राजनीति निपुण पुरुष थे। आपके कार्य्यों से प्रसन्न हो कर महाराज राणा मदनसिंहजी ने आपको रूपपुरा नामक गाँव जागीर में बख्शा और मियाने की इज्जत बख्शी। तथा जीकारा और "नगर" सेठ का खिताब प्रदान किया। उसके बाद सम्वत् १९१५ के बैशाख सुदी १० को महाराज राणा परथीसिंहजी ने १५००) की आमदनी के आमेठा वगैरह गाँव जागीर में बख्शे। आपका स्वर्गवास संवत् १९२० के कार्तिक बदी ६ को हुआ।

सेठ कनीरामजी के नाम पर सेठ गंगाप्रसादजी दत्तक आये। आपको महाराज राणा परथीसिंहजी ने दो हजार की जागीरी बख्शी। तथा फौज की बख्शीगिरी का काम सिपुर्द किया। आपका स्वर्गवास सं० १९२३ में हुआ।

सेठ नरसिंहदासजी सुराणा—सेठ गङ्गाप्रसादजी के स्वर्गवास के समय आपके पुत्र सेठ नरसिंहजी की उम्र केवल चार वर्ष की थी। उस समय जागीर आपके नाम पर कर दी गई और बख्शीगिरी का काम भी आपके नाम पर हुआ जिसका संचालन आपके बालिग होने तक नायब लोग करते रहे। आप बड़े प्रतिभाशाली और नामांकित व्यक्ति हैं। सन् १९१९ में महाराज राना भवानीसिंहजी ने पुनः आपको जीकारे का सम्मान बख्शा। उसके पश्चात् सन् १९२६ में उक्त महाराजा ने आपको पैरों में सोना बख्शा। उसके पश्चात् सन् १९३० में वर्तमान महाराज ने आपको ताजीम दी।

सेठ नरसिंहदासजी के यहाँ मगनमलजी दत्तक आये। आपका जन्म सम्वत् १९३७ में हुआ। शुरु में सन् १९१२ में आपने रियासत के सेटलमेंट में काम किया। इस काम को आपने बहुत सफलता-पूर्वक किया जिससे खुश हो कर महाराजा साहब ने आपको सिरोपाव बख्शा। उसके बाद आप पाटन में तहसीलदार बनाये गये वहाँ से आप पचपहाड़ के तहसीलदार बनाये गये। इस काम को आपने बड़ी होशियारी और लोक प्रियता के साथ सम्पन्न किया। कुछ समय तक आपने झालरापाटन में इन्चार्ज रेव्हेन्यू आफिसर का काम भी किया। उसके पश्चात् सन् १९३० में आपकी पेन्शन हो गई। आपके तीन पुत्र हैं। जिनके नाम सौभागमलजी, समरथमलजी, और प्रतापसिंहजी हैं।

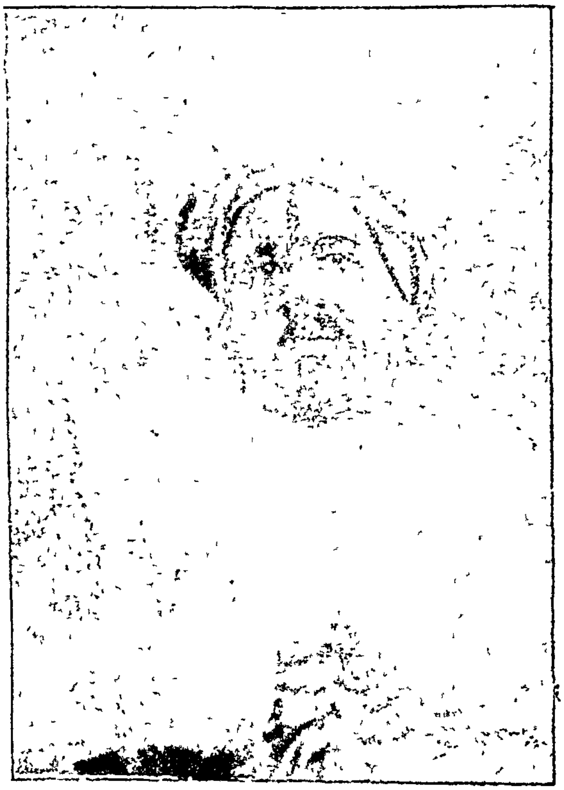
सौभागमलजी—आपका जन्म संवत् १९५१ में हुआ। आपने बी० ए० पास करके एम० ए० प्रीव्हियस पास किया। वहाँ से आप हाऊस मास्टर होकर राजकुमार कॉलेज रायपुर (सी० पी०) में गये। वहाँ से फिर आप अपने पिताजी के स्थान पर पचपहाड़ के तहसीलदार बनाये गये। उसके पश्चात् आप महाराजा के साथ अक्टूबर सन् १९३० में विलायत चले गये। फरवरी १९३१ में वापस आकर रियासत में हाउस कण्ट्रोलर नियुक्त हुए। उसके पश्चात् आप मिलीटरी सेक्रेटरी बनाये गए। कुछ समय तक आप महाराजा के प्रायवेट सेक्रेटरी भी रहे। इस समय आप महाराजा के खास कर्मचारियों में हैं।

समरथसिंहजी—आपका जन्म सम्वत् १९७१ में हुआ। आपने पूना में सन् १९३१ में बी० एस० सी० पास किया और इस समय सिविल इञ्जिनियरिंग की ट्रेनिंग के लिए विलायत गये हैं। इनसे छोटे भाई प्रतापसिंहजी मेट्रिक में पढ़ते हैं।

सुराणा पनराजजी का परिवार, सिरोही

इस परिवार के पूर्वज सुराणा सतीदासजी सोजत में निवास करते थे। आपके सम्बन्ध में सोजत में सुराणों के वास में एक शिलालेख खुदा हुआ है। उस से ज्ञात होता है कि "ये सम्वत् १७७२ के वैशाख मास में अचानक १०-१५ चोरों के हमले से मारे गये और उनकी धर्म पत्नी उनके साथ सती हुई।" इनके बाद क्रमशः मलूकचन्दजी तथा भानीदासजी हुए। सुराणा भानीदासजी के निहालचन्दजी मोती-रामजी तथा खींवराजजी नामक ३ पुत्र हुए। सुराणा मलूकचंदजी सोजत के कोतवाल थे। और निहालचंदजी वोहरगत का व्यापार करते थे। निहालचन्दजी के धीरजमलजी आदि ५ पुत्र हुए। सुराणा धीरजमलजी की राज्य के अधिकारियों से अनबन हो गई, इसलिये इनकी सब सम्पत्ति लुटवादी गई। संवत् १९१६ में आप स्वर्गवासी हुए। उस समय आपके पुत्र नथमलजी, जसराजजी, छोगमलजी और नवलमलजी छोटे थे।

सुराणा छोगमलजी—आरम्भ मे आप एरनपुरा छावनी में क्लर्क हुए तथा शीघ्रातिशीघ्र उन्नति कर आप



सेठ पनराजजी सुराणा, सिरोही.



श्री धनराजजी सुराणा S/o सेठ पनराजजी, सुमेरपु



श्री पुखराजजी सुराणा S/o सेठ पनराजजी, सिरोही.



सेठ हीरालालजी बापना, भीनासर.

(परिचय पृ० नं० २१७ में देखिये)

एरनपुरा, आबू और अजमेर के खजाने पर मुकर्रर होते गये। इसके बाद आपने १२ साल तक साहूकारी नौकरी की और अंत में धार्मिक जीवन बिताते हुए स्वर्गवासी हुए।

सुराना पनराजजी—आप छोगमलजी के पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९२५ में हुआ। १५ साल की वय में आपने कपड़े का व्यापार शुरू किया। यहाँ आपको चौधरी का भी सम्मान मिला। इसके बाद आपके जीवन का विशाल क्रान्ति युग आरम्भ हुआ। आपको अपनी कर्तव्य शक्ति के दिखलाने का पूरा अवसर मिला। सम्वत् १९५६ में सिरोही स्टेट ने अपनी प्रजा पर ३१ भारी टेक्स लगाये, संवत् १९६८ में उसका विरोध जनता ने आपके नेतृत्व में उठाया। आपने कई गण्यमान्य व्यक्तियों के साथ सिरोही जाकर टेक्स माफ करवाने की कोशिश की। लेकिन रियासत ने उस पर कोई ध्यान नहीं दिया, तब आपने गुप्त रूप से जोधपुर दरबार से उनकी हद में शिवगंज के समीप एक बस्ती आबाद करने का परवाना हासिल किया और वहाँ शिवगंज के सैकड़ो कुटुम्बों को लेजाकर आबाद किया। जोधपुर स्टेट ने आपका सम्मान कर आपको "नगर सेठ" की पदवी, सिरोपाव, कड़ा, कन्ठी, दुशाला और मंदिल इनायत किया। साथ ही आबाद होने वाली जनता को ३२ कलमों की छूट दी। जब यह समाचार सिरोही दरबार ने सुना तो अपनी प्रजाके सब टेक्स माफ कर दिये। जिससे बहुत से कुटुम्ब वापस शिवगंज चले गये। आपने सुमेरपुर में सर्वहित कारिणी सभा स्थापित की। जैन मन्दिर, गणेश व महादेव का मन्दिर, धर्मशाला, मस्जिद, प्रतापसागर नामक कूप आदि स्थान बनवाये। इसी बीच सन् १९१४ में यूरोपियन वार छिड़ा, उस समय इस स्थान की आब हवा उत्तम समझ कर ए० जी० जी० अजमेर ने जोधपुर दरबार से सुमेरपुर नामक बस्ती, तुर्की कैदियों को रखने के लिए माँगी। तथा जोधपुर के मुसाहिब, ए० जी० जी०, आदि ने यहाँ के निवासियों को समझाया और यह बस्ती खाली कराई। तथा यहाँ तुर्की कैदी आबाद किये गये।

सुमेरपुर खाली करते ही पनराजजी सुराणा ने उसके समीप ही ऊंदरी नामक गाँव आबाद किया, और वहाँ अपनी एक जीनिंग फेक्टरी खोली। सम्वत् १९७२ में आपके मझले पुत्र धनराजजी को उनके विवाह के समय जोधपुर स्टेट से पालकी सिरोपाव इनायत हुआ। युद्ध शांत होने के बाद ऊंदरी तथा सुमेरपुर के राज्य कर्मचारियों से आपकी अनबन हो गई। उसी समय सिरोही दरबार ने आपको सिरोही स्टेट में बुलवाया। अतः आपने सम्वत् १९८२ में सिरोही के समीप "नया बाजार" नामक बस्ती आबाद की। आपकी तर्क शक्ति और याददाश्त अच्छी है। सोजत में "शुभखाता दुकान और भगवानजी पुरुषोत्तम" नामक फर्म के स्थापन में आपने प्रधान योग दिया था। इसी प्रकार उम्मेद कन्याशाला के स्थापन में और सम्वत् १९७६ में मुसलमानों के झगड़े को निपटाने में भी आपने काफी परिश्रम उठाया था।

सेठ पनराजी सुराणा के लालचन्दजी, धनराजजी तथा सुकनराजजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें

लालचन्दजी का अन्तकाल हो गया है। तथा सुराणा धनराजजी इस समय सुमेरपुर जीनिंग फेक्टरी का काम देखते हैं। आपकी वय ३१ साल की है।

सुराणा सुकनराजजी का जन्म संवत् १९६१ में हुआ सन् १९२४ में आपने सोजत में प्रेक्टिस शुरू की। सन् १९२७ में आप सिरोही आ गये। यहाँ सरूप नगर के लिये आप आनरेरी मजिस्ट्रेट बनाये गये। इधर ४ सालों से आप सिरोही में वकालात करते हैं। आप सिरोही के वकीलों में अच्छा स्थान रखते हैं और आप कानून की अच्छी जानकारी रखते हैं और उग्र बुद्धि के युवक हैं।

सुराणा हीरालालजी, सोजत

हम ऊपर लिख आये हैं कि सुराणा निहालचन्दजी के छोटे भ्राता खींवराजजी और मोतीरामजी थे, उन्हीं से इस परिवार का सम्बन्ध है। सुराणा मोतीरामजी ने जोधपुर दरबार से जीव हिंसा रुकवाने के कई परवाने हासिल किये। आप बड़े वीर और बहादुर प्रकृति के पुरुष थे। इनके पुत्र साहबचन्दजी संवत् १८६७ में सोजत के कोतवाल थे। इनके बाद तेजराजजी और जसवन्तराजजी हुए। जसवन्तराजजी के चार पुत्र हुए। इनमें पन्नालालजी गुजर गये हैं, बलवन्तराजजी कलकत्ते में जवाहरात का तथा सुकनराजजी दारव्हा में रुई का व्यापार करते हैं। सब से बड़े सुराना हीरालालजी सोजत में रहते हैं।

सुराणा हीरालालजी बड़े हिम्मतवर, समाज सेवी और ठोस काम करने वाले व्यक्ति हैं। संवत् १९३० में आपका जन्म हुआ। १४ साल तक आपने जोधपुर में वकालात की। इसके बाद आपने मारवाड़ की जैन डायरेक्टरी तयार करने में बहुत परिश्रम किया। फिर श्वेताम्बर जैन कान्फ्रेन्स की ओर से मारवाड़ के जैन मंदिरों की जांच व दुरुस्ती का कार्य्य उठाया। जब जोधपुर महाराजा उम्मेदसिंहजी सन् १९२५ में विलायत से वापस आये, उस समय आपने मारवाड़ की जनता की ओर से ५ हजार रुपया खरच कर दरबार को एक किताब नुमा मानपत्र भेंट किया, जिसमें चांदी के १६०० अक्षर थे। जब पालीताना दरबार से शत्रुंजय का झगड़ा हुआ, उसका भारत भर में प्रोपेगंडा करने का भार ६ व्यक्तियों को दिया, उसमें १ आप भी थे। मारवाड़ से गाय, फी मेल शिप्स तथा सी० गुड्स बाहर न जाने देने के लिये आपने जबर्दस्त प्रयत्न उठाया, लेकिन जब जोधपुर दरबार ने सुनवाई नहीं की, तो सुराणा हीरालालजी ने दरबार के बंगले पर ४ दिन तक अनशन सत्याग्रह किया। इस समय आपके पास हर समय २ हजार आदमी बने रहते थे। अन्ततः दरबार से उपरोक्त पशु बाहर न जाने देने की परवानगी हासिल हुई। इसी तरह सिरोही स्टेट से भी पर्य्यूपण पर्व में जीवहिंसा न होने का हुकुम प्राप्त किया। कहने का तात्पर्य्य यह कि सुराणा हीरालालजी की पब्लिक स्प्रिट प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

सेठ माणकचन्द शेरमल सुराणा, नागपुर

इस परिवार का मूल निवास अलाय (नागोर) नामक ग्राम है। वहाँ से सेठ माणकचन्दजी सुराणा लगभग १०० साल पहिले व्यापार के निमित्त नागपुर आये, और यहाँ आकर सदर (छावनी) में सराफी और गल्ले का धंधा प्रारम्भ किया आपके पुत्र सुराणा शेरमलजी थे।

शेरमलजी सुराणा—आपने इस फर्म की विशेष तरक्की की। आप बड़े बुद्धिमान और दूरदर्शी पुरुष थे। आपका नाम सी० पी० तथा बरार के लोकप्रिय और सार्वजनिक कामों में भाग लेने वाले सज्जनों में गिना जाता था। आपका सम्वत् १९६१ में स्वर्गवास हुआ। आपके रामचन्दजी, रतनचन्दजी, लखमीचन्दजी, मोतीलालजी, सूरजमलजी चांदमलजी और ताराचन्दजी नामक ७ पुत्र हुए। इन बन्धुओं में इस समय सुराणा मोतीलालजी, सूरजमलजी तथा ताराचन्दजी विद्यमान हैं।

ताराचन्दजी सुराणा—आपका जन्म सम्वत् १९५४ में हुआ। आप धार्मिक और सुधरे विचारों के समाज सेवी सज्जन हैं। सन् १९२७ में सी० पी० बरार ओसवाल सम्मेलन के समय आप स्वागताध्यक्ष थे। आप श्वेताम्बर जैन समाज के तीनों आम्नाय के शास्त्रों की अच्छी जानकारी रखते हैं।

इस समय आप मृतक भोज प्रति-बन्धक संस्था के प्रेसिडेण्ट हैं। आपके बड़े भ्राता सेठ मोतीलालजी तथा सूरजमलजी सज्जन व्यक्ति हैं। तथा फर्म का व्यवसाय संचालित करते हैं। नागपुर तथा यवतमाल जिले के ओसवाल समाज में आपके परिवार का अच्छा सम्मान है।

सेठ मोतीलालजी सुराणा के दो पुत्र हुए। पन्नालालजी और सिद्धकरणजी। पन्नालालजी का १५ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो चुका है। सूरजमलजी के तीन पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः शेशकरणजी, शुभकरणजी प्रेमकरणजी हैं। शेसकरणजी बड़े उत्साही और समाज सेवी सज्जन हैं। ओसवाल समाज की उन्नति के लिए आपके हृदय में बड़ी आकांक्षा रहती है। नागपुर के सभी ओसवाल सभा सोसाइटियों में आप बड़े उत्साह से भाग लेते हैं। शुभकरणजी यवतमाल दुकान पर काम करते हैं, आप बड़े उत्साही युवक हैं। तीसरे प्रेमकरणजी इण्टर में पढ़ रहे हैं। ताराचन्दजी के दो पुत्र हैं—हेमकरणजी तथा चेनकरणजी। इनमें हेमकरणजी नागपुर दुकान पर काम करते हैं। इस फर्म की एक शाखा शेरमल सूरजमल के नाम से यवतमाल में भी है। इन दोनों स्थानों पर यह दुकान बहुत प्रतिष्ठित मानी जाती है। इन दोनों दुकानों पर सोना चांदी और बैंकिंग का व्यवसाय होता है।

रिणी का सुराणा परिवार

इस परिवार के लोग सांतू नामक स्थान पर रहते थे। वहां से १०० वर्ष पूर्व रिणी में आकर बसे। आप जैन श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। इस खानदान में नथमलजी हुए।

इनके प्रपौत्र मोहनलालजी के रामसिंहजी, लूनकरणजी, डूंगरसीदासजी, जालिमसिंहजी तथा खुशालचन्दजी नामक पांच पुत्र हुए।

सुराणा लूनकरणजी का परिवार—आप के उदयचन्दजी तथा हंसराजजी नामक दो पुत्र हुए। इन में से उदयचंदजी के बागमलजी तथा बागमलजी के इंद्रचन्दजी, नानूरामजी तथा सागरमलजी नामक तीन पुत्र हुए। सेठ इन्द्रराजजी तक की पीढ़ी के सब लोग रिणी में ही रहे। सुराणा इन्द्रराजजी इस समय रिणी में वकालत करते हैं। आपके सोहनलालजी, माणकचन्दजी तथा मोतीलालजी नामक तीन पुत्र हैं। सोहनलालजी के दो पुत्र हैं।

सबसे पहले सुराणा नानूरामजी देश से कलकत्ता आये और यहाँ चाँदी की दलाली करना प्रारम्भ किया जो आज भी आप कर रहे हैं। आपका रिणी में अच्छा सम्मान है। आपके जंवरीमलजी, कुन्दनमलजी तथा ताराचन्दजी नामक तीन पुत्र हैं। जवरीमलजी के झूमरमलजी तथा रतनलालजी नामक दो पुत्र हैं। सागरमलजी भी इस समय दलाली करते हैं। आपके छोटूलालजी एवम् भिक्खनचन्दजी नामक दो पुत्र हैं।

सुराणा डूंगरदासजी का खानदान—आपके मिर्जामलजी, कालूरामजी, मोहबतसिंहजी, ठाकुरदासजी पृथ्वीराजजी तथा किशनचन्दजी नामक छः पुत्र हुए। इनमें से मिर्जामलजी के परिवार में मालचन्दजी दलाली करते हैं तथा बालचन्दजी मनोहरदास के कटले में भोपतराम बालचन्द के नाम से कपड़े का व्यापार करते हैं। कालूरामजी के परिवार में सुजानमलजी एवम् रुक्मानन्दजी मैमनसिंह में व्यापार करते हैं।

सुराणा पृथ्वीराजजी सबसे पहले कलकत्ते आये और यहाँ दलाली करने लगे। तदनन्तर आपने अपनी चलती की एक दुकान कलकत्ते में गुलाबचन्द शोभाचन्द के नाम से स्थापित की। आपके स्वर्गवासी होने के पश्चात् आपकी धर्मपत्नी चांदाजी ने तेरापन्थी सम्प्रदाय में महासती के रूप में दीक्षा ग्रहण करली। सेठ पृथ्वीराजजी के गुलाबचंदजी एवम् शोभाचंदजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें सेठ शोभाचन्दजी के बंसीलालजी नामक पुत्र है। आप बड़े मिलनसार नवयुवक हैं। इस समय फर्म के काम को आप दोनों पिता पुत्र देखते हैं। बंसीलालजी के भीखमलालजी नामक पुत्र हैं।

इसके अतिरिक्त सुराणा रामसिंहजी के परिवार में सुगनचन्दजी, मेघराजजी, तोतारामजी, चौथमलजी तथा सुखराजजी करसियांग में व्यापार करते हैं तथा धर्मचन्दजी, नेमीचन्दजी दलाली करते हैं और धर्मचन्दजी के पुत्र लखमीचन्दजी, भँवरलालजी एवम् डायमलजी विद्यमान हैं। नेमीचन्दजी के पुत्र डालचन्दजी बी० ए० तथा बच्छराजजी हैं। सुराणा जालमचन्दजी के परिवार में रायचन्दजी और जयचन्दलाल



श्री नानूरामजी सुराणा, कलकत्ता.



सेठ शोभाचन्दजी सुराणा (गुलाबचंद शोभाचन्द) कलकत्ता.



सेठ बालचन्दजी सुराणा (भोपतराम बालचन्द), कलकत्ता.



सेठ बन्सीलालजी सुराणा (गुलाबचन्द शोभाचंद), कलकत्ता.

जी तथा सुराणा कुशलचन्दजी के परिवार में दीपचन्दजी, हीरालालजी,रिधकरणजी, रावतमलजी, बहादुरमल-जी एवम् जीतमलजी नामक पुत्र हैं।

सेठ शेरमलजी सुराणा का खानदान, राजगढ़

इस परिवार वाले राजगढ़ (बीकानेर-स्टेट) के निवासी श्री जैन श्वेताम्बर तेरापन्थी आम्नाय को मानने वाले हैं। इस खानदान में सेठ शेरमलजी हुए। आपके ख्यालीरामजी तथा भगवानदासजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें से सेठ भगवानदासजी सबसे पहले राजगढ़ से कलकत्ता गये और वहाँ पर आपने कपड़े की दलाली प्रारम्भ की। आपके सुखचन्दजी तथा ख्यालीरामजी के लाभचन्दजी नामक पुत्र हुए।

सुखचन्दजी भी इसी प्रकार देश से बंगाल प्रान्त में बोगरा नामक स्थान में गये और काम सीखने लगे। तदनन्तर आपने कई फर्मों पर नौकरियाँ की। आपकी होशियारी से मालिक लोग खुश रहे। इसके पश्चात् संवत् १९६२ में सुखचन्द खींवकरण के नाम से आपने कलकत्ते में कपड़े की फर्म स्थापित की। इसमें आपको काफी सफलता रही। आपके खींवकरणजी तथा मालन्चदजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ खींवकरणजी ने प्रथम तो अपनी कपड़े की फर्म के काम में सहयोग लिया। और फिर कई स्थानों की दलाली की। इसके पश्चात् आपने जुहारमल सोहनलाल के नाम से जापानी तथा विलायती कपड़े का डायरेक्ट इम्पोर्ट शुरू किया जिसमें आपको काफी सफलता रही। आपके सोहनलालजी भँवरलालजी व शुभकरणजी नामके तीन पुत्र हैं। इस समय सोहनलालजी दलाली करते तथा भँवरलालजी सोहनलालजी सुराणा ११ क्रास स्ट्रीट की कपड़े की दुकान का काम देखते हैं। बाबू मालचन्दजी भी इस समय स्वतन्त्र दलाली करते हैं।

सेठ भूरामल राजमल सुराणा, जयपुर

यह सुराणा खानदान बादशाही जमाने से देहली में जवाहरात का कामकाज करता था। इस वंश में सुराणा मोतीलालजी के पूर्वज १५० वर्ष पूर्व जयपुर आये। सुराणा मोतीलालजी के रंगलालजी, जवाहरलालजी, बख्तावरमलजी तथा हीरालालजी नामक ४ पुत्र हुए।

इन चारों भाइयों में से रंगलालजी के पुत्र ताराचन्दजी व हरकचन्दजी हुए, जवाहरलालजी के भूरामलजी, चौथमलजी तथा बख्तावरमलजी के पुत्र लालचन्दजी हुए। इनमें हरकचन्दजी के नाम पर भूरामलजी दत्तक दिये गये।

सुराणा हरकचंदजी के समय से इस खानदान में पुनः जवाहरात के व्यापार में उन्नति हुई।

आपके पुत्र भूरामलजी ने इसे विशेष चमकाया। भूरामलजी का जन्म लगभग संवत् १९२२ में हुआ। ये जयपुर, जोधपुर, बीकानेर आदि राजाओं, रईसों तथा जागीरदारों के यहाँ जवाहरात के तयारीमाल की बिक्री करने में विशेष जुटे रहे। इसमें इन्होंने लाखों रुपये कमाये और कई मकानात, इमारतें बनवाईं तथा खरीद कीं। जौहरीबाजार का लाल कटला भी आपने सम्वत् १९४२ में खरीदा। आप यहाँ की ओसवाल समाज में बड़े प्रतिष्ठित पुरुष माने जाते थे। संवत् १९७७ में आप स्वर्गवासी हुए।

सेठ भूरामलजी के पुत्र सेठ राजमलजी सुराणा का जन्म संवत् १९६४ में हुआ। आप विवेकशील तथा शान्त स्वभाव के सज्जन हैं। इस समय आप जयपुर की ओसवाल समाज में धनिक व्यक्ति माने जाते हैं। इस समय आपके यहाँ बैंकिंग, जवाहरात तथा मकानों के किराये का काम होता है। आपकी जयपुर में बहुतसी इमारतें बनी हुई हैं।

लाला गुलाबचन्द धन्नालाल सुराणा, आगरा

आप श्वेताम्बर जैन स्थानकवासी आम्नाय को मानने वाले हैं। इस खानदान का मूल निवास स्थान नागौर का है मगर करीब दो तीन सौ वर्षों से यह खानदान आगरे में निवास करता है। इस खानदान में लाला बुद्धाशाहजी हुए। आपके दो पुत्र हुए जिनके नाम क्रम से लाला चुन्नीलालजी और लाला मुन्नालालजी था। जिनमें यह खानदान लाला चुन्नीलालजी का है। लाला चुन्नीलालजी का स्वर्गवास संवत् १९१८ में हो गया। लाला चुन्नीलालजी के लाला गुलाबचन्दजी नामक पुत्र हुए, आपने इस खानदान के व्यवसाय, सम्पत्ति और इज्जत की खूब तरक्की दी। आप बड़े व्यापार कुशल और बुद्धिमान व्यक्ति थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९८८ में हो गया। आपके दो पुत्र हुए। लाला धन्नालालजी और लाला बाबूलालजी। इनमें से लाला धन्नालालजी का स्वर्गवास संवत् १९८५ में हो गया। लाला बाबूलालजी का जन्म संवत् १९३९ का है। आपही इस समय इस खानदान के संचालक हैं। आप बड़े सज्जन और बुद्धिमान व्यक्ति हैं। इस समय आपही इस फर्म के व्यवसाय का संचालित करते हैं। आपके दो पुत्र हैं जिनके नाम निर्मलचन्दजी और उदयचन्दजी हैं।

आगरे के ओसवाल समाज में यह खानदान बहुत प्रतिष्ठित और अगण्य हैं। इस फर्म पर गोटा किनारी का पुश्तैनी व्यवसाय होता है। जिसके लिए फर्म को लार्ड चेम्सफोर्ड, लार्डरीडिङ्ग, लार्ड इरविन, बंगाल गवर्नर, लार्ड लिटन आदि कई महानुभावों से प्रशंसापत्र मिले हैं। इस फर्म ने अपने यहाँ मशीनों से सोने चांदी की जंजीरों को बनाने का काम प्रारम्भ किया है। यह काम बहुत बड़े स्केल पर होता है।

सेठ चन्दनमल मिश्रीमल सुराणा, पांढर कवड़ा (यवतमाल)

जोधपुर स्टेट के कुचेरा नामक स्थान से सेठ उत्तमचन्दजी और उनके छोटे भाई चंदनमलजी व्यापार

के निमित्त ६० साल पहिले माढ़ेरी (सी० पी०) आये, और वहाँ कपड़ा किराने का व्यापार चालू किया। संवत् १९६८ में आपने पाँढर कवड़ा में दुकान की। सेठ चन्दनमलजी का स्वर्गवास सम्वत् १९७८ में हुआ। आपके बड़े पुत्र बहादुरमलजी का सं० १९८९ में स्वर्गवास होगया, और शेष मिश्रीलालजी, मोहनलालजी और मोतीलालजी नामक तीन पुत्र विद्यमान हैं। संवत् १९८२ में इन सब भाइयों का कारबार अलग २ हुआ। सेठ बहादुरमलजी के पुत्र सुगनमलजी तथा मोतीलालजी माढ़ेरी में व्यापार करते हैं। मोतीलालजी के पुत्र कँवरीलालजी तथा कानमलजी हैं।

सेठ मिश्रीलालजी सुराणा का जन्म सम्वत् १९४४ में हुआ। आप पांढ़र कवड़ा के व्यापारिक समाज में अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं। आपके यहाँ चन्दनमल मिश्रीलाल के नाम से जमीदारी, साहुकारी, सराफी तथा कपड़े का व्यापार होता है। आपने पाथरड़ी गुरुकुल, आगरा विद्यालय आदि संस्थाओं को सहायताएँ दी हैं। आपके पुत्र रतनलालजी उत्साही युवक हैं तथा फर्म के व्यापार को तत्परता से संभालते हैं। इनके पुत्र पन्नालाल हैं।

सुराणा मोहनलालजी का कारबार चन्दनमल मोहनलाल के नाम से होता है। इसी तरह उत्तमचन्दजी के पौत्र हीरालालजी, उत्तमचन्द सूरजमल के नाम से माढ़ेरी में व्यापार करते हैं।

सेठ दीपचन्द जीतरमल सुराणा, भुसावल

यह कुटुम्ब थांवला (अजमेर से १० मील की दूरी पर) का निवासी है। वहाँ से सेठ जीतरमलजी सुराणा लगभग ५०-६० साल पहिले भुसावल आये, तथा लेनदेन का व्यापार जीतरमल मोतीराम के नाम से आरम्भ किया। इस प्रकार व्यापार की उन्नति कर आप संवत् १९७२ में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र भैरोंलालजी और दीपचन्दजी विद्यमान हैं। आप दोनों सज्जन व्यक्ति हैं।

सुराणा भैरोंलालजी का जन्म संवत १९५७ में हुआ। आपकी दुकान यहाँ के ओसवाल समाज में अच्छी प्रतिष्ठित मानी जाती है। आपके छोटे भाई दीपचन्दजी २६ साल के हैं।

आनंदराजजी सुराणा, जोधपुर

आनंदराजजी सुराणा न केवल ओसवाल समाज ही में वरन् राजस्थान के देश सेवकों में अपना ऊँचा स्थान रखते हैं। आपने राजस्थान में जागृति करने के लिये बड़े २ कष्ट उठाये, तथा कई साल तक आपने जेल की कठोर यातनाएँ भोगीं। स्थानकवासी समाजके आप प्रधान नेताओं में से हैं। इस संप्रदाय की कोई उल्लेखनीय संस्था ऐसी नहीं होगी, जिससे आपका सम्बन्ध न हो।

आप ओसवाल समाज के विशेष व्यक्तियों में हैं, तथा इस समय दिल्ली में प्रेस मशीनरी का व्यापार करते हैं।*

किशोरमलजी सुराणा, जोधपुर

आपके पूर्वज नागोर में रहते थे। कोई तीन चार पुश्त से यह परिवार जोधपुर आया। किशोरमलजी सुराणा नथमलजी सुराणा के पुत्र हैं। आप ट्रिब्यूट विभाग में कार्य्य करते हैं। आप ओसवाल समाज के हित के मामलों में दिलचस्पी रखते हैं। आप ओसवाल कुटुम्ब सहायक द्रव्यनिधि नामक संस्था के स्थापकों में से एक हैं। आप स्थानकी वासी जैन आम्नाय के अनुयायी हैं। तथा जीवदया के कामों में अपनी सामर्थ्य के अनुसार अच्छा द्रव्य खर्च करते हैं। आपके चचेरे भ्राता फतेराजजी सुराणा सायर विभाग में नौकरी करते हैं। रियासत की उन्हे बहुत वकफियत है। आप देशी हिसाब के बहुत उत्तम जानकार हैं। इनके पुत्र किशनराजजी ने मेट्रिक पास किया है।

सुराणा कनकमलजी, अमृतसर

सुराणा कनकमलजी के पूर्वज शिवलालजी और बच्छराजजी मशहूर धनिक थे। आप सरवाड़ (किशनगढ़ स्टेट) में बोहरगत का व्यापार करते थे। सेठ बच्छराजजी के बलदेवसिंहजी, विजयसिंहजी हरनाथसिंहजी, अनारसिंहजी और कस्तूरमलजी नामक पांच पुत्र हुए। सम्वत् १९२५ के अकाल के समय सेठ बलदेवसिंहजी ने गरीबों को कई खाई अनाज बाँटकर, मदद पहुँचाई। कई महीनों तक जनता इन्हीं के अनाज पर गुजारा करती रही। किशनगढ़ दरबार ने आपकी उदारता की बहुत तारीफ की। साथ ही इनसे यह भी कहा कि अगर गरीब जनता के २ मास आप निकलवादें तो उत्तम हो, लेकिन अनाज न होने से बलदेवसिंहजी ने असमर्थता प्रकट की। यह सुनकर महाराजा, अपनी सरकारी खाइयां जो सरवाड़ किले में भरी थीं वह बलदेवसिंहजी के जिम्मे कर, किशनगढ़ चले गये। इस प्रकार सुराणा बलदेवसिंहजी ने वह अनाज गरीबों और जमीदारों को बांट दिया। संवत् १९२६ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पश्चात् परिवार में कोई होशियार आदमी काम सम्हालने वाला नहीं रहा। संवत् १९४० में किशनगढ़ स्टेट ने अकाल के समय दी हुई अनाज की खाइयों का बकाया वसूल करने के लिये सुराणा, विजयसिंहजी

* खेद है कि आप का परिचय कोशिश करने पर भी नहीं प्राप्त हो सका, अतएव जितना हमारी जानकारी में था—उतना ही परिचय छापा जा रहा है। लेखक—

और इनके भाइयों से तकाज़ा किया, जिससे सुराणा बंधु बड़ी तकलीफ़ में आ गये, और किशनगढ़ आकर किसी प्रकार राज्य से समझौता किया। इसके पश्चात् इधर-उधर यह परिवार व्यवसाय की तलाश में गया। संवत् १९४८ में विजयसिंहजी स्वर्गवासी हुए।

सुराणा बलदेवसिंहजी के पुत्र सोभागसिंहजी, वीसलपुर दत्तक गये। विजयसिंहजी के पुत्र गुलराजजी बम्बई गये। हरनाथसिंहजी के पुत्र चौथमलजी दानढ़ (मेवाड़) में अपने नाना के यहाँ चले गये। और अनारसिंहजी के पुत्र उगरसिंहजी संवत् १९५२ में निसंतान गुजर गये।

सुराणा कस्तूरमलजी के राजमलजी और कनकमलजी नामक २ पुत्र हुए। कस्तूरमलजी का संवत् १९६२ में और उनके पुत्र राजमलजी का इनके सम्मुख संवत् १९५६ में स्वर्गवास हो गया। अतएव कनकमलजी अमृतसर आ गये और शिवचंद सोहनलाल कोचर बीकानेर वालों की दुकान पर संवत् १९५७ में नौकर हो गये। इधर १९७७ से आप अमोलकचन्दजी श्रीश्रीमाल भी भागीदारी में अमोलकचन्द कनकचन्द के नाम से कटरा अहलू वालियाँ में शाल तथा कमीशन का व्यापार करते हैं।

सुराणा दीपचन्दजी, अजमेर

सुराणा दीपचन्दजी के पूर्वज सुराणा रायचन्दजी नागौर से रतलाम होकर अजमेर आये। इनके बाद चन्दनमलजी व दानमलजी हुए; इनके समय तक आपके लेनदेन का व्यापार रहा। दानमलजी के पुत्र दौलतमलजी भोले व्यक्ति थे इनके समय में कारबार उठ गया। इनका अंतकाल सम्वत १९८७ में होगया। इनके पुत्र सुराणा दीपचन्दजी का जन्म संवत् १९३९ को हुआ, आप बालपन से ही अजमेर की लोढ़ा फर्म पर सीख पढ़कर होशियार हुए, इधर १० सालों से लोढ़ा फर्म पर मुनीमात करते हैं। आपकी याददाश्त बहुत ऊँची है। अजमेर के ओसवाल खानदानों के सम्बन्ध में आप बहुत जानकारी रखते हैं। आपके पुत्र सुराणा हरखचन्दजी हैं।

डाक्टर एन० एम० सुराणा, हिंगनघाट

इस परिवार के पूर्वज सौभागमलजी सुराणा मैनपुर राज्य में दीवान के पद पर काम करते थे। वहाँ से राजकीय अनबन हो जाने के कारण उक्त सर्विस छोड़कर हिंगनघाट की तरफ चले आये। इनके पुत्र शेषकरणजी थे, आप संवत् १९७२ में स्वर्गवासी होगये। तब आपके पुत्र नथमलजी सुराणा की आयु केवल ७ साल की थी। इन्होंने अपनी माता की देखरेख में नागपुर से मेट्रिक पास किया। इसके बाद आपने एम० डी० की डिगरी हासिल की। सार्वजनिक कामों में भाग लेने की स्प्रिट भी आप में अच्छी है।

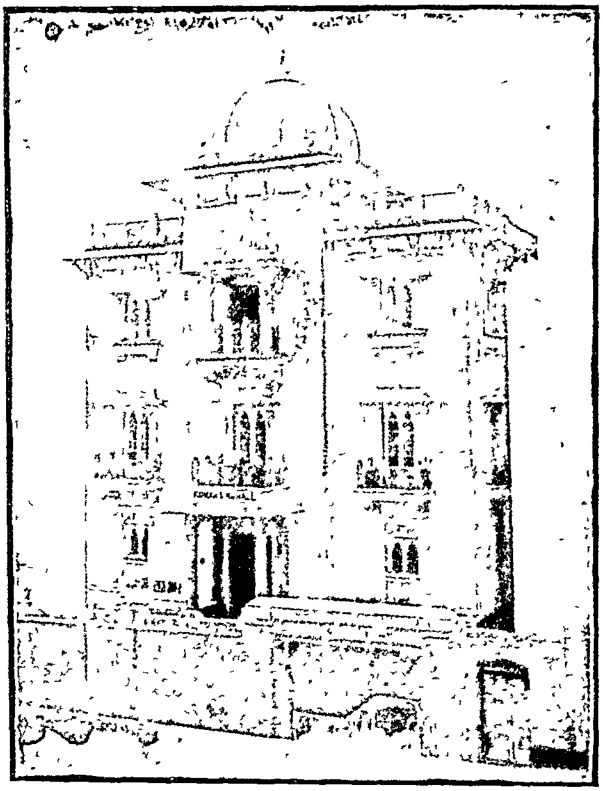
भांदकजी गुरुकुल में छात्रों को एकत्रित करने एवं उसकी व्यवस्था जमाने में आपने अकथ परिश्रम किया। इस कार्य के लिए कई मास तक आप वहाँ ठहरे। आप शिक्षाप्रेमी तथा सुधरे विचारों के सज्जन हैं। आप होमियोपैथिक चारिटेबल डिस्पेंसरी तथा महाराष्ट्र एस० स्वस्तिक स्टोर्स का संचालन करते हैं। आप हिंगनघाट की जैन युवक पार्टी के शिक्षित और उत्साही मेम्बर हैं।

सौभागमल गुलजारीमल सुराणा, बुहारनपुर

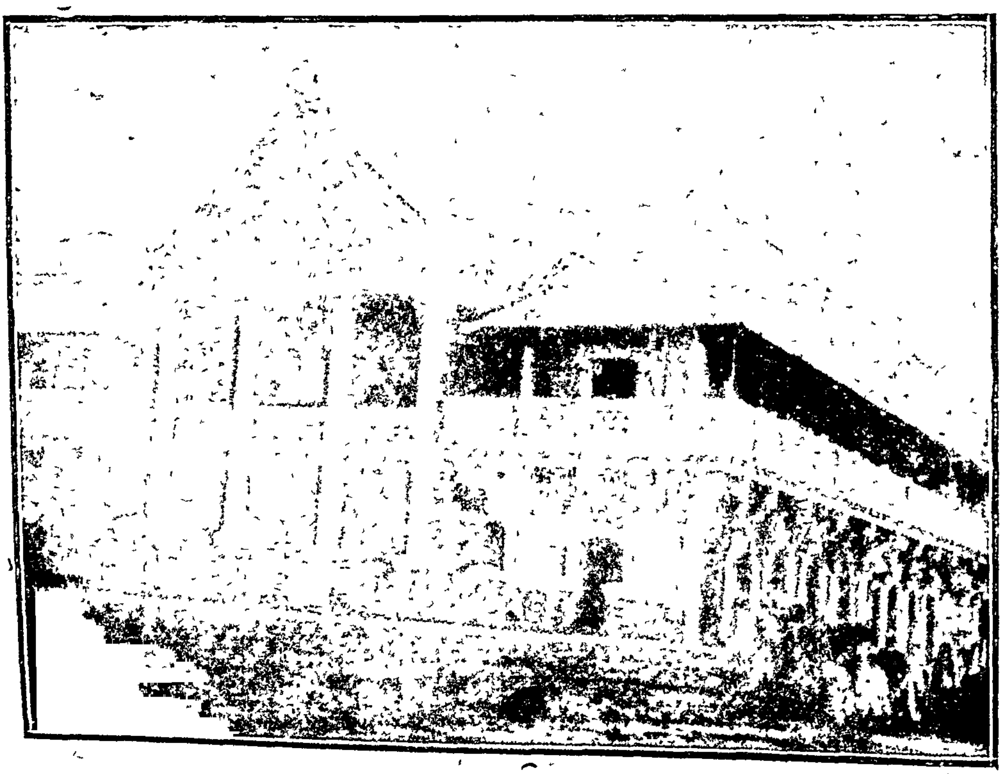
इस परिवार के व्यक्ति सेठ सौभागमलजी सुराणा नागौर से लगभग ७० साल पहिले बुहारनपुर आये, आरम्भ में आपने नौकरी की और बाद में अपनी दुकान खोली, आपके पुत्र गुलजारीमलजी और गुमानीमलजी के हाथों से धंधे को उन्नति मिली। गुलजारीमलजी संवत् १९९० के भादवा मास में स्वर्गवासी हुए। गुमानीमलजी मौजूद हैं। गुलजारीमलजी के पुत्र जोरावरमलजी तथा गुमानीमलजी के पुत्र रतनमलजी हैं। सेठ जोरावरमलजी व्यापार संचालन में सहयोग लेते हैं। इस दुकान पर बुहारनपुर (सी० पी०) में आढ़त गल्ला तथा लेनदेन का व्यापार होता है तथा यहाँ के व्यापारिक समाज में प्रतिष्ठित मानी जाती है।

कन्हैयालालजी सोहनलालजी सुराणा, उदयपुर

आप दोनों भ्राता उदयपुर के निवासी हैं तथा दोनों ही बी० एस० सी० एल० एल० बी० की परीक्षा में सफलता पूर्वक उत्तीर्ण हुए हैं। आप बड़े समाज सुधारक युवक हैं। आप दोनों भाइयों ने पर्दे की कुप्रथा को तोड़ कर ओसवाल नवयुवकों के सम्मुख एक आदर्श उपस्थित किया है। सुराणा सोहनलालजी उदयपुर में नायब हाकिम हैं।



श्री कुमारसिंह हॉल, कलकत्ता.



नाहर बिल्डिङ्ग, कलकत्ता.

नाहर

नाहरवंश की उत्पत्ति

अजीमगंज के नाहरवंशवालों के पुराने इतिहास पर दृष्टि पात करने से यह ज्ञात होता है कि इस वंश की उत्पत्ति पँवार (परमार) राजपूतों से है। इस वंश के मूल पुरुष प्रतापी राजा पँवार थे। पँवार राजा की ३५ वीं पीढ़ी में आसधर जी हुए, जिनके समय से यह वंश नाहरवंश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसके सम्बन्ध में यह किम्वदन्ति प्रचलित है कि भगवती देवी ने बाघनी का रूप धारण कर बालक आसधर को उनकी माता की गोद से चुरा कर जंगल में अपने दूध से पाला। जब ये बड़े हुए और मानवी दुनिया में आये तब इन्होंने अपने आप को नाहर के नाम से प्रसिद्ध किया। इन्हीं आसधरजी ने सं० ७१७ में जैनाचार्य्य श्री मानदेव सूरिजी के उपदेश से महानगर में जैन धर्म ग्रहण किया। और तब से ये महानगर में ही रहने लगे। इनकी ४७ वीं पीढ़ी में अजयसिंहजी हुए। इन्होंने महानगर को छोड़कर मारवाड़ में अपना निवास स्थान किया। वहाँ से कुछ समय के पश्चात् इनके वंशज शेषमलजी भीनमाल आये। इसके पश्चात् इनके वंशज कमरमलजी राधरिया डेलाना चले गये। और इनके पुत्र तेजकरणजी वहाँ से उठकर बीकानेर स्टेट के डेगाँ नामक स्थान में जा बसे।

नाहर खड्गसिंहजी का परिवार

राजा पँवार की ७३ वीं पीढ़ी में बाबू खड्गसिंहजी का जन्म डेगाँ में ही हुआ था। उस समय बीकानेर राज्य में यह परिवार बहुत धनवान एवं प्रभावशाली था। नाहर खड्गसिंहजी का विवाह भी उसी ग्राम की एक कन्या से हुआ था। विवाह में घोड़े पर चढ़ कर तोरन मारा। इस प्रथा-विरुद्ध कार्य पर गाँव के ठाकुर साहब इनके विरुद्ध हो गये। यहाँ तक कि इनका सिर काट कर ठाकुर साहब के पास लानेवाले को पुरस्कार की घोषणा कर दी गई। फल-स्वरूप खड्गसिंहजी को उसी रात नववधू सहित राज्य छोड़ देना पड़ा। वे वहाँ से आगरे चले आये। आगरे आकर इन्होंने थोड़े ही समय में अपनी बुद्धि-मानी और दूरदर्शिता से अच्छी ख्याति प्राप्त करली। उन दिनों मुर्शिदाबाद निवासी जगत सेठ धन-दौलत, आदर सत्कार में सब से आगे बढ़े हुए थे। एक बार जब वे किसी राजकीय कार्य से देहली जा रहे थे,

रास्ते में आगरा ठहरे। वहीं खड्गसिंहजी से आपका परिचय हुआ। जगत सेठ जो खड्गसिंहजी के स्वजातीय और सहधर्मीय थे, उनसे मिलकर बड़े प्रसन्न हुए तथा मुर्शिदाबाद में जैनियों की कमी को अनुभव कर उन्होंने खड्गसिंहजी को बंगाल आने के लिये आमन्त्रित किया। उनके आमन्त्रण से खड्गसिंहजी सं० १८२३ में बंगाल आये और अजीमगंज में बस गये। कुछ समय बाद जगत सेठजी के आग्रह से आपने दिनाजपुर में कोठी खोली और वहाँ अपना कारबार शुरू किया। कारबार में क्रमशः वृद्धि होने पर कलकत्ते में भी आपने एक शाखा खोली। यह वह समय था जब कि उनका भाग्य उनके ऊपर मुसकरा रहा था और उनका कारबार तीव्र गति से उन्नति की ओर प्रवाहित हो रहा था।

सं० १८४६ में आपके एक पुत्र हुए जिनका नाम उत्तमचंदजी था। उत्तमचंदजी के पैदा होने के पूर्व ही उन्होंने मोतीचंदजी नामक एक युवक का पालन-पोषण पुत्रवत् किया था। कहना न होगा कि पुत्र-रत्न की प्राप्ति हो जाने पर भी मोतीचंदजी के ऊपर आपका स्नेह पूर्ववत् ही रहा। इसका एकमात्र कारण यही था कि आप बड़े उदार हृदय और उच्च प्रकृति के मनुष्य थे। आपको अपने धर्म पर अटल श्रद्धा थी। इसी के परिणाम स्वरूप आपने दिनाजपुर में आठवें तीर्थंकर श्रीचन्द्रप्रभु स्वामी का एक सुन्दर मन्दिर और धर्मशाला बनवाये।

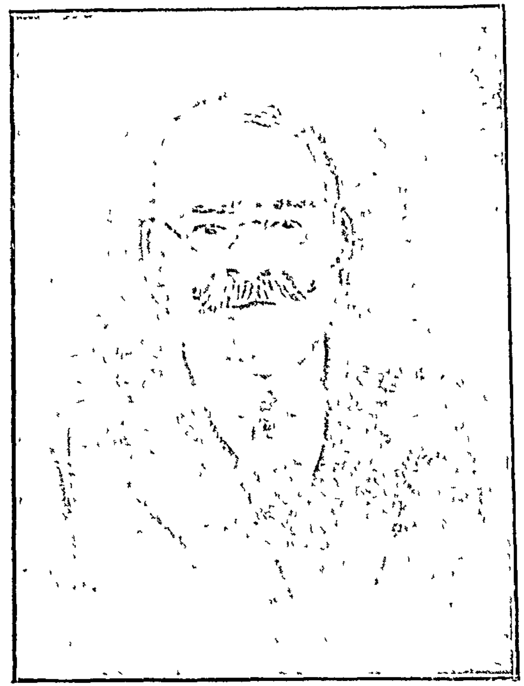
सं० १८५९ में खड्गसिंहजी की मृत्यु के पश्चात् उत्तमचंदजी और मोतीचंदजी जायदाद के उत्तराधिकारी हुए। उत्तमचन्दजी की नाबालिगी के कारण जायदाद का सारा प्रबन्ध मोतीचन्दजी ने अपने हाथ में लिया। इन दोनों भाइयों में गहरा प्रेम था। परन्तु दुर्भाग्यवश उत्तमचंदजी का केवल १७ वर्ष की उम्र में स्वर्गवास हो गया।

कुछ ही समय पश्चात् सं० १८६५ में बाबू मोतीचन्दजी का भी स्वर्गवास हो गया। अब केवल उत्तमचन्दजी की विधवा पत्नी बीबी माया कुमारी ही बच रहीं। इन्होंने अपने पिता बाबू मेघराजजी चोरड़िया की देख-रेख में जायदाद का काम सम्हाला। कुछ समय पश्चात् इन्होंने गुलालचन्दजी को दत्तक लिया। बीबी मायाकुमारी ने अजीमगंज में सं० १९१३ में पाँचवें तीर्थंकर श्री सुमतिनाथजी का मन्दिर बनवाया और उसी वर्ष जैनियों के प्रसिद्ध तीर्थ शत्रुञ्जय पर मूल टोंक में श्री आदीश्वर भगवान के मन्दिर के उपरिभाग में प्रतिमा प्रतिष्ठित करवाई पश्चात् सं० १९१६ में इनका परलोकवास हुआ।

बाबू गुलालचन्दजी—बाबू गुलालचन्दजी ने उत्तराधिकारी होने के पश्चात् जायदाद की व्यवस्था की ओर ध्यान दिया। इन्होंने अपने इलाके में कुछ ऐसे नियम प्रचलित किये जिससे प्रजा को कई सुविधायें मिलीं और वे लोग इनसे विशेष प्रसन्न रहने लगे। फलस्वरूप अब इनकी जायदाद से अच्छा लाभ होता रहा और राजकीय कर्मचारी भी इन पर बड़ी श्रद्धा रखने लगे।



स्व० रायबहादुर सितावचंदजी नाहर, अजीमगंज.



स्व० रायबहादुर मणिलालजी नाहर, कलकत्ता.

बाबू गुलालचन्दजी हृष्ट-पुष्ट तथा बड़े निर्भीक थे। इन्होंने कई बार साहस के साथ भयानक खतरों का मुकाबिला किया। एक समय इन्होंने सारी रात अपनी पत्नी बीबी प्राणकुमारी के साथ डाकुओं के एक दल का सामाना किया और उन्हें खदेड़ दिया। सं० १९०७ में आपका स्वर्गवास हो गया।

आपके पश्चात् आपकी विधवा पत्नी श्रीमती प्राणकुमारी ने बाबू सिताबचन्दजी को तीन वर्ष की अवस्था में दत्तक लिया और जब तक वे होशियार न हो गये तब तक जायदाद की व्यवस्था और देख भाल स्वयं करती रहीं। इनका स्वर्गवास १९४६ में हुआ।

रायबहादुर सिताबचन्दजी नाहर

राय बहादुर सिताबचन्दजी का जन्म सं० १९०४ में हुआ। आप पटावरी गोत्र में उत्पन्न हुए थे। तीन वर्ष की उम्र में आप बाबू गुलालचन्दजी के नाम पर दत्तक लिये गये। आपका विवाह अजीमगज निवासी बाबू जयचन्दजी वेद की पुत्री श्री गुलाब कुमारीजी से हुआ। आप हिन्दी और बंगला के अतिरिक्त संस्कृत और फारसी के अच्छे विद्वान् थे। संगीत और गायन कला में भी आपका अच्छा प्रवेश था। आपका विद्या-प्रेम अतीव सराहनीय था। सबसे पहिले आपने ही अजीमगंज में "विश्वविनोद" नामक प्रेस की स्थापना की और कई अच्छी २ धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित कीं। इन्होंने जायदाद की व्यवस्था बड़ी योग्यता से की। इनके शिक्षा सम्बन्धी विचार भी बहुत उच्च थे। बंगाल के जैनियों में आपका परिवार आज भी विद्या और संस्कृति का उच्च आदर्श माना जाता है।

समाज तथा गवर्नमेंण्ट में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। सं० १९३०-३१ में जब बंगाल में बहुत बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा था, उस समय आपने अकाल पीड़ितों को बहुत सहायता पहुँचाई थी। सं० १९३२ में भारत-सरकार ने आपको 'राय बहादुर' की पदवी से सम्मानित किया। महारानी विक्टोरिया की जुबली के अवसर पर अपने ग्रामवासी भाइयों की उच्च शिक्षा के लिये अपनी मातेश्वरीजी से अनुमति लेकर आपने "बीबी प्राणकुमारी जुबली हाई स्कूल" नामक एक अवैतनिक उच्च विद्यालय खोला; किन्तु छात्रों की कमी के कारण यह संस्था आगे चलकर बंद हो गई। सम्राट् एडवर्ड के राज्यारोहण के समय भी आप को कई सार्टिफिकेट और सम्मान प्राप्त हुए।

गवर्नमेंट की तरह समाज तथा जनता में भी आपका सम्मान कम न था। जैनियों के प्रसिद्ध केन्द्र अहमदाबाद में पाँचवीं जैन कानफरेंस के अवसर पर आपने सभापति का आसन सुशोभित किया था। इसके अतिरिक्त अनेक संस्थाओं ने आपको मानपत्र दे देकर सम्मानित किया था।

बीबी मायाकुमारीजी का बनाया हुआ मन्दिर गंगास्रोत में नष्ट हो जाने पर आपने अजीमगंज में

नवीन मन्दिर बनवाया। इसी तरह कासिम बाजारकी धर्मशाला, पावापुरीतीर्थ की विशाल धर्मशाला, अजीमगंज में "मैकेंजी पब्लिक हाल" पालीताने में 'नाहर बिल्डिंग' और कलकत्ते में "श्री आदिनाथजी का देरासर" और "कुमारसिंह हाल" नामक दिव्य विशाल भवन विशेष उल्लेखनीय हैं।

आपके नाम से दिनाजपुर जिले में सेतावगंज नामक एक बस्ती बस गई है। वहाँ पर आपने एक बड़ा अस्पताल खोला है। बिहार उड़ीसा प्रान्त के सन्थाल परगने के दुमका नामक शहर के अस्पताल में भी आपने एक 'फीमेल वार्ड' बनवा दिया था। इन सब के अतिरिक्त आपने कई सार्वजनिक संस्थाओं में काफी सहायता दी थी।

आपके ही उद्योग से अहमदाबाद में "जैन मदद फण्ड" की स्थापना हुई और आपने बीस हजार की एक बड़ी रकम इसके स्थाई फण्ड में प्रदान की थी। आप कई वर्षो तक लालबाग बेंच में आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे और म्युनिसिपैलिटी में बहुत वर्षों तक कमिश्नर थे।

इस प्रकार अत्यन्त यशस्वी जीवन व्यतीत करते हुए सं० १९७५ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपकी पत्नी श्रीमती गुलाबकुमारीजी बड़ी धर्मात्मा थीं। उनका अधिक समय धर्म-ध्यान और ईश्वरोपासना में व्यतीत होता था। आप सं० १९६९ में इहलोक छोड़ परलोक सिधारीं। आपके चार पुत्र हुए जिनके नाम क्रम से रायबहादुर मणिलालजी, बाबू पूरणचन्दजी एम० ए० बी० एल०, बाबू फतेसिंहजी और बाबू कुमरसिंहजी बी० ए० हैं। आपके ही स्मारक रूप में बाबू पूरणचंदजी ने "श्री गुलाबकुमारी लाइब्रेरी" नामक एक अत्युत्तम संग्रहालय स्थापित किया है।

रायबहादुर मणिलालजी नाहर—आपका जन्म सं० १९२१ में हुआ। आपने बंगला, हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। आपका अधिक समय सार्वजनिक कार्यों में व्यतीत होता था। सन् १८९८ में इनके पिता की मौजूदगी में सरकार से इनको 'रायबहादुर' की पदवी प्राप्त हुई थी। इसके अतिरिक्त आपको कई सम्मानपूर्ण सार्टिफिकेट मिले थे। आप बहुत दिन तक मुर्शिदावाद डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर, अजीमगंज म्युनिसिपैलिटी के चेयरमेन और लालबाग, अजीमगंज तथा कलकत्ते के प्रेसिडेंसी बेंच में आनरेरी मजिस्ट्रेट का कार्य बड़ी योग्यता से करते रहे। कलकत्ता कारपोरेशन के भी आप तीन वर्षों तक कमिश्नर थे। सं० १९६५ में आप और आपके सब भ्राता अजीमगंज से उठकर कलकत्ते में आकर बस गये।

अपने समाज में भी आपका उच्च स्थान था। तिलजला रोड में आपका 'नाहर विला' नाम का एक मनोरम उद्यान है। आप अपना भारतीय चित्रकारी तथा और और कारीगरी का संग्रह बंगाल गवर्नमेंट को दे गये थे जो इस समय कलकत्ते के इण्डियन म्युजियम के कला-विभाग में 'नाहर कलेक्शन' के नाम से



वावू पूरणचंदजी नाहर एम. ए. बी. एल., कलकत्ता.



वावू फतेसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



स्व० वावू कुमरसिंहजी नाहर बी. ए., कलकत्ता.



वावू अजयसिंहजी नाहर, कलकत्ता.

प्रदर्शित होता है। सन् १९२७ में आपका अकस्मात् हार्ट फेल होने से स्वर्गवास हो गया। आपके तीन पुत्र और एक कन्या हुए। पुत्रों के नाम क्रम से बाबू भँवरसिंहजी, बाबू बहादुरसिंहजी तथा बाबू जोहारसिंहजी थे। खेद है, कि रायबहादुरजी के स्वर्गवास के पश्चात् इन तीनों पुत्रोंका भी असमय में ही देहान्त होगया।

बाबू भँवरसिंहजी—आपका जन्म सं० १९४० में हुआ था। आप बड़े बुद्धिमान थे। कलकत्ते के सियालदह पुलिस कोर्ट में आनरेरी मजिस्ट्रेट की हैसियत से आपने कई वर्ष तक कार्य किया था। आपका देहान्त सं० १९८९ में हुआ। आपके सजनसिंहजी और भजनसिंहजी दो पुत्र हैं।

बाबू बहादुरसिंहजी—आपका जन्म सं० १९४२ में हुआ। आप सदा प्रसन्नचित्त रहते थे। बी० ए० तक आपने अध्ययन किया था। आपको पोस्टेज स्टाम्प के संग्रह का अच्छा शौक था। आपका देहान्त सं० १९८६ में हुआ। आपके जयसिंहजी और अजयसिंहजी दो पुत्र हैं।

बाबू जोहारसिंहजी—आपका जन्म सम्वत् १९५६ में हुआ। आप बड़े सरल प्रकृति के थे। आपने भी अंग्रेजी में उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। आप बी० ए० परीक्षा पास करके सालिसीटरी का काम सीखते थे। कुछ समय तक रोगग्रस्त रहने पर आपका देहान्त सम्वत् १९८७ में हुआ। आपके किरणसिंहजी दीपसिंहजी, ललितसिंहजी और तरुणसिंहजी ये चार पुत्र हैं।

बाबू पूरणचन्दजी नाहर

आपका जन्म सं० १९२२ की वैशाख शुक्ल दशमी को हुआ था। ओसवाल समाज में जितने गण्यमान्य विद्वान हैं, उनमें आपका स्थान बहुत ऊँचा है। आपका इतिहास और पुरातत्व सम्बन्धी शौक बहुत बढ़ा-चढ़ा है। आपका ऐतिहासिक संग्रह और पुस्तकालय कलकत्ते की एक दर्शनीय वस्तु है। इनमें जो आपने अतुल परिश्रम, आजीवन अध्यवसाय और अर्थ व्यय किया है, वह प्रत्येक दर्शक अनुभव करेंगे। प्राचीन जैन इतिहास की खोज में आपने बहुत कष्ट सह कर और धन खर्च कर सुदूर आसाम प्रान्त से ले कर उत्तर-पश्चिम प्रदेश, राजपूताना, गुजरात, काठियावाड़ आदि स्थानों तक भ्रमण किया है। फलस्वरूप आपने जो "जैन लेख संग्रह" नामक पुस्तक "तीन भाग" "पावापुरी तीर्थ का प्राचीन इतिहास" "एपिटोम आफ जैनिज्म" आदि ग्रन्थ प्रकाशित किये हैं, वे ऐतिहासिक दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण और नवीन अनुसन्धानों से परिपूर्ण हैं। इनके अतिरिक्त आपने समय २ पर जो निबन्ध लिखे हैं, उनका विद्वद्-समाज में बड़ा आदर हुआ है। 'आल इण्डिया ओरियंटल कानफरेंस' के द्वितीय अधिवेशन के अवसर पर जिसमें फ्रेंच विद्वान् डा० सिलभेन लेभी सभापति थे, आपने "प्राचीन जैन संस्कृत साहित्य" पर एक अँग्रेजी में प्रबन्ध पढ़ा था, वह अपने ढङ्ग का अद्वितीय था। ११ वें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में आपने "प्राचीन जैन भाषा साहित्य" पर जो लेख पढ़ा था वह भी गवेषणपूर्ण था। २० वें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अवसर

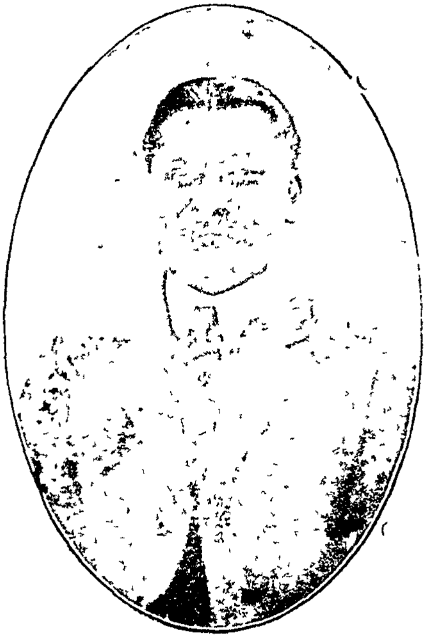
पर आपने प्रदर्शनी विभाग के मन्त्री की हैसियत से बहुत प्रशंसनीय कार्य किया था। आपके धार्मिक, ऐतिहासिक आदि विषयों पर हिन्दी, गुजराती, बंगला और अंग्रेजी के पत्र-पत्रिकाओं में समय २ निबन्ध प्रकाशित होते रहते हैं।

आपका शिक्षण उस समय हुआ जब ओसवाल समाज में शिक्षा का प्रायः अभाव सा था। आपने २० वर्ष की आयु में बी० ए० की परीक्षा पास की। पूर्व भारत के ओसवालों में आप ही उच्च शिक्षा प्राप्त पहले युवक थे। पश्चात् एम० ए० और बी० एल० की परीक्षाएँ पास कर हाई कोर्ट के वकील हुए। बनारस हिन्दू-विश्वविद्यालय में श्वेताम्बर जैनियों की ओर से आप कई वर्ष तक प्रतिनिधि थे। आप कलकत्ता विश्वविद्यालय के मेट्रिक, इंटरमिजियेट, और बी० ए० परीक्षाओं के कई वर्ष तक परीक्षक रहे। इसी विश्व-विद्यालय के० पी० आर० एस० की बोर्ड में भी आपने परीक्षक का कार्य्य किया है। आप जिस समय मुर्शिदाबाद जिले के जीयागंज एडवर्ड कारोनेशन हाई स्कूल के सम्पादक पद पर रहे, उस समय आपने बड़े परिश्रम से ढाई साल तक इस कार्य को सफलतापूर्वक संचालक किया।

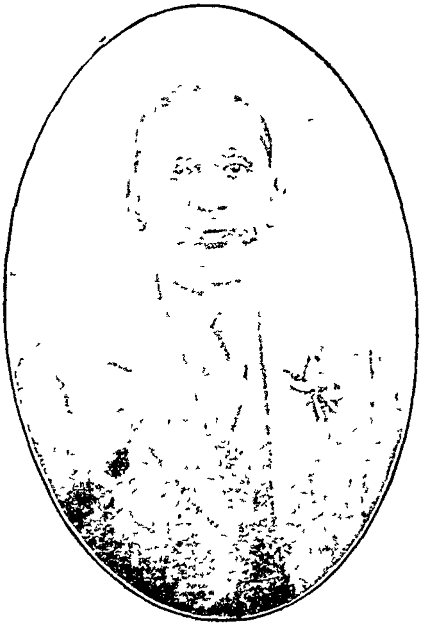
तीर्थ सेवा—आपने श्री महावीर स्वामी की निर्वाण भूमि 'पावापुरी' तीर्थ तथा 'राजगृह' तीर्थ के विषय में समय, शक्ति और अर्थ से अमूल्य सेवा की है। तीर्थ 'पावापुरी' का वर्तमान मन्दिर जो सम्राट् शाहजहाँ के राजत्वकाल में सं० १६९८ में बना था, उस समय की मन्दिर-प्रशस्ति जिसके अस्तित्व तक का पता न था, आपने ही मूलवेदी के नीचे से उद्धार किया और उसी मन्दिर में लगवा दिया है। इस तीर्थ के इलाके कुछ गाँव थे जिसकी आमदनी भंडार में नहीं आती थी, जो आपके अथक परिश्रम और एकमात्र प्रयत्न से आने लगी है। आपने पावापुरी में दीन-हीनों के लिये एक 'दीनशाला' बनवा दी है जो विशेष उपयोगी है। तीर्थ 'राजगृह' के लिये आपकी सेवा सर्वथा उल्लेखनीय है। यहाँ के विपुलाचल पर्वत पर जो श्री पार्श्वनाथजी का प्राचीन मन्दिर है, उसकी सं० १४१२ की गद्यपद्य बन्ध प्रशस्ति के विशाल शिलालेख का आपने बड़ी खोज से पता लगाया था। वह शिलालेख अभी तक वहाँ पर आपके 'शान्ति भवन' में है। इस तीर्थ के लिये श्वेताम्बर, दिगम्बर के बीच मामला छिड़ा था। उसमें विशेषज्ञों की हैसियत से आपने गवाही दी थी और आप से महीनों तक जिरह किया गया था। इसमें आपका जैन इतिहास और शास्त्र का ज्ञान, आपकी गम्भीर गवेषणा और स्मृतिशक्ति का जो परिचय मिला, वह वास्तव मे अद्भुत है। पश्चात् दोनों सम्प्रदायों में समझौता हो गया। उसमें भी आप ही का हाथ था। आपने पटना (पाटलिपुत्र) के मन्दिर के जीर्णोद्धार में अच्छी रकम प्रदान की है। ओसियां (मारवाड़) का मन्दिर जो ओसवालों के लिये तीर्थ रूप है, आपने वहाँ की अच्छी सेवा की और समीप ही डूँगरी पर जो चरण थे, उन पर आपने पत्थर की सुन्दर छतरी बनवा दी है।



बाबू जौहारसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू बहादुरसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू भँवरसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



श्री० जे० एस० नाहर, कलकत्ता.

समाज-सेवा—तीर्थ-सेवा के साथ २ आपने अपने जीवनकाल में समाज-सेवा और जन-सेवा के भी कई प्रशंसनीय कार्य किये हैं। कलकत्ते की समस्त ओसवाल जाति में सं० १९८० में जो देशी और विदेशी समस्या पर द्वन्द्व चल गया था और जिस कारण वहाँ के समाज में घृणामूलक वातावरण पैदा हो गया था, उसको मिटाने के लिये आपने ऐसी सूक्ष्म दृष्टि और बुद्धिमत्ता से कार्य किया, वह बड़ा ही आश्चर्य-जनक था। वह कलह यहाँ के ओसवाल समाज की नस नस में फैल गया था और विशेषकर थलीधड़े के बड़े २ लोग इसमें बुरी तरह फँस गये थे। आप ही की बहुदर्शिता से यह क्लेश बड़ी कुशलता से निपट गया। आप अखिल भारतवर्षीय ओसवाल महासम्मेलन के प्रथम अधिवेशन अजमेर के सभापति चुने गये थे। इस अधिवेशन की बैठक सं० १९८९ में अजमेर में हुई थी।

सांग्रहिक प्रवृत्ति—आप की खास विशेषता यह है कि आप प्रायः सभी वस्तुओं का संग्रह भली प्रकार करते रहे हैं। 'कुमारसिंह हाल' में 'नाहर म्युजियम' नाम से आपका जो संग्रह है, उसमें पाषाण और धातु की मूर्त्तियाँ, नाना प्रकार के चित्र, सिक्के आदि भारत के प्राचीन समय की कारीगरी के आपने अच्छे-अच्छे नमूने एकत्रित कर रखे हैं। आपका पूरा संग्रह देखने से ही आपकी संग्रह प्रियता का पता चल सकता है। कई वर्षों की कुँकुम पत्रिकाएँ, इनविटेशन कार्ड और हिन्दी, बंगला आदि भाषाओं के साप्ताहिक, मासिक पत्र-पत्रिकाओं के मुख पृष्टों का अच्छा संग्रह है। इसी प्रकार कई विषयों पर भिन्न २ समय में प्रकाशित सूचना, हैंडबिल, निमन्त्रण पत्रादि का भी अच्छा संग्रह है। इस प्रकार जब छोटी २ वस्तुओं के संग्रह में आप इतने तल्लीन रहते हैं। तब दूसरी २ वस्तुओं का आपके पास सुन्दर संग्रह होना स्वाभाविक ही है।

सांसारिक-जीवन—आपके सांसारिक जीवन की कुछ घटनाएँ ऐसी महत्वपूर्ण हैं कि प्रत्येक व्यक्ति के लिये वे अनुकरणीय और सामाजिक जीवन की शान्ति के लिये बहुत आवश्यक हैं। प्रथम बात यह है कि आपने अपने सब पुत्रों को उच्च शिक्षा से शिक्षित किया। पश्चात् उन लोगों के सब प्रकार से योग्य होने पर आपने अपनी विद्यमानता में सबको अलग करके उनकी साम्पत्तिक व्यवस्था भी अलग २ कर दी। समाज के अन्तर्गत माता पिता के स्वर्गवासी हो जाने पर भाई-भाई के झगड़े सब जगह देखे जाते हैं और जिस कारण समाज के बड़े बड़े घर नष्ट हो जाते हैं। इन बातों को देखते हुए आपका यह कार्य बहुत प्रशंसनीय है। सारांश यह कि आपका जीवन क्या धार्मिक, क्या सामाजिक, क्या साहित्यिक सभी दृष्टियों से उच्चादर्श है। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम क्रम से केशरीसिंहजी, पृथ्वीसिंहजी, विजयसिंहजी, और विक्रमसिंहजी हैं।

बाबू केशरीसिंहजी—आपका जन्म सं० १९५२ में हुआ। आपका पठन-पाठन कालेज में इंटर

मिजियट तक हुआ। पश्चात् घर पर ही अध्ययन किया। आपने अंगरेजी, वंगला का अच्छा अभ्यास किया है। आपको संगीत विषय का भी शौक है। पोस्टेज स्टाम्प के भी आप विशेषज्ञ हैं। आपके इस समय दो पुत्र है—अरुणसिंहजी और वरुणसिंहजी।

वाबू पृथ्वीसिंहजी—आपका जन्म सं० १९५५ में हुआ। वी० ए० की परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात् घर पर ही आपने संस्कृत, वंगला आदि का अच्छा अध्ययन किया। आपको विद्याव्यसन के साथ २ संगीत प्रेम भी है। सं० १९८९ में आपकी स्त्री का स्वर्गवास हो जाने पर आपने पुनर्विवाह नहीं किया है। आपके पांच पुत्र हैं—धीरसिंहजी, वीरसिंहजी, नरेन्द्रसिंहजी, निर्मलसिंहजी और अभयसिंहजी।

वावू विजयसिंहजी—आपका जन्म सं० १९६३ में हुआ। आप भी वी० ए० परीक्षा पास कर कानून का अध्ययन करते थे। हाल में ही आप कलकत्ता कारपोरेशन के कौंसिलर निर्वाचित हुए हैं। आपके एक पुत्र हैं, जिनका नाम रतनसिंहजी हैं।

वावू विक्रमसिंहजी—आपका जन्म सं० १९६७ में हुआ। आपका शिक्षण कालेज में एफ० ए० तक हुआ। इसके वाद बंगाल टेकनिकल कालेज में मिकेनिक लाइन की शिक्षा प्राप्त की। आपके इस समय एक पुत्र हैं, जिनका नाम समरसिंहजी है।

वावू फतेसिंहजी नाहर—आपका जन्म सं० १९३८ में हुआ। आपने मुर्शिदावाद हाई स्कूल में शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात् आपने अंगरेजी, वंगला आदि भाषाओं तथा धार्मिक विषयों का घर पर ही अध्ययन किया। आपकी बुद्धि प्रखर है और आप निरालस्य तथा सादी प्रकृति के हैं। आपने अपनी जमींदारी और सम्पत्ति की विशेष वृद्धि की है। दिनाजपुर, सन्थाल परगनां के अतिरिक्त २४ परगना, हवड़ा मुर्शिदाबाद, हुगली, वर्द्धमान, वगुडा आदि स्थानों में भी आपकी जमींदारी फैली हुई है। आपके सात पुत्र हैं—राजसिंहजी, रणजीतसिंहजी, उदयसिंहजी, महाराजसिंहजी, अजितसिंहजी, इंद्रजीतसिंहजी और जीतेन्द्रसिंहजी।

वावू राजसिंहजी—आपका जन्म सं० १९६० में हुआ। आपका शिक्षण कालेज में आई० ए० तक हुआ। आपका विवाह बनारस के सुप्रसिद्ध राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द की प्रपौत्री से हुआ था। परन्तु खेद है कि हाल में उनका देहान्त हो गया। आपने अंग्रेजी, वंगला आदि की उच्च शिक्षा प्राप्त की है। आप वैषयिक कार्यों में अच्छे निपुण हैं। आपके एक पुत्र हैं जिनका नाम वीरेन्द्रसिंहजी हैं।

वावू रणजीतसिंहजी—आपका जन्म सं० १९६४ में हुआ। आप कलकत्ता विश्वविद्यालय की वी० ए० वी० एल० की परीक्षाएं पास कर कलकत्ता हाईकोर्ट में एटर्नी के कार्य की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।



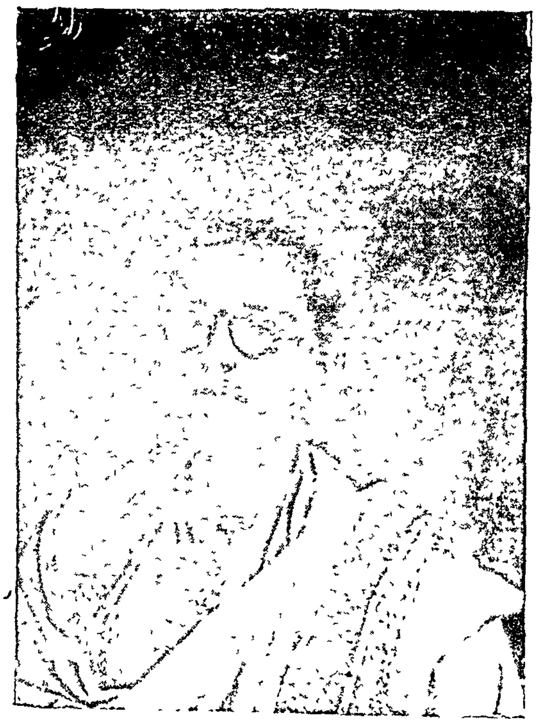
बाबू राजसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



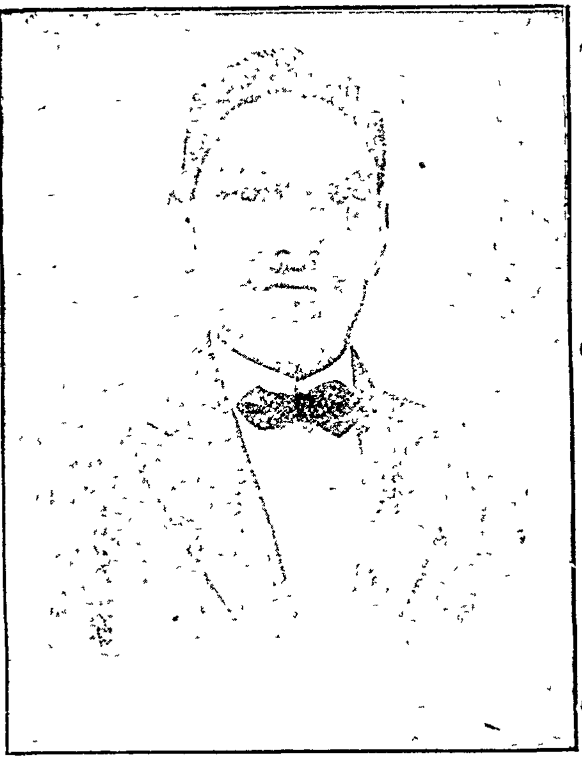
बाबू रणजीतसिंहजी नाहर बी. ए. बी. एल., कलकत्ता.



बाबू उदयसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू महाराजसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू केशरीसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू पृथ्वीसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू विक्रमसिंहजी नाहर, कलकत्ता.



बाबू विजयसिंहजी नाहर, कलकत्ता.

बाबू उदयसिंहजी—आपका जन्म सं० १९६७ में हुआ। आप अंग्रेजी, बंगला आदि की शिक्षा इंटरमीजियट तक प्राप्त कर इस समय कृषि-विज्ञान सम्बन्धी कार्य में तत्पर हैं।

बाबू महाराजसिंहजी—आपका जन्म सं० १९७० में हुआ। आप कालेज में आई० ए० क्लास में पढ़ रहे हैं। आपके और छोटे भाई स्कूलों में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

बाबू कुमरसिंहजी—आपका जन्म सं० १९४० में हुआ था। मैट्रिक परीक्षा में मुर्शिदाबाद जिले में सर्व्वोच्च स्थान प्राप्त करने के कारण आपको छात्रवृत्ति (स्कॉलरशिप) के अतिरिक्त एक सोने का और दो चाँदी के पदक पुरस्कार में मिले थे। पश्चात् आप बरहमपुर कॉलेज से एफ० ए० की परीक्षा पास कर 'ला' में पढ़ ही रहे थे कि अचानक आपका सं० १९७१ में स्वर्गवास हो गया। कलकत्ते में नाहरों का निवास स्थान इण्डियन मिरर स्ट्रीट नं० ४६ में आपकी स्मृति में "कुमरसिंह हाल" नामक एक विशाल भवन बनवाया गया है। यह भी नाहर वंशजों के एक गौरव की वस्तु है। स्थानीय सार्वजनिक कार्यों में इसका बारबार उपयोग होता है।

लाला गोकुलचन्दजी नाहर का खानदान, देहली

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवासस्थान लाहौर था। यहाँ से इस खानदान के पूर्व पुरुष लाला नीधूमलजी दिल्ली आये। तभी से यह खानदान देहली में ही निवास कर रहा है तथा आज भी लाहोरी के नाम से प्रसिद्ध है। लाला नीधूमलजी के सीधूमलजी नामक एक पुत्र हुए। आपके पुत्र जीत-मलजी के बुधसिंहजी तथा चुन्नीलालजी नामक दो पुत्र हुए। लाला बुधसिंहजी के शादीरामजी नामक एक पुत्र हुए।

लाला शादीरामजी का संवत् १८८५ में जन्म हुआ। आपने छोटी उमर से ही अपने व्यापार में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया था। आपने गोटे किनारी का व्यापार शुरू किया। इस व्यापार में आपको काफी सफलता मिली। आपका सं० १९३८ में स्वर्गवास हुआ। आपके लाला भेरूदासजी तथा लाला गोकुलचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। लाला भेरूदासजी का जन्म संवत् १९१७ में हुआ।

लाला गोकुलचन्दजी—आपका जन्म संवत् १९२४ में हुआ। आप बड़े मशहूर तथा पंजाब के स्थानकवासी समाज में बड़े प्रतिष्ठित सज्जन हैं। आपने संवत् १९४६ से अपनी फर्म पर जवाहरात का व्यापार शुरू किया। इस व्यापार में आपको काफी सफलता प्राप्त हुई। इस समय आपकी फर्म पर बैङ्किंग तथा किराये का व्यवसाय होता है।

आपकी धार्मिक भावना बढ़ी चढ़ी है। आपने कई धार्मिक कार्यों में सहायताएँ प्रदान

की हैं। आपको संवत् १९६२ में दिल्ली की जैन समाज ने जैन बिरादरी का काम सौंपा। जिस समय आपको यह काम सौंपा गया था उस समय उक्त संस्था में १८) मासिक की आमदनी थी। आपने अपनी बुद्धिमानी से इसकी आय बढ़ाते २ करीब १२००) मासिक के कर दी तथा देहली में एक बहुत ही भव्य स्थानक बनवाया। इस स्थानक के लिये आपने किसी से भी कुछ चंदा नहीं लिया। अभी तक इस स्थानक में दो लाख रुपया लग चुके हैं। मकान अभी तक बन रहा है।

धार्मिक प्रेम के साथ ही साथ आपका विद्यादान की ओर विशेष लक्ष्य रहा है। आपने सन् १९२० में महावीर जैन मिडिल स्कूल स्थापित किया, जो सन् १९२८ से हॉयस्कूल हो गया है तथा जिसका मासिक खर्च १२००) है। इसी प्रकार आपके प्रयत्नों से महावीर जैन लायब्रेरी, महावीर जैन कन्या पाठशाला, महावीर जैन विद्यालय आदि २ सार्वजनिक संस्थायें स्थापित हुईं जिनसे देहली की जनता बहुत लाभ उठा रही है।

तदनुसार ही आपके प्रयत्न से रोहतास में ११५००) में एक मकान लिया गया और वहाँ स्थानक बनाया गया। तदनंतर इस पर कुछ झगड़ा खड़ा होने पर आपने १०००) खर्च करके इसे तथा २१००) खर्च करके सब्जी मण्डी वाली धर्मशाला को जनता की सेवा निमित्त खुली रक्खी।

सेठ जँवरीमल सुगनचन्द नाहर का खानदान, अजमेर

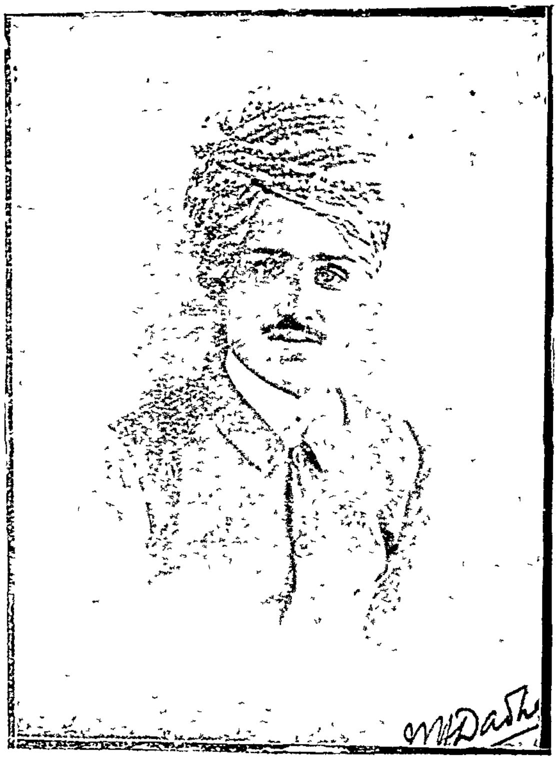
इस परिवार के पूर्वज नाहर मेघाजी अजमेर से ४ कोस की दूरी पर राजोसी नामक गाँव में रहते थे। इनके पुत्र भालजी संवत् १७७५ में अजमेर आये। भालजी के पुत्र माणकजी हुए तथा इनके धन्नाजी, फतेचन्दजी और बच्छराजजी नामक तीन पुत्र हुए। फतेचन्दजी के नाम पर रूपचंदजी दत्तक आये। आपका स्वर्गवास संवत् १९२८ में हुआ। आपके हरकचन्दजी, हजारीमलजी, आसकरणजी, सिद्धकरणजी तथा छोटूलालजी नामक ५ पुत्र हुए। इनमें हरकचन्दजी नाहर बच्छराजजी के नाम पर दत्तक गये। इनका संवत् १९३४ में स्वर्गवास हुआ।

हजारीमलजी नाहर—आपने संवत् १९१९ में मेट्रिक पास किया। आप पटना और अजमेर के तहसीलदार और अजमेर म्युनिसिपैलेटी के सेक्रेटरी और मेम्बर रहे। संवत् १९४२ में आपने हिन्दू मुसलमानों के बीच समझौते में जोरों से भाग लिया। आपके पुत्र नाहर जोधराजजी एफ० ए० तक पढ़े हैं, तथा गोटे का व्यापार करते हैं। इनके पुत्र जावंतराजजी तथा जयचन्दजी विजयचन्दजी हैं। इनमें जावंतराजजी छोटूलालजी के नाम पर दत्तक गये हैं।

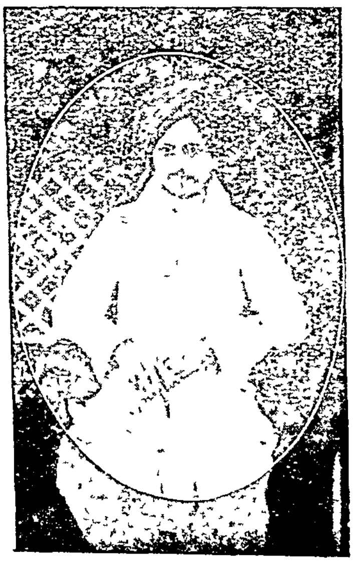
जंवरीमलजी नाहर—आप आसकरणजी नाहर के पुत्र हैं। तथा अजमेर की ओसवाल समाज में



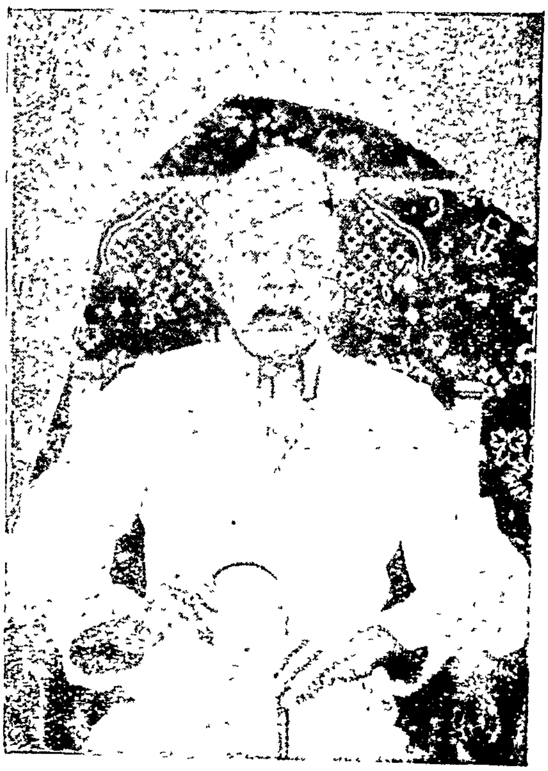
लाला गोकुलचंदजी नाहर, देहली.
(परिचय पेज नं० ३०५)



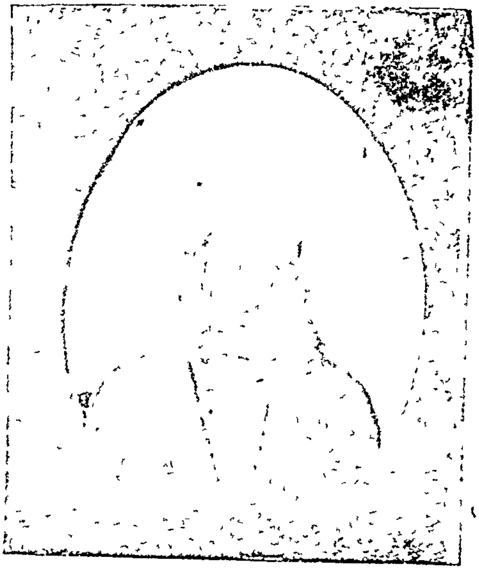
श्री० हेमसिंहजी डड्ढा, फलौदी.
(परिचय पेज नं० २७५)



श्री० मेघराजजी बंदा मेहता, कोयम्बटूर.
(परिचय पेज नं० ३४५)



सेठ बसंतीलालजी नाहर, रामपुरा.
(परिचय पेज नं० ३०८)



स्वर्गीय मुंशी हजारीमलजी नाहर, अजमेर.



स्वर्गीय मास्टर छोट्टूलालजी नाहर, अजमेर.



स्वर्गीय सेठ जँवरीलालजी नाहर, अजमेर.



बाबू सुगनचन्दजी नाहर, अजमेर.

पुराने और प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। साधु सम्मेलन अजमेर के समय आप स्थानीय स्वागत समिति के सभापति निर्वाचित किये गये थे। आपका संवत् १९१९ में जन्म हुआ है। आपके पुत्र पन्नालालजी साहुकारी और गोटे के व्यापार को सम्हालते हैं। इनके पुत्र पारसमलजी और अभयमलजी पढ़ते हैं।

नाहर सिद्धकरणजी के पुत्र पन्नालालजी हुए। इनके पुत्र अमरचन्दजी तथा मूलचन्दजी गोटे का व्यापार करते हैं और तीसरे पुत्र चांदमलजी नाहर सुगनचन्दजी के नाम पर दत्तक गये हैं।

छोटूलालजी नाहर—आप सन् १८८५ में एफ० ए० पास कर जोधपुर हाईस्कूल के हेडमास्टर हो गये। चार वर्ष बाद आप अजमेर मेयो कालेज में जोधपुर हाउस के गार्जियन के स्थान पर निर्वाचित किये गये। और इसी पद पर कार्य करते हुए सन् १९१६ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके नाम पर जावंतराजजी दत्तक आये हैं।

सुगनचन्दजी नाहर—आप हरकचन्दजी नाहर के पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९२९ में हुआ। सन् १८९७ में आप एफ० ए० क्लास छोड़कर पी० डब्ल्यू० डी० में नौकर हो गये। सन् १९०० में आप २५) मासिक पर बी० बी० सी० आई० रेलवे के ऑडिट ऑफिस में क्लार्क हुए, और इसी विभाग में तरक्की पाते २ सीनियर ट्रेव्हेलिंग इन्स्पेक्टर ऑफ अकाउंट के पद पर ४००) मासिक वेतन तक पहुँचे। इस प्रकार सर्विस को सफलता पूर्वक अदा करते हुए मार्च १९३० में आप ग्रेच्युटी लेकर सर्विस से रिटायर्ड हुए।

सुगनचन्दजी नाहर ने सर्विस से रिटायर होने के बाद सार्वजनिक व धार्मिक कामों में हिस्सा लेना आरंभ किया है। आप अखिल भारतीय ओसवाल कान्फ्रेंस अजमेर के उप स्वागताध्यक्ष तथा स्थानक वासी साधु सम्मेलन की स्वागत समिति के सेक्रेटरी निर्वाचित हुए थे। इन सम्मेलनों को सफल बनाने में आपने भरसक प्रयत्न किया था। आपने अपने नाम पर चांदमलजी को दत्तक लिया है। इनके समरथमल और और संतोपमल नामक पुत्र हैं।

लाला हीरालाल चुन्नीलाल नाहर का खानदान, लखनऊ

इस खानदान के पूर्वज लगभग २५० साल पहिले मारवाड़ से देहली आये, यहाँ उस समय इस वंश में लाला गूजरमलजी प्रतापी पुरुष हुए। इनका शाही दरबार में भी अच्छा मान था। इत्तिफाक से देहली के बादशाह से नबाव लखनऊ की कुछ अनबन होगई, उस समय लाला गूजरमलजी, लखनऊ नबाव के आग्रह से लखनऊ आ गये, और यहीं इन्होंने अपना स्थायी निवास बनाया। आपके यहाँ जवाहरात और महाजनी का कारबार होता था। आपके पुत्र पूनमचन्दजी हुए और पूनमचंदजी के पन्नालालजी तथा छगनमलजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें लाला पूनमचन्दजी के हीरालालजी, जवाहरलालजी तथा मोती-

लालजी नामक तीन पुत्र हुए, इनमें जवाहरमलजी, छगनमलजी के नाम पर दत्तक गये। इन बन्धुओं के समय से यह परिवार अलग २ व्यापार कर रहा है।

लाला हीरालालजी का परिवार—लाला हीरालालजी संवत् १९५३ में स्वर्गवासी हुए। आपके चुन्नीलालजी, चम्पालालजी, मूलचन्दजी तथा फूलचन्दजी नामक ४ पुत्र हुए। लाला चुन्नीलालजी ने इस खानदान की दौलत और इज्जत को बहुत बढ़ाया॥ आपने लखनऊ से बैल गाड़ियों द्वारा आबूजी और गोड़वाड़ की पंचतीर्थी का संघ निकाला। आप जवाहरात के व्यापार में और चोरासी संघ के काम में अच्छे जानकार थे। इस प्रकार प्रतिष्ठा पूर्ण जीवन बिताते हुए आप संवत् १९७३ में स्वर्गवासी हुए। आपके छोटे भ्राता चम्पालालजी और फूलचन्दजी आपसे पहिले गुजर गये थे। सब से छोटे लाला मूलचन्दजी संवत् १९८० में स्वर्गवासी हुए। इनके फतेचन्दजी और अमीचन्दजी नामक २ पुत्र विद्यमान हैं।

लाला फतेचन्दजी का जन्म संवत् १९४८ और अमीचन्दजी का १९५० में हुआ। आप दोनों बुद्धिमान और सुधरे हुए विचारों के सज्जन हैं। आपके यहाँ जवाहरात तथा लेन-देन का व्यापार होता है। लखनऊ की ओसवाल समाज में तथा जौहरी समाज में यह परिवार पुराना और प्रतिष्ठित माना जाता है। लाला फतेचन्दजी के पुत्र नौरतनमलजी, धनपतराजजी और प्रतापचन्दजी तथा अमीचंदजी के पुत्र अमोलकचन्दजी हैं।

लाला जवाहरमलजी के पुत्र मानकचन्दजी तथा नानकचन्दजी थे। इनमें मानकचन्दजी के नगीनचन्दजी, आनंदचन्दजी और केसरीचंदजी नामक ३ पुत्र हुए।

सेठ बसंतीलालजी नाहर का खानदान, रामपुरा

इस परिवार के सज्जन बहुत वर्षों से इन्दौर राज्य के रामपुरा नामक नगर में रहते हैं। आप श्री जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी सम्प्रदाय को माननेवाले सज्जन हैं। इस परिवार में माणाजी बड़े नामाङ्कित व्यक्ति हुए। आप अफीम का व्यापार करते थे। आप सालमशाही रुपया परखना अच्छा जानते थे। आपकी परोपकार के कामों की तरफ भी काफी इच्छा रहती थी। आपने यहाँ पर एक बावड़ी भी बनवाई थी।

आपके पश्चात् इस फर्म की दो शाखाएँ हो गईं जिनमें से एक शाखा मन्दसौर चली गई तथा दूसरी शाखा रामपुरा में विद्यमान है। नाहर माणाजी के वंश में आगे चलकर बहुतलालजी और बसंतीलालजी नामक दो भाई हुए।

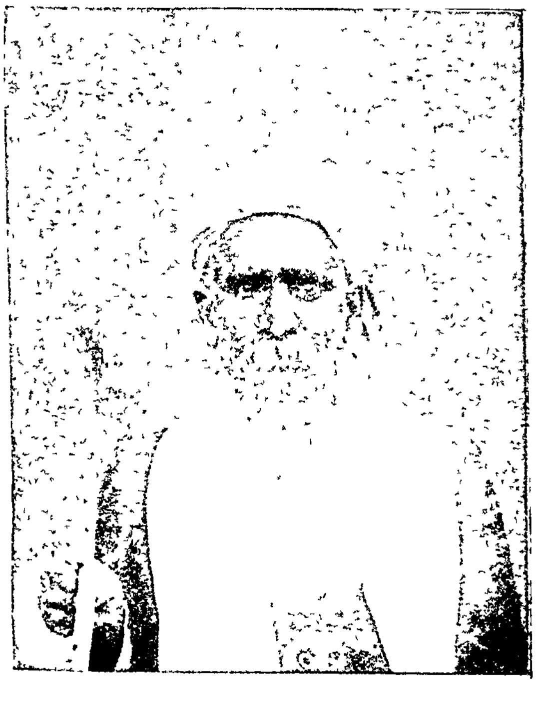
बहुतलालजी नाहर—आप बड़े व्यापार कुशल व्यक्ति थे। आपका स्वर्गवास हो गया है। आपके



[illegible]० सेठ कुंदनमलजी नाहर, न्यायडोंगरी (नाशिक)



स्व० सेठ गुलावचन्दजी नाहर, न्यायडोंगरी (नाशिक)



[illegible] चुन्नीलालजी नाहर (भींवराज चुन्नीलाल) न्यायडोंगरी.



श्री वंशीलालजी नाहर (कुंदनमल गुलावचन्द) न्यायडोंगरी.

जवाहरलालजी, मोतीलालजी तथा माणकलालजी नामक तीन पुत्र हुए। आप इस समय रामपुरा में अपने काका बसंतीलालजी के साथ सम्मिलित रूप से ब्याज, सोने चाँदी तथा कपड़े का व्यवसाय करते हैं।

बसंतीलालजी नाहर—आप बड़े देशप्रेमी, शिक्षित तथा सुधरे हुए विचारों के सज्जन हैं। रामपुरा की ओसवाल समाज में आपका काफी सम्मान है। परोपकार तथा सार्वजनिक कार्यों में आप सहायता देते रहते हैं।

सेठ भींवराज चुन्नीलाल नाहर का खानदान, न्यायडोंगरी (नाशिक)

इस परिवार के पूर्वज सेठ प्रयागजी नाहर के पुत्र सेठ कस्तूरचन्दजी नाहर लगभग ९०-१०० साल पूर्व अपने मूल निवास स्थान बाजूली (मेड़ते के पास) से व्यापार के निमित्त रोझाना (मालेगाँव तालुका) में आये। यहाँ से आपका परिवार संवत् १९३८ के लगभग न्यायडोंगरी आया। आपके भींवराजजी, कुन्दनमलजी और छगनीरामजी नामक ३ पुत्र हुए। संवत् १९५० मे इन भाइयों का काम काज अलग २ हो गया। संवत् १९५२ में सेठ कस्तूरचन्दजी स्वर्गवासी हुए। आपका परिवार स्थानकवासी आम्नाय को मानने वाला है।

सेठ भींवराजजी का परिवार—आपके चुन्नीलालजी, लच्छीरामजी और लालचन्दजी नामक ३ पुत्र हुए। सेठ चुन्नीलालजी के हाथों से इस खानदान के व्यापार और सम्मान में विशेष तरक्की मिली। आप यहाँ के और आसपास के व्यापारिक समाज में अच्छी इज्जत रखते हैं। आपका जन्म संवत् १९३८ में हुआ। आपके यहाँ चुन्नीलाल भींवराज के नाम से रुई और गल्ले का बड़े प्रमाण में व्यापार और आढ़त का काम होता है। आपके छोटे भाई लच्छीरामजी आपके साथ व्यापार में भाग लेते हैं। इनके पुत्र कन्हैयालालजी और घेवरचन्दजी हैं।

सेठ कुन्दनमलजी का परिवार—आपने अपने व्यापार की उन्नति में विशेष भाग लिया। राज दरबार तथा आस पास की ओसवाल समाज में आप वजनदार पुरुष थे। गाँव के लोग आपको आदर की दृष्टि से देखते थे। संवत् १९७३ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र गुलाबचन्दजी ने दुकान के काम को व्यवस्थित रूप से चलाया। आपका स्वर्गवास १९८३ में होगया है। आपके नाम पर बंशीलालजी वड़ोनी (कुबेरा) से दत्तक आये हैं। आप समझदार तथा होशियार सज्जन हैं, और परिवार के साथ मेल से रहते हैं। आपके यहाँ गुलाबचन्द कुन्दनमल के नाम से साहुकारी व्यवहार होता है।

सेठ छगनीरामजी का परिवार—आप बड़े योग्य पुरुष थे। संवत् १९६० में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र लखमीचन्दजी, पूनमचन्दजी के बालचन्दजी तथा दीपचन्दजी मौजूद हैं। आप छगनीराम कस्तूरचन्द के नाम से व्यापार करते हैं। आपके पुत्र इन्द्रचन्दजी तथा मोहनलालजी हैं।

लाला मोतीराम चुन्नीलाल नाहर का खानदान, अमृतसर

इस खानदान के लोग श्वेताम्बर जैन स्थानक वासी आम्नाय को मानने वाले हैं। इस खानदान का मूल निवास स्थान होशियारपुर का है। करीब दो वर्षों से अमृतसर में इस खानदान की दुकान स्थापित हुई है।

इस खानदान में लाला हरसुखरायजी बड़े मशहूर और प्रतापी व्यक्ति हुए। आप पंजाब में ब्रिटिश गवर्नमेण्ट के करीब दस पन्द्रह जिलों के लिए पहले पहल खजान्ची चुने गये थे। आपके पांच पुत्र हुए–ला० मेहरचन्दजी, लाला राजमलजी, ला० लालचन्दजी, लाला कन्हैयालालजी और लाला बादीशाहजी। इनमें लाला मेहरचन्दजी का खानदान इस समय लाहौर में बसा हुआ है।

ला० राजमलजी को गवर्नमेण्ट के साथ कारोबार होने से बहुत से सार्टिफिकेट भी प्राप्त हुए थे। आप ओसवाल जाति में बड़े नामी और प्रतिष्ठित थे। आपके चार पुत्र हुए—ला० फतेचंदजी, ला० नाथूरामजी, ला० गंगारामजी और लाला दौलतरामजी।

ला० दौलतरामजी का जन्म संवत् १९२६ में हुआ। आप बड़े सादे और सरल प्रकृति के पुरुष थे। आप बड़े धर्म प्रेमी थे। आपके चार पुत्र हुए–लाला मोतीरामजी, चुन्नीलालजी, ज्ञानचन्दजी और प्रेमचन्दजी।

ला० मोतीरामजी का जन्म संवत् १९५६ का है। आप बड़े योग्य, उत्साही और बुद्धिमान युवक हैं। आप बड़े धार्मिक और समाज सुधारक व्यक्ति हैं। आप पंजाब जैन संघ सियालकोट के सेक्रेटरी, पन्नी तहकीकात कमेटी होशियारपुर के सेक्रेटरी, होशिआपुर जैनसभा के सेक्रेटरी हैं। आप साहित्य के भी बड़े प्रेमी हैं। इसके अतिरिक्त आपने बहुत परिश्रम करके होशियारपुर में अमर जैन पांजरापोल की स्थापना की और इस समय आप ही उसके सेक्रेटरी हैं। होशियारपुर मर्चेण्ट ऐसोसियेशन के आप सेक्रेटरी हैं, हिन्दू सेवा-समिति होशियारपुर के भी आप प्रेसीडिण्ट रहे हैं। पंजाब जैन स्थानकवासी सभा की सब्जेक्ट कमेटी के आप मेम्बर रहे हैं। अजमेर के साधु सम्मेलन की अन्तरंग कमेटी के भी आप मेम्बर थे और भी बहुत से सामाजिक और धार्मिक कार्य्यों में आप बड़ी दिलचस्पी से भाग लेते हैं। आपने अपने हाथ से अपनी व्यापारिक स्थिति को भी बहुत तरक्की प्रदान की। अमृतसर ब्रांन्च भी आपने अपने ही हाथों से खोली। होशियारपुर और अमृतसर की जैन समाज में आपकी बहुत प्रतिष्ठा है। आपके इस समय दो पुत्र हैं—बाबू गिरधारीलालजी और शादीरामजी। आप दोनों ही इस समय पढ़ रहे हैं।

ला० चुन्नीलालजी का जन्म संवत् १९५९ में हुआ। आप बड़े धर्म प्रेमी हैं। और कारबार के काम में भाग लेते हैं। आपके पवनकुमारजी नामक एक पुत्र हैं।

ला० ज्ञानचन्दजी का जन्म १९६३ में हुआ था। आप केवल १८ वर्ष की उम्र में अपने परिवार वालों को दुखित कर स्वर्गीय हो गये।

ला० प्रेमचन्दजी का जन्म संवत् १९६७ में हुआ। आप भी इस समय दुकान के कारोबार में भाग लेते हैं।

लाला निहालचन्द लद्दूमल नाहर, सियालकोट

इस खानदान का मूल निवासस्थान होशियारपुर का था। वहाँ से इस खानदान वाले करीब २५०-३०० वर्ष पूर्व सियालकोट में आकर बसे। तभी से आप लोग सियालकोट में ही निवास करते हैं। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर स्थानकवासी आम्नाय को माननेवाले सज्जन हैं। इस खानदान में लाला लालशाहजी मशहूर व्यक्ति हुए। आपके निहालचन्दजी नामक एक पुत्र हुए। आप सराफी का व्यापार करते थे। आप बड़े धर्मात्मा तथा बिरादरी में बड़े इज्जतदार व्यक्ति थे। आपके लाला लद्दूमलजी, पन्नालालजी तथा दीवानचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए।

लाला लद्दूमलजी का संवत् १९४० में जन्म हुआ। आप बड़े धर्मध्यानी तथा व्यापारकुशल सज्जन हैं। आपके नगीनालालजी, जंगीलालजी, हंसराजजी, कस्तूरीलालजी तथा शादीलालजी नामक पाँच पुत्र हुए। इनमें लाला नगीनालालजी के मदनलालजी एवम् सुभाषचन्दजी नामक दो पुत्र हैं।

लाला पन्नालालजी का जन्म संवत् १९४२ में हुआ। आप बड़े धार्मिक पुरुष हैं। आपके पिशौरीलालजी, लाहोरीलालजी, राजकुमारजी, चिमनलालजी, चैनलालजी तथा तिलकचन्दजी नामक छः पुत्र हैं। लाला पिशौरीलालजी के सुदर्शनकुमारजी तथा प्रेमचन्दजी, लाहोरीलालजी के जगदीशकुमारजी, पुरानशीलजी तथा रेशमचन्दजी नामक पुत्र हैं। पिशौरीलालजी तथा लाहोरीलालजी इस समय व्यापार में भाग लेते हैं।

लाला दीवानचन्दजी का जन्म सं० १९४५ में हुआ। आप भी बड़े मिलनसार पुरुष हैं। आपके रोशनलालजी, हरवंशलालजी तथा तरसेपचन्दजी नामक पुत्र हैं। इनमें से रोशनलालजी व्यापार में भाग लेते हैं।

यह खानदान यहाँ की ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित है। इसकी यहाँ पर ६ सराफी की दुकानें तथा एक पीतल के वर्तन की दुकान भी है। आप लोगों का एक बहुत बड़ा परिवार है और इस समय आप सब लोग बड़े प्रेम से सम्मिलित रूप से ही व्यवसाय करते तथा एकही साथ रहते हैं।

लाला कृपारामजी नाहर, होशियारपुर

आपका खानदान होशियारपुर का ही निवासी है। लाला कृपारामजी के पिताजी लाला रामजसजी का स्वर्गवास लगभग ४० साल पहिले हो गया। सन् १८८१ में लाला कृपारामजी का जन्म हुआ। लगभग बीस साल की उमर में आपने मेट्रिक और कमर्शियल क्लास पास किया और उसके दो तीन साल बाद आप म्युनिसिपल सर्विस में शरीक हुए, और इधर सन् १९०६ से होशियारपुर म्यु० के सेक्रेटरी पद पर कार्य करते हैं।

लाला कृपारामजी नाहर होशियारपुर की जैन समाज में अच्छे प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। स्थानीय जैन सभा के आप सेक्रेटरी रहे हैं। आप स्थानकवासी आम्नाय के मानने वाले सज्जन हैं। धार्मिक कामों में आप हिस्सा लेते रहते हैं। आपके पुत्र जुगलकिशोरजी, रोशनलालजी और मदनलालजी हैं।

दुधोरिया

दुधोरिया गौत्र की उत्पत्ति

मसीह सन् से १२५-११० वर्ष पूर्व स्यवन नामक चौहान क्षत्रिय राजा अजमेर में राज्य करते थे। इन्हीं महापुरुष से इस गौत्र की उत्पत्ति हुई है। इनके ३०० वर्ष बाद राजा दुधोरराव गद्दी पर बैठे। आपने सम्वत् २२२ (सन १६५ ईस्वी) में जैन धर्म की दीक्षा ली और तभी से आपके वंशज दुधोरिया के नाम से प्रसिद्ध हुए। तभी से दुधोरिया गौत्र की स्थापना हुई।

राय बुद्धसिंहजी दुधोरिया बहादुर का खानदान, अजीमगंज

अजीमगंज के इस प्राचीन प्रतिष्ठित परिवार का मूल निवासस्थान अजमेर का है। वहाँ से वीर प्रतापी राव दुधोर के तृतीय पुत्र मोहनपालजी के समय से यह परिवार चन्देरी में चला आया और वहाँ से समय २ पर यह परिवार बनीकोट, रतलाम आदि स्थानों में होता हुआ बीकानेर के राजलदेसर नामक स्थान पर १८ वीं शताब्दी के मध्यकाल के लगभग चला गया। सन् १७७४ ई० में हरजीमालजी दुधोरिया अपने दो पुत्र सबाईसिंहजी और मौजीरामजी को लेकर अजीमगंज आये और यहाँ बस गये। आपने यहाँ पर व्यवसाय आरम्भ किया और अपनी योग्यता से अल्पकाल में ही अच्छी उन्नति की। पर व्यवसाय की वास्तविक उन्नति हरकचन्दजी दुधोरिया के समय में हुई। आपने अजीमगंज के अतिरिक्त कलकत्ता, सिराजगंज,



राय बुद्धसिंहजी का परिवार, अजीमगंज.
बीच मे बैठे हुए—स्व० राय बुद्धसिंहजी दुधोरिया बहादुर.
ऊपर नं० १—स्व० बा० अजीतसिंहजी दुधोरिया, नं० २—स्व० बा० कुँवरसिंहजी दुधोरिया.
नीचे नं० १—बा० जयकुमारसिंहजी दुधोरिया, नं० २—बा० नवकुमारसिंहजी दुधोरिया.

जंगीपुर और मैमनसिंह में अपनी बैंकिंग की फर्मे स्थापित कीं। आप सन् १८६२ में स्वर्गवासी हुए। आपके बुद्धसिंहजी तथा विशनचन्दजी नामक दो पुत्र हुए।

बुद्धसिंहजी और विशनचन्दजी—आप दोनों ही भाई बाल्यकाल से ही कुशाग्रबुद्धि और होनहार थे। अतः अपनी फर्म के व्यवसाय को आप लोगों ने बड़े ही सुचारु रूप से संचालित कर बहुत अधिक बढ़ा लिया। आप लोगों ने अपनी पूँजी जमीदारी खरीदने के काम में लगाई और थोड़े ही समय में मुर्शिदाबाद, मैमनसिंह, वीरभूमि, नदिया, फरीदपुर, पुर्निया, दिनाजपुर और राजशाही जिलों में आपकी काफ़ी जमीदारी हो गई। आप लोगों ने धन संचय के अतिरिक्त उसके सदुपयोग की ओर भी अच्छा ध्यान दिया। समाज के दीन व्यक्तियों की सहायता करना, भूखों को खिलाना, अकाल के समय अन्नक्षेत्र खोल कर पीड़ितों की अन्न वस्त्र से सहायता करना आदि कितने ही लोकोपकारी कार्य आपने किये। इन सबसे प्रसन्न होकर सरकार ने दोनों भाइयों को 'रायबहादुर' के सम्मान से सम्मानित किया। आप लोग मुर्शिदाबाद की लालबाग की बेंच के आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किये गये। सन् १८७७ ई० में दोनों भाई अलग हो गये और अपने २ नाम से स्वतंत्र कार्य्य करने लगे।

राय बुद्धसिंहजी दुधोरिया बहादुर के इन्द्रचन्द्रजी, अजितसिंहजी तथा कुमारसिंहजी नामक तीन पुत्र हुए। बाबू इन्द्रचन्द्रजी बडे ही होनहार, सुशिक्षित एवं उत्साही नवयुवक थे। आपके बा० जगतसिंहजी और रणजीतसिंहजी नामक दो पुत्र हुए, जिनमें बा० रणजीतसिंहजी विद्यमान हैं। सन् १८८९ ई० में बाबू इन्द्रचन्द्र दुधोरिया ने योरोप की यात्रा की और वहाँ से लौटने पर आपने अपने पिता से सामाजिक सम्बन्ध विच्छेद कर लिया। कुछ ही समय बाद आपका भी स्वर्गवास हो गया। बाबू अजितसिंहजी एवम् बाबू कुँवरसिंहजी दुधोरिया राय बुधसिंहजी बहादुर की दूसरी धर्मपत्नी से हुए। आप दोनों का खेदजनक स्वर्गवास सन् १९१० ई० में २४ घण्टों के अन्तर से होगया। बा० अजितसिंहजी के दो पुत्र हुए जिनका नाम बाबू नवकुमारसिंहजी और जयकुमारसिंहजी हैं। यही दो पौत्र वर्तमान में राय बहादुर बुद्धसिंहजी के उत्तराधिकारी हैं। कुमारसिंहजी के कोई सन्तान नहीं हुई।

दुधोरिया राजवंश की इस प्रधान शाखा के ये दोनों उत्तराधिकारी अपने पितामह के स्वर्गवास के समय सन् १९२० में केवल १५ और १४ वर्ष के थे। अतः इनके संरक्षण का भार आपके सुयोग्य चाचा राजा विजयसिंहजी दुधोरिया के हाथ में आया। आपने अपनी वंश परम्परा के अनुकूल उन्हें उच्च शिक्षा से विभूषित किया। इन दोनों महानुभावों का व्याह महिमापुर के इतिहास प्रसिद्ध जगत् सेठ की बहिन और पुत्री से सन १९१९ में हुआ। इनके भी एक २ पुत्र हैं। वयस्क होते ही इन्होंने अपनी स्टेट का सारा कार्यभार सन १९२६ के अगस्त मास से सम्हाल लिया। आप दोनों ही होनहार और उत्साही

नवयुवक हैं। आप अपने कुल परम्परा के अनुसार ही अपना सारा प्रबन्ध संचालित करते हैं। आपके पूर्वजों के द्वारा प्रोत्साहित सभी कार्यों और संस्थाओं को बराबर आप लोग सहायता दिया करते हैं। आपके यहाँ प्रधान व्यापार बैंकिंग का है। आपकी बहुत बड़ी जमींदारी है।

राय बुद्धसिंहजी बहादुर पुराने ढंग के सज्जन थे। आपको १८८८ में 'राय बहादुरी' का सम्मान प्राप्त हुआ। आप बड़े सहृदय और उदार सज्जन थे। आपका व्यवहार स्पष्ट और सादा था। इन्हीं विशेषताओं के कारण आपकी बहुत बड़ी प्रतिष्ठा थी। सन् १९०४ में आपने अखिल भारतवर्षीय जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स बड़ौदा के अधिवेशन में सभापति का आसन सुशोभित किया था। आपको सभी आदर की दृष्टि से देखते थे। आप दोनों भाइयों ने जंगीपुर डिस्पेन्सरी और अस्पताल के लिए एक मूल्यवान भवन तैयार कराया था। आप ही ने गिरिडिह और जंगीपुर में जैन मन्दिर तथा पांवापुरी (बिहार) आबूपर्वत, पारसनाथ पहाड़ी, बम्बई, रानी (मारवाड़) और अजीमगंज में धर्मशालाएँ बनवाई थीं। आप लोगों ने अजीमगंज में कन्या पाठशाला और अजीमगंज, बनारस, पालीताना और धोराजी में जैन पाठशालायें चलाईं। और भी कई धार्मिक कार्यों में आपने बड़ी सहायता दी। जैन-समाज में इस परिवार की बहुत प्रतिष्ठा है।

इस परिवार की कई स्थानों पर बैंकिंग का व्यापार करने के लिए फर्मे खुली हुई हैं। इसके अतिरिक्त संथाल, परगना दुमका आदि जिलों में आपकी जमींदारी है।

रायबहादुर विशनचन्दजी दुधोरिया का खानदान, अजीमगंज

इस प्रसिद्ध खानदान का पूर्व परिचय हम पिछले पृष्ठों में दे चुके हैं। इस खानदान का इतिहास श्री हरकचन्दजी दुधोरिया के द्वितीय पुत्र राव विशनसिंह जी बहादुर से प्रारंभ होता है। आप का विशेष परिचय आपके ज्येष्ठ भ्राता के साथ पहिले दे चुके हैं। आप बड़े कार्य्य कुशल मिलनसार तथा योग्य सज्जन थे। आपका देहावसान सन् १८९४ ई० में हुआ। उस समय आपके पुत्र बाबू विजयसिंहजी की आयु केवल १४ वर्ष की थी। स्टेट का सारा प्रबन्ध भार आपके चचा राय बहादुर बाबू बुद्धसिंह जी के हाथ में रहा। सन् १९०० ईसवी में आपने अपनी स्टेट का सारा भार अपने हाथ में लिया। आप आरम्भ से ही होनहार थे। आपने अपने कार्य्यों से खूब यश सम्पादित किया। सरकार ने आपको सन् १९०३ में अजीमगंज के म्युनिसिपल कमिश्नर मनोनीत किया। सन् १९०४ ई० की अ० भा० जैन कान्फरेन्स के बड़ौदा वाले अधिवेशन में आपके चचा रायबहादुर बुद्धसिंहजी प्रमुख और राजा सा० उप सभापति रहे। सन् १९०६ में आप अजीमगंज म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन निर्वाचित हुए, सन् १९०८



स्वर्गीय राय बिशनचन्दजी दुधोरिया बहादुर, अजीमगंज.



स्वर्गीय राजा विजयसिंहजी दुधोरिया, आफ अजीमगंज



कुमार चन्द्रसिंहजी दुधोरिया,
पु० राजा विजयसिंहजी अजीमगंज.



कुमार पद्मसिंहजी दुधोरिया,
पु० राजा विजयसिंहजी अजीमगंज.

ई० में सरकार ने आपको राजा की उपाधि से सम्मानित किया। आप जितने कार्य्य दक्ष थे उतने ही दानवीर भी थे। आपका झुकाव शिक्षा प्रसार की ओर अधिक रूप से रहता था। सन् १९१५ ई० में आप कलकत्ता के ब्रिटिश इण्डिया एसोसियेशन के उप सभापति रहे। आप मुर्शिदाबाद जिला बोर्ड के सदस्य, इम्पीरियल लीग की कार्य कारिणी के सभासद, किंग एडवर्ड मेमोरियल फण्ड कमेटी के मेम्बर रहे हैं। इसके अतिरिक्त आप कलकत्ते के मशहूर क्लब लेण्ड होल्डर्स ऐसोसियन कलकत्ता के, जैन एसोसियेशन आफ इण्डिया बम्बई के, आनन्दजी कल्याणजी की पेढ़ी की, तीर्थ स्थान कमेटी के और कलकत्ता रॉयल ट्रोफ क्लब के मेम्बर थे। श्री सम्मेदशिखरजी के झगड़े के लिए पटने में जो कान्फरेन्स हुई थी उसके आप प्रेसीडेन्ट निर्वाचित हुए थे। सार्वजनिक कामों में इस प्रकार लगे रहने पर भी आप अपने व्यवसाय का कार्य स्वयम् देखते हैं। आपका स्वर्गवास संवत् १९३० में हो गया।

दुधोरिया परिवार अपनी दानवीरता के लिये सदा से प्रसिद्ध चला आ रहा है। इसके दान से बनी हुई धर्मशालाएँ, औषधालय, अस्पताल तथा स्कूल आदि आज भी आपकी अमर कीर्ति को फैला रहे हैं। स्वयं राजा सा० ने जब से कार्य भार सम्हाला तब से दोनों हाथ खोल कर लाखों रुपयों का दान किया। आपने १ लाख रुपये लेडी मिण्टो फेटी के नर्सिङ्ग एसोसियेशन को, २० हजार सप्तम एडवर्ड कारोनेशन इन्स्टीयूट को, ४ हजार इम्पीरियल वार रिलीफ फण्ड को और ४ हजार कृष्ण नगर कालेज को दान दिये हैं। इसके अतिरिक्त कष्ट प्रपीड़ित लोगों की सेवा और सहायता आप सदैव करते रहते थे। सन् १९१९-२० में मैमनसिंह, ढाका, फरीदपुर, इत्यादि स्थानों में बहुत जोर का तूफान आया। उसमें लोग घरबार विहीन होकर महान् दुर्दशा ग्रस्त हो गये थे। ऐसे कठिन समय में आपने हजारों मन चांवल भेज कर, उन लोगों की सहायता पहुँचाई। लिखने का मतलब यह है कि इस खानदान का सार्वजनिक और धार्मिक कार्यों में बहुत हाथ रहता है। ओसवाल समाज में यह परिवार बहुत अग्रगण्य और प्रतिष्ठा सम्पन्न है। इस परिवार की बंगाल प्राम में बहुत बड़ी जमीदारी है तथा कई स्थानों पर बैंकिंग व्यापार के लिये फर्में खुली हुई हैं।

सेठ कालूराम सुखलाल दुधोरिया, छापर

इस परिवार के प्रथम पुरुष करीब २७५ वर्ष पूर्व लच्छासर नामक स्थान पर आकर बसे। २०० वर्ष के पश्चात् यहाँ से इस खानदान के पूर्वज जौधरामजी के पुत्र गुमानसिंहजी सं० १९१२ में छापर गये। तभी से यह परिवार छापर में ही निवास करता है। सेठ गुमानसिंहजी दुधोरिया की साधारण स्थिति थी। अतः आप छापर में ही व्यापार करते रहे। आपके चार पुत्र हैं, जिनके नाम क्रमशः बा० मेठमलजी, शेरमलजी, कालूरामजी एवं पांचीरामजी हैं।

सेठ जेठमलजी निःसंतान ही स्वर्गवासी हो गये। सेठ शेरमलजी के वंशजों की फर्म मेसर्स शेरमल चौथमल के नाम से शिलांग में चल रही है।

सेठ कालूरामजी का जन्म संवत् १९१२ तथा सेठ पांचीरामजी का जन्म संवत् १९२० में हुआ। सेठ कालूरामजी संवत् १९२५ में शिलांग गये। कहा जाता है कि जब गवर्नमेंट की पलटन शिलांग जा रही थी तब आप भी उसी पलटन के साथ उस पलटन को रसद का सामान देते हुए शिलांग पहुँचे। वहाँ पर आपने अपनी एक फर्म स्थापित की तथा उस पर दुकानदारी और गवर्मेंट कन्ट्रांक्टिंग का काम शुरू किया। आपके भाई पांचीरामजी भी देश से शिलांग आगये और व्यापार करने लगे। आप दोनों भाई बड़े परिश्रमी एवं व्यापार चतुर थे। आपने अपने व्यापार को बढ़ाने के लिए अपने फर्म की गोहाटी, पटना एवं कलकत्ता में शाखाएँ खोलीं और इन पर चलानी का काम प्रारम्भ किया। इन फर्मों पर आपको बहुत सफलता मिली और आपने हजारों रुपयों की सम्पत्ति उपार्जित की। आपके सुखलालजी नामक एक पुत्र हैं। सेठ पांचीरामजी भी धार्मिक प्रकृति के पुरुष थे। आपका संवत् १९७२ में स्वर्गवास हो गया है। आपके भौमसिंहजी नामक पुत्र हैं।

बा० सुखलालजी—आपका संवत् १९४२ में जन्म हुआ। आप आज कल फर्म के प्रधान संचालक हैं। आपके समय में भी इस फर्म की बहुत उन्नति हुई। आप भी अपने पिताजी की भांति व्यवसाय कुशल एवं चतुर व्यक्ति हैं। आपके गिरधारीमलजी, पूनमचन्दजी, माणकचन्दजी, चम्पालालजी, खेमराजजी, सोहनलालजी एवं मोहनलालजी नामक सात पुत्र हैं। प्रथम चार पुत्र इस फर्म से अलग हो गये हैं तथा अपना स्वतंत्र व्यापार करते हैं। शेष तीन अभी बालक हैं।

बा० भौमसिंहजी—आपभी इस फर्म में पार्टनर हैं। आप इस फर्म का संचालन बड़ी योग्यता से कर रहे हैं। आपके शिवदानमलजी एवं बुद्धसिंह नामक दो पुत्र हैं। बड़े व्यापार में योग देते हैं तथा छोटे अभी पढ़ते हैं।

यह फर्म इस समय शिलांग में सुखलाल भौमसिंह के नाम से गवर्मेंट कन्ट्रैक्टर क्लॉथमचण्ट एवं मोटर ट्रांसपोर्ट का काम करती है। कलकत्ता और गोहाटी में कालूराम, सुखलाल के नाम से इस पर आढ़त का काम होता है। कलकत्ता में इस फर्म पर इम्पोर्ट और एक्सपोर्ट का काम भी किया जाता है। यह फर्म पटना में चलानी का काम करती है। बा० गिरधारीमलजी का सं० १९५८ में जन्म हुआ है। आज कल आप अपने ही नाम से गोहाटी में चलानी का काम करते हैं। आप भी मिलनसार व्यक्ति हैं।

बा० पूनमचन्दजी—आपका संवत् १९६० में जन्म हुआ। आप मिलनसार एवं समझदार

सज्जन हैं। आजकल आप भी फर्म से अलग हो गये हैं तथा आपने छोटे भाई माणकचन्दजी के साथ व्यापार करते हैं। आपकी फर्म सरभोग में मेसर्स माणकचन्द तेजकरण के नाम से जूट, सरसों एवम् धान चांवल और गल्ले का तथा आढ़त का काम होता है। आपके तेजकरनजी नामक एक पुत्र हैं।

बा० माणकचन्दजी—आपका संवत् १९६३ में जन्म हुआ है। आप भी इस फर्म से अलग होकर आपने भाई पूनमचन्दजी के साझे में व्यवसाय करते हैं। आप भी मिलनसार सज्जन हैं। आपके इस समय तीन पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः केशरीचन्दजी, शुभ करणजी एवम् विजयसिंहजी हैं।

बा० चम्पालालजी—आपका संवत् १९६८ में जन्म हुआ। आजकल आप छापर में ही निवास करते हैं। वहाँ पर आप ब्याज का काम करते हैं।

ललवाणी

ललवाणी गौत्र का उत्पत्ति

महाजन वंश मुक्तावली नामक ग्रंथ में ललवाणी गौत्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में लिखा है, कि संवत् ११९२ में रणथंभोर गढ़ में परमार राजा लालसिंहजी राज करते थे इनके ७ पुत्र थे। इनमें से एक पुत्र ब्रह्मदेव को जलंधर का महाभयंकर रोग हुआ। तब राजा ने मुनि श्री जिनवल्लभसूरिजी से प्रार्थनाकी। मुनी ने ब्रह्मदेव को तंदुरुस्त किया। इससे प्रभावित होकर राजा लालसिंहजी ने अपने ७ पुत्रों सहित जैन धर्म अंगीकार किया। इस प्रकार उनके लालाणी पुत्र की संतानें ललवाणी कहलाई।

ललवाणी खानदान, खानदेश

खानदेश के इस प्रतिष्ठित परिवार का मूल निवासस्थान बड़लू (जोधपुर स्टेट) है। बड़लू में इस खानदान में सेठ मोटाजी ललवाणी हुए। इनके शोभाचन्दजी, ताराचन्दजी, तेजमलजी और समरथमलजी नामक ४ पुत्रों का परिवार मारवाड़ और खानदेश के जामनेर, कलमसारा, मांडल, नाचनखेड़ा (शेंदुर्णी), चीलगाँव (शेंदुर्णी), बोरद (धूलिया) और नसीराबाद (भुसावल) आदि स्थानों में निवास करते हैं।

ललवानी मोटाजी के बड़े पुत्र शोभाचन्दजी का कुटुम्ब बड़लू और चील गाँव में निवास करता है। इनके दूसरे पुत्र ताराचन्दजी थे। ललवानी ताराचन्दजी के पुत्र कीरतमलजी हुए और कीरतमलजी के पुत्र उत्तमचन्दजी तथा धनजी मारवाड़ से लगभग १२५ साल पहले जलगाँव के पास पिंपडाला नामक स्थान में आये तथा वहाँ व्यवसाय शुरू किया। इनमें उत्तमचन्दजी के परिवार में इस समय वंशी-

लालजी तथा चम्पालालजी नसीराबाद (भुसावल) में तथा भेरूलालजी, माणकलालजी और धोंकलचन्दजी चीलगाँव (खानदेश) में व्यवसाय करते हैं।

सेठ धनजी ललवाणी का परिवार

ललवाणी उत्तमचन्दजी के छोटे भ्राता धनजी सेठ पिंपडाला से कलमसरा नामक स्थान में आये और वहाँ उन्होंने खेती वाड़ी और दुकानदारी का व्यापार आरम्भ किया। सेठ धनजी की संतानों ने अपनी चतुराई, व्यवसाय कुशलता और दूरदर्शिता से अपने व्यापार को कलमसरा तथा जामनेर में इतनी उन्नति पर पहुँचाया कि आपका परिवार न केवल इन स्थानों पर बल्कि सारे खानदेश प्रान्त में अपना प्रधान स्थान रखता है। ऐसे गौरवशाली परिवार के पूर्वज सेठ धनजी ललवाणी संवत् १९०० में स्वर्गवासी हुए। आपके सेठ रामचन्द्रजी ललवाणी तथा सेठ सतीदासजी ललवाणी नामक २ पुत्र हुए।

सेठ रामचन्द्रजी ललवाणी का कुटुम्ब

सेठ रामचन्द्रजी अपने पिताजी की मौजूदगी में ही संवत् १८९७ में कलमसरा से लगभग दस बारह मील दूर नांचनखेड़ा नामक स्थान में चले गये और वहाँ आपने अपना व्यवसाय रामचन्द्र धनजी के नाम से जमाया, आपकी बुद्धिमत्ता तथा कार्य्य कुशलता से इस दुकान ने आस पास के सर्कल में बड़ी ख्याति प्राप्त की। जब सम्वत् १९१४ का विख्यात गदर आरम्भ हुआ, उस समय बलवाइयों की एक पार्टी ने सेठ रामचन्द्रजी का मकान लूट लिया। इससे आप को बहुत बड़ी हानि हुई। थोड़े ही समय बाद आप अपने पुत्र पीरचन्दजी तथा लक्खीचंदजी को लेकर नांचनखेड़ा के समीप जामनेर में जहाँ इनके बड़े पुत्र हरकचन्दजी व्यवसाय करते थे; चले गये और वहाँ गल्ला और साहुकारी व्यवसाय की पुनः नींव जमाई। धीरे २ जामनेर में आपने अपने व्यापार की उन्नति की। संवत् १९२९ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके हरकचन्दजी, किशनचंद्रजी, पीरचंदजी तथा लक्खीचन्दजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें पीरचन्दजी निःसंतान स्वर्गवासी हुए।

सेठ हरकचन्दजी ललवाणी

आपने संवत् १९०९ में जामनेर में अपना निवासस्थान कायम किया, तथा यहाँ अपना व्यवसाय स्थापित किया। आपके पुत्र लक्ष्मणदासजी फर्म के व्यापार को दृढ़ करते हुए लगभग संवत् १९७६ में स्वर्गवासी हुए। इनके नाम पर मोतीलालजी ललवाणी मलकापुर (बरार) से दत्तक आये। आपके यहाँ सेठ मोतीलाल लछमनदास के नाम से साहुकारी लेनदेन तथा कृषि का काम होता है। जामनेर के व्यापारिक समाज में यह फर्म अच्छी प्रतिष्ठित मानी जाती है।

सेठ लक्खीचन्दजी ललवाणी

आप सेठ रामचन्दजी ललवाणी के सबसे छोटे पुत्र थे। जिस प्रकार कलमसरा के परिवार की व्यापार वृद्धि का श्रेय सेठ सतीदासजी तथा पन्नालालजी को है उसी प्रकार जामनेर के व्यवसाय की उन्नति का प्रधान श्रेय सेठ रामचन्द्रजी तथा लक्खीचंदजी को है। सेठ लक्खीचन्दजी ने जामनेर आने के बाद १५ सालों तक अपने पिताजी की देखरेख में व्यवसाय कार्य्य सम्हाला। अतएव आप पर उनकी व्यवसाय चतुरता, कार्य्य तत्परता तथा बुद्धिमत्ता आदि गुणों का अच्छा असर हुआ। कहना नहीं होगा कि आपने अपने पिताजी के बाद इस दुकान के व्यापार में तथा कृषि कार्य्य में उत्तरोत्तर तरक्की की और धीरे २ आप सारे खानदेश में मशहूर व्यक्ति गिने जाने लगे। आपने अपना व्यवसाय बम्बई में भी आरम्भ किया। इन दोनों स्थानों पर यह फर्म लाखों रुपयों का व्यापार करती थी। इस प्रकार प्रतिष्ठामय जीवन बिताते हुए संवत् १९६३ के भादवावदी १४ को आपका देहान्त हुआ। आपके दाह संस्कार के लिये १५ मन चंदन और १० सेर कपूर प्रथम ही बम्बई से मँगा रक्खा था। इन सुगन्धित वस्तुओं से आपका दाह संस्कार किया गया। आपने अपने स्वर्गवासी होने के समय ४ लाख रुपया अपने रिश्तेदारों तथा कुटुम्बियों को बांटे। आपके यहाँ श्री राजमलजी ललवाणी मूड़ी (अमलनेर) से दत्तक आये।

सेठ राजमलजी ललवाणी

आपका विशेष परिचय इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में दिया गया है। कहना न होगा कि आपका व्यक्तिगत जीवन अनेकानेक विचित्रताओं का प्रदर्शन है। आपका जन्म संवत् १९५१ की वैशाख सुदी ३ को हुआ। आपका बाल्यकाल बहुत ही साधारण स्थिति में व्यतीत हुआ, बहुत छोटी उम्र में ही आपको बड़े भयंकर आर्थिक कष्टों का सामना करना पड़ा। मगर उस कठिन स्थिति में भी आपका उत्साह और आपकी कर्म वीरता आपके साथ रही। जैसा कि उस समय की घटनाओं को पढ़ने से पाठकों को अपने आप ज्ञात हो जायगी। उसके पश्चात् आपके भाग्य ने एक जोर का पलटा खाया और अकस्मात आप अत्यन्त दीन स्थिति से उठ कर श्रीमन्त स्थिति में आगये, अर्थात् जामनेर के सेठ लक्खीचन्दजी के यहाँ आप दत्तक आगये। मगर एक दम इतना बड़ा परिवर्तन होजाने पर भी आपके अदम्य उत्साह, सादगी और कर्मवीरता में रत्ती भर भी अन्तर न आया। भाग्य लक्ष्मी की इस मुसकराहट के समय में भी आप अपने आपको तनिक भी न भूले। इस स्थान पर आने पर आपकी सारी शक्तियां अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊँची उठकर सार्वजनिक और जातीय कार्य्यों की ओर प्रवाहित हुईं और आपके हाथों से कई बड़े बड़े और

उत्तम कार्य्य सम्पन्न हुए जिनका वर्णन हम आपकी जीवनी में प्रकाशित कर चुके हैं। खानदेश एज्यूकेशन सोसाइटी, जैन ओसवाल बोर्डिंग जलगांव, अ० भा० महावीर मुनिमण्डल, जलगाँव जिमखाना, भागीरथी बाई लायब्रेरी, राजमल लक्खीचन्द धार्मिक औषधालय, जामनेर एग्रिकलचर फर्म, केटल ब्रिडिङ्ग फर्म इत्यादि अनेकानेक सार्वजनिक संस्थाओं को स्थापित करने में या उनकी व्यवस्था करने में आपने प्रधान रूप से भाग लिया। आपके हृदय का प्रत्येक परमाणु जातीय सेवाओं की भावना से भरा हुआ है। ओसवाल जाति का इतिहास भी आपही की सहायता और सहानुभूति का परिणाम है। कहना न होगा कि इसके पहले आधार स्तम्भ आप ही हैं।

सेठ किशनचंदजी ललवाणी

आप सेठ रामचन्दजी ललवाणी के द्वितीय पुत्र हैं। हम उपर बतला चुके हैं कि आपके भ्राता नांचनखेड़ा से जामनेर चले गये, और आप यहीं अपना साहुकारी लेनदेन का कारोबार सम्हालते रहे। आपका जन्म संवत् १८८७ में तथा स्वर्गवास संवत् १९४५ में हुआ। आपके रूपचंदजी तथा दीपचन्दजी नामक २ पुत्र हुए। सेठ दीपचन्दजी और रूपचंदजी ने कृषि के व्यापार को जमाया। संवत् १९४७ में रूपचंदजी तथा दीपचंदजी का कारबार अलग २ होगया।

ललवाणी रूपचंदजी का जन्म संवत् १९१९ में हुआ। आपके पुत्र ललवाणी भींवराजजी हुए। आपका स्वर्गवास संवत् १९८७ में हुआ है। आपके पुत्र इन्द्रचन्दजी इस समय विद्यमान हैं। आपका जन्म संवत् १९७६ में हुआ। आपके यहां कृषि तथा लेनदेन का व्यापार होता है। सेठ दीपचंदजी के दत्तक पुत्र चांदमलजी के यहाँ भी यही व्यापारिक काम होता है। सेठ दीपचंदजी का स्वर्गवास २४ साल की अवस्था में सं० १९५० में हुआ।

यह परिवार नांचनखेड़ा तथा आस पास की ओसवाल समाज में नामांकित व पुराना माना जाता है।

सेठ सतीदासजी ललवाणी का कुटुम्ब *

सेठ सतीदासजी का जन्म संवत् १८५२ में हुआ। आपने इस दुकान के व्यापार को बहुत चमकाया। आपकी दुकान सतीदासधनजी के नाम से व्यवसाय करती थी। आप भी आस पास के

* इस परिवार का पूर्ण परिचय प्राप्त करने के लिये बहुत पत्र दिये लेकिन समय पर परिचय न मिला। अतएव जितना हमारी स्मृति में था उतना ही छापा जा रहा है।

व्यापारिक समाज में नामांकित व्यक्ति थे। व्यापार की उन्नति के साथ २ आपने इस खानदान के सम्मान की भी विशेष उन्नति की। आपका स्वर्गवास संवत् १९५२ में हुआ। आपके पुत्र सेठ रतनचन्दजी हुए। सेठ रतनचंदजी के बाद उनका कार्य्यभार उनके पुत्र सेठ पन्नालालजी और भागचन्दजी ने सम्भाला।

सेठ पन्नालालजी ललवाणी—सेठ सतीदासजी के पश्चात् सेठ पन्नालालजी ने इस खानदान के लेनदेन और कृषि काम को बढ़ाया। आपके छोटे भ्राता सेठ प्रेमराजजी भी आपके साथ व्यापार में भाग लेते थे। आपकी दुकान खानदेश की नामी दुकानों में मानी जाती है, तथा हरएक धार्मिक और परोपकारी कार्य्यों में यह परिवार उदारता पूर्वक भाग लेता है। सेठ पन्नालालजी का स्वर्गवास संवत् १९८२ की कार्त्तिक बदी ३ को तथा प्रेमराजजी का स्वर्गवास लगभग संवत् १९७७ में हुआ। आप दोनों बंधुओं के कोई संतान नहीं थी, अतएव सेठ पन्नालालजी के यहाँ सरूपचन्दजी कालू (जोधपुर) से और प्रेमराजजी के यहाँ भागचंदजी तापू से दत्तक लाये गये। इस समय सेठ सरूपचंदजी तथा भागचंदजी ललवाणी अपना अपना स्वतन्त्र कार्य्य सम्हालते हैं।

श्री सरूपचंदजी—आप बड़े होशियार तथा धनिक व्यक्ति हैं। सार्वजनिक व धार्मिक कामों में आप उदारता पूर्वक भाग लेते रहते हैं। आपके यहाँ कृषि लेनदेन और साहुकारी का व्यापार होता है।

श्री भागचंदजी—आप भी शिक्षित एवं कार्य्य चतुर सज्जन हैं। आपने कुछ समय पूर्व जलगाँव में एक फर्म स्थापित की है उस पर अनाज की आढ़त व बैङ्किग का कारवार होता है। जलगाँव में आप प्रतिष्ठा सम्पन्न व्यापारी माने जाते हैं तथा हर एक सार्वजनिक काम में हिस्सा लेते रहते हैं।

यह परिवार खानदेश के ओसवाल समाज में बड़ी ऊँची प्रतिष्ठा रखता है तथा इस प्रांत के प्रधान धनिक परिवारों में माना जाता है। इस परिवार के पुरुष श्वेताम्बर स्थानक वासी आम्नाय को मानने वाले हैं।

ललवाणी मानमलजी छोटेमलजी का परिवार, मांडल

ऊपर लिखा जा चुका है कि सेठ मोटाजी के तीसरे पुत्र तेजमलजी थे। उनके पुत्र प्रेमराजजी हुए। सेठ प्रेमराजजी ललवाणी के छोटमलजी, पीरचंदजी तथा नगराजजी नामक ३ पुत्र हुए। ये तीनों भ्राता लगभग १०० साल पहिले व्यापार के लिये मांडल-खानदेश में आये।

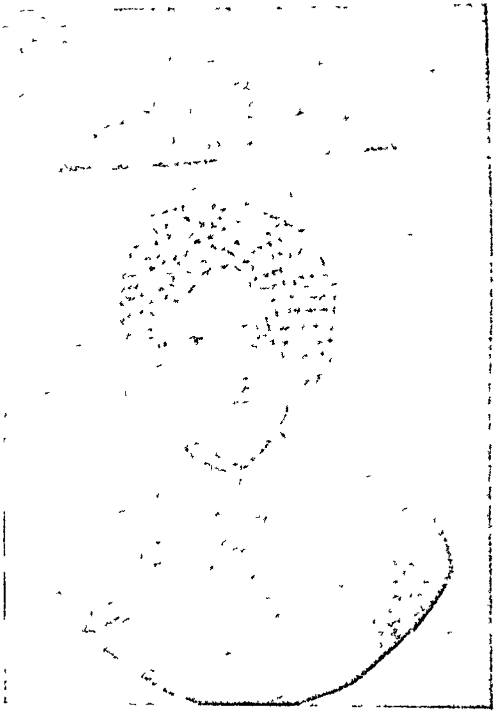
सेठ छोटमलजी ललवाणी—आपने थोड़े समय तक न्यालोद में फकीरचंदजी खींवसरा के यहाँ सर्विस की। पश्चात् आप मांडल आये और यहाँ बहुत छोटे प्रमाण में किराने की दुकानदारी शुरू की।

इस प्रकार बुद्धिमानी और हिम्मत के बल पर आपने अपने व्यापार को दिन दिन बढ़ाने की ओर लक्ष रक्खा। तथा किराने के व्यापार में सम्पत्ति उपार्जित कर आसामी लेनदेन का कार्य्य आरम्भ किया। इस प्रकार फर्म के व्यापार को उन्नति की ओर अग्रसर करके आप स्वर्गवासी हुए।

सेठ मानमलजी ललवाणी—आपका जन्म १९१२ की फागुन वदी २ को हुआ। आप सेठ छोटमलजी के पुत्र थे। आप बड़े होनहार मेधावी तथा व्यवसाय दक्ष पुरुष थे। केवल १४ साल की अल्पायु से ही आपने अपने व्यवसाय को सम्हाल लिया था। आपने इस दुकान के व्यापार तथा सम्मान को इतना बढ़ाया कि आपका परिवार खानदेश के ओसवाल परिवारों में मुख्य तथा ख्यातिवान माना जाने लगा। आपका राज दरबार में भी अच्छा मान था। खानदेश के ओसवाल सज्जनों में आप समझदार पुरुष थे। आपने जगह, जमीन, जायदाद तथा कृषि और साहुकारी के व्यापार को ज्यादा बढ़ाया। आपको दरवार में कुर्सी मिलती थी आपके ३ पुत्र हुए जो अभी विद्यमान हैं। इस प्रकार प्रतिष्ठा पूर्ण जीवन विताते हुए संवत् १९८४ की पौष सुदी ४ को आप स्वर्गवासी हुए। आपके पृथ्वीराजजी, जेठमलजी तथा चंदनमलजी नामक तीन पुत्र हैं।

ललवाणी पृथ्वीराजजी—आपका जन्म संवत १९६३ की आषाढ़ सुदी ९ को हुआ है। आप शांत, समझदार, व्यवहार कुशल तथा वजनदार व्यक्ति हैं। फर्म के व्यापार आदि का प्रधान बोझा आप ही पर है। हरएक धार्मिक और सामाजिक कामों में आप सहायता पहुँचाते हैं। आपके यहाँ कृषि तथा आसामी लेनदेन का व्यापार बड़े प्रमाण में होता है। आपके छोटे भ्राता चंदनमलजी का जन्म संवत् १९६६ की पौष वदी ४ को हुआ। आप अपने बड़े भ्राता के साथ में व्यापारिक कामों में सहयोग लेते हैं। आप दोनों बंधु मांडल तथा खानदेश के प्रसिद्ध व्यक्ति हैं।

ललवाणी जेठमलजी—आपका जन्म संवत् १९६५ की वैशाख सुदी ४ को हुआ। आपका कारवार दो साल पूर्व अलग अलग हो गया है। इसलिए इस समय आप जेठमल मानमल के नाम से साहुकारी तथा कृषि का काम करते हैं। आपने अपनी माता श्री केशरबाई के नाम से अमलनेर गर्ल्स स्कूल में ५ हजार रुपये दिये हैं। यह शाला आपकी मातेश्वरी के नाम से चल रही है। इसी तरह अपनी मातेश्वरी के नाम से कमलाबाई शंकरलाल गर्ल्स स्कूल धूलिया में एक होस्टल बनवाने के लिए आपने अढ़ाई हजार रुपये दान दिये हैं। इसी तरह और भी उत्तम कामों में आप व्यय करते हैं। आप अमलनेर म्युनिसिपेलेटी के लोकल बोर्ड की ओर से मेम्बर हैं। इसी तरह कृषि (शेतकी) एसोसिएशन के मेम्बर हैं।



सेठ पृथ्वीराजजी ललवाणी, मांडल (खानदेश).



शाहजी जीवणचन्दजी ललवाणी, जोधपुर.



स्व० सेठ जवाहरमलजी ललवाणी, पूना.



कुँ० सम्पतलालजी लूणावत (किशनलाल संपतलाल), फलौदी.

सेठ लालचन्द जीतमल, ललवाणी-धूलिया

इसी तरह मोटाजी सेठ के चतुर्थ पुत्र समरथमलजी के पुत्र जीतमलजी हुए। आप १०० साल पहिले धूलिया के जूनियाँ नामक स्थान में आये। आपके दगडूजी, गुलाबचंदजी, लालचंदजी, लक्खीचंदजी व सखारामजी नामक ५ पुत्र हुए। सेठ लालचंदजी का जन्म १९३० में हुआ। आप जूनियाँ से बोरद गये, तथा इस समय सिरूर (धूलिया के पास) में व्यापार करते हैं। धूलिया में भी १२ साल पहिले इन्होंने दुकान की है आपके यहाँ किराने का व्यापार होता है। आपके भागचंदजी, शोभाचंदजी, कपूरचंदजी तथा छगनमलजी नामक ४ पुत्र विद्यमान हैं। इसी तरह दगडूजी ललवाणी के पुत्र दीपचन्दजी बोरद में व्यापार करते हैं। लक्खीचन्दजी के पुत्र कपूरचन्दजी भी व्यापार करते हैं।

ललवाणी जीवणचन्दजी का खानदान, जोधपुर

इस परिवार के पूर्वज ललवाणी जगन्नाथजी के नगराजजी और कुशलचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें नगराजजी का परिवार इस समय पचपदरा में हैं।

ललवाणी कुशलचन्दजी—आपको प्रसन्न होकर जोधपुर दरबार ने "शाह" की पदवी इनायत की थी। तब से आपका परिवार "शाह" के नाम से सम्बोधित होता है। आपके पुत्र अमरचन्दजी तथा माणकचन्दजी ललवाणी हुए।

ललवाणी अमरचन्दजी—आप जोधपुर महाराजा मानसिंहजी के विश्वासपात्र ओहदेदारों में थे। जब महाराजा भींवसिंहजी गुजर गये, तब महाराजा मानसिंहजी को वापस लाने के लिये आप जालोर भेजे गये थे। उस समय इनको महाराजा मानसिंहजी ने एक खास रुक्का दिया, जिसमें लिखा था कि······

"तथा थांरी बंदगी सदाई सामधरमो री है हमें मारी बंदगी में हाजर हुवो सुँ थांरी आजीविका खिदमत में माराराज में दूर न हुसी। तो सुँ सदा मेहरवानी रहसी मारो श्री इष्टदेव विचे है ने सुत्र निजर सुँ सवायो नीवाजस हुसी : सुतो नीजर भावसी खातर खुशी राखे ने परबतसर री हाकमी ने ऊपज तो दोय हजार रो गाँव इनायत हुसी। काती सुदी ५ संवत् १८६०।

जब महाराजा मानसिंहजी जोधपुर की गद्दी पर बैठे, उस समय उन्होंने परवतसर, तोसीणां, बवाल वगैरा परगनों का हाकिम आपको बनाया और घोरू नामक २ हजार की रेख का गाँव जागीर में दिया। इसके बाद ये गाँव जप्त होकर आपको १ हजार रुपया सालियाना मिलते रहे। आपके पुत्र चतुरभुजजी को भी संवत् १८६० में एक खास रुक्का इनायत हुआ।

संवत् १८६२ में जोधपुर तथा जयपुर रियासतों के दरमियान उदयपुर की कुमारी के सगपण के सम्बन्ध में झगड़ा खड़ा हुआ, और दोनों तरफ से झगड़े की तयारी होने लगी। इस दुर्घटना को टालने के लिये ललवाणी अमरचन्दजी जयपुर भेजे गये और इन्होंने बुद्धिमानी पूर्वक इस मामले को शांत किया। इससे प्रसन्न होकर आपको जोधपुर दरबार ने जयपुर का वकील बनाया। आपके पुत्र फतेकरणजी, चतुर्भुजजी और रूपचन्दजी हुए। इनमें संवत् १८६२ में ललवानी फतेकरणजी पर्वतसर के हाकिम बनाये गये। आपके पुत्र फोजकरणजी जेतारण के हाकिम मुकर्रर किये गये थे। उस समय से अमरचन्दजी का परिवार जयपुर में निवास करता है।

ललवाणी प्रतापमलजी—ललवाणी कुशालचन्दजी के छोटे भ्राता माणकचन्दजी का परिवार जोधपुर में रहा। इनके पुत्र विजैचंदजी और पौत्र प्रतापमलजी हुए। आप वीर पुरुष थे। आपने कई लड़ाइयाँ लड़ीं। संवत् १८६३ में जब जोधपुर पर आक्रमण हुआ, तब ललवानी प्रतापमलजी जोधपुर दरबार की ओर से युद्ध में सम्मिलित हुए। संवत् १८६३ की जेठ वदी १२ को आपको महाराजा मानसिंहजी ने एक रुक्का प्रसन्नता का दिया था। संवत् १८७९ में सरदारों के बखेड़े को शाँत करने के लिए फौज लेकर आप गूलर गये, और वहाँ फतह पाई। संवत् १८८१ में आप दौलतपुरे के हाकिम मुकर्रर हुए। संवत् १८८७ में इस स्थान पर इनके बड़े पुत्र सिधकरणजी भेजे गये और आप फौज के कार्य के लिये जोधपुर बुलवा लिये गये। ललवाणी प्रतापमलजी के पुत्र सिधकरणजी तथा अभयकरणजी थे। इनमें सिधकरणजी के जीवणचन्दजी और लालचन्दजी तथा अभेकरणजी के लिखमीचन्दजी और शिवचन्दजी नामक पुत्र हुए। संवत् १८९९ में ललवाणी लखमीचन्दजी जेतारण के और १९०२ में शिवचन्दजी दौलतपुरे के हाकिम बनाये गये। इसी तरह सिधकरणजी डीडवाणे के कोतवाल बनाये गये। इस प्रकार आप लगातार रियासत की सेवाओं में भाग लेते रहे।

ललवाणी जीवणचन्दजी प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। आपके पुत्र शाह पृथ्वीराजजी इस समय विद्यमान हैं। आपकी अवस्था ९७ साल की है। आप इस समय रेवेन्यू आफिसर हैं। आपने रियासत के मालगुजारी बंदोवस्त में बहुत काम किया है, तथा तजुरबेकार और होशियार मुत्सुद्दी हैं। आपके छोटे भाई दीपचन्दजी हवाला में माफिज अफसर हैं। इनको हवाले के काम का अच्छा तजुर्बा है। आपके पुत्र रतनचंद जी हैं। इनमें रतनचंदजी, पृथ्वीराजजी के नाम पर दत्तक गये हैं। ललवाणी रतनचन्दजी के पुत्र जगदीशचन्द हैं।

यह परिवार जोधपुर के ओसवाल समाज में अच्छा प्रतिष्ठित माना जाता है। ललवानी पृथ्वीराज जी पुराने प्रतिष्ठित महानुभाव हैं।

सेठ पूनमचन्द नारायणदास ललवाणी, मनमाड़

इस परिवार का मूल निवास बड़ी पादू (मेड़ता के पास) जोधपुर स्टेट है। आप स्थानक वासी आम्नाय के अनुयायी हैं। मारवाड़ से व्यापार के निमित्त लगभग १२५ साल पहिले सेठ मनरूपजी ललवाणी मनमाड़ आये। आपके गजमलजी तथा खूबचन्दजी नामक दो पुत्र हुए। सेठ गजमलजी के पुत्र जोधराजजी ने आस पास के ओसवाल समाज तथा तथा पंचपंचायती में अच्छा सम्मान पाया। आप धार्मिक वृत्ति के पुरुष थे। आपका संवत् १९३८ में स्वर्गवास हुआ। आपके दीपचन्दजी तथा पूनमचन्दजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें से पूनमचंदजी, ललवाणी खूबचंदजी के नाम पर दत्तक गये। आप दोनों का जन्म क्रमशः संवत् १९१४ और १९१८ में हुआ था। इन दोनों बन्धुओं ने इस परिवार के व्यापार को विशेष बढ़ाया। दीपचन्दजी का स्वर्गवास संवत् १९५२ में हुआ। इनके खींवराजजी तथा गणेशमलजी नामक २ हुए। इनमें गणेशमलजी सन् १९३१ में स्वर्गवासी हुए। आप शान्त स्वभाव के दयालु सज्जन थे।

वर्तमान में इस परिवार में मुख्य व्यक्ति सेठ पूनमचन्दजी तथा खींवराजजी हैं। इनमें से पूनमचन्दजी ललवानी पुराने ढंग के प्रतिष्ठित पुरुष हैं। सेठ खींवराजजी का जन्म संवत् १९५२ में हुआ। आप ही इस समय तमाम व्यापार का संचालन करते हैं। आपके पुत्र माणकचन्दजी १७ साल के हैं। गणेशमलजी के पुत्र धरमचन्दजी पढ़ते हैं।

यह परिवार खानदेश तथा महाराष्ट्र प्रान्त की ओसवाल समाज में अच्छा सधन व प्रतिष्ठित माना जाता है। आपके यहाँ पूनमचंद नारायणदास ललवाणी के नाम से आसामी व सराफी लेनदेन का काम होता है।

सेठ पूनमचंद हीरालाल ललवाणी, भोपाल

ललवाणी पूनमचन्दजी मेड़ते में निवास करते थे। उनके पुत्र हीरालालजी तथा राजमलजी ७०-७५ साल पूर्व इन्दौर और मगरदा (भोपाल स्टेट) होते हुए भोपाल आये, यहाँ आकर राजमलजी ने काश्तकारी और हीरालालजी ने रामकिशन पृथ्वीराज नामक दूकान पर गुमास्तगिरी की। बाद में हीरालालजी ने भोपाल शहर में पूनमचंद हीरालाल के नाम से दुकान की। इनको प्रतिष्ठित समझकर संवत् १९५४ में भोपाल स्टेट ने इनको अपने शाहगंज और नजीराबाद परगनों का खजांची बनाया। और इन दोनों जगहों पर हीरालालजी ने मूलचन्द मोतीलाल के नाम से दुकानें कीं। पीछे से दुराहा (भोपाल स्टेट) में और पोसार पिपरिया में भी इसी नाम से दुकानें की गई। आपने स्थानीय श्वे० जैन मन्दिर में एक

छोटा मंदिर बनवाया और २५००) रुपये नगद देकर उसकी व्यवस्था श्री संघ के जिम्मे करदी। सरकार सुल्तान जहांबेगम साहिबा ने अपने शाहजादे नवाब हमीदुल्लाखां साहिब की जनानी ड्योढ़ी की तिजारत का काम आपके सुपुर्द किया जो आपके गुजरने के एक साल तक आपके पुत्र के पास रहा। आप के छोटे पुत्र मोतीलालजी का अंतकाल संवत १९६९ में हुआ। आपने संवत् १९७२ में ७ क्षेत्रों के लिए ५ हजार रुपयों का दान धार्मिक कार्यों के लिये निकाला। आपका स्वर्गवास संवत् १९७२ की फागुन बदी अमावस को हुआ।

वर्तमान में सेठ हीरालालजी के बड़े पुत्र राय सेठ मूलचन्दजी ललवाणी विद्यमान हैं आपका जन्म संवत् १९४१ में हुआ। आपके जिम्मे सरकार सुल्तानजहां बेगम साहिबा ने परगना सुल्तानपुर (भोपाल स्टेट) का खजाना किया। आपने ४० हजार रुपयों में भोपाल स्टेट के मनकापुर और जुमनिया नामक २ मोजे खरीद किये। संवत् १९८३ में मूलचन्द सरदारमल के नाम से मनकापुर में दुकान की गई। २ सालों तक मरहूम नवाब उबेदुल्लाखां साहिब की ड्योढ़ी की तिजारत का काम भी आपके जिम्मे रहा। युरोपीय वार के समय पर स्टेट ने आपको वारलोन फण्ड का ट्रेझरर बनाया। आपने आठ सालों तक ऑनरेरी मजिस्ट्रेटशिप का कार्य्य किया। सन् १९२८ में भोपाल सरकार ने आपको "राय" की पदवी इनायत की। सन् १९३२ में आपको भोपाल स्टेट ने "स्टेट खजांची" बनाया। वर्तमान में आप स्थानीय श्वे० जैनपाठशाला के प्रेसिडेण्ट और गौशाला के १२ सालों से संचालक हैं। आप भोपाल शहर के प्रतिष्ठित पुरुष हैं। आपके पुत्र सरदारमलजी का जन्म १९६८ में हुआ। आप उत्साही तथा समझदार युवक हैं। इन्होंने एफ० ए० तक शिक्षा पाई है।

सेठ जवाहरमल सुखराज ललवाणी, पूना

इस परिवार के पूर्वज सेठ भीमाजी ललवाणी के पुत्र सेठ पूनमचन्दजी ललवाणी अपने मूल निवास स्थान कोसेलाव (जोधपुर स्टेट) से संवत् १९३० में पूना आये। तथा पूना छावनी में सराफी व्यवहार चालू किया। आप संवत् १९८० में स्वर्गवासी हुए। आपके जवाहरमलजी, रतनचन्दजी रूपचंदजी और छोगामलजी नामक ४ पुत्र हुए।

जवाहरमलजी ललवाणी—आपका जन्म संवत् १९३२ में हुआ। आपने २५ साल की वयतक सेठ रतनाजी सेवाजी दुकान पर मुनीमात की। पश्चात् १९५५ से बर्तनों का अपना घरू व्यापार आरंभ किया। और इस व्यापार में आपने अच्छी सम्पत्ति उपार्जित की। आपने स्थानीय दादावाड़ी के उद्धार तथा नवीन बिल्डिंग बनवाने में विशेष परिश्रम किया। जातीय पंचायती में मेल बनाये रखने में आप

प्रयत्न पूर्वक भाग लेते थे। आप महादेव मन्दिर, जैन पाठशाला और अन्य कई संस्थाओं के ट्रस्टी थे। आपने जिनदत्त व्यायाम शाला का स्थापन किया था। आप श्री पार्श्वनाथ विद्यालय वरकाणा के लाइफ मेम्बर थे। आपने अपने गाँव में एक कन्या पाठशाला खुलवाई है। आप पूना के जैन समाज में वजनदार पुरुष थे। संवत् १९९० की काती वदी १३ को आप स्वर्गवासी हुए। आपके सुखराजजी, केसरीमलजी, मोहनलालजी तथा कान्तिलालजी नामक ४ पुत्र विद्यमान हैं।

सेठ सुखराजजी ललवाणी का जन्म १९५८ में हुआ आप श्री आत्मानन्द जैन लायब्रेरी पूना के सेक्रेटरी हैं। इसमें आपने बहुत अधिक उन्नति की है। इस वाचनालय में लगभग १० हजार ग्रन्थ हैं। आप मारवाड़ प्राविंशियल जैन कान्फ्रेंस के सेक्रेटरी तथा उसकी स्टेंडिंग कमेटी के मेम्बर हैं। इसी तरह वरकाणा विद्यालय एजूकेशन बोर्ड के सेक्रेटरी हैं। आपके छोटे भ्राता केसरीमलजी फर्म के व्यापार में सहयोग लेते हैं। तथा शेष दो पढ़ते हैं। आपके यहाँ जवाहरमल सुखराज के नाम से वैताल पेठ पूना में बर्तनों का व्यापार होता है। आप मन्दिर मार्गीय आम्नाय के अनुयायी हैं।

सेठ भीकचंद केवलचंदजी ललवाणी, मनमाड

सेठ मेघराजजी ललवाणी बड़ी पादू (मारवाड़) में रहते थे। इनके हिन्दूमलजी, छोटमलजी तथा नवलमलजी नामक ३ पुत्र हुए। ये बंधु देश से व्यापार के लिये मनमाड के पास नीमोन नामक स्थान में आये। छोटमलजी के केवलचंदजी तथा दीपचन्दजी नामक २ पुत्र हुए, इनमें केवलचन्दजी, हिन्दूमलजी के नाम पर दत्तक गये। सेठ केवलचन्दजी की मनमाड के व आसपास के ओसवाल समाज में अच्छी प्रतिष्ठा थी। संवत् १९५२ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र भीकचन्दजी का जन्म संवत् १९३८ में हुआ। ५ साल पूर्व आपने मनमाड में अपना स्थायी निवास बनाया। आप प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपके यहाँ भीकचन्द केवलचन्द के नाम से आसामी लेनदेन का काम होता है।

इसी प्रकार इस परिवार में दीपचन्दजी के पौत्र कचरदासजी और मोतीलालजी तथा नवलमलजी के पौत्र बालचन्दजी नीमोन में व्यापार करते हैं।

लूणावत

लूणावत गौत्र की उत्पत्ति

ऐसा कहा जाता है कि सिंध देश के भाटी राजपूत राव गोशल को विक्रम संवत् १९४ के लग-भग उपकेश गच्छीय जैनाचार्य्य कक्कसूरि ने प्रतिबोध देकर जैनी बनाया और आपरिया गौत्र की स्थापना की। इसी वंश में आगे चलकर लूणा साहस नामक एक भाग्यशाली एवम् प्रतिष्ठित पुरुष हुए। ये सिंध देश में मारवाड़ के गुढा नामक स्थान में आकर रहने लगे। वहाँ इन्होंने एक मन्दिर भी बनवाया। लूणा साह को फिर से आचार्य्य देवगुप्त सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनी बनाया। इन्हीं लूणासाह के वंशज लूणावत के नाम से मशहूर हुए। *

सेठ बुधमलजी बिरदीचन्दजी लूणावत का खानदान

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान नान्द (अजमेर) का है। आप सुप्रसिद्ध लूणावत वंश के हैं।

करीब १०० वर्ष पूर्व आपके पूर्व पुरुष सेठ बुधमलजी साहब धामक में आये। आपही ने यहाँ पर आकर दुकान स्थापित की और सबसे पहले कपास और जमीदारी का काम प्रारम्भ किया। उस समय आपका प्रभाव इतना बढ़ गया था कि सारा धामक गांव, बुधमलजी का धामक इस नाम से प्रसिद्ध हो गया था। उस समय रेलवे न होने की वजह से धामक कपास के व्यापार का प्रधान सेण्टर हो रहा था। निजाम स्टेट और नागपुर के बीचवाली सड़क की यह प्रधान मण्डी था। इस अवसर से फायदा उठा कर आपने कपास के व्यापार में बहुत द्रव्य उपार्जन किया आपका स्वर्गवास संवत् १९२५

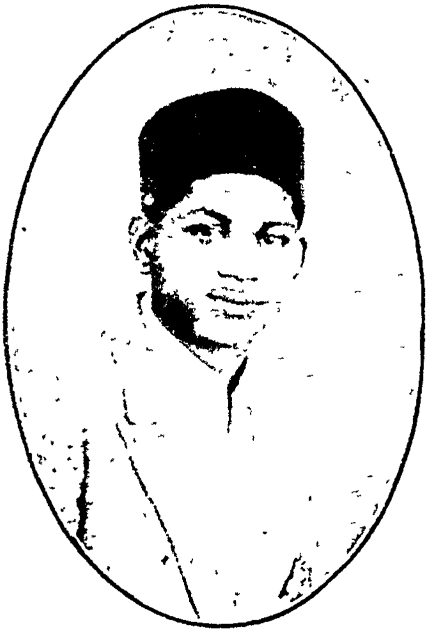
* महाजन वंश मुक्तावली में इस किम्वदंति का उल्लेख करते हुए लिखा है कि सिंध देश के भाटी राजपूत राणा अभयसिंह को संवत् ११९५ में श्री जिनदत्त सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनी बनाया। और आपरिया गौत्र की स्थापना की। इन्हीं अभयसिंह की १७ पीढ़ी में लूणा साह हुए। इनकी संतानें लुणावत कहलाई। इन्होंने शत्रुंजय का एक संघ भी निकाला था।



स्व० सेठ विरदीचन्दजी लूणावत, धामक.



स्व० सेठ चुन्नीलालजी लूणावत, धामक.



बाबू सुगन्धचन्दजी लूणावत, धामक.



बाबू इन्द्रचन्दजी लूणावत, धामक.

में हुआ। आपके एक पुत्र श्रीयुत विरदीचन्दजी हुए। आपका जन्म चैत सुदी १५ संवत् १९१२ में हुआ। जिस समय सेठ बुधमलजी का देहान्त हुआ, उस समय आपकी उम्र केवल १३ वर्ष की थी। मगर आपने अपनी परिश्रमशीलता, दूरदर्शिता और बुद्धिमानी से दुकान के काम को बहुत योग्यता से संचालित किया। आपका सामाजिक, सार्वजनिक तथा धार्मिक जीवन भी बहुत अनुकरणीय रहा। आप का सामाजिक पंचायत पर बहुत अच्छा प्रभाव था तथा आप पंचायत के अग्रगण्य व्यक्ति थे। आप गुप्त दान विशेष रूप से किया करते थे। गौपालन का भी आपको बहुत शौक था। आपके स्वभाव में सादापन, दया और सचाई की मात्रा बहुत अधिक थी। विक्रम संवत् १९५६ में जब भारत व्यापी दुष्काल पड़ा था उस समय आपके पास काफी अनाज सिलक में था। आपने उस भयङ्कर दुष्काल के समय में स्वार्थ त्याग कर गरीबों के लिए अन्न क्षेत्र खोले। आपका लक्ष्य गरीबों के प्रतिपालन की तरफ विशेष रहता था। आपके हाथ से दान धर्म भी बहुत हुआ। आपका स्वर्गवास सं० १९८८ की कार्तिक वदी ११ को हुआ।

आपके एक पुत्र हुए जिनका नाम चुन्नीलालजी था। आप बड़े नीतिवान और धर्मशील व्यक्ति थे। आपका विवाह खामगांव में सेठ ऋषभदासजी सखलेचा की पुत्री से हुआ। यह विवाह बड़ी धूमधाम से हुआ जिसमें काफी रुपया खर्च हुआ। आपका स्वर्गवास केवल २९ वर्ष की छोटी उम्र में संवत् १९७५ में हो गया।

सेठ चुन्नीलालजी के दो पुत्र और एक कन्या हुई। पुत्रों के नाम सुगन्धचन्दजी, तथा इन्द्रचन्दजी हैं तथा कन्या का नाम मदनकुँवर बाई है। इनमें से श्रीयुत सुगन्धचन्दजी का विवाह हैदराबाद के सुप्रसिद्ध सेठ दीवान बहादुर थानमलजी लूणिया की पौत्री से हुआ। इस विवाह में बहुत काफी रुपया खर्च हुआ। इन्द्रचन्दजी का विवाह भुसावल में सेठ पन्नालालजी बम्ब की सुपुत्री से हुआ। इस विवाह के उपलक्ष्य में भिन्न २ कार्यों में ग्यारह हजार रुपये दान दिये गये और काफी रुपया खर्च हुआ। श्री मदनकुँवरबाई का विवाह औरंगाबाद में मोहनलालजी देवड़ा से हुआ। आप अच्छे सुशिक्षित हैं।

श्रीयुत सुगन्धचन्दजी लूणावत

आपका जन्म संवत् १९६६ की महा सुदी ९ को हुआ। स्कूल में आपकी शिक्षा मैट्रिक तक हुई मगर आपका अध्ययन और आपकी योग्यता बहुत बढ़ी हुई है। आप शान्त स्वभाव और उच्च प्रवृत्तियों के नवयुवक हैं। इतनी बड़ी फर्म के मालिक होते हुए भी अहङ्कार और उच्छृंखलता आपको छूभी नहीं गई है। इतनी सामग्रियों के विद्यमान होते हुए भी आप शुद्ध खद्दर का व्यवहार करते हैं तथा अत्यन्त सादा

जीवन व्यतीत करते हैं। देश और समाज-सेवा की तरफ भी आपका बहुत काफी लक्ष्य है। इतनी छोटी उम्र के होने पर भी सभा, सोसायटी, सम्मेलन तथा शिक्षासंस्थाओं में आप बहुत दिलचस्पी से भाग लेते रहते हैं। सबसे पहले नवयुवकों के शारीरिक विकास के लिये आपने प्रयत्न करके धामक गांव में एक सार्वजनिक व्यायामशाला की स्थापना करवाई, कहना न होगा कि इसके पहले यहाँ पर कोई व्यायामशाला न थी। इसके पश्चात् आपने अपनी ओर से धामक में—ज्ञानवर्द्धक वाचनालय का स्थापना की इसके सिवा आप मोमिनाबाद के महावीर बालाश्रम के उपसभापति हैं। अभी आपकी उम्र बहुत कम है, मगर समाज—सेवा की जो चिनगारी इस समय आपके हृदय में सुलग रही हैं उसका विकास होने पर समाज सेवा के बहुत बड़े २ काम आपसे होने की आशा है। समाज सेवा के कार्य्यों में आप अत्यन्त उत्साह के साथ आर्थिक दान देते रहते हैं। आप अजमेर में होने वाली स्थानकवासी कान्फ्रेन्स के अवसर पर श्री स्थानकवासी जैन नवयुवक सम्मेलन की स्वागत कारिणी के अध्यक्ष चुने गये थे। ओसवाल जाति के इस विशाल इतिहास के भी आप एक प्रधान अधार स्तम्भ हैं।

श्रीयुत इन्द्रचन्दजी लूणावत—आपका जन्म संवत् १९७० में हुआ। आपका शिक्षण भी मैट्रिक तक हुआ। आप भी सज्जन और सुशील स्वभाव के नवयुवक हैं। आपका बन्धु प्रेम बहुत बढ़ा हुआ है, आप अपने बड़े भ्राता सुगन्धचन्दजी लूणावत की आज्ञा का पालन बड़ी श्रद्धा से करते हैं। आपका भी समाजसेवा और दानधर्म की ओर पूरा लक्ष्य है।

सेठ किशनलाल सम्पतलाल लूणावत, फलोदी

किशनलालजी लूणावत का जन्म संवत् १९३८ की आषाढ़ वदी १४ को हुआ। आप जयराजजी लूणावत फलोदी वालों के पुत्र और भाखरचन्दजी के पौत्र हैं, तथा तनसुखलालजी लूणावत (रावतमलजी के पुत्र) के यहां दत्तक गये हैं। लूणावत किशनलालजी का धर्मध्यान में जादा लक्ष है। आप बड़े सीधे स्वभाव के पुरुष हैं। लगभग १॥ लाख रुपया आपने धार्मिक कार्य्यों में लगाये हैं। संवत् १९७४ में आपने पाली से कापरड़ा तीर्थ का संघ आचार्य नेमिविजयजी के उपदेश से निकाला। इसके अलावा १५ हजार की लागत से फलोदी में एक विशाल धर्मशाला और देरासर बनवाया तथा आचार्य नीतिविजयजी से उपाध्यान कराया।

लूणावत किशनलालजी ने सम्मेदशिखरजी, गिरनार, सिद्धाचल, आबू, तारंगाहिल, केशरियाजी आदि कई तीर्थों की यात्रा की। पाली में किशनलाल सम्पतलाल के नाम से आपका गिरवी व ब्याज का धंधा होता है और फलोदी में खास निवासस्थान है। आपके श्वसुर निहालचन्दजी सराफ़ ने अपनी सम्पति का

वसीयतनामा अपनी पुत्री के नाम कर दिया। इसीलिए उनकी तमाम सम्पत्ति के मालिक किशनलालजी लूणावत हो गये। आपके पुत्र सम्पतलालजी का जन्म संवत् १९७० में पाली में हुआ। सम्पतलालजी भी अपने पिताजी की तरह धर्मध्यान में जादा दिलचस्पी लेते हैं।

सेठ चन्दूलाल पन्नालाल लूणावत, सेंदूरजना

इस परिवार के पूर्वजों का मूल निवास स्थान अजमेर के समीप नरवर का था। आप लोग श्री जैन श्वेताम्बर मन्दिर आम्नाय के सज्जन हैं। सब से पहले करीब १०० वर्ष प्रथम इस परिवार के पूर्व पुरुष सेठ महताबमलजी, चन्दूलालजी तथा जेठमलजी राजेगांव होकर सेंदूरजना आये। इनमें महताबमलजी के कोई संतान न हुई। जेठमलजी के जगन्नाथजी, दुलीचन्दजी, हरकचंदजी तथा कालूरामजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें तृतीय तथा चतुर्थ पुत्र विद्यमान हैं।

सेठ चन्दूलालजी ने अपने परिवार के व्यापार को खूब बढ़ाया। आपके मोतीलालजी तथा पन्नालालजी नामक दो पुत्र हुए। मोतीलालजी संवत् १९६० में स्वर्गवासी हुए। आपके पश्चात् पन्नालाल जी ने दुकान के काम को खूब बढ़ाया। आपकी दुकान बुलढाणा प्रांत में नामांकित फर्म है। आपका जन्म संवत् १९२७ में हुआ। आपने अपने परिवार की इज्जत आबरू को भी खूब बढ़ाया। आपके पुत्र कन्हैयालालजी का सं० १९४७ में जन्म हुआ। कन्हैयालालजी के माणकलालजी तथा चम्पालालजी नामक दो पुत्र हुए।

आपकी फर्म पर साहूकारी का बड़ा काम होता है। आपके एक जीनिंग फेक्टरी भी है।

सेठ ज़ोरावरमलजी लूनावत का खानदान, जयपुर

इस खानदान के प्रसिद्ध पुरुष लूणासा के पश्चात् क्रमशः दुधाजी, पदमाजी, खेतसीजी, सोनराजजी, व बेलाजी हुए। लूणावत बेलाजी के देदोजी, रूपोजी तथा रतनाजी नामक चार पुत्र हुए। इन में से रतनाजी के जेतोजी, जयमलजी, पेमाजी तथा लाखाजी नामक चार पुत्र हुए। जेतोजी के फतहरामजी तथा ईसरजी नामक दो पुत्र हुए। फतहरामजी के मोतीचन्दजी एवम् सूरतरामजी नामके दो पुत्र हुए। इनमें से मोतीचन्दजी के भैरोंदत्तजी तथा सूरतरामजी के मगनीरामजी, छगनीरामजी, घमंडीरामजी, चौथमलजी, हजारीमलजी तथा हनीरामलजी नामक छः पुत्र हुए। इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान खींवसर था। वहां से आप लोग बड़लू तथा बड़लू से संवत् १८९५ में सेठ मगनीरामजी जयपुर आगये। तभी से आप लोग जयपुर में ही निवास करते हैं। इस खानदान का सेठ मगनीरामजी से

सम्बन्ध है। आपने सेठ मनीराम मथुरावालों की टोंक, बम्बई आदि फर्मों पर मुनीमात भी की थी। आपने बड़लू में एक मकान तथा अपने पिता के यादगिरी में एक छतरी बनवाई जो आज भी विद्यमान है। आप के जवाहरमलजी व जीतमलजी नामक दो पुत्र हुए।

सेठ जवाहरमलजी बड़े होशियार आदमी थे। आप कई सालों तक मुनीमात करते रहे। तदनंतर आप महाराणीजी (जयपुर) के कामदार रहे। आपने झाडशाही सिक्के की पैठ जमाने में भी बहुत सहायता की। आपके जोरावरमलजी, चांदमलजी तथा केशरीमलजी नामक तीन पुत्र हैं। सेठ जीतमलजी ने जयपुर में पौद्दारी तथा कई फर्मों पर मुनीमात की। आपके कार्य्यों से खुश होकर टोंक के नवाब ने आपको कई पारितोषक दिये थे। आपने केशरीमलजी को अपने नाम पर दत्तक लिया।

सेठ जवाहरमलजी ने जयपुर में दारोगा टकसाल तथा महाराणीजी के यहां कामदारी पर भी काम किया। आपको इस समय स्टेट की ओर से पेंशन मिल रही है। आपने केशरीमलजी के पुत्र गुमानमल जी को अपने नाम पर दत्तक लिया है। आप इस समय जयपुर महकमा खास में मुलाजिम हैं। सेठ चांदमलजी भी दारोगा टकसाल रहे तथा वर्त्तमान में सेठ मनीरामजी मथुरावालों की कोठी पर मुनीमात का काम करते हैं। आपने केशरीमलजी के पुत्र जतनमलजी को गोद लिया है। आप इस समय बी० ए० (Final) में पढ़ रहे हैं। सेठ केशरीमलजी ने कितने ही ठिकानों की कामदारी की, तथा मथुरा वाले सेठों की तरफ से रेसीडेंसी के खजांची रहे हैं। आप की कारगुजारी के उपलक्ष्य में कई रेजिडेंटों ने आपको प्रशंसा पत्र दिये हैं। इस समय आप लोढ़ों की फर्म पर टोंक में मुनीम हैं। आप पर टोंक के नवाब भी बड़े खुश हैं। आपके गुमानमलजी, जतनमलजी, फतेमलजी, सरदारमलजी, मनोहरमलजी तथा नौरतनमलजी नामक छः पुत्र हैं। इनमें से गुमानमलजी तथा जतनमलजी दत्तक गये हैं। फतहमलजी मेट्रिक में हैं तथा शेष भी पढ़ते हैं।

सेठ हजारीमल खूबचन्द लूणावत, नरसिंहपुर

इस परिवार के पूर्वज सेठ हजारीमलजी लूणावत मांडपुरा (नागौर) के समीप आचीना नामक गाँव से लगभग ६० साल पहिले पूना नाशिक आदि स्थानों में होते हुए नरसिंहपुर आये और अनाज कपड़ा आदि का कारबार शुरू किया। आपके हाथों से ही व्यापार को उन्नति प्राप्त हुई। आपके छोटे भ्राता सेठ खूबचन्दजी, जुहारमलजी, तुलसीरामजी और पृथ्वीराजजी थे। संवत् १९६५ में सेठ हजारीमलजी का स्वर्गवास हो गया। आपके पुत्र सेठ हंसराजजी, हमीरमलजी, टीकारामजी तथा मोतीलालजी विद्यमान हैं। आप बंधुओं ने हंसराज हमीरमल के नाम से १२ साल पूर्व भुसावल में दुकान खोली। सेठ टीका-

रामजी, खूबचन्दजी के नाम पर दत्तक गये हैं। यह परिवार नरसिंहपुर के व्यापारिक समाज में बड़ा प्रतिष्ठित माना जाता है। आपके यहाँ लकड़ी, गल्ला और कपड़े का व्यापार होता है। सेठ टीकारामजी का जन्म संवत् १९५७ में हुआ।

इसी तरह सेठ गुहारमलजी के पुत्र मोतीलालजी और हीराचन्दजी गुहारमल बच्छराज के नाम से नरसिंहपुर में व्यापार करते हैं। आप सब सज्जन यहाँ अच्छे प्रतिष्ठित माने जाते हैं।

सेठ मुल्तानमल हरकचन्द लूणावत, लोनावला

इस कुटुम्ब का मूलनिवास खींवसर (जोधपुर स्टेट) में है। यहां से इस परिवार के सेठ मुलतानमलजी लगभग सौ साल पहिले लोनावला—खटकाला आये। आपका संवत् १९६५ में शरीरान्त हुआ। आपके पुत्र हरकचन्दजी का जन्म संवत् १९३१ में हुआ। आप दोनों सज्जनों ने इस दुकान के व्यापार को तरक्की दी। यह कुटुम्ब लूनावला के ओसवाल समाज में अपनी अच्छी इज्जत रखता है। आपके यहाँ मुल्तानचन्द हरकचन्द के नाम से किराना तथा अनाज का व्यापार होता है।

सेठ गुलाबचन्द अमरचन्द लूणावत, लोनावला

आपका निवास भी खींवसर (जोधपुर स्टेट) में है। सेठ कपूरचन्दजी के पाँच पुत्र थे। उनमें मुलतानमलजी दूसरे तथा गुलाबचन्दजी पाँचवें पुत्र थे। संवत् १९५८ में सेठ गुलाबचन्दजी देश से लूनावला आये तथा किराने व अनाज का थोक व्यापार शुरू किया। आपका सम्वत् १९६२ में शरीरावसान हुआ। आपके पुत्र अमरचन्दजी तथा हंसराजजी हुए। इनका जन्म १९४३ तथा १९४९ में हुआ। आप दोनों बन्धुओं के हाथों से व्यापार को तरक्की मिली। हंसराजजी लोनावड़ा म्यु० के मेम्बर रहे तथा हरएक सार्वजनिक कामों में भाग लेते हैं। आप चिंचवड़ विद्यालय के कार्यों में भी दिलचस्पी लेते हैं। अमरचन्दजी लूनावड़ा के अच्छे प्रतिष्ठित व्यापारी हैं। आपके यहाँ किराना तथा अनाज का व्यापार होता है। अमरचंदजी के पुत्र कचरदासजी हैं। तथा हंसराजजी के पुत्र मोहनलालजी तथा शान्तिलालजी पढ़ते हैं।

लूणिया

लूणिया गौत्र की उत्पत्ति

लूणिया गौत्र की उत्पत्ति माहेश्वरी वैश्य जाति से होना बतलाई जाती है। कहा जाता है कि हाथीशाह नामक माहेश्वरी जाति के मूँदड़ा गौत्रीय एक व्यक्ति संवत् ११९२ में मुल्तान (सिंध) के राजा के दीवान थे। उनके पुत्र लूणाजी को साँप ने डस लिया और उनकी मृत्यु हो गई। उस समय दादा जिनदत्तसूरिजी वहीं विराजते थे। अतः उन्होंने संवत् ११९२ की वैसाख वदी ७ के दिन लूणाजी को जीवन-दान देकर जैन धर्म अंगीकार कराया, और ओसवाल जाति में सम्मिलित किया। इन लूणाजी की संतानें लूणिया गौत्र से सम्बोधित हुईं। मुलतान से आकर इस परिवार ने फलौधी में अपना निवास बनाया। इस परिवार की कई पीढ़ियों के बाद लूणिया सरूपचन्दजी हुए।

दीवान बहादुर थानमलजी लूणिया का खानदान, हैदराबाद

इस परिवार का मूल निवासस्थान अजमेर में है। अजमेर की ओसवाल जाति के इतिहास में लूणिया खानदान का इतिहास बहुत ऊँचा है। इस खानदान में कई व्यक्ति ऐसे हुए हैं जिन्होंने अपने अपूर्व कार्यों से इतिहास के पृष्ठों को चमका दिया है। इनमें तिलोकचन्दजी लूणिया, गजमलजी लूणिया और थानमलजी लूणिया के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। सेठ गजमलजी लूणिया के स्मारक में तो अजमेर में एक मुहल्ला भी बना हुआ है।

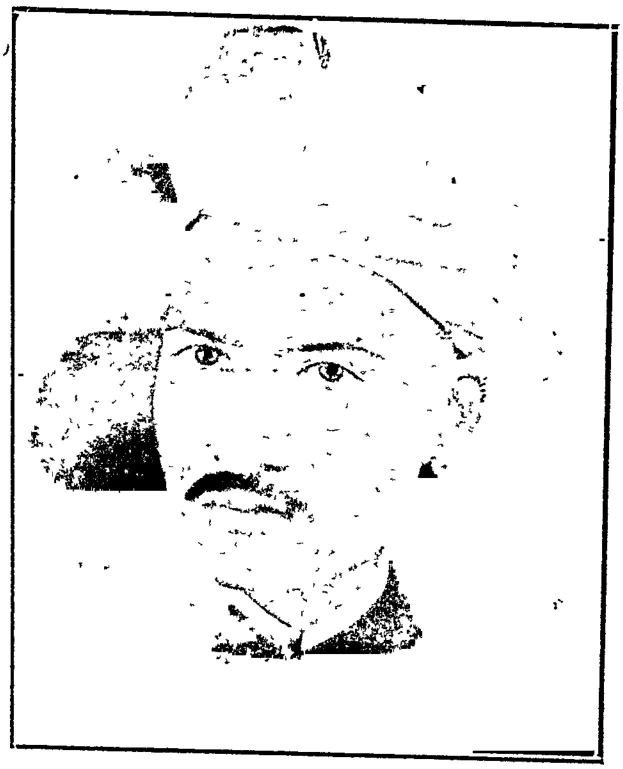
सेठ तिलोकचन्दजी ने अजमेर से शत्रुंजय का संघ निकाला। यह संघ हजारों श्रावक, सैकड़ों साधु साध्वियों तथा फौज पलटन इत्यादि से सुशोभित था। इस संघ के निकालने में आपने हजारों लाखों रुपये खर्च किये थे। उस समय शत्रुंजयजी के पहाड़ पर अंगारशाह पीर का बहुत उपद्रव था जिससे शत्रुंजयजी की यात्रा बन्द हो गई थी। आपने ही सबसे पहले इस यात्रा को पुनः चालू किया। इसके स्मारक में आज भी उनके लूणिया वंशज इस पीर के नाम की एक सफेद चादर चढ़ाते हैं। सेठ तिलोकचन्दजी लूणिया के हिम्मतरामजी तथा सुखरामजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें सेठ हिम्मतरामजी के गजमलजी, चांदमलजी तथा जेठमलजी नामक ३ पुत्र हुए। इन बन्धुओं में सेठ चांदमलजी अपने काका सुखरामजी के नाम पर दत्तक गये।



स्व० दीवानबहादुर सेठ थानमलजी लूणिया, हैदराबाद (दक्षिण).



स्व० श्री सुगनमलजी लूणिया, हैदराबाद (दक्षिण).



श्री इन्दमलजी लूणिया, हैदराबाद.

सेठ चांदमलजी लूणिया के पुत्र दीवान बहादुर सेठ थानमलजी लूणिया थे। आपका जन्म संवत् १९०७ की आसोज सुदी १३ को हुआ था। आप संवत् १९२३ में अजमेर से किसी कार्यवश हैदराबाद आये और यहाँ की अनुकूल स्थिति को देखकर यहीं पर अपनी दुकान स्थापित की। आपने यहाँ पर जवाहरात का व्यापार आरम्भ किया। इस व्यवसाय में आपने अतुल सम्पत्ति, इज्जत और यश प्राप्त किया। कुछ ही समय में आप यहाँ के नामी रईसों में गिने जाने लगे। स्वयं निजाम महोदय की भी आप पर बहुत कृपा रही। करीब ६ वर्षों तक तो सेठ साहब रोज निजाम महोदय से मुलाकात करने आया करते थे। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर निजाम सरकार ने सन् १९१३ में आपको "राजा बहादुर" का सम्माननीय खिताब प्रदान किया तथा घरू खर्च के माल के लिए कस्टम ड्यूटी भी माफ दी थी। इसी वर्ष भारत गवर्नमेंट ने भी आपको "राय बहादुर" का खिताब प्रदान किया। सन् १९१९ में आपको भारत गवर्नमेंट ने "दीवान बहादुर" के पद से सुशोभित किया। इसके अतिरिक्त बीकानेर दरबार ने भी आपको दोनों पैरों में सोना, ताजीम, हाथी, पालकी और छड़ी का सम्मान प्रदान किया। जोधपुर और उदयपुर से भी आपको सिरोपाव और बैठक का सम्मान प्राप्त था। जोधपुर में आपको आधी कस्टम ड्यूटी माफ थी। मैसूर, भोपाल, इन्दौर तथा और भी बड़ी २ रियासतों में आपका पूरा २ मान था। आपको दिल्ली दरबार में भी बैठक दी गई थी। आपका हैदराबाद के मारवाड़ी समाज में बहुत बड़ा मान था। इस समाज में करीब १६ वर्षों से धड़े पड़े हुए थे जिन्हें आपने बहुत कोशिश करके सुलझाया। केवल राजकीय, सामाजिक और व्यापारिक मामलों में ही आप दिलचस्पी लेते थे सो बात नहीं। प्रत्युत आप धार्मिक मामलों में भी खूब लक्ष्य रखते थे। आप स्वयं बड़े धार्मिक पुरुष थे। आपने केशरियाजी में एक धर्मशाला और मल्लिनाथजी में एक मंदिर बनवाया। हैदराबाद की दादावाड़ी के रास्ते में एक सड़क बनवाई। आप स्वर्गवासी होने के पूर्व एक वसीयतनामा कर गये जिसके अनुसार आपके नाम पर करीब तीस चालीस हजार रुपये की एक विशाल धर्मशाला हैदराबाद में बनवाई गई है। तथा श्री राजगिरीजी का मार्ग ठीक कराने में भी आपके नाम पर आपके पौत्र इन्द्रमलजी लूणिया ने १०००) प्रदान किया है। सेठ साहब ने जो वसीयत की उसमें आपने अपने मौसर करने की साफ मनाई लिखी है जिससे आपकी समाज सुधारकता का सहज ही पता लग जाता है। इस प्रकार यशस्वी जीवन व्यतीत करते हुए माह सुदी १ संवत् १९८९ में आपका स्वर्गवास हो गया।

आपके चार पुत्र हुए मगर देव दुर्वियोग से चारों का आपकी विद्यमानता में ही स्वर्गवास होगया। इनमें सुगनमलजी लूणिया तेजस्वी और प्रभावशाली युवक थे। हैदराबाद की ओसवाल समाज में आपका बड़ा मान था। आप निजाम सरकार के ऑनरेरी सेक्रेटरी भी थे। चारों पुत्रों के अपनी विद्यमानता में

स्वर्गवासी हो जाने से सेठ थानमलजी ने सुगनमलजी के नाम पर सेठ जवाहरमलजी लूणिया के पुत्र इन्द्र-मलजी लूणिया को अजमेर से दत्तक लिया। इस समय आप ही इस फर्म के मालिक हैं।

इन्द्रमलजी लूणिया बड़े सज्जन, उदार और विनयशील युवक हैं। आपके हृदय में ओसवाल जाति की उन्नति की हरदम आकांक्षा रहती है। हैदराबाद में मारवाड़ी लोगों के उतरने की कोई सुविधा न होने से आपने अपने दादाजी के स्मारक में एक बहुत विशाल धर्मशाला बनवाई। जिसमें मुसाफिरों के ठहरने की सभी सुविधाओं का प्रबन्ध है। अभी आपने अपनी यात्रा में बहुतसा द्रव्य परोपकारार्थ खर्च किया है। अजमेर की ओसवाल कान्फ्रेंस में भी आपने बहुत दिलचस्पी बताई। ओसवाल समाज को आपसे भविष्य में बहुत आशा है। आपकी फर्म हैदराबाद रेसिडेंसी में सरदारमल सुगनमल के नाम से बैंकिंग व जवाहरात का व्यापार करती है। हैदराबाद में यह खानदान बहुत प्रतिष्ठा सम्पन्न है।

लूणिया सरूपचंदजी का परिवार, अजमेर

हम ऊपर कह चुके हैं कि लूणिया सरूपचन्दजी फलोदी में निवास करते थे। इनके हेमराजजी, तिलोकचन्दजी तथा करमचन्दजी नामक ३ पुत्र हुए। ये तीनों भ्राता फलोदी के बड़े समृद्धिशाली साहु-कार माने जाते थे। यह परिवार फलोदी से बड़ू (मारवाड़) गया, तथा वहाँ कारबार करता रहा। वहाँ से लगभग १८५० में व्यापार के निमित्त सेठ तिलोकचन्दजी लूणिया ग्वालियर गये, जिनका विशेष परिचय नीचे दिया जा रहा है।

लूणिया हेमराजजी का परिवार

आप तिलोकचन्दजी लूणिया के बड़े भ्राता थे। बड़ू से आप किस प्रकार अजमेर आये, इसका क्रम बद्ध इतिहास उपलब्ध नहीं है। पर इनके समय अजमेर में लूणिया वंश का सितारा बड़ी तेजी पर था। आपके छोटे भाई लूणिया तिलोकचन्दजी के खानदान ने बहुत बड़े २ कार्य्य किये। लूणिया हेम-राजजी के पश्चात् क्रमशः नगराजजी, रूपराजजी और पूनमचन्दजी हुए। लूणिया पूनमचन्दजी के धन-रूपमलजी और जीतमलजी नामक २ पुत्र हुए। संवत् १९६३ में पूनमचन्दजी तथा धनरूपमलजी का प्लेग में एक साथ स्वर्गवास हो गया।

जीतमलजी लूणिया—आप का जन्म संवत् १९५२ में हुआ। आपके बाल्यकाल में ही आपके पिता जी तथा बड़े भ्राता स्वर्गवासी होगये थे। अतएव आपका शिक्षण आपके भोजाइजी के संरक्षण में हुआ। आप एफ० ए० तक पढ़ाई करके सन् १९१५ में इन्दोर गये तथा सेठ हुकुमचन्दजी के प्राइवेट सेक्रेटरी के

पद पर कार्य्य करते रहे। कुछ समय पश्चात् आपने हिन्दी साहित्य मन्दिर के नाम से पुस्तक प्रकाशन का कार्य्य किया, तथा मालव मयूर नामक एक मासिक पत्र निकाला। इसके पश्चात् आप अपने ऑफिस को बनारस लेगये, और वहाँ राष्ट्रीय एवम् शिक्षाप्रद ग्रन्थों का प्रकाशन बहुत जोरों से आरम्भ किया। सब मिलाकर आपने ३५ पुस्तकें प्रकाशित कीं। इसके पश्चात् देश सेवा की उन्नत भावनाओं से प्रेरित होकर आप अजमेर चले आये तथा अपना निजी प्रकाशन बंद कर के सार्वजनिक क्षेत्र में भाग लेने लगे। आपने अपने कई मित्रों के और घनश्यामदासजी बिड़ला व जमनालाल जी बजाज के सहयोग से अजमेर में "सस्ता साहित्य मण्डल" नामक प्रसिद्ध संस्था स्थापित की और इसी संस्था के द्वारा आपने अपने पत्र "मालव मयूर" का नाम बदल कर "त्यागभूमि" के रूप में प्रकाशित करना आरम्भ किया। केवल निर्वाह के योग्य रकम लेकर आपने निस्वार्थ भाव से इस संस्था की बहुत सेवा की। सन् १९३० में स्वास्थ्य ठीक न रहने से आपने उससे त्याग पत्र दे दिया। सन् १९३१ में आपने "अजमेर सेवा भवन" नामक एक संस्था स्थापित की तथा इस संस्था के द्वारा एक सार्वजनिक वाचनालय और एक रात्रि पाठशाला स्थापित की। यह दोनों संस्थाएं अभी तक सुव्यवस्थित रूप से चल रही हैं। सन् १९३० में आप अजमेर कांग्रेस कमेटी के डिक्टेटर बनाये गये जिसमें आपको ६ मास की कठोर कारावास की सजा मिली। इसके पश्चात् सन् १९३२ में स्वयं सेवकों के साथ जत्था लेकर देहली जाते हुए अजमेर स्टेशन पर आप गिरफ्तार किये गये, इस बार आपको तीन मास की सज़ा हुई। आपकी धर्म पत्नी श्रीमती सरदार बाई लूणिया भी अपने पति के देश हित के कामों में तन मन से सहयोग देती हैं। आप बड़ी देशभक्त महिला हैं। सन् १९३२ के अगस्त मास में आप ८ बहिनों और ५ भाइयों के साथ राष्ट्रीय गान गाती हुई निकलीं तथा घण्टाघर अजमेर के पास गिरफ्तार करली गईं। मजिस्ट्रेट ने आपको ३ मास की सजा देकर ए० क्लास में रखना चाहा, परन्तु आपकी कुछ साथी बहिनों को सी० क्लास दिया गया था, अतएव आपने भी ए० क्लास स्वीकार नहीं किया। इनके साथ २ इनके तीन वर्षीय पुत्र कुँवर प्रतापसिंह भी गये थे। हाल ही में लूणिया जीतमलजी ने "सस्ता मण्डल" का प्रेस खरीद कर उसे "आदर्श प्रिंटिंग प्रेस" के नाम से अजमेर में चालू किया है। यह बड़ा व्यवस्थित प्रेस है तथा सफलता के साथ अपना कार्य्य कर रहा है। आप के भतीजे नथमलजी लूणिया (धनरूपमलजी के पुत्र) मोटर सर्विस का बिजीनेस करते हैं। आप उत्साही युवक हैं। आपके फतेसिंह तथा रणजीतसिंहजी नामक दो पुत्र हैं।

लूणिया तिलोकचंदजी का परिवार

हम ऊपर लिख आये हैं कि लूणिया तिलोकचन्दजी फलोदी से बडू (मारवाड़) गये, तथा वहाँ से व्यापार के निमित्त संवत् १८५० में एक लोटा डोर लेकर गवालियर पहुँचे, और वहाँ कारवार करने

लगे। आपकी जवाहरात परखने की दृष्टि सूक्ष्म थी। इनकी होशियारी से प्रसन्न होकर तत्कालीन सिंधिया सूबेदार ने आपको अपने खजाने का पोद्दार बनाया। उस समय अजमेर में मरहठों का शासन था, अतएव आप मरहठा खजाने के खजांची होकर अजमेर आये। पोद्दारी के साथ २ आपने अजमेर में "तिलोकचंद हिम्मतराम" के नाम से अपना घरू व्यापार भी आरम्भ किया। धीरे धीरे आपने ख्याति व सम्पत्ति उपार्जित कर अजमेर से सिद्धाचलजी (शत्रुंजय) का एक संघ निकाला। उसमें जोधपुर से एक और संघ लेकर सेठ राजारामजी गढ़िया भी आये थे। आपने सिद्धाचलजी के खरतरवसी में एक मंदिर बनवाया, और एक धर्मशाला बनवाई, जो आनन्दजी कल्याणजी के वंडे के नाम से मशहूर है। दादा जिनदत्त सूरिजी महाराज की दादावाड़ी में आपकी छतरी आपके पुत्र हिम्मतरामजी और सुखरामजी ने बनवाई। उसके शिलालेख में संघ निकाले जाने का विवरण है। इस प्रकार प्रतिष्ठापूर्ण जीवन विताते हुए संवत् १८८३ में लूणिया तिलोकचन्दजी का स्वर्गवास हुआ। आपके हिम्मतरामजी तथा सुखरामजी नामक दो पुत्र हुए। लूणिया हिम्मतरामजी के गजमलजी, चांदमलजी तथा जेठमलजी नामक ३ पुत्र हुए इनमें लूणिया चांदमलजी अपने काका सुखरामजी के नाम पर दत्तक गये।

गजमलजी लूणिया—सेठ गजमलजी लूणिया ने इस परिवार में बहुत नाम पाया। आपने अपनी स्थायी सम्पत्ति काफी बढ़ाई थी। आप अपने समाज के बड़े २ झगड़ों को बड़ी बुद्धिमत्तापूर्वक निपटाते थे। आपकी हवेलियों के पास का मोहल्ला आज भी गजमल लूणिया की गली के नाम से मशहूर है। संवत् १९२० में आप तीनों बन्धुओं का काम कमजोर हो गया। सेठ गजमलजी की मौजूदगी में ही उनके दोनों भ्राता स्वर्गवासी हो गये थे।

सेठ गजमलजी के पुत्र करणमलजी तथा जेठमलजी के कुन्दनमलजी, नवलमलजी, कानमलजी तथा सोहनमलजी नामक पुत्र हुए। जब लूणिया गजमलजी की स्थिति कमजोर हो गई तब इनके भतीजे लूणिया थानमलजी इन्दौर, बम्बई होते हुए हैदराबाद गये, तथा वहाँ उन्होंने अच्छी उन्नति प्राप्त की।

लूणिया कुन्दनमलजी—आप अजमेर की ओसवाल समाज में प्रथम बी० ए० पास शुदा सज्जन थे। आपके नाम पर लूणिया कानमलजी के पुत्र जवाहरमलजी दत्तक आये।

कानमलजी लूणिया—आपने सन् १८८७ की प्रथम जुलाई को विक्टोरिया प्रेस के नाम से एक प्रिंटिंग प्रेस का स्थापन किया और १८९६ के ज्युबिली उत्सव पर इसका नाम डायमंड जुबिली प्रेस रक्खा गया। सन् १९१८ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके कनकमलजी, जवाहरमलजी, उमरावमलजी तथा हमीरमलजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें कनकमलजी करणमलजी के नाम पर, जवाहरमलजी कुन्दनमलजी के नाम पर और उमरावमलजी अपने बड़े भ्राता कनकमलजी के नाम पर दत्तक गये।



स्वर्गीय कानमलजी लूणिया, अजमेर.



बाबू जीतमलजी लूणिया, अजमेर.



सेठ रामलालजी लूणिया, अजमेर.



सेठ धनसुखदासजी लूणिया (धनसुखदास मघराज) बीकानेर.

वर्तमान में इस परिवार में लूणिया जवाहरमलजी, उमरावमलजी, हमीरमलजी तथा चन्दनमलजी विद्यमान हैं।

लूणिया जवाहरमलजी—आपका जन्म संवत् १९४३ में हुआ। आप सन् १९१२ से अक्टोबर सन् १९३१ तक जोधपुर स्टेट की तरफ से अजमेर मेरवाड़ा और ब्यावर के वकील रहे। आप अजमेर के प्रतिष्ठित सज्जन हैं। सन् १९२६ से आप म्युनिसिपल मेम्बर निर्वाचित हुए। इधर सन् १९३४ में आपने उक्त मेम्बरी के पद से इस्तीफा दे दिया है। अजमेर की ओसवाल समाज में आपका खानदान बड़ा नामी माना जाता है। हाल ही में आप ओसवाल सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन के स्वागताध्यक्ष हुए थे। आपके पुत्र इन्द्रमलजी लूणिया हैदराबाद में सेठ थानमलजी लूणिया के यहाँ दत्तक गये हैं। आपके छोटे भाई उमरावमलजी लूणिया लोको आफिस में सर्विस करते हैं।

लूणिया हमीरमलजी—आपका जन्म संवत् १९५५ में हुआ। आप बड़े शान्त एवं सरल स्वभाव के सज्जन हैं तथा डायमंड ज्युबिली प्रेस का संचालन उत्तमता से करते हैं। आपके पुत्र गुमानमलजी पढ़ते हैं। चन्दनमलजी लूणिया अजमेर में कोल बिजिनेस करते हैं।

लूणिया रामलालजी का खानदान, अजमेर

इस लूणिया परिवार में लूणिया शिवजीरामजी फलौदी में निवास करते थे। इनके पश्चात् क्रमशः सादूलसीजी, सावंतसीजी, मेघराजजी और टीकमदासजी फलौदी में निवास करते रहे। कहा जाता है कि एक बार राज की तरफ से फलौदी ग्राम पर कोई दंड पड़ा था वह सब अकेले इस लूणिया परिवार ने चुका दिया। इसलिए जोधपुर दरबार से लूणिया शिवजीरामजी को "नगर सेठ" की पदवी मिली थी।

फलौदी से लूणिया टीकमदासजी संवत् १८७५ के लगभग अजमेर आये और इन्होंने लूणिया तिलोकचन्दजी हिम्मतरामजी के साझे में मांडवी बंदर से मोती और दाँत दूसरी जगह भेजने का कारबार आरम्भ किया। संवत् १८९५ के लगभग छोटी वय में इनका अंतकाल हो गया। उनके पुत्र केवलचन्दजी और कस्तूरचन्दजी हुए। केवलचन्दजी लश्कर दत्तक गये तथा कस्तूरचन्दजी ने अजमेर में संवत १९०५ में गोटे किनारी की दुकान की। इनका शरीरावसान संवत् १९७३ में हुआ। इनके केसरीचन्दजी और फूलचन्दजी नामक पुत्र हुए।

लूणिया केसरीचन्दजी ने व्यापार में विशेष तरक्की की। व्यापार के साथ २ आपने अजमेर में मकानात बनवाये तथा बांदा (यू० पी०) में दुकान खोलकर वहाँ दो गाँव खरीद किये। आप पंच पंचायती में अच्छी प्रतिष्ठा रखते थे। आपका शरीरावसान ७० साल की वय में सम्वत् १९८१ में हुआ। आपके पुत्र दीपचन्दजी हुए।

लूणिया पन्नालालजी का जन्म सम्वत् १९२० में हुआ। आप अपने बड़े भ्राता के साथ व्यापार में सहयोग देते रहे। आप दोनों भ्राताओं का कारबार संवत् १९६५-६६ से अलग २ हो गया है। आप इस समय विद्यमान हैं। आपके पुत्र पन्नालालजी बम्बई में अलसी और कॉटन के स्पेक्यूलेशन का काम करते हैं।

लूणिया दीपचन्दजी का जन्म संवत् १९३८ में हुआ। आप अपने पिताजी के साथ कपड़े के व्यापार में सहयोग देते रहे। आपका सम्वत् १९७३ में अंतकाल हुआ। आपके पुत्र लूणिया रामलालजी का जन्म सम्वत् १९५५ में हुआ।

लूणिया रामलालजी ने कपड़े के व्यापार को उठाकर सराफी का थोक काम काज शुरू किया, तथा अकेले रहने के कारण बांदा की जमीदारी का काम भी उठा दिया। इस समय आप अजमेर के मशहूर सराफ माने जाते हैं तथा ओसवाल हाईस्कूल और ओसवाल कन्याशाला के खजांची हैं। आपके पुत्र अमरचन्दजी हैं।

बन्दा-मेहता

वन्दा-मेहता गौत्र की उत्पत्ति

इस गौत्र की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह किम्वदन्ति है कि संवत् ७३५ में पीपाड़ के तत्कालीन पड़िहार राजा कान्हजी के पौत्र राजसिंह ने आचार्य्य विमलचन्द सूरि के उपदेश से जैन धर्म ग्रहण किया तभी से इनकी सन्ताने ओसवाल जाति में सम्मिलित की गईं और इनका गौत्र पूर्ण भद्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इनके कुल देवता नाग हैं।

राजसिंह के बारह पुश्त पश्चात् इस वंश बासणजी हुए जिनके लिए कहा जाता है कि वे अनहिलपुर पट्टण के राजा पालजी के दीवान हुए, इन्होंने वहाँ श्री ऋषभदेव का मन्दिर बनवाया। वहाँ पर इन्हें संघपति और घीया मेहता की पदवी मिली, इनकी चौवीसवीं पुश्त में आसदत्तजी हुए, इन्होंने तत्कालीन दिल्ली नरेश की बहुत बन्दगी की। जिससे प्रसन्न हो बादशाह ने इन्हें बन्दा मेहता के नाम से सम्मानित किया, तभी से इनका गौत्र इस नाम से प्रसिद्ध है।

आसदत्तजी की आठवीं पुश्त में खींवसीजी हुए। खींवसीजी के अखैचन्दजी और जीवराजजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें मेहता अखैचन्दजी का नाम जोधपुर के राजनैतिक इतिहासमें अपना खास स्थान



स्व० मेहता मुकुन्दचन्दजी दीवान राज मारवाड़, जोधपुर.



स्व० मेहता कुंदनमलजी, जोधपुर.



मेहता चांदमलजी, जोधपुर.

रखता है। अपने जीवकाल में इस चतुर मुत्सुद्दी ने जोधपुर के राजकीय प्राङ्गण में भांति २ के खेल खेले, और अपने व्यक्तित्व का जबर्दस्त प्रदर्शन किया।

मेहता अखैचन्दजी का खानदान, जोधपुर

मेहता अखैचन्दजी के प्रवल व्यक्तित्व और उनकी राजनीति चतुरता का दर्शन उस समय से होता है जब कि संवत् १८४९ में भींवसिंहजी जोधपुर के राजा बन गये और मानसिंहजी को जालौर दुर्ग में आश्रय लेना लड़ा। इस दुर्ग में मानसिंहजी को वहुत दिनों तक घिरे रहना पड़ा जिससे उन्हें वहाँ अन्न और जल का बड़ा कष्ट होने लगा। ऐसे समय में आहौर के ठाकुर अनारसिंहजी के द्वारा मेहता अखैचन्दजी का मानसिंहजी से परिचय हुआ और इन्होंने मानसिंहजी को उस महान् विपत्ति के समय में अन्न और द्रव्य की बहुत सहायता पहुँचाई और उनकी विश्वास पात्रता प्राप्त की। जब यह बात जालौर परघेरा देने वाले भण्डारी गंगारामजी और सिंघवी इन्द्रराजजी को मालूम हुई तो उन्होंने मेहता अखैचन्दजी की पकड़ने की बहुत कोशिश की, मगर अखैचन्दजी अत्यन्त चतुराई पूर्वक इनसे बचते रहे। इसके पश्चात् जब महाराज भींमसिंहजी का देहान्त हो गया, और उनकी जगह पर सब मुत्सुदियों ने महाराज मानसिंहजी को ही जोधपुरका राजा बनाया उस समय महाराजा मानसिंहजी ने मेहता अखैचन्द जी को मोतियों की कंठी, कड़ा मन्दील, सिरोपाव तथा नीमली नामक गांव जागीर में बख्श कर इनका सम्मान किया इसी साल मालाई नामक और एक गोव इनके पट्टे हुआ। इसके पश्चात् इन्होंने अपने व्यापार को बढ़ाने की ओर लक्ष दिया, जिसमें आपने लाखों रुपये की सम्पति उपार्जित की। यह वह समय था जब सिंघवी इन्द्रराजजी, भण्डारी गंगारामजी, मुणोत ज्ञानमलजी और मेहता अखैचन्द जी का सितारा पूरी जाहोजलाली पर था। इन्ही दिनों इन्होंने जालौर गढ़ की तलहटी में जागोड़ी पार्श्वनाथ का मन्दिर बनवाया।

संवत् १८६३ में जब मारवाड़ के कई सरदार धोंकसिंहजी का पक्ष लेकर महाराज मानसिंह से बागी हो गये और जयपुर तथा बीकानेर की सहायता से मारवाड़ में धोंकलसिंह की दुहाई फेर दी, उस महान् सङ्कट के समय में भी मेहता अखैचन्दजी ने राज को बहुत बड़ी आर्थिक सहायता पहुँचाई। इससे प्रसन्न होकर महाराज मानसिंहजी ने कई रुक्के दिये, जिनका उल्लेख इस ग्रन्थ के राजनैतिक महत्व नामक शीर्षक में दिया जा चुका है। संवत् १८६६ में इन्हें पालकी सिरोपाव तथा खास रुक्का इनायत हुआ। संवत् १८६७ में इनके पुत्र लक्ष्मीचंदजी के विवाह के समय दरबार इनकी हवेली पर पधारे और इन्हें कड़ा, दुशाला, सिरपेंच, कण्ठी और बीस हजार रुपये प्रदान किये।

संवत् १८६४ से १८७२ तक मारवाड़ में सिंघवी इन्द्रराजजी और मेहता अखैचन्दजी दोनों का

सितारा बहुत तेजी पर था संवत् १८७२ में जब मीरखां के सिपाहियों ने सिंघवी इन्द्रराजजी और देवनाथजी को कत्ल कर डाला, उस समय उसकी चढ़ी हुई ९॥ लाख की रकम में से पौने पांच लाख रुपये मेहता अखैचन्दजी ने और पौने पांच लाख जोशी श्री कृष्णजी और सेठ राजारामजी गढ़िया ने मीरखां को देकर विदा किया। इन्द्रराजजी के कत्ल हो जाने पर दीवानगी का ओहदा खालसे होगया, और उस स्थान का संचालन मेहता अखैचन्दजी के जिम्मे किया गया। इसके तीन मास पश्चात् इन्द्रराजजी के पुत्र सिंघवी फतेराजजी दीवान बनाये गये।

संवत् १८७३ में चैत मास में कई सरदारों के प्रयत्न से राजकुमार छत्रसिंहजी राजगद्दी पर बिठाये गये और मेहता अखैचन्दजी संवत् १८७३ की वैसाख सुदी ५ को उनके दीवान बनाये गये। मगर महाराज छत्रसिंहजी, का देहान्त केवल ग्यारह महीने पश्चात् १८७४ की चैत सुदी ४ को होगया, और उसी साल के श्रावण में मेहता अखैचन्दजी की जगह उनके पुत्र लक्ष्मीचन्दजी दीवान बनाये गये। संवत् १८७५ में मेहता अखैचन्दजी ने राज्य के ठिकानों में से एक एक २ गाँव पट्टे से छुड़ा लिया जिससे राज्य की आमदनी तीन लाख बढ़ गई। उस समय महाराज मानसिंहजी ने कहा कि हमारा हुक्म अखैचन्द पर, और अखैचन्द का हुक्म सब पर रहे। इनकी मरजी के बिना खजाने में कोई जमा खर्च न होने पावे। इन सब बातों से मेहता अखैचन्दजी की शक्ति, उनके प्रबल प्रभाव और जबर्दस्त कारगुजारी का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

इस सारे वातावरण में धीरे २ मेहता अखैचन्दजी के विरोधियों की संख्या भी बढ़ती जा रही थी जिसके परिणाम स्वरूप सम्वत् १८७६ की वैसाख बदी ६ को वे एकाएक गिरफ्तार कर लिए गये। उनके पश्चात् उनके पुत्र लक्ष्मीचन्दजी, पौत्र मुकुन्ददासजी और कामेती रामचन्द्रजी भी गिरफ्तार कर लिए गये तथा उनका सारा घर लूट लिया गया। उसके एक मास पश्चात जेठ सुदी १४ को उनके पास हलाहल विष का प्याला पीने के लिए भेजा गया। मेहता अखैचन्दजी ने जीवनदान के बदले पचीस लाख रुपया देना चाहा मगर उनकी प्रार्थना पर कोई ध्यान नहीं दिया गया और वे अपने आठ साथियों सहित हलाहल विष का पान कर इस लोक से विदा हुए। संवत् १८७९-८० में अखैचन्दजी के बेटे लक्ष्मीचन्दजी और पोते मुकुन्ददासजी २० हजार रुपये लेकर छोड़े गये।

मेहता लक्ष्मीचन्दजी—आप मेहता अखैचन्दजी के पुत्र थे आपका जन्म सम्वत् १८५० में हुआ। १८७४ में आप पहले पहल दीवान बनाये गये। उसके पश्चात सम्वत १९०७ तक आप करीब चार पाँच दफे और दीवान बने। करीब ९ साल तक आप दीवान रहे। १९०७ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपको

हाथी, पालकी सिरोपाव, बैठने का कुरब और सोना इनायत हुआ था। आपके मकुन्दचंदजी, लालचंदजी, समरथमलजी और कुंदनमलजी नामक चार पुत्र हुए।

मेहता मुकुन्दचन्दजी—सम्वत १९०७ में मेहता लक्ष्मीचंदजी का स्वर्गवास होने पर आप दीवान बनाये गये। इसके पश्चात् फिर सम्वत् १९०९, १९१६ और १९१९ में आप दीवान बने कुल सात वर्षों तक आपने दीवानगी की। आपको भी हाथी और पालकी, सिरोपाव, बैठक डावां बन्द तथा पैरों में सोने की साँटों का सम्मान प्राप्त हुआ। महाराजा साहब तीन बार आपकी हवेली पर पधारे। संवत् १९१७ में आपने अपने भाइयों के साथ श्री पार्श्वनाथ का मंदिर बनवाया। उसके पश्चात दरबार के हुक्म से उसमें गोवर्द्धननाथ और माता के मन्दिर बनवाये। संवत १९२४ में आपका देहान्त हुआ। आपके पूनमचंदजी और किशनचंदजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें किशनचंदजी मेहता लालचंदजी के नाम पर दत्तक गये।

मेहता कुन्दनमलजी—मेहता कुन्दनमलजी का जन्म संवत् १८९६ में हुआ। राजकुमार जसवन्तसिंहजी की नाबालिगी के समय इन्होंने बड़ी इमानदारी से राज काज सम्हाला। संवत् १९२३ में आप महाराजा तखतसिंहजी के साथ आगरा के दरबार में गये वहाँ आपको सिरोपाव मिला। उसके पश्चात् आप कई स्थानों के हाकिम हुए तथा और कई भिन्न २ पदों पर रहे। १९३८ में आपको हाथी और पालकी सिरोपाव और पैरों में सोना इनायत हुआ। संवत् १९३८ के श्रावण में भयंकर वृष्टि की वजह से महाराजा साहब एक मास तक आपकी हवेली में जनाने समेत रहे। यहीं महाराजा ने इन्हें पैरों में सोना और ताजीम देना चाहा। मगर इन्होंने स्वीकार न किया, तब महाराणी साहब ने कुन्दनमलजी की दोनों पत्नियों को सोना इनायत किया। मेहता कुन्दनमलजी को शिल्प और संगीत से बड़ा प्रेम था। संवत् १९३४ के अकाल में आपने २ साल का इकट्ठा किया हुआ अनाज गरीबों को मुफ्त बांट दिया। सम्वत् १९३५ में आपने सबसे पहिले तौजी की प्रथा प्रचलित की। संवत् १९३६ में आपने ओसियाँ का जीर्णोद्धार करवाया। सं० १९४१ में आपका देहान्त हुआ। आपके सन्तान न होनेसे आपके नाम पर मेहता चांदमलजी दत्तक लिये गये।

मेहता पूनमचन्दजी—आप मेहता मुकन्दचन्दजी के पुत्र हैं आपका जन्म सं० १९०९ में हुआ। कुछ समय तक हाकिम के पद पर रहकर आप सरकारी दुकानों (स्टेट बैंक) के पदाधिकारी नियुक्त हुए। इसके पश्चात् और भी कई महत्त्व पूर्ण पदों पर काम करते हुए आप एरनपुरा के वकील नियुक्त हुए। आपके पिता मुकुन्दचन्दजी का स्वर्गवास होने पर दरबार मातम पुर्सी के लिये आपके यहाँ पधारे, और उनके सब कुरब आपको इनायत किये। उनके औसर के समय भी दरबार ने सात हजार रुपये नगद और पालकी

सिरोपाव भेज मेहता पूनमचन्दजी को सम्मानित किया। संवत् १९३२ में आपका स्वर्गवास हुआ आपके पुत्र मेहता गणेशचन्दजी हुए।

मेहता किशनचन्दजी—आप मेहता मुकुन्दचन्दजी के छोटे पुत्र थे तथा मेहता लालचन्दजी के नाम पर दत्तक गये। परवतसर और जोधपुर की हाकिमी करने के पश्चात् आप घोड़ों के तबेलों के अफ़सर हुए।

मेहता शिवचन्दजी—आप मेहता समरथमलजी के पुत्र थे। आप भी कई स्थानों के हाकिम रहे। संवत् १९५३ में आपका देहान्त हुआ। आपको भी पालकी सिरोपाव का सम्मान मिला था। मेहता चाँदमलजी के बड़े पुत्र कानमलजी आपके नाम पर दत्तक गये।

मेहता गणेशचन्दजी—आप मेहता पूनमचन्दजी के पुत्र थे। आप क्रमशः जैतारण, मारोठ, परवतसर, जालौर, सांचोर और भिनमाल के हाकिम रहे। फिर जालौर के कोतवाल और एजेन्टी के वकील बनाए गये आपको भी सिरोपाव, पैरों में सोना, बैठने का कुरब और डावा बन्द इनायत हुआ। इसके पश्चात् कुछ समय आप एजेण्ट जोधपुर के वकील रहकर बाद में जोधपुर की कौंसिल के मेम्बर हुए। इसके साथ २ आप महकमा वाक्यात, खासगी दुकानों और स्टेट ज्वैलरी के भी आफ़िसर रहे। आपके नाम पर मेहता सुमेरचन्दजी दत्तक लिये गये।

मेहता चाँदमलजी—आपका जन्म संवत् १९३४ में हुआ। आप मेहता कुन्दमलजी के नाम पर दत्तक आये। आप बड़े योग्य और प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। संवत् १९४२ में महाराजा जसवन्तसिंहजी ने आपको पालकी और सिरोपाव इनायत किया। इसी वर्ष इनके पिता कुन्दनमलजी की मातम पुर्सी के लिए महाराजा जसवन्तसिंहजी, प्रतापसिंहजी और किशोरसिंहजी इनकी हवेली पधारे। इनकी शादी के समय इन्हें पालकी और सिरोपाव इनायत हुआ। संवत् १९५६ में महाराजा सरदारसिंहजी ने आपको पैरों में सोना, हाथी सिरोपाव तथा ताजीम बख्शी और जालसू नामक गाँव पट्टे दिया। १९६८ में आप स्टेट ज्वैलरी के मेम्बर हुए। आपके कानमलजी और सरदारमलजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें कानमलजी मेहता शिवचन्दजी के नाम पर दत्तक गये।

मेहता सुमेरचन्दजी—आपका जन्म सं० १९४५ में हुआ। आप जोधपुर में बड़े प्रभावशाली पुरुष हैं। वहाँ के मुत्सुद्दी खानदानों में आपकी अच्छी प्रतिष्ठा है आपकी मारवाड़ प्रान्त में कई स्थानों पर दुकानें हैं। आप शुरू २ में पाली के हाकिम हुए, उसके पश्चात् क्रमशः जोधपुर के ज्वाइण्ट कोतवाल, सुपरिटेण्डेण्ट एक्साईज और साल्ट और स्टॉम्प और रजिस्ट्रेशन डिपार्टमेण्ट के सुपरिटेण्डेण्ट हैं। जोधपुर के

ओसवाल समाज में आप सम्पत्तिशाली महानुभाव हैं। जनता में आप प्रतिष्ठित सज्जन हैं। सम्पत्ति तथा सम्मान से युक्त होने पर भी आप में अभिमान की लेश मात्र बू नहीं है।

वंदा मेहता छोगालालजी, जालोर

बंदा मेहता गौत्र की उत्पत्ति में आसदत्तजी का नाम आ चुका है। इनके पुत्र माधू को मलिक युसुफखान ने कानूगो पद प्रदान किया। इनके छोटे भाई वेजू के वंश में मेहता अखेचंदजी का खानदान है। मेहता माधूजी की १४ वीं पीढ़ी में मेहता उम्मेदमलजी हुए। मेहता उम्मेदमलजी के छोगालालजी, सुमेरचन्दजी, पुखराजजी और नथमलजी नामक चार पुत्र हुए। इनमें मेहता सुमेरचन्दजी जोधपुर में मेहता गणेशचन्दजी के नाम पर दत्तक गये।

मेहता छोगालालजी का जन्म संवत् १९३२ में हुआ आप इस समय जालोर के कानूगो हैं। मारवाड़ राज्य के इतिहास की आपको जानकारी है। आपने पालनपुर राज्य के इतिहास बनवाने में मदद दी। आपका खानदान जालोर में उत्तम प्रतिष्ठा रखता है। आपके पुत्र कानमलजी तथा प्रतापचन्दजी हैं। इनमें प्रतापचन्दजी नथमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं। कानमलजी की आयु २० साल की है। आप अपने लेन-देन का कार्य्य देखते हैं।

सेठ फतेचन्द मेघराज (बंदा मेहता), कोयम्बटूर

इस परिवार का निवास कोसेलाव (राणी स्टेशन के पास) है। बंदा मेहता बेलाजी तथा उनके पुत्र लालजी और पौत्र किसनाजी हुए। मेहता किसनाजी के उम्मेदमलजी, नेमीचन्दजी तथा जवानमलजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें नेमीचन्दजी विद्यमान हैं। मेहता उम्मेदमलजी का संवत् १९५९ में स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र फतेचन्दजी और मेघराजजी विद्यमान हैं।

मेहता फतेचन्दजी का जन्म संवत् १९४३ में हुआ। आप व्यापार के निमित्त संवत् १९६० में कोयम्बटूर आये और ओटाजी शिवदानजी की दुकान पर सर्विस की। फिर आपने जरी का व्यापार शुरू किया संवत् १९६३ से आप केसरीमल हीराचंद और फतेचन्द हजारीमल के नाम से भागीदारी में व्यापार करते रहे। आप संवत् १९७६ से अपना घरू व्यापार करते हैं। इस दुकान के व्यापार को सेठ फतेचन्दजी और उनके छोटे भाई मेघराजजी ने तरक्की पर पहुँचाया है। मेघराजजी का जन्म संवत् १९५८ में हुआ। आप बन्धुओं ने १० हजार रुपया वरकाणा विद्यालय में तथा ७ हजार रुपया वरकाणा मन्दिर के जीर्णोद्धार फंड में दिये हैं। १९५६ के अकाल के समय कोसेलाव में आपने रुपये के मूल्य का अनाज दस आना मूल्य में

विकवाया। आपने मुनिलावण्य विजयजी का कोसेलाव में ४ हजार रुपया व्यय करके चतुर्मास कराया। आप दोनों बन्धु वरकाणा विद्यालय कमेटी के मेम्बर हैं। आपके यहाँ कोयम्वटूर में फतेचन्द मेघराज तथा मेघराज केसरीमल के नाम से जरी कपड़ा तयार करवा कर दिसावर भेजने का व्यापार होता है। डिंडिगल में भी आपकी एक शाखा है। आपने इन्दौर में केसरीमल द्वारकादास के नाम से ब्रांच खोली है। इस पर कोयम्वटूरी जरी माल का व्यापार होता है।

सेठ नेमीचंदजी कुँभाकोनम में धनरूप हीराजी नामक फर्म पर काम करते हैं। इनके पुत्र दीपचंदजी तथा अनराजजी हैं।

मेहता बागरेचा

बागरेचा गौत्र की उत्पत्ति

बागरेचा गौत्र की उत्पत्ति सोनगरा चौहान राजपूतों से मानी जाती है। इस गौत्र की उत्पत्ति कब हुई और किस प्रकार हुई, यह निश्चयात्मक नहीं कहा जा सकता। ऐसा कहा जाता है कि जालौर के राजा सोमदेवजी के बड़े पुत्र बागराजजी को जैनाचार्य्य श्री सिद्धसूरिजी ने जैनी बनाया। इन्होंने जालौर के पास बागरा नामक गाँव बसाया। इन्हीं बागराजजी के नाम से बागरेचा गौत्र की उत्पत्ति हुई। इसी खानदान में आगे चलकर जगरूपजी हुए। इन जगरूपजी की कई पीढ़ियों के बाद अमीपालजी हुए।

अमीपालजी—संवत् १६४२ के लगभग आप सिरोही गये तथा वहाँ के मुख्य मुसाहब और दीवान हुए। संवत् १६५६ के लगभग जोधपुर के महाराज सूरसिंहजी ने दीवान अमीपालजी के कार्य्यों से प्रसन्न होकर सिरोही राव से इन्हें मांगलिया और उन्हें जोधपुर ले आये। आपने संवत् १६५८ में जहाँगीर से अजमेर में महाराज सूरसिंहजी को जालौर का परगना इनायत करवाया। महाराजा ने जालौर पर कब्जा करके अमीपालजी को वहाँ रक्खा। जब महाराज दिल्ली गये तब अमीपालजी को भी साथ ले गये। बादशाह अमीपालजी के काम से खुश हुए और उन्हें दिल्ली के खजाने का काम सौंपा। इसके पश्चात् अमीपालजी दिल्ली रहे और वहीं पर इनका शरीरान्त हुआ। इनकी धर्मपत्नी इनके साथ सती हुई। इनके स्मारक में दिल्ली में छत्री बनी हुई है। आपके कीताजी और सोमसिंहजी नामक दो पुत्र हुए।

मेहता सोमसिंहजी—सं० १६७९ के करीब मेड़ते के सूबा आमूमहम्मद ने चढ़ाई करके निम्बोल के एक सम्पत्तिशाली ननवाणा बोहरा को पकड़ लिया। उसका सामना करने के लिये मेहता सोमसिंहजी

और बलून्दा के ठाकुर रामसिंहजी चांपावत फौज लेकर गये। इन दोनों वीरों ने बड़ी वीरता से उसका सामना किया। इस लड़ाई में बलून्दा के ठाकुर तो मारे गये और सोमसीजी विजयी होकर जोधपुर में आकर रहने लगे।

मेहता भगवानदासजी—सोमसीजी के दूसरे भाई कीताजी के भगवानदासजी नामक एक पुत्र हुए। आप भी बड़े बहादुर व्यक्ति थे। संवत् १७०६ के कार्तिक मास में जैसलमेर के रावल मनोहरदासजी का स्वर्गवास हुआ तथा वहाँ की गद्दी के लिये भाटी रामचन्द्र और सबलसिंह के बीच में झगड़ा हुआ। तब बादशाह की आज्ञा से जोधपुर के महाराजा जसवंतसिंहजी ने मेहता भगवानदासजी और सिंघवी प्रतापमलजी को फौज देकर सबलसिंहजी की मदद पर भेजा। कहना न होगा कि इस लड़ाई में मेहता भगवानदासजी विजयी हुए और सबलसिंहजी को राज्यासीन करके अपनी फौज को वापस जोधपुर ले आये। इससे जोधपुर नरेश महाराजा जसवंतसिंहजी बड़े खुश हुए। मेहता भगवानदासजी के भेरूदासजी और जीवनदास जी नामक दो पुत्र हुए।

मेहता जीवनदासजी—संवत् १७८५ के लगभग राव आनंदसिंहजी और रामसिंहजी जालौर में उपद्रव करने लगे। उनको दबाने के लिए महाराजा अजीतसिंहजी ने भण्डारी अनोपसिंहजी तथा मेहता जीवनदासजी की अधीनता में फौज भेजी। इस फौज का आना सुनकर दोनों बागी सरदार जालौर छोड़कर भाग गये। मेहता जीवनदासजी के गिरधरदासजी, सुन्दरदासजी, तथा नरसिंहदासजी नामक तीन पुत्र हुए।

मेहता लालचन्दजी—मेहता सुन्दरदासजी के पुत्र लालचन्दजी ने महाराज विजयसिंहजी के समय में राज्य की बहुत सेवाएँ की हैं। आप दरबार की तरफ से दिल्ली और आगरा भी भेजे गये थे। जोधपुर नरेश ने उन्हें बीकानेर नरेश महाराज गजसिंहजी के पास भी रक्खा था। वहाँ रहकर उन्होंने बीकानेर में बहुत सी सेवाएँ बजाई जिसके उपलक्ष्य में उनको बहुत से रुक्के मिले। जब निजबकुलीखां ५००० फौज लेकर जोधपुर पर चढ़ आया उस समय महाराजा विजयसिंहजी ने सहायता के लिये हलदिया नंदरामजी और मेहता लालचन्दजी को बादशाह के पास भेजा। बादशाह ने इन्हें १५००० फौज देकर रवाना किया इस फौज की सहायता से उन्होंने दुश्मन को भगा दिया। इससे प्रसन्न होकर महाराज ने इन्हें बड़ी जागीरी बक्षी। इसके पश्चात् जोधपुर नरेश ने प्रसन्न होकर इनको क्रमशः आकेलड़ी, पाचोड़ी, मूड़वा, बेचरोली, कुण्डी, अकड़ाया, नेणिया तथा झालामण्ड नामक गाँव समय २ पर जागीर में इनायत किये।

मेहता बांकीदासजी—मेहता लालचन्दजी के बांकीदासजी नामक एक पुत्र हुए। आप भी बड़े कारगुजार पुरुष थे। महाराजा जोधपुर के साथ मरहठों की सुलह कराने में इन्होंने बड़ी मदद दी थी।

संवत् १८५६ में ये मेड़ते के हाकिम बनाये गये । इनके मलूकचन्दजी, दलीचन्दजी एवं थानमलजी नामक तीन पुत्र हुए। इन तीनों भाइयों ने भी दरबार की अच्छी सेवाएँ कीं । मेहता दलीचन्दजी के साथ उनकी स्त्री सती हुई । इनकी छतरी जोधपुर में बनी हुई है । मेहता थानमलजी पर्वतसर के हाकिम तथा और भी कई भिन्न २ पदों पर रहे । आपके नाम पर नेणिया गांव पट्टे था । मेहता थानमलजी के शंभूमलजी और जोरावरमलजी नामक दो पुत्र हुए ।

मेहता शम्भूमल और जोरावरमलजी—आप दोनों महाराज मानसिंहजी और तखतसिंहजी की सेवा में बहुत काम करते रहे । उनियारे के झगड़े का फैसला करने के लिए बड़ी २ रियासतों के मौतबीर मुसाहिब एकत्रित हुए थे, इनमें जोधपुर की ओर से शंभुमलजी मुकर्रर किये गये थे। इसके पश्चात ये पर्वतसर के हाकिम और किलेदार रहे । इसके पश्चात् आपने छगनमलजी सिंघवी के साथ दीवानगिरी का काम किया । मेहता शंभुमलजी का संवत् १९२९ में स्वर्गवास हुआ । मेहता जोरावरसिंहजी ने हाजी महम्मदखां के दीवानगी में नायबी का काम किया । मेहता शंभूमलजी के जवानमलजी एवं दानमलजी नामक पुत्र हुए । जवानमलजी कुमार जसवंतसिंहजी के युवराज काल में इनकी सेवा में रहे और फिर डीडवाने के हाकिम हुए ।

मेहता दानमलजी—आपने मारोठ की हाकिमी का काम किया । आप बड़े सदाचारी तथा दयालु प्रकृति के पुरुष थे। यही कारण है कि बिरादरी में आपका अच्छा सम्मान था। संवत् १९६३ में आपका स्वर्गवास हुआ । आपके पुत्र मेहता बख्तावरमलजी हुए ।

मेहता बख्तावरमलजी—आप इस खानदान में बड़े प्रतापी और प्रतिभाशाली व्यक्ति हैं । आपका जन्म संवत् १९१९ में हुआ । संवत् १९४१ में आप महकमा वाक़यात और महकमा नमक के सुपरिंटेण्डेण्ट नियुक्त हुए । इसके पश्चात् कई परगनों के सुपरिंटेण्डेण्ट रहकर आप मारवाड़ और मेवाड़ की सरहद पर जोधपुर राज्य की ओर से मोतमिन्द मुकर्रर हुए । यहाँ पर आपको ४२०) मासिक वेतन मिलता था। इसके पश्चात् आप अफ़सर जवाहरखाना, सुपरिंटेन्डेन्ट सेन्ट्रल जेल, हाकिम मेड़ता और सुपरिंटेण्डेण्ट जरायम पेशा नियुक्त हुए । उसके पश्चात आपने सरदारपुरा नामक नयी बस्ती आबाद करने में मेहता विजयसिंहजी दीवान को सहायता दी । कई स्थानों से आपको पालकी, सिरोपाव का सम्मान प्राप्त हुआ । सन् १९१४ में आप कन्सल्टेटिव्ह कौंसिल के मेम्बर बनाए गए। जोधपुर के राजनैतिक वातावरण में आपका बड़ा प्रभाव रहा । मेजर जनरल हिज हाईनेस सर प्रतापसिंह ने सन् १९१० की २७ फरवरी को जो पत्र लिखा था उसमें आपके लिए लिखा है ।

"जिस किसी भी महकमें में मेहता बख्तावरमल ने काम किया, उसमें उन्होंने अपनी योग्यता और ज्ञान का पूरा २ प्रदर्शन किया । इन्होंने अपने स्वामी के हितों का पूरा २ खयाल रखा । मैं कई



श्री स्वर्गीय मेहता दानमलजी बागरेचा, जोधपुर



श्री मेहता बख्तावरमलजी बागरेचा,
जोधपुर



श्री मेहता जसवंतमलजी बागरेचा,
जोधपुर



श्री मेहता रणजीतमलजी बागरेचा,
बी. ए. एल. एल. बी., जज्ज हाईकोर्ट, जोधपुर

बरसों से उन्हें जानता हूँ और उनकी योग्यता की तस्लीम करता हूँ" ।............ईसवी सन् १८८७ में एक बार महाराज नरसिंहगढ़ ने मेहता बख्तावरमलजी को एक सम्माननीय ऊँची जगह पर बुलवाया था, पर भूतपूर्व महाराजा जसवंतसिंहजी इनसे इतने प्रसन्न थे कि उन्होंने इन्हें वहाँ न जाने दिया और जोधपुर स्टेट ही में ऊँची २ जगह देने का आश्वासन दिया। इस बचन की पूर्ति के लिए महाराजा ने इनकी तनख्वाह बढ़ाई और यह हुक्म कर दिया कि मेहता बख्तावरमल चाहे जिस ओहदे पर रहे, मगर तनख्वाह उसकी जाति तनख्वाह कर दी जावे।" इसी प्रकार और कई पुरुषों ने समय २ पर आपके कार्य्यों की बड़ी प्रशंसा की।

आपका सार्वजनिक जीवन भी उँचे दर्जे का है। संवत् १९५७ में आप अखिल भारतीय स्थानक वासी जैन कान्फरेंस के फलौदी वाले प्रथम अधिवेशन के सभापति बनाए गये। इसके पश्चात् आप जोधपुर साहित्य सम्मेलन की—जोकि मुनि विजयधर्मसूरिजी के आग्रह से हुआ था और जिसके सभापति श्री सतीशचन्द्र विद्याभूषण थे—स्वागत कारिणी समिति के सभापति बनाए गये थे। इस अवसर पर जर्मनी के सुप्रसिद्ध जैन विद्वान डा० हरमन जैकोबी भी जर्मनी से पधारे थे। इस समय आप सब कामों से अवसर ग्रहण कर शांति लाभ कर रहे हैं। आपके जसवन्तमलजी और रणजीतमलजी नामक दो पुत्र हैं।

मेहता जसवंतमलजी—आपका जन्म संवत् १९३८ में हुआ। आपने महाराज सरदारसिंहजी के साथ नोबल स्कूल में शिक्षा पाई। संवत् १९६९ में आप जोधपुर के हाकिम हुए। संवत् १९७६ से १९८६ तक आप कुचामन ठिकाने के मैनेजर रहे। आपके समय में कुचामन ठिकाने की अच्छी उन्नति हुई और आपही के समय में वहाँ स्कूल, हॉस्पिटल और सड़क आदि का निर्माण हुआ। स्वयं दरबार एवम् दूसरे आफ़िसरों ने आपके कार्य्यों की प्रशंसा की। आपके शंकरमलजी नामक एक पुत्र हैं।

मेहता रणजीतमलजी—आपका जन्म संवत् १९४६ में हुआ। सन् १९०९ में आपने बी० ए० पास किया। इसके पश्चात् आगरे से एल० एल० बी० की परीक्षा पास की। सन् १९१८ में आप बाड़मेर के हाकिम और इसके पश्चात् मालानी डिस्ट्रिक्ट के सुपरिंटेण्डेण्ट बनाए गये। सन् १९१९ में आपने दीवानी जज का चार्ज लिया। इसके बाद आप महकमा कोर्ट सरदारान् के आफीसर नियुक्त हुए। सन् १९२१ में आप सेशन जज, और सन् १९२७ में चीफ कोर्ट के जज बनाये गये। वर्तमान में आप इसी ओहदे पर काम कर रहे हैं।

आपकी ईमानदारी, कार्य्यतत्परता तथा सचाई के विषय में जोधपुर नरेश, जुडिशियल मेम्बर सर रेनाल्ड, कर्नल हेमिल्टन, कर्नल विंडहम आदि पुरुषों ने समय २ पर आपकी बड़ी तारीफ की है। खीवानदी (बाली) मरडर केस में आपके ईमानदारी और न्यायप्रियता से भरे हुए फैसले को

देखकर जोधपुर महाराजा आपसे बहुत खुश हुए। सारे जोधपुर के जन समाज में आपके उच्च चरित्र और कर्त्तव्य परायणता की भी अच्छी छाप है। आप स्थानीय म्युनिसिपेलिटी के नामिनेटेड प्रेसिडेण्ट हैं। इतने महत्व पूर्ण काम करते रहने पर भी आपको लेश मात्र अभिमान नहीं हैं। आपके पुत्र गोपालमलजी बी० ए० में तथा किशनमलजी मेट्रिक में पढ़ रहे हैं।

मेहता रंगरूपमलजी बागरेचा, जोधपुर

ऊपर मेहता बख्तावरमलजी बागरेचा के परिचय में बतलाया जा चुका है कि मेहता शंभूमलजी के पुत्र जवानमलजी तथा दानमलजी हुए। इनमें जवानमलजी के मेहता सावंतमलजी, छगनमलजी, जवरमलजी तथा अचलमलजी नामक ४ पुत्र हुए और दानमलजी के पुत्र मेहता बख्तावरमलजी हैं।

मेहता जवाहरमलजी—अपका जन्म संवत् १९२३ में हुआ। आप नागोर, सीवाणा तथा पाली में स्टेट के खजांची रहे। सांसारिक कार्यों से विरक्ति होजाने के कारण आपने संवत् १९७० में सर्विस छोड़दी और इस समय जोधपुर शहर के समीप अपने जवराश्रम नामक बंगले में निवास कर धार्मिक जीवन बिताते हैं। ज्योतिष की ओर आपकी अच्छी रुचि है। कविता करने का भी आपको अच्छा शोक है। आपके द्वारा रचित पद्यों का संग्रह जवर भजनमाला के रूप में प्रकाशित हुआ है। आपके पुत्र मेहता रंगरूपमलजी तथा जगरूपमलजी हुए।

मेहता रंगरूपमलजी—आपका जन्म संवत् १९४३ में हुआ। आपने कानूनी लाइन में प्रवेश कर इस व्यवसाय में अच्छी योग्यता तथा सम्पत्ति उपार्जित की है। आपने सन् १९१५ में एक लॉ क्लास खोली। इस क्लास में शिक्षा प्राप्त कर इस समय लगभग ६०-७० व्यक्ति वकालात करते हैं। इस समय आप जोधपुर के फर्स्ट क्लास वकील हैं। आप सुधार के कामों में बहुत प्रेम के साथ भाग लेते हैं। सन् १९२६ में आप जोधपुर हिन्दू सभा के प्रेसिडेन्ट रहे थे। इसके अलावा गोडवाड़ हिन्दू सभा के भी आप सभापति निर्वाचित किये गये थे। समय २ पर आप अपने सुधार विषयक विचार, पुस्तिकाएं तथा पेम्फ्लेट् में प्रकाशित करते रहते हैं। आपके परिश्रम से जोधपुर में एक लॉ लायब्रेरी स्थापित हुई है। इस में आरंभ में आपने १ हज़ार रुपया प्रदान किया है। आपके पुत्र राणामलजी, महावीरमलजी तथा मरुधरमलजी हैं।

मेहता भैरूंराजजी बागरेचा, जोधपुर

इस परिवार के पूर्वज मेहता मलूकचन्दजी खेजड़ले के दीवान थे। संवत् १८५९ की भादवा वदी ३ को कई सरदारों ने इनका चूक किया। इनके नाम पर मेहता हरकचन्दजी दत्तक आये। ये भी खेजड़ला

की कामदारी करते हुए संवत् १८८० में स्वर्गवासी हुए। इनके पुत्र मेहता रिधकरणजी तथा राजमलजी हुए।

मेहता रिधकरणजी—आप अर्जुनोत भाटी खानदान के वकील होकर संवत् १८७३ में जोधपुर आये और यहीं आवाद होगये। संवत १८९९ में बने हुए हुक्म नामे के बनवाने में आपने भी बहुत सहयोग लिया था। आप अपने समय के वकीलों में प्रसिद्ध वकील माने जाते थे। संवत् १९२५ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके उदयराजजी, सिद्धकरणजी, किशनकरणजी और मगनराजजी नामक ४ पुत्र हुए। मेहता उदयराजजी खेजड़ला तथा सार्थीण के वकील रहे। संवत् १९३९ में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके पौत्र विजयराजजी उगमराजजी आदि इस समय विद्यमान हैं।

मेहता सिद्धकरणजी—आप भी रायपुर, खेजड़ला और सार्थीण के वकील रहे। आप सिद्धान्त के बड़े पक्के और निर्भीक तबियत के पुरुष थे। संवत् १९६५ में इनका स्वर्गवास हुआ। आपके छोटे भ्राता किशनकरणजी के ५ पुत्र हुए, इनमें सूरजकरणजी तथा सुकनकरणजी स्वर्गवासी होगये हैं, तथा करणराजजी केवलराजजी और रंगराजजी विद्यमान हैं। सूरजकरणजी के पुत्र सज्जनराजजी हैं।

मेहता ऋधकरणजो के सब से छोटे पुत्र मगनराजजी विद्यमान हैं। आपका जन्म संवत् १९१२ में हुआ। आपको पुरानी वार्तो की अच्छी याददास्त है। आपके बड़े पुत्र जोगराजजी का संवत् १९८५ में स्वर्गवास होगया है। इनके पुत्र कुंदनराजजी तथा अकलराजजी पढ़ते हैं। मेहता मगनराजजी के छोटे पुत्र मेहता भैरूराजजी हैं। आपका जन्म संवत् १९४१ में हुआ। आपने सन् १९२९ में ओसवाल नामक पत्रिका के सम्पादन में भाग लिया तथा इसी तरह के जाति सुधार के कामों में भाग लेते हैं। आपके पुत्र चन्दनराजजी स्टेट सर्विस में हैं तथा अमृतराजजी और रतनराजजी पढ़ते हैं।

मेहता रतनराज—इस प्रतिभाशाली बालक की उम्र केवल ८½ वर्ष की है। यह बालक प्रारम्भ से ही बड़ी तीक्ष्ण बुद्धि का तथा मेधावी है। इसने अपनी छोटी अवस्था में हिन्दी और अंग्रेजी में जो ज्ञान प्राप्त किया है वह अत्यन्त ही प्रशंसनीय तथा आश्चर्य की वस्तु है। इस बालक को जिन २ महानुभावों ने देखा है उन्होंने इसकी मुग्ध कण्ठ से प्रशंसा करते हुए बहुत प्रसन्नता जाहिर की है। हिन्दी के अनेक समाचार पत्रों एवं मासिक पत्रिकाओं में इस बालक के फोटो छप चुके हैं। इसके अलावा इसे कई सार्टिफिकेट एवं प्रशंसापत्र प्राप्त हुए हैं। पाठकों की जानकारी के लिये श्रीउमासङ्करजी एम० ए० द्वारा लिखित वॉम्बे क्रानिकल में प्रकाशित लेख का कुछ अंश हम नीचे देते हैं।

Master Ratan, a young Marwari Jain child of seven years, exhibits in him a rare genius. Surprisingly enough, he could speak fairly fluent English and could talk well almost on any topic at the tender age of bare four; and through the natural

unfolding of his native intelligence and gifted powers, he is now capable of reading and writing any difficult passage-even deliberately highworded. His clear accents, his capacity to stand difficult dictations and the possession of a remarkably assimi lative tenacious memory for words are his valuable assets and suggest in him the magnificent possibilities of life.

सेठ राजमल गणेशमल आच्छा (वागरेचा मेहता) चिंगनपैठ

इस परिवार के पूर्वज वागरेचा नगाजी के पुत्र दीपचंदजी, जोधजी और नरसिंहजी सिरियारी में रहते थे। जब सम्वत् १८७३ में सिरियारी पर हमला हुआ तो ये वन्धु वहां से ढूंढला चले गये और वहां से सियार में सम्वत् १८८० में इन्होंने अपना निवास बनाया। सेठ दीपचन्दजी के पुत्र मगनीरामजी हुए। सेठ मगनरामजी के नवलमलजी, बहादुरमलजी, रतनचन्दजी तथा धन्नालालजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें सेठ रतनचन्दजी का स्वर्गवास सम्वत् १९५८ में हुआ। आपके पुत्र सेठ राजमलजी तथा गणेशमलजी हुए। आप दोनों भाइयों का जन्म क्रमशः सम्वत् १९५६ तथा १९६० में हुआ।

सियार से व्यापार के निमित्त सेठ गणेशमलजी आच्छा संवत् १९६५ में चिंगनपैठ (मद्रास) आये, तथा सेठ थानमलजी संचेती के यहाँ सर्विस की। संवत् १९६८ में इनके बड़े भ्राता राजमलजी भी चिंगनपैठ आये तथा रूपचन्द वरदीचन्द रायपुरम् वालों के यहाँ सर्विस की। इस प्रकार नौकरी करने के बाद इन भाइयों ने संवत् १९७१ में अपनी स्वतन्त्र दुकान खोली, जिस पर व्याज का काम होता है। आप दोनों भाई बड़े समझदार व्यक्ति हैं। धर्म ध्यान में आपकी अच्छी श्रद्धा है। गणेशमलजी के नेमीचन्दजी, पारसमलजी, केवलचन्दजी तथा इमरतमलजी नामक ४ पुत्र हैं। इनमें नेमीचन्दजी राजमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं। यह दुकान चिंगनपैठ के व्यापारिक समाज में अच्छी प्रतिष्ठित मानी जाती है।

इसी तरह इस परिवार में जुगराजजी सियार में रहते हैं तथा नवलमलजी के पौत्र सुरूलालजी दहीठाणा (अहमदनगर) में व्यापार करते हैं।

पन्नालालजी वागरेचा, नागपुर

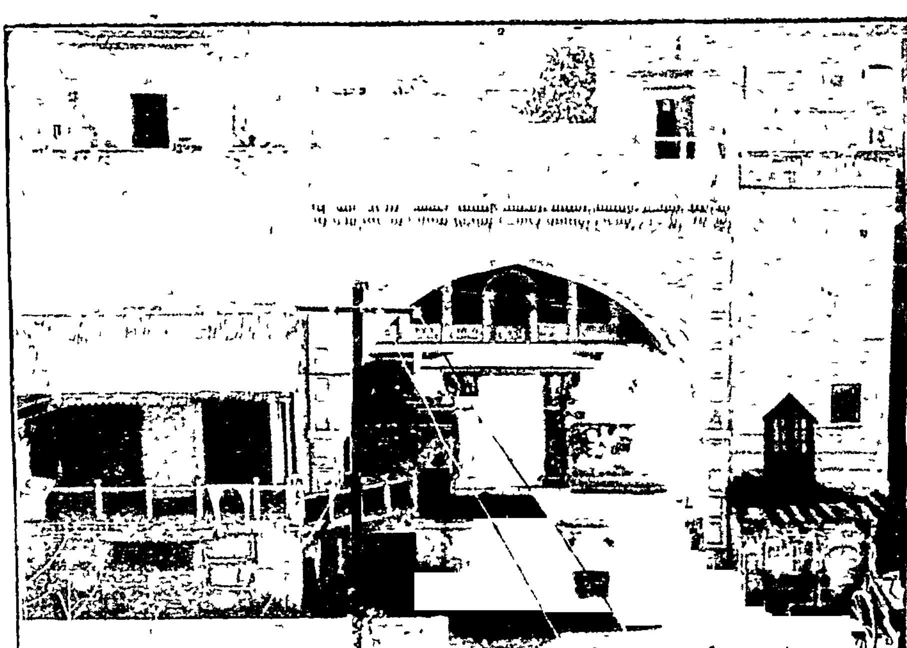
सेठ वख्तावरमलजी वागरेचा वरार में धामक से ८ मील दूर पर मंगरूर चवाला नामक स्थान पर व्यवसाय करते रहे। आपके छोटे भ्राता पन्नालालजी वागरेचा ने नागपुर के सीतावर्डी नामक स्थान में दुकान की। आप दोनों सज्जन ओसवाल समाज में बड़े प्रतिष्ठित हैं। आपके यहाँ बैंकिंग का व्यापार होता है। धार्मिक कामों में भी आप सहयोग लेते रहते हैं।



स्वर्गीय मेहता लालजी
(मेहता बख़्तावरमलजी के पूर्वज) जोधपुर.



स्वर्गीय मेहता जसरूपजी (मेहता जसवंतरायजी के पूर्वज) जोधपुर.
(श्री महाराजा मानसिंहजी और देवनाथजी के समीप खड़े हुए)



जूने दीवानों की हवेली (मेहता चांदमलजी), जोधपुर.

कांकरिया

कांकरिया गौत्र की उत्पत्ति

इस गौत्र की उत्पत्ति कंकरावत गाँव के निवासी पड़िहार राजपूत वंशीय खेमटरावजी के पुत्र राव भीमसीजी से हुई है। राव भीमसीजी उदयपुर महाराणाजी के नामांकित सामंत थे। आपको खरतर गच्छाचार्य श्री जिनवल्लभसूरिजी ने जैन धर्म का प्रतिबोध देकर दीक्षित किया तथा आप कंकरावत गाँव के निवासी होने से कांकरिया के नाम से प्रसिद्ध हुए। आप लोग खरतरगच्छ के अनुयायी हैं।

मेहता जसरूपजी कांकरिया का खानदान, जोधपुर

जोधपुर के कांकरिया खानदान के इतिहास में मेहता जसरूपजी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। जोधपुर की गद्दी पर जिस समय महाराजा मानसिंहजी प्रतिष्ठित थे उस समय जोधपुर में नाथजी का प्रभाव बहुत जोरदार और व्यापक हो रहा था। यह कहना अत्युक्ति न होगी कि नाथजी के आँख के इशारे पर उस समय सारे राज्य की धुरी घूमती थी। महाराज मानसिंहजी नाथों के तत्कालीन गुरू देवनाथजी को करीब २ विधाता के ही तुल्य समझते थे। मेहता जसरूपजी इन्हीं नाथजी के कामदार थे। कहना न होगा कि इनका भी उस समय बड़ा व्यापक प्रभाव था।

संवत् १८८२ में मेहता जसरूपजी को दरबार की ड्योढ़ी का काम सौंपा गया। संवत् १८८९ में आपका राजनैतिक वातावरण में बहुत प्रभाव बढ़ गया। इस समय इन्होंने अपने कामेती (कामदार) कालूराम पंचोली को दीवान का पद दिलाया। इसी बात से उनके प्रभाव का अन्दाजा लगाया जा सकता है। संवत् १८९५ में आप के पुत्र बच्छराजजी को किलेदारी का पद मिला। इसी वर्ष ब्रिटिश गवर्नमेंट को यह ख़याल हुआ कि जोधपुर के शासन में नाथजी का दखल होने से सारी व्यवस्था गड़बड़ हो रही है। इसलिये उसने महाराजा पर नाथजी के कम दखल करने का दबाव डाला। इस अव-

सर पर महाराज मानसिंहजी की इच्छा न होने पर भी मेहता जसरूपजी कुछ समय के लिए जोधपुर छोड़ कर ब्यावर आ गये। इस पर मारवाड़ के दस प्रमुख सरदारों ने महाराजा की आज्ञा से आपके पास एक आश्वासन पत्र भेजा था जो इस प्रकार था।

श्री नाथजी सहाय छे

मुहताजी श्री जसरूपजी सूँ दस सिरदारां रो जुहार बंचावसी तथा राजरा टाबर कबीला भाई तालकदार सुदाँ खात्र जमां सु खुसी आवे जण ठिकाणे रहो कठी कानी सूँ कँदेई खेंचल होवणा देसां नहीं ने श्री हुजूर सूँ आजीविका ४०००) री इनायत हुई जिणमें तफावत पड़न देसा नहीं ने साहबरी चीखती खातरी म्हांहा बणता खेवट करने कराय देसाँ इण में तफावत पड़न देसा नहीं म्हारा इसटदेवरी आण है ने श्री हुजूरा फुरमावणा सूँ म्हारो वचन है संवत् १८९६ रा पोस सुद २"

इस रुक्के के नीचे पोकरन, भाद्राजन आसोप इत्यादि दस ठिकानों के जागीरदारों के दस्तखत थे। ब्यावर आकर मेहता जसरूपजी ने कर्नल डिक्सन को ब्यावर आबाद करने में बड़ी मदद दी। इससे कर्नल डिक्सन आपसे बहुत खुश हुए। संवत् १९०९ में महाराजा मानसिंहजी ने आप को फिर से जोधपुर बुलाया मगर आप मार्ग में ही लकवे से प्रसित हो गये और जोधपुर पहुँचते २ स्वर्गवासी हो गये।

मेहता जसरूपजी ने ओसवाल जातिके याचकों और भोजकों को "लाख पसाव"* नामक बड़े२ दान दिये जिसकी कीर्त्ति का उल्लेख आजभी सेवक लोग कविताओं में बड़े उत्साह के साथ करते हैं। महाराज मानसिंहजी ने जसरूपजी की सेवाओं से प्रसन्न होकर समय २ पर कर्मावास, वोरावास, धवा आदि करीब १२०००) की रेख के गाँव जागीर में दिये। इनके साथ आपको पालकी, सिरोपाव आदि के सम्मान से भी सम्मानित किया था। आपके पाँच पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः प्रतापमलजी, बच्छराजजी, बागमलजी, फतेचन्दजी तथा गिरधारीमलजी थे। इनमें मेहता प्रतापमलजी के मगनराजजी, शिवराजजी, उम्मैदराज जी तथा जगनराजजी नामक चार पुत्र हुए।

मेहता मगनराजजी—आप महाराजा तखतसिंहजी के समय में महकमें हवाला के अध्यक्ष (Land Revenue Superintendent) के पद पर रहे। आपने बड़ी ईमानदारी से राज्य का काम

* याचक चारण और भाटों को व्याह शादी के अवसर पर जो दान दिया जाता है उसे साधारणतः त्याग कहा जाता है। मगर यही त्याग जब हाथी, घोड़े, ऊँट आदि के रूप में हजारों रुपयों के मूल्य का होता है तब इसे लाखपसाव कहते हैं।

किया। आप संवत् १९५८ में स्वर्गवासी हुए। आपके बड़े पुत्र विजयराजजी संवत् १९११ में तथा छोटे पुत्र पनराजजी संवत् १९७२ में गुजरे। विजयराजजी के पुत्र मेहता जतनराजजी इस समय कस्टम डिपार्टमेंट में सर्विस करते हैं।

मेहता शिवराजजी—आप शुरू में जोधपुर स्टेट में हवाला सुपरिन्टेन्डेन्ट, हाकिम और फिर बीकानेर के कस्टम सुपरिन्टेन्डेन्ट रहे। आप दिगम्बर जैन धर्मावलम्बी थे। आपके पास प्राकृत और मागधी भाषाओं का बहुत अच्छा संग्रह था जो आपने दिगम्बर जैन मन्दिर को भेंट किया था। आप संवत् १९७२ में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र दुल्हेराजजी का संवत् १९७४ में स्वर्गवास होगया था। मेहता उम्मेदराजजी छोटी उमर में ही स्वर्गवासी हुए।

मेहता छगनराजजी—आप शुरू में महामन्दिर के नाथजी के कामदार तथा फिर शेरगढ़ आदि कई स्थानों के हाकिम रहे। संवत् १९५८ में आपका देहान्त हुआ। आपके गणेशराजजी और रंगराजजी नामक दो पुत्र हुए। मेहता गणेशराजजी बड़े मिलनसार और सज्जन पुरुष थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९८४ में हुआ। मेहता रंगराजजी का जन्म संवत् १९३९ में हुआ। आप भी कुछ समय तक नाथों के कामदार रहे। आपका संवत् १९८८ में स्वर्गवास होगया है। मेहता गणेशराजजी के हुकुमराजजी, जसवन्तराजजी और हनुमन्तराजजी नामक तीन पुत्र हैं, मेहता रंगराजजी के अमृतराजजी नामक एक पुत्र है। इन चारों भाइयों में असाधारण प्रेम है। जोधपुर की ओसवाल समाज में यह खानदान प्रतिष्ठित और अग्रगण्य है।

मेहता हुकुमराजजी—आपका जन्म संवत् १९५२ में हुआ। आप इस समय जोधपुर राज्य में एक्साइज इन्सपेक्टर हैं। इसके पूर्व आप सेन्सस डिपार्टमेंट में असिस्टेण्ट सुपरिन्टेन्डेन्ट भी रहे। आपका स्वभाव बड़ा मिलनसार और सादा है।

मेहता जसवन्तराजजी—आपका जन्म संवत् १९५५ में हुआ। आप बड़े प्रतिभाशाली, कार्य्य कुशल तथा गम्भीर व्यक्ति हैं। आपने अपने जीवन में बहुत उन्नति की। सन् १९१९ में आपने B. A. तथा सन् १९२१ में आपने L. L. B. की परीक्षाएँ पास कीं। आप सन् १९२० में मजिस्ट्रेट के पद पर नियुक्त हुए और वहाँ पर बहुत ही शीघ्र अपनी योग्यता और प्रतिभा का परिचय दिया जिसे देखकर सन् १९२४ में तत्कालीन चीफ जज राव बहादुर लक्ष्मणदासजी बैरिस्टर एट लॉ ने आप के विषय में लिखा,

"It is a pity that a 'Hakim' like the present one should lose his fragrance in the desert air! अर्थात् इनके गुण जितने उच्च हैं उनका यथावत् उपयोग नहीं हो रहा है। इसके

परिणाम स्वरूप सन् १९२४ में सर सुखदेवप्रसाद ने आपको असिस्टेण्ट रजिस्ट्रार बना कर महकमा खास में अपने पास रक्खा। इसके पश्चात् आप रजिस्ट्रार बनाये गये। यह पहला ही अवसर था जब महकमा खास के रजिस्ट्रार के पद पर एक मारवाड़ी नियुक्त हुए। इस पद के उत्तरदायित्व को आपने बड़ी योग्यता से निभाया। सब उच्च पदाधिकारी तथा स्टेट कौंसिल के मेम्बर आपका बड़ा विश्वास करते थे। सन् १९३१ में आपको महाराजा साहब ने फारेन एण्ड पोलिटिकल सेक्रेटरी के सम्मानीय पद पर नियुक्त किया। इस कार्य्य को आपने बहुत योग्यता के साथ संचालित किया। स्टेट कौंसिल के व्हाइस प्रेसिडेण्ट कुँवर सर महाराजसिंहजी ने अपनी स्पीच में आपके लिये जो शब्द कहे उनका सारांश इस प्रकार है।

"Mr. Jaswantraj Mehata. paid a special tribute to the excellent work of the foreign and political Secretary. He was officer of an exceptional ability with whose work kunwar Sir Maharajsing has been completely satisfied. He bad always found him reliable."

सन् १९३३ में आपको महाराजा ने ट्रिब्यूट डि० का सुपरिन्टेन्डेन्ट नियुक्त किया। इस उत्तरदायित्व पद पर पहले जमाने में दीवान और बक्षी ही मुकर्रर होते थे क्योंकि इस पदाधिकारी का सम्बन्ध स्टेट के सम्माननीय जागीरदारों के साथ रहता है।

मेहता जसवन्तराजजी राज्य के कामों के अतिरिक्त जाति सुधार, समाज सुधार और विद्या प्रचार के कामों में भी बराबर बड़े उत्साह के साथ भाग लेते रहते हैं। ओसवाल नवयुवक मण्डल जोधपुर तथा अखिल भारतवर्षीय नवयुवक महामण्डल के आप बहुत अर्से तक मुख्य कार्य्य कर्त्ता रहे। आपके विचार सामाजिक मामलों में बड़े उदार और उच्च हैं।

मेहता हनुमन्तसिंहजी—आपने सन् १९३० में B. A. तथा सन् १९३३ में एल० एल० बी० की परीक्षाएँ पास कीं। आप जोधपुर चीफ कोर्ट के एक होनहार वकील हैं।

मेहता अमृतलालजी B. A. L. L. B. आपका जन्म संवत् १९५९ में हुआ। आप जोधपुर चीफ कोर्ट के एक प्रसिद्ध वकील हैं। आपकी योग्यता और सच्चरित्रता से जनता और अधिकारी दोनों ही बहुत प्रसन्न हैं। कुछ दिनों से आप मारवाड़ के सर्व प्रधान वकीलों में समझे जाते हैं। आप म्युनिसीपालिटी के कमिश्नर भी हैं।

सेठ छत्तूमल मुलतानमल कांकरिया, गोगोलाव (नागोर)

इस परिवार के पूर्वज पहले थवूकड़ा (जोधपुर) में रहते थे। वहाँ से सेठ भेरोंदानजी लगभग



सेठ अमोलकचंदजी कांकरिया, गोगोलाव.



सेठ अमोलकचंदजी रतनचंदजी कांकरिया, बाघली.



सेठ पन्नालालजी कांकरिया, ब्यावर.



बाबू रतनचंद मेहता S/o भैरूंराजजी बागरेचा, जोधपुर.

२०० साल पहिले गोगोलाव (नागोर) आये। इनके पश्चात् क्रमशः ईश्वरचन्दजी, सवाईसिंहजी और रामचन्दजी हुए। आप लोग आस पास के गावों में साधारण देनलेन का व्यापार करते थे। सेठ रामचन्दजी के छत्तूमलजी, हजारीमलजी, मुलतानमलजी, चौथमलजी और रामलालजी नामक ५ पुत्र हुए।

सेठ छत्तूमलजी कांकरिया—आप गोगोलाव से ६० साल पूर्व बंगाल में तुलसीघाट (गायबंदा) आये और यहाँ सेठ कुशलचन्दजी बागचा लूनसरा निवासी की फर्म पर नौकर हो गये। ४ साल बाद ही आप इस फर्म के भागीदार होगये और थोड़े समय के पश्चात् आपने अपना घरू व्यापार भी आरम्भ किया। आपके सब भाइयों ने भी व्यापार की उन्नति में पूर्ण भाग लिया। संवत् १९५१ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके अमोलकचन्दजी, दुलीचन्दजी, सुगनमलजी तथा रेखचन्दजी नामक ४ पुत्र हुए। इनमें दो छोटेभाई अपने काका चौथमलजी के यहां दत्तक गये हैं।

अमोलकचन्दजी कांकरिया—आपका जन्म संवत् १९४१ में हुआ। छत्तूमलजी के स्वर्गवासी हो जाने पर आपने ही इस फर्म का संचालन किया। आप बड़े धार्मिक एवं परोपकार वृत्ति के पुरुष थे। संवत् १९८९ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र बच्छराजजी शिक्षित सज्जन हैं और व्यापार में भाग लेते हैं तथा कन्हैयालालजी व मोतीलालजी पढ़ते हैं।

दुलीचन्दजी कांकरिया—आपका जन्म संवत् १९४४ में हुआ। आप बड़े योग्य और मिलनसार व्यक्ति हैं तथा फर्म का व्यापार बड़ी उत्तमता से सम्हालते हैं। आपके बड़े पुत्र भँवरलाल जी व्यापार में सहयोग लेते हैं तथा दूसरे सोहनलालजी बालक हैं।

सेठ हजारीमलजी कांकरिया—आप विशेषकर देश में ही निवास करते थे। आपका स्वर्गवास संवत् १९७६ में हुआ। आपके मुकनमलजी, किशनलालजी तथा भेरोंदासजी नामक ३ पुत्र हैं। इनमें किशनलालजी सेठ मुलतानमलजी के नाम पर दत्तक गये हैं। सेठ मुकनमलजी का जन्म संवत् १९४९ में तथा भेरोंदासजी का संवत् १९६० में हुआ। आप दोनों सज्जन व्यापार के काम में भाग लेते हैं। मुकनमलजी के पुत्र चम्पालालजी, दीपचंदजी और हरकचन्दजी तथा भेरोंदानजी के पुत्र हीरालालजी और मांगीलालजी हैं।

सेठ मुलतानमलजी कांकरिया—आपने भी अपनी फर्म का व्यापार बड़ी योग्यता से चलाया। संवत् १९७२ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके नाम पर आपके भतीजे किशनलालजी दत्तक आये। आप योग्यता पूर्वक फर्म का संचालन करते हैं। आपके पुत्र पार्श्वमलजी तथा सरदारमलजी बालक हैं।

सेठ चौथमलजी कांकरिया—आप छोटी वय में ही स्वर्गवासी होगये थे। आपके नाम पर

सुगनचंदजी दत्तक लिये गये। आपके भी कम वर्ष में स्वर्गवासी हो जाने से आपके नाम पर आपके छोटे भाई रेखचन्दजी दत्तक आये। आपके पुत्र मदनलालजी और शुभकरणजी बालक हैं।

सेठ राजमलजी कांकरिया—आपने सेठ छत्तूमलजी के बाद इस फर्म के व्यापार को खूब बढ़ाया। आप बड़े योग्य तथा जैन धर्म के अच्छे जानकार थे। संवत् १९८२ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र पूसराजजी एवं जेठमलजी हैं पूसराजजी के पुत्र पूरनमल बाबूलाल हैं।

इतना बड़ा परिवार होते हुए भी इस में यह विशेषता है कि यह कुटुम्ब सम्मिलित रूप से बड़ी तत्परतापूर्वक अपने तमाम व्यापार को संचालित कर रहा है। आपका हेड आफिस तुलसीघाट (गायबंदा) में छत्तूमल मुलतानमल के नाम से तथा ७।२ बाबूलाल लेन कलकत्ता में इसकी एक ब्रांच है। इसके अलावा बंगाल प्रान्त के पलासवाड़ी, सादुलपुर, चौंतरा, कोमलपुर, दौलतपुर आदि स्थानों में भिन्न २ नामों से दुकानें हैं जिनपर जूट खरीदी बिक्री, गल्ला, कपड़ा और व्याज का काम होता है।

धूलचन्द कालूराम कांकरिया, ब्यावर

इस परिवार के पूर्वज कांकरिया नंदरामजी विरांठिया (जोधपुर) से लगभग ९० साल पूर्व आये। उस समय इस कुटुम्ब की आर्थिक परिस्थिति बहुत साधारण थी। इसी वंश में सेठ धूलचंदजी कांकरिया का जन्म संवत् १९१४ में हुआ। उन्होंने अपनी सम्पत्ति, मान, प्रतिष्ठा तथा व्यापार को खूब बढ़ाया। आप संवत् १९८५ में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र कालूरामजी कांकरिया का जन्म संवत् १९५० में हुआ।

सेठ कालूरामजी कांकरिया की सत्कार्यों में पैसा खर्च करने की विशेष रुचि रहती है। आपने संवत् १९७७ से ही ब्यावर के जैन मिडिल स्कूल का खर्च-भार अपने ऊपर ले लिया है। इस समय आप इस संस्था को ५००) मासिक दे रहे हैं। इसके अतिरिक्त आपने १५।२० हजार के लागत की एक बिल्डिंग इस संस्था को देदी है। इसी तरह स्थानीय जैन सेवा समिति नामक संस्था को भी आपने अपना नेमीभवन नामक मकान प्रदान किया है। आपने ब्यावर स्टेशन पर एक ३०।४० हजार की लागत से धर्मशाला बनवाई। इसी तरह के हर एक धार्मिक व विद्यावृद्धि के कार्मों में आप सहायताएँ देते रहते हैं।

सेठ कालूरामजी कांकरिया ब्यावर के प्रसिद्ध बैंकर हैं। इस समय आप स्थानीय म्युनिसीपालिटी के मेम्बर, सराफान चेम्बर के मेंबर, एडवर्ड मिल के डाइरेक्टर व जैन गुरुकुल ब्यावर के व्यवस्थापक हैं। आपके लक्ष्मीचन्दजी, नेमीचन्दजी तथा हेमचन्दजी नामक तीन पुत्र हैं। आप तीनों पढ़ते हैं। आपकी फाजिलका दुकान पर ऊन, आढ़त, धान्य, और बैंकिंग का कारबार होता है।

सेठ हजारीमल जेठमल कांकरिया, ब्यावर

इस खानदान के पूर्वज, कांकरिया सावंतमलजी अपने पुत्र हजारीमलजी, जेठमलजी तथा जुहार

मलजी के साथ संवत् १८९२ में जोधपुर स्टेट के बरांठिया नामक ग्राम से ब्यावर आये। ब्यावर आकर हजारीमलजी ने मोतीचन्द करनचन्द के यहाँ मुनीमात की तथा जेठमलजी ने हजारीमल जेठमल के नाम से व्यवसाय करना शुरू किया। जेठमलजी का लगभग १९११ में तथा हजारीमलजी का संवत् १९३४ में शरीरावसान हुआ।

कांकरिया हजारीमलजी के पश्चात् उनके पुत्र फतेचन्दजी ने कारबार सम्हाला। आप जेठमलजी के नाम पर दत्तक दिये गये। इनका अन्तकाल संवत् १९५९ में हुआ। कांकरिया जेठमलजी का ब्यावर की ओसवाल समाज में अच्छा प्रभाव था। आप लम्बे समय तक ब्यावर म्युनिसिपलिटी के कमिश्नर रहे थे। इनके पुत्र गुलाबचन्दजी का जन्म संवत् १९१९ में हुआ।

कांकरिया गुलाबचन्दजी बड़े प्रभावशाली और धार्मिक पुरुष थे। आपका शरीरावसान संवत् १९७१ में हुआ। वर्तमान में उनके पुत्र पन्नालालजी कांकरिया विद्यमान हैं। आप फतेचंदजी के नाम पर दत्तक गये हैं।

कांकरिया पन्नालालजी का जन्म संवत् १९३८ में हुआ। ब्यावर की ओसवाल समाज में आप अच्छी प्रतिष्ठा रखते हैं। आपके पुत्र पूनमचंदजी तथा नेमीचंदजी हैं। इस समय आपके यहाँ हजारीमल जेठमल के नाम से किराया तथा पुराना लेन-देन बसूली का काम और गणेशदास पन्नालाल के नाम से आढ़त का कामकाज होता है।

सेठ मोतीलाल अमोलकचन्द कांकरिया, बाघली (खानदेश)

इस परिवार का मूल निवासस्थान बड़लू (जोधपुर स्टेट) का है। वहाँ से एक शताब्दी पूर्व सेठ भेरूदासजी कांकरिया बाघली आये। इनके रामचन्दजी, विजयराजजी तथा ताराचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। सेठ रामचन्द्रजी का स्वर्गवास संवत् १९२५ में हुआ। आपके पुत्र रतनचन्दजी ने इस दुकान के व्यापार और सम्मान को विशेष बढ़ाया। इनके पुत्र मोतीलालजी तथा अमोलकचन्दजी विद्यमान हैं। आपका जन्म क्रमशः संवत् १९५८ तथा ६० में हुआ है। आपके यहाँ साहुकारी लेन-देन का व्यापार होता है। यहाँ की ओसवाल समाज में यह परिवार अच्छी प्रतिष्ठा रखता है। धार्मिक कामों में भी यह परिवार व्यय करता रहता है। इसी तरह विजयराजजी के पौत्र माणकचन्दजी विद्यमान हैं।

रतनपुरा कटारिया

रतनपुरा कटारिया गौत्र की उत्पत्ति

विक्रम संवत् १०२१ में सोनगरा चौहान जातीय रतनसिंहजी नामक एक प्रसिद्ध राजपूत हो गये हैं। आपने अपने नाम से रतनपुर नामक नगर बसाया। आपकी पांचवीं पीढ़ी में धनपालजी नाम के एक नामांकित राजा हुए। सुप्रसिद्ध जैनाचार्य दादा जिनदत्तसूरि के द्वारा राजा धनपाल ने जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण की तथा श्रावक के बारह गुण सुनकर अंगीकार किये। तभी से आपके वंशज अपने पूर्वज रतनसिंहजी के नाम से रतनपुरा कहलाने लगे।

इन्हीं रतनसिंहजी के वंश में आगे जाकर झाँझणजी नामक एक प्रतापी और बुद्धिमान पुरुष हो गये हैं। आपकी वीरता से प्रसन्न होकर मांडलगढ़ के बादशाह ने आपको अच्छे ओहदे पर मुकर्रर किया था। आपका धार्मिक प्रेम बहुत बढ़ा चढ़ा था। आपने शत्रुंजय का बड़ा भारी संघ भी निकाला था। कहते हैं कि इस संघ के शत्रुंजय पहुँचने पर आरती की बोली पर शाह अबीरचन्द नामक एक नामी साहुकार के साथ आपकी प्रतिस्पर्धा हो गई। यह बोली बढ़ते २ हजारों लाखों रुपयों तक पहुँची और अंत में झाझणजी ने मालवा प्रदेश की ९२ लाख की आमदनी की बोली इस पर लगाकर प्रभु की आरती उतारी। आपके दूसरे भाई पेथड़शाह ने शत्रुंजय, गिरनार पर ध्वजा चढ़ाई तथा अन्य कई धर्म के कार्य किये। इसके पश्चात् किसी के चुगली खाने पर एक समय बादशाह झांझणजी पर अप्रसन्न हुआ और इन्हें पकड़वा मँगाने के लिए एक सेना भेजी और फिर आप भी गये। झाँझणसिंहजी के हाथ में कटार देखकर उन्हें कटारिया नाम से सम्बोधित करते हुए, खजाने से कितने रुपये चुराये इसके विषय में पूछा। झांझणसिंहजी ने कहा कि हुजूर मैं एक पैसा भी बेहक का खाना हराम समझता हूँ। हाँ, हुजूर के जगजाहिर नाम को खुदा तक "मैंने अवश्य पहुँचाया है।" इस उत्तर से प्रसन्न होकर बादशाहने आपके सब गुन्हाओं को माफ कर आपको दरबार में कटारी रखने का सम्मान इनायत किया। तभी से कटारी रखने के कारण आपके वंशज कटारिया कहलाये।

आपके पश्चात् जावसी कटारिया के समय मुसलमानों ने सब कटारियों को मांडलगढ़ में कैद कर २२०००) दण्ड किये। ये रुपये भट्टारक गच्छ के जति जगरूपजी ने अपनी बुद्धिमानी से छुड़वाये। जावसीजी के पश्चात् आपके वंश में महता काशनजी नामक प्रसिद्ध व्यक्ति हुए। आपने एक बहुत बड़ा

शत्रुंजय का संघ निकाला और हजारों रुपये के खर्चे से एक स्वामिवत्सल किया। आपने वंशज लाखनसीजी ने एक लाख २१ हजार की लागत के महेन्द्रपुर के पास एक सुन्दर धर्मशाला तथा बावड़ी बनवाई।

मेहता भोपालसिंहजी का खानदान

मेहता कुंपाजी के वंशज—मेहता सोमाजी के पश्चात् सलखाजी संवत् १६५० के लगभग उदयपुर में आये। आपके दो पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः हरचंदजी और ताणाजी था। इनमें से हरचंदजी के वंश में देवराजजी हुए। देवराजजी के पुत्र का नाम बछराजजी था। मेहता बछराजजी के तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः शेरसिंहजी सवाईरामजी एवम् गुमानजी था। इनमें से शेरसिंहजी और सवाईरामजी महाराणा भीमसिंहजी के प्रतिष्ठित कर्मचारी रहे। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर संवत् १८०५ में महाराणा ने आप तीनों भाइयों को अलग २ कुछ गाँव जागीर में दिये। इसके कुछ समय पश्चात् मेहता शेरसिंहजी ने कुँवर जवानसिंहजी के कुँवरपदे का काम किया। इससे प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको पालकी की इज्जत बक्षी। मेहता शेरसिंहजी के स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् आपके छोटे भाई मेहता सवाईरामजी आपके स्थान पर नियुक्त हुए और कुछ समय पश्चात् कुँवरपदे के प्रधान हो गये।

मेहता शेरसिंहजी का परिवार—मेहता शेरसिंहजी के पुत्र गणेशदासजी भी राज कार्य करते रहे। आपके पश्चात् आपके पुत्र मेहता बख्तावरसिंहजी मेवाड़ के जिलों के हाकिम रहे।

मेहता गोविन्दसिंहजी—मेहता बख्तावरसिंहजी के पुत्र गोविन्दसिंहजी भी मेवाड़ के जिलों में हाकिम रहे। आप बड़े साहसी और प्रबन्ध कुशल व्यक्ति थे। मगरा जिले में जब वहाँ के भीलों ने उपद्रव किया तब महाराणा सज्जनसिंहजी ने आपको इस काम के योग्य समझ वहाँ का हाकिम नियुक्त कर भेजा। भील जाति बेसमझ, जंगली, लड़ाकू, जरायमपेशा और गोमांस भक्षी जाति थी। आपका उसके साथ ऐसा बर्ताव रहा कि जिससे वह आप पर विश्वास भी करती थी और डरती भी थी। आपके वहाँ रहने से सब उपद्रव शांत हो गये। साथ ही वहां की भील जाति ने आपके उपदेशों एवम् प्रभाव से गोमांस खाना बंद कर दिया। इसके पश्चात् संवत् १९३९ में भोराई के भील लोगों ने उपद्रव मचाया। इस उपद्रव को शान्त करने के लिए फौज के तत्कालीन अफसर महाराजा अमानसिंहजी फौज लेकर वहाँ भेजे गये। उस समय भी वहाँ के हाकिम गोविन्दसिंहजी ने अमानसिंहजी के कार्य में बहुत सहायता देकर उपद्रव को शांत करवाया। इससे प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको (गोविन्दसिंहजी) कंठी और सिरोपाव प्रदान किया। इसी सिलसिले में गवर्नमेंट हिन्द (भारत सरकार) ने भी आपके कार्य की बहुत प्रशंसा की और मेवाड़ के तत्कालीन रेजिडेण्ट लेफ्टिनेन्ट कर्नल सी० बी० इयून स्मिथ सी० एस० आई० ने एक बहुत

सुन्दर प्रशंसा पत्र भी आपको प्रदान किया। इसीप्रकार आपको और भी कई प्रशंसा पत्र मिले।

मेहता गोविन्दसिंहजी १४ वर्ष तक हाकिम रहे। इस अवधि में आपने भील जाति की बहुत उन्नति की। उनमें कई प्रकार के नवीन सुधार करवाये।

मेहता गोविन्दसिंहजी राजनीतिज्ञ के अतिरिक्त बहुत धर्म प्रेमी थे। आपने मगरा जिले के सुप्रसिद्ध जैन तीर्थ श्री केशरियाजी के स्थान पर एक धर्मशाला बनवाई। आपका स्वर्गवास १९७५ में तथा आपकी धर्मपत्नी का १९६९ में हुआ। आप दोनों पति पत्नी के शवदाह स्थान पर आपके पुत्र मेहता लक्ष्मणसिंहजी ने आपके स्मारक स्वरूप एक २ छत्री बनवाई तथा सदावर्त जारी किया।

मेहता लक्ष्मणसिंहजी

मेहता गोविन्दसिंहजी के कोई पुत्र न था, अतएव आपके नाम पर मेहता लक्ष्मनसिंहजी दत्तक लिये गये। वर्तमान में आपही इस खानदान के प्रमुख व्यक्ति हैं। आप बड़े बुद्धिमान, विचारक एवम शांत स्वभावी हैं। आपका जन्म संवत् १९४३ में हुआ। आप संवत् १९६५ से ही राज्य की सेवाओं में लग गये। आप पहले क्रमशः बागोर, रासमी, सहाड़ा, भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़, जहाजपुर आदि स्थानों पर हाकिम रहे। इसके पश्चात् आपको स्टेट के अकाउंटेण्ट जनरल का काम सौंपा गया। जिसे आपने बड़ी योग्यता एवम् बुद्धिमानी से संचालित किया। वर्तमान में आप मेवाड़ के मगरा डिस्ट्रिक्ट के हाकिम हैं। आपके दो पुत्र हैं, जिनके नाम क्रमशः मेहता भगवतसिंहजी और प्रतापसिंहजी हैं।

आपके पुत्र श्रीयुत भगवतसिंहजी बी० ए० एल० एल० बी० हैं। आप भी अपने पिताजी ही की तरह शांत स्वभावी, मिलनसार एवम् बुद्धिमान सज्जन हैं। वर्तमान में आप उदयपुर रियासत के असिस्टंट सेटलमेंट आफ़िसर हैं, आपके भाई प्रतापसिंहजी इस समय एफ० ए० में विद्याध्ययन कर रहे हैं।

मेहता सवाईरामजी का परिवार

मेहता शेरसिंहजी के दूसरे भाई सवाईरामजी का जिक्र हम ऊपर कर ही चुके हैं कि आप महाराणा भीमसिंहजी के पुत्र कुँवर जवानसिंहजी के कुँवर पदे के प्रधान रहे। इसके पश्चात् जब जवानसिंहजी महाराणा हुए तब आपको मेहता सवाईरामजी पर बहुत कृपा रही। दीपमालिका के अवसर पर स्वयं महाराणा आप की हवेली पर पधार कर आपका सम्मान बढ़ाते थे। जब आपकी पुत्री श्रीमती चांदबाई का विवाह मांडलगढ़ के मेहता कल्याणसिंहजी के साथ हुआ तब महाराणा आपकी हवेली



श्री स्व० मेहता भोपालसिंहजी, उदयपुर.



श्री स्व० मेहता गोविन्दसिंहजी, उदयपुर.



श्री मेहता जगन्नाथसिंहजी एक्सदीवान, उदयपुर.



श्री मेहता लक्ष्मणसिंहजी हाकिम, उदयपुर.

पर पधारे तथा एक गांव 'नींतीयास' हथलेवे (दहेज) में प्रदान किया। आपके कोई पुत्र न होने से आपके नाम पर मेहता गोपालदासजी दत्तक लिये गये।

मेहता गोपालदासजी—आप महाराणा सरूपसिंहजी के समय में बड़े विश्वासी एवम् प्रतिष्ठित राज-कर्मचारी रहे। संवत् १९०७ में महाराणा ने आपको कुछ नये गाँव आबाद करने के लिये भेजा। आप बड़े बुद्धिमान एवम व्यवहार चतुर पुरुष थे। अतएव कहना न होगा कि गाँव आबाद करने में आपको बहुत सफलता हुई। इससे प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको सिरोपाव एवम् रेलमगरा डिस्ट्रिक्ट की हुकुमत बक्षी। संवत् १९१४ में महाराणा ने आपको 'जीकारा' बक्षा। इसी प्रकार आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर आपको पैर में सोने के लंगर बक्षे। महाराणा समय २ पर आपकी हवेली पर पधारते रहे। संवत् १९४० में महाराणा सज्जनसिंहजी के समय में बोहड़े के रावत केसरीसिंहजी ने दरबार की आज्ञा का उलंघन किया। अतएव इस समय मेहता गोपालदासजी एवम् मेहता लक्ष्मीलालजी उन्हें गिरफ्तार करने के लिये भेजे गये। कुछ लड़ाई होने के पश्चात् ये लोग रावतजी को गिरफ्तार करलाये। इससे प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको कंठी एवम् सिरोपाव प्रदान किया। आपका स्वर्गवास संवत् १९४६ में हुआ। आपके भोपालसिंहजी नामक एक पुत्र हुए।

मेहता भोपालसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९१४ में हुआ। आप बचपन से ही प्रतिभाशाली रहे। १८ वर्ष की अवस्था में आप राशमी जिले के हाकिम नियुक्त हुए थे। आपकी सेवाओंऔर बुद्धि का वर्णन हम, राजनैतिक महत्व, नामक अध्याय में कर चुके हैं। राशमी जिले से बदल कर आप मांडलगढ़ जिले में गये। वहाँ जाकर आपने वहाँ की आमदनी में बहुत तरक्की की। इससे प्रसन्न होकर महाराणा फतेहसिंहजी ने आपको 'बैठक' बक्षी। संवत् १९४६ में आप रेव्हेन्यू सेटलमेंट आफिसर मि० विंडलफ़ की जगह नियुक्त किये गये। आपने उस काम को बहुत योग्यता के साथ संचालित किया और किसानों के साथ पूरी २ सहानुभूति रक्खी। संवत् १९५६ में काल पड़ने से किसानों में बहुत बकाया रहने लगी। उस समय उनकी आर्थिक दशा का पूरा खयाल रखते हुए उचित रूप से वसूली करवाई तथा लाखों रुपयों की छूट किसानों को दिलवाई। उस कहत साली का प्रबंध भी आपने बाउण्डरी सेटलमेंट आफ़िसर मि० पीनी के साथ रहकर बहुत योग्यता पूर्वक किया। संवत् १९५७ में आप महद्राज सभा के मेम्बर नियुक्त हुए। संवत् १९६१ में आप महकमा खास के प्रधान नियुक्त हुए। इसी समय महाराणा ने आपको 'जीकारा' बक्षा। आपने रियासत में बजट तैयार करने का सिलसिला जारी किया और कई सालों के आंकड़े तैय्यार करवाये। संवत् १९६३ में महाराज कुमार भोपालसिंहजी के जन्म उत्सव पर आपको पैर में सोने के लंगर प्रदान किये गये। संवत् १९५९ में शील सप्तमी के अवसर पर महाराजा और महाराज

कुमार दावत अरोगने के लिये आपकी हवेली पर पधारे। उस रोज आपको पगडी में मांझा बांधने का सम्मान प्रदान किया। संवत् १९६८ में आपने स्वर्ग यात्रा की। आपके शवदाह के स्थान पर महा सतियों में एक छत्री बनाई गई। आपके दो पुत्र एवम् एक कन्या हुई। पुत्रों का नाम क्रमशः मेहता जगन्नाथसिंह जी और मेहता लक्ष्मनसिंहजी हैं। आपकी पुत्री का विवाह मेवाड़ के सुप्रसिद्ध सेठ जोरावरमलजी बापना के वंशज वजीरउद्दौला रायबहादुर सिरेमलजी बापना सी० आई० ई० प्राइम मिनिस्टर इन्दौर स्टेट के साथ हुआ है।

मेहता जगन्नाथसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९४२ में हुआ। आप बड़े कुशाग्र बुद्धि के सज्जन हैं। आपने हिन्दी एवम् अंग्रेजी शिक्षा का अच्छा अध्ययन किया है। संवत् १९६० में महाराणा साहब ने आपको खास खजाने के काम पर नियुक्त किया। इसी समय आपके पिता मेहता भोपालसिंहजी के सुपुर्द राजपुत्र हितकारिणी सभा, टकसाल, एवम् देलवाड़े की नाबालिगी का प्रबन्ध था। यह सब काम भी आपही करते थे। आपके पिताजी का स्वर्गवास होजाने पर महाराणा साहब ने आपको अपनी पेशी का काम सुपुर्द किया। आपकी योग्यता से प्रसन्न होकर संवत् १९७१ में आपको और राय बहादुर पं० सुकदेवप्रसादजी को महकमा खास के प्रधान बनाये। इसी समय आपको 'जीकारे' की भी इज्जत बीक्षी। तथा इसी साल पैर में सोने के लंगर प्रदान किये। संवत् १९७३ में शील सप्तमी पर महाराणा साहब आपकी हवेली पर पधारे। संवत् १९७५ में जब कि पंडित शुकदेवप्रसादजी जोधपुर चले गये तब आपही अकेले महकमा खास का काम करते रहे। इसके बाद संवत् १९७७ में लाला दामोदरलालजी, पं० शुकदेवप्रसादजी के स्थान पर आये। संवत् ७८ तक आप दोनों ही महकमा खास का काम करते रहे। वर्तमान में आप मेम्बर कौंसिल और कोर्ट आफ् वार्ड्स के अफ़सर हैं। आपका विवाह संवत् १९५६ में उदयपुर के भूतपूर्व दीवान कोठारी बलवन्तसिंहजी की पुत्री के साथ हुआ है। आपके चार पुत्र हैं जिनके नाम क्रमशः हरनाथसिंहजी, सवाईसिंहजी, जीवनसिंहजी, और मनोहरसिंहजी हैं। इनमें से बड़े पुत्र हरनाथसिंहजी बी० ए० हैं और अकाउण्ट्स लिखने के लिये स्टेट की ओर से देहली भेजे गये हैं। शेष तीन विद्याध्ययन करते हैं।

मेहता गुमानजी का परिवार

शेरसिंहजी के तीसरे भाई गुमानजी के ज्ञानसिंहजी नामक पुत्र हुए। ज्ञानसिंहजी के पुत्र न होने से उनके नाम पर जवानसिंहजी दत्तक लिये गये। आपके रुघनाथसिंहजी नामक एक पुत्र हुए। जो मेवाड़ के सहाडा जिले के हाकिम रहे। आपके पुत्र मेहता भीमसिंहजी इस समय

वर्तमान हैं। वर्तमान में आप आमेठ ठिकाने की नाबालिगी के मैनेजर हैं। इसके पहले भी आप पारसोली, कोठारिया, और धरियावद ठिकाने के मैनेजर रह चुके हैं।

उपरोक्त वर्णन पढ़ने से यह अनुमान सहज ही निकलता है कि इस परिवार के लोगों ने रियासत उदयपुर में बहुत इमानदारी, सच्चाई, योग्यता और बुद्धिमानी के साथ राज्य कार्य्य किया। इसी लिये मेवाड़ के महाराणाओं ने प्रसन्न होकर समय २ पर आप लोगों को बहुत सम्मान और इज्जत प्रदान की। इस समय भी यह खानदान उदयपुर में बहुत प्रतिष्ठित और माननीय घरानों में से एक माना जाता है।

ताणाजी के वंशज

सलखाजी के पुत्र ताणाजी के वंश में संवत् १७०५ में मेहता सांवलदासजी हुए। जो राजकर्मचारी रहे। आपके मालमदासजी नामक पुत्र हुए। आपने अपने नाम से उदयपुर में मालसेरी नामक मोहल्ला बसाया। इन्हीं के वंश में आगे चलकर मेहता विजयचन्दजी हुए। आप मेवाड़ में खड़लाखड़ और भोमराड नामक टेक्स वसूली पर नियुक्त हुए। इसकी सफलता देखकर आपको सरकारी घोड़ा भी बक्षा गया। इनके चौथे पुत्र मोहकमसिंहजी बड़े यशस्वी और कार्य्यकुशल हुए। आपभी अपने पिताजी की तरह राज कार्य्य में सामिल हुए। आपने अपने जीवन में महाराणा साहब की बहुत अच्छी सेवाएँ की। जिनसे प्रसन्न होकर महाराणा सरूपसिंहजी ने आपको जागीर में एक गांव बक्षा। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः मेहता माधौसिंहजी, मदनसिंहजी और मालमसिंहजी थे। जो मेवाड़ के भिन्न २ जिलों में हाकिम रहे। इसके पश्चात् मालमसिंहजी को, महाराणा साहब ने अपनी पुत्री का विवाह जोधपुर नरेश सरदारसिंहजी के साथ होने से वहाँ कामदार बनाकर भेजा। ये अपने जीवन पर्यंत जोधपुर रहे। आपके पुत्र मोतीसिंहजी नाबालिग ठिकाना पारसोली, सरदारगढ़ और धरियावद के मैनेजर रहे। हाल में आप देवली वकील हैं। आपके बड़े पुत्र गोवर्धनसिंहजी बी० ए० एल० एल० बी० हैं। और इस समय में मेवाड़ स्टेट में असिस्टेंट सेटलमेंट आफ़िसर हैं। आप मनोहरसिंहजी के दत्तक हैं।

कटारिया मेहता नाथूलालजी का खानदान, सीतामऊ

ऊपर भोपालसिंहजी के परिवार में हम यह लिख ही चुके हैं कि यह परिवार कुंपाजी का है। कुंपाजी के तीन भाई और थे। जिनमें से हाफ़णजी का वंश चला। हाफ़णजी के जिन्दाजी और जेसाजी नामक दो पुत्र हुए। जैसाजी के पश्चात् क्रमशः हाथाजी, नरवदजी, हासाजी, भेलजी, और नाथाजी हुए। नाथाजी के भाई पन्नाजी के पुत्र प्रेमचन्दजी की स्त्री प्रेमसुखदे इनके साथ सती हुई।

मेहता नाथाजी—आप बड़े वीर और कारगुजार व्यक्ति थे। आपको रतलाम के तत्कालीन शासक महाराज शिवसिंहजी से टांका माफ़ हुआ था। इसके पश्चात् संवत् १७२१ में रतलाम दरबार रामसिंहजी ने आपको शाह मुकुन्दजी के साथ अपना कामदार नियुक्त किया था। साथही आपको जागीर भी प्रदान की थी। आपके २ पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः मेहता भागचंदजी और मेहता हीरचन्दजी था।

मेहता हीरचन्दजी—आपको रतलाम नरेश केशोदासजी ने अपना कामदार नियुक्त किया। आप की सेवाओं से प्रसन्न होकर आपको धराड़ परगने के 'वागड़ी' और च्युच्छा नामक दो गाँव जागीर स्वरूप प्रदान किये थे। आपके भिखारीदासजी और सम्बलसिंहजी नामक दो पुत्र हुए।

मेहता भिखारीदासजी—आप भी इस परिवार में बड़े प्रतापी पुरुष हुए। आपके कार्य्यों से प्रसन्न होकर संवत् १७६२ में महाराज केशोदासजी ने आपको मौजा खेरखेड़ा नामक स्थान पर १६० बीघा जमीन जागीर में प्रदान की थी। इसके अलावा आपको टांका भी माफ़ था। इसके बाद आप संवत् १७६९ में महाराज केशोदासजी द्वारा सीतामऊ के कामदार बनाए गये। आपके एक मात्र पुत्र मेहता सुजानसिंहजी हुए।

मेहता सुजानसिंहजी—आप भी इस खानदान के प्रसिद्ध व्यक्तियों में से थे। आपने भी राज्य में अच्छे २ स्थानों पर काम किया। आपको महाराज कुंवार बखतसिंहजी ने संवत् १७८२ में एक परवाना बक्षा था जिसमें लिखा था कि "थे म्हारे साथ आया हुआ हो और हमारे लारे लगा हुआ हो, थे घर का हो" इस परवाने से स्पस्ट होता है कि आपका राज्य में अच्छा सम्मान रहा होगा। मेहता सुजानसिंहजी के बाद क्रमशः कुशलसिंह उंकारजी, इन्द्रभागजी और लखमीचन्दजी हुए। लखमीचन्दजी के दो पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः मेहता नाथूलालजी और मेहता मथुरालालजी हैं।

मेहता नाथूलालजी—आजकल आपही इस परिवार में प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपका स्वभाव मिलनसार और सज्जन है। आप इस समय स्टेट में तहसीलदार हैं। इसके अलावा ट्रेझरी आफ़िसर और पी० डब्ल्यू० डी० के सुपरवाइजर हैं और दरबार के जेब खर्च का काम भी देखते हैं। आपके कार्य्यों से खुश होकर हाल ही में महाराजा साहब ने आपको सन् १९२६ में जागीर प्रदान की है। आप के दुलेसिंहजी, मोहनसिंहजी, और कंचनसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं।

श्री दुलेसिंहजी बी० ए०, और मोहनसिंहजी एम० ए० एल० एल० बी० पास हैं। कंचनसिंह जी इस समय विद्याध्ययन कर रहे हैं।

सीतामऊ स्टेट में यह परिवार सम्मानीय परिवार माना जाता है। समय २ पर महाराजा आपकी हवेली पर पधार कर आपको सम्मानित करते रहते हैं। सीतामऊ के ओसवाल समाज में यह खानदान प्रथम पद पर माना जाता है।

सेठ धनराज हीराचन्द कटारिया का परिवार, बंगलोर कैंट

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवास स्थान बोरांकी देवली (मारवाड़) का है। आप जैन श्वेताम्बर बाइस सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। सबसे पहले सेठ धनराजजी देवली से करीब संवत १९४४ में बंगलोर आये और यहाँ आपने ६ साल तक सर्विस की। इसके पश्चात आपने अपनी एक स्वतन्त्र फ़र्म स्थापित की।

सेठ धनराजजी का जन्म संवत १९३० में हुआ। आप बड़े व्यापार कुशल हैं। आपका धर्म ध्यान में बहुत लक्ष है। आप इस समय करीब चार सालों से गरम जल पान करते, रात्रि में भोजन नहीं करते तथा जोड़े से चौथे व्रत के त्याग का पालन करते हैं। आपके धार्मिक विचार बहुत बढ़े हुए हैं। आपके हीराचन्दजी तथा फूलचन्दजी नामक दो पुत्र हैं।

हीराचन्दजी का जन्म संवत १९५८ का है। आप बड़े सज्जन हैं तथा इस समय बड़ी होशियारी से दुकान के सब कामों को सम्भाल रहे हैं। आपके भँवरलालजी और फतहचन्दजी नामक दो पुत्र हैं। इनमें से भँवरलालजी, सेठ धनराजजी के छोटे भाई चौथमलजी कटारिया के नाम पर सम्वत १९८४ में दत्तक गये हैं। फूलचन्दजी का जन्म सम्वत १९६० का है। आप भी बड़े होशियार और दुकान के काम को संभालते हैं।

इस फर्म की ओर से दान धर्म और सार्वजनिक कामों की ओर भी खर्च किया जाता है। यह फर्म ज्वेलरी रोड पर मातबर मानी जाती है। इस फर्म पर सराफी बैङ्किग व ज्वेल्हलरी का काम होता है।

सेठ बनाजी राजाजी कटारिया, पूना

इस परिवार का मूल निवास स्थान सनपुर (सिरोही स्टेट) में है। इस परिवार के पूर्वज राजाजी कटारिया के जेठाजी, चेलाजी और बनाजी नामक ३ पुत्र हुए। इनमें दो ज्येष्ठ भ्राता संवत् १९२१ में पूना आये, और यहाँ नौकरी करके बाद में अपनी दुकान खोली। इनके छोटे भाई बनाजी कटारिया ने अपने व्यापार को और सम्मान को बहुत बढ़ाया।

सेठ बनाजी कटारिया—आपका जन्म संवत् १९१९ में हुआ। धार्मिक कामों में आपका बहुत बड़ा लक्ष था। आपने सम्वत् १९८६ में सनपुर से एक संघ निकाला। इस संघ में ४००० पुरुष तथा स्त्री सम्मिलित हो गये थे। सनपुर से यह संघ २२ दिनों में पुरनपुरा पहुँचा। यहाँ से मगसर सुदी ११ को ५ स्पेशल ट्रेनें संघ को लेकर रवाना हुई। अनेक स्थानों पर भ्रमण करता हुआ यह संघ ४१ दिनों में वापस पुरनपुरा पहुँचा। इस संघ के उपलक्ष में कलकत्ते में ३ अजीमगंज में एक और जयपुर में एक स्वामीवत्सल किये गये। इस प्रकार इस संघ में बनाजी सेठ ने १ लक्ष रुपया व्यय किया।

इस संघ में सबसे दुखदायक घटना यह होगई कि अजीमगंज से इस संघ में कोलेरा का प्रवेश हुआ। जिससे बख्तियारपुर में संघवी बनाजी के पुत्र माणकचन्दजी का स्वर्गवास हो गया। इसी तरह कौलेरा से लगभग ६० मौतें और हो गई।

सेठ बनाजी ने सनपुर के पास स्याकआ नामक स्थान के मन्दिर में तथा पूना के वैताल पैठ के मन्दिर में श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित कराई, इस तरह धार्मिक जीवन बिताते हुए आप सम्वत् १९९० की अगहन सुदी ८ को स्वर्गवासी हो गये।

वर्तमान में इस परिवार में सेठ बनाजी के पुत्र लूम्बाजी कटारिया तथा माणिकचन्दजी के पुत्र पूनमचंदजी और रतनचन्दजी कटारिया और लूम्बाजी के पुत्र कपूरचन्दजी कटारिया हैं। श्री पूनमचन्दजी तथा कपूरचन्दजी व्यापार में भाग लेते हैं। यह परिवार मंदिर मार्गीय आम्नाय का मानने वाला है। आपके यहाँ पूना लश्कर के सदरबाजार में बनाजी राजाजी के नाम से बेंकिंग व्यापार होता है।

सेठ हमीरमल पूनमचन्द कटारिया, न्यायडोंगरी (नाशिक)

इस परिवार का मूल निवास स्थान चंडावल (जोधपुर स्टेट) है देश से इस परिवार के पूर्वज सेठ दौलतरामजी कटारिया के पुत्र सेठ हमीरमलजी कटारिया संवत् १९१६ में व्यापार के लिये अहमदनगर आये और यहाँ से एक साल बाद आप न्यायडोंगरी आये। और एक साल नौकरी कर कपड़े का व्यापार शुरू किया। सम्वत् १९३६ में आपके छोटे भाई फौजमलजी भी न्यायडोंगरी आ गये। सेठ हमीरमलजी का सम्वत् १९६८ में स्वर्गवास हुआ। आपने व्यापार की उन्नति के साथ २ अपने समाज में भी अच्छी इज्जत हासिल की। आपके पूनमचन्दजी तथा चुन्नीलालजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें सेठ पूनमचन्दजी सम्वत् १९८८ में ५४ साल की आयु में स्वर्गवासी हुए। इनके पुत्र धनराजजी व्यापार में भाग लेते हैं।

सेठ चुन्नीलालजी का जन्म सम्वत् १९३८ में हुआ। आप न्यायडोंगरी के अच्छे प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं। आपके पुत्र दगडूरामजी तथा धोंडीरामजी हैं। इनमें दगडूरामजी व्यापार में भाग लेते हैं। आपके



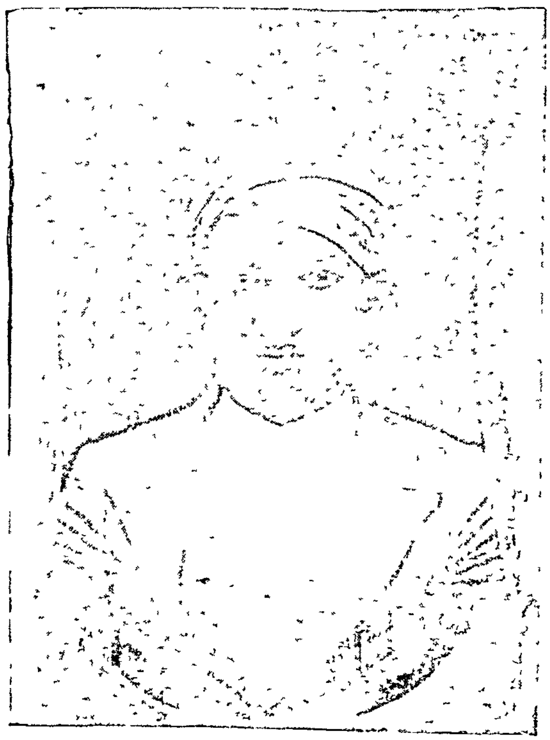
स्व० सेठ बनाजी राजाजी कटारिया, पूना.



स्व० सेठ पूनमचंदजी कटारिया, न्यायडोंगरी (नाशिक).



सेठ चुन्नीलालजी कटारिया (हमीरमल पूनमचंद) न्यायडोंगरी.



श्री धनराजजी कटारिया (हमीरमल पूनमचंद), न्यायडोंगरी (नाशिक.)

यहाँ हमीरमल पूनमचन्द के नाम से कपड़े का तथा धनराज दगडूराम के नाम से किराने का व्यापार होता है। आप स्थानकवासी आम्नाय के मानने वाले हैं।

सेठ फौजमलजी का स्वर्गवास सम्वत् १९८५ में हुआ। आपके पुत्र लखमीचन्दजी, लालचंदजी पन्नालालजी तथा माणकचन्दजी विद्यमान हैं। इनमें पन्नालालजी अहमदनगर दत्तक गये हैं। इन भाइयों का यहाँ अलग २ व्यापार होता है। लखमीचन्दजी के पुत्र हंसराजजी हैं।

सेठ उम्मेदमल चुन्नीलाल कटारिया, रालेगांव (बरार)

इस कुटुम्ब का मूल निवास रीयां (मारवाड़) है। सेठ जवानमलजी चुन्नीलालजी तथा कुंदनमलजी नामक तीनों भ्राता देश से सम्वत् १९४० तथा ५० के मध्य में अलग २ आये। सेठ जवानमलजी ने प्रथम यहाँ आकर सेठ अमरचन्द रतनचन्द मुहणोत के यहाँ सर्विस की।

सेठ चुन्नीलालजी का जन्म सम्वत् १९२४ में हुआ। आपने किराने के व्यापार में विशेष सम्पत्ति कमाई। सम्वत् १९५६ में चुन्नीलालजी और कुन्दनमलजी का व्यापार अलग २ हुआ। सेठ चुन्नीलालजी तलेगाँव, वर्द्धा, पांढरकवड़ा आदि की ओसवाल समाज में प्रतिष्ठित सज्जन हैं। अहमदनगर मंदिर के कलश चढ़ाने में आपने २१००) दिये हैं। इसी तरह कड़ा (आष्टी) की जैन पाठशाला, पाथरडी पाठशाला, आगरा जैन अनाथालय आदि संस्थाओं को सहायताएँ देते रहते हैं। सम्वत् १९६४ में आग लग जाने से आपकी सब सम्पत्ति नष्ट हो गई। लेकिन पुनः आप लोगों ने हिम्मत से सम्पत्ति उपार्जित कर व्यापारिक समाज में अपनी इज्जत बढ़ाई।

सेठ कुन्दनमलजी का सम्वत् १९६२ में स्वर्गवास हुआ। आपके हीरालालजी तथा रतनचंदजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें रतनचन्दजी चुन्नीलालजी के नाम पर दत्तक गये। आप दोनों सज्जन भी व्यापार संचालन में भाग लेते हैं। हीरालालजी का जन्म १९४८ में तथा रतनचन्दजी का १९५२ में हुआ। हीरालालजी पांढरकवड़ा में तथा रतनलालजी अपने पिताजी के साथ रालेगाँव में दुकान का काम देखते हैं। हीरालालजी के पुत्र मिश्रीलालजी, पुखराजजी तथा प्यारेलालजी हैं। इस परिवार की रालेगाँव में बहुत कृषि होती है तथा बाग बगीचा आदि स्थाई सम्पत्ति है। वहाँ के धनिक परिवारों में इस कुटुम्ब की गणना है।

भांडावत

शाह नोरतनमलजी भांडावत, जोधपुर

शाह नौरतनमलजी उन उन्नतिशील व्यक्तियों में हैं जो अपनी योग्यता, बुद्धिमानी और कार्य्य तत्परता के बल पर अपनी परिस्थिति को उन्नत कर समाज में अपनी प्रतिष्ठा स्थापित करते हैं। आपके पितामह श्री गुनेचन्दजी भांडावत अजमेर में साधारण व्यवसाय करते थे। इनके २ पुत्र हुए। वेवरचन्दजी तथा फूलचन्दजी। गुनेचन्दजी भांडावत का स्वर्गवास लगभग संवत् १९२६ में हुआ।

शाह फूलचन्दजी का जन्म सं० १९०७ एवं देहावसान १९६६ में हुआ। आप भी विशेष कर जीवन भर अजमेर में ही व्यवसाय करते रहे। आपके पुत्र शाह नोरतनमलजी का जन्म संवत् १९३० की आसोज सुदी ६ को हुआ।

शाह नोरतनमलजी अपने समय के छात्रों में बड़े मेधावी नवयुवक थे। आपका शिक्षण गवर्नमेन्ट कालेज अजमेर में हुआ। कुशाग्र बुद्धि होने के कारण आप युनिवर्सिटी में एफ० ए० में फर्स्ट, बी० ए० में सेकंड तथा एल० एल० बी में फर्स्ट आये। सन् १८९८ में एल० एल० बी० में सारी युनिवर्सिटी में प्रथम उत्तीर्ण होने के उपलक्ष में आपको एक स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ है।

संवत् १९५२ में शाह नौरतनमलजी जोधपुर में प्रोफेसर होकर आये। आपके यहाँ आने के ४।५ साल बाद आपके पिताजी भी जोधपुर आ गये। सन् १९०० के अप्रैल तक आप जोधपुर कालेज के सीनियर प्रोफेसर रहे। पश्चात् आपकी ज्युडिशियल लाइन में सर्विस हुई। सन् १९०० में आप असिस्टेंट सुपरिन्टेन्डेन्ट कोर्ट ऑफ सरदार्स एवं सन् १९०८ में सुपरिन्टेन्डेन्ट ज्युडिशियल नार्थवेस्टर्न डिस्ट्रिक्ट तथा फिर फरवरी १९१३ में फौजदार (असिस्टेन्ट सेशन जज्ज) के पद पर नियुक्त हुए। सन् १९१३ के दिसम्बर में आप जोधपुर के असिस्टेन्ट व्हाइस प्रेसिडेन्ट निर्वाचित किये गये। फिर सन् १९१६ में आप सेक्रेटरी मुसाहिब आला हुए। जब यह ओहदा टूट गया तब सन् १९२७ में आप डिस्ट्रिक्ट सेशन जज्ज और फिर १९२९ से जनवरी १९३३ तक चीफ कोर्ट के जज्ज रहे।

शाह नौरतनमलजी जोधपुर की ओसवाल समाज में ऊँचे दर्जे के शिक्षित तथा समाज सुधार के विचार रखने वाले सज्जन हैं। आप बड़े मेधावी तथा लोकप्रिय महानुभाव हैं। जोधपुर की ओसवाल समाज का शिक्षा की ओर ध्यान आकर्षित करने में आपका प्रधान हाथ है। सरदार हाईस्कूल की आपके द्वारा बहुत उन्नति हुई है। जब से सरदार हाईस्कूल स्थापित हुआ है तब से आप उसके ऑनरेरी सुपरिन्टेन्डेन्ट



स्व० शाह सुजानमलजी सराफ, जोधपुर.



श्री शाह नौरतनमलजी भांडावत बी. ए. एल एल. बी.
"एक्स चीफजज्ज" जोधपुर.



श्री शाह गणेशमलजी सराफ, जोधपुर.

हैं। लगभग १० साल पूर्व आपने अपने पिताजी की यादगार में 'फूलचन्द जैन कन्या पाठशाला' का स्थापन किया है।

आपको ता० २० अप्रैल सन् १९३३ के दिन जोधपुर बार एसोशिएसन ने मान पत्र भेंट किया। इसमें जोधपुर के लगभग ४०० प्रतिष्ठित सज्जन उपस्थित थे। इसी समय जोधपुर दरबार की ओर से आपको पैरों में सोना इनायत किया गया, इस समय आप जोधपुर की ओसवाल समाज में, राज्य में, सरदारों में और शिक्षित सज्जनों में नामांकित पुरुष हैं। जनवरी १९३३ से आप स्टेट सर्विस से रिटायर्ड हैं तथा शान्तिमय जीवन बिताते हैं। आपके पुत्र धनपतसिंहजी पढ़ते हैं।

ओसतवाल

शाह गणेशमलजी सराफ ओसतवाल, जोधपुर

यह खानदान अपने मूल निवासस्थान नागोर में चौधरी कहलाता था। वहाँ से नगराजजी के पिता संवत् १६०० के लगभग जोधपुर आये। नगराजजी के पश्चात् क्रमशः बनेचंदजी और मनजी हुए। जो मोहल्ला अब सराफों की पोल कहलाता है, वह पुराने पट्टों में मनजी की ग्वाल के नाम से लिखा हुआ पाया जाता है। सराफ मनजी के भानीदासजी तथा कनीदासजी के किशनदासजी और विशनदासजी नामक पुत्र हुए। सराफ विसनदासजी के नथमलजी, हिम्मतमलजी, उम्मेदमलजी, तथा अगरचन्दजी नामक चार पुत्र हुए। संवत् १९०० के लगभग उम्मैदमलजी तथा अगरचन्दजी का बैङ्किग ब्यापार जोरों पर था। सराफ अगरचन्दजी के आलमचन्दजी, मोतीलालजी तथा चन्दनमलजी नामक ३ पुत्र हुए।

चन्दनमलजी सराफ—आपका जन्म संवत् १८८० में हुआ। आपका महाराज कुमार यशवंत-सिंहजी से अच्छा मेल था। कहा जाता है कि एक बार सराफ चंदनमलजी, राजकुमार से कुश्ती में दांव जीत गये। इससे अप्रसन्न हो राजकुमार ने आलमचंदजी के तमाम बही खाते जप्त करवा लिये। इससे संवत १९२५ में चंदनमलजी रतलाम चले गये। वहाँ के आफिसर मीर शहमतअली ने इन्हें अफीम के सेल्स रजिस्टर का ओहदेदार बनाया। इसके बाद आप क्रमशः गणेशदास किशनाजी की महद्पुर और आगरा दुकानों के मुनीम, तथा गोकुलदासजी की दुकानों के सुपरवायजर रहे। वहाँ से जोधपुर आकर रेसिडेंसी खजाने पर सर्विस करते रहे तथा संवत् १९५७ में स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र सुजानमलजी सराफ हुए।

सुजानमलजी सराफ—आपका जन्म संवत् १९१४ में हुआ। रतलाम से आने पर आप जोधपुर स्टेट में असिस्टेण्ट ऑडीटर मुकर्रर हुए तथा संवत् १९५९ में स्टेट के आडीटर बनाये गये। आप ने स्टेट की पुरानी हिसाब पद्धत्ति में बहुत से सुधार कराये। इस पद्धति का अनुकरण कई स्टेटों ने किया। इसके सिवाय मारवाड़ की हुकूमतों में ब्रांच ट्रेजरी कायम करवाई तथा रेलवे कं० के अकाउंट में बहुत मादे की गलतियाँ ठीक करवाईं। आपकी योग्यता की मुसाहिब आला शुकदेवप्रसादजी, फाइनेंस मेम्बर कर्नल टेटर्सन, स्टेट आडीटर मि० गॉयडर तथा पेश्तनजी नेर वानजी ने समय २ पर सार्टिफिकेट देकर प्रशंसा की। वृद्ध हो जाने से सन् १९१८ में आप रिटायर्ड हुए। आपके पुत्र सराफ गणेशमलजी हुए।

गणेशमलजी सराफ—आपका जन्म सन् १८८१ में हुआ। १९०० में आप रेसिडेंसी ट्रेनिंग में भरती हुए। यहाँ से डूगरपुर, इन्दौर आदि स्थानों में सर्विस कर आप जोधपुर म्यु० में लागू हुए तथा सन् १९०३ में महकमा वाक़यात के सुपरिन्टेन्डेण्ट बनाये गये। तब से आप इसी ओहदे पर कार्य्य करते हैं। इसके साथ २ आप सन् १९१४ से २३ तक असिस्टेण्ट सुपरिटेंन्डेन्ट कस्टम भी रहे। इस समय आपने मारवाड़ की हद में जाने वाली बी० बी० सी० आई० रेलवे के लिए कस्टम ज्युरिडिक्शन के बारे में ऐसा केस तयार किया, जिससे गवर्नमेंट ने मारवाड़ की ज्युरिडिक्शन मानली। जब पुरानी बकाया के कारण राज्य ने जनता के बहुत से मकानात जप्त कर लिये थे उस समय आपने उनके देनों को निपटा कर वापस मकान दिलवा दिये। इससे स्टेट के फाइनेंस मेम्बर मि० बेल हेवन ने आपकी होशियारी की प्रशंसा की। सन् १९२० में दरबार से सिफ़ारिश कर आपने काश्तकारों के ६०।७० लाख बकाया रुपये माफ करवाये।

सर्विस के अलावा सराफ गणेशमलजी ने सरदार हाईस्कूल की सेवाओं में चिस्मरणीय योग दिया तथा आरंभ से ही उसकी नींव को दृढ़ बनाने में आप विशेष प्रयत्नशील रहे। सन् १९०३ से मेहता बहादुरमलजी गधैया के साथ हाईस्कूल को संगठित किया। सन् १९११ में आपने अपने सुपर बीजन में २० हजार की बिल्डिंग बनवाई। जब फंडमें कमी आ गई तो चंदा एकत्रित करने का बीड़ा आपने उठा कर बहुत रकम एकत्रित करवाई। जब उपरोक्त जगह कम पड़ने लगी तो हाईस्कूल की पुरानी स्टेट बेच कर हाईस्कूल की वर्तमान बिल्डिङ्ग भेरों बाग में बनवाने में कार्य्य तत्परता बतलाई। इस समय भी आप शाह नौरतनमलजी भाण्डावत के साथ संस्था की सेवा में योग देते हैं। आपने अपनी प्राईवेट लायब्रेरी की दो-तीन हजार किताबें हाईस्कूल को भेंट दी हैं।

गणेशमलजी सराफ सुधरे विचारों के सज्जन हैं। आपने अपनी कन्या का विवाह एक साधारण स्थिति के युवक भण्डारी लाडमलजी के साथ किया तथा एफ० ए० की शिक्षा खतम कर लेने पर २० हजार रुपया देकर उन्हें अपने पुत्र सरदारमलजी के साथ मद्रास में सरदारमल लाडमल के नाम से

बेङ्किग व्यापार की फर्म खुलवादी। कहने का तात्पर्य्य यह कि आप जोधपुर के एक कार्य्य कर्त्ता समझदार तथा सुधारक सज्जन हैं। आपके सरदारमलजी तथा चौथमलजी नामक दो पुत्र हैं। सरदारमलजी ने अपने घर से परदा प्रथा को हटा दिया है।

सेठ चन्दनमल जसराज ओसतवाल, अहमदनगर

इस परिवार का मूल निवास स्थान, मारवाड़ में बोरावड़ के पास लाडोली नामक गाँव है। इस परिवार में ओसतवाल सूरतसिंहजी चोरों के साथ युद्ध करते हुए जुझार हुए, जिनका चबूतरा लाडोली में बना है। इनके पुत्र हुकमीचंदजी तथा पौत्र नवलमलजी, प्रेमराजजी तथा खूबचन्दजी हुए। ये बंधु व्यापार के लिये सुरेगाँव (अहमदनगर) आये। साथ ही अपने भानेज पन्नालालजी तथा धनरामजी डोसी को भी साथ लाये।

संवत् १९३० में पेमराजजी ओसतवाल तथा पन्नालालजी डोसी ने अहमदनगर में पेमराज पन्नालाल के नाम से दुकान की तथा इन्हीं दोनों सज्जनों ने व्यापार में उन्नति की। धीरे २ इस दुकान की शाखाएँ मेलू, परभनी आदि स्थानों में खुलीं। सेठ पेमराजजी तथा उनके पुत्र जसराजजी १९५४ में स्वर्गवासी हुए। उस समय जसराजजी के पुत्र चंदनमलजी तथा कुंदनमलजी ओसतवाल बालक थे। अतः फर्म की देख रेख सेठ पन्नालालजजी डोसी करते रहे।

सेठ पन्नालालजी डोसी का स्वर्गवास संवत् १९३४ में हुआ। इनके पुत्र हीरालालजी तथा ताराचंदजी हुए। संवत् १९७१ में ताराचंदजी स्वर्गवासी हुए। इनके पुत्र नारायणदासजी का जन्म १९५४ में हुआ। १९६० में इन्होंने कुन्दनमल नारायणदास के नाम से दुकान तथा कुकाना और पाथरड़ी में जीनिंग फेक्टरी खोली।

सेठ चंदनमलजी ओसतवाल का जन्म सं० १९४२ में हुआ। आप बड़े मिलनसार तथा प्रतिष्ठित सज्जन हैं। आसपास की ओसवाल समाज में आपका घराना नामी माना जाता है। आपके यहाँ पेमराज पन्नालाल के नाम से जीनिंग फेक्टरी है तथा आढ़त व रुई का व्यापार होता है।

सेठ थोडीराम हेमराज ओसतवाल, उमराणा नाशिक

इस परिवार का मूल निवासस्थान बडलू (मारवाड़) है। वहाँ सेठ जोधाजी निवास करते थे। इनके ज्ञानीरामजी, राजारामजी तथा तिलोकचंदजी नामक तीन पुत्र हुए। इन भाइयों में से सेठ राजारामजी तथा तिलोकचन्दजी उमराणा के पास पींपल गाँव में आये। वहाँ से आकर इन्होंने उमराणा में दुकान की।

सेठ तिलोकचंदजी के हेमराजजी तथा परशुरामजी नामक २ पुत्र हुए। इन दोनों भाइयों ने कुटुम्ब के व्यापार तथा सन्मान को विशेष बढ़ाया। आप दोनों व्यक्तियों का स्वर्गवास क्रमशः सं० १९२८ और सं० १९५७ में हुआ। सं० १८१२ में सेठ परशुरामजी ने उमराणा में एक विशाल दीक्षा महोत्सव कराया। महाराष्ट्र प्रांत में यह पहला दीक्षा महोत्सव था।

सेठ हेमराजजी ओसतवाल के गुलाबचन्दजी तथा धोंडीरामजी नामक २ पुत्र हुए। इनमें गुलाबचन्दजी के पुत्र बालचन्दजी तथा शेंपमलजी हुए। इनमें शेपमलजी परशुरामजी के नाम पर दत्तक गये।

सेठ धोंडीरामजी का जन्म संवत् १९३२ में हुआ। नाशिक जिले की ओसवाल जाति में आप नामी धनवान हैं। आप समझदार और पुराने ढंग के पुरुष हैं। आप स्थानकवासी आम्नाय को मानने वाले हैं। आपके पुत्र शंकरलालजी तथा रतनलालजी हैं। आपके धोंडीराम हेमराज के नाम से तथा शेंपमलजी के शेपमल परशुराम के नाम से साहुकारी का व्यापार होता है।

बोलिया

बोलिया गौत्र की उत्पत्ति

ऐसा कहा जाता है कि प्राचीन समय में मारवाड़ में 'अप' नामी एक नगर था जिसका अनुमान वर्तमान में नागोर के पास लगाया जाता है। वहाँ एक समय चौहान वंशीय राजा सगर राज्य करते थे। इनके पुत्र कुँवर नरदेवजी को विक्रमी संवत् ७१९ में भट्टारकजी श्रीकनकसूरि महाराज ने जैन धर्म का उपदेश देकर जैन धर्मावलम्बी ओसवाल बनाया। महाराज का यह उपदेश 'बूली' नामक ग्राम में होने से इस खानदान वालों का गौत्र बूलिया या बोलिया कहलाया।

मोतीरामजी बोलिया का खानदान, उदयपुर

इनके वंशज बहुत समय तक देहली और रणथम्भोर नामक स्थानों में रहे। यहाँ इन्होंने कई नामी काम करके प्रतिष्ठा प्राप्त की। पंद्रहवीं शताब्दी में इस वंश की ३३ वीं पीढ़ी में टोडरमलजी हुए। आपने रणथंम्भोर में प्रसिद्ध गणपति का मन्दिर बनवाया। आपकी वृत्ति धार्मिक कार्य्यों की ओर विशेष रही। आपने अपने समय में काफ़ी दान पुण्य भी किया। आपके पुत्र छाजूजी रणथंभोर से चित्तौड़ आये। इन्ही छाजूजी के वंश में यह खानदान है।

छाजूजी के पश्चात् इस वंश में क्रमशः खेताजी, पन्नाजी, निहालचंदजी, जसपालजी,

सुल्तानजी, रंगाजी, चोखाजी, सूरजमलजी, कान्हजी, अनोपजी, मोतीरामजी, एकलिंगदासजी, भगवानदास जी, ज्ञानमलजी, और लछमीलालजी हुए जिनका थोड़ा सा परिचय हम नीचे देते हैं:—

छाजूजी—आप संवत् १४९१ के लगभग चित्तौड़ जाकर महाराणा कुम्भा के पास रहे। महाराणा ने आपका अच्छा सम्मान किया। आपने चित्तौड़गढ़ के ऊपर हवेली, धर्मशाला, और महावीर जी का मन्दिर तथा एक तालाब बंधवाया। इनकी हवेली की जगह इस समय चतुरभुजजी का मन्दिर बना हुआ है।

निहालचन्दजी—आपने चित्तौड़गढ़ में महाराणा श्री उदयसिंहजी का प्रधाना किया। संवत् १६१० में आपने श्री महाराणाजी की पधरावनी की थी। उदयसागर की नींव आपही के प्रधाने में लगी।

जसपालजी—जब कि संवत् १६२४ में चित्तौड़ में साका हुआ उस समय आप तथा आप के भाई बेटे साके में काम करने आये। केवल दो पुत्र बचे जिनमें से बड़े सुल्तानजी संवत् १६३२ में कसबा 'पुर' में आकर बसे।

रंगाजी—आपने महाराणा अमरसिंहजी (बड़े) और कर्णसिंहजी के समय में प्रधाना किया। आपने शाहंशाह जहाँगीर के पास जाकर महाराणा अमरसिंहजी की इच्छानुसार चार शर्तें तय कर मेवाड़ में से बादशाही थाणा उठवाया और देश में फिर से अमन अमान स्थापित किया। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा साहब ने आपको हाथी पालकी का सम्मान बक्षा। साथ ही चार ग्राम की जागीर का पट्टा भी प्रदान किया, जिनके नाम इस प्रकार हैं:—मेवदा काणोली, मानपुरा और जामुण्या। आपने उदयपुर शहर में घूमठावाली हवेली बनवाई जो आपकी इज्जत का एक खास सबूत है—जिसमें इस समय महाराज लक्ष्मनसिंहजी निवास करते हैं। यहां पर रंगाजी का एक शिलालेख का होना भी बतलाया जाता है। इसके अतिरिक्त आपने कसबा 'पुर' में श्री नेमीनाथजी का मन्दिर भी बनवाया, आपके पांच पुत्र हुए—जिनके नाम क्रमशः चोखाजी, रेखाजी, राजूजी, श्यामजी, और पृथ्वीराजजी थे। इनकी शाखाएँ रंगावत कहलाईं। रंगाजी के छोटे भाई पचाणजी थे जिनके वंशज पचनावत कहलाते हैं।

चोखाजी—आप मेवाड़ की वकालत पर देहली भेजे गये। आपके शोभाचन्दजी, रायभाणजी, उदयचन्दजी, सूरजमलजी और कर्णजी नामक पांच पुत्र हुए। कर्णजी महाराज गरीबदासजी (महाराणा कर्णसिंहजी के छोटे कुँवर) की इच्छानुसार श्री हजूर में से उणियारे इन्तजाम के लिये भेजे गये। वे वहीं पर संवत् १७२३ के भाद्रपद मास में स्वर्गवासी हुए। इनके साथ इनकी धर्मपत्नी सती हुई। जिनकी

छत्री व शिलालेख उणियारे में छप्पनजी के तालाव के पास मौजूद है। चोखाजी के भाई राजूजी के वंश में रुद्रभाणजी और सरदारसिंहजी हुए जिन्होंने अपने समय में फौज मुसाहिबी की।

अनोपजी—आपका जन्म संवत् १७४३ कार्तिक मास में हुआ। महाराणा श्री संग्रामसिंहजी (द्वितीय) ने आपको और धाभाई देवजी को सरकारी काम के लिये देहली भेजे। आपने राज के कोठार का काम किया। इसके पश्चात् कपासन वगैरह कई परगनों पर आप हाकिम रहे। संवत् १९०३ में आपके पुत्र मोतीरामजी के विवाह में महाराणा की आपके घर पधरावणी हुई। आपने कपासन प्रान्त में अपने नाम से अनोपपुरा नामक ग्राम बसाया। इस गांव में आपने बावड़ी और तालाव बँधवाया। साथ ही पोटला का तालाब भी आप ही ने बंधवाया। कसबा 'पुर' में आपने अपने पूर्वजों द्वारा निर्मित श्री नेमीनाथजी के मन्दिर का जीर्णोद्धार करवा कर एक नया सभा मंडप बनवाया, तथा दूसरी मूर्ति स्थापन करवा कर उसकी प्रतिष्ठा करवाई। आपने वहाँ बाग बावड़ी और मंगलेश्वरजी का एक मन्दिर बनवाया। आपकी हवेली 'पुर' में महलों के नाम से मशहूर है और आज भी होली दिवाली पर पंच दस्तूर के लिए आते हैं। आपकी जागीर में रंगाजी की जागीर के दो गाँव मेवदा और काणोली रहे। आपके मोतीरामजी, मोजीरामजी एवम् मानसिंहजी नामक तीन पुत्र हुए।

मोतीरामजी—आपका जन्म सम्वत् १७८३ की श्रावण सुदी २ को हुआ। आपने सम्वत् १८१९ से १८२६ तक महाराणा श्री अरिसिंहजी की प्रधानगी की। इस अवधि में एक बार संवत् १८२१ के करीब प्रधाने का काम दूसरे व्यक्ति को दिया गया था। मगर सुचारु रूप से कार्य न चलने के कारण कुछ ही दिनों पश्चात् वापस आपको ही दिया गया। संवत् १८२६ में जब कि सिंधिया के साथ वाली सन्धि में बड़वा अमरचन्दजी ने इनकी इच्छा के खिलाफ शर्तें तय कीं, इस शर्तनामें के अनुसार सरकार का नुकसान समझ कर आपने अपने पद से इस्तीफा दे दिया और बाहर चले गये। थोड़े ही समय पश्चात महाराणा को इसकी असलियत का हाल मालूम हुआ तो ये वापस बुलवाये गये। मगर ये हाजिर न हो सके और उसी समय संवत् १९२८ में आपका स्वर्गवास हो गया। आपके स्वर्गवासी हो जाने के पश्चात् भी महाराणा साहब ने आपके पुत्र एकलिंगदासजी को स्यामधर्मी होने वगैरह के कई परवाने बक्षे जिससे मालूम होता है कि महाराणा का आप पर पूरा भरोसा था। मोतीरामजी की जागीर में चार गाँव मेवदा, मानपुरा, काणोली और सादड़ा थे। आपके एकलिंगदासजी और अचलदासजी नामक दो पुत्र हैं।

उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त आपके द्वारा कई धार्मिक कार्य भी हुए। आपने कसारों की ओल में एक श्री ऋषभदेवजी महाराज का मंदिर तथा उपाश्रय बनवाया और उसकी प्रतिष्ठा संवत १८२० में करवाई।

संवत १८२१ में आपने आबू तीर्थ का संघ निकाला। इसकेअतिरिक्त आपने स्थानीय हाथीपोल और दिल्ली दरवाजा के बीच शहरपनाह के पास एक बावड़ी बनवाई जो आज भी आपके नाम से मशहूर है।

आपके छोटे भाई मौजीरामजी का जन्म संवत् १७९१ में हुआ। आप पर महाराणा अरिसिंहजी का पूरा भरोसा था। आप उनके फौज मुसाहिब हुए। संवत् १८२२ में श्रीजी हुजूर दुश्मनों पर चढ़े उस समय "विजयकटक" सेना में फौज़ मुसाहिब आप ही थे। इसके अतिरिक्त आप जावद, गोड़वाड़, चित्तौड़, कुम्भलगढ़, भीलवाड़ा, खोड़, वगैरह कई मुकामों पर फ़ौज लेकर समय २ पर दुश्मनों के मुकाबले पर भेजे गये थे। जिसके विषय में आपको कई परवाने प्राप्त हुए। जो इस समय इनके वंशजों के पास मौजूद हैं। उन परवानों से मालूम होता है कि उस समय कई सरदार आपकी अध्यक्षता में रहे। और कई स्थानों पर दुश्मनों से आपको मुकाबला करना पड़ा।

एकलिंगदासजी—आपका जन्म संवत् १८१४ में हुआ। आपको केवल बीस साल की उम्र में ही प्रधान का पद इनायत हुआ। छोटी उमर होने से इस काम को आप अपने काका मौजीरामजी की सहायता से करते रहे। मौजीरामजी के स्वर्गवासी होने पर आपने इस काम को छोड़ दिया। इसके पश्चात आप फौज मुसाहिब बनाये गये। इस सर्विस में आपने राज्य की कई सेवाएँ कीं। कई छोटी बड़ी लड़ाइयां आपने बहादुरी के साथ लड़ीं।

संवत् १८५८ में जब इन्दौर के महाराजा यशवंतराव होलकर ने नाथद्वारे पर चढ़ाई की। उस समय उन्हें रोकने के लिये आप भी फौज लेकर नाथद्वारे पर पहुँचे थे। वहाँ के आक्रमण को रोककर इसी साल माह महीने में आपने श्री ठाकुरजी को नाथद्वारे से उठाकर उदयपुर विराजमान किया। इसके पश्चात् भी संवत् १८६५ तक आपको समय २ पर नाथद्वारे की रक्षा के लिए जाना पड़ा था। संवत् १८७१ में राजनगर में माधौकुँवर सुखाराम का आना सुनकर वहां किसनाजी भाऊ के साथ आप भी पहुँचे और गढ़ की रक्षा की। संवत् १८७६ में गुसाईजी कांकरोली के लिये राजतिलक का दस्तूर तथा १८७८ में जयपुर महाराजा श्री सवाई जयसिंहजी का टीला लेकर गये।

इसी प्रकार उपरोक्त प्रकार के आपने कई काम किये। आपकी सेवाओं से महाराणा हमीरसिंहजी भीमसिंहजी, जवानसिंहजी, सरदारसिंहजी और सरूपसिंहजी सभी प्रसन्न रहे। आप अन्तिम समय तक अपने मालिकों की सेवा करते रहे। आपका स्वर्गवास ८७ वर्ष की अवस्था में संवत् १९०० में हुआ। उस समय के कागजों से पता चलता है कि करीब २ सभी उमराव, सरदार एवम् मरहठे अफसर आपकी इज्जत करते थे। तथा आपके साथ प्रेम रखते थे।

इनकी जागीर में इनके पिता के समय के चारों गाँव रहे। मगर संवत् १८९० में मेवदा नामक गाँव के स्थान पर रूपाखेड़ी दी गई थी। इनके छोटे भाई अचलदासजी की जागीर में "भोंपों का खेड़ा" अलग ही था। एकलिंगदासजी के पुत्र भगवानदासजी एवम् अचलदासजी के पुत्र सबदासजी थे।

भगवानदासजी—आपका जन्म संवत् १८५९ चेत बदी १४ को हुआ। संवत् १९०४ में महाराणा सरूपसिंहजी, की नाराजगी होने से उन्होंने आपकी जागीर, गेणावट के गाँव, घर खेती वगैरह तब खाल से कर लिये। फिर संवत् १९१८ में महाराणा शम्भूसिंहजी ने रूपाखेड़ी के बजाय ग्राम बाक्यो जागीर में प्रदान किया। भगवानदासजी का स्वर्गवास १९३९ में हुआ।

ज्ञानमलजी—आपका जन्म संवत् १८८८ तथा स्वर्गवास संवत् १९४७ फागण सुदी १४ को हुआ। आपने मुस्तकील तौर पर कोई काम नहीं किया।

लक्ष्मीलालजी—आपका जन्म संवत् १९२२ असाढ़ वदी ९ को हुआ। संवत् १९५१ में आपके जिम्मे लवाजमा का कारखाना और संवत् १९५६ में गेणे का काम आपके सिपुर्द हुआ जो बदस्तूर आप कर रहे हैं। आप भी राज्य की सेवाएं बहुत ईमानदारी के साथ कर रहे हैं।

आपके देवीलालजी नामक एक पुत्र हैं। जिनका जन्म संवत् १९६५ में हुआ है। आपने संवत् १९८७ में बी० ए० की डिग्री हासिल की। आप संस्कृत में शास्त्री परीक्षा भी पास हैं। आप ने संस्कृत कादम्बरी के कुछ भागों का (शुकनासोपदेश, महाश्वेत वृत्तान्त) का अंग्रेजी में अनुवाद करके सन् १९३३ में प्रकाशित किया है। आप बड़े होनहार और प्रतिभाशाली युवक हैं।

कावड़िया

मेवाड़ोद्धारक भामाशाह का घराना, उदयपुर

इस घराने वाले सज्जन कावड़िया गौत्र के हैं। महाराणा सांगा के समय इस गौत्र के प्रसिद्ध पुरुष कावड़िया भारमलजी रणथंबोर नामक किले के किलेदार नियुक्त किये गये थे। इनके पुत्र मेवाड़-उद्धारक वीरवर भामाशाह हुए। इन भामाशाह की वीरता, इनका स्वार्थ त्याग और इनकी बुद्धिमानी को कौन इतिहास का पाठक नहीं जानता ? जब तक महाराणा प्रताप का नाम अमर रहेगा तब तक सर्वस्व त्यागी भामाशाह का नाम भी नहीं भुलाया जा सकता। मेवाड़ में भामाशाह की जो अपूर्व सेवाएं हैं उनके समान बिरले ही उदाहरण इतिहास में दृष्टि गोचर होते हैं। जिस प्रकार भामाशाह

ने अपने अपूर्व वीरत्व का परिचय दिया था उसी प्रकार अपनी चिरसंचित असंख्यात सम्पत्ति को महाराणा प्रताप की सेवा में अर्पित कर अपनी विशालता का परिचय दिया था। कर्नल जेम्सटाड के कथनानुसार वह द्रव्य इतनी थी, जिससे २५ हजार सैनिक १२ वर्ष तक निर्वाह कर सकें। कहना न होगा, कि इस सम्पत्ति को पाकर महाराणा प्रताप ने अपनी बिखरी हुई शक्ति को बटोरा और मेवाड़ के बहुत से परगने अपने अधिकार में किये। भामाशाह का विस्तृत परिचय इस ग्रंथ के राजनैतिक विभाग में पृष्ठ ७३ में दिया गया है। उसी प्रकार इनके भाई ताराचन्द ने भी बहुत बार युद्ध में लड़कर अपना हस्त कौशल दिखलाया था।

भामाशाह के पश्चात् उनके पुत्र जीवाशाह हुए। ये महाराणा अमरसिंहजी के प्रधान रहे। इसके पश्चात् जब महाराणा कर्णसिंहजी मेवाड़ की राजगद्दी पर विराजे तब जीवाशाह के पुत्र अक्षयराज मेवाड़ के प्रधान बनाये गये। इस प्रकार तीन पुश्त तक प्रधानगी का काम इस वंश के हाथ में रहा। और इस वंश वालों ने बड़ी योग्यता से उसे संचालित किया।

अक्षयराज की कुछ पुश्त पश्चात् जयचन्दजी, कुन्दनजी और वीरचन्दजी नामक तीन बन्धु हुए। प्रजा की तरफ से जब आप लोगों के पुश्तैनी तिलक के सम्मान में फर्क आने लगा तब तत्कालीन महाराणा सरूपसिंहजी ने एक नये परवाने के द्वारा फिर से आपका सम्मान बढ़ाया। यह परवाना इसी ग्रन्थ में राजनैतिक और सैनिक महत्व नामक शीर्षक में 'सर्वस्व त्यागी भामाशाह वाले हेडिंग के अंडर में दिया गया है।

शाह कुन्दनजी के सवाईरामजी और अंबालालजी नामक २ पुत्र हुए। अम्बालालजी की स्थिति इस समय बहुत साधारण रह गई थी। अतएव आपने प्रारम्भ में दुकानदारी की। पश्चात् आपने उमरावों एवम् सरदारों की वकालत का काम करना प्रारम्भ किया। इसमें आपको बहुत सफलता रही। यही नहीं बल्कि इन्हीं उमरावों में से एक झाडोल राज से आपको चोकड़ी नामक एक गाँव जागीर में मिला जो आज भी आपके वंशजों के पास है। आपके समय में पुश्तैनी तिलक में सम्मान का फिर झगड़ा हुआ। इस बार भी महाराणाजी की ओर से फैसला होकर उस परवाने की पाबन्दी करवाई गई। आपका संवत् १९७६ में स्वर्गवास होगया। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रमशः बहुतलालजी, अमरसिंहजी और मनोहरसिंहजी हैं। इनमें से अमरसिंहजी स्वर्गवासी होगये। बहुतलालजी आज कल अपने पिता जी के स्थान पर वकालत को करते हैं। आपके भाई भी वकालत करते हैं। आप लोग मिलनसार सज्जन हैं। बहुतलालजी के कालूलालजी और छगनलालजी नामक २ पुत्र हैं। कालूलालजी वकालत करते हैं। छगनलालजी पुलिस ट्रेनिंग पास करके प्रेक्टिस कर रहे हैं। मनोहरलालजी के रोशनसिंहजी और जसवन्तलालजी नामक दो पुत्र हैं।

चील मेहता

मेहता रामसिंहजी का घराना, उदयपुर

इस परिवार का इतिहास बहुत पुराना है। इस परिवार में मेहता जालसी नामक एक बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति हो गये हैं। वे तत्कालीन जालोर के राव मालदेव के बड़े विश्वास पात्र सेवक थे। जब कि चित्तोड़ पर रावल रतनसिंह राज्य करते थे उस समय मेवाड पर अलाउद्दीन ने चढ़ाई की और चित्तौड़ का किला हस्तगत कर लिया और अपने पुत्र खिजरखां को यहाँ का शासक नियुक्त कर वह वापस लौट गया। १० वर्ष पश्चात् सोनगरा मालदेव को विश्वास पात्र समझ कर खिजरखां इन्हें यहाँ का गवर्नर बना कर चला गया। इसी समय महाराणा हम्मीर अपने पैतृक राज्य को पुनः प्राप्त करने की लालसा में लगे हुए थे। उस समय जालसीजी मेहता द्वारा आपको बहुत सहायता मिली और आप चित्तौड़ का उद्धार करने में समर्थ हो सके। जालसी मेहता के पश्चात् मेहता चीलजी इस परिवार में बड़े नामांकित पुरुष हुए जिनका विशेष परिचय इसी ग्रन्थ के राजनैतिक और सैनिक महत्व नामक अध्याय में दिया जा चुका है। इन्हीं चीलजी मेहता की संताने चील मेहता कहलाईं। वास्तव में आप लोगों का गौत्र भंडसाली है।

मेहता चीलजी के कई पुश्तों के पश्चात् १९ वीं शताब्दि के मध्य में इस परिवार में मेहता ऋषभदासजी हुए। इनके पुत्र मेहता रामसिंहजी थे। मेहता रामसिंहजी बड़े होशियार, पराक्रमी, बुद्धिमान और चतुर राजनीतिज्ञ थे। आप कई बार मेवाड़ के प्रधान बनाये गये। आपने राज्य के हित के बहुत काम किये। आपको जागीर में गांव तथा सोना वगैरह इनायत किया गया था। आपका विशेष परिचय हम लोग इसी ग्रंथ के राजनैतिक और सैनिक महत्व नामक अध्याय में कर चुके हैं।

मेहता रामसिंहजी के बख्तावरसिंहजी, गोविन्दसिंहजी जालिमसिंहजी, इन्द्रसिंहजी तथा फतहसिंहजी नामक ५ पुत्र हुए।

संवत् १९०२ में मेहता रामसिंहजी अपने पांचों पुत्रों को लेकर ब्यावर चले आये, और यहाँ संवत् १९१४ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके बड़े पुत्र बख्तावरसिंहजी आपके सामने ही गुजर गये थे। उनके नाम पर गोविंदसिंहजी के छोटे पुत्र कीर्तिसिंहजी दत्तक गये। इस समय इनके परिवार में जवरसिंहजी नामक एक बालक जोधपुर में विद्यमान हैं।

मेहता रामसिंहजी के द्वितीय पुत्र गोविंदसिंहजी का परिवार ब्यावर में ही रहता रहा। इनके परिवार का विस्तृत परिचय नीचे दिया जा रहा है। इनके तीसरे पुत्र जालिमसिंहजी को संवत् १९१८ में

महाराणा शंभूसिंहजी ने उदयपुर बुलालिया, तथा चौथे पुत्र इन्द्रसिंहजी को बीकानेर महाराज ने बुलालिया। अभी इनके परिवार में पृथ्वीसिंहजी जयसिंहजी तथा वीरसिंहजी अजमेर रहते हैं।

मेहता जालिमसिंहजी—आपने राशमी प्रान्त में अपने नाम से जालिमपुरा नामक एक गाँव बसाया। संवत् १९२५ में आप सादड़ी के हाकिम थे। लेकिन आपने वेतन नहीं लिया। पश्चात् आप हिसाब दफ्तर के हाकिम बनाये गये। दरबार ने प्रसन्न होकर बरोड़ा नामक गांव तथा एक मोहरा प्रदान किया। संवत् १९३१ में आपने अपने स्थान पर बड़े पुत्र अक्षयसिंहजी को जहाजपुर का हाकिम बनाकर भेजा। संवत् १९३६ में आप स्वर्गवासी हो गये। आपके अक्षयसिंहजी, केशरीसिंहजी और उम्रसिंहजी नामक ३ पुत्र हुए।

मेहता अक्षयसिंहजी—आपने जहाजपुर जिले की आय को बढ़ाया, तथा अपने भाई और पुत्रों के नाम पर अखयपुरा, केसरपुरा और जीवनपुरा नामक ३ गाँव बसाये। आपको महाराणा ने निम्बाहेड़ा के सरहद्दी मामले में अपना मातेमिद बनाकर भेजा था। इसके पश्चात् आप कुम्भलगढ़ और मगरे के हाकिम बनाये गये। आपने लुटेरे भीलों को कृषि में लगाया तथा मगरा जिले की आबादी बढ़ाई। इसके बाद आप मांडलगढ़ तथा भीलवाड़ा के हाकिम हुए। संवत् १९४० में आपके ज्येष्ठ पुत्र जीवनसिंहजी के विवाह प्रसंग पर महाराणा आपको हवेली पर मेहमान होकर पधारे। संवत् १९५६ के अकाल के समय आपने गरीब लोगों की बहुत इमदाद की। भिंडर ठिकाने को कर्ज मुक्त करने की व्यवस्था आपने व्यवस्थित ढंग से की। इसी तरह आप माल, फौज, खजाना, निज सैन्य सभा आदि महकमों में कार्य्य करते रहे। और संवत् १९६२ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके पुत्र जीवनसिंहजी तथा यशवंतसिंहजी हुए, इनमें यशवंतसिंहजी, केशरीसिंहजी के नाम पर दत्तक गये।

मेहता जीवनसिंहजी—आप लगातार ३५ सालों तक कुम्भलगढ़, सहाड़ा, कपासन, जहाजपुर, चित्तौड़, आसींद, भीलवाड़ा, मगरा आदि स्थानों के हाकिम रहे। महाराणाजी ने समय २ पर पुरस्कार आदि देकर आपकी प्रतिष्ठा बढ़ाई। मेवाड़ के रेजिडेंट तथा अन्य अंग्रेज आफीसरों ने आपकी प्रबंध कुशलता व कार्य्य शक्ति की समय २ पर सराहना की है। कुछ सालों से आप महद्राज सभा के मेम्बर नियुक्त हुए हैं। महाराणा भूपालसिंहजी की आप पर बड़ी कृपा है। आपके तेजसिंहजी, मोहनसिंहजी, तथा चन्द्रसिंहजी नामक ३ पुत्र हैं।

मेहता जसवन्तसिंहजी—आप मेहता जीवनसिंहजी के छोटे भ्राता हैं तथा अपने काका केशरीसिंह जी के नाम पर दत्तक गये हैं। आपने राज्य के विविध प्रतिष्ठित पदों पर काम किया है। कई वर्षों तक आप जोधपुर की शीसोदिनीजी महारानी के पास कामदार रहे। इसके बाद आप मेवाड़ में चित्तौड़

आदि कई स्थानों के हाकिम रहे। अब भी आप मेवाड़ में हाकिम हैं। आप सुधारक विचारों के और बड़े मिलनसार सज्जन हैं। आपके नाम पर मेहता जीवनसिंहजी के तीसरे पुत्र चन्द्रसिंहजी दत्तक आये हैं। आप उदयपुर रेलवे में ट्राफिक सुपरिंटेन्डेन्ट हैं। इसी तरह जालिमसिंहजी के तीसरे पुत्र मेहता उम्रसिंहजी के पुत्र मदनसिंहजी और पौत्र प्रतापसिंहजी तथा राजसीजी विद्यमान हैं।

मेहता तेजसिंहजी—आप बी० ए० एल० एल० बी० तक शिक्षा प्राप्त कर कुछ समय तक सीतापुर में वकालात करते रहे। संवत् १९७५ में कुम्भलगढ़ और साम्भर प्रान्त के हाकिम के पद पर नियुक्त हुए संवत् १९७८ में आप राजकुमार भूपालसिंहजी के प्राइवेट सेक्रेटरी नियत हुए और उनके राज्य पद पाने पर भी उसी पद पर अधिष्ठित रहे। महाराणाजी ने आपको सोने का लंगर प्रदान कर सम्मानित बढ़ाया है। सन् १९३१ के फाल्गुन मास में आपको दरबार ने जालमपुरा नाम का गाँव जागीर में बख्शा है।

मेहता मोहनसिंहजी—आप राजस्थान के प्रमुख व्यक्तियों में से हैं। आपने अपनी विद्वत्ता और अपनी अपूर्व सेवा से राजस्थान के नाम को उज्ज्वल किया है। प्रारम्भ में आप एम० ए० एल० एल० बी० तक शिक्षा प्राप्त कर इलाहाबाद आगरा और अजमेर के कॉलेजों में प्रोफेसर रहे। इसके बाद आपने पंडित वेंकटेश नारायणजी तिवारी के सहयोग में प्रयाग की सुप्रसिद्ध सेवा समिति के कार्य्य को संचालित किया। इसके बाद संवत् १९७८ में आप कुँम्भलगढ़ के हाकिम बनाये गये। इसके पश्चात् आप उदयपुर राज्य के असिस्टंट सेटलमेंट आफीसर के पद पर नियुक्त हुए। सन् १९२५ में आपने इंग्लैंड जाकर बेरिस्टरी की परीक्षा पास की और लंदन युनिवर्सिटी की सर्वोच्च उपाधि पी० एच० डी० प्राप्त की। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि राजपूताने में यह पहिले ही महानुभाव हैं, जिन्होंने सब से पहिले इस सम्माननीय उपाधि को प्राप्त किया है। इसके बाद आप भारत आये, तथा मेवाड़ स्टेट के रेवेन्यू आफीसर के पद पर नियुक्त हुए।

डाक्टर मोहनसिंहजी का ऊपर थोड़ा सा परिचय दिया गया है। सब पहिलुवों से आपका जीवन बड़ा गौरवपूर्ण तथा प्रकाशमय है। मानवीय सेवाओं के भावों से आपका हृदय लवालब भरा है। स्वार्थ त्याग के आप ज्वलंत उदाहरण हैं। राजस्थान में सब से पहिले बड़े पाये पर स्काउटिंग का काम आपही ने शुरू किया। विद्या भवन जैसी आदर्श संस्था आप ही के परम त्याग का फल है। यह एक ऐसी संस्था है, जो शिक्षा के उच्च आदर्श तथा देश की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर प्रस्थापित की गई है और जहाँ दूर २ से स्वार्थ त्यागी विद्वान बुलाकर रक्खे गये हैं। यह संस्था भारतवर्ष में अपने ढंग की अपूर्व है।

मेहता गोविन्दसिंहजी का परिवार
(मेहता चिमनसिंहजी, ब्यावर)

ऊपर उदयपुर के दीवान मेहता रामसिंहजी के पुत्रों के घरानों का परिचय दिया जा चुका है। मेहता गोविन्दसिंहजी मेहता रामसिंहजी के द्वितीय पुत्र थे। आपके छोटे भाई जालिमसिंहजी उदयपुर चले गये तथा आप ब्यावर में ही निवास करते रहे।

मेहता गोविन्दसिंहजी—आपको ब्यावर के कमिश्नर कर्नल डिक्सन ने ब्यावर तथा अजमेर के बीच जेठाणा नामक गाँव में एक हजार बीघा ज़मीन इनायत की। तथा जेठाणे में गवालियर राज का एक गढ़ था वह भी इनको दिया। इसके अलावा इस्तमुरारी जैसा सम्मान व आधे कस्टम के महसूल की माफी का आर्डर दिया। उक्त जमीन तथा गढ़, अब तक आपके पौत्र मेहता चिमनसिंहजी के अधिकार में है। संवत् १९२७ में आप स्वर्गवासी हुए। आपके बड़े पुत्र कीर्तिसिंहजी आपके बड़े भाई मेहता बख्तावरसिंहजी के नाम पर दत्तक गये।

मेहता रतनसिंहजी—आप मेहता गोविन्दसिंहजी के द्वितीय पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १८९८ में हुआ। आप ब्यावर म्युनिसिपैलिटी के मेम्बर रहे। संवत् १९३५ में आपका स्वर्गवास हुआ।

मेहता चिमनसिंहजी—आप मेहता रतनसिंहजी के पुत्र हैं। आपका जन्म संवत् १९३४ में हुआ। आप २४ सालों तक लगातार ब्यावर म्युनिसिपेलिटी के मेम्बर रहे और सन् १९१३ से १९ तक असिस्टेंट कमिश्नर के यहाँ वकील रहे। ब्यावर में आपका खानदान पुराना तथा प्रतिष्ठित माना जाता है। आपके पुत्र अमरसिंहजी तथा रतनराजजी हैं।

मेहता रतनसिंहजी ने इंटर तक पढ़ाई करके एग्रीकलचर कॉलेज कानपुर से एल० ए० जी० की डिगरी प्राप्त की। पश्चात आप यू० पी० में एग्रीकलचर इन्सपेक्टर तथा अजमेर मेरवाड़ा प्रान्त के मॉडल फार्म के सुपरिन्टेन्डेन्ट रहे। इस समय आप ब्यावर में निवास करते हैं। आपके छोटे भाई रणजीतसिंहजी मेट्रिक में पढ़ते हैं।

चीलमेहता नाथजी का परिवार, उदयपुर

इस खानदान के पूर्वज मेहता जालसीजी जालोर के सोनगरे चौहान मालदेव के विश्वास पात्र थे। सम्भव है जालसीजी उनके साथ मारवाड़ से मेवाड़ आये हों।

मेहता जालसीजी महाराणा हमीरसिंहजी के समय में तथा मेहता चीलजी महाराणा उदयसिंहजी के समय में हुए। इनकी सेवाओं का विस्तृत विवरण हम इस ग्रंथ के राजनैतिक महत्व नामक अध्याय में कर चुके हैं।

इस समय चीलजी के परिवार में १०-१५ कुटुम्ब उदयपुर में निवास करते हैं। इस परिवार के लोग महाराणा उदयसिंहजी के साथ चित्तौड़ से उदयपुर चले आये। वहाँ पर आप लोग प्रातः स्मर्णीय महाराणा प्रताप के महलों के पास देवाली गाँव में रहने लगे।

मेहता नाथजी—अठारहवीं शताब्दी के अंत में इस वंश में मेहता नाथजी हुए। घरेलू कारणों से कुछ समय के लिए ये कोटे चले गये। संवत् १८०७ के लगभग आप कोटे से मांडलगढ़ आये और मांडलगढ़ किले पर फौज के अफसर बनाये गये। साथ ही नवलपुरा नामक एक गाँव भी आपको जागीर में बख्शा गया। मांडलगढ़ किले पर आपकी बनवाई हुई बुर्ज अब भी नाथबुर्ज के नाम से मशहूर है। आपकी हवेली किले के सदर दरवाजे पर बनी हुई है। आपने किले के नजदीक एक पहाड़ पर बिजासन माता का मंदिर बनवाया। इसी तरह अपनी हवेली के सामने श्रीलक्ष्मीनारायण का मन्दिर बनवाया। इस मंदिर की व्यवस्था के लिए राज्य की ओर से नवलपुरे में डोली (माफी की जमीन) है तथा शादी गमी के मौके पर मांडलगढ़ की पंचायत से लागत वगैरा आती है। आपका परिवार पुष्टि मार्गीय वैष्णव धर्मावलम्बी है। संवत् १८६९ में आपका स्वर्गवास हुआ।

मेहता लक्ष्मीचन्दजी—आप मेहता नाथजी के पुत्र थे। अपने पिताजी के साथ कई लड़ाइयों में आप सम्मिलित हुए थे। अंत में सम्वत् १८७३ में साचरोल की घाटी में युद्ध करते हुए आप वीरगति को प्राप्त हुए। उस समय आपके पुत्र जोरावरसिंहजी और जवानसिंहजी क्रमशः ५ और २ वर्ष के थे। ऐसे कठिन समय में इनकी चतुर माता ने इन दोनों शिशुओं का लालन पालन किया। इनको मदद देने के लिये महाराणा ने मांडलगढ़ के मेहता देवीचन्दजी को लिखा था। लेकिन बजाय मदद देने के इनका जागीरी का गाँव भी जप्त हो गया। इन दोनों शिशुओं के बालिग होने पर महाराणाजी ने इनके नाम का नवलपुरा गाँव संवत् १९०४ में ४५) साल में इस्तमुरार कर दिया। यह गाँव अब तक इस परिवार के पास चला आ रहा है। इसका रकवा करीब १५ हजार बीघा है। जब दरबार की नाराजी के कारण मेहता रामसिंहजी मेवाड़ छोड़कर बाहर चले गये उस समय जोरावरसिंहजी ने उनका साथ दिया और उनके साथ रहते हुए ब्यावर में स्वर्गवासी हुए। इनके पुत्र मोखमसिंहजी हुए। मोखमसिंहजी के पुत्र रघुनाथसिंहजी तथा पौत्र हरनाथसिंहजी इस समय विद्यमान हैं।

मेहता जवानसिंहजी—ये बड़े प्रभावशाली पुरुष हुए। इन्होंने अपनी स्थिति को बहुत उन्नत किया। इनको दरबार से कई बार सिरोपाव मिले। ये बड़े बहादुर प्रकृति के आदमी थे। १९१० में इनका स्वर्गवास हुआ। इनके चतुरसिंहजी और कृष्णलालजी नामक २ पुत्र हुए। ये दोनों धार्मिक वृत्ति के पुरुष थे।

मेहता चतुरसिंहजी—आपने उदयपुर आकर निवास किया। संवत् १८९५ में आपका जन्म हुआ। आपने राजनगर, मेजा, भीमलत आदि परगनों का मुकाता लिया। कुछ समय बाद आप एकलिंगजी के मन्दिर के दरोगा बनाये गये। इसके बाद आप हुकुम खर्च के खजाने पर मुकर्रर किये गये। आपको दरबार ने हाथी की बैठक, अमरशाही पगड़ी, डंकों की पछेवड़ी, गोठ की जीमण आदि इज्जतें दीं। इसके बाद आप अंतिम समय तक महाराणा शम्भूसिंहजी की महाराणी के कामदार रहे। आप अपना अत्यधिक समय ईश्वर उपासना ही में लगाते थे। इस तरह पूर्ण धार्मिक जीवन बिताते हुए संवत् १९७३ में आप स्वर्गवासी हुए। आपने सहेलियों की बाड़ी के पास एक बगीचा बनवाया। मेहता चतुरसिंहजी के इन्द्रसिंहजी मदनसिंहजी, मालुमसिंहजी तथा जालिमसिंहजी नामक ४ पुत्र हुए और इसी प्रकार मेहता कृष्णलालजी के माधवसिंहजी और गोविन्दसिंहजी नामक २ पुत्र हुए। इन बंधुओं में मालुमसिंहजी का स्वर्गवास संवत् १९६५ में और माधवसिंहजी का संवत् १९८४ में हो गया।

मेहता चतुरसिंहजी का परिवार—मेहता इन्द्रसिंहजी का जन्म संवत् १९१७ में हुआ। आपको सरहद के कत्ल के मामलों में और भीलों में अमन अमान रखने में महाराणा फतहसिंहजी ने कई इनाम दिये और रियासत के बाला आफीसर व अंग्रेज आफीसरों ने कई उत्तम सार्टीफिकेट दिये। आप लसाड़िया, गढ़ी, झाबुआ आदि जिलों में बहुत अर्से तक तहसीलदार रहे और बाद में ऋषभदेवजी तथा एकलिंगजी के दारोगा रहे। आपके पुत्र कुन्दनसिंहजी इस समय मेवाड़ के एकाउन्टेण्ट आफिस में इन्सपेक्टर हैं।

मेहता मदनसिंहजी कई ठिकानों के नायब मुंसरीम तथा नायब हाकिम रहे। इस समय कुरावड़ ठिकाने के नायब मुंसरीम हैं। आपने अपने भाई जालमसिंहजी के पुत्र फतहलालजी को दत्तक लिया है। मेहता मालुमसिंहजी के पुत्र मनोहरसिंहजी मेवाड़ में सब इन्सपेक्टर पोलीस हैं। इनके पुत्र प्रतापसिंहजी, सोभागसिंहजी और जीवनसिंहजी हैं। मेहता जालिमसिंहजी कोठारिये के नायब मुंसरिम हैं। आपको साधु सत्संग व धार्मिक ग्रंथों के अवलोकन का ज्यादा प्रेम है। आपके पुत्र बलवंतसिंहजी तथा फतहलालजी हैं।

मेहता कृष्णसिंहजी का परिवार—मेहता कृष्णसिंहजी के बड़े पुत्र मेहता माधवसिंहजी थे। आपने मेवाड़ में सबसे पहले मेट्रिक पास की। आपकी लिखित "माप विद्या प्रदर्शनी" नामक पुस्तक का बहुत प्रचार हुआ आपने १५ वर्ष तक परिश्रम कर मेवाड़ के प्रत्येक गाँव की अक्षांस देशांश रेखा का मेवाड़ की लग्न सारिणी नामक एक ग्रंथ तयार किया था। आपके पुत्र रत्नसिंहजी साहित्यिक क्षेत्र में प्रेम रखते थे। इनका संवत् १९७२ में २५ साल की आयु में स्वर्गवास हो गया। मेहता गोविन्दसिंहजी के मनोहरसिंहजी तथा सज्जनसिंहजी नामक २ पुत्र हैं।

चतुर-साम्भर

चतुर साम्भर गौत्र की उत्पत्ति

इस गौत्र के इतिहास को देखने से पता चलता है कि पंवार वंशीय राजपूत खेमकरणजी के बेटे सामरसाजी हुए। इन्हीं के नाम से साम्भर गौत्र की उत्पत्ति हुई।

इसी वंश में आगे चलकर शाह जिनदत्तजी साम्भर हुए। आपने श्री सिद्धाचलजी की यात्रा का बड़ा भारी संघ निकाला। वहाँ पर एक बड़ा भारी स्वामी वात्सल्य किया गया। इसमें भोजन की बहुत चतुराई की। जिससे मुग्ध होकर वहाँ के चतुरविध संघ ने आपको 'चतुर' की पदवी दी।

इसी वंश में आगे चलकर मेड़ते में शोभाजी के पश्चात् क्रमशः सोडलजी, मेलोजी, पोकोजी लालोजी, वालोजी, जसोजी, गुणोजी, टीलोजी, मालोजी, भीमचन्दजी और उनके पुत्र रायचन्दजी हुए।

चतुरों का खानदान, उदयपुर

रायचन्दजी के वंश में खीमसीजी, तेजसीजी, लखमीचन्दजी और उनके पुत्र जोरावरमलजी हुए। उन्नीसवीं शताब्दी में मेड़ता निवासियों पर तत्कालीन नरेश का कोप होगया जिससे वहाँ से कई लोग शहर छोड़कर बाहर चले गये। उसी सिलसिले में संवत् १८७६ में जोरावरमलजी के पुत्र उम्मेदमलजी पहले पहल मेड़ते से उदयपुर में आये।

उम्मेदमलजी—सेठ उम्मेदमलजी चतुर पहले पहल फ़ौज में नौकरी करने के लिये जोधपुर गये। वे यहाँ आकर पहले पहल सेठ ठाकरसीदास ज्ञानमल की दुकान पर ठहरे। यह दुकान उस समय जागीरदारों के साथ लेनदेन का काम करती थी। उसी के साझे में आपने व्यापार करना शुरू किया। जब महाराणा भीमसिंहजी की शादी बूंदी में हुई तब आपको पोद्दारी का काम मिला था। बून्दी से वापस आने के बाद वहाँ आपने अपनी स्वतन्त्र दुकान कायम की। आपका स्वर्गवास संवत् १९०२ में हुआ। आपके तीन पुत्र हुए जिनके नाम क्रम से कर्मचन्दजी, छोगमलजी और चन्दनमलजी थे। इनमें से कर्मचन्दजी का स्वर्गवास केवल २२ वर्ष की उम्र में होगया। आपके पुत्र श्रीमालजी हुए। छोगमलजी और चन्दनमलजी ने राज्य में बहुत पाया।



श्रीयुत रोशनलालजी चतुर का कुटुम्ब, उदयपुर.

छोगमलजी ने उदयपुर से सिद्धाचलजी का एक पैदल संघ निकाला था। छोगमलजी का स्वर्गवास संवत् १९२७ में और चन्दनमलजी का १९४७ में हुआ। छोगमलजी के पुत्र केशरीचन्दजी और चन्दनमलजी के पुत्र लक्ष्मीलालजी हुए। आप सब लोग बड़े दूरदर्शी और व्यापार दक्ष थे। उदयपुर में आपका बहुत सम्मान था। सेठ श्रीमालजी चतुर का १९७१ में और केशरीचन्दजी चतुर का संवत् १९५६ में स्वर्गवास होगया। लक्ष्मीलालजी अभी विद्यमान् हैं। सेठ श्रीमालजी ने बहुत परिश्रम करके उदयपुर में जैन पाठशाला की नींव डलवाई तथा आपके पुत्र चुन्नीलालजी ने कन्या पाठशाला स्थापित करवाई।

सेठ केशरीचन्दजी के पुत्र सेठ रोशनलालजी चतुर हैं। आप बड़े विद्या प्रेमी, धर्मवत्सल तथा सार्वजनिक कार्य्य प्रेमी पुरुष हैं। उदयपुर के अन्तर्गत आपने कठोर प्रयत्न करके कई सार्वजनिक कार्य्यों की नींव डाली, जिनमें से उदयपुर की जैन धर्मशाला मुख्य है। यह धर्मशाला बहुत विशाल है और सं.१९६५ में बनी है। इसमें अभी तक करीब दो लाख रुपया लग चुका है। यह आपही के प्रयत्न का फल है कि उदयपुर में इतनी विशाल धर्मशाला बनकर तैय्यार हो गई। इसके पश्चात् संवत् १९८३ में आपने सतत प्रयत्न कर उदयपुर में भोपाल जैन बोर्डिङ्ग हाउस की नींव अपने पास से दो हजार रुपया देकर डलवाई। इसमें जैन छात्रों को भोजन, वस्त्र देकर पढ़ाया जाता है। इसके पश्चात् आपने जैन श्वेताम्बर लायब्रेरी की स्थापना करीब ५०० पुस्तकें अपने पास से देकर करवाई। यह लायब्रेरी भी बहुत सफलता के साथ इस समय चल रही है। संवत् १९८३ में आपने केशरियाजी में श्री तपागच्छाचार्य्य श्री सागरानन्दसूरिजी की अध्यक्षता में ध्वजा दण्ड चढ़वाया। इसी दिन श्री करेडाजी नामक तीर्थ स्थान में ध्वजा दण्ड चढ़ाया गया तथा इसी अवसर पर अपके तरफ से यहां पर तीन मूर्त्तियां स्थापित की गईं। आपने एक बड़ा स्वामिवत्सल किया और ऋषभदेवजी में भी दिगम्बरियों को छोड़कर सारे गाँव को स्वामिवत्सल के रूप में जीमण दिया।

मतलब यह है कि उदयपुर के विद्या प्रचार, सार्वजनिक जीवन और धार्मिक जीवन के सेठ रोशनलालजी प्राण स्वरूप हैं। उदयपुर में जैनियों की शायद ही कोई ऐसी संस्था हो जिसमें आपका हाथ न हो। विद्या और धर्म से आपको बेहद प्रेम है। आप हृदय की बीमारी के रहते हुए भी प्रत्येक मास में एक चतुर्दशी का उपवास करते हैं। स्थानीय विद्याभवन नामक संस्था मेहता मोहनसिंहजी और आप दोनों के प्रयत्न से स्थापित हुई। इसके अतिरिक्त आपने उसमें १५००) रुपये की सहायता भी प्रदान की। आप स्थानीय आनरेरी मजिस्ट्रेट हैं, म्युनिसिपल बोर्ड के व्हाईस प्रेसिडेण्ट हैं। तथा केसरियाजी की प्रबन्ध कारिणी समिति के मेम्बर भी रहे हैं।

आपके बड़े पुत्र मनोहरलालजी हैं। इस समय आप एम० ए० एल० एल० बी० के फायनल में पढ़ रहे हैं तथा छोटे पुत्र पार्श्वचन्दजी एफ० ए० में विद्याध्ययन कर रहे हैं तथा प्रकाशमलजी मिडिल में पढ़ रहे हैं।

सेठ श्रीमालजी भी केशरियाजी की प्रबन्ध कारिणी समिति के मेम्बर थे। आपके पुत्र सेठ चुन्नीलाल जी भी केसरियाजी की प्रबन्ध कारिणी के मेम्बर रहे। आपका स्वर्गवास संवत् १९८२ की आसोजसुदी ९ में हो गया। आपके दो पुत्र हैं जिनके नाम फतेलालजी तथा ओंकारलालजी हैं। फतेलालजी म्यु० बोर्ड में मेम्बर रह चुके हैं। वर्तमान में आप दोनों ही सज्जन फर्म का संचालन करते हैं। फतेलालजी के पुत्र रणजीतलालजी मेट्रिक में पढ़ रहे हैं तथा लक्ष्मीलालजी के पुत्र रखबलालजी बालक हैं।

इस खानदान की विशेषता यह है कि विना किसी विरोध के पांच पीढ़ियों से आप लोग शामिल व्यवसाय कर रहे हैं। इस परिवार की उदयपुर में बहुत अच्छी प्रतिष्ठा है।

मुराड़िया

मुराड़िया गौत्र की उत्पत्ति

मण्डोवर नगर के राठोड़ वंशीय राजा चम्पकसेन बड़े मशहूर हो गये हैं। आप ठाकुर गौत्र के थे। आपको जैनाचार्य्य श्री कनकसेनजी ने जैन धर्म का प्रतिबोध देकर श्रावक बनाया। आगे चल कर आपके खानदान में सींगलजी, अजयभूतजी, संतकुमारजी, अजयपालजी तथा आमाजी नामक प्रसिद्ध पुरुष हुए आप लोगों ने हजारों लाखों रुपये शत्रुंजय, गिरनार आदि तीर्थों के संघ निकालने में, मंदिर बनवाने में तथा बड़े २ स्वामि वत्सल करने में खर्च किये थे। इसी परिवार में अजयपालजी की भार्य्या लूणादे सती हुई जिनका चबूतरा भीनमाल के पश्चिम दिशा में तालाव के किनारे बना हुआ है।

कहा जाता है कि उक्त आमाजी के यहाँ दाँत का व्यापार होता था। एक समय आपने एक व्यापारी को दांत नहीं वेचे और बहुत मरोड़ की। इस व्यापार में दो लाख का नुकसान गया। फिर भी दाँत नहीं बेचे। इस मरड़ से आप मुरड़िया नाम से मशहूर हुए। तभी से मुरड़िया वंश की स्थापना हुई।

मुराड़िया परिवार का परिचय, उदयपुर

उपरोक्त आमाजी के वंशजों में शिवदासजी मुरड़िया नामक प्रभावशाली व्यक्ति हो गये हैं। आपके भोजाजी, रावतजी, हीराजी तथा खेमाजी नामक चार पुत्र हुए। आप लोगों का मूल निवासस्थान भीन

माल था। वहाँ से इस परिवार के प्रसिद्ध पुरुष हीराजी को संवत् १६३४ में उदयपुर के तत्कालीन महाराणा वीरवर प्रताप ने भामाशाह के द्वारा बड़े आदर सहित बुलाकर उदयपुर में बसाया। तभी से आपके वंशज उदयपुर में निवास कर रहे हैं। हीराजी के गोनाजी, बछराजजी, देवाजी तथा दूदाजी नामक चार पुत्र हुए। मुरड़िया बच्छराजजी ने उदयपुर में शीतलनाथजी के मंदिर में ८५०००) की लागत से बावन जिनालय बनाये। आपके लालाजी तथा लोलाजी नाम के दो पुत्र हुए। लालाजी के पुत्र नगराजजी ने प्रसाद में एक बड़ा मंदिर बनाया तथा उदयपुर में शांतिनाथजी के मंदिर की प्रतिष्ठा करवाई। आपके हाथों से अपनी कुलदेवी की प्रतिमा नदी में गिर गई। तभी से इस परिवार वाले कुलदेवी के बदले पीपल की पूजा करते हैं। आगे जाकर इस परिवार में मुरडिया श्रीलालजी बड़े ही नामांकित व्यक्ति हुए। आपके अम्बावजी, चम्पालालजी, ज्ञानचन्दजी, फतेलालजी, प्यारचन्दजी तथा अर्जुनलालजी नामक छः पुत्र हुए। आप सब भाइयों के परिवार इस समय उदयपुर में निवास कर रहे हैं।

मुरड़िया अम्बावजी—आपका सं० १८९५ में जन्म हुआ। आप प्रारंभ में उदयपुर राज्य के असिस्टंट स्टेट इंजीनीयर तथा संवत् १९२५ में स्टेट इंजीनीयर के पद पर नियुक्त किये गये आपके द्वारा कई बड़े २ काम किये गये हैं। उदयपुर के सुप्रसिद्ध और अत्यंत ही भव्य शम्भूनिवास महल, जगननिवास तथा नाहर मगरे में शम्भू प्रकाश तथा शम्भूविलास नामक महल आप ही की निगरानी में बनवाये गये थे। इसी प्रकार सज्जनगढ़ और कई सड़कें भी आपके द्वारा बनवाई गईं थीं। आपकी इन बहु मूल्य सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको सं० १९३६ में बलेणा घोड़ा का सम्मान बख्शा। इसी तरह महाराणा शम्भूसिंहजी ने भी आपको रैन नामक गाँव व एक बाड़ी इनायत कर सम्मानित किया था। महाराणा सज्जनसिंहजी की भी आप पर बड़ी कृपा थी। वे इनको अम्बाव राजा के नाम से सम्बोधित करते थे। महाराणा फतेसिंहजी आपसे बड़े प्रसन्न रहे। आपका संवत् १९५१ में स्वर्गवास हुआ। आपका अग्नि-संस्कार महासतियों में हुआ। तथा वहीं पर आपकी छत्री भी बनी हुई है। आपके कोई पुत्र न होने से आपके नामपर आपके छोटे भाई ज्ञानजी के छोटे पुत्र हीरालालजी दत्तक आये।

मुरड़िया हीरालालजी—आपका सं०१९२० में जन्म हुआ था। आप ने भी पी० डब्ल्यू० डी० में सर्विस की। आपके द्वारा कुम्भलगढ़ के महल, चित्तौड़गढ़ का फतह प्रकाश महल, उदयपुर का मिण्टहॉल (दरबार हॉल) आदि २ कई सुन्दर भवन बनवाये गये। जिनमें लाखों रुपये खर्च हुए। इसके अतिरिक्त भारत प्रसिद्ध रमणीय "सहेलियों की बाड़ी" नामक प्रसिद्ध बगीचा भी आपकी निगरानी में बना था। इसी प्रकार स्टेट की कई जीनिंग फेक्टरियाँ, तालाब वगैरह आपके द्वारा निर्मित करवाये गये। आपकी

इन सेवाओं से महाराणाजी बड़े प्रसन्न हुए। आपको सं १९८९ में बैठक का सम्मान प्राप्त हुआ। आपके बसंतीलालजी एवं सुन्दरलालजी नामक दो पुत्र हैं।

बसन्तीलालजी मुरड़िया—आपका सं० १९५२ में जन्म हुआ। आप बड़ी तीक्ष्ण बुद्धि के सज्जन हैं। आप देहरादून फारेस्ट कालेज की परीक्षा में सारी युनिवर्सिटी में प्रथम नम्बर से पास हुए थे इसके उपलक्ष्य में आपको मेडल्स भी मिले थे। वर्तमान में आप मेवाड़ स्टेट के कन्सरवेटर के पद पर काम कर रहे हैं। आपके मनोहरसिंहजी, सुगनसिंहजी, मोतीसिंहजी तथा वीरसिंहजी नामक चार पुत्र हैं। इनमें से मनोहर सिंहजी बी० एस० सी० आनर्स की परीक्षा में उत्तीर्ण हो चुके हैं।

सुन्दरलालजी—आपका जन्म संवत् १९६० में हुआ। आपने एफ० एस० सी० तक पढ़ाई कर बनारस युनिवर्सिटी से सिवल इंजिनिरिंग पास की। इस समय आप उदयपुर स्टेट के नवीन रेलवे डि० में असिस्टेंट इंजीनियर हैं।

चम्पालालजी मुरडिया—आप मुरडिया श्रीलालजी के पुत्र तथा अम्बावजी के छोटे भ्राता थे। आपका सं० १८९८ में जन्म हुआ था। आप बड़े व्यवस्थापक, दूरदर्शी तथा साहसी व्यक्ति थे। आपने आरज्या ठिकाने की व्यवस्था बड़ी योग्यता से की। आप बड़े प्रसन्न चित्त तथा उदार हृदय के सज्जन थे। आपका सम्वत् १९६४ में स्वर्गवास हुआ। आपके नाम पर आपके छोटे भ्राता प्यारचंदजी के पुत्र मालम-सिंहजी गोद आये।

ज्ञानमलजी मुरडिया—आप मुरडिया श्रीलालजी के तीसरे पुत्र थे। आपके हमीरसिंहजी एवं हीरालालजी नामक दो पुत्र हुए। इनमें हीरालालजी अम्बावजी के नाम पर दत्तक चले गये हैं।

हमीरसिंहजी मुरडिया—आपका सम्वत् १९२५ में जन्म हुआ था। आप बड़े ही सज्जन थे, जाति सुधार के कामों में आप बड़ी दिलचस्पी से भाग लेते हैं। आपने मेवाड़ के ४४ गाँव के पंचों की सम्मति से जाति सुधार के नियम भी बनवाये थे। आप बड़े विवेकशील तथा दूरदर्शी सज्जन थे। अभी कुछ माह पूर्व आपका स्वर्गवास हुआ। आपके मदनसिंहजी एवं रणजीतसिंहजी नामक दो पुत्र हुए।

मदनसिंहजी मुरडिया—आपका सन् १८९१ में जन्म हुआ। आपने मेट्रिक्यूलेशन पास कर गवर्नमेंट के खर्चे से सन् १९१४ में मुरादाबाद पोलिस ट्रेनिंग में शिक्षा प्राप्त की। तदनंतर आपने अजमेर मेरवाड़ा तथा गवर्नमेंट रेलवे पोलिस में करीब १६ वर्ष तक सब इन्सपेक्टर के पद पर काम किया और वहाँ से पेंशन मिलने पर उदयपुर के महाराणाजी ने आपको मेवाड़ में सुपरिन्टेन्डेन्ट पोलिस के पद पर नियुक्त कर सम्मानित किया। वर्तमान में आप भीलवाड़ा डिवीज़न के पोलिस सुपरिन्टेन्डेण्ट हैं। आप बड़े



श्री सेठ रोशनलालजी चतुर, उदयपुर.



श्री हमीरसिंहजी मुरड़िया, उदयपुर.



श्री रणजीतसिंहजी मुराड़िया बी. ए. एल. एल. बी., उदयपुर.



श्री जोधसिंहजी मेहता बी. ए. एल. एल. बी , उदयपुर.

ही कार्य कुशल, योग्य व्यवस्थापक तथा पोलिस के कामों में निपुण हैं। इस लाइन में आपका अनुभव काफी बढ़ा चढ़ा है। आपके रतनसिंहजी तथा मोहनसिंहजी नामक दो पुत्र हैं।

रतनसिंहजी मुरड़िया—आपका सन् १९११ में जन्म हुआ। आप बड़े उत्साही तथा मिलनसार सज्जन हैं। आप एफ० एस० सी० की परीक्षा पास कर इस समय एग्रीकल्चर कॉलेज पूना में विद्याध्ययन कर रहे हैं। आपके भगवतसिंहजी नामक एक पुत्र हैं। मोहनसिंहजी मुरड़िया का जन्म सन् १९१५ में हुआ। आप बड़े तीक्ष्ण बुद्धि के युवक हैं। आपने आगरा युनीवर्सिटी से प्रथम दर्जे में F. Sc. की परीक्षा पास की तथा इस समय अलाहाबाद युनिवर्सिटी में B. Sc. की परीक्षा में बैठे हैं। आप बड़े मिलनसार तथा उत्साही नवयुवक हैं।

रणजीतसिंहजी मुरड़िया—आपका सन् १८९६ में जन्म हुआ। आप बड़े योग्य, शिक्षित, गम्भीर तथा शांत प्रकृति के सज्जन हैं। आपने आगरा युनिवर्सिटी से बी० ए० की परीक्षा पास की। तदनन्तर आप एल० एल० बी० की परीक्षा में अहमदाबाद युनिवर्सिटी की प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। इसके पश्चात् आप दो वर्ष तक आबू के ए० जी० जी के आफिस में जुडिशियल का काम करते रहे। मेवाड़ के उच्च अधिकारियों ने आपकी कार्य-कुशलता तथा प्रबन्ध चातुरी से प्रसन्न होकर आपको उदयपुर सिटी मजिस्ट्रेट के पद पर नियुक्त कर सम्मानित किया। इसके बाद आप क्रमशः बागोर, खमनोर, राजनगर, आसिन्द आदि २ जिलों के हाकिम रह चुके हैं। वर्त्तमान में आप लसाड़िया जिले के हाकिम हैं। आप बड़े लोकप्रिय तथा अनुभवी सज्जन हैं। प्रजा व सरकार दोनों ही आपके कामों से बड़ी प्रसन्न रहती हैं। उदयपुर की ओसवाल समाज में आपकी अच्छी प्रतिष्ठा है। आपके बाबू जसवन्तसिंहजी, प्रतापसिंहजी तथा महेन्द्रसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं। इनमें जसवन्तसिंहजी बड़े तीक्ष्ण बुद्धि वाले, सुशील तथा होनहार बालक हैं। आपको चित्रकारी का बहुत शौक है। आप इस समय विद्याभवन में छठी क्लास में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

फतहलालजी मुरड़िया—आप श्रीलालजी के चौथे पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९०५ में हुआ। आप बुद्धिमान एवं साहसी पुरुष थे। आपका संवत् १९५९ में स्वर्गवास हुआ। आपके छत्रसिंहजी नामक एक पुत्र हैं। छत्रसिंहजी मुरड़िया का जन्म संवत् १९५९ में हुआ। आप बड़े मिलनसार सज्जन हैं। आप वर्त्तमान में केलवा जागीरदार के यहां नामे सीगे की अफसरी का कार्य्य करते हैं। आप हिसाब के कामों में बड़े निपुण हैं। आपके सुजानसिंहजी, दलपतसिंहजी, जोधसिंहजी तथा धनसिंहजी नामक चार पुत्र हैं।

श्री प्यारचंदजी मुरड़िया—आप श्रीलालजी के पांचवे पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९१३ में हुआ। आप बड़े विचारशील तथा सहिष्णु प्रकृति के सज्जन थे। आप इंजिनीयरिंग डि० में सर्विस करते थे। आपकी निगरानी में कई भव्य इमारतें, तालाब, सड़कें वगैरह बनीं। आपकी इन सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणाजी ने, आपको ऋषभदेवजी तीर्थ के प्रबन्ध के सुपरिन्टेन्डेन्ट पद पर नियुक्त कर सम्मानित किया था। इसके पश्चात् आपने कई पदों पर काम किया। आप बड़े मिलनसार तथा जैन धर्म के जानकार थे। आप बड़े धार्मिक पुरुष थे। आपका संवत् १९८१ में स्वर्गवास हुआ। आपके चार पुत्र हुए जिनमें से श्री मालूमसिंहजी विद्यमान हैं। शेष सब आपकी विद्यमानता में ही स्वर्गवासी हो गये थे।

मुरड़िया मालूमसिंहजी—आपका जन्म संवत् १९४६ में हुआ। आपने एफ० ए० तक शिक्षा प्राप्त की। तदनन्तर आप स्टेट की ओर से बीजोल्यां के प्रथम श्रेणी के उमराव राव सवाई केशरीसिंहजी की नाबालिगी के समय गार्डियन नियुक्त हुए। इसके पश्चात् आप भदेसर ठिकाने के प्रधान कार्यकर्त्ता तथा बानसी ठिकाने के जुडिशियल व रेव्हेन्यू के व्यवस्थापक पद पर नियुक्त हुए। तदनन्तर आप इसी ठिकाने की बागडोर सम्हालने के जवाबदारी पूर्ण कामको करते रहे। आप बड़े योग्य व्यवस्थापक तथा मिलनसार सज्जन हैं। आपके संग्रामसिंहजी तथा भीमसिंहजी नामक दो पुत्र हैं। आप दोनों बन्धु पढ़ते हैं।

अर्जुनलालजी मुरड़िया—आप श्रीलालजी के छटे पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९१७ में हुआ। आप सरल प्रकृति के धार्मिक पुरुष थे। आपका संवत् १९७१ में स्वर्गवास होगया। आपके बलवन्तसिंहजी एवम् रोशनलालजी नामक दो पुत्र हैं। बलवन्तसिंहजी ने मेट्रिक तक पढ़ कर सब इन्स्पेक्टर के ओहदे पर काम किया। वर्तमान में आप फारेस्ट में रेंज अफसर हैं। रोशनलालजी का जन्म संवत् १९५६ में हुआ। आपने भी मेट्रिक पास कर एल० सी० पी० एस० नामक मेडिकल डिग्री को प्राप्त किया है। इस समय आप नीमच में सर्विस करते हैं। आपके जतनसिंहजी, लक्ष्मीलालजी, चिमनसिंहजी तथा भंवरलालजी नामक चार पुत्र हैं।

मुरड़िया शोभालालजी वकील का खानदान, उदयपुर

इस खानदान के सज्जन उदयपुर में निवास करते हैं। इस परिवार में मुरड़िया शोभालालजी एवं जवाहरचन्दजी दोनों भ्राता हुए।

मुरड़िया शोभाचन्दजी एवम् जवाहरचन्दजी—मुरड़िया शोभाचन्दजी बड़े प्रसिद्ध वकील हैं। आप इस समय उदयपुर में वकालात करते हैं। अखिल मारवाड़ के श्वेताम्बर जैन धर्मानुयायियों के आप

आनरेरी वकील हैं। आपके कुँवर हमीरमलजी मुरड़िया नामक पुत्र हैं। मुरड़िया जवाहरचन्दजी भी बड़े नामी वकील हो गये हैं।

कुँवर हमीरमलजी मुरड़िया—आप इस समय एल० एल० बी० में इन्दौर में पढ़ रहे हैं। आप बड़े तीक्ष्ण बुद्धि वाले, उत्साही तथा मिलनसार सज्जन हैं। जातीय सुधार सम्बन्धी कामों में तथा सार्वजनिक कार्यों में आप बड़ी लगन और उत्साह के साथ भाग लेते हैं। आपको कई बड़े २ महानुभावों की ओर से अच्छे २ सार्टिफिकेट प्राप्त हुए हैं। ओसवाल समाज को आप सरीखे होनहार नवयुवकों से बहुत आशा है।

शिशोदिया

शिशोदिया गौत्र की उत्पत्ति

मेवाड़ के शिशोदिया वंशीय महाराणा कर्णसिंहजी के पुत्र श्रवणजी से इस गौत्र की उत्पत्ति हुई है। श्रवणजी ने तेरहवीं शताब्दी में यति श्री यशोभद्रसूरिजी (शांतिसूरिजी) से जैन धर्म की दीक्षा ग्रहण कर श्रावक के बारह व्रत अंगीकार किये। तभी से आपके वंशज जैन मतानुयायी हुए तथा शिशोदिया गौत्र के नाम से प्रसिद्ध हुए।

शिशोदिया खानदान, उदयपुर

शिशोदिया वंश के आदि पुरुष श्रवणजी के वंश में आगे जाकर डूँगरसीजी बड़े नामी व्यक्ति हो गये हैं। आप महाराणा लाखाजी के कोठार के काम पर नियुक्त थे। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणाजी ने आपको सिरोपाव तथा सुरपुर नामक गाँव जागीर में प्रदान कर सम्मानित किया था। इस समय भी पुर के पास सरूप्रियों के महल के खंडहर विद्यमान हैं। आप लोग सुरपुर के जागीरदार होने की वजह से सरूप्रिया नाम से मशहूर हुए। डूँगरसीजी ने आदिश्वर का एक मंदिर बनाया जो इस समय इन्दौर स्टेट में रामपुरा नगर के पास है। आपकी कई पीढ़ियों बाद इस वंश में वरसिंहजी नामक व्यक्ति हुए। इनके रंगाजी तेजाजी तथा मियाजी नामक तीन पुत्र हुए।

शिशोदिया तेजाजी का खानदान उदयपुर में व रंगाजी का बेगूँ में निवास करता है। तेजाजी की चौथी पीढ़ी में वीरवर सिंघवी दयालदासजी नामक एक अत्यन्त ही नामांकित व्यक्ति हुए।

संघवी दयालदासजी का घराना

संघवी दयालदासजी—आप बड़े ही वीर तथा पराक्रमी सज्जन थे। आप तथा आपके पूर्वज मारवाड़ में रहते थे। तदनंतर आपके साहस तथा वीरता से प्रसन्न होकर उदयपुर के तत्कालीन महाराणा ने आपको उदयपुर बुला लिया। तभी से आपके वंशज उदयपुर में निवास कर रहे हैं। संघवी दयालदासजी ने उदयपुर में आकर अपने साहस, वीरता तथा व्यवस्थापिका शक्ति का परिचय देना प्रारम्भ किया। आपके इन गुणों को देखकर उदयपुर के महाराणा ने आपको प्रधानगी के उच्च पद पर विभूषित किया जिसे आपने बहुत योग्यता से सम्पादित किया। आपका पूर्ण परिचय हम इस ग्रन्थ के 'राजनैतिक और सैनिक महत्व' नामक अध्याय के उदयपुर विभाग में दे चुके हैं। आपके सांवलदासजी नामक एक पुत्र हुए। इसके बाद का इतिहास अब तक अप्राप्य है।

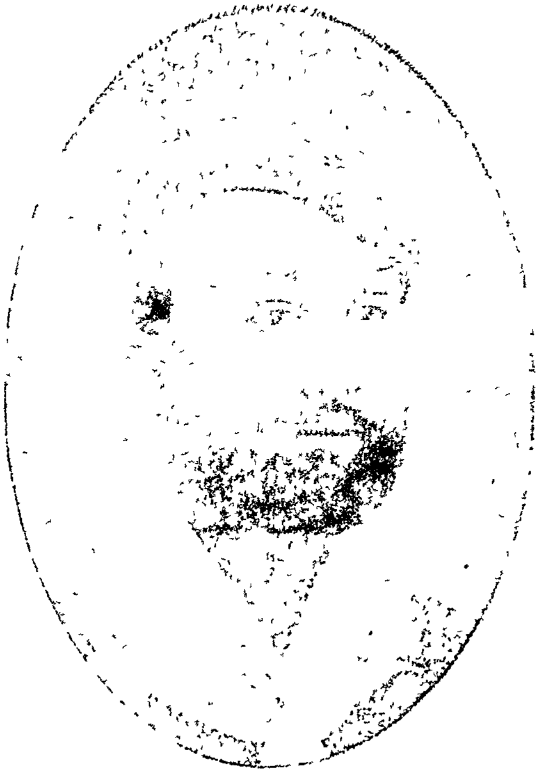
बेगूं का शिशोदिया खानदान

हम ऊपर लिख आये हैं कि वरसिंहजी के ज्येष्ठ पुत्र रंगाजी का परिवार बेगूं में निवास करता है। इस खानदान में भी बहुत बड़े २ व्यक्ति हो गये हैं। शिशोदिया रंगाजी की पाँचवीं पीढ़ी में प्रहलादजी नामक एक बड़े नामाङ्कित व्यक्ति हुए।

शिशोदिया प्रहलादजी—आप बड़े वीर, साहसी तथा प्रभावशाली सज्जन थे। आपने अपने नाम से प्रहलादपुरा नामक एक गाँव भी बसाया था जो आज दौलतपुरा के नाम से मशहूर है। इस गाँव में आज भी आपकी छतरी बनी हुई है। आपने राज्य की बहुत सेवाएँ कीं जिनसे प्रसन्न होकर तत्कालीन महाराणाजी ने आपको संवत् १७७२ में एक कुआ, ३५ बीघा जमीन, बाग के वास्ते ४ बीघा जमीन, "नगर सेठ" की इज्जत आदि सम्मानों से सम्मानित किया। आपके वंशजों के पास इसका असली पट्टा तथा यह जागीर आज भी विद्यमान है तथा स्टेट में आज भी आप लोगों का वैसा ही सम्मान चला आता है। प्रहलादजी के बख्तसिंहजी नामक एक पुत्र हुए।

शिशोदिया बख्तसिंहजी—ऐसा कहा जाता है कि आपने अपने चाचा अर्जुनसिंहजी के साथ इन्दौर नरेश वीर मरहठा सरदार मल्हारराव होलकर की खूब सेवाएँ कीं जिनके उपलक्ष्य में आपको रामपुरा भानपुरा जिले में जागीरी तथा अन्य कई सम्मान इनायत किये गये थे। इसका एक रुक्का आपके वंशजों के पास मौजूद है। आपके महलों के खण्डहर आज भी रामपुरा में शिशोदिया के खण्डहर के नाम से मशहूर हैं। आपके पश्चात् आपके पौत्र शिवलालजी भी बड़े प्रसिद्ध सज्जन हुए हैं।

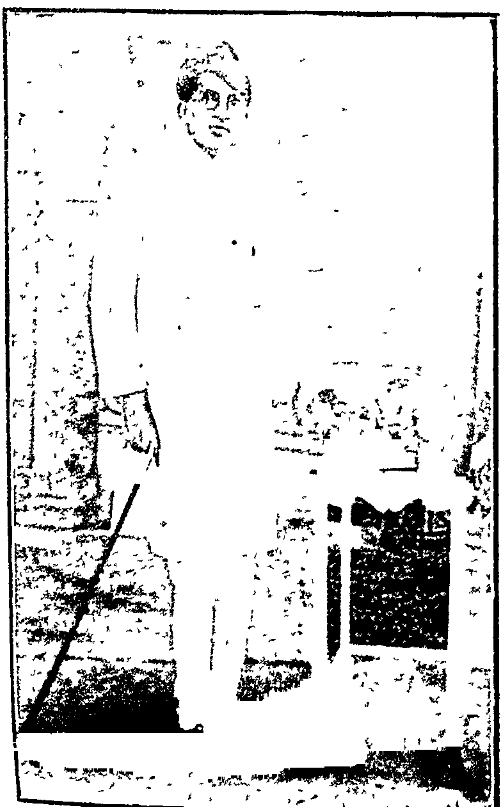
शिशोदिया शिवलालजी—आप बड़े योग्य तथा वीर पुरुष थे। आपको बून्दी रियासत की ओर



मेहता रुवलालजी ड्योढ़ीवाले, उदयपुर.



मेहता हिम्मतसिंहजी सरूप्रिया हाकिम, नाथद्वारा.





से वहाँ के बागी मीनों को दबाने के उपलक्ष में दो गाँव जागीर में बक्षे गये थे जिसकी सनद भी आपके वंशजों के पास है। इसके अतिरिक्त वेगूं ठिकाने ने आपकी कारगुजारी से प्रसन्न होकर आपको परतापपुरा नामक गाँव इनायत किया था। आपके किशोरसिंहजी, द्वारकादासजी तथा गोकुलचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें किशोरसिंहजी नवलजी के नाम पर दत्तक आये। किशोरसिंहजी के ब्रजलालजी, गिरधारीसिंहजी तथा गोविन्दसिंहजी नाम के पुत्र हुए। ब्रजलालजी की धर्मपत्नी अपने पति के साथ सती हुईं। गिरधारीसिंहजी के पुत्र तख्तसिंहजी के मनोहरसिंहजी, रघुवरसिंहजी तथा रघुनाथसिंहजी नामक पुत्र हैं। इसी प्रकार गोविन्दसिंहजी के यशवंतसिंहजी तथा इनके केशरीसिंहजी एवं गोवर्द्धनसिंहजी नामक पुत्र हैं। आप लोग इस समय सर्विस करते हैं। इसी प्रकार इस खानदान में शिशोदिया नथमलजी तथा हरिसिंहजी विद्यमान हैं। आप लोगों ने मेवाड़ राज्य में बहुत काम किये हैं तथा कई ओहदों पर भी रहे हैं।

शिशोदिया साहबलालजी का खानदान, उदयपुर

इस खानदान के प्रसिद्ध पुरुष डूंगरसीजी का वर्णन हम पिछले पृष्ठों में कर चुके हैं। आपके परिवार में एकलिंगदासजी बड़े नामी व्यक्ति हुए। आपने कई सार्वजनिक काम किये हैं। आपके द्वारा बनी हुई तितरड़ी के पासकी डाकन कोटना की सराय, तोरनवाली बावड़ी तथा उदयपुर में सरूप्रियों के घर के सामने का मन्दिर आज भी आपकी अमर कीर्ति के द्योतक हैं। आपके सात पुत्र हुए। इनमें यह खानदान साहबलालजी से सम्बन्ध रखता है। साहबलालजी के पन्नालालजी, रतनलालजी तथा गणेशलालजी नामक तीन पुत्र हुए।

वर्तमान में पन्नालालजी के पुत्र करणसिंहजी महकमा खास में तथा अर्जुनलालजी स्टेट हॉस्पिटल में डाक्टर हैं। रतनलालजी महकमा माल में मुलाजिम हैं। आपके पुत्र अमरसिंहजी महकमा बन्दोवस्त में सर्विस करते हैं तथा आपके पुत्र जवानसिंहजी ने साधु धर्म की दीक्षा ग्रहण करली है।

गणेशलालजी उदयपुर में सराफी का कारबार करते हैं। आपके तेजसिंहजी, नजरसिंहजी, चांदसिंहजी तथा हिम्मतसिंहजी नामक चार पुत्र हैं। इनमें तेजसिंहजी अपने व्यापार में भाग लेते हैं तथा नजरसिंहजी धनेरिया के नायब हाकिम (देवस्थान) तथा चांदसिंहजी इरिगेशन डि० में ओवरसियर हैं। हिम्मतसिंहजी का शिक्षण एम० एस० सी० एल० एल० बी० तक हुआ है। आप बड़े तीक्ष्ण बुद्धि वाले मेधावी सज्जन हैं। वर्तमान में आप नाथद्वारा में हाकिम तथा सिटी मजिस्ट्रेट के पद पर कार्य कर रहे हैं। आप बड़े ऊँचे विचारों के समाज सुधारक तथा मिलनसार सज्जन हैं। आप सुशिक्षित तथा बुद्धिमान महानुभाव हैं।

ड्योढ़ी वाले मेहता का खानदान, उदयपुर

इस खानदान के स्थापक श्रावणजी के तृतीय पुत्र सरीपतजी से यह खानदान प्रारम्भ होता है। ऐसा कहते हैं कि आपको महाराणा की ओर से सातगाँव जागीरी में देकर जनानी ड्योढ़ी का काम सौंपा गया था। इस से आप लोग ड्योढ़ी वाले मेहता के नाम से मशहूर हुए तथा आज तक आपके वंशजों को ड्योढ़ी का कार्य्य सुपुर्द है। सरीपतजी को महाराणाजी ने मेहता की पदवी प्रदान की। तब से आपके वंशज मेहता कहलाते हैं। आपकी तीसरी पीढ़ी में हरिसिंहजी तथा चतुर्भुजजी नामक नामांकित व्यक्ति हो गये हैं। आपको पांच गांव के पट्टे मिले थे जिन्हें आपने बसाया। आगे जाकर आपके वंशजोंमें मेहता मेघराजजी को छोड़कर आपका सारा कुटुम्ब साके के समय वीरता से लड़ता हुआ मारा गया। मेघराजजी महाराणा उदयसिंहजी के बड़े विश्वास पात्र थे। आप जनानी ड्योढ़ी तथा भण्डार का काम करते रहे। उदयपुर में आपने श्री शान्तिनाथजी का मन्दिर बनवाया। इसके अतिरिक्त आपने एक टीवा बनाया जो आप भी मेहतों का टीवा के नाम से मशहूर है। इसी खानदान में मेहता पूरनमलजी, चन्दरभानजी तथा लखमीचंदजी नामक तीनों भाई बड़े नामी हो गये हैं। आप लोगों ने उदयपुर में लक्ष्मीनारायणजी का मन्दिर बनवाया।

मेहता जवरचन्दजी—मेहता पूरनमलजी की दो तीन पीढ़ियों के बाद आप बड़े कारगुजार व्यक्ति हुए। आपको महाराणाजी ने इज्जत आबरू के साथ जनानी ड्योढ़ी का काम इनायत किया। इसमें आपने बड़ी योग्यता से सब काम संभाला जिससे प्रसन्न होकर महाराणाजी ने आपको छडगा का खेड़ा नामक गांव जागीर में बक्षा। इसके अतिरिक्त बलेणा घोड़ा, बैठक सभा, नामा पावण, पाटवी बरोबर कुरब के सम्मानों से सम्मानित किया। आपके स्वर्गवासी होने पर आपकी धर्मपत्नी आपके साथ सती हुई।

मेहता देवीचन्दजी और प्यारचंदजी—मेहता जवरचन्दजी के पश्चात् आप दोनों भ्राता मशहूर व्यक्ति हो गये हैं। आपकी सेवाओं के उपलक्ष में महाराणा शम्भुसिंहजी ने बलेणा घोड़ा, भीमशाही तुर्रा, तथा रुपेरी पविन्त्रा इनायत कर सम्मानित किया। इतना ही नहीं आपको ढावटा नामक गाँव भी जागीर में बक्षा गया था। महाराणा फतेसिंहजी ने भी आपको सोने का लंगर तथा हीरे की कण्ठी देकर सम्मा- किया था। आपके बड़े भाई मेहता देवीचन्दजी को जिकारा सोने का लंगर, हीरे की कण्ठी आदि का सम्मान भी इनायत किया गया था। मेहता प्यारचन्दजी ने अपने नाम पर अपने भाई मेहता देवीचन्द जी के मझले पुत्र मेहता पन्नालालजी को दत्तक लिया।

मेहता पन्नालालजी—आपने संवत् १९५२ से संवत् १९६७ तक जनानी ड्योढ़ी का काम बड़ी योग्यता के साथ किया। आप उदयपुर राज्य में एक प्रतिष्ठित पुरुष समझे जाते हैं। आपको दरबार

की ओर से कई सम्मान प्राप्त हैं। आपके मेहता रुघलालजी तथा नन्दलालजी नामक दो पुत्र हुए। मेहता रुघलालजी ने भी अपने पिताजी के बाद नौ साल तक जनानी ड्योढ़ी का काम किया। आप भी बड़े योग्य और समझदार व्यक्ति हैं। आपको उदयपुर राज्य की तरफ से बैठक, सुनहरी पघित्रा व सवारी में घोड़ा आगे रखने का सम्मान भी प्राप्त है। इसी प्रकार आपके पिताजी मेहता पन्नालालजी को भी यही सब सम्मान बक्षे गये हैं। मेहता रुघलालजी के रोशनलालजी, तेजसिंहजी, छगनमलजी, रणजीतलालजी तथा उदयलालजी नामक पांच पुत्र हैं। मेहता रोशनलालजी के समरथमलजी नामक एक पुत्र हैं। मेहता नन्दलालजी के लक्ष्मीलालजी नामक एक पुत्र है।

मेहता देवीचंदजी का परिवार—आपके मेहता इन्दरचन्दजी, मगनचन्दजी तथा पन्नालालजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें मेहता पन्नालालजी मेहता प्यारचन्दजी के नाम पर गोद चले गये। मेहता इन्दरचन्दजी के गिरधारीसिंहजी एवम् गोविंदसिंहजी नामक दो पुत्र हुए। इन में से मेहता गोविन्दसिंह जी अपने काका मगनचन्दजी के नाम पर दत्तक गये।

मेहता गिरधारीसिंहजी—आप बड़े योग्य तथा समझदार सज्जन हैं। आपके कार्यों से प्रसन्न होकर महाराणा भोपालसिंहजी ने आपको दरीखाने की बैठक, नाव की बैठक, बलेणा घोड़ा व सोने की पवित्रा बक्ष कर सम्मानित किया है। उदयपुर में आपकी अच्छी प्रतिष्ठा है। इस समय आप जनानी ड्योढ़ी का काम काज देखते हैं। आपके बिहारीलालजी, दुरजनमलजी, कनकमलजी, छगनमलजी, मीठालालजी तथा फतेहलालजी नामक छः पुत्र हैं।

कुंवर बिहारीलालजी—आप B. A. L. L. B. तक पढ़े हुए हैं। मेवाड़ में आप एक ऐसे सज्जन हैं जो बी० ए० में सर्व प्रथम उत्तीर्ण हुए थे। आपने अपने पुश्तहापुश्त के जनानी ड्योढ़ी के काम को छोड़कर डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेटी का काम किया। इस समय आप सिटी मजिस्ट्रेट के पद पर काम कर रहे हैं। आपके संतोखचन्दजी नामक पुत्र हैं। जिस समय भँ० संतोखचन्दजी का जन्म हुआ था उस समय बड़ा उत्सव किया गया था और आपके पड़दादा इन्दरसिंहजी सोने की निसन्नी पर चढ़े थे। कुँ० बिहारीलालजी को भी राज्य की ओर से दरबार में बैठक, नाव की बैठक, सोने का पवित्रा तथा सवारी में आगे घोड़ा रखने का सम्मान प्राप्त है। कुँ० कनकमलजी पोलिस में सुपरिन्टेन्डेन्ट की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। मेहता गोविन्दसिंहजी के पुत्र हजारीलालजी इस समय एल० एल० बी० में पढ़ रहे हैं।

इसी प्रकार मेहता देवीचन्दजी के पिता जवरचंदजी और गणराजजी दोनों सगे भ्राता थे। इसमें जवरचंदजी के वंशजों का वर्णन हम ऊपर दे चुके हैं। मेहता गणराजजी के दीपचन्दजी नामक एक पुत्र

हुए। मेहता दीपचन्दजी के लालचन्दजी, हरलालजी तथा शोभाचन्दजी नामक तीन पुत्र हुए। मेहता लालचंदजी ने भी जनानी ड्योढ़ी का काम किया।

मेहता हरलालजी तथा शोभाचन्दजी का परिवार—मेहता हरलालजी के दौलतसिंहजी, मोतीसिंहजी, शेरसिंहजी तथा ओंकारसिंहजी नामक चार पुत्र हैं। मेहता शोभाचन्दजी के गणेशलालजी, मदनसिंहजी, वख्तावरसिंहजी तथा धनलालजी नामक चार पुत्र हैं। मदनसिंहजी, ने भी जनानी ड्योढ़ी का काम किया हैं। गणेशलालजी मेहता जुहारमलजी के यहां पर दत्तक चले गये हैं। आपके चुन्नीलालजी तथा विजयसिंहजी नामक दो पुत्र हैं। इनमें से चुन्नीलालजी के भँवरलालजी नामक एक पुत्र हैं।

ड्योढ़ावाले मेहता की उपशाखा, उदयपुर

हम लोग ड्योढ़ी वाले मेहता के खानदान में मेहता मेघराजजी का वर्णन कर चुके हैं। इन मेहता मेघराजजी की चौथी पीढ़ी में मेहता अमरचन्दजी हुए। आपके जीवनदासजी, जयसिंहजी तथा विजयसिंहजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें से मेहता जीवनदासजी से ड्योढ़ी वाले मेहता का खानदान चला तथा जयसिंहजी से ड्योढ़ी वाले मेहता की उपशाखा चली।

मेहता अमरसिंहजी के पश्चात् क्रमशः धनरूपमलजी, गोकुलदासजी तथा रोड़जी हुए। मेहता रोड़जी के रूपजी, भोगीदासजी तथा चत्रभुजजी नामक तीन पुत्र हुए। इनमें भोगीदासजी के पुत्र मेहता मालदासजी बड़े नामांकित व्यक्ति हुए।

मेहता मालदासजी—आप बड़े वीर, साहसी तथा योग्य सेनापति थे। आपने उदयपुर स्टेट की ओर से कई सेनाओं में भाग लेकर अपनी वीरता एवं रणकुशलता का परिचय दिया था। मेवाड़ पर जिस समय मरहठों ने आक्रमण किये थे, उस समय आपके सेनापतित्व में मेवाड़ की सेना ने जो युद्ध कौशल तथा साहस का प्रदर्शन किया था उसका वर्णन हम "राजनैतिक तथा सैनिक महत्व" नामक शीर्षक के उदयपुर विभाग में पूर्णरूप से कर चुके हैं।

मेहता रूपजी के लालजी तथा लालजी के हेमराजजी नामक पुत्र हुए। आप बड़े नामी व्यक्ति होगए हैं। आपने जनानी ड्योढ़ी का काम बड़े अच्छे ढंग से किया जिससे प्रसन्न होकर महाराणा भीमसिंहजी ने आपको रांजपुरा और साँकरोदा गाँव के बदले आँजण नामक गाँव इनायत किया। आपके पुत्र हेमराजजी के नाम पर मेहता चत्रभुजजी के प्रपौत्र नेणचन्दजी गोद लिये गये। मेहता नेणचन्दजी को महाराणा स्वरूपसिंहजी बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे। आपके वेणीलालजी तथा वेणीलालजी के पुत्र तख्तसिंहजी विद्यमान हैं।

मेहता तखतसिंहजी वृद्ध तथा समझदार सज्जन हैं। आपके जोधसिंहजी एवं कन्हैयालालजी नामक दो पुत्र हैं। इनमें से कुँवर जोधसिंहजी बी० ए०, एल० एल० बी० हैं तथा इस समय आप मेवाड़ में नायब हाकिम हैं। कुँवर कन्हैयालालजी इण्टर में पढ़ रहे हैं।

घलूण्डिया

घलूण्डिया गौत्र की उत्पत्ति

ऐसा कहा जाता है कि राठौड़ वंशीय राजपूत घुड़िया शाखा में राजा चन्द्रसेन ने कन्नौज नामक नगर में भट्टारक शांतिसूर्यजी से संवत् ७३५ में जैनधर्म की दीक्षा ग्रहण कर की। इससे उस समय घुड़िया से गुगलिया गौत्र की स्थापना हुई। इसके बाद राठौड़ वंशीय लोग मण्डोवर आये। इसी वंश के शाह कल्लोजी ने गलूँड ग्राम में एक मन्दिर बनवाया। यहीं से गलूँडिया शाखा की उत्पत्ति हुई।

शाह माधोसिंहजी घलूण्डिया का खानदान, उदयपुर

इसके बाद इस वंश के लोगों ने संवत् १८२५ में मंडोवर से आकर जाशेर तथा सांभर नामक स्थानों पर मन्दिर बनवाया। शाह कल्लोजी के वंश में सूरोजी बड़े मशहूर तथा नामांकि व्यक्ति हो गये हैं। आप बड़े उदार चरित्र वाले तथा दानी सज्जन थे। कहते हैं कि मंडोर के प्रधान भंडारी समरोजी को मांडू के बादशाह ने पकड़ कर कैद कर लिया। उस समय उसे अठारह लाख रुपया देकर सूरोजी ने छुड़वाया। यहाँ आपने एक मन्दिर बनवाया तथा यज्ञ किया इसमें बहुत-सा रुपया खर्च हुआ।

कोठारिया के मनोरजी सुराना और आप दोनों मिलकर संवत् १६६७ में उदयपुर आये। आपके एक पुत्र हुआ जिनका नाम श्रीवंतजी था। श्रीवंतजी के खेमाजी, छितरजी, इसरजी, रतनाजी और ठाकुरसिंहजी नामक पाँच पुत्र उत्पन्न हुए।

सम्वत् १७४० में महाराणा श्री जयसिंहजी ने ठाकुरसिंहजी को गोसमाणो नामक गांव जागीर में दिया तथा सिरोपाव दिये। आपके उदयभानजी, कल्याणदासजी और वर्द्धभानजी नामक तीन पुत्र हुए।

वर्द्धभानजी ने लड़ाई में हाड़ा को मारा जिससे प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको सिरोपाव प्रदान किया। आपके पुत्र हँसराजजी तथा हँसराजजी के पुत्र शिवलालजी हुए।

शिवलालजी—आप महाराणा भीमसिंहजी के प्रधान नियुक्त रहे। आप बड़े वीर तथा पराक्रमी व्यक्ति थे। आपकी सेवाओं के उपलक्ष्य में मेवाड़ के तत्कालीन महाराणा ने आपको तथा आपकी स्त्रियों को पैरों में सोना बक्षा था। इतना ही नहीं वरन् आपको रियासत से सात गाँव की जागीर देकर पूर्ण रूप से सम्मानित किया था। आपने स्वर्गवासी होने पर आपकी पत्नी आपके साथ सती हुई जिनकी छत्री आज भी महा सतियों में मौजूद है। आपके कोई पुत्र न था। अतएव आपने अपने नाम पर अपने दामाद गेगराजजी को गोद लिये। इसके पश्चात् इस खानदान में चतुरसिंहजी घलुंडिया दत्तक आये। आप दरबार की चाकरी में रहे। आपको भी वही इज्जत हासिल थी जो पहले दीवान शिवलालजी को थी। आपका स्वर्गवास संवत् १९६८ में हो गया। आपके पुत्र शाह माधोसिंहजी घलूँडिया हैं। वर्तमान में आप ही इस खानदान में प्रमुख हैं। आपको महाराणा साहब फतेसिंहजी ने टकसाल पर दरोगा नियुक्त किये थे। आपका जन्म संवत् १९४२ में हुआ। आपकी भी दरबार में वही इज्जत चली आती है। आपके मालमसिंहजी नामक एक पुत्र हैं जो इस समय विद्याभ्यास कर रहे हैं।

शाह हरिसिंहजी घलुण्डिया का खानदान, उदयपुर

इस खानदान के पूर्वजों का मूल निवासस्थान वेगूं (मेवाड़) का है। आप लोग पहले बेगूं की दीवानगिरी [illegible] े। तदनंतर शाह चम्पालालजी वेगूं से कोठारिया आये जहाँ पर आपको जागीरी आदि इनायत कर [illegible] के तत्कालीन ठाकुर ने सम्मानित किया। यह जागीरी आज भी आपके वंशजों के पास विद्यमान है [illegible] कोठारिया और बेगूं दोनों की वकालात का काम करते थे। आपके गोपाललालजी नामक एक पुत्र हुए। आप भी उक्त ठिकानों के अतिरिक्त कई और ठिकानों के भी वकील रहे। आप वहाँ से उदयपुर चले आये। तभी से आपके वंशज उदयपुर में रहते हैं। आपके पुत्र शाह मोतीलालजी वलुण्डिया हुए आप बेगूं के कार्यकर्ता थे तथा आपने उदयपुर राज्य में प्रथम श्रेणी के जिला हाकिमी के पद पर काम किया। आपके हरिसिंहजी, रुघनाथसिंहजी तथा हिम्मतसिंहजी नामक तीन पुत्र हैं।

आप तीनों भाइयों का जन्म क्रमशः संवत् १९४७, ४९, तथा ६२ में हुआ। शाह हरिसिंहजी मेवाड़ के कई गाँवों में हाकिमी के पद पर रहे तथा आपने भिण्डर ठिकाने की मैनेजरी भी बड़ी योग्यता से की है। शाह रुघनाथसिंहजी बेगूं आदि ठिकानों की वकालात का सारा काम करते रहते हैं। आपके जगन्नाथसिंहजी नामक एक पुत्र विद्यमान हैं। शाह हिम्मतसिंहजी बड़े शिक्षित तथा समाज सुधारक हैं। आप इस समय लखनऊ कालेज में एम० ए० एल० एल० बी० का अध्ययन कर रहे हैं। आप साथ ही साथ मिलिटरी की शिक्षा भी पा रहे हैं। आपके इस समय एक पुत्र विद्यमान हैं।